

तिलोयपण्णत्ती – द्वितीय खण्ड (द्वितीय संस्करण)

श्री चन्द्रप्रभ स्तवन

चन्द्रप्रभं चन्द्रमरीचि गौरं चन्द्रं, द्वितीयम् जगतीव कान्तम्।
बन्देऽभिवन्द्यं महता मृषीन्द्र, जिनं जितस्वान्त कषाय बन्धम्॥
स चन्द्रमा भव्य कुमुद्वतीनां, विपन्न दोषाभ्र कलक लेपः।
व्याकोशवाङ् न्याय मयूख मालः, पूयात्पवित्रो भगवान मनो मे॥

प्रकाशक एवं प्राप्तिस्थान
श्री १००८ चन्द्रप्रभ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र
देहरा-तिजारा-३०१४११ (अलवर-राजस्थान)

श्रीयतिवृषभाचार्यविरचित
तिलोयपण्णत्ती – द्वितीय खण्ड

(चतुर्थ महाधिकार)

□

पुरोवाक्

डॉ० पन्नालाल जैन साहित्याचार्य

□

भाषाटीका

आर्यिका १०५ श्री विशुद्धमती माताजी

□

सम्पादन

डॉ० चेतनप्रकाश पाटनी, जोधपुर (राज)

□

प्रकाशक एव प्राप्तिस्थान

श्री १००८ चन्द्रप्रभ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र
देहरा-तिजारा-३०१४११ (अलवर-राजस्थान)

□

मूल्य-१००/-

□

द्वितीय सस्करण

वीर निर्वाण सवत् २५२३

ई सन् १९९७

वि स २०५४

□

ऑफ़सेट मुद्रक

शकुन प्रिंटेर्स, ३६२५, सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-११०००२



श्री १००८ भगवान् चन्द्रप्रभ की पावन प्रतिमा दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र देहरा-तिजारा



चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शान्तिसागर जी



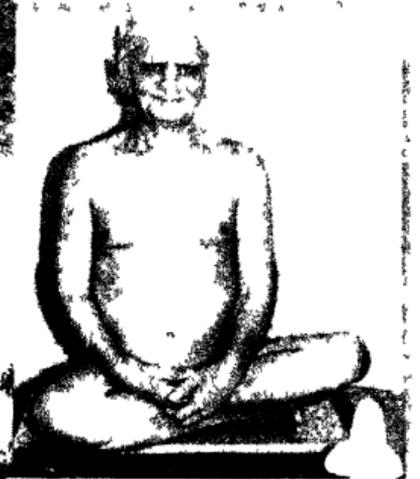
परमपूज्य आचार्य श्री वीरसागर जी



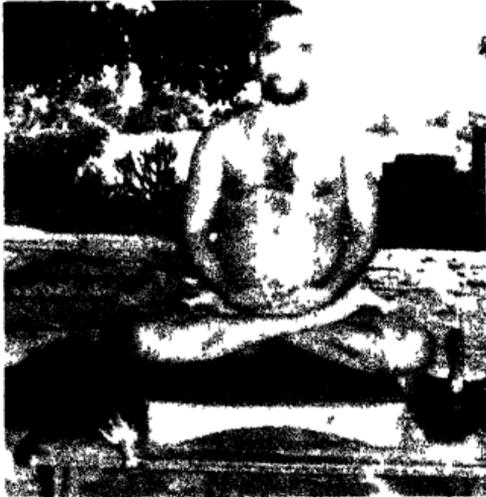
परमपूज्य आचार्य श्री शिवसागर जी



परमपूज्य आचार्य श्री धर्मसागर जी



परमपूज्य आचार्य श्री अजितसागर जी



परमपूज्य आचार्य श्री वर्द्धमानसागर जी



परमपूज्य आचार्य श्री सुमतिसागर जी



परमपूज्य उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी

प्रकाशकीय

जैन धर्म और जैन वाङ्मय के इतिहास का समीचीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए लोक विवरण सम्बन्धी ग्रन्थ भी उतने ही महत्वपूर्ण है जितने अन्य आगम। 'तिलोयपण्णती' इस दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। पूज्य आचार्य यतिवृषभजी महाराज की यह अमर कृति है। पूज्य आर्यिका १०५ श्री विशुद्धमति माताजी की हिन्दी टीका ने इस ग्रन्थ की उपयोगिता को और बढ़ा दिया है। इस ग्रन्थ के तीनों खण्डों का प्रकाशन क्रमशः १९८४, १९८६ व १९८८ में श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा ने किया था।

ग्रन्थ का सम्पादन डा. चेतनप्रकाशजी पाटनी ने कुशलतापूर्वक किया है। गणित के प्रसिद्ध विद्वान् प्रो. लक्ष्मीचन्द्रजी ने गणित की विविध धाराओं को स्पष्ट किया है। डा. पन्नालालजी साहित्याचार्य ने इसका पुरोवाक् लिखा है। माताजी के सघन ब्र. कजोडीमलजी कामदार ने प्रथम संस्करण के कार्य में पुष्कल सहयोग किया था।

हमारे पुण्योदय से श्री चन्द्रप्रभु दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र पर उपाध्याय मुनि श्री ज्ञानसागर जी महाराज का सघन सहित पदार्पण हुआ और उनके पावन सान्निध्य में क्षेत्र पर मान-स्तम्भ प्रतिष्ठा एवं श्री जिनेन्द्र पचकन्याणक सम्पन्न हुआ। इसी अवसर पर उपाध्याय मुनिश्री १०८ ज्ञानसागर जी महाराज की प्रेरणा ने प्रस्तुत संस्करण का प्रकाशन करना सम्भव हुआ। यह संस्करण शकुन प्रिन्टर्स नई दिल्ली में ऑफ़सेट विधि से मुद्रित हुआ ताकि पुनः सम्पोज की अशुद्धियों से बचा जा सके।

क्षेत्र कमेटी ग्रन्थ प्रकाशन की प्रक्रिया में सलग्न सभी त्यागीगण व विद्वानों का हृदय से आभारी है— विशेष रूप से हम पूज्य उपाध्याय श्री ज्ञान सागर जी महाराज के ऋणी हैं जिनकी प्रेरणा से प्रस्तुत ग्रन्थ प्रकाशित हो सका है। हम भारतवर्षीय दिगम्बर जैन (धर्म संरक्षणी) महासभा के सम्मानित अध्यक्ष श्री निर्मलकुमार जी सेठी के आभारी हैं जिन्होंने ग्रन्थ का संस्करण कराने की अनुमति प्रदान की है। हम महासभा के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष श्री नीरजजी जैन के भी आभारी हैं जिन्होंने इस संस्करण की संयोजना से लेकर अनुमति दिलाने तक हमारा सहयोग किया। हमें पूर्ण आशा है कि ग्रन्थ के पुनःप्रकाशन से जिज्ञासु महानुभाव इसका पूरा-पूरा लाभ उठा सकेंगे।

—तुलाराम जैन

अध्यक्ष, श्री चन्द्रप्रभु दिगम्बर

जैन अतिशय क्षेत्र

देहरा-तिजारा (शुलवर)

श्री १००८ चन्द्रप्रभ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र देहरा-तिजारा

एक परिचय

चौबीस तीर्थंकरों में आठवें भगवान चन्द्रप्रभ का नाम चमत्कारों की दुनियाँ में अग्रणी रहा है। इसलिए सदैव ही विशेष रूप से वे जन-जन की आस्था का केन्द्र रहे हैं। राजस्थान में यूँ तो अनेक जगह जिनबिम्ब भूमि से प्रकट हुए हैं, परन्तु अलवर जिले में तिजारा नाम अत्यन्त प्राचीन है जहाँ भगवान चन्द्रप्रभ की मूर्ति प्रकट हुई है तब से 'देहरा' शब्द तिजारा के साथ लगने लगा है, और अब तो 'देहरा' तिजारा का पर्याय ही बन गया है। 'देहरा' शब्द का अर्थ सभी दृष्टियों से देव स्थान, देवहरा, देवारा या देवद्वार कोषकारों ने अंकित किया है। इनके अनुसार देहरा वह मन्दिर है जहाँ जैनो द्वारा मूर्तियाँ पूजी जाती हैं। (A Place where idols are worshipped by Jains)

देहरे का उपलब्ध वृत्तान्त, जुड़ी हुई अनुश्रुतियाँ साथ ही जैन समुदाय का जिनालय विषयक विश्वास इस स्थान के प्रति निरन्तर जिज्ञासु बनता जा रहा था। सौभाग्य से सन् १९४४ में प्रज्ञाचक्षु श्री धर्मपाल जी जैन खेकड़ा (मेरठ) निवासी तिजारा पधारे। इस स्थान के प्रति उनकी भविष्यवाणी ने भी पूर्व में स्थापित सभावना को पुष्ट ही किया। इस स्थान पर अवशिष्ट खडहरों में उन्हें जिनालय की सभावना दिखाई दी। किन्तु उनका मत था कि 'वर्तमान अग्नेयी शासन परिवर्तन के पश्चात् स्वयं ऐसे कारण बनेंगे, जिनसे कि इस खण्डहर से जिनेन्द्र भगवान की मूर्तियाँ प्रकट होगी।'

देश की स्वतंत्रता के बाद तिजारा में स्थानीय निकाय के रूप में नगर पालिका का गठन हुआ। जुलाई १९५६ में नगर पालिका ने इस नगर की छोटी व सकरी सड़कों को चौड़ा कराने का कार्य प्रारम्भ किया। वर्तमान में, जहाँ देहरा मन्दिर स्थित है, यह स्थान भी ऊबड़-खाबड़ था। हा निकट ही एक खण्डहर अवश्य था। इस खण्डहर के निकट टीले से जब मजदूर मिट्टी खोदकर सड़क के किनारे डाल रहे थे, तो अचानक नीचे कुछ दीवारें नजर आईं। धीरे-धीरे खुदाई करने पर एक पुराना तहखाना दृष्टगोचर हुआ। इसे देखते ही देहरे से जुड़ी हुई तमाम जनश्रुतियाँ, प्राचीन इतिहास और उस नेत्रहीन भविष्यवक्ता के शब्द क्रमशः स्मरण हो आये। जैन समाज ने इस स्थान की खुदाई कराकर सदा से अनुत्तरित कुतूहल को शान्त करने का निर्णय किया।

जब प्रतिमाएँ मिलीं

राज्य अधिकारियों की देख-रेख में यहाँ खुदाई का कार्य प्रारम्भ किया गया। स्थानीय नगर पालिका ने जन भावना को दृष्टि में रखते हुए आर्थिक व्यवस्था की, किन्तु दो-तीन दिन निरन्तर उत्खनन के बाद भी आशा की कोई किरण दिखाई नहीं दी। निराशा के अधकार में सरकार की ओर से खुदाई बन्द होना स्वभाविक था किन्तु जैन समाज की आस्था अन्धकार के पीछे प्रकाश पुज को देख रही थी, अतः उसी दिन दिनांक २०-७-१९५५ को स्थानीय जैन समाज ने द्रव्य की व्यवस्था कर खुदाई का कार्य जारी रखा। गर्भगृह को पहले ही खोदा जा चुका था। आस-पास खुदाई की गई, किन्तु निरन्तर असफलता ही हाथ लगी। पर आस्था भी अपनी परीक्षा देने को कटिबद्ध थी। इसी बीच निकट के कस्बा

नगीना जिला गुडुगावा से दो श्रावक श्री मम्बूराम जी व मिश्रीलाल जी यहां पधारे। उन्होने यहां जाप करवाये। मंत्र की शक्ति ने आस्था को और बल प्रदान किया। परिणामस्वरूप रात्रि को प्रतिमाओं के मिलने के स्थान का संकेत स्वप्न से प्रत्यक्ष हुआ। संकेत से उत्खनन को दिशा प्राप्त हुई। बिखरता हुआ कार्य सिमट कर केन्द्रीभूत हो गया। साकेतिक स्थान पर खुदाई शुरु की गई। निरंतर खुदाई के बाद गहरे भूरे रंग का पाषाण उभरता सा प्रतीत हुआ। खुदाई की सावधानी में प्रस्तर मात्र प्रतीत होने वाला रूप क्रमशः आकार लेने लगा। आस्था और घनीभूत हो गई, पर जैसे स्वयं प्रभु वहां आस्था को परख रहे थे, प्रतिमा मिली अवश्य किन्तु स्वरूप खंडित था। आराधना की शक्ति एक निष्ठ नहीं हो पाई थी। मिति श्रावण शुक्ला ५ विसं २०१३ तदानुसार दिनांक १२-८-५६ई रविवार को तीन खण्डित मूर्तियां प्राप्त हुई थीं। जिन पर प्राचीन लिपि में कुछ अंकित है। जिन्हे अभी तक पढ़ा नहीं जा सका है। हा मूर्तियों के सूक्ष्म अध्ययन से इतना प्रतीत अवश्य होता है कि ये मौर्यकाल की हैं। इन मूर्तियों के केन्द्र में मुख्य प्रतिमा उत्कीर्ण कर पार्श्व में यक्ष यक्षणी उत्कीर्ण किये हुए हैं। तपस्या की परम्परागत मुद्रा केश राशि और आसन पर उत्कीर्ण चित्र इन्हे जैन मूर्तियाँ सिद्ध करते हैं। एक मूर्ति समूह के पार्श्व में दोनो ओर पद्मासन मुद्रा में मुख्य बिम्ब की तुलना में छोटे बिम्ब हैं। लाली के श्यामल पत्थर से निर्मित इन मूर्तियों समूहों का सूक्ष्म अध्ययन करने से क्षेत्र के ऐतिहासिक वैभव पर प्रकाश पड़ सकता है।

इन खण्डित मूर्तियों से एक चमत्कारिक घटना भी जुड़ी हुई है। जिस समय उक्त टीले पर खुदाई चल रही थी, स्थानीय कुम्हार टीले से निकली मिट्टी को दूर ले जाकर डाल रहे थे। कार्य की काल-गत दीर्घता में असावधानी सम्भव थी और इसी असावधानी में कुम्हार किसी प्रतिमा का शीर्ष भाग भी मिट्टी के साथ कूड़े में डाल आया था। असावधानी में हुई त्रुटि ने उसे रात्रि भर सोने नहीं दिया। उस अदृश्य शक्ति से स्वप्न में साक्षात्कार कर कुम्हार को बौध् हुआ, और वह भी "मुँह अधरे" मिट्टी खोजने लगा। अन्ततः खोजकर वह प्रतिमा का शीर्ष भाग निश्चित हाथों में सौंपकर चैन पा सका।

स्वप्न साकार हुआ

आस्था के अनुरूप खण्डित मूर्तियों की प्राप्ति शीर्ष भाग का चमत्कार, मिट्टी में दबे भवन के अवशेष जैन समुदाय को और आशान्वित बना रहे थे। उत्साह के साथ खुदाई में तेजी आई किन्तु तीन दिन के कठिन परिश्रम के पश्चात् भी कुछ हाथ नहीं लगा। आशा की जो भीनी किरण पूर्व में दिखलाई दी थी वह पुनः अन्धकार में विलीन होने लगी। एक बार समाज की प्रतिष्ठा मानो दाव पर लग गई थी। भक्त मन आस्था के अदृश्य स्वर का आग्रह मानो सर्वत्र निराशा के बादलों को घना करता जा रहा था। समाज की ही एक महिला श्रीमती सरस्वती देवी धर्म पत्नी श्री बिहारी लाल जी वैद्य ने खंडित बिम्बों की प्राप्ति के बाद से ही अन्न जल का त्याग किया हुआ था। उनकी साधना ने जैसे असफलताओं को चुनौती दे रखी थी। आस्था खंडित से अखंडित का सन्धान कर रही थी। साधना और आस्था की परीक्षा थी। तीन दिन बीत चुके थे। श्रावण शुक्ला नवमी की रात्रि गाढी होती जा रही थी। चन्द्र का उत्तरोत्तर

बढ़ता प्रकाश अधकार को लीलने का प्रयास कर रहा था। मध्य रात्रि को उन्हे स्वप्न हुआ और भगवान की मूर्ति दबी होने के निश्चित स्थान व सीमा का संकेत मिला। संकेत पूर्व मे अन्यान्य व्यक्तियों को मिले थे, किन्तु तीन दिन की मनसा, वाचा, कर्मणा साधनों ने संकेत की निश्चितता को दृढता दी। रात्रि को लगभग एक बजे वह उठी और श्रद्धापूर्वक उसी स्थान को दीपक से प्रकाशित कर आई। अन्त प्रकाशमान उस स्थल को बहिर्दीप्ति मिली। नये दिन यानी १६-८-५६ को निर्दिष्ट स्थान पर खुदाई शुरु की गई।

स्वप्न का संकेत एक बार फिर सजीवनी बन गया। श्री रामदत्ता मजदूर नई आशा व उल्लास से इस संधान मे जुट गया। उपस्थित जन समुदाय रात्रि के स्वप्न के प्रति विश्वास पूर्वक वसुधा की गहनता और गम्भीरता के जैसे पल-पल दोलायमान चित्त से देख रहा था। मन इस बात के लिये क्रमश तैयार हो रहा था कि यदि प्रतिमा न मिली तो सभवत खुदाई बन्द करनी पडे, किन्तु आस्था अक्षय कोष से निरंतर पाथेय जुटा रही थी जिसका परिणाम भी मिला। उसी दिन अर्थात् श्रावण शुक्ला दशमी गुरुवार स २०१३ दिनाक १६-८-१९५६ को मिट्टी की पवित्रता से श्वेत पाषाण की मूर्ति उभरने लगी। खुदाई मे सावधानी आती गई। हर्षातिरेक मे जन समूह भाव विह्वल हो गया। देवागण भी इस अद्भुत प्राप्ति को प्रमुदित मन मानो स्वय दर्शन करने चले आये। मध्यान्ह के ११ बजकर ५५ मिनट हुए थे रिक्त आकाश मे मेघ माला उदित हुई। धारासार वर्षा से इन्द्र ने ही सर्वप्रथम प्रभु का अभिषेक किया। प्रतिमा प्राप्ति से जन समुदाय का मन तो पहिले ही भीग चुका था अब तन भी भीग गया। प्रतिमा पर अंकित लेख भी क्रमश स्पष्ट होने लगा। जिसे पढकर स्पष्ट हुआ कि यह प्रतिमा सम्वत् १५५४ की है। जैनागम मे निर्दिष्ट चन्द्र के चिन्ह से ज्ञात हुआ कि यह जिन बिम्ब जैन आमनाय के अष्टम तीर्थंकर चन्द्रप्रभ स्वामी का है। लगभग एक फुट तीन इंच ऊँची श्वेत पाषाण की यह प्रतिमा पद्मासन मुद्रा मे थी। प्रभु की वीतरागी गभीरता मानो जन जन को त्याग और समय का उपदेश देने के लिये स्वय प्रस्तुत हो गई थी। प्रतिमा पर अंकित लेख इस प्रकार है।

‘स १५५४ वर्षे बैसाख सुदी ३ श्री काष्ठासघ, पुष्करमठो भ श्री मलय कीर्ति देवा, तत्पट्टे भ श्री गुण भद्र देव तदाम्नाये गोयल गोत्रे स मंकणसी भार्या होताही पुत्र तोला भा तरी पुत्र ३ गजाधरू जिनदत्त तिलोक चन्द एतेषा मध्ये स तोला तेन इदम् चन्द्रप्रभ प्रति वापितम्।’

प्रतिमा की प्राप्ति ने नगर मे मानो जान फूक दी। भूगर्भ से जिन बिम्ब की प्राप्ति का उल्लास बिखर पडा। तत्काल टीन का अस्थायी सा मडप बनाकर प्रभु को काष्ठ सिंहासन पर विराजमान किया गया। श्वेत उज्ज्वल रश्मि ने अधकार मे नया आलोक भर दिया।

मंदिर निर्माण की भावना

श्वेत पाषाण प्रतिमा जी के प्रकट होने के पश्चात् उनके पूजा स्थान के क्रम मे विभिन्न विचार धारायें सामने आने लगी। नवीनता के समर्थक युवको का विचार था कि प्रतिमा जी को कस्बे के पुराने जिन मंदिर मे विराजमान कर दिया जावे, क्योंकि वर्तमान दौर मे नवीन पूजा गृहो की निर्मिति कराने की अपेक्षा पारंपरित मंदिरों का सरक्षण अधिक आवश्यक है। उनका कहना था कि बदलती हुई परिस्थितियों

में नये सिरे से मंदिर के निर्माण की अपेक्षा शिक्षा, चिकित्सा आदि क्षेत्रों में प्रयास करने की अधिक आवश्यकता है। पूजा गृहों के निर्माण से पूर्व पूजकों में आस्था बनाये रखने के लिए जैन शिक्षण सस्थानों की स्थापना ज्यादा उपयोगी व युग सापेक्ष होगी। लेकिन कुछ भाइयों का विचार था कि इसी स्थान पर मंदिर बनवाया जावे जहां प्रतिमा प्रकट हुई है। दोनों प्रकार की विचार धारों में किसी भी निर्णय पर नहीं पहुच पा रही थी। असमंजस की सी स्थिति थी कि प्रतिमा जी की रक्षक दैवी शक्तियों ने चमत्कार दिखाना आरम्भ कर दिया।

पुण्योदय से चमत्कार

प्रतिमा प्रकट होने के दो तीन दिन पश्चात् ही एक अजैन महिला ने भगवान के दरबार में सिर घुमाना शुरु कर दिया। बाल खोले, सिर घुमाती यह महिला निरंतर देहरे वाले बाबा की जय घोष कर रही थी। व्यतर बाधा से पीडित यह महिला इससे पूर्व जिन बिम्ब के प्रति आस्था शील भी न रही थी, किन्तु धर्म की रेखा जाति आदि से न जुडकर मानव मात्र के कल्याण से जुडी हुई है। जिसमें प्राणी मात्र का सकट दूर करने की भावना है। बाबा चन्द्रप्रभ स्वामी के दरबार में महिला के मानस को आक्रान्त करने वाली उस प्रेत छाया (व्यतर) ने अपना पूरा परिचय दिया और बतलाया कि वह किस प्रकार उसके साथ लगी, और क्या क्या कष्ट दिये। अन्त में तीन दिन पश्चात् क्षेत्र के महातिशय के प्रभाव से व्यतर ने सदा के लिये रोगी को अपने चगुल से मुक्त किया, और स्वयं भी प्रभु के चरणों में शेष काल व्यतीत करने की प्रतिज्ञा की। भूत प्रेत से सम्बन्धित यह घटना मानसिक विक्षिप्तता कहकर सदेह की दृष्टि से देखी जा सकती थी, किन्तु ऐसे रोगियों का आना धीरे-धीरे बढ़ता गया, तो विक्षिप्तता न मानकर प्रेत शक्ति की स्थिति स्वीकारने को मस्तिष्क प्रस्तुत हो गया। वैसे भी जैनगम व्यतर देवों की अवस्थिति स्वीकार करता है। वर्तमान में विज्ञान भी मनुष्य मन को आक्रान्त करने वाली परा शक्तियों की स्थिति स्वीकार कर चुका है।

क्षेत्र पर रोगियों की बढ़ती सख्या और उनकी आस्था से निष्पन्न आध्यात्मिक चिकित्सा ने इसी स्थल पर मंदिर बनवाने की भावना को शक्ति दी। क्षेत्र की अतिशयता व्यतर बाधाओं के निवारण के अतिरिक्त अन्य बाधाओं की फलदायिका भी बनी। श्रृद्धालु एवं अटूट विश्वास धारियों की विविध मनोकामनाएँ पूर्ण होने लगीं। इन चमत्कारों ने जनता की नूतन मंदिर निर्माण की आकांक्षा को पुजीभूत किया। फलतः २६-८-१९५६ को तिजारा दिगम्बर जैन समाज की आम सभा में सर्व सम्मति से यह निर्णय हुआ कि इसी स्थान पर मंदिर का नव निर्माण कराया जावे। मंदिर निर्माण हेतु जैन समाज ने द्रव्य सग्रह किया और मंदिर के निर्माण का कार्य प्रारम्भ हुआ।

मंदिर निर्माण

वर्तमान में जहा दोहरा मंदिर स्थित है इस भूमि पर कर्स्टोडियन विभाग का अधिकार था। बिना भूमि की प्राप्ति के मंदिर निर्माण होना असम्भव था। समाज की इच्छा थी कि अन्यत्र नया मंदिर बनाने की बजाय प्रतिमा के प्रकट स्थान पर ही मंदिर निर्माण उचित होगा अतः इसकी प्राप्ति के लिये काफी

प्रयत्न किये गये। अन्ततः श्री हुकमचन्द जी लुहाडिया अजमेर वाले ने कस्टोडियन विभाग में अपेक्षित राशि जमा कराकर अपने सद् प्रयत्नों से १२००० वर्ग गज भूमि मंदिर के लिये प्रदान की।

भूमि की प्राप्ति के पश्चात् मंदिर भवन के शिलान्यास हेतु शुभ मुहूर्त निकलवाया गया। मंदिर शिलान्यास के उपलक्ष्य में त्रिदिवसीय रथयात्रा का विशाल आयोजन २३ से २५ नवम्बर १९६१ को किया गया था। भगवान चन्द्रप्रभ स्वामी की अतिशय चमत्कारी प्रतिमा की प्राप्ति के बाद यह पहला बड़ा आयोजन किया गया। दिनांक २४ नवम्बर १९६१ मध्याह्न के समय शिलान्यास का कार्य पूज्य भट्टारक श्री देवेन्द्र कीर्ति जी गढ़ी नागौर के सान्निध्य में दिल्ली निवासी रायसाहब बाबू उत्फत्त राय जैन के द्वारा सम्पन्न हुआ।

मंदिर का उभरता स्वरूप

नव मंदिर शिलान्यास के साथ ही मंदिर निर्माण का कार्य शुरु हो गया। दानी महानुभावों के निरंतर सहयोग से सपाट जमीन पर मंदिर का स्वरूप उभरने लगा। मूल नायक चन्द्रप्रभ स्वामी की प्रतिमा को विराजित करने के लिए मुख्य वेदी के निर्माण के साथ दोनों पाश्वर्कों में दो अन्य कक्षों का निर्माण कराया गया। शनैः शनैः निर्माण पूरा होने लगा। २२ वर्ष के दीर्घ अन्तराल में अनेक उतार चढ़ावों के बावजूद नव निर्मित मंदिर का कार्य पूर्णता पाने लगा। मुख्य वेदी पर ५२ फुट ऊंचे शिखर का निर्माण किया गया। मंदिर के स्थापत्य को सवारने में शिल्पी धनजी भाई गुजरात वाले ने कहीं मेहरावदार दरवाजा बनाया तो कहीं प्राचीन स्थापत्य की रक्षा करते हुए वैदिक शैली का इस्तेमाल किया। शिखर में भी गुम्बद के स्थान पर अष्ट भुजी रूप को महत्ता दी। मंदिर की विशालता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि इसका निर्माण लगभग दो करोड़ रुपये में सम्पन्न हो सका। मंदिर निर्माण में मुख्य रूप से श्वेत सगमरमर प्रयोग में लाया गया। साथ ही काच की पच्चीकारी एवं स्वर्ण चित्रकारी से भी समृद्ध किया गया।

पंच कल्याणक एवं वेदी प्रतिष्ठा

मन्दिर निर्माण का कार्य परिपूर्ण हो जाने के उपरान्त वेदियों में भगवान को प्रतिष्ठित करने की उत्सुकता जागृत होना स्वाभाविक था। सकल्प ने मूर्तरूप लिया। १६ से २० मार्च १९८३ तक पाँच दिन का पंचकल्याणक महोत्सव करा भगवान को वेदियों में विराजमान करा दिया गया। इस महोत्सव में भारत के महामहिम राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह जी भी सम्मिलित हुए। उन्होंने क्षेत्र के विविध आयामी कार्यक्रमों का अवलोकन किया और अपने सम्बोधन में जैन समाज के प्रयासों की सराहना की। आचार्य शान्ति सागर जी महाराज के सान्निध्य में यह उत्सव सानन्द सम्पन्न हुआ।

मान-स्तम्भ में इस अवसर पर मूर्तियों की प्रतिष्ठा टाल दी गई थी, क्योंकि उसका निर्माण क्षेत्र की गरिमा और लोगों की आकांक्षाओं के अनुरूप नहीं हो पाया था। अतः उसका पुनर्निर्माण कराया गया। क्षेत्र का सितारा निरन्तर उत्कर्ष पर रहा। अब यह सम्भव ही नहीं था कि मूर्ति प्रतिष्ठा साधारण रूप से कराई जावे। अतः १६ से २० फरवरी १७ को पंचकल्याणक प्रतिष्ठा का विशाल आयोजन करने का समाज द्वारा निर्णय किया गया। यह महोत्सव शाकाहार प्रचारक उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी महाराज

के (ससघ) सान्निध्य मे हुआ। अतः सप्ताहान्त तक सभा और सम्मेलनों की रात दिन झड़ी लगी रही। एक ओर विद्वत् परिषद सम्मेलन चल रहा था तो दूसरी ओर साहू अशोक कुमार जैन की अध्यक्षता में श्रावक और तीर्थ क्षेत्र कमेटी की सभाओं में विचार विमर्श चल रहा था। कभी व्यसन मुक्ति आन्दोलन को हवा दी जा रही है तो कभी शाकाहार सम्मेलन में भारतीय स्तर के बुद्धिजीवी और प्रखर वक्ता उसके महत्व को जनमानस में ठोक कर बिठाने में लगे थे। इस तरह हर्षोल्लास से २०-२-९७ को मान-स्तम्भ में मूर्तियों की स्थापना के साथ समाज ने अपने एक लक्ष्य को प्राप्त कर लिया। भगवान चन्द्रप्रभ और 'देहरे वाले बाबा' की जयघोष के साथ उत्सव सम्पन्न हुआ। तीर्थ क्षेत्र कमेटी इस क्षेत्र की सर्वांगीण प्रगति के लिए निरन्तर प्रयासरत है।

—तुलाराम जैन
अध्यक्ष, श्री चन्द्रप्रभ दिगम्बर
जैन अतिथय क्षेत्र
देहरा—तिजारा (अलवर)

५ अपनी बात ५

जीवन में परिस्थितिजन्य अनुकूलता-प्रतिकूलता तो चलती ही रहती है परन्तु प्रतिकूल परिस्थितियों में भी उनका अधिकाधिक सदुपयोग कर लेना विशिष्ट प्रतिभाओं की ही विशेषता है। 'तिलोत्पल्लव' के प्रस्तुत संस्करण को अपने वर्तमान रूप में प्रस्तुत करने वाली विदुषी आर्याका पूज्य १०५ श्री विशुद्धमती माताजी भी उन्हीं प्रतिभाओं में से एक हैं। जून १९८१ में सीढ़ियों से गिर जाने के कारण आपको उदयपुर में ठहरना पड़ा और तभी ति० प० की टीका का काम प्रारम्भ हुआ। काम सहज नहीं था परन्तु बुद्धि और श्रम मिलकर बया नहीं कर सकते। साधन और सहयोग सकेत मिलते ही जुटने लगे। अनेक हस्तलिखित प्रतियाँ तथा उनको फोटोस्टेट कॉपियाँ भगवाने की व्यवस्था की गई। कन्नड की प्राचीन प्रतियों को भी पाठभेद व लिप्यन्तरण के माध्यम से प्राप्त किया गया। 'सेठी ट्रस्ट, गुवाहाटी' से आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ और महःसभा ने इसके प्रकाशन का उत्तरदायित्व वहन किया। डॉ० चेतनप्रकाश जी पाटनी ने सम्पादन का गुरुतर भार सभाला और अनेक रूपों में उनका सक्रिय सहयोग प्राप्त हुआ। यह सब पूज्य माताजी के पुरुषार्थ का ही मुपरिणाम है। पूज्य माताजी 'यथा नाम तथा गुण' के अनुसार विशुद्ध मति को धारण करने वाली हैं तभी तो गणित के इस जटिल ग्रंथ का प्रस्तुत सरल रूप हमें प्राप्त हो सका है।

पाँचों में चोट लगने के बाद से पूज्य माताजी प्रायः स्वस्थ नहीं रहती तथापि अभीष्ट-ज्ञानोपयोग प्रवृत्ति से कभी विरत नहीं होती। सतत परिश्रम करते रहना आपकी अनुपम विशेषता है। आज में १५ वर्ष पूर्व मैं माताजी के सम्पर्क में आया था और यह मेरा सौभाग्य है कि तबसे मुझे पूज्य माताजी का अनवरत सान्निध्य प्राप्त रहा है। माताजी की श्रमशीलता का अनुमान मुझ जैसा कोई उनके निकट रहने वाला व्यक्ति ही कर सकता है। आज उपलब्ध सभी साधनों के बावजूद माताजी सम्पूर्ण लेखनकार्य स्वयं अपने हाथ में ही करती हैं—न कभी एक अक्षर टाइप करवाती हैं और न किसी से लिखवाती हैं। सम्पूर्ण सशोधन-परिष्कारों को भी फिर हाथ से ही लिखकर मयुक्त करती हैं। मैं प्रायः सोचा करता हूँ कि धन्य है ये, जो (आहार में) इतना अल्प लेकर भी कितना अधिक दे रही हैं। इनकी यह दिन चिरकाल तक समाज को समुपलब्ध रहेगी।

मैं एक अल्पज्ञ श्रावक हूँ। अधिक पढा-लिखा भी नहीं हूँ किन्तु पूर्व पुण्योदय से जो मुझे यह पवित्र समागम प्राप्त हुआ है इसे मैं साक्षात् सरस्वती का ही समागम समझता हूँ। जिन ग्रन्थों के नाम भी मैंने कभी नहीं सुने थे उनकी सेवा का सुप्रवसर मुझे पूज्य माताजी के माध्यम से प्राप्त हो रहा है, यह मेरे महान् पुण्य का फल तो है ही किन्तु इससे आपका अनुग्रहपूर्ण वात्सल्य भी कम नहीं।

जैसे काष्ठ में लगी लोहे की कील स्वयं भी तर जाती है और दूसरों को भी तरने में सहायक होती है, उसी प्रकार सतत ज्ञानाराधना में मलग्न पूज्य माताजी भी मेरी दृष्टि में तरण-तारण हैं। आपके सान्निध्य से मैं भी ज्ञानावरणीय कर्म के क्षय का सामर्थ्य प्राप्त करूँ, यही भावना है।

मैं पूज्य माताजी के स्वस्थ एवं दीर्घजीवन की कामना करता हूँ।

विनीत :

ब० कजोड़ीमल कामदार, संघस्थ

पुरोवाक्

पूज्य ध्यायिका श्री १०५ विद्युद्धमती माताजी द्वारा अनूदित एव प्रो० श्री चेतनप्रकाशजी पाटनी जोधपुर द्वारा सम्पादित 'तिलोय पण्णत्ती' का यह द्वितीय भाग जिज्ञासु-स्वाध्याय प्रेमी-पाठको के समीप पहुंच रहा है। आचार्य प्रवर श्री यतिवृषभाचार्य द्वारा विरचित यह ग्रन्थ बीच-बीच में आये गणित के अनेक दुर्लभ प्रकरणों से युक्त होने के कारण साधारण श्रोताओं के लिये ही नहीं विद्वानों के लिये भी कठिन माना जाता है। टीकाकर्त्री विद्युषी-माताजी ने अपनी प्रतिभा तथा गणितज्ञ विद्वानों के सहयोग से उन दुर्लभ प्रकरणों को सुगम बना दिया है तथा प्राकृत भाषा की चली आरही अशुद्धियों का परिमार्जन भी किया है।

माताजी ने अस्वस्थ दशा में भी अपनी साध्वी चर्या का पालन करते हुए इस ग्रन्थ की टीका की है, इससे उनकी आन्तरिक प्रेरणा और साहित्यिक अभिरुचि सहज ही अभिव्यक्त होती है। आशा है, इसका तीसरा भाग भी शीघ्र ही पाठको के पास पहुंचेगा।

भारतवर्षीय दि० जैन महासभा का प्रकाशन विभाग इस आर्थ ग्रन्थ रत्न के प्रकाशन से गौरवान्वित हुआ है।

दि० २६-१-१९८६

विनीत :

पद्मलाल साहित्याचार्य

सागर



स म र्प ण

जिन्होंने असंयमरूपी कर्दम में फँसी हुई मेरी आत्मा को अपनी उदार
एवं वात्सल्यवृत्तिरूपी डोर से बाहर निकाल कर विशुद्ध किया तथा
रत्नत्रय का बीजारोपण कर मोक्षमार्ग पर चलने की
अपूर्व शक्ति प्रदान की, उन्हीं परमोपकारी
दीक्षा गुरु, परम श्रद्धेय, प्रातः स्मरणीय, शतेन्द्रवन्द्य
चारित्र्य चूडामणि दिगम्बर जैनाचार्य श्री १०८ स्व०
शिवसागरजी महाराज
की सत्तरहवीं पुण्यतिथि के
अवसर पर आपके ही पट्टाधीशाचार्य परम तपस्वी
जगद्वन्द्य, चारित्र्य शिरोमणि,
परम पूज्य धर्म दिवाकर प्रथममूर्ति
आचार्य श्री १०८ धर्मसागरजी महाराज
के पुनीत कर-कर्मजों में अनन्यश्रद्धा एवं भक्तिपूर्वक
सादर समर्पित

—भार्यिका विशुद्धमती

टोकाकर्त्री आर्यिका श्री विशुद्धमतो माताजी के विद्यागुरु १० पू० श्री अक्षयज्ञानोपयोगी
 आचार्यरत्न १०८ श्री अजितसागरजी महाराज का उन्हीं की हस्त-लिपि में

मंगल आशीर्वाद

तिलोद्यपणान्ति ग्रन्थ मतिबुधभाचार्य द्वारा रचित अतिप्राचीन कृति है। यह ग्रन्थ
 यथा नाम तथा गुणानुसार तीनलोक का अतिविस्तृत एवं गहन वर्णन करता है।
 उर्ध्वलोक के वर्णन में कल्पवासी, तथा कल्पान्ति देवों का विस्तृत विवेचन है।
 मध्यलोक के वर्णन में ज्योतिषी देवों का एन असंख्यात शीप समुद्रों का अति
 विराट् निरूपण है, तथा अधोलोक के विवेचन में भवनवासी, अन्तरदेवों का
 वर्णन करते हुए नरकादि का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। अतः इस ग्रन्थ के
 अध्ययन अद्यापि से भव्यप्राणी भयभीत नव सम्प्रदर्शन के प्राप्त कर
 अपने सम्प्रज्ञान की वृद्धि करने हुए यथाशक्ति अपुत्रत महाबल को धारण
 कर सुचारुरीत्या पालन कर स्वर्गमोक्ष के सुख को प्राप्त करें। निगूढमति
 करणानुयोग की मर्मज्ञा, आख्यानकला में अति निपुणा, विद्यम परिस्थिति
 को सम करने में तत्परा एवं अपने सान्निध्य में समागत-विकारों से
 विबादास्पद निश्चयो पर निर्भयतापूर्वक न्यायोचित एवं आगमसम्मत-अर्था
 कर ठोस निर्णय करती है। अतिनिहृष्ट इस भौतिक युग में ऐसी विदुषी आर्यिका
 की नितान्त आवश्यकता है। यतः पण्डितनर्गि श्रेष्ठिवृन्द तथा त्यागिगणों के
 द्वारा किये गये आग्रमविरुद्ध प्रचार प्रसार को निःसंकोच भाव से विरोध
 कर सके। ऐसी विदुषी आर्यिका विशुद्धमति ने पुरातन प्रतियोग से मिलान कर
 अतिपरिश्रम पूर्वक इस ग्रन्थ की सरल सुबोध हिन्दी टीका की है। अतः पाठक
 गण इसका पठन पाठन चिन्तन एवं मग्न कर अपने साध्यज्ञान की वृद्धि करें
 तथा जैनशासन्त्रेप्रचार प्रसार में सहायक बन दुर्लभता से प्राप्त नरजन्म को
 सकल करें। हिन्दी टीकाकर्त्री नीरोग रहकर गेष्टसम्पूर्ण जीवन को धर्मध्यान से
 व्यतीत करते हुए अपने लक्ष्य की सिद्धि में सतत संलग्न रहे। ऐसी मेरी मङ्गल
 कामना है।
 तथा मेरा यही शुभाशीर्वाद है कि निरोग (उपयोगी-अभुपरलब्ध ग्रन्थों का
 अनुवाद कर श्रुताराधना करती रहे और आर्यिकजन्म की शानचिदि में
 सहायिक नने।

हुआ सं० १२६६ की प्राचीन कन्नड़ प्रति का जो लिप्यन्तरण प्राप्त हुआ उसमें ५५ गाथाएँ विशेष मिलीं जो सोलापुर से मुद्रित प्रति में नहीं हैं। इसप्रकार इस संस्करण में २६५१+५५=३००६ गाथाएँ हैं। शीर्षक एवं सामान्य सूचक पदों के अक्षरों की एवं गद्य भाग के अक्षरों की गणना करने पर १०७ गाथाएँ बनती हैं; इन्हें जोड़ कर कुल (३००६+१०७)=३११३ गाथाएँ होती हैं।

कन्नड़ प्रति से प्राप्त नवीन गाथाओं का सामान्य परिचय—सोलापुर से प्रकाशित प्रति में गाथा २५ के नीचे जो पाठान्तर छपा है, वह गलत है क्योंकि यह गाथा मूल विषय का उल्लेख करती है। इसके बाद एक गाथा मिली है जो पाठान्तर स्वरूप है। प्रस्तुत द्वितीय खण्ड में यह २६वाँ गाथा है।

सोलापुर की प्रति में गाथा ५८ में जम्बूद्वीप का क्षेत्रफल निकाला गया है। इसके आगे गाथा ५६ से ६४ पर्यन्त उस क्षेत्रफल के कोस, धनुष और किष्कू आदि से लेकर परमाणु पर्यन्त भेद दर्शाये गये हैं किन्तु इसके बीच में उलाम भोगभूमि के बालाग्र, रघुरेणु, त्रसरेणु और त्रटरेणु का माप दर्शाने वाली गाथा छूटी हुई थी, जो प्राप्त हुई है। यहाँ उसकी संख्या ६३ है।

अन्य नवीन गाथाओं की गाथा संख्या और विषय इसप्रकार है—गाथा १२० विद्याधरनगरियों की अवस्थिति दर्शाती है। गाथा २९७ पर्वीय घोर एवं का प्रमाण बताती है। गाथा ४१६, ४१७ और ४१८ भोगभूमिज जीवों के गुणस्थानों का निदर्शन कराती हैं। गाथा ६८८ श्री सम्भवनाथ जिनेन्द्र की केवलज्ञान तिथि दर्शाती है। गाथा ८३८ में कल्पवृक्षों से प्राप्त होने वाले पदार्थों का उल्लेख है। गाथा संख्या १०६१ और १०६२ में अवस्थित उग्र तप ऋद्धि का वर्णन है। गाथा १३८८ चक्रवर्ती के सात जीवरत्नों को दर्शाती है। कल्की के विवेचन के अन्तर्गत दुःख काल में होने वाले नाना उपसर्गों आदि को बताने वाली नौ गाथाएँ मिली हैं १५३० से १५३८ तक। गाथा १६२२ में मध्यम भोगभूमि की आयु आदि बताई गई है। गाथा १७०२ पषाद्रह पर स्थित मध्यम परिषद् में अवस्थित देव-प्रासादों का प्रमाण बताती है। पाण्डुक वन के तोरणद्वार पर युगल कपाटों को प्रदर्शित करने वाली गाथा १८३५ है। गाथा १९९३ सोमनस वन के जिनभवनों के व्यासादि को व्यक्त करती है। शात्मली हृष की प्रथम भूमि में उपवन खण्डों को बताने वाली नवीन गाथा २१९४ है। गाथा २३०३ क्षेमनगरी के जिनभवनों के उत्सेह आदि का कथन करती है।

हिमवान पर्वत, हैमवत क्षेत्र और हरिखर्ष क्षेत्रों का सूक्ष्म क्षेत्रफल दर्शाने वाली गाथाएँ हैं—२४०३, २४०४ और २४०५। इनके बीच में महाहिमवान का सूक्ष्म क्षेत्रफल दर्शाने वाली गाथा कीडो द्वारा लाई जा चुकी है। जञ्चय पातालो का प्रमाण आदि, ज्येष्ठ और मध्यम पातालो का अन्तराल, लवण समुद्र की मध्यम परिधि, ज्येष्ठ पातालों का अन्तराल और मध्यम पातालो का अन्तराल बताने वाली छह गाथाएँ हैं—२४६६ से २४७१ तक। गाथा २४७७ लवणसमुद्र की बाह्यवेदी से ७०० योजन ऊपर जाकर समुद्र पर ७२००० नगरियों की अवस्थिति दर्शाती है। गाथा २५०० से २५१२ तक यानी १३ गाथाओं में आठ द्वीपों की स्थिति, आकार, व्यास और उनके अधिपति देव तथा चन्द्रद्वीप, रविद्वीप, मागध, वरतनु और प्रभास द्वीपों का आकार, व्यास एवं उनके अधिपति देवों आदि का वर्णन किया गया है। गाथा सं० २६५४, २६५५ और २६५६ में घनकी खण्ड स्थित देवाध्ययन, भद्रसाल वन और मेघ के विस्तार आदि का विवेचन है। गाथा २६७४ कच्छा एवं गन्धमानिनी देश की परिधिर्ण्य से आदिम सन्वाई को अभिव्यक्ति देती है और गाथा २८२८ पुष्करार्ध में इष्वाकार पर्वतों की स्थिति दर्शाती है।

कतिपय महत्त्वपूर्ण पाठ भेद—

सोलापुर से प्रकाशित प्रति में अनेक स्थलों पर जहाँ अर्थ आदि की यथार्थ सगति नहीं बन पाई थी वहाँ कन्नड़ प्रति से प्राप्त पाठ भेदों से अर्थ आदि शुद्ध हुए हैं। इनमें से कुछ स्पष्ट इसप्रकार हैं—

१. **खड्गपवत्संस्तुतं शुभं** ॥५७॥ सोलापुर प्रति
खड्गपवत्संस्तुतं शुभं ॥६४॥ सोलापुर प्रति में जो खल्ल है, यह गा० ५६ और ६३ की मूल सदृष्टि का था। जो इन गाथाओं का अंश बन गया है अतः अर्थ की सगति नहीं बैठती। इसका शुद्ध रूप और अर्थ (विशेषार्थ सहित) गाथा ५७-५८ और ६५-६६ में दृष्टव्य है।
२. जिनिवपदिमाय सासवद्गीए ॥१६१॥ सोलापुर प्रति
 सासवदिगीओ ॥२२६॥ सोलापुर प्रति, इन दोनों गाथाओं के उपर्युक्त अशो का अर्थ है कि वे जिनेन्द्र प्रतिमाएँ शाश्वत ऋद्धि को प्राप्त हैं। इनका पाठ भेद प्राप्त हुआ है 'सासव-ठिबीओ' अर्थात् शाश्वत रूप से स्थित वे जिनेन्द्र प्रतिमाएँ देखें गाथा १६४ और २३२।
३. हरिबा सनील-बन्नाओ ॥५८८॥ सोलापुर प्रति, इस गाथा में सुपार्ष्व और पार्ष्वनाथ का हृत्त वर्य तथा मुनिसुव्रतनाथ और नेमिनाथ का नील वर्य कहा गया है। इनका पाठ भेद भी प्राप्त हुआ है नीला सनीर छनबन्ना ॥ देखें गाथा ५६५।
४. अभिधाणा ॥१३७५॥ सोलापुर प्रति। अभिधाणा के स्थान पर 'तणुरक्का' पाठ प्राप्त हुआ है जो "चक्रवर्ती के गणबद्ध नामक ३२००० देव भ्रगरक्षक हैं" इसका द्योतक है। देखें गाथा १३८६।
५. **सञ्जला थ** ॥१३७६॥ सोलापुर प्रति। इसके स्थान पर 'तणुवेज्ज' पाठ प्राप्त हुआ है, जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। कारण कि अद्यावधि किसी भी ग्रन्थ में चक्रवर्ती के परिचर में वैद्यों की संख्या देखने में नहीं आई। देखें गाथा १३८७।
६. **ततो कक्की जुत्तो, इंबसुवो** ॥१५०६॥ सोलापुर प्रति। यहाँ इंबसुवोके स्थान पर 'इंबपुरे' पाठ प्राप्त हुआ है। जो विशेष महत्त्वपूर्ण है, इससे कल्की के उत्पत्ति स्थान इन्द्रपुरी (दिल्ली) का द्योतन होता है। देखें गाथा १५२१।
७. **ततो बोवे** ॥१५१५॥ सोलापुर प्रति। इसका अर्थ है कि दो वर्ष तक लोगो में समीचीन धर्म की प्रवृत्ति रहती है। यहाँ बोवे के स्थान पर बोवे पाठ प्राप्त हुआ है। अर्थात् कुछ वर्षों पर्यन्त लोगो में समीचीन धर्म की प्रवृत्ति रहती है। देखें गा० १५२७।
८. बसव-ठार्य बिलवति ॥१५४६॥ सोलापुर प्रति। इसका अर्थ है कि छोटे कान के अन्त में जब प्रलय पड़ता है तब मनुष्य बस्त्र और स्थान की अभिलाषा करते हुए विलाप करते हैं। इसके पूर्व नवीन संस्करण की गा० १५५८ में आचार्य स्वयं कह चुके हैं कि छोटे काल के प्रारम्भ में मनुष्य बस्त्र और मकान आदि से रहित होते हैं तब कुछ कम २१००० वर्ष बीत जाने पर बस्त्र और मकान की अभिलाषा करना कर्म सम्भव हो सकता है ?

यहाँ 'बसए' के स्थान पर 'सरए' पाठ प्राप्त हुआ है। जो महत्त्व पूर्ण ही नहीं अपितु सिद्धा-
न्त की रक्षा करने वाला है। इसका अर्थ है कि प्रलय की वायु चलने पर मनुष्य शरण योग्य स्थान की
अभिलाषा करते हैं। देखें गा० १५६७।

- ९ अद्भुतरसय धृक्त्वपमानात् ॥१६३८॥ सोलापुर प्रति। इस पद का अर्थ होता है कि वहाँ जिन प्रतिमाओं
१०८ धनुष ऊँची थी। जो सिद्धान्त से भेन नहीं खाती। कण्ठ प्रति में 'घणु' पद नहीं है। अर्थात् यह हुआ
कि वहाँ १०८ प्रतिमाएँ विराजमान हैं। इससे छन्द की मात्राएँ भी ठीक बैठ जाती हैं। देखें गाथा १६६०।
- १० "..... सप्त बरिसंति बासारसो" ॥२२४८॥ सोलापुर प्रति। यहाँ 'रसो' के स्थान पर 'ससो' पाठ
प्राप्त हुआ है जिससे अर्थ में परिवर्तन हो गया है। सोलापुर प्रति में इस गाथा के अर्थ में विसर्गित भी वह
अब ठीक होगई है। देखें-गाथा २२७४।

ऐसे अन्य भी अनेक स्थल हैं किन्तु विस्तार-भय से यहाँ नहीं लिखे जा रहे हैं।

तिलोषपञ्चत्ती के प्रस्तुत संस्करण की मूलाधार कन्नड़ की ही प्रति है अतः प्रायः उमी प्रति के पाठ ग्रहण
कर मूल को अधिकाधिक शुद्ध बनाने का प्रयास किया गया है तथापि बुद्धि की मन्दता और ग्रन्थ की जटिलता के
कारण कहीं स्वल्पन आगया हो तो गुरुजन एक विद्वज्जन मशोषित करके ही स्वाध्याय करें।

विचारणीय स्थल : इस अधिकार के कतिपय स्थलों का समाधान बुद्धिगत नहीं हुआ। निम्नलिखित
स्थल गुरुजनों एवं विद्वानों द्वारा विचारणीय हैं—

* ग्रन्थ के प्रथम अधिकार की गाथा ११० में मनुष्यो भ्रादि के शरीर एवं उनके निवास स्थानों का
प्रमाण उत्सेषागुल से कहा गया है तथा गाथा १११ में द्वीप, समुद्र भ्रादि का प्रमाण प्रमाणागुल से कहा गया है।
किन्तु चतुर्थाधिकार की गाथा ५१ से ५६ पर्यन्त जम्बूद्वीप की सूक्ष्म परिधि का प्रमाण निकालते हुए योजनों से कोस
बनाने के लिए ४ कोस का गुणा किया गया है तथा समवसरण, तत्रस्थित सोपानो, बीधियो और वेदियो भ्रादि का
विशद वर्णन गाथा ७२४ से ७४० तक किया है, वहाँ भी योजनों से कोस बनाने के लिए ४ कोस का ही गुणा
किया गया है अर्थात् जम्बूद्वीप आदि शरीर समवसरणादि दोनों का माप उत्सेषागुल ही ग्रहण किया गया है, ऐसा
क्यों ?

* गाथा १७६ में अंत और अंतु दोनों पाठ प्राप्त हुए हैं; यहाँ कौनसा पाठ प्रयोजनीय रहेगा ?

* गाथा ४५६ में प्रतिश्रुति आदि पाँच कुलकरो ने 'हा' दण्ड विधान की व्यवस्था की। गाथा ४८१ में
भाग्य के ५ कुलकरो ने 'हा' 'मा' दण्ड-व्यवस्था बनाई। इसके आगे शेष कुलकरो द्वारा दण्ड-व्यवस्था का वर्णन नहीं
आया। क्यों ?

* गाथा ६११, ६१२-राज्यावस्था के विवेचन के तुरन्त बाद तीर्थकरो के चिह्नो का वर्णन क्यों किया
गया है ? क्या ये चिह्न राज्यावस्थानीय ध्वजा के हैं ?

* गाथा ६५१-भगवान् आदिनाथ ने चैत्र कृष्णा ९ को दीक्षा ग्रहण की और प्रथम पारणा एक वर्ष (गाथा ६७८) में किया। बँहाल शुक्ला तृतीया (अक्षय तृतीया) तक तो एक वर्ष, एक माह, ८ दिन होते हैं। यह कैसे ?

* गाथा ६५१-'उपवासे छद्मि' का अर्थ दो उपवास लेना है। तब क्या ऋषभदेव ने बेला उपवास के साथ दीक्षा ग्रहण की थी किन्तु (गाथा ६७८ में) पारणा एक वर्ष बाद करने का उल्लेख है तब दो उपवास की संगति कैसे बैठेगी ?

* गाथा ८८२-जिन पीठों पर चढ़ कर गणेश देव स्तुति पूजादि करते हैं उन्हीं पर धार्मिका प्रमुख और सेविका (स्त्री पर्याय वाली) प्रमुख कैसे चढ़ सकती है ?

* गाथा ९०८ से ९१५ में केवलज्ञान के ११ अतिशय और गाथा ९१६ से ९२३ में देवकृत १३ अतिशय कहे गये हैं।

* गाथा ९३२ में दिव्यध्वनि को प्रातिहार्य न बता कर 'भक्तियुक्त गणो द्वारा वेष्टित' होने को प्रातिहार्य कहा गया है।

* गाथा ९४१ मिथ्यादृष्टि और अभव्य जीवो का समवसरण में प्रवेश निषिद्ध करती है।

* गाथा ९७८ में गणेशदेव की ऋद्धियो में केवलज्ञान भी बताया गया है। गणेश को प्रारम्भ में तो केवलज्ञान होता नहीं, फिर केवलज्ञान हो जाने पर शेष ऋद्धियो की आवश्यकता ही क्या रही ? गणेश को केवल-ऋद्धि कैसे ?

* गाथा ११९६-ऋषभदेव माघ कृष्णा चतुर्दशी के पूर्वाह्णे में मोक्ष पधारें। गाथा १२५० में कहा है कि ऋषभजिनेन्द्र तृतीय काल में ३ वर्ष ८३ माह शेष रहने पर मोक्ष गए। गाथा १२७७ में ऋषभजिनेन्द्र के मोक्षगमन के पश्चात् ३ वर्ष ८३ माह व्यतीत होने पर चतुर्थकाल का प्रवेश हुआ कहा गया है। माघ कृष्णा चतुर्दशी से आषाढ शुक्ला पूर्णिमा पर्यन्त ५३ माह ही होते हैं, ८३ माह नहीं क्योंकि युग का प्रारम्भ श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से ही होता है। जैसे-गाथा १२१९ में वीर जिनेन्द्र कातिक कृष्णा चतुर्दशी के प्रत्युष काल (चतुर्दशी के अन्तिम प्रहर अर्थात् अमावस्या का उषा काल) में मोक्ष गए, ऐसा कहा है। गाथा १२५० में कहा है कि वीर जिनेन्द्र चतुर्थकाल के ३ वर्ष ८३ माह शेष रहने पर मोक्ष गये। यहाँ कातिक कृष्णा अमावस्या से धापाड़ी पूर्णिमा पर्यन्त ८३ माह हो जाते हैं। गाथा ५६० में कहा गया है कि तृतीय काल के चौरासी लाख पूर्व और ३ वर्ष ८३ माह शेष थे तब ऋषभदेव का जन्म हुआ। गाथा ५६६ में ऋषभजिनेन्द्र की आयु ८४ लाख पूर्व की कही गई है तब यदि मोक्ष तिथि माघ कृष्णा चतुर्दशी ही मानी जाय तो ऋषभजिनेन्द्र ८४ लाख पूर्व और ३ माह पर्यन्त इस भव में रहे, ऐसा सम्भव नहीं है। इन प्रमाणों से ऋषभजिनेन्द्र की मोक्ष कल्पारणक तिथि पर विचार अपेक्षित है।

* गाथा १२४४-१२४८ में सौषमं स्वर्ग से ऊर्ध्वर्ध्वेयक पर्यन्त उत्पन्न होने वाले ऋषभादि चौबीस तीर्थंकरों के शिष्यों की संख्या कही गई है और गाथा १२२६-१२२८ में अनुत्तरोत्पन्न शिष्यों की संख्या कही गई है; तो क्या किसी भी तीर्थंकर का कोई भी शिष्य धनुदिशो में उत्पन्न नहीं हुआ ?

✽ गाथा १२४०—वीर जिनेन्द्र के ४४०० शिष्य मोक्ष गये है। गाथा १२४१-१२४२ के अनुसार वीर-जिनेन्द्र को केवलज्ञान होने के ६ वर्ष पश्चात् से उनके शिष्यों को मोक्ष होना प्रारम्भ हो गया था। गाथा १२१६ में कहा है कि वीर एकाकी सिद्ध हुए हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि अन्य तीर्थंकरों के साथ दी हुई मुनि सव्या (एक साथ) मुक्त सव्या न होकर सह-सव्या होगी।

✽ गाथा १३१७ और १३१६ में चतुरग वन (सेना), गाथा १३३१ में पचाङ्ग सेना और गाथा १३३८, १३५३, १३७३ और १३७५ में षडङ्ग सेना शब्द आये हैं। इनका भाव स्पष्ट नहीं हुआ।

✽ गाथा १४८४ में चौबीस कामदेवों के नाम नहीं दशयि गये हैं।

✽ गाथा १४८५ में १६६ महापुरष न कह कर १६० ही कहे गये हैं। ६ प्रतिनारायणों का उल्लेख नहीं हुआ।

✽ गाथा १५५६ से १५७१ पर्यन्त तीक्ष्णपवन, शीतल एव धार जल, विष, घूम, घूलि, वख और अग्नि इन सात कुट्टिषियों का कथन किया है किन्तु गाथा १५७९ से १५८२ पर्यन्त जल, दूध, अमृत और रस इन चार का ही सात-सात दिन तक वृष्टि करने का कथन आया है, तब ये ४९ दिन कैसे होंगे ?

✽ गाथा १६४२ . सातवें, तेईसवें और अन्तिम तीर्थंकर पर उपसर्ग। सुपाश्वनाथ जिनेन्द्र पर क्या उपसर्ग हुए ?

✽ गाथा १८५३ सौधमं और ईशान इन्द्र पाण्डुकशिला पर बाल भगवान का जन्मभिक्षेक बँट कर करते हैं।

✽ गाथा २६२८ में घातकीलखण्ड स्थित भद्रशाल वन की पूर्वा पर लम्बाई कही गई है। गाथा २६२६ में इसी वन के उत्तर-दक्षिण विस्तार की उपलम्बि का निषेध किया है किन्तु गाथा २६३० में वही विस्तार दर्शाया गया है; ऐसा क्यों ?

✽ गाथा २८६६ में पुष्करार्ध स्थित भद्रशाल की पूर्वापर लम्बाई २१५७५८ योजन कही गई है और इससे चार गाथा आगे गाथा २८७० में पुनः वही प्रमाण दर्शाया है। क्यों ?

✽ गाथा ३००३ में घ्रात समयों में उत्कृष्ट रूप से सिद्ध होने वाली की सख्या (३२ + ४८ + ६० + ७२ + ८४ + ९६ + १०८ + १०८ = ६०८ कही गई है। गाथा ३००४ में मध्यम प्रतिपत्ति से सब समयों में (६०८ ÷ ८ =) ७६ जीव न कह कर (५९२ ÷ ८ =) ७४ जीव कहे गये हैं। इसके आगे भी गाथा ३००५ में अतीत काल के सर्व समयों को ६०८ से गुणित न करके ५६२ से गुणा कर सर्व मुक्त जीवों का प्रमाण निकाला गया है। क्यों ?

समानार्थक गाथाएँ—जम्बू आदि अठारह द्वीप का और लवण समुद्र व कालोदधि का वर्णन प्रायः एक जैसा ही है अतः ग्रन्थ में प्रायः समान अर्थ को दर्शाने वाली अनेक गाथायें हैं। जैसे—गाथा ५२४, ५२५ और ५२६ में गाथा १४२३, १४२४ एव १४२५ की समानता है। इसी प्रकार गाथा ५२७ और १४५१ में, ५२८ और १४५२ में, १६६१ एव १६०५ में, २०२७ एव २०३५-३६ में, २५६० और २८३८ में, २५६१ में और २८३६; २५६२

और २८४० मे, २५६३ और २८४१ मे; २५९४ और २८४२ में; २६३५ और २८६३ मे, २६५०, २६५१ और २८७४-७५ मे; २६५८ और २८७६ मे, २७०७ और २६२२ मे, २७०८ और २६२३ मे और २८६६ तथा २८७० में भाव साम्य है।

कार्यक्षेत्र—उदयपुर नगर के मध्य मण्डी की नाल मे स्थित १००८ श्री पारबनाथ हि० जैन अण्डेलवाल मन्दिर में रह कर ही इस अधिकार का कार्य पूर्ण किया गया है।

सम्बल—इस भव्य जिनालय मे स्थित भूगर्भ प्राप्त, श्यामवर्ण, खड्गामन लगभग ३' उत्तु ग, प्रतिशय-वान अतिमनोज्ञ १००८ श्री चिन्तामणि पारबनाथ जिनेन्द्र की चरण-रज एव हृदय स्थित आपकी अनुपम भक्ति, प्रागम-निष्ठा और परम पूज्य श्रद्धेय साधु परमेश्वरों का शुभाशीर्वाद रूप बरद हस्त ही मेरा सम्बल रहा है। क्योंकि जैसे लकड़ी के आधार बिना धन्धा व्यक्ति चल नहीं सकता वैसे ही देव, शास्त्र और गुरु की भक्ति बिना मैं भी यह महान् कार्य नहीं कर सकती थी। ऐसे तारण-तरण देव, शास्त्र, गुरु को मेरा कोटिज. त्रिकाल नमोऽस्तु ! नमोऽस्तु !! नमोऽस्तु !!

आधार—प्रो० आदिनाथ उपाध्याय एवं प्रो० हीरालालजी द्वारा सम्पादित, प० बालचन्द्र सिद्धान्त-शास्त्री द्वारा हिन्दी भाषानुवादित एव जीवराज ग्रन्थवाला, सोलापुर से प्रकाशित तिलोयपण्यसी और जैनबन्दी स्थित जैन मठ की कलक प्रति से की हुई देवनागरी लिपि ही इस खण्ड की आधार मिला है।

सहयोग—सम्पादक श्री बेलनप्रकाशजी पाटनी सौम्य भुद्रा, सरल हृदय, समित जीषन और समीचीन ज्ञान भण्डार के धनी हैं। आधि और व्याधि के महश उपाधिरूपी रोग से आप ग्रहनिश अपना बचाव करते रहते हैं। निर्लोभवृत्ति आपके जीवन की सबसे महान् विशेषता है।

हिन्दी भाषा पर आपके विशिष्ट अधिकार है। आपके द्वारा किये हुए यथोचित सशोधन, परिवर्धन एवं परिवर्तनो से ग्रन्थ को विशेष सौष्ठवता प्राप्त हुई है।

सूक्ष्मातिसूक्ष्म अर्थ आदि को पकड़ने की तत्परता आपको पूर्व-पुण्य योग मे सहज ही उपलब्ध है।

सम्पादन कार्य के अतिरिक्त समय-समय पर आपके बहुत सहयोग प्राप्त होता रहा है।

प्रो० श्री लक्ष्मीचन्द्रजी जैन जबलपुर ने गणित की दृष्टि से ग्रन्थ का भ्रवलोकन कर, हिमवान आदि पर्वत एवं हरिवर्ष आदि क्षेत्रों का सूक्ष्म क्षेत्रफल निकालकर तथा इस अधिकार की गणित सम्बन्धी प्रस्तावना लिख कर सराहनीय सहयोग दिया है।

प्रतियों के मिलान एवं पाठो के खनन आदि मे डा० उदयचन्द्रजी जैन उदयपुर का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है।

पूर्व अवस्था के विद्यागुरु, सरस्वती की सेवा मे अनवरत सलग्न, सरल प्रकृति और सौम्याकृति विद्वच्छिरोमणि श्री ०० पद्मलालजी साहित्याचार्य सागर इन्द्रावस्था मे प्रवास की कठिनाइयोंको नगण्य मानते हुए सन् १९८४ के वर्षायोग मे ग्रन्थावलोकनार्थ भिण्डर पधारे थे। आपके सत्प्रेरणा ही यह महान् कार्य कराने मे सक्षम हुई है।

श्री उदार चेता, दानशील श्री निर्मलकुमारजी सेठी इस ज्ञानयज्ञ के प्रमुख यजमान हैं। आपने सेठी ट्रस्ट के विशेष धनुदान से प्रथम खण्ड और यह द्वितीय खण्ड भव्यजनो के हाथ में पहुँचाया है और पहुँचा रहे हैं। आपका यह धनुपम सहयोग अचर्य ही विशुद्धज्ञान में सहयोगी होगा।

सचस्य ब्रह्मचारी एव ब्रह्मचारिणीजी, प्रेस मालिक श्री पं. लालजी, श्री बिमलप्रकाशजी इण्टर्समेन अजमेर श्री रघुसकुमार मेहता उदयपुर एवं श्री बि० जैन समाज उदयपुर का सहयोग प्राप्त होने से ही आज यह द्वितीय खण्ड नवीन परिधान में प्रकाशित हो पाया है।

आशीर्वाद : इस सम्यग्ज्ञान रूपी महायज्ञ में तन, मन एव धन आदि से जिन जिन भव्य जीवों ने किञ्चित् भी सहयोग दिया है वे सब परम्पराय श्रीधर ही विशुद्धज्ञान को प्राप्त करें। यही मेरा आशीर्वाद है।

मुझे प्राकृत भाषा का किञ्चित् भी ज्ञान नहीं है। बुद्धि अल्प होने से विषयज्ञान भी न्यूनतम है। स्मरण शक्ति और शारीरिक शक्ति क्षीण होती जा रही है। इस कारण स्वर, व्यंजन, पद, अर्थ एव गणित आदि की भूल हो जाना स्वाभाविक है क्योंकि—'को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रं' अतः परम पूज्य गुरुजनों से इसके लिये क्षमाप्रार्थी हूँ। विद्वज्जन ग्रन्थ को शुद्ध करके ही अर्थ ग्रहण करें।

इत्यलम् !

भद्र भूयात् !

स० २०४२
वसन्त पंचमी

आशिका विशुद्धमती
दिनांक १३-२-१९८६



आद्यमिताक्षर

वीतराग, सर्वज्ञ और हितोपदेशी भगवान् जिनैन्द्र के मुखारविन्द से निर्गत जिनागम चार अनुयोगों में सन्धिभक्त है। प्रथमानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग की अपेक्षा गणित प्रधान होने से करणानुयोग का विषय जटिलताओं से युक्त होता है।

सिद्धान्त चक्रवर्ती श्री नेमिचन्द्राचार्य विरचित त्रिलोकसार वासना सिद्धि प्रकरणों के कारण दुरूह है। करणानुयोग मर्मज्ञ श्री रतनचन्द्र जी मुख्तार सहारनपुर वालों की प्रेरणा और सहयोग से इस ग्रन्थ की टीका हुई। इसका प्रकाशन सन् १९७५ में हुआ था, इसके पूर्व प. टोडरमल जी की हिन्दी टीका के अतिरिक्त इस ग्रन्थ की अन्य कोई हिन्दी टीका उपलब्ध नहीं हुई थी।

श्री सकलकीर्त्याचार्य विरचित सिद्धान्तसार दीपक त्रिलोकसार जैसा कठिन नहीं था, किन्तु यह ग्रन्थ अप्रकाशित था। हस्तलिखित में भी इस ग्रन्थ की कोई टीका उपलब्ध नहीं हुई। हस्तलिखित प्रतियों से टीका करने में कठिनाई का अनुभव हुआ। इस ग्रन्थ का प्रकाशन सन् १९८१ में हो चुका था।

तिलोपण्णत्ती में त्रिलोकसार सदृश वासना सिद्धि नहीं है फिर भी ग्रन्थ का प्रतिपाद्य विषय सरल नहीं है। इस ग्रन्थ के (प्रथम और पंचम) ये दो अधिकार अत्यधिक कठिन हैं। सन् १९७५ में श्री रतनचन्द्र जी मुख्तार से प्रथमाधिकार की कठिन-कठिन ८३ गाथाएँ समझ कर आकृतियों सहित नोट कर ली थीं। मन बार-बार कह रहा था कि इन गाथाओं का यह सरलार्थ यदि प्रकाशित हो जाय तो स्वाध्याय सलग्न भव्यों को विशेष लाभ प्राप्त हो सकता है, इसी भावना से सन् १९७७ में जीवराज ग्रन्थमाला को लिखाया कि यदि तिलोपण्णत्ती का दूसरा संस्करण छप रहा हो तो सूचित करें, उसमें कुछ गाथाओं का गणित स्पष्ट करके छापना है, किन्तु सस्था से दूसरा संस्करण निकला ही नहीं। इसी कारण टीका के भाव बने और २२।११।१९८१ को टीका प्रारम्भ की तथा १६।२।८२ को दूसरा अधिकार पूर्ण कर प्रेस में भेज दिया। पूर्व सम्पादकों का श्रम यथावत् बना रहे इस उद्देश्य से गाथार्थ यथावत् रखकर मात्र गणित की जटिलताएँ सरल कीं। इनमें भी पाँच-सात गाथाओं की सदृष्टियों का अर्थ बुद्धिगत नहीं हुआ फिर भी कार्य सतत् चलता रहा और २०।३।८२ तृतीयाधिकार भी पूर्ण हो गया, किन्तु इसकी भी तीन चार गाथाएँ स्पष्ट नहीं हुईं। चतुर्थाधिकार की ५६ गाथा से आगे तो लेखनी चली ही नहीं, अतः कार्य बन्द करना पड़ा।

समस्या के समाधान हेतु स्वस्ति श्री भट्टारक जी मूडविद्री से सम्पर्क साधा। वहाँ से कुछ पाठ भेद आये उससे भी समाधान नहीं हुआ। अनायास स्वस्ति श्री कर्मयोगी भट्टारक चारकीर्ति जी जैनविद्री का सम्पर्क हुआ, वहाँ से पूरे ग्रन्थ की लिप्यन्तर प्रति प्राप्त हुई जिसमें अनेक बहुमूल्य पाठभेद और

छूटी हुई ११५ गाथाएँ प्राप्त हुई जो इस प्रकार हैं—

अधिकार — प्राप्त गाथाएँ

प्रथम —	३	}	इन तीन अधिकारो का प्रथम खण्ड है। इस खण्ड में ४५ चित्र और १९ तालिकाएँ हैं।
द्वितीय —	४		
तृतीय —	१९	}	चतुर्थ अधिकार का दूसरा खण्ड है, इसमें ३० चित्र और ४६ तालिकाएँ हैं।
चतुर्थ —	५५		
पचम—	२	}	इन पाँच अधिकारो का तृतीय खण्ड है। इस खण्ड में १५ चित्र और ३३ तालिकाएँ हैं।
षष्ठ —	०		
सप्तम—	५	}	
अष्टम—	२३		
नवम—	४	}	

इस पूरे ग्रन्थ में नवीन प्राप्त गाथाएँ ११५, चित्र ९० और तालिकाएँ ९५ हैं। पाठ भेद अनेक हैं। पूरे ग्रन्थ में अनुमानत ५२-५३ विचारणीय स्थल हैं, जो दूसरे एव तीसरे खण्ड के प्रारम्भ में दिये गये हैं। ग्रन्थ प्रकाशित हुए लगभग नौ वर्ष हो चुके हैं किन्तु इन विचारणीय स्थलो का एक भी समाधान प्राप्त नहीं हुआ।

बुद्धिपूर्वक सावधानी बरतते हुए भी 'को न विमुह्यति शास्त्र समुद्रे' नीत्यानुसार अशुद्धियाँ रहना स्वाभाविक है।

इस द्वितीय संस्करण के प्रकाशन के प्रेरणा सूत्र परमपूज्य १०८ श्री उपाध्याय ज्ञान सागर जी के चरणों में सविनम्र नमोऽस्तु करते हुए मैं आपका आभार मानती हूँ।

इस संस्करण को श्री १००८ चन्द्रप्रभ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र देहरा-तिजारा की कार्यकारिणी ने अपनी ओर से प्रकाशित कराया है। सभी कार्यकर्त्ताओं को मेरा शुभाशीर्वाद।

आर्यिका विशुद्धमति

दि २७ ६ १९९७

अभोरणशानोपयोगी, धार्मिकमार्गपोषक

परम पू० १०५ आर्यिका श्री विशुद्धमती माताजी

[संक्षिप्त जीवन-वृत्त]

गेहूँघ्रा वर्ण, मझोला कद, अतिसूक्ष्म शरीर, चौड़ा ललाट, भीतर तक झँकती सी ऐतक धारण की हुई आँखें, हित-मित-प्रिय स्पष्ट बोल, समयित सधी चाल और सौम्य मुखमुद्रा—बस, यही है उनका अंगन्यास ।

नगे पाँव, लुञ्जितसिर, धवल शाटिका, मयूरपिच्छिका—बस, यही है उनका वेष-विन्यास ।

विषयाशाविरक्त, ज्ञानध्यान-तप-जप मे सदा निरत, करुणासागर, परदुःख-कातर, प्रवचनपटु, निःस्पृह, समता-विनय-वैयं और सहिष्णुता की साकारमूर्ति, भद्रपरिणामी, साहित्य-सृजनरत, साधना मे वज्र से भी कठोर, वात्सल्य मे नवनीत से भी मृदु, आगमनिष्ठ, गुरुभक्तिपरायण, प्रभावनाप्रिय— बस, यही है उनका अन्तर आभास ।

जूली और जया, जानकी और जेबुमिसा सबके जन्मो का लेखा-जोखा नगरपालिकायें रखती हैं पर कुछ ऐसी भी हैं जिनके जन्म का लेखा-जोखा राष्ट्र, समाज और जातियों के इतिहास स्नेह और श्रद्धा से अपने घर मे सुरक्षित रखते हैं । वि० स० १९८६ की चंद्र शुक्ला तृतीया को रीठी (जबलपुर, म० प्र०) मे जन्मी वह बाला सुमित्रा भी ऐसी ही रही है—जो आज है आर्यिका विशुद्धमती माताजी ।

इस शताब्दी के प्रसिद्ध सन्त पूज्य श्री गणेशप्रसाद जी वर्णी के निकट सम्पर्क से संस्कारित धार्मिक गोलापूर्व परिवार में सद्गृहस्थ पिताश्री लक्ष्मणलाल जी सिधई एव माता सी० मथुराबाई की पाँचवी सन्तान के रूप मे सुमित्राजी का पालन-पोषण हुआ । घूँटी मे ही दयाधर्म और सदाचार के मस्कार मिले । फिर थोड़ी पाठशाला की शिक्षा, बस; सब कुछ सामान्य, विलक्षणता का कहीं कोई चिह्न नहीं । आयु के पन्द्रह वर्ष बीतते-बीतते पास के ही गाँव बाकल मे एक घर की बच्ची बनकर सुमित्राजी ने पिता का घर छोड़ा । इतने सामान्य जीवन को लखकर तब कैसे कोई अनुमान कर लेता कि यह बालिका एक दिन ठोस आगमज्ञान प्राप्त करके स्व-पर-कल्याण के पथ पर आरूढ हो स्त्री-पर्याय का उत्कृष्ट पद प्राप्त कर लेगी ।

सच है, कर्मों की गति बड़ी विचित्र होती है। चन्द्रमा एवं सूर्य का राक्षु धीर केतु नामक ग्रह-विशेष से पीड़ा, सर्प तथा हाथी को भी मनुष्यों के द्वारा बन्धन धीर विद्वज्जन की दरिद्रता देखकर अनुमान लगाया जाता है कि नियति बलवान है धीर फिर काल ! काल तो महाकूर है ! 'अपने मन कछु धीर है विघना के कछु धीर'। देव दुर्विपाक से सुमित्राजी के विवाह के कुछ ही समय बाद उन्हें सदा के लिए मातृ-पितृ-वियोग हुआ और विवाह के डेढ़ वर्ष के भीतर ही कन्या-जीवन के लिए अभिशापस्वरूप वैधव्य ने आपकी आ घेरा।

अब तो सुमित्राजी के सम्मुख समस्याओं से घिरा सुदीर्घ जीवन था। इष्ट(पति और माता-पिता) के वियोग से उत्पन्न हुई असहाय स्थिति बड़ी दारुण थी। किसके सहारे जीवन-यात्रा व्यतीत होगी ? किस प्रकार निश्चित जीवन मिल सकेगा ? अश्लिष्ट दीर्घजीवन का निर्वाह किस विधि होगा ? इत्यादि नाना प्रकार की विकल्प-लहरियाँ मानस को मथने लगीं। भविष्य प्रकाशविहीन प्रतीत होने लगा। ससार में शीलवती स्त्रियाँ धैर्यशालिनी होती हैं, नाना प्रकार की विपत्तियों को वे हँसते-हँसते सहन करती हैं। निर्वनता उन्हें डरा नहीं सकती, रोगशोकादि से वे विचलित नहीं होतीं परन्तु पतिवियोगसदृश दारुण दुःख का वे प्रतिकार नहीं कर सकती हैं। यह दुःख उन्हें असह्य हो जाता है। ऐसी दुःखपूर्ण स्थिति में उनके लिए कल्याण का मार्ग दर्शाने वाले विरल ही होते हैं और सम्भवतया ऐसी ही स्थिति के कारण उन्हें 'अबला' भी पुकारा जाता है। परन्तु सुमित्राजी में आत्मबल प्रगट हुआ, उनके अन्तरंग में स्फुरणा हुई कि इस जीव का एक मात्र सहायक या अबलम्बन धर्म ही है। 'धर्मो रक्षति रक्षितः'। अपने विवेक से उन्होंने सारी स्थिति का विश्लेषण किया और 'शिक्षार्जन' कर स्वावलम्बी (अपने पाँव पर खड़े) होने का संकल्प लिया। भाइयों— श्री नीरज जी और श्री निर्मल जी, सतना—के सहयोग से केवल दो माह पढ़ कर प्राइमरी की परीक्षा उत्तीर्ण की। मिडिल का त्रिवर्षीय पाठ्यक्रम दो वर्ष में पूरा किया और शिक्षकीय प्रशिक्षण प्राप्त कर अध्यापन की ग्रहंता अर्जित की और अनन्तर सागर के उसी महिलाश्रम में जिसमें उनकी शिक्षा का श्रीगणेश हुआ था—अध्यापिका बनकर सुमित्राजी ने स्व + अबलम्बन के अपने संकल्प का एक चरण पूर्ण किया।

सुमित्राजी ने महिलाश्रम (विधवाश्रम) का सुचारु रीत्या सचालन करते हुए करीब बारह वर्ष पर्यन्त प्रधानाध्यापिका का गुरुतर उत्तरदायित्व भी सँभाला। आपके सद्प्रयत्नों से आश्रम में श्री पाष्वनाथ चैत्यालय की स्थापना हुई। भाषा और व्याकरण का विशेष अध्ययन कर आपने भी 'साहित्यरत्न' और 'विद्यालकार' की उपाधियाँ अर्जित की। विद्वद्शिरोमणि डॉ० प० पन्नालाल जी साहित्याचार्य का विनीत शिष्यत्व स्वीकार कर आपने 'जैन सिद्धान्त' में प्रवेश किया और धर्म विषय में 'शास्त्री' की परीक्षा उत्तीर्ण की। अध्यापन और शिक्षार्जन की इस सलगनता ने सुमित्रा जी के जीवनविकास के नये क्षितिजों का उद्घाटन किया। शनैःशनैः उनमें 'ज्ञान का फल' अकुरित होने लगा। एक मुसद संयोग ही समझिये कि सन् १९६२ में परमपूज्य परमश्रद्धेय (स्व०)

आचार्यश्री धर्मसागर जी महाराज का वर्षायोग सागर में स्थापित हुआ। आपकी परम निरपेक्षवृत्ति और शान्त सौम्य स्वभाव से सुमित्राजी अभिभूत हुईं। संघस्थ प्रवरवक्ता पूज्य १०८ (स्व०) श्री सन्मत्तिसागर जी महाराज के मार्मिक उद्बोधनों से आपको असीम बल मिला और आपने स्व + अक्षयम्बन के अपने सकल्प के अगले चरण की पूर्ति के रूप में चरित्र का मार्ग अंगीकार कर सप्तम प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये।

विक्रम सवत् २०२१, श्रावण शुक्ला सप्तमी, दि० १४ अगस्त, १९६४ के दिन परम पूज्य तपस्वी, अध्यात्मवेत्ता, चारित्रशिरोमणि, दिग्म्बराचार्य १०८ श्री शिवसागरजी महाराज के पुनीत कर-कमलों से ब्रह्मचारिणी सुमित्राजी की आर्यिका दीक्षा अतिशयक्षेत्र पपीराजी (म० प्र०) में सम्पन्न हुई। अब से सुमित्राजी 'विशुद्धमती' बनी। बुन्देलखण्ड में यह दीक्षा काफी वर्षों के अन्तराल से हुई थी अतः महती धर्मप्रभावना का कारण बनी।

आचार्यश्री के सघ में ध्यान और अध्ययन की विशिष्ट परम्पराओं के अनुरूप नवदीक्षित आर्यिकाश्री के नियमित शास्त्राध्ययन का शीरोधार्य हुआ। सघस्थ परम पूज्य आचार्यकल्प श्रुतसागर जी महाराज ने द्रव्यानुयोग और करणानुयोग के ग्रन्थों में आर्यिकाश्री का प्रवेश कराया। अभीक्ष्णज्ञानोपयोगी पूज्य अजितसागरजी महाराज ने न्याय, साहित्य, धर्म और व्याकरण के ग्रन्थों का अध्ययन कराया। जैन गणित के अम्यास में और षट्खण्डागम सिद्धान्त के स्वाध्याय में ब० पं० रतनचन्दजी मुस्तार आपके सहायक बने। सतत परिश्रम, अनवरत अम्यास और सच्ची लगन के बल पर पूज्य माताजी ने विशिष्ट ज्ञानार्जन कर लिया। यहाँ इस बात का उल्लेख करना अप्रासंगिक न होगा कि दीक्षा के प्रारम्भिक वर्षों में आहार में निरन्तर अन्तराय आने के कारण आपका शरीर अत्यन्त अशक्त और गिथिल हो चला था पर शरीर में बलवती आत्मा का निवास था। श्रावको—वृद्धों की ही नहीं अर्द्धों आँखों वाले युवकों की लाख सावधानियों के बावजूद भी अन्तराय आहार में बाधा पहुँचाते रहे। आर्यिकाश्री की कड़ी परीक्षा होती रही। असाता के जमन के लिए अनेक लोगों ने अनेक उपाय करने के मुझाव दिये, आचार्यश्री ने कर्मोपशमन के लिए बृहत्शांतिमन्त्र का जाप करने का सकेत किया पर आर्यिकाश्री का विश्वास रहा है कि समताभाव से कर्मों का फल भोगकर उन्हें निर्जोरा करना ही मनुष्यपर्याय की सार्थकता है, ज्ञान की सार्थकता है। आपकी आत्मा उस विषम परिस्थिति में भी विचलित नहीं हुई, कालान्तर में वह उपद्रव कारण पाकर शमित हो गया। पर इस अर्धघंटे में भी उनका अध्ययन सतत जारी रहा। आर्यिकाश्री द्वारा की गई 'त्रिलोकसार' की टीका के प्रकाशन के अवसर पर परम पूज्य १०८ श्री अजितसागर जी महाराज ने आशीर्वाद देते हुए लिखा—

“सागर महिलाश्रम की अध्ययनशीला प्रधानाध्यापिका सुमित्राबाई ने अतिशयक्षेत्र पपीरा में आर्यिका दीक्षा धारण की थी। तत्पश्चात् कई वर्षों तक अन्तरायों के बाहुल्य के कारण शरीर से

दृष्टस्वप्न रहते हुए भी वे धर्मग्रन्थों के पठन में प्रवृत्त रही। आपने चारों ही अनुयोगों के निम्नलिखित ग्रन्थों का गहन अध्ययन किया है। करणानुयोग—सिद्धान्तशास्त्र धवल (१६ खण्ड), महाधवल, (दो खण्डों का अध्ययन हो चुका है, तीसरा खण्ड चालू है।) ब्रह्मानुयोग—ममयसार, प्रवचनसार, नियमसार, पंचास्तिकाय, इष्टोपदेश, समाधिगतक, आत्मानुशासन, बृहद्द्रव्यसंग्रह ! न्यायशास्त्रों में न्यायदीपिका, परीक्षामुख, प्रमेयरत्नमाला। व्याकरण में कातन्त्र रूप माला, कलापव्याकरण जनेन्द्र संघृष्टि, शब्दार्णवचन्द्रिका। चरणानुयोग—रत्नकरण्ड श्रावकाधार, भ्रमगर धर्माभूत, भूलाराधना, आचारसार, उपासकाध्ययन। प्रथमानुयोग—सम्यक्त्व कौमुदी, क्षत्रचूडामणि, गद्य चिन्तामणि, जोबन्धरचम्पू, उत्तरपुराण, हरिवंशपुराण, पद्मपुराण आदि।”

(त्रिलोकसार: पृ० ६)

इस प्रकार पूज्य माताजी ने इस भ्रगाध भागम-वारिधि का भ्रवगाहन कर अपने ज्ञान को प्रौढ बनाया है और उसका फल भ्रब हमें साहित्यसृजन के रूप में उनमें भ्रनवन्त प्राप्त हो रहा है। भ्राज तो जैसे 'जिनवाणी की सेवा' ही उनका व्रत हो गया है। उन्होंने भ्राचार्यों द्वारा प्रणीत करणानुयोग के विशालकाय प्राकृत-संस्कृत ग्रन्थों की सचित्र सरल सुबोध भाषाटीकायें लिखी हैं, साथ ही सामान्यजनोंपयोगी अनेक छोटी-बड़ी रचनाओं का भी प्रकाशन किया है। उनके द्वारा प्रणीत साहित्य की सूची इसप्रकार है—

- भाषा टीकाएँ—१ सिद्धान्तचक्रवर्ती नेमिचन्द्राचार्य विरचित त्रिलोकसार की हिन्दी टीका।
२ भट्टटारक सकलकीर्ति विरचित सिद्धान्तसार बीपक की हिन्दी टीका।
३ परम पूज्य यतिवृषभाचार्य विरचित तिलोत्पण्णत्ती की सचित्र हिन्दी टीका (तीन खण्डों में)

मौलिक रचनाएँ—१ श्रुतनिकुञ्ज के किञ्चित् प्रसून (व्यवहार रत्नत्रय की उपयोगिता)

२. गुरु गौरव ३. श्रावक सोपान और बारह भावना
४ धर्मप्रवेशिका प्रश्नोत्तरमाला ५ धर्मोद्योत प्रश्नोत्तरमाला
६. भ्रानन्द की पद्धति. अहिंसा ७ निर्माल्यग्रहण पाप है
८ आचार्य महावीरकीर्ति स्मृति ग्रन्थ एक अनुशीलन

संकलन—१. शिवसागर स्मारिका २ आत्मप्रसून ३. वास्तुविज्ञानपरिचय

- सम्पादन—१. समाधिदीपक २. श्रमणचर्या ३. दीपावली पूजनविधि
४. श्रावक सुमनसंचय ५. स्तोत्रसंग्रह ६. श्रावकसोपान
७ आर्याका आर्याका है, श्राविका नहीं ८. सस्कार ज्योति ९. छहडाला
१० क्षपणासार (हिन्दी टीका) ११. पाक्षिक श्रावक प्रतिक्रमण सामायिक विधि
१२. बृहद् सामायिक पाठ एव व्रती श्रावक प्रतिक्रमण,
१३ जेनाचार्य शान्तिसागर जी महाराज का सक्षिप्त जीवनवृत्त।
१४. आचार्य शान्तिसागर चरित्र
१५. ऐसे थे चरित्र चक्रवर्ती

- १६ शान्तिधर्मप्रदीप अपरनाम दान विचार
 १७ नारी ! बनो सदाचारी
 १८ वस्तुविज्ञा (गृहनिर्माण कला)

अब तक आपने पपीरा, श्रीमहावीरजी, कोटा, उदयपुर, प्रतापगढ़, टोडारायसिंह, भीण्डर, अजमेर, निवाई, किशनगढ़ रेनवाल, सवाईमाधोपुर, सीकर, कूण, भीलवाडा, अगिन्दा, फलासिया आदि स्थानों पर वर्षायोग सम्पन्न किये हैं। टोडारायसिंह, उदयपुर, रेनवाल, निवाई में आपके क्रमशः दो, पाँच, दो और तीन बार चालुर्मास हो चुके हैं। सर्वत्र आपने महती धर्मप्रभावना की है और श्रावको को सन्मार्ग में प्रवृत्त किया है। श्री शान्तिवीर गुरुकुल, जोबनेर को स्थायित्व प्रदान करने के लिए आपकी प्रेरणा से श्री दि० जैन महावीर चैत्यालय का नवीन निर्माण हुआ है और वेदीप्रतिष्ठा भी हुई है। जनघन एवं आवागमन आदि अन्य साधनविहीन अलयादी ग्राम स्थित जिनमन्दिर का जीर्णोद्धार, नवीन जिनबिम्ब की रचना, नवीन वेदी का निर्माण एवं वेदी प्रतिष्ठा आपके ही सद्प्रयत्नो का फल है। श्री दि० जैन धर्मशाला, टोडारायसिंह का नवीनीकरण एवं अशोकनगर, उदयपुर में श्री शिवसागर सरस्वती भवन का निर्माण आपके मार्गदर्शन का ही सुपरिणाम है।

श्री ब्र० सूरजबाई मु० डघोडी (जयपुर) की क्षुल्लिका दीक्षा, ब्र० मनफूलबाई (टोडारायसिंह) को आठवी प्रतिमा एवं श्री कजोडीमल जी कामदार (जोबनेर) को दूसरी प्रतिमा के व्रत आपके करकमलो से प्रदान किये गये हैं।

शास्त्रममुद्र का आलोडन करने वाली पूज्य माताजी की आगम में घट्ट आस्था है। क्षुद्र भौतिक स्वार्थों के लिए सिद्धान्तों को अपने अनुकूल तोड़मोड़ कर प्रस्तुत करने वाले आपकी दृष्टि में अक्षम्य है। मज्जातित्व में आपकी पूर्ण निष्ठा है। विधवाविवाह और विजातीय विवाह आपकी दृष्टि में कथमपि शास्त्रसम्मत नहीं है। आचार्य सोमदेव की इस उक्ति का आप पूर्ण समर्थन करती हैं—

स्वकीयाः परकीयाः वा मर्यादासोपिनो नराः ।
 नहि माननीय तेषां तपो वा श्रुतमेव च ॥

अर्थात् स्वजन से या परजन से, तपस्वी हो या विद्वान् हो किन्तु यदि वह मर्यादाओं का लोप करने वाला है तो उसका कहना भी नहीं मानना चाहिए। (धर्मोद्योत प्रश्नोत्तर भास्वा तृतीय संस्करण पृ० ६६ से उद्धृत)

पूज्य माताजी स्पष्ट और निर्भीक धर्मोपदेशिका हैं। जनानुरजन की क्षुद्रवृत्ति को आप अपने पास फटकने भी नहीं देती। अपनी चर्चा में 'ब्रह्मावपि कठोरारण' है तो दूसरों को धर्ममार्ग में लगाने के लिए 'अहुनि कुसुमावपि'। ज्ञानपिपासु माताजी सतत ज्ञानाराधना में सलग्न रहती हैं और तदनुसार आत्म-परिष्कार में आपकी प्रवृत्ति चलती है। 'सिद्धान्तसार बीपक' की प्रस्तावना में परमादरणीय पं० पद्मालालजी साहित्याचार्य ने लिखा है—“माताजी की अभीक्षण ज्ञानाराधना और उसके फलस्वरूप प्रकट हुए क्षयोपशम के विषय में क्या लिखें? अल्पवय में प्राप्त वैश्वक्य का अपार

दुःख सहन करते हुए भी इन्होंने जो वैदुष्य प्राप्त किया है, वह साधारण महिला के साहस की बात नहीं है। .. ये सागर के महिलाश्रम में पढ़ती थी। मैं धर्मशास्त्र और सस्कृत का अध्ययन कराने प्रातः काल ५ बजे जाता था। एक दिन गृहप्रबन्धिका ने मुझसे कहा कि रात में निश्चित समय के बाद आश्रम की ओर से मिलने वाली लाइट की मुक्ति जब बन्द हो जाती है तब ये खाने के घृत का दीपक जलाकर चुपचाप पढ़ती रहती हैं और भोजन घृतहीन कर लेती हैं। गृहप्रबन्धिका के मुख से इनकी अध्ययनशीलता की प्रशंसा सुन जहाँ प्रसन्नता हुई, वहाँ अपार वेदना भी हुई। प्रस्तावना की ये पंक्तियाँ लिखते समय वह प्रकरण स्मृति में आ गया और नेत्र सजल हो गये। लगा कि जिसकी इतनी अभिरुचि है अध्ययन में, वह अवश्य ही होनहार है।..... तिलोत्सव की टीका लिखकर प्रस्तावना-लेख के लिए जब मेरे पास मुद्रित फर्म भेजे गये तब मुझे लगा कि यह इनके तपश्चरण का ही प्रभाव है कि इनके ज्ञान में आश्चर्यजनक वृद्धि हो रही है। वस्तुतः परमार्थ भी यही है कि द्वादशांग का जितना विस्तार हम सुनते हैं वह सब गुरुमुख से नहीं पढा जा सकता। तपश्चर्या के प्रभाव से स्वयं ही ज्ञानावरण का ऐसा विशाल क्षयोपशम हो जाता है कि जिससे अग्र-पूर्व का भी विस्तृत ज्ञान अपने आप प्रकट हो जाता है। श्रुतकेवली बनने के लिए निर्ग्रन्थ मुद्रा के साथ विशिष्ट तपश्चरण का होना भी आवश्यक रहता है।”

दृढ़ सयमी, आर्ष मार्ग की कट्टर पोषक, निःस्पृह, परम विदुषी, अभीष्टज्ञानोपयोगी, निर्भीक उपदेशक, आगम मर्मस्पर्शी, मोक्षमार्ग की पथिक, स्व पर-उपकारी पूज्य माताजी के चरणों में शत-शत नमोस्तु निवेदन करता हूँ और उनके दीर्घ, स्वस्थ जीवन की कामना करता हूँ ताकि उनकी स्याद्वादमयी लेखनी से जिनबारागी का हार्द हमें इसी प्रकार प्राप्त होता रहे और इस विषय काल में हम भ्रान्त जीवों को सच्चा मार्गदर्शन मिलता रहे।

पूज्य माताजी के पुनीत चरणों में शत-शत वन्दन। इति शुभम्।

—डॉ. चेतनप्रकाश पाटीनी



सम्पादकीय

तिलोयपष्णती : द्वितीयखण्ड

(चतुर्थ महाधिकार)

प्राचीन कन्नड प्रतियों के आधार पर सम्पादित तिलोयपष्णती का यह दूसरा खण्ड जिसमें केवल चतुर्थ अधिकार का गद्य-पद्य भाग है—अपने पाठकों को सौंपते हुए हमें हादिक प्रसन्नता है। यतिवृषभाचार्य रचित तिलोयपष्णती लोकविषयक साहित्य की एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कृति है जिसमें प्रसंगवश बर्ण, संस्कृति व इतिहास पुराण से सम्बन्धित अनेक विषय सम्मिलित हो गये हैं इस ग्रन्थ का दो खण्डों में प्रथम प्रकाशन १९४३ व १९५१ में हुआ था। इसके सम्पादक थे प्रो० हीरालाल जैन व प्रो० ए० एन० उषाष्ये। पं० बालचन्द्रजी सिद्धान्तसास्त्री ने प्राकृत गाथाओं का मूलानुगामी हिन्दी अनुवाद किया था। सम्पादक द्वय ने उस समय ज्ञात प्राचीन प्रतियों के आधार पर इसका सुन्दर सम्पादन अपनी तीक्ष्ण भेदाशक्ति के बल पर परिश्रमपूर्वक किया था। वे कोटि-कोटि बाधाई के पात्र हैं।

प्रस्तुत संस्करण की आधार प्रति जैनबंदी से प्राप्त लिप्यन्तरित (कन्नड से देवनागरी) प्रति है। अन्य सभी प्रतियों के पाठभेद टिप्पण में दिये गये हैं। प्रतियों का परिचय पहले खण्ड की प्रस्तावना में आ चुका है।

परम पूज्य १०५ आधिका श्री विशुद्धमती माताजी के पुरुषार्थ का ही यह मधुर परिपाक है। गत पाँच वर्षों से पूज्य माताजी इस दुःसह ग्रन्थ को सरल बनाने हेतु प्रयत्नशील रही हैं। आपने विस्तृत हिन्दी टीका की है, विषय को चित्रों के माध्यम में स्पष्ट किया है और अनेकानेक तालिकाओं के माध्यम में विषय को एकत्र किया है। प्रस्तुत संस्करण में कुछ गद्य भाग सहित कुल ३००६ गाथाएँ हैं (सोलापुर-संस्करण में कुल गाथायें २९५१ हैं) ३० चित्र हैं और ४५ तालिकाएँ भी।

सम्पादन की वही विधि अपनाई गई है जो पहले खण्ड में अपनाई गई थी अर्थात् अर्थ की सगति को देखते हुए शुद्ध पाठ रचना ही ध्येय रहा है फिर भी यह बड़ना पूर्वक नहीं कहा जा सकता कि व्यवस्थित पाठ ही ग्रन्थ का शुद्ध और अन्तिम रूप है।

चतुर्थ अधिकार—तिलोयपष्णती ग्रन्थ का सबसे बड़ा अधिकार है जिसमें मनुष्यलोक का विस्तृत वर्णन है। इसमें १६ अन्तराधिकार हैं और कुल ३००६ गाथाएँ व थोड़ा गद्य भी। गाथा छन्द के अतिरिक्त आचार्य श्री ने इन्द्रवज्रा, दोषक, वसन्ततिलका और शार्दूल विक्रीडित छन्द में भी रचना की है पर इनकी संख्या नगण्य है। अधिकार के प्रारम्भ में पद्मप्रभ भगवान को नमस्कार किया है और अन्त में सुपाश्वनाथ भगवान को।

सोसह अन्तराधिकार इस प्रकार हैं—मनुष्य लोक का निर्देश, जम्बूद्वीप, नवगणसमुद्र, धातकी खण्ड, कानोदक समुद्र, पुष्करार्थ द्वीप—इन अटारट द्वीप-समुद्रों में स्थित मनुष्यों के भेद, संस्था, अल्पबहुत्व, गुणस्थानादि, श्वायुष्यक परिणाम, योनि, सुख-दुःख सम्यक्त्वग्रहण के कारण प्रीर मोक्ष जाने वाले जीवों का प्रमाण। २, ४, और ६ अन्तराधिकारों के अन्तर्गत अपने अपने १६-१६ अन्तराधिकार और भी हैं। जम्बूद्वीप का वर्णन १६ अन्तराधिकारों में, विस्तार से किया गया है लगभग २४२५ गाथाओं में यह वर्णन आया है। समानता के कारण धातकी खण्ड और पुष्करार्थ द्वीप के वर्णन को विस्तृत नहीं किया गया है। चौबीस तीर्थंकरों का वर्णन बहुत विस्तार में (५२९ गाथा से १२९० गाथाओं में) हुआ है। अन्तिम दम अन्तराधिकारों (७ से १६ तक) का वर्णन केवल

३६ गाथाओं में ही आ गया है। विषय को विस्तृत करने और उसे मसिप्त करने की रचयिता आचार्य श्री की कला प्रगमनीय है।

प्रस्तुत सङ्घ के करणसूत्र, पाठान्तर, चित्र और तालिका आदि की सूची इसप्रकार है—

करण सूत्र

धादिम मन्त्रिम बाहिर	२६०२	दुगुणिचिचय सूजीए	२५६१
इसुपावगुणिद जीवा	२४०१	बाहिरसूई बग्गे	२५६५
इसुबग्य षडगुणद	२६३५	भूमिज मुहं सोहिय	२४३३
" "	२८६३	र दढ इगुहीए	१८३
जीवाकदितुरिमसा	१८५	लबलादीए हंदं	२६०१
जीवाबिक्लभाए	२६३७	बाएजुदरु दबग्गे	१८४
जेट्टम्मि चावपट्टे	१६२	वामकदी दस गुणिदा	६
जेट्टाए जीवाए	१६०	बिक्लभदकदीओ	७२
दुगुणाए सूचीए	२८०७	सूचीएकदिए कदि	२८०५

प्रस्तुत संस्करण में प्रयुक्त महत्त्वपूर्ण संकेत

- = श्रीणी	प = पल्पोपम	घ = घगुल
= = प्रतर	सा = सागरोपम	ध = धनुष
≡ = लोक	सू = सूष्यगुल	सेडी = श्रीणीबद्ध
१६ = सम्पूर्ण जीबराशि	प्र = प्रतरांगुल	प्र० = प्रकीर्णक
१६ स = सम्पूर्ण पुद्गल की परमाणु राशि	घ = घनागुल	मु = मुहूर्त
१६ स स = सम्पूर्ण काल की समय राशि	ज = जगच्छेरी	दि = दिन
१६ स स स = सम्पूर्ण आकाश की प्रदेश राशि	लोय प = लोकप्रतर	मा = माह
७ = सङ्घात	भू = भूमि	स स = अनन्तान्त (गाथा ५७)
रि = अमङ्घात	को = कोस	
जो = योजन	द = दड	
उ = रज्जु	से = जेप	
	ह = हस्त	

पाठान्तर

क्रम सं०	गाथा	गाथा सं०	पृष्ठ सं०
१	केलंधरदेवाणं	२६	८
२	दारोवरिमधराणं	७६	२५
३	पणुवीसजोयणाह	२२०	६५
४	वासट्टि जोयणाहं	२२२	६५

क्रम सं०	गाथा	गाथा सं०	पृष्ठ सं०
५	कडय कडिसुत	३६७	११२
६	भगद घुरिया खग्गा	३६८	११३
७	पलिदोवमदसमसो	५०६	१४५
८	कुमुद-कुमुदग राउदा	५१०	१४५
९	इह केई आइरिया	७२७	२०६
१०	एककेवकाएण दो हो	७३३	२०६
११	जोयण अहिय उदय	७८६	२३१
१२	चेत्तप्पासाद खिदि	८०६	२३८
१३	जह जह जोग्गट्टाणे	१३६४	४००
१४	कालप्पमुहा णाणा	१३६७	४०१
१५	अहवा वीरे मिद्धे	१५०६	४३७
१६	चोदस सहस्स सग सय	१५१०	४३७
१७	णिब्बाणे वीरजिणे	१५११	४३७
१८	दोण्णि सया पणवण्णा	१५१६	४३६
१९	अहवा दो हो कोसा	१६६२	४८०
२०	कूडागार महारिह भवणो	१६६३	४८०
२१	एकक सहस्स पणसय	१७२६	४८८
२२	चउजोयण उच्छेह	१८४५	५१६
२३	मोलस कोसुच्छेह	१८६०	५२५
२४	वासो पण घण कोसा	२०००	५४८
२५	एस बलभद् कूडो	२००५	५४६
२६	सोमणसस्स य वास	२००६	५४६
२७	दसविदे भू वासो	२००७	५४६
२८	ताए च मेरु पासे पच	२०५३	५५६
२९	सिरिभट्टमाल बेदी	२०५४	५५६
३०	मेरुगिरि पुब्बदक्खिण	२१६१	५८२
३१	ताए उवदेसेण य	२१६२	५८२
३२	रत्ता रत्तीदाधो सोदा	२३३१	६२१
३३	एककरस सहस्साणि	२४७१	६६०
३४	तस्सोवरि सिदपन्नवे	२४७२	६६१
३५	जलसिहरे विक्खभो	२४७४	६६१
३६	बण्णिण्णद सुराण णयरी	२४८३	६६३
३७	मोत्तूण मेरुगिरि	२५८७	६८९
३८	मेरुतलस्स य रुद	२६२१	७०२
३९	एइरिदि पवण दिसाओ	२८२७	७५८
४०	मुक्का मेरुगिरिद	२८३६	७६०

चित्र विवरण

क्र० सं०	विषय	गाथा सं०	पृष्ठ संख्या
१	विजयाष्ट पर्वत	१०९	३५
२	गगाकूट पर स्थित जिनेन्द्र-प्रतिमा	२३२-२३३	७०
३	कालचक्र	३२०-३२३	१०३
४	भोगभूमि में कल्पवृक्ष	३४६-३५८	११०
५	समवमरण	७१८	२१४
६	धूमिसाल कोट एवं उसका तोरण द्वार	७४१-७५८	२१६
७	मानस्तम्भ के एक दिशात्मक कोट, वेदी, भूमियों एवं नाट्यशालाओं का चित्रण	७५६-७६८	२२४
८	मानस्तम्भ भूमि	७६६-७६६	२३६
९	चैत्यवृक्ष भूमि	८१५	२४४
१०	समवसरणगत वाग्ह कोठे	८६५	२६४
११	गन्धकुटी का चित्रण	८९६-९०२	२७७
१२	अष्ट महाप्रातिहार्य	९२४-९३६	२८४
१३	भरतक्षेत्र	१६४५	४७०
१४	कमल पुष्पस्थित भवनो में जिनमन्दिर	१७१५	४८४
१५	हिमवान कुलाचल	१६४६-१७२०	४८६
१६	सुमंग पर्वत	१८०३	५०७
१७	पाण्डुकशिखा	१८४२-१८५६	५१९
१८	अष्ट मगल द्रव्य	१९०८	५२८
१९	मोघमोन्द की सभा	१९७५-१९८५	५४५
२०	देवकुरु, उत्तरकुरु व गजदन्त	२०३७-२०८६	५६७
२१	जम्बूवृक्ष	२२२०	५९५
२२	पूर्वापर विदेहक्षेत्र	२२२५-२२४२	५९६
२३	विदेह का कच्छा क्षेत्र	२२४३-२३०४	६१६
२४	जम्बूद्वीप की नदियाँ	२४१०-२४१५	६४१
२५	ज्येष्ठ (उत्कृष्ट) पाताल	२४४३	६५१
२६	उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य पाताल	२४४७	६५३
२७	पूरिणमा और भ्रमावस्था को पातालो की स्थिति	२४६४-२४६५	६५६
२८	लवण समुद्र के द्वीप	२५१८-२५२२	६७२
२९	कुमानुष	२५२४-२५३०	६७५
३०	धानकी खण्ड द्वीप में विजयो का आकार	२५६३	६९१

तालिका विवरण

क्रम सं०	विषय	पृष्ठ सं०	गाथा सं०
१	जम्बूद्वीप की जगती तथा उस पर स्थित वेदी एवं वेदी के पार्श्व भागों में स्थित बावडियों का प्रमाण		१५-१७, १६-२१, २३-२४
२	लघु-ज्येष्ठ एवं मध्यम प्रासादों तथा उनके द्वारों का प्रमाण	११	२९-३४
३	जम्बूद्वीप की परिधि, क्षेत्रफल तथा द्वारों के अन्तरका प्रमाण	२४	५१-७४
४	क्षेत्र कुलाचलो के विस्तार आदि का विवरण	३३	९७, १०४-१०८
५	भरतक्षेत्र और विजयाचं के व्यास, जीवा, षट्पद, त्रुलिका तथा पार्श्वभुजा का प्रमाण	५६	१६६
६	गगा-मिन्धु नदियों में सम्बन्धित प्रणाली, कुण्ड एवं द्वीप का विस्तार		२१७-२२६
७	आवलि से लक्ष पर्यन्त व्यवहार काल की परिभाषाएँ	८४	२८७-२६५
८	सख्या प्रमाण	६६	गद्य भाग
९	भोगभूमिज जीवों का मक्षिप्त वैभव	११३	३२४-३८१
१०	सुवमा-सुषमा आदि तीन कालों में आयु आहारादि की वृद्धि हानि का प्रदर्शन	१२६	३२४-४२७
११	कुलकरो के उत्सेध, आयु एवं अन्तरकाल आदिका विवरण	१४६	४२८-५१०
१२	चौबीस तीर्थङ्करों की भागिनी, जन्म विवरण एवं वंशानुक्रम का निरूपण	१५८-१५९	५१६-५५७
१३	चौबीस तीर्थङ्करों के जन्मान्तर, आयु, कुमारकाल, उत्सेध वरुण राज्यकाल एवं चिह्न निर्देश	१७४-१७५	५६०-६१२
१४	२४ तीर्थङ्करों के वैराग्य का कारण और दीक्षा का सम्पूर्ण विवरण	१६०-१६१	६१४-६१८ ६५०-६७६
१५	२४ तीर्थङ्करों का छ्दपस्थकाल, केवलज्ञान उत्पत्ति के मास पक्ष आदि तथा केवलज्ञानोत्पत्ति का अन्तरकाल	२०२-२०३	६८२-७११
१६	समवसरणो, सोपानो, भीषियो और वेदियो का प्रमाण	२१२-२१३	७२४-७४०
१७	भूलिसाल प्रासाद-प्रथम पृथिवी एवं नाट्यशालाओका प्रमाण	२२३	७५४-७६५
१८	पीठो का विस्तार आदि एवं सीढियों का प्रमाण	२२६	७७७-७८२
१९	मानस्तम्भो का बाह्य एवं ऊँचाई	२३२	७८३-७८६
२०	स्नातिका आदि क्षेत्रों का प्रमाण	२४०	८०२-८०५
२१	वेदी, वल्लीभूमि, कोट, वैत्यद्वज, प्रासाद एवं उपवनभूमि का प्रमाण	२४७	८०७-८२२
२२	स्तम्भो, ध्वजदण्डो एवं ध्वजभूमियो का तथा तृतीय कोट का प्रमाण	२५३	८२६-८३६
२३	कल्पद्वजो, नाट्यशालाओ, स्तूपो, कोठों आदि का प्रमाण	२६१	८४६-८६३

क्रम सं०	विषय	पृष्ठ सं०	पृष्ठा सं०
२४	वेदी, पीठ, परिधियों एवं मेलला का विस्तार आदि	२६६	८७३-८८०
२५	दूसरे एवं तीसरे पीठों का तथा गन्धकुटी का विस्तार आदि	२७६	८८४-९००
२६	तीर्थंकरों का केवलकाल, गणेशरो की सख्या एवं नाम	२९४	९५२-९६९
२७	६४ ऋद्धिया	३२६-३७७	९७७-११०२
२८	सात गणों का पृथक्-पृथक् एवं एकत्र ऋद्धिगणों का प्रमाण	३४५	११०३-११७६
२९	धार्मिकाओं आदि की सख्या एवं तीर्थंकरों के निर्वाण प्राप्त निर्देश	३५८-५९	११७७-१२१९
३०	योग निवृत्तिकाल, आमन एवं अनुबद्ध केवली आदिकों का प्रमाण	३६५	१२२०-१२४२
३१	ऋषभादि तीर्थंकरोंके स्वर्ग और मोक्ष प्राप्त शिष्योंकी सख्या	३६८	११०२-१२४८
३२	मुक्तान्तर एवं तीर्थ प्रवर्तनकाल	३७८	१२५०-१२८६
३३	चक्रवर्तियों की त्वनिधियों का परिचय	४०४	१३९६-१३९७
३४	चक्रवर्तियों के चौदह रत्नों का परिचय	४०५	१३८७-१३९४
३५	चक्रवर्तियों के वैभव का सामान्य परिचय	४०६	१३९१-१४०९
३६	चक्रवर्तियों का परिचय	४१०	१४०२-१४२२
३७	बलभद्रों का परिचय	४१९	१४२३
३८	नारायणों का परिचय	४२०	१४२४
३९	वर्तमान चौबीसी के प्रसिद्ध पुरुष	४-४-२५	१२९८-१३०२
४०	रुद्रों का परिचय	४३०	१४२९-१४५५
४१	भावी शालाका पुरुष	४६०-६१	१५९१-१६१३
४२	पवंत एवं शत्रुओं के विस्तार, बाण जीवा घनुष आदि का प्रमाण	५०५	१६६६-१६८२
४३	वक्षार के कूट	६२४	२३३८
४४	जम्बूद्वीप की नदियाँ	६४२	२४१०-२४१५
४५	घातकी खण्ड की परिधि एवं उममें स्थित कुलाचलो और क्षेत्रों का विस्तार	६९९	२५६७-२६१२

श्राभार

नितोपपण्णती ग्रन्थ की प्रकाशन योजना में हमें अनेक महानुभावों का पुष्कल सहयोग और प्रोत्साहन प्राप्त है। मैं उन सभी का हृदय से आभारी हूँ।

प० पू० आचार्य १०८ श्री धर्मसागरजी महाराज एवं आचार्य कल्प श्री श्रुतसागरजी महाराज के प्राणी-वंचन इस ग्रन्थ के प्रकाशन अनुष्ठान में हमारे प्रेरक रहे हैं। मैं आपके चरणों में सविनय मादर नमन करता हुआ आपके दीर्घ नोरीगे जीवन की कामना करता हूँ।

टीकाकर्त्री पूज्य माताजी विष्णुदत्तमतीजी का मैं प्रतिशय कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मुझ पर अनुग्रह कर सम्पादन का गुह्यर उत्स रदायित्व मुझे सौपा। जो कुछ बन पड़ा है वह सब पूज्य माताजी के ज्ञान और श्रम का ही मधुर फल है। निकट रहने वाला ही जान सकता है कि मानाजी ग्रन्थ लेखन में कितना परिश्रम करती हैं, यद्यपि स्वास्थ्य अनुकूल नहीं रहता और दोनों हाथों की झगुलियों में चर्म रोग भी प्रकट हो गया है तथापि अपने लक्ष्य से विरत नहीं होनी और अनवरत कार्य में जुटी रहती हैं। तिलोत्पण्णसी जैसे महान् विशालकाय ग्रन्थ की टीका आपकी साधना, कष्ट महिष्णुता, धैर्य, त्याग-तप और निष्ठा का ही परिणाम है। मैं यही कामना करता हूँ कि पूज्य माताजी का रत्नत्रय कुशल रहे और स्वास्थ्य भी अनुकूल बने ताकि आप जिनवाणी की इसी प्रकार सम्पराधना कर सकें। मैं पूज्य माताजी के चरणों में शतशः वन्दामि निवेदन करता हूँ।

श्रेय्य डॉ० पद्मलालजी साहित्याचार्य सागर और प्रोफेसर लक्ष्मीचन्द्रजी जैन, जबलपुर का भी आभारी हूँ जिन्होंने प्रथम खण्ड की भाँति इस खण्ड के लिए भी ऋमणः पुरोवाक और गणित विषयक लेख लिखा है।

प्रस्तुत खण्ड में मुद्रित चित्रों की रचना के लिये श्री विमलप्रकाशजी, अजमेर और श्री रमेशचन्द्र मेहता, उदयपुर धन्यवाद के पात्र हैं। इस ग्रन्थ के पृ० ११० पर मुद्रित कल्पवृक्ष का चित्र, पृ० २६४ का ममवसरण का चित्र, पृ० २८४ का अष्ट प्रातिहार्य का चित्र और पृ० ५२८ पर मुद्रित अष्ट मंगल द्रव्य का चित्र आचार्य १०८ श्री देशभूषणजी महाराज द्वारा सम्पादित 'णमोकार मन्त्र' ग्रन्थ से लिये गये हैं। ममवसरण विषयक कुछ ग्रन्थ चित्र (पृ० २१४, २१६, २२४, २३६, २४४) जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश से लिये गये हैं। एतदर्थ हम इनके आभारी हैं। पृष्ठ २८४ के चित्र में गाथा के अभिप्राय से भिन्नता है। गाथा में हाथ जोड़े हुए भक्तगण एक प्रातिहार्य है किन्तु चित्र में उसके स्थान पर जय-जयकार ध्वनि है। इसी तरह पृ० ५२८ पर अष्ट मंगल द्रव्यों के चित्र में घण्टा चित्रित है जबकि गाथा में 'कनशा' का उल्लेख हुआ है।

पूज्य माताजी के सघस्य ब्र० चचलबाईजी, ब्र० पंकजजी और ब्र० कजोड़ीमलजी कामदार ने ग्रन्थ लेखन सम्पादन और प्रकाशन हेतु सारी व्यवस्थाएँ जुटा कर उबारता पूर्वक सहयोग दिया है एतदर्थ मैं आपका अत्यन्त धन्यग्रहीत हूँ।

अखिल भारतवर्षीय वि० जैन महासभा ग्रन्थ की प्रकाशक है और सेठी ट्रस्ट लखनऊ इसके प्रकाशन का भार वहन कर रहा है, मैं सेठी ट्रस्ट के नियामक और महासभा के अध्यक्ष श्री निर्मलकुमारजी सेठी का हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ और इस श्रुतसेवा के लिए उन्हें माधुवाद देता हूँ।

ग्रन्थ के सुन्दर और शुद्ध मुद्रण के लिए मैं अनुभवी मुद्रक कमल प्रिण्टर्स, मदनगञ्ज-किशनगढ़ के कुशल कर्मचारियों को धन्यवाद देना हूँ। प्रेम मालिक श्रीयुत्त वाङ्मालजी ने विशेष रुचि और उत्प्रेरणा में इसे मुद्रित किया है, मैं उनका आभारी हूँ।

पुनः इन सभी श्रमशील पुष्पान्नाम्हों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ और सम्पादन प्रकाशन में रही भूलों के लिये सविनय क्षमा चाटना हूँ।

वसन्त पंचमी वि० सं० २०१२

श्री पाषर्षनाथ जैन मन्दिर
शास्त्री नगर, जोधपुर

१३-२-८६

बिनीत
वैतनप्रकाश पाटनी
सम्पादक

तिलोयपण्णत्ती के चतुर्थाधिकार का गणित

लेखक—प्रो० लक्ष्मीचन्द्र जैन सूर्या एम्पोरियम, ६७७ सराका जबसपुर (म० प्र०)

गाथा ४/६

व्यास से परिधि निकालने हेतु ॥ का मान अथवा परिधि का मान $\sqrt{१०}$ लिया गया है और सूत्र है—

$$\text{परिधि} = \sqrt{(\text{व्यास})^2 \times १०} \quad \text{पुनः}$$

$$\text{क्षेत्रफल} = \text{परिधि} \times \frac{\text{व्यास}}{४}$$

क्षेत्रफल के लिए विदफलं शब्द का उपयोग हुआ है। इसीप्रकार, लम्ब वर्तुल रम्भ का क्षेत्रफल = आधार का क्षेत्रफल \times (उत्सेघ या बाहृत्य)

गाथा ४/५५-५६

जम्बूद्वीप के वर्कम्भ स उसकी परिधि निकालने हेतु ॥ का मान $\sqrt{१०}$ लेकर विशेष भागे तक परिधि की गणना की गई है। यहाँ $\sqrt{१०}$ का मान $\sqrt{(३)^2 + १} = ३ + (\frac{१}{३})$ लिया गया है।

$$\text{अर्थात् } \sqrt{N} \equiv \sqrt{(a^2 + x)} = a + \frac{x}{2a} \text{ माना गया है। यहाँ } N \text{ अवर्ग घनात्मक पूर्णांक}$$

$$\text{है, } a \text{ और } x \text{ घनात्मक पूर्णांक हैं। अथवा } \sqrt{N} \equiv \sqrt{(b^2 - y)} = b - (y/2b) ।$$

इस विधि से अतत. अवसन्नासन्न भिन्न शेष = $\frac{२३३३३३}{३३३३३३}$ प्राप्त होता है। यह गणना डा० आर० सी० गुप्ता ने की है। * यहाँ इसे "ख ख पदस्संस्स पुठ" का गुणकार बतलाया गया है। इसका अर्थ विचारणीय है।

गाथा ४/५६-६४

इस गाथा में उपरोक्त विधि से क्षेत्रफल की अत्य महत्ता प्ररूपित करने हेतु $\frac{५६५५५५}{५६५५५५}$ अवसन्नासन्न में परमाणुओं की संख्या ग्रन्थकार ने $\frac{५६५५५५}{५६५५५५}$ ख ख द्वारा निरूपित की है।

गाथा ४/७०

वृत्त में विष्कम्भ (व्यास) को d मानकर, परिधि को c मानकर, त्रिज्या को r मानकर, द्वीप की चतुर्थांश परिधि रूप घनुष की जीवा का सूत्र—

$$(\text{वृत्त की चतुर्थांश घनुष की जीवा})^2 = \left(\frac{d}{2}\right)^2 \times 2 = 2r^2$$

अथवा—

$$\begin{aligned} (\text{चतुर्थांश परिधि की जीवा})^2 \times \frac{2}{c} &= (\text{चतुर्थांश परिधि})^2 \\ &= \left[2 \times \frac{d^2}{4} \right] \times \frac{2}{c} = \frac{2d^2}{c} = \frac{2 \times 4r^2}{4} \end{aligned}$$

$$\text{अथवा चतुर्थांश परिधि} = \sqrt{2} \cdot \frac{r}{2}$$

आजकल के प्रतीको में यह $\frac{r}{2}$ है।

गाथा ४/१८०

बाण और विष्कम्भ दिया जाने पर जीवा निकालने हेतु सूत्र—बाण को h मानकर, विष्कम्भ को d मानकर, जीवा निकालने का सूत्र निम्नलिखित है—

$$\text{जीवा} = \sqrt{4 \left[\left(\frac{d}{2}\right)^2 - \left(\frac{d-h}{2}\right)^2 \right]}$$

$$= 4 \sqrt{[(r)^2 - (r-h)^2]} \quad \text{यहाँ पियेगोरस के साध्य का उपयोग है।}$$

गाथा ४/१८१

बाण और विष्कम्भ दिया जाने पर घनुष का प्रमाण निकालने हेतु सूत्र :

$$\text{घनुष} = \sqrt{2 \left[(d+h)^2 - (d)^2 \right]}$$

यदि $h=r$ हो तो घनुष = $\sqrt{2} \cdot r$ के बराबर होता है।

गाथा ४/१८२ :

जब जीवा और विष्कम्भ (विस्तार) दिया गया हो तो बाण निकालने के लिए सूत्र :

$$h = \frac{d}{2} - \left[\frac{d^2}{4} - \left(\frac{\text{जीवा}}{2}\right)^2 \right]^{1/2}$$

$$= r - \left[r^2 - \left(\frac{\text{जीवा}}{2}\right)^2 \right]^{1/2}$$

उपर्युक्त सूत्रों से निम्न सम्बन्ध प्राप्त होता है।

$$(\text{धनुष})^2 = ६ h^2 + (\text{जीवा})^2 \text{ जहाँ } h \text{ बाण है।}$$

पुनः

$\times h^2 + \times (\text{जीवा})^2$ को \times (अर्द्धधनुष की जीवा)² लिखने पर हमें निम्नलिखित सम्बन्ध प्राप्त होता है।

$$(\text{धनुष})^2 = २h^2 + \times (\text{अर्द्धधनुष की जीवा})^2$$

गाथा ४/२८५-२८६ :

समय, आवलि, उच्छ्वास, प्राण और स्तोक को व्यवहारकाल निर्दिष्ट किया है। पुद्गल-परमाणु का निकट में स्थित आकाशप्रदेश के अतिक्रमण प्रमाण जो अविभागीकाल है वही 'समय' नाम से प्रसिद्ध है। इकाइयों के बीच निम्नलिखित सम्बन्ध है।

असंख्यात समय	=	१ आवली [जघन्य युक्त असंख्यात का प्रतीक २ है जो मूल में संदृष्टि रूप आया प्रतीत होता है।]
संख्यात आवली	=	१ उच्छ्वास [यहाँ क्या संख्यात के लिए ६ आया है? यह स्पष्ट संदृष्टि से
	=	१ प्राण नहीं है क्योंकि सांख्येय को संदृष्टि ७ होना चाहिये। ६
७ उच्छ्वास	=	१ स्तोक संदृष्टि घनागुल का प्रतीक है जो राशि हो सकता है संख्यात यहाँ निर्दिष्ट करती हो?]
७ स्तोक	=	१ लव
३८३ लव	=	१ नाली
२ नाली	=	१ मुहूर्त [समय कम एक मुहूर्त को भिन्न मुहूर्त कहते हैं।]
३० मुहूर्त	=	१ दिन
१५ दिन	=	१ पक्ष
२ पक्ष	=	१ मास
२ मास	=	१ ऋतु
३ ऋतु	=	१ अयन
२ अयन	=	१ वर्ष
५ वर्ष	=	१ युग

इसप्रकार अचलात्म का मान $(८६)^{३०} \times (१०)^{३}$ वर्षों के बराबर होता है। आगे उत्कृष्ट संख्यात तक ले जाने का सकेत है।

गाथा ४/३१०-३१२ :

इन गाथाओं में संख्या प्रमाण का विस्तार से वर्णन है। संख्येय, असंख्येय और अनन्त की सीमाएँ निर्धारित की गई हैं। इनमें कुछ औपचारिक असंख्येय और अनन्त संख्याएँ हैं। यथा उत्कृष्ट

संख्येय तक श्रुत केवली का विषय होने के कारण, तदनुगामी संख्याएँ असंख्येय कही गई हैं जो उपचार है। असंख्यात लोक प्रमाण स्थिति बन्धाध्यवसायस्थान प्रमाण संख्या का आशय स्थिति-बन्ध के लिए कारणभूत आत्मा के परिणामों की संख्या है। इसीप्रकार इससे भी असंख्येय लोक गुणे प्रमाण अनुभागबन्धाध्यवसायस्थान प्रमाण संख्या का आशय अनुभाग बन्ध के लिए कारणभूत आत्मा के परिणामों की संख्या है। इससे भी असंख्येय लोक प्रमाण गुणे, मन, वचन, काय योगों के अविभाग प्रतिच्छेदो (कर्मों के फल देने की शक्ति के अविभागी अशो) की संख्या का प्रमाण होता है। वीरसेनाचार्य ने पट्खण्डागम (पु० ४, पृ० ३३८, ३३९) में अर्द्धपुद्गल परिवर्तन काल के अनन्तत्व के व्यवहार को उपचार निबन्धक बतलाया है।

इसीप्रकार यद्यपि उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात और जघन्य परीतानन्त में केवल १ का अंतर हो जाने से ही "अनन्त" सज्ञा का उपचार हो जाता है। यहाँ अवधिज्ञानी का विषय उत्कृष्ट असंख्यात तक का होता है, इसके पश्चात् का विषय केवलज्ञानी की सीमा में आज्ञाने के कारण "अनन्त" का उपचार हो जाता है। जब जघन्य अनन्तानन्त की तीन बार वर्गित सर्वांगित राशि में अनन्तात्मक राशियाँ निक्षिप्त होती हैं तभी उनकी अनन्त सज्ञा सार्थक होती है, जैसी कि असंख्यात्मक राशि निक्षिप्त करने पर संख्येय राशि को असंख्येयता की सार्थकता प्राप्त होती है। वास्तव में व्यय के होते रहने पर भी (सदा ?) अक्षय रहने वाली भव्य जीव राशि समान और भी राशियाँ हैं—जो क्षय होने वाली पुद्गल परिवर्तन काल जैसी सभी राशियों के प्रतिपक्ष के समान पाई जाती हैं।

ग्रन्थ में इस सबध में वर्गित सर्वांगित, शलाका कु डादि की प्रक्रियाएँ पूर्ण रूप से वर्णित हैं।

वर्गित सर्वांगित की तिलोयपण्णत्ती की प्रक्रिया धवला टीका में दी गयी प्रक्रिया से भिन्न है। अनन्त तथा केवलज्ञान राशि के सम्बन्ध में विवरण महत्वपूर्ण है, "इसप्रकार वर्ग करके उत्पन्न सब वर्ग राशियों का पुञ्ज केवलज्ञान-केवलदर्शन के अनन्तत्वे भाग है, इस कारण वह भाजन है द्रव्य नहीं है।"

गाथा ४/१७८० आदि

समान गोल शरीर-वाला मेरु पर्वत, "समवट्टतणुस्स मेरुस्स" में रभो और शंकु समच्छिन्नको द्वारा निर्मित किया गया है। इन गाथाओं में मेरु पर्वत के विभिन्न स्थानों पर परिवर्तनशील मान, ऊँचाईयों पर व्यास, बतलाए गये हैं। "सूर्य पथ की तिर्यक्ता की धारणा को मानो मेरु पर्वत की आकृति में लाया गया है" यह आशय लिखक एव शर्मा ने अपने शोध लेख में दिया है। ❀

❀ S. S. Lishk and S. D. Sharma, "Notion of Obliquity of Ecliptic" Implied in the Concept of Mount Meru in Jambudvīpa prajāpti " Jain Journal, Calcutta, 1978, pp. 79.

गाथा ४/१७६३ :

शकु के समच्छिन्नक की पार्श्व रेखा का मान निकालने हेतु जिस सूत्र का उपयोग हुआ है वह

$$\text{पार्श्व भुजा} = \sqrt{\frac{(D-d)^2}{4} + (H)^2}$$

जहाँ भूमि D, मुख d, ऊँचाई H दी गयी है।

गाथा ४/१७६७ :

समलम्ब चतुर्भुज की आकृति त्रिभुज संक्षेत्र के समच्छिन्नक के घनीक रूप में होती है। उसीप्रकार शकु के समच्छिन्नक को उदघसमतल द्वारा केन्द्रीय अक्ष में से होता हुआ काटा जावे तो छेद से प्राप्त आकृति भी समलम्ब चतुर्भुज होती है।

यदि चूलिका के सिखर से h योजन नीचे विष्कम्भ x प्राप्त करना हो तो सूत्र यह है :

$$x = h \div \left[\frac{D-d}{H} \right] + b$$

अथवा
$$x = D - \left[(H-h) \div \frac{(D-b)}{H} \right]$$

गाथा ४/२०२५

इस गाथा में जीवा C और बाण h दिया जाने पर विष्कम्भ D निकालने का सूत्र दिया गया है—

$$D = \frac{c^2}{4h} + h$$

गाथा ४/२३७४ :

इस गाथा में घनुष के आकार के क्षेत्र का सूक्ष्म क्षेत्रफल निकालने का सूत्र दिया है—

$$\text{घनुषाकार क्षेत्र का क्षेत्रफल} = \sqrt{\left(\frac{h}{4} C\right)^2 \times 10} = \frac{h c}{4} \sqrt{10}$$

इस सूत्र का उल्लेख महावीराचार्य ने "गणित सार संग्रह" में किया है।

गाथा ४/२५२५ :

इस गाथा से प्रतीत होना है कि ग्रन्थकार को ज्ञात था कि दो वृत्तों के क्षेत्रफलों का अनुपात उनके विष्कम्भों के वर्गों के अनुपात के तुल्य होता है। मान लो छोटे प्रथम वृत्त का विष्कम्भ D_१, तथा क्षेत्रफल A_१, हो और बड़े द्वितीय वृत्त का विष्कम्भ D_२ तथा क्षेत्रफल A_२ हो तो

$$\frac{D_1^2}{D_2^2} = \left(\frac{A_1}{A_2} \right) \text{ अथवा } \frac{D_1^2}{D_2^2} = \frac{A_1}{A_2}$$

☉ देखिये, चम्पूटीप प्रज्ञप्ति, ४/३६।

☉ देखिये "गणितसार संग्रह" सोलापुर, १९६३, भा० ७/७०३।

☉ चम्पूटीप प्रज्ञप्ति, १०/७७, वृत्त के सम्बन्ध में समानुपात नियम २/११-२० में लिखे गये हैं।

गाथा ४/२७६१ :

इस गाथा में वृत्त का क्षेत्रफल निकालने के लिए सूत्र है—

$$\text{वृत्त या समान गोल का क्षेत्रफल} = \sqrt{\frac{(D^2)^2 \times 10}{4}} = \left(\frac{D}{2}\right)^2 \sqrt{10}$$

जिसे आज हम πr^2 के रूप में उपयोग में लाते हैं। यहाँ D विष्कम्भ है।

गाथा ४/२७६३ :

बलयाकृति वृत्त या बलय के आकार की आकृति का क्षेत्रफल निकालने का सूत्र—

$$\text{मानलो प्रथम वृत्त का विस्तार } D_1 \text{ और दूसरे का } D_2 \text{ हो तो बलयाकार क्षेत्र का क्षेत्रफल—}$$

$$= \sqrt{[2 D_2 - (D_2 - D_1)]^2 \times \left(\frac{D_2 - D_1}{4}\right)^2 \times 10}$$

$$= \sqrt{10} \left[\frac{D_2^2 - D_1^2}{4} \right] \text{ जिसे } \pi (r_2^2 - r_1^2) \text{ लिखते हैं।}$$

गाथा ४/२९२६ :

जगश्रेणी में सूच्यगुल के प्रथम और तृतीय वर्गमूल का भाग देने पर जो लब्ध प्राये उसमें से १ कम करने पर सामान्य मनुष्य राशि का प्रमाण—

जगश्रेणी
(सूच्यगुल) $\frac{1}{\sqrt{10}}$ — १ भाता है। यह महत्वपूर्ण शैली है, क्योंकि इसमें राशि सिद्धान्त का आधार निहित है।

विशेष टिप्पण :

तिलोयपष्णती चतुर्थं अघ्निकार मे भरत क्षेत्र, हिमवान् पर्वत, हेमवत क्षेत्र, महाहिमवान् पर्वत, हरिवर्ष क्षेत्र, निषध क्षेत्र और विदेह क्षेत्र के सम्बन्ध में विभिन्न माप दिये गये हैं। इनके क्षेत्रफल सम्बन्धी मापों में दिये हुए सूत्र के अनुसार भरत क्षेत्र, निषध क्षेत्र एवं विदेह क्षेत्र का क्षेत्रफल गाथा २३७५, २३७६, २३७७ में दिये गये प्रमाणाँ के समान प्राप्त हो जाता है। किन्तु हिमवान् पर्वत, हेमवत क्षेत्र, महा हिमवान् पर्वत एवं हरिवर्ष क्षेत्र के क्षेत्रफल तिलोयपष्णती (भाग १, १६४३ में नहीं दिये गये हैं। यहाँ प्रकृत में सूक्ष्म क्षेत्रफल से अभिप्राय है।

तथापि पूज्य विष्णुधर्मती आर्यिका माताजी के प्रयासों से हिमवान् पर्वत, हेमवत क्षेत्र, महा-हिमवान् पर्वत (त्रुटिपूर्ण) एवं हरिवर्ष क्षेत्र के सूक्ष्म क्षेत्रफल उल्लिखित करने वाली गाथाएँ कन्नड प्रति से प्राप्त हुई हैं। इनमें से कथित सूत्रानुसार हरिवर्ष, निषध एवं विदेह के क्षेत्रफलों के प्रमाण गणनानुसार पूर्णतः अथवा लगभग मिल जाते हैं किन्तु हिमवान् पर्वत एवं हेमवत क्षेत्र, के क्षेत्रफलों के मान नहीं मिल सके हैं।

इन सभी क्षेत्रों और पर्वतों के क्षेत्रफलों की गणना हेतु मूलभूत सूत्र गाथा २३७४, षतुर्भुज अधिकार में इसप्रकार दिया गया है : "बाण के षतुर्भुज भाग से गुणित जीवा का जो वर्ग ही उसको दश से गुणित कर प्राप्त गुणनफल का वर्गमूल निकालने पर धनुष के आकार वाले क्षेत्र का सूक्ष्म क्षेत्रफल जाना जाता है।"

अर्थात्, धनुषाकार क्षेत्र का क्षेत्रफल = $\sqrt{(बाण \times \frac{3}{8} \times जीवा)^2 \times 10}$

I इस सूत्रानुसार सर्वप्रथम हिमवान् पर्वत का क्षेत्रफल निकालने के लिए दो धनुषाकार क्षेत्रफल निकालते हैं जिनका अन्तर उक्त क्षेत्रफल होता है। इसप्रकार—

हिमवान् पर्वत का क्षेत्रफल = (हिमवान् पर्वत का क्षेत्रफल + भरत क्षेत्र का क्षेत्रफल)

— (भरत का क्षेत्रफल) होता है जो धनुष के रूप में उपलब्ध होते हैं।

यहाँ हिमवान् पर्वत क ग घ ख है, भरत क्षेत्र ग च घ है।

हिमवान् पर्वत के क्षेत्रफल को प्राप्त करने हेतु पूर्ण धनुषाकार क्षेत्र क ग च घ ख पर विचार करते हैं जिसका बाण $30000 + 10000 =$

40000 योजन प्राप्त होता है। इसमें भरत क्षेत्र का विस्तार और हिमवान् क्षेत्र का विस्तार सम्मिलित किया गया है।

इसप्रकार हिमवान् पर्वत का क्षेत्रफल—

$$= \sqrt{\left(\frac{30000}{18} \times \frac{1}{8} \times \frac{40000}{18}\right)^2 \times 10}$$

$$= \sqrt{\left(\frac{10000}{18} \times \frac{1}{8} \times \frac{20000}{18}\right)^2 \times 10}$$

दसाक गणक मशीन द्वारा उक्त की गणना करने पर, जबकि $\sqrt{10} = 3.16227766$ लिया गया है तब—

$$\text{क्षेत्रफल} = \frac{11234885410}{361} - \frac{2103002228}{361}$$

$$= \frac{8061223151}{361} = 223100433.12$$
 वर्ग योजन प्राप्त हुआ है। किन्तु गाथा में यह मान 223100433.12 प्राप्त किया गया बतलाया गया है। दूसरे प्रकार से यह मान $\sqrt{\frac{(223100433.12)^2 \times 10}{(361)^2}}$ होता है। हल करने पर उपरोक्त गणना में वर्गमूल निकालने पर बचे शेष को छोड़ देने पर क्षेत्रफल 223100433.12 प्राप्त होता है।

II हैमवत क्षेत्र का क्षेत्रफल—

$$\begin{aligned}
 &= \sqrt{\left(\frac{70000}{18} \times \frac{1}{8} \times 37674\frac{1}{2}\right)^2 \times 10} \\
 &\quad - \sqrt{\left(\frac{30000}{18} \times \frac{1}{8} \times \frac{47370}{18}\right)^2 \times 10} \\
 &= \frac{38934550}{361} - \frac{1123485410}{361} \\
 &= \frac{22370489310}{361} = 62000000.00 \text{ वर्ग योजन।}
 \end{aligned}$$

उपरोक्त की गणना दूसरे प्रकार से निम्न रूप में प्राप्त होती है :

$$\text{क्षेत्रफल} = \frac{1}{361} \times 8 \sqrt{(1225421888128) \times (10)^5}$$

$= 62000000.00$ वर्ग योजन, जहाँ गणना में वर्गमूल निकालने के पश्चात् बचे शेष को छोड़ दिया गया है। गाथा में इसका प्रमाण 62000000.00 वर्ग योजन दिया गया है।

III महाहिमवान पर्वत का क्षेत्रफल—

$$\begin{aligned}
 &= \sqrt{\left(\frac{1400000}{18} \times \frac{1}{8} \times 4331\frac{1}{2}\right)^2 \times 10} \\
 &\quad - \sqrt{\left(\frac{200000}{18} \times \frac{1}{8} \times 37674\frac{1}{2}\right)^2 \times 10} \\
 &= 32433333330 \sqrt{10} - 31133333330 \\
 &= 2266700000.00 \text{ वर्ग योजन}
 \end{aligned}$$

दूसरे प्रकार से हल करने पर—

२२६८७०८६१३३३३ वर्ग योजन प्राप्त होता है। कन्नड़ भाषा त्रुटिपूर्ण होने से यहाँ कथन नहीं दिया गया है।

IV हरिवर्ष का क्षेत्रफल—

$$= \sqrt{(310000 \times \frac{1}{2} \times 738012)}^2 \times 10$$

$$- \sqrt{(150000 \times \frac{1}{2} \times 438313)}^2 \times 10$$

$$= (1000000000 - 342333400) \times \sqrt{10}$$

$$= 6576638566.71 \text{ वर्ग योजन प्राप्त होता है।}$$

दूसरे प्रकार से हल करने पर ६१६६३६५६६.७१ वर्ग योजन प्राप्त होता है।

V इसीप्रकार,

निषध पर्वत का क्षेत्रफल—

$$= \sqrt{(330000 \times \frac{1}{2} \times 841563)}^2 \times 10$$

$$- \sqrt{(310000 \times \frac{1}{2} \times 738012)}^2 \times 10$$

$$= (10)^{\frac{1}{2}} \sqrt{10} [11270452 - 43522216]$$

अथवा दूसरे प्रकार से,

$$\text{क्षेत्रफल} = 341 \times 8 \sqrt{87024077863861640000000000}$$

$$= 141842280133333 \text{ वर्ग योजन प्राप्त होता है।}$$

VI पुनः, इसीप्रकार

विदेह क्षेत्र का क्षेत्रफल—

$$= \sqrt{(150000 \times \frac{1}{2} \times 1000000)}^2 \times 10$$

$$- \sqrt{(330000 \times \frac{1}{2} \times 841563)}^2 \times 10$$

$$= (10)^{\frac{1}{2}} \sqrt{10} [150000000 - 11270452]$$

$$\frac{361 \times 8}{341 \times 8}$$

$$= \frac{(10)^{\frac{1}{2}} \sqrt{10}}{341 \times 8} - [67745142] \text{ वर्ग योजन होता है।}$$

अथवा, दूसरे प्रकार से

क्षेत्रफल = $(10)^4 \sqrt{10} \sqrt{454612127777000964}$ वर्ग योजन प्राप्त होता है, जिसमें कोई त्रुटि संभव है, क्योंकि उपर्युक्त को हल करने पर 2569348803333 वर्ग योजन प्राप्त हुआ है जिसमें कुछ त्रुटि हो सकती है, क्योंकि गाथानुसार यह मान 2569348802333 प्राप्त होना चाहिये। इसे पाठकगण हल कर सशोधित फल निकालने का प्रयास करेंगे, ऐसी आशा है। उपर्युक्त गणना में श्री जन्मकुमारजी दोशी, उदयपुर ने सहयोग दिया है जिनके हम आभारी हैं।

उपर्युक्त क्षेत्रफलों के गणना फलों से गाथाओं में दिये गये मानों के सम्बन्ध में मिलान विषयक संवाद प्रो० डॉ० धार० सी० गुप्त, यूनेस्को के भारतीय गणित इतिहास के प्रतिनिधि, मेसरा (रांची) से भी किया गया। उनके पत्रानुसार जो ३० जनवरी १९८५ को प्राप्त हुआ था, उन्हें कोई प्राचीन विधि प्राप्त हुई है जिससे वे हिमवान् का क्षेत्रफल 25100458333 वर्गयोजन निकालने में समर्थ हो सके हैं। वे इस समस्या को सुलझाने का अभी भी प्रयास कर रहे हैं। स्मरण रहे कि इन क्षेत्रफलों में $\sqrt{10} = 3.16$ लेने पर भी क्षेत्रफल सम्बन्धी उक्त गाथाओं में दिये गये मान प्राप्त नहीं होते हैं। उपर्युक्त गणनाओं से तिलोयपण्णत्ती भाग १, १९४३ की गाथाएँ चतुर्ध्वजिकार, मुख्यतः १६२४, १६२६, १६२८, १६६६, १७१८, १७१९, १७३८, १७४०, १७५१, १७५२, २३७६, १७७५, १७७३ तथा २३७७ एवं कन्नड़ प्रति से प्राप्त कुछ गाथाएँ हैं।



मंगलाचरण

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ! ॐ नमः सिद्धेभ्यः !! ॐ नमः सिद्धेभ्यः !!!

ॐकारं बिन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ।
कामदं मोक्षदं चैव ॐकाराय नमो नमः ॥
प्रविरलशब्दघनोषप्रक्षालितसकलभूतलकलङ्का ।
मुनिभिरुपासिततीर्था सरस्वती हरतु नो दुरितम् ॥
अज्ञानतिमिरान्धानां ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
चक्षुःमूलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

श्री परमगुरवे नमः, परम्पराचार्यगुरुभ्यो नमः । सकलकलुषविध्वंसकं,
श्रेयसां परिवर्द्धकं, धर्मसम्बन्धकं, मध्यजीवमनःप्रतिबोधकारकमिदं शास्त्रं
'श्रीतिलोयपण्णती' नामधेयं, अस्य मूलग्रन्थकर्तारः श्री सर्वज्ञदेवास्तदुत्तरग्रन्थ-
कर्तारः श्रीगणधरदेवाः प्रतिगणधरदेवास्तेषां वचोऽनुसारमासाद्य पूज्य-
यतिवृषभाचार्येण विरचितं इदं शास्त्रं । वक्तारः श्रोतारश्च सावधानतया
शृण्वन्तु ।

मङ्गलं भगवान् वीरो, मङ्गलं गौतमो गणो ।
मङ्गल कुन्दकुन्दाद्यो, जैनधर्मोस्तु मङ्गलम् ॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं, सर्वकल्याणकारकं ।
प्रधानं सर्वघर्माणां, जैनं जयतु शासनम् ॥

विषयानुक्रम

चउत्थो - महाहियाद्रो

(गाथा १-३००६)

विषय	गाथा/पृ० सं०	विषय	गाथा/पृ० सं०
मगलाचरण एव प्रतिज्ञा	१।१	क्षेत्र एव कुलाचलो का विस्तार	१०७।३२
(१) सोलह अधिकारो के नाम	२।१	भग्नक्षेत्रस्थ विजयाद्यैर्वर्षत की अवस्थिति	
मनुष्य लोक की स्थिति एव प्रमाण	६।२	एव प्रमाण का निरूपण	१०६।३४
बाह्य एव परिधि	७।२	दक्षिण और उत्तर भरत का विस्तार	१८१।५०
क्षेत्रफल	८।२	धनुषाकार क्षेत्र में जीवा का प्रमाण	
गोलक्षेत्र की परिधि एव क्षेत्रफल		निकालने का विधान	१८३।५१
निकालने का विधान	६।३	धनुष का प्रमाण निकालने का विधान	१८४।५१
मनुष्यलोक का घनफल	१०।३	वाण का प्रमाण निकालने का विधान	१८५।५१
(२) जम्बूद्वीप की अवस्थिति एव प्रमाण	११।४	विजयाद्यैर्ष की दक्षिण जीवा का प्रमाण	१८६।५२
१ ज० द्वी० वर्णन के गोलह अन्तराधिकार	१२।४	दक्षिण जीवा के धनुष का प्रमाण	१८७।५३
जगती की ऊँचाई एव उमका आकार	१५।४	विजयाद्यैर्ष की उत्तर जीवा का प्रमाण	१८८।५३
जगती पर स्थित वेदिका का विस्तार	१९।५	उत्तरजीवा के धनुष का प्रमाण	१८९।५४
वेदी के दोनो पार्श्वभागों में स्थित वमवापियाँ	२२।६	चूलिका का प्रमाण ज्ञात करने की विधि	१९०।५५
वनों में स्थित वृक्षनगदेवों के नगर	२५।८	विजयाद्यैर्ष की चूलिका का प्रमाण	१९१।५५
ज० द्वी० के विजयादिक चार द्वार	४२।१३	पार्श्वमुजा का प्रमाण ज्ञान करने की विधि	१९२।५५
द्वागोपरिस्थ प्रामाद	४६।१३	विजयाद्यैर्ष की पार्श्वमुजा का प्रमाण	१९३।५६
गोपुर द्वारस्थ जिनबिम्ब	५०।१४	भरतक्षेत्र की उत्तरजीवा का प्रमाण	१९४।५६
ज० द्वी० की सूक्ष्मपरिधि का प्रमाण	५१।१४	,, के धनुष का प्रमाण	१९५।५७
,, के क्षेत्रफल का प्रमाण	५६।१७	,, की चूलिका का प्रमाण	१९६।५८
विजयादिक द्वारों का अन्तर प्रमाण	६७।१६	,, की पार्श्वमुजा का प्रमाण	१९७।५८
मतान्तर से विजयादि द्वारों का प्रमाण	७५।२५	पद्मद्रुह का विस्तार	१९८।६०
,, से द्वारों पर स्थित प्रामादों का प्रमाण	७६।२५	गंगा नदी का वर्णन	२००।६०
द्वारों के अधिपति देवों का निरूपण	७७।२५	उन्मन्ना-निमन्ना नदियों का स्वरूप	२४०।७२
विजयदेव के नगर का वर्णन	७७।२९	सिन्धु नदी का वर्णन	२५५।७५
जगती के अर्धन्तर भाग में स्थित वनखण्ड	८६।२८	भरतक्षेत्र के छह खण्ड	२६९।७८
जम्बूद्वीपस्थ सात क्षेत्रों का निरूपण	९२।२६	द्वेषभगिरी का वर्णन	२७३।७६
,, कुलाचलो का निरूपण	९६।३०	काल का स्वरूप एवं उसके भेद	२८०।८०
क्षेत्रों का स्वरूप	१०२।३१	व्यवहारकाल के भेद एव उनका स्वरूप	२८७।८२
भरतक्षेत्र का विस्तार	१०३।३१	अवसर्पिणी एवम् उत्सर्पिणी कालों का	
क्षेत्र एव कुलाचलो की शलाकायोका प्रमाण	१०४।३१	स्वरूप एव उनका प्रमाण	३१७।१०१

विषय	गाथा/पृ० सं०	विषय	गाथा/पृ० सं०
सुषमा सुषमा काल का निरूपण	३२४।१०४	सहदीक्षित राजकुमारो की सख्या	६७५।१८६
दस प्रकार के कल्पवृक्ष	३४६।१०८	दीक्षा-अवस्था का निर्देश	६७७।१६२
भोगभूमि में उत्पत्ति के कारण	३६६।११४	तीर्थंकरों की पारणा का काल	६७८।१६२
भोगभूमि में धर्म, जन्म, मरण काल एवं मरण के कारण	३७६।११५	पारणा के दिन होने वाले पचासषयं	६७९।१६३
भोगभूमिज जीवो का विशेष स्वरूप	३८६।११७	तीर्थंकरों का छषस्यकाल	६८२।१६३
सुषमा काल का निरूपण	३६६।११६	“ के केवलज्ञान की तिथि, समय, नक्षत्र और स्थान का निर्देश	६८६।१६५
सुषमा सुषमा काल का निरूपण	४०७।१२१	तीर्थंकरों के केवलज्ञान का अन्तर काल	७१०।१६९
भोगभूमिजों में मार्गणा आदि का निरूपण	४१५।१२३	केवलज्ञानोत्पत्ति के पश्चात् शरीर का ऊर्ध्वगमन	७१३।२०१
चौदह कुलकरो का निरूपण	४२८।१२७	इन्द्रादिको को केवलोत्पत्ति का परिज्ञान	७१४।२०१
मलाका पुरुषों की सख्या एवं उनके नाम	५१७।१४८	कुबेर द्वारा समवसरण की रचना	७१८।२०४
रदो के नाम	५२७।१५०	समवसरणों के निरूपण में इकतीस अधिकारो का निर्देश	७२०।२०५
तीर्थंकरों के अवतरण स्थान	५२६।१५१	सामान्य भूमि	७२४।२०६
“ के जन्म-स्थान, माता-पिता, जन्मतिथि एवं जन्म-नक्षत्रो के नाम	५३३।१५१	सोपानो का वर्णन	७२८।२०७
तीर्थंकरों के वसों का निर्देश	५५७।१५६	समवसरणों का विन्यास	७३१।२०८
“ की शक्ति का फल	५५८।१५७	वीथियों का निरूपण	७३२।२०८
तीर्थंकरों के जन्मान्तराज का प्रमाण	५६०।१६०	भूलिसालो का वर्णन	७४१।२१४
ऋषभादि तीर्थंकरों की धातु का प्रमाण	५६६।१६६	चैत्यप्रासाद भूमियों का निरूपण	७६१।२१६
“ “ का कुमारकाल	५६०।१६७	नाट्यकालायें	७६४।२२१
“ “ का उत्सेष	५६२।१६६	मानस्तम्भ	७६६।२२४
“ “ का शरीरवर्ण	५६५।१७०	प्रथम वेदी का निरूपण	८००।२३७
“ “ का राज्यकाल	५६७।१७०	सातिका क्षेत्र	८०५।२३८
“ “ के चिह्न	६११।१७६	दूसरी वेदी एवं बल्लीक्षेत्र का विस्तार	८०७।२४१
“ “ का राज्यपद	६१३।१७६	तृतीय बल्ली भूमि	८०८।२४१
“ “ के वंशग्य का कारण	६१४।१७६	द्वितीय कोट (साल)	८१०।२४२
“ “ द्वारा चिह्नित वंशग्य भावना	६१६।१७७	उपवन भूमि	८११।२४२
वंशग्य भावनाके अन्तर्गत नरकगतिके दुःख	६१६।१७७	चैत्यवृक्षो की ऊँचाई एवं जिनप्रतिमाएँ	८१४।२४३
“ “ तिर्यंभ “ “	६२३।१७८	मानस्तम्भ	८१७।२४५
“ “ मनुष्य “ “	६२७।१७६	नाट्यकालायें	८२३।२४८
“ “ देवगति “ “	६४८।१८४	तृतीय वेदी	८२५।२४८
ऋषभादि तीर्थंकरों के दीक्षा स्थान	६५०।१८४	ध्वजभूमि	८२६।२४८
तीर्थंकरों की दीक्षा तिथि, प्रहर, नक्षत्र, वन और दीक्षा समय के उपवासों का निरूपण	६५१।१८५	तीसरा कोट (साल)	८३५।२५१
		कल्पभूमि	८३६।२५२

विषय	पृष्ठा/पृ० सं०	विषय	पृष्ठा/पृ० सं०
नाट्यशालाएँ	८४७।२५५	तीर्थकरों के ऋषियों की संख्या	११०३।३२८
चतुर्थ वेदी	८४६।२५६	,, के सात गए व उनकी पृथक्	
भवनभूमियाँ	८५०।२५६	पृथक् मठ्या	११०६।३२६
स्तूप	८५३।२५७	तीर्थकरों की आर्थिकाओं का प्रमाण	११७७।३४६
चतुर्थ कोट (साग)	८५७।२५८	प्रमूल आर्थिकाओं के नाम	११६१।३४६
श्रीमण्डप भूमि	८६१।२५६	भावको की संख्या	११६२।३४६
समवसरण में ब्राह्म कोठे	८६५।२६२	श्राविकाओं की संख्या	११६५।३५०
पाँचवी वेदी	८७३।२६४	प्रथम तीर्थ में देव-देवियों तथा धन्य मनुष्यों	
प्रथम पीठ	८७४।२६५	एव तीर्थियों की संख्या	११९५।३५०
द्वितीय पीठ	८८४।२७०	ऋषभादि तीर्थकरों के मुक्त होने की तिथि,	
तृतीय पीठ	८९३।२७२	काल, नक्षत्र और सहमुक्त जीवों की	
गन्धकुटी	८९६।२७४	मठ्या का निर्देश	११६६।३५०
अरहन्तो की स्थिति सिंहासन से ऊपर	९०४।२७८	ऋषभादि तीर्थकरों का योगनिवृत्तिकाल	१२२०।३५६
जन्म के दस अतिशय	९०५।२७८	,, ,, के मुक्त होने के आसन	१२२१।३५६
केवलज्ञान के ग्यारह अतिशय	९०८।२७८	ऋषभादिकों के तीर्थ में अनुबद्ध केवलियों	
देवकृत तेरह अतिशय	९१६।२८०	की संख्या	१२२३।३५७
अष्ट महाप्रातिहार्य	९२४।२८१	अनुत्तर विमानों में जाने वालों की मठ्या	१२२६।३६०
समवसरणों में वन्दनारत जीवों की संख्या	९३०।२८५	मुक्ति प्राप्त यतिगणों का प्रमाण	१२२६।३६१
अवगाहनशक्ति का अतिशय	९३६।२८५	मुक्ति प्राप्त शिष्यगणों का मुक्तिकाल	१२४१।३६३
प्रवेश निर्गमन का प्रमाण	९४०।२८५	सौषर्मादिकों प्राप्त शिष्यों की संख्या	१२४३।३६४
समवसरण में कौन नहीं जाते ?	९४१।२८५	भावश्रमणों की संख्या	१२४६।३६७
समवसरण में रोयादि का अभाव	९४२।२८६	ऋषभनाथ और महावीर का सिद्धिकाल	१२५०।३६६
ऋषभादि तीर्थकरों के यश	९४३।२८६	तीर्थकरों के मुक्त होने का अन्तरकाल	१२५१।३६६
,, ,, की यक्षिणियाँ	९४४।२८६	तीर्थ प्रवर्तनकाल	१२६१।३७२
,, ,, का केवली काल	९४५।२८६	दुषममुपमाकाल का प्रवेश	१२८७।३७६
गणेशर संख्या	९७०।२९२	धर्मतीर्थ की श्रुति	१२८६।३७६
आद्य गणेशर	९७३।२९३	भरतादिक चक्रवर्तियों का निर्देश	१२९२।३८०
ऋद्धि सामान्य व बुद्धिऋद्धि के भेद	९७७।२९५	चक्रवर्तियों की परोक्षता/प्रत्यक्षता	१२९४।३८०
विक्रिया ऋद्धि के भेद एव उनका स्वरूप	१०३३।३०८	भरतादिक चक्रवर्तियों की ऊँचाई	१३०३।३८२
क्रिया ऋद्धि के भेद व उनका स्वरूप	१०४२।३१०	,, ,, की आयु	१३०५।३८२
तप ऋद्धि के भेद व उनका स्वरूप	१०५८।३१४	,, ,, का कुमारकाल	१३०८।३८३
बल ऋद्धि के भेद व उनका स्वरूप	१०७२।३१८	,, ,, का मण्डलीककाल	१३११।३८४
औषध ऋद्धि के भेद व उनका स्वरूप	१०७८।३१९	चक्ररत्न की उपलब्धि एव दिग्विजय	१३१४।३८४
रस ऋद्धि के भेद व उनका स्वरूप	१०८८।३२१	चक्रवर्तियों का वैभव	१३८१।३९७
दोष ऋद्धि के भेद व उनका स्वरूप	१०९६।३२४	,, के राज्यकाल का प्रमाण	१४१३।४०७

विषय	पाथा/पृ० सं०	विषय	पाथा/पृ० सं०
चक्रवर्तियों का समयकाल	१४१६।४०६	दुषमाकाल का निरूपण	१५८८।४५४
„ की पर्यायान्तर प्राप्ति	१४२२।४०६	दुषमसुषमा काल का निरूपण	१५६७।४५६
बलदेव, नारायण एव प्रतिनारायणों का निरूपण	१४२३।४११	सुषमदुषमा काल का निरूपण	१६१७।४६२
ग्यारह हठों का निरूपण	१४५१।४२१	सुषमा काल का निरूपण	१६२०।४६३
नौ नारदों का निरूपण	१४८१।४३०	सुषमसुषमा काल का निरूपण	१६२४।४६४
चौबीस कामदेव	१४८४।४३१	उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी परिवर्तन	१६२८।४६४
१६० महापुरुषों का मोक्षपद निर्देश	१४८५।४३१	पाच म्लेच्छमण्डो घोर विद्याधर श्रेणियों में प्रवर्तमानकाल का नियम	१६२९।४६५
दुषमा काल का प्रवेश एव उसमें आयु आदि का प्रमाण	१४८६।४३१	उत्सर्पिणीकाल के अतिदुषमादि तीन कालों में जीवोकी मध्याह्निक का क्रम	१६३०।४६५
गौतमादि अनुबद्ध केवली	१४८८।४३२	विकलेन्द्रियों का नाश व कल्पवृक्षों की उत्पत्ति	१६३२।४६५
धन्तिम केवली आदि का निर्देश	१४९१।४३२	विकलेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति एव वृद्धि	१६३४।४६६
चौदह पूर्वधारियों के नाम एव उनके काल का प्रमाण	१४९४।४३३	दृष्टावसर्पिणी एव उसके बिल्ल	१६३७।४६७
दसपूर्वधारी व उनका काल	१४९७।४३४	हिमवान् पर्वत का उन्मेष, अवगाह व विस्तार	१६४६।४७१
ग्यारह अंगधारी एव उनका काल	१५००।४३४	„ „ की उत्तर जीवा	१६४७।४७१
आचाररागधारी एव उनका काल	१५०२।४३५	„ „ के उत्तर में धनुष पृष्ठ	१६४८।४७१
गौतम मण्डपर से लोहार्थ तक का सम्मिलित काल प्रमाण	१५०४।४३५	„ „ की चूनिका	१६४९।४७१
श्रुततीर्थ नष्ट होने का समय	१५०५।४३६	„ „ को पाश्र्वंमुत्रा	१६५०।४७२
चातुर्वर्ष्य सप्त का अस्तित्व काल	१५०६।४३६	„ „ की वेदिया, वनखण्ड	१६५१।४७२
शक राजा की उत्पत्ति का समय	१५०८।४३७	„ „ के कूटों के नाम	१६५४।४७३
गुप्तों का और चतुर्मुख का राज्यकाल	१५१६।४३९	कूटों का विस्तार आदि	१६५५।४७३
पालक का राज्याभिषेक	१५१७।४३९	प्रथम कूटस्थ जिनभवन	१६५६।४७३
पालक, विजय, मुरखडबशी तथा पुष्यमित्र का राज्यकाल	१५१८।४३९	शेषकूटों पर स्थित व्यन्तर नगर	१६७२।४७६
वसुमित्र, अग्निमित्र, गन्धर्व, नरवाहन भृत्यबन्ध और गुप्तबन्धियोंका रा का कल्की की ध्रायु एव उसका राज्यकाल	१५१९।४४०	हिमवान् पर्वतस्थ पद्मद्रह का वर्णन	१६८०।४७७
कल्की का पट्टबन्ध	१५२२।४४०	पद्मद्रह में स्थित कमल का निरूपण	१६८१।४७९
कल्की एवं उपकल्कियों का समय	१५२८।४४२	कमल में स्थित श्रीदेवी का „	१६९४।४८०
अतिदुषमा काल का निरूपण	१५४६।४४८	रोहितास्या नदी का निर्देश	१७१८।४८४
उत्सर्पिणी काल का प्रवेश और भेद	१५७६।४५१	हैमवत क्षेत्र का निरूपण	१७२१।४८७
„ „ का कालमान	१५७८।४५२	महाहिमवान् पर्वत का निरूपण	१७४०।४९१
„ „ का प्रथमकाल	१५७९।४५२	हरिक्षेत्र का निरूपण	१७६१।४९५
		निपथपर्वत का निरूपण	१७७३।४९८
		महाविदेह क्षेत्र का वर्णन	१७९७।५०३
		मन्दर महामेघ का निरूपण	१८०३।५०६

विषय	गाथा/पृ० सं०	विषय	गाथा/पृ० सं०
मेरु की छह परिधियाँ एव उनका प्रमाण	१८२५।५१२	अपर विदेहस्थ ८ गजदन्त	२२३१।५९८
सातवी परिधि मे ग्यारह वन	१८२७।५१२	पूर्वापर विदेहस्थ विभग नदियाँ	२२४१।५९८
मेरु के मूल भागादि की वज्रादिरूपता	१८३०।५१३	कच्छादि क्षेत्रों का विस्तार	२२४३।६००
मेरु सम्बन्धी चार वन	१८३२।५१३	कच्छादेश का निरूपण	२२४६।६०५
मेरु शिखर का विस्तार एव परिधि	१८३३।५१४	वृषभगिरि	२३१७।६१९
मेरु शिखरस्थ पाण्डुक वन	१८३४।५१४	शेष क्षेत्रों का सक्षिप्त वर्णन	२३२१।६१९
पाण्डुक शिवा का वर्णन	१८४२।५१५	अपर विदेह का सक्षिप्त वर्णन	२३२५।६२०
सोमनस वन का निरूपण	१९६१।५३९	मीना-सीतोदा के किनारों पर नीर्थ	२३३२।६२२
नन्दन वन का वर्णन	२०१३।५५१	सोलह वक्षार पर्वत	२३३४।६२२
भद्रशाल वन का वर्णन	२०२६।५५३	यारह विभग नदियाँ	२३३९।६२५
गजदन्त पर्वतों का वर्णन	२०३७।५५५	देवारण्य वन का निरूपण	२३४२।६२५
“ “ की नीव और गूट	२०५५।५५९	भूतारण्य का निरूपण	२३५२।६२७
विशुम्भ गजदन्तों के गूट	२०७०।५६२	नीलगिरि का वर्णन	२३५४।६२७
गन्धमादन पर्वत के गूट	२०८२।५६५	रम्य क्षेत्र का वर्णन	२३६२।६२९
मान्यवान् पर्वत के गूट	२०८५।५६५	रुक्मिणिरि का वर्णन	२३६७।६३०
मीनोदानदी का वर्णन	२०९०।५६७	हैरण्यवत क्षेत्र का निरूपण	२३७७।६३२
यमक पर्वतों का वर्णन	२१००।५६९	शिवरीगिरि का निरूपण	२३८२।६३३
यमक पर्वतों के आगे ४ द्रह	२११४।५७२	ऐरावत क्षेत्र का निरूपण	२३९२।६३४
काचन शैलों का निरूपण	२११९।५७३	धनुषाकार क्षेत्र का क्षेत्रफल निकालने	
भद्रशाल वेदी	२१२५।५७४	का विधान	२४०१।६३६
दिग्गन्ध पर्वतों का वर्णन	२१२८।५७५	भरत क्षेत्र का सूक्ष्म क्षेत्रफल	२४०२।६३६
सीतोदा नदी पर जिनप्रामाद	२१३४।५७६	हिमवान् पर्वत का “	२४०३।६३७
कुमुदशैल व पलाशागिरि	२१३७।५७७	हैमवत क्षेत्र का “	२४०४।६३७
भद्रशाल वन वेदी	२१३९।५७७	हरि क्षेत्र का “	२४०५।६३८
सीता नदी का वर्णन	२१४१।५७८	निषध पर्वत का सूक्ष्म क्षेत्रफल	२४०६।६३८
यमकगिरि एव द्रहों का वर्णन	२१४८।५७९	विदेह क्षेत्र का “ “	२४०७।६३८
सीतानदी पर जिन प्रासाद	२१५७।५८१	नीलान्त ऐरावतादि का क्षेत्रफल	२४०८।६३९
पश्चोत्तर एव नीलगिरि	२१५९।५८१	जम्बूद्वीप का क्षेत्रफल	२४०९।६३९
देवकुरु क्षेत्र की स्थिति व लम्बाई	२१६३।५८२	जम्बूद्वीपस्थ नदियों की सख्या	२४१०।६३९
शाल्मलीवृक्ष के स्थल आदि का वर्णन	२१७१।५८४	कुण्डों का प्रमाण	२४१६।६४३
उत्तरकुरु व उसकी लम्बाई आदि	२२०७।५८३	कुण्डों के भवनों मे रहने वाले व्यन्तरदेव	२४१७।६४३
जम्बूवृक्ष व उसके परिवार वृक्षादि	२२२०।५९४	वेदियों की सख्या व उत्सेधादि	२४१८।६४३
पूर्वापर विदेहों में क्षेत्रों का विभाजन	२२२५।५९५	जिनभवनों की सख्या	२४२२।६४४
विदेहस्थ बत्तीस क्षेत्र	२२३२।५९७	कुल शैलादिकों की सख्या	२४२४।६४४
पूर्व विदेहस्थ ८ गजदन्त	२२३६।५९७		

विषय	गाथा/पृ० सं०	विषय	गाथा/पृ० सं०
(३) लवण समुद्र		धातकीखंड मे पर्वतरुद्ध क्षेत्र का क्षेत्रफल	२६००।६६३
सबल समुद्र का आकार और विस्तारवि	२४२८।६४६	धादिम, मध्यम और बाह्य सूची	
,, में पातालों का निरूपण	२४३८।६४९	निकालने का विधान	२६०१।६९३
,, के दोनों तटों पर और गिरार पर		विवक्षित सूची की परिधि प्राप्त करने	
स्थित नगरियों का वर्णन	२४७५।६६२	का विधान	२६०२।६६४
पातालों के पार्श्वभागों मे स्थित ८ पर्वत	२४८४।६६४	धातकी खण्ड की अर्धवृत्त परिधि का	
लवण समुद्रस्थ सूर्यद्वीपाधिको का निर्देश	२४९८।६६७	प्रमाण	२६०३।६६४
४८ कुमानुषद्वीपो का निरूपण	२५१८।६७०	धातकी खंड की मध्यम परिधि का प्रमाण	२६०४।६६४
कुषोणसूत्रि मे उत्पन्न मनुष्यों की आकृति	२५२४।६७३	,, बाह्य ,, ,,	२६०५।६६५
कुमानुषद्वीपो मे कौन उत्पन्न होते हैं ?	२५४०।६७८	भरतादि सब क्षेत्रों का सम्मिलित विस्तार	२६०६।६९५
लवणसमुद्रस्थ मत्स्याधिको की अवगाहना	२५५६।६८१	धातकी खण्डस्थ भरतक्षेत्र का धादि, मध्य	
लवण समुद्र की जगती	२५५६।६८२	और बाह्य विस्तार	२६०७।६६६
वलयकार क्षेत्र का सूक्ष्म क्षेत्रफल		हैमवतादिक क्षेत्रों का विस्तार	२६०८।६६७
निकालने की विधि	२५६१।६८२	पषाद्रह और पुण्डरीकरह से निर्गम नदियों	
लवणसमुद्र के सूक्ष्म क्षेत्रफल का प्रमाण	२५६३।६८३	का पर्वत पर गमन का प्रमाण	२६०९।७००
जम्बूद्वीप एव लवणसमुद्र के सम्मिलित		मन्दर पर्वतों का निरूपण	२६१५।७००
क्षेत्रफल का प्रमाण	२५६४।६८३	गजदन्तों का वर्णन	२६३१।७०४
जम्बूद्वीप प्रमाण खण्ड निकालने का		कुक्षेत्रों का धनु पृष्ठ	२६३३।७०४
विधान	२५६५।६८४	कुक्षेत्रों की जीवा	२६३५।७०५
लवणसमुद्र के जम्बूद्वीप प्रमाण खण्डों		वृत्त विस्तार निकालने का विधान	२६३५।७०५
का निरूपण	२५६६।६८४	कुक्षेत्रों का वृत्त विस्तार	२६३६।७०५
(४) धातकी खण्डद्वीप		ऋजुबाण निकालने का विधान	२६३७।७०६
वर्णन के सोलह अन्तराधिकारों के नाम	२५६८।६८५	कुक्षेत्रों का ऋजुबाण	२६३८।७०६
धातकी खण्डद्वीप की जगती	२५७१।६८५	,, वक्रबाण	२६३९।७०६
द्विधाकार पर्वतों का निरूपण	२५७२।६८६	धातकी वृत्त एव उसके परिवार वृत्त	२६४०।७०७
जिनभवन एव व्यन्तरप्रामादों का सादृश्य	२५८०।६८७	मेरु आदिकों के विस्तार का निरूपण	२६४४।७०७
मेरुपर्वतों का विन्यास	२५८१।६८८	विजयादिकों का विस्तार निकालने का	
पर्वत तालाब आदि का प्रमाण	२५८२।६८८	विधान	२६४०।७०९
दोनों द्वीपों में विजयादिकों का सादृश्य	२५८४।६८८	कच्छा और गन्धमाविनी देश का	
विजयाधर्ष पर्वतादिकों का विस्तार	२५८६।६८९	सूचीव्याप्त	२६४८।७११
बारह कुल पर्वत और चार विजयाधों		कच्छा देश की परिधि	२६६०।७१२
की स्थिति एव आकार	२५८८।६८९	पर्वतरुद्ध क्षेत्र का प्रमाण	२६६१।७१२
विजयादिकों के नाम, आकार	२५९१।६९०	विदेह क्षेत्र का आयाम	२६६२।७१२
कुल पर्वतों का विस्तार	२५९६।६९१	कच्छा देश की आदिम लम्बाई	२६६४।७१३
द्विधाकार पर्वतों का विस्तार	२५९९।६९२	अपने-अपने स्थान में अर्ध, विदेह का	
		विस्तार	२६६६।७१३

विषय	पाना/पृ० सं०	विषय	पाना/पृ० सं०
क्षेत्रों की वृद्धि का प्रमाण	२६६५।७१४	इष्वाकार पर्वतों की स्थिति	२८२५।७५८
विजयादिकों की आदि मध्यम और		विजयादिकों का आकार तथा संख्या	२८३०।७५९
अन्तिम लम्बाई जानने का उपाय	२६७२।७१५	तीन द्वीपों में विजयादिकों की समानता	२८३३।७५९
कच्छादिकों की तीनों लम्बाई	२६७४।७१५	कुल पर्वतादिकों का विस्तार	२८३४।७६०
मंगलावती आदि देशों की लम्बाई	२७००।७१२६	विजयावर्ष तथा कुलाचलों का निरूपण	२८३७।७६०
क्षुद्रहिमवान् पर्वत का क्षेत्रफल	२७४८।७३३	दोनों भारत तथा ऐरावत क्षेत्रों की स्थिति	२८४०।७६१
महाहिमवान् आदि पर्वतों का क्षेत्रफल	२७५०।७३३	सब विजयों की स्थिति तथा आकार	२८४१।७६१
दो इष्वाकार पर्वतों का क्षेत्रफल	२७५१।७४०	कुलाचल तथा इष्वाकार पर्वतों का	
चौदह पर्वतों का समस्त क्षेत्रफल	२७५२।७४०	विष्कम्भ	२८४३।७६१
घातकी खण्ड का समस्त क्षेत्रफल	२७५३।७४०	भरतादि क्षेत्रों के तीनों विष्कम्भ लाने	
भरतादि क्षेत्रों का क्षेत्रफल	२७५४।७४०	का विधान	२८४७।७६२
घातकी खण्ड के ज द्वी प्रमाण खण्ड	२७५८।७४२	भरतादि सातों क्षेत्रों का ध्रुव्यन्तर	
भरतादि अधिकारों का निरूपण	२७६०।७४२	विस्तार	२८५०।७६३
(५) कालोद समुद्र		भरतादि सातों क्षेत्रों का बाह्य विस्तार	२८५४।७६४
कालोद समुद्र का विस्तारादि	२७६२।७४३	पद्मद्रह तथा पुण्डरीक द्रह से निकली हुई	
समुद्रगत द्वीपों की अवस्थिति और संख्या	२७६४।७४३	नदियों के पर्वत पर बहने का प्रमाण	२८५५।७६४
इन द्वीपों में स्थित कुमानुवों का निरूपण	२७७१।७४५	मेरुओं का निरूपण	२८५७।७६५
कालोदक के बाह्य भाग में स्थित कुमानुष		चार गजदन्तों की बाह्याभ्यन्तर लम्बाई	२८५८।७६५
द्वीपों का निरूपण	२७७९।७४६	कुलक्षेत्र के धनुष, ऋजुबाण और जीवा	
कालोदक समुद्र का क्षेत्रफल	२७८१।७४७	का प्रमाण	२८६०।७६५
“ “ के ज द्वी. प्रमाण खण्ड	२७८२।७४७	वृत्त विष्कम्भ निकालने का विधान	२८६३।७६६
“ “ की बाह्य परिधि	२७८३।७४८	कुलक्षेत्र का वृत्तविष्कम्भ तथा वक्रबाण	
कालोदक समुद्रस्थ मत्स्यो की दीर्घतादि	२७८४।७४८	का प्रमाण	२८६४।७६६
(६) पुष्करवर्ष द्वीप		मद्रशाल वन का विस्तार	२८६६।७६७
वर्णन के सोलह अन्तराधिकारों का निर्देश	२७८९।७४९	मेर्वादिकों के पूर्वापर विस्तार का प्रमाण	२८६९।७६८
मानुषोत्तर पर्वत तथा उसका उत्सेधादि	२७९२।७५०	मेर्वादिकों का विस्तार निकालने का	
समवृत्त क्षेत्र का क्षेत्रफल निकालने का		विधान	२८७४।७६९
विधान	२८०१।७५३	कच्छा और गन्धमालिनी की सूची एवं	
मानुषोत्तर सहित मनुष्यलोक का क्षेत्रफल	२८०६।७५३	उसकी परिधि का प्रमाण	२८७६।७६९
बलयाकार क्षेत्र का क्षेत्रफल निकालने का		विदेह की लम्बाई का प्रमाण	२८७९।७७०
विधान	२८०७।७५४	कच्छादि की आदिम लम्बाई	२८८१।७७०
मानुषोत्तर का सूक्ष्म क्षेत्रफल	२८०८।७५४	विजयादिकों की विस्तार-वृद्धि के प्रमाण	
मानुषोत्तर पर्वतस्थ २२ नूटों का निरूपण	२८०९।७५५	का निरूपण	२८८३।७७१
		कच्छादिकों की तीनों लम्बाई का प्रमाण	२८९०।७७३
		पद्मा व मंगलावती की सूची	२९२४।७८

विषय	पृष्ठा/पृ० सं०	विषय	पृष्ठा/पृ० सं०
पद्मादिको की तीनों लम्बाई का प्रमाण	२९२५।७८४	(९) मनुष्यों से अल्पबहुत्व	२९७६।८०१
हिमवान् पर्वत का क्षेत्रफल	२९५९।७९६	(१०) मनुष्यों से गुणस्थानादि	२९८०।८०२
चौदह पर्वतों से रुद्र क्षेत्रफल का निरूपण	२९६०।७९६	(११) मनुष्यों की गत्यन्तर प्राप्ति मनुष्यायु का बन्ध	२९८९।८०४ २९९१।८०५
पुष्करार्ध द्वीप का समस्त क्षेत्रफल	२९६२।७९७	(१२) मनुष्यों में योनियों का निरूपण	२९९३।८०५
पर्वत रहित पुष्करार्ध का क्षेत्रफल	२९६३।७९७	(१३-१४) मनुष्यों से सुख दुःख का निरूपण	२९९९।८०६
भरतादि क्षेत्रों का क्षेत्रफल	२९६४।७९८	(१५) सम्यक्त्व प्राप्ति के कारण	३०००।८०७
पुष्करार्ध के जम्बूद्वीप प्रमाण सण्ड	२९६७।७९९	(१६) मुक्त जीवों का प्रमाण	३००३।८०७
मनुष्यों की स्थिति	२९६८।७९९	अधिकारान्त मगल	३००६।८०८
भरतादिक शेष अन्तर्गधिकार	२९६९।८००		
(७) मनुष्यों के भेद	२९७०।८००		
(८) मनुष्यों की संख्या	२९७१।८००		



तिलोय-पण्णती द्वितीय खंड (द्वितीय संस्करण) १९९७ ई०

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ संख्या	पंक्ति संख्या	अशुद्ध	शुद्ध
समर्पण	९	पट्टाधीशाचार्य पद	निकालना है।
१३	४	छद्मभि	छद्माम्मी
३	२	१६००९०३०१२५००० योजन	१६००९०३०१२५००० वर्ग योजन
३	११	=१४२३०२४९ वर्ग योजन	१४२३०२४९ योजन
३	१२		और जो के आगे $\frac{१३३९७९९९}{२८४६०४८९}$ अंश
५	१२	जगती की गहराई	जगती की
५	१२		दो कोस के आगे बढ़ाना है।
			—मोटी (जाड़ी या चौड़ी) और इतनी (दो कोस) ही गहरी है।। ९६।।
११	तालिका नं २	२०० धनुष	२२५ धनुष
		कालम ३ ज्येष्ठ प्रसादो की ऊंचाई	
१७	१४	$\frac{१२१११७७५०००}{६३२४५४}$ योजन	$\frac{१२१११७७५०००}{६३२४५४}$ वर्ग योजन
१७	१५	$\frac{२८०९००}{६३२४५४}$ योजन	$\frac{२८०९००}{६३२४५४}$ वर्ग योजन
१७	१६	७९०५६९४१५० योजन	७९५६९४१५० वर्ग योजन
१८	१५	७९०५६९४१५० योजन	७९०५६९४१५० वर्ग योजन
२०	१०	३ योजन अवशेष	३/४ योजन अवशेष
२०	१०	अवशेष ३ कोस	३/४ कोस
२१	२	१ हाथ० वि०	१ हाथ, ० वितस्ति
२२	११	$\sqrt{५००००००००}$	$\sqrt{५००००००००}$
२२	११	$\sqrt{५०००००००००}$	$\sqrt{५०००००००००}$
२२	११	$\sqrt{६२५०००००००}$	$\sqrt{६२५०००००००}$
२२	११	$\sqrt{६२५०००००००}$	$\sqrt{६२५०००००००}$
३३	तालिका ४	क्रमांक २	स्वर्ण सदृश
३३	तालिका ४	क्रमांक ४	चाँदी सदृश
३३	तालिका ४	क्रमांक ६	तपनीय स्वर्णसदृश
३३	तालिका ४	क्रमांक ८	वैडूर्य सदृश

३३	तालिका ४	क्रमांक १२	रजत	रजत सदृश
३३	तालिका ४	क्रमांक १०	स्वर्ण	स्वर्ण सदृश
३५	विशेषार्थ	१ पंक्ति	पूर्व-पश्चिम लम्बा है	पूर्व-पश्चिम ९७४८ $\frac{१२}{१६}$ योजन लम्बा है।
३८	गाथा १२८	के नीचे	६०१	२। ६०।
४२	गाथा १४६	अर्थ प्रथम पंक्ति	वाहन देव-व्यन्तर होते हैं।	वाहन जाति के। व्यन्तरदेव रहते हैं जो
५२	विशेषार्थ की	प्रथम पंक्ति	और भरत क्षेत्र	और दक्षिण भरत क्षेत्र का
५२	विशेषार्थ की	सातवीं अंतिम	इसमें १६७३२४ अवशेष	इसमें १६७३२४ $\frac{३७०४४४}{२}$ अवशेष
५३		१ पंक्ति	$= \frac{(१७२१५४७५६२५)}{३६१} \times २$	$\frac{१}{२}$

$$\left(\frac{(१७२१५४७५६२५)}{३६१} \times २ \right) \frac{१}{२}$$

५५		१५ पंक्ति	या ४८५ $\frac{३०}{३८}$	या ४८५ $\frac{३७}{३८}$
५९	तालिका ५ क्र० १		१८७५ $\frac{१३}{१६}$ योजन	१८७५ $\frac{१३}{३८}$ योजन
८२	गाथा स २८९ के नीचे यह पढा जाना है			सं दृष्टि का स्पष्टीकरण १ = १ आवलि रि = संख्यात समयों की होती है १ = १ उच्छ्वास ७ = सख्यात आवलियों १ = १ प्राण नामा समय १ = १ उच्छ्वास बराबर है।
९७		१६	जहाँ-जहा	जहाँ-जहाँ
१२३	८		जघन्य से अर्थात् अपर्पात् अवस्था में मिथ्यात्व	जघन्य से मिथ्यात्व
१२३	९		उत्कृष्टता से अर्थात् पर्याप्त अवस्था में मिथ्या दृष्टि	उत्कृष्टता से मिथ्यादृष्टि

१२९		५ अर्थ	प्रतिश्रुति	प्रथम प्रतिश्रुति
१३१	१	सनमतिनामक		द्वितीय सन्मति नामक
१३२		४ अर्थ	उस कुलकर था	उस तृतीय कुलकरका
१३३		६ अर्थ	इस कुलकर के	इस चतुर्थ कुलकर के
१३४		१३ अर्थ	इस (सीमंकर)	(इस पंचम सीमंकर)
१३५		१३ अर्थ	सीमंघर मनु के	षष्ठ सीमंघर मनु के
				१ प १
१३५		१७ लाइन	दंड ७०० । १०००००००	दंड ७०० । १०००००००
१३६		६	१	प १
			। प ८०००००००	। ८०००००००
१३६		१२	१	प १
			। दं ६७५ । प १००००००००	। दं ६७५ । १००००००००
१३७		८	१	प १
			। प ८००००००००	। ८००००००००
१३७		१४	१	प १
			।दं ६५० । प १०००००००००	।दं ६५० । १०००००००००
१३८		६	१	प १
			।प ८००००००००० ।	। ८००००००००० ।
१३८		१२	१	प १
			। दं ६२५ । प १००००००००००	।दं ६२५ । १००००००००००
१३९	१५	१	१	प १
			। प ८००००००००० ।	। ८००००००००० ।
१३९	अर्थ १ पंक्ति	अभिचन्द्र		दसम अभिचन्द्र
			१	प १
१४०	१		। दं ६०० । प १००००००००००	। दं ६०० । १००००००००००
१४१	४		१	प १
			। प ८०००००००००० ।	। ८०००००००००० ।
१४१	५ अर्थ	चन्द्राभ कुलकर के		(ग्यारहवे) चन्द्राभ कुलकर के
			१	प १
१४१	१९		। दं ५७५ । प १००००००००००० ।	। दं ५७५ । १०००००००००००
१४२	१४		१	प १
			। प ८००००००००००० ।	। ८०००००००००००० ।
१४२	१५ अर्थ	उस मनु के		उस (तिरहवे) मनु के
१४८	तालिका ११	में जहाँ शब्द क० है		वहाँ करोड़ पढ़े ।
१६०	४	।। पुव्व व ८४ ल ।		।पुव्व ८४ ल ।

१६०	९	।। सा ५० को ल। पुव्व घण १२ ल	।। सा ५० को ल। व पुव्व १२ ल।।
१६०	१३ लाख	। सा ३० को ल। घण	।। सा ३० को ल। व घण
१६१	१	(सा ९ को ल। घण पुव्व व १० ल।	। सा ९ को ल। घण + पुव्व १० ल।
१६१	१७	अर्थ नौ सौ सागरोपमोके	नौ सौ करोड़ सागरोपमोके
१६२	१	। सा ९० को। घण पुव्व व ८ ल	। सा ९० को। घण पुव्व ८ ल।
१६२	१३	। सा को १। पुव्व व १ ल।	। सा को १। पुव्व १ ल।
१६२	१९	। सा ५४ वस्स १२ ल।	। सा ५४ घण वस्स १२ ल।
१६३	३	। सा ३० वस्स १२ ल।	। सा ३० घण० वस्स० १२ ल।
१६३	८	। सा ९ वस्स ३० ल।	। सा ९ घण वस्स ३० ल।
१६३	१३	। सा ४ वस्स २० ल।	। सा ४ घण वस्स २० ल।
१६४	९	ग्यारह हजार कम एक हजार करोड़	ग्यारह हजार वर्ष कम एक हजार करोड़
१६४	१४	उन्तीस हजार अधिक	उन्तीस हजार वर्ष अधिक
१६६	५	तीर्थकरो के अन्तराल काल का	तीर्थकरो के जन्मान्तर काल का
१७०	१८	। पुव्व ६३ ल। अजि ५३ ल।	। पुव्व ६३ ल। अजि पुव्व ५३ ल।
१७१	११	उन्तीस लाख वर्ष पूर्व	उन्तीस लाख पूर्व
१७३	६	चतुर्थांश प्रमाण	चतुर्थांश २५००० वर्ष प्रमाण
२१०	अन्तिम से पहली	अढाइसौ अढाइसौ कम	अढाई सो अढाई सौ धनुष कम
२१८	१	२४ आदि संख्याओ से पहले १४४	। को २४ आदि पढे। १४४
२२०	१०-११	२६४ आदि के पहिले ५७६	जोयण शब्द पढे।
२२७	१९	पढमं पीढाणं	पढम - पीढाण सोवाण
२३२	तालिका १९ कालम २	मानस्तम्भो का वाहल्य	मानस्तम्भो का बाहल्य
२३७	१२-१३	सख्या २४ आदि के पहले १४४	गा ७८३-७८४
२३८	११-१२	सख्या २६४ आदि को पहले ५७६	को पढे।
२३८	१५-१८	सख्या ५५	जोयण, शब्द पढे।
			को। ५५
२४०	तालिका २० पंक्ति ३ कालम अंतिम	$\frac{३ \times १३}{२६}$	$\frac{३ \times १३}{३६}$
२४०	तालिका २० पंक्ति ८ कालम ६	$१०८ \frac{१}{१८}$	$११८ \frac{१}{१८}$
२४०	तालिका २० पंक्ति १३ कालम २	$१६६ \frac{२}{६}$	$१६६ \frac{२}{३}$

२४१	५-७	के पहिले	को २४ आदि पढे ।
			७२
२४२	६-७	के पहिले	को शब्द पढे ।
२४६	८-९	के पहिले	जोयण शब्द पढे ।
२४७	तालिका २१ क्र ३	$\frac{१३}{३२६}$	$\frac{१३}{३६}$
	कालम २ मे		
२४७	तालिका २१ क्र २३ मे	$\frac{१}{६९३६}$	$\frac{४}{६९६}$
	कालम १ मे		
२४७	तालिका २१ क्र० २३ में	$\frac{१}{६९३६}$	$\frac{४}{६९६}$
	कालम ३ में		
२५१	पक्ति ४-५ के पहिले	एव १५-१६ के पहिले	जोयण शब्द पढे
२५२	पक्ति ४-५ के पहिले	एव १५-१६ के पहिले	जोयण शब्द पढे ।
२५७	३-४	के पहिले	जोयण शब्द पढे ।
२५७	९	ग्यारह से गुणित अपनी प्रथम	ग्यारह से गुणित अपनी
		वेदी विस्तार सदश है	प्रथम वेदी के विस्तार सदश है ।
२५९	१-२	के पहिले	को शब्द पढे ।
२५९	९-१०	के पहिले	धनुष शब्द पढे ।
२६०	१०-११	के पहिले	को शब्द पढे ।
			धनुष
२६०	१४-१५	२५ १२५०	२५ १२५०
		२८८ ९	२८८ ९
२६२	८	सर्पिंरास्त्रव	सर्पिंस्त्रव
२६४	४-५	के पहिले	को शब्द पढे ।
२६५	९	अपने मानस्तभदि की ऊँचाई	अपने मानस्तम्भों की प्रथम
		सदश है ।	पीठ की ऊँचाई सदश है ।
२६७	७-८	१२५	१२५
		८	२
२६९	तालिका २४	पीठ की मेखला का विस्तार	पीठ की मेखला का विस्तार
		गाथा ८८०	गाथा ८८०-८८१
२७८	१३	१ खेद रहितता	१ स्वेद रहितता
३३५	१९	कवली सात हजार	केवली सात हजार
३३७	७	ओ ४८०० के ५५०० वि ९०००	ओ ४८०० के ५५००
			वे ९०००
३४६	५	ऋषभनाथ जिनेन्द्र के तीर्थ में	ऋषभनाथ जिनेन्द्र के समय मे

३४६	१०	सम्भवनाथ के तीर्थ में	सम्भवनाथ के तीर्थ समय में
३४६	१५	सुमति जिनेन्द्र के तीर्थ में	सुमति जिनेन्द्र के समय में
३४६	२०	सुपाश्वर्ष जिनेन्द्र के तीर्थ में	सुपाश्वर्ष जिनेन्द्र के समय में
३४७	४-९-१४१९	सुवधि और शीतल वासु पूज्य स्वामी अनन्तनाथ स्वामी शान्तिनाथ के तीर्थ की बजाय	समय पड़े।
३४८	१-६-११	अरहनाथ, मुनिसुब्रतनथ नेमिनाथ तीर्थ के बजाय	समय में पड़े।
३४९	१३	कमश ऋषभआदि के तीर्थ में	कमश ऋषभदिक के समय में
३४९	१८	८ ३०००० २००००	८ ३०००० ८ २००००
३५०	१	प्रत्येक के तीर्थ में	प्रत्येक के तीर्थ समय में
३५०	९	प्रत्येक के तीर्थ में	प्रत्येक के तीर्थ समय में
३५०	१२	प्रत्येक के तीर्थ में देव देवियों	प्रत्येक तीर्थकर के समव शरण में
३५७	अन्तिम लाइन	वर्धमान	वर्धमान ^२
३५७	टिप्पण में		२-देखें गाथा १४८८-१४८९
३६४	६	छह माह के समय में	छह माह के उपरान्त समय में
३६४	१४	के पश्चात् नोट	इन दोनों गाथाओं का अर्थ विद्वज्जनो के द्वारा चिन्तनीय है।
३६७	९	ऋषियों की यह सख्या	ऋषियों की सख्या
३७४	८	सा १ कोरिण सा १००। $\frac{९}{२}$	सा १ को रिण। सा $\frac{९}{२}$
३८३	९	६००००।	६०००।
३८४	९	५००००।	५०००।
३९५	१४	चक्कीण चलण कमले	चक्कीण चरण कमले
३९७	९	अड छप्पण चउतिसया	अड छच्चउ पणति सया
४२३	१०	४० ल। व २० ल। व १० ल। ६९	व ४० ल। व २० ल। व १० ल व ६९
व १० ल। ६९		व १० ल। व ६९।	
४४६	अन्तिम	जीवन भर के लिये छोड़कर	जीवन भर के लिये भक्ति पूर्वक छोड़कर
४५१	९	लोकान्त पर्यन्त	लोकान्त (मध्य लोक के अन्त) पर्यन्त
४५७	१७	आपु और तीर्थकर प्रकृति बंध के	आपु और जो जीव तीर्थकर होने वाले हैं उनके नाम

४६२	२४	पूर्व कोटि प्रमाण	पूर्व कोटि वर्ष प्रमाण
५४५	अन्त में	नोट लगाना है।	यह सौ धर्मेन्द्र की सभा का चित्र त्रिलोकसार से दे दिया गया है। अतः गाथा १९७४ में कही हुई लम्बाई के विलोप से इसका विरोध है।
५६४	१३	यह अन्तराल प्रमाण तीन हजार	यह अन्तराल तीन हजार
५७५	९	यह वेदी विपुल मार्गों एवं अट्टालियों।	यह वेदी विपुल मार्गों एवं अट्टालिकाओं
५९९	नक्षत्रों में	ऊपर दोनों तरफ	भूतारण्य भूतारण्य पढ़े।
६०१	६	नीचे दोनों तरफ	देवारण्य देवारण्य
६०३	८	देवारण्य और भद्रशाल	देवारण्य और भद्रशाल वन
६०४	३	+ २२००० x २	+ (२२००० x २
		विशेषार्थ— $(२२१२ \frac{७}{८} \times १६)$	$[(२२१२ \frac{७}{८} \times १६-)]$
			= ९०००० योजन
६०९	८	शुद्ध	शुद्ध
६१०	१३	पूर्व कोटि (१००००००) है।	पूर्व कोटि (७०५६०००००००००० x १०००००००) वर्ष है।
६१२	५	तोरण द्वार से गंगा नदी	तोरण द्वार से गंगा नदी
६१३	१०	अट्टालियों से	अट्टालिकाओं से
६२१	१६	उत्तर पक्व	उत्तर पुक्व
६४१	३	के पश्चात् नोट	इस सदृष्टिका अर्ध तालिका में निहित है।
६५५	९	(१०००)	(१०००) योजन
६६५	८	अट्टालियों	अट्टालिकाओं
६६७	१५	अट्टालियों	अट्टालिकाओं में
६९१	४	(पर्वतों के)	(पर्वत आदि के)
६९३	१९	= ५ लाख	= ५ लाख योजन
६९३	२०	= ९ लाख	= ९ लाख योजन
६९३	२१	= १३ लाख	= १३ लाख योजन
६९७	१०	$(६६१४ \frac{९२६}{२९२})$	$(६६१४ \frac{९२६}{२९२})$ योजन)
७१०	८	उत्पन्न हुई संख्या को	उत्पन्न हुई ३९८५०० संख्या को।

७१४	१८	$-४७७ \frac{६०}{२१२}$ योजन व० वृद्धि प्रमाण	$४७७ \frac{६०}{२१२}$ योजन वक्षार का वृद्धि प्रमाण
७२४	९	एक शैल चन्द्रनग नामक वक्षार पर्वत की	एक शैल और चन्द्रनग नामक वक्षार नाम वक्षार पर्वतो की
७२६	२२	(इच्छित क्षेत्रों) उनकी	उन इच्छित क्षेत्रों की
७२६	४	मध्य सूची में से	मध्यम सूची में से
७३८	१५	लाइन के पश्चात् यह लाईन बढ़ेगी।	$२१६७४६ \frac{४०}{२१२} - २७८९ \frac{९२}{२१२}$
७३९	१०	हिमवान पर्वत का क्षेत्रफल $-४००००० - २१०५ \frac{५}{१९}$	$= २१३९५६ \frac{९६०}{२१२}$ हिमवान पर्वत का क्षेत्रफल -४००००० योजन $\times २१०५ \frac{५}{१९}$ योजन
		$= ८४२१०५२६३ \frac{३}{१९}$ योजन	$= ८४२१०५६३ \frac{३}{१९}$ योजन
७३९	२३	$८४२१०५२६३ \frac{३}{१९}$	$८४२१०५२६३ \frac{९०}{१९}$ योजन
७४३	२१	अडतालीस दीप	अडतालीस कुमानुष द्वीप
७४५	३	वत्स्य मुख	मत्स्य मुख
७४६	८	काल समुद्र	कालोदक समुद्र
७४९	६	काल समुद्र	कालोदक समुद्र
७५३	१०	जो सख्या उत्पन्न हो	जो (१४२३०२४९) संख्या उत्पन्न हो।
७५३	१२	१३३९७९९९ वर्ग योजन	१३३९७९९९ योजन $\frac{९९२}{२१२}$
७७०	१६	जो सख्या उत्पन्न हो	जो $३८४७४८ \frac{४०}{२१२}$ संख्या उत्पन्न हो
७७९	अन्तिम	$२०२२०८४ \frac{६४}{१८४}$	$२०२२०८४ \frac{६४}{२१२}$
७८०	२	तहेव चुलसी दी	तहेव अडवीसा
७८७	अन्तिम	$१४६१०१३ \frac{२८}{२१२} + २३८ \frac{९३६}{२१२}$	$१४६१०१३ \frac{२८}{२१२} - २३८ \frac{९३६}{२१२}$
७९६	२०	योजन।	योजन १४ पर्वतो से अवरुद्ध क्षेत्रफल।



जबिबसह-आइरिय-विरइवा

तिलोयपण्णत्ती

चउत्थो महाहियारो

मङ्गलाचरण एव प्रतिज्ञा—

इवं उवरि माणुस-लोय-सरूबं वण्णयामि—

लोयालोय-पयासं, पउमप्पह-जिणवरं णमंसिता' ।

माणुस-जग-पण्णत्ति, बोच्छामो आणुपुम्बीए ॥ १ ॥

इससे आगे मनुष्यलोकके स्वरूपका वर्णन करता है—

अर्थ—लोकालोकको प्रकाशित करनेवाले पद्यप्रथम जितेन्द्रको नमस्कार कर अनुक्रममे मनुष्यलोक-प्रज्ञप्ति कहता है ॥ १ ॥

सोलह अधिकांगके नाम—

णिह्हेसस्स सरूबं, जंबूदीवोत्ति लवणजलही य ।

धावइसंडो दीओ, कालोद-समुद्द-पोक्खरद्धाई ॥ २ ॥

तेसु-ट्टिव-मणुवाणं, मेवा संखा य थोव-बहुअत्तं ।

'गुणठाण-प्पहुदीणं, संकमणं विविह-मेय-जुदं ॥ ३ ॥

आऊ-बंधण-भावं, जोणि-पमाणं सुहं च दुक्खं च ।

सम्मत्त-गहण-हेदू, णिब्बुवि-गमणाण परिमाणं ॥ ४ ॥

एवं सोलस संखे, अहियारे एत्थ' वत्तइस्सामो ।

जिण-मुह-कमल-बिणिग्गय-णर-जग-पण्णत्ति-णामाए ॥ ५ ॥

१. व. णमंसिता, व. क. णमंसितो । २. द. पुण्टुएण । ३. व. वत्तइस्सामो, क. वत्तइस्सामो ।

अर्थ :—निर्देशका स्वरूप, जम्बूद्वीप, लवणसमुद्र, धातकी खण्डद्वीप, कालोदसमुद्र, पुष्करार्द्ध-द्वीप, इन द्वीपोंमें स्थित मनुष्योंके भेद, सख्या, अल्पबहुत्व, गुरास्थानादिकका विविध भेदोंसे युक्त संक्रमण, आयु-बन्धनके निमित्तभूत परिणाम, योनि-प्रमाण, सुख, दुःख, सम्यक्त्व-ग्रहणके कारण और मोक्ष जानेवालाका प्रमाण । इसप्रकार जिनेन्द्र भगवान्के मुखरूपी कमलसे निकले हुए नर-जग-प्रसप्ति नामक इस चतुर्थ महाधिकारमे इन सोलह अधिकारों का वर्णन करूँगा ॥ २-५ ॥

मनुष्यलोककी स्थिति एवं प्रमाण—

तस-णाली-बहुमज्ज्हे, चित्ताअ खिवीअ उवरिमे भागे ।

अइवट्टो मणुव-जगो, 'जोयण-पणदाल-लक्ख-^३विकखंभो ॥६॥

। जो ४५ ल ।

अर्थ —चित्रा पृथिवीके ऊपर असनालीके बहुमध्यभागमे पंतालीस लाख (४५०००००) योजन प्रमाण विस्तारवाला अतिगोल मनुष्यलोक है ॥ ६ ॥

मध्यलोकका बाह्य एवं परिधि—

जग-मज्ज्भादो उवर्णि, तव्वहलं जोयणाणि इगि-लक्खं ।

णव चट्टु-दुग-ख-त्तिय-दुग-चउरेषकेक्क-कमेण तत्परिहो ॥७॥

। १ ल । १४२३०२४६ ।

अर्थ :—लोकके मध्यभागसे ऊपर उस मनुष्यलोकका बाह्य एक लाख (१०००००) योजन और परिधि क्रमशः नौ, चार, दो, शून्य, तीन, दो, चार और एक अक (१४२३०२४६ योजन) प्रमाण है ॥ ७ ॥

नोट - परिधि निकालनेका नियम इसी अध्याय की गाथा ६ मे दिया गया है ।

मनुष्यलोकका क्षेत्रफल—

सुष्ण-णअ-गयण-पण-दुग-एक्क-ख-त्तिय-सुष्ण-णव-णहा-सुष्णं ।

छक्केक्क-जोयणा ^३चिय, अक-कमे मणुव-लोय-खेत्तफलं ॥८॥

। १६००६०३०१२५००० ।

१. ब. जोयणाण । २. द ब क. विकवमा । ३. क. उ. विउ ।

जम्बूद्वीपकी अवस्थिति एव प्रमाण—

वायुस-अथ-अनुपजम्बे, विवसादो होवि जंबुद्वीओ स्ति ।
एवक-ज्जोयण-सपत्तं, विवसंभ-ज्जुदो सरिस-वट्टो ॥ ११ ॥

अर्थ :—अनुपजम्बेके बहुमध्यभागमे एक लाख योजन विस्तारसे युक्त, वृत्तके सदृश और विरूपत जम्बूद्वीप है ॥ ११ ॥

जम्बूद्वीपके वर्णनमे सोलह अन्तराधिकारोका निर्देश--

जगदी-विष्णासाइं, भरह-खिदी तम्मि कालभेदं च ।
हिमगिरि-हेमवदा^१ महहिमव हरि-वरिस-णिसहदी ॥१२॥
विजओ विदेह-णामो^२, नीलगिरी रम्म-वरिस-रुम्मिगिरी ।
हेरणवदो विजओ, सिहरी एरावदो स्ति वरिसो य ॥१३॥
एवं सोलस-भेदा^३, जंबूद्वीवम्मि अंतरहियारा^४ ।
एण्ह^५ ताण सरूवं, वोच्छामो आणुपुब्बीए ॥१४॥

अर्थ —जम्बूद्वीपके वर्णनमे जगती (वेदिका), विन्यास, भरतक्षेत्र, उम (भरत) क्षेत्रमे होनेवाला कालभेद, हिमवान् पर्वत, हैमवतक्षेत्र, महाहिमवान् पर्वत, हरिक्षेत्र, निपधपर्वत, विदेहक्षेत्र, नीलपर्वत, रम्यकक्षेत्र, रुक्मिपर्वत, हैरण्यवतक्षेत्र, शिखरीपर्वत और ऐरावतक्षेत्र इसप्रकार सोलह अन्तराधिकार है । अब उनका स्वरूप अनुक्रममे कहता हूँ ॥ १२-१४ ॥

जगतीकी ऊंचाई एव उसका आकार—

वेदेदि^६ तस्स जगदी, अट्टं चिय जोयणाणि उत्तुंगा ।
दीव^७ तम्मि णियंतं, सरिसं होदूण वलय-णिहा ॥ १५ ॥

जो ८ ।

अर्थ :—उसकी जगती आठ योजन ऊँची है, जो मणिबन्धके समान उस द्वीपको, वलय अर्थात् कडेके सदृश होकर वेष्टित करती है ॥ १५ ॥

१. द. व. हिमवदा । २. द. णामे । ३. द. व. क. भेदो । ४. द. व. क. अंतरहियारो । ५. द. वण्ण, व. क. वण्ह । ६. द. व. वेदेदि, क. उ. वेदे पि । ७. द. दीवर्तमणियवत्, व. क. दीव त मणियत् ।

जगतीका विस्तार—

मूलै बारस-मउळ्हे, अट्टु च्चिय ओवजाचि जिह्ण्डा ।
सिहरे चत्तारि कुळं, जगती-ह'वस्त' वरिज्जणं ॥१६॥

१२ । ८ । ४ ।

अर्थ —जगतीके विस्तारका प्रमाण स्पष्टरूपसे मूलमे बारह, मध्यमें आठ और शिखरपर चार योजन कहा गया है ॥ १६ ॥

जगतीकी नीव—

दो कोसा अवगाढा, तेलियमेत्ता हवेदि वज्जमयी^१ ।
मउळ्हे बहुरयणमयी^२, सिहरे बेरुलिय-वरिज्जणा ॥१७॥

कोस २ ।

अर्थ —मध्यमे बहुरत्नोसे निर्मित और शिखरपर वैडूर्यमणियोसे परिपूर्ण, वज्रमय जगतीकी गहराई (नीव) दो कोस है ॥ १७ ॥

जगतीके मूलमे स्थित गुफाओका वर्णन—

तीए मूल-पएसे, पुञ्जावरदो व सस-सस गुहा ।
वर-^३ तोरणाहिराणा, अजावि-ज्जिह्ण्डा बिचिस्सवरा ॥१८॥

अर्थ —जगतीके मूल प्रदेशमें पूर्व-पश्चिमकी ओर जो सात-सात गुफाएँ हैं, वे उत्कृष्ट तोरणोसे रमणीक, अनादि-निघन एव अत्यन्त अद्भुत है ॥१८॥

जम्बूद्वीपकी जगती पर स्थित वेदिकाका विस्तार—

जगती-उबरिम-भागे, बहु-मउळ्हे कणय-वेदिया विज्जा ।
बे कोसा उत्तुंगा, बिस्थिज्जणा पंच-सय-वंडा ॥१९॥

को २ । दड ५०० ।

अर्थ :—जगतीके उपरिम भागके ठीक मध्यमे दिव्य स्वर्णमय वेदिका है । यह दो कोस ऊंची और पांचसौ (५००) धनुष प्रमाण चौडी है ॥१९॥

१. मवस्त । २. व. व. क. व. वज्जमयी । ३. व. व. क. उ. ज. बहुरयणमयी । ४. व. क. तोरणाइ, व. तोरणाव, व. तोरणाह ।

जगतोका अभ्यन्तर एव बाह्यादि विस्तार—

जगदी-उपरिम-हं^१, वेदी-हं^२ं खु लोधि-अ^३-पं^४दी ।

जं लद्धभैपक-पासे, तं विवर्खंभस्स परिभाषं ॥२०॥

अर्थ :—जगतीके उपरिम विस्तारमेसे वेदीके विस्तारको घटाकर शेषको आधा करनेपर जो प्राप्त होता है वह वेदीके एक पार्श्वभागमे जगतीके विस्तारका प्रमाण है ॥२०॥

विशेषार्थ .—गाथा १६ मे जगतीका उपरिम विस्तार ४ योजन (३२००० धनुष) कहा गया है । इसमेसे वेदीका विस्तार (५०० धनुष) घटाकर शेषको आधा करनेपर ($32000 \div 2 = 16000$) = १५७५० धनुष वेदीके एक पार्श्वभागमे जगतीका विस्तार है ।

पण्णरस-सहस्साणि, सत्त-सयाइं^१ धणूणि पण्णासा ।

अब्भंतर-विवर्खंभो, बाहिर-वासो वि तम्भेत्तो^३ ॥२१॥

द १५७५० ।

अर्थ :—जगतीका अभ्यन्तर विस्तार पन्द्रह हजार सानसौ पचास (१५७५०) धनुष है और उसका बाह्य विस्तार भी इतना ही है ॥२१॥

वेदीके दोनो पार्श्वभागमे स्थित वन-वापियोका विस्तारादि—

वेदी-दो-पासेसुं^१, उववण-संडा^२ हवंति रमणिज्जा ।

वर-वावीहिं जुत्ता, विचित्त-मणि^३-णियर-परिपुण्णा ॥२२॥

अर्थ :—वेदीके दोनो पार्श्वभागमे श्रेष्ठ वापियोसे युक्त और अद्भुत मणियोंके खजानोमे परिपूर्ण रमणीक उपवन खण्ड हैं ॥२२॥

जेट्टा दो-सय-वंडा^१, विवर्खंभ-जुदा हवेदि मज्झिमया ।

पण्णासब्भहिय-सयं^२, अहण्ण-वावी वि सयमेवकं ॥२३॥

द २०० । १५० । १०० ।

१ द. व. क. ज क दी । २ द व क. ज. उ. दहवणुणि । ३. द. व. ज. वासोघितमेत्ता ।
४. व. संदी, व. सुदी, ज संदी । ५. द. व. क. ज. उ. मुणिमार । ६. द. व. क. ज. उ. वंदो ।
७ ज. जयण्णा ।

अर्थ :—उत्कृष्ट बावडियोका दो सौ (२००) धनुष, मध्यमका एकसौ पचास (१५०) धनुष और जघन्यका एकसौ (१००) धनुष प्रमाण विस्तार है ॥२३॥

तिविहाओ^१ वावीओ, णिय-रुं-दसंस-मेत्तमवगाढा ।

कल्हार-कमल-कुवलय-^२कुमुदामोदेहि परिपुण्णा ॥२४॥

२० । १५^३ । १० ।

अर्थ :—कैरव (सफेद कमल), कमल, नीलकमल एव कुमुदोकी सुगन्धसे परिपूर्ण ये तीनों प्रकारकी बावडियाँ अपने-अपने विस्तारके दसवे भाग (२० धनुष, १५ धनुष और १० धनुष) प्रमाण गहरी हैं ॥२४॥

वनोमे स्थित व्यन्तर देवोके नगर—

पायार-“परिउत्ताइ”, वर-गोउर-दार-तोरणाइं पि ।

अब्भंतरम्मि भागे, वैत्तर-णयराणि-रम्माणि ॥२५॥

अर्थ :—वेदीके अभ्यन्तर भागमे प्राकारसे वेषित एव उत्तम गोपुरद्वारो तथा तोरणोसे संयुक्त व्यन्तरदेवोके रमणीक नगर है ॥ २५ ॥

बेसंधर-देवाणं, तस्सि णयराणि होंति रम्माणि ।

अब्भंतरम्मि भागे, महोरगाणं च वैत्ति परे ॥२६॥

पाठान्तरम् ।

अर्थ — वेदीके अभ्यन्तर भागमे बेलन्धर देवोके और उससे आगे महोरग देवोके रमणीक नगर है ॥ २६ ॥

पाठान्तर ।

व्यन्तर-नगरोमे स्थित प्रासाद—

णयरेसुं रमणिज्जा, पासादा होंति विविह-विण्णासा ।

अब्भंतर-^१वैत्तरया, णाणा-वर-रयण-णियरमया ॥२७॥

दिप्पंत-रयण-बीवा, समंतदो विविह-धूव-घड-जुत्ता ।

वज्जमय-वर-कवाडा, वेदी-गोउर-दुवार-संजुत्ता ॥२८॥

अर्थ :—नगरोमे अभ्यन्तर भागमे चैत्यवृक्षो सहित, अनेक उत्तमोत्तम रत्नसमूहोसे निर्मित, चारो ओर प्रदीप्त रत्नदीपकोवाले, विविध धूपघटोमे युक्त, वज्रमय श्रेष्ठ कपाटोवाले, वेदी एव गोपुर-द्वारो सहित विविध रचनाओवाले रमणीक प्रासाद है ॥ २७-२८ ॥

१. क उ. तिविहाइ । २. क उ. वावीउ । ३. क. ज. उ. कुमुदो । ४. व २५ ।

५. व. क. ज. परिउत्ताइ । ६. द व. क. अब्भतर, ज अब्भतर । ७. द. व. क. ज. णुण ।

लघु प्रासादोंका विस्तारादि—

पणहत्तरि चावार्णि^१, उत्तुंगा सय-धणूणि बीह-बुवा ।
पण्णास-बंड-इंदा, होंति जहण्णम्मि पासावा ॥२६॥

। दड ७५ । १०० । ५० ।

अर्थ.—ये प्रासाद लघु रूपसे पचहत्तर (७५) धनुष ऊंचे, सो (१००) धनुष लम्बे और पचास (५०) धनुष प्रमाण विस्तारवाले हैं ॥ २६ ॥

इन प्रामादोंके द्वारोंका विस्तारादिक—

पासाव-दुवारेसुं, बारस चावार्णि होंति उच्छेहो ।
पत्तेक्कं छ्ख्वासो, अबगाढं तन्निह चत्तारि ॥३०॥

दड १२ । ६ । ४ ।

अर्थ—इन प्रासादोंके द्वारोंमें प्रत्येककी ऊंचाई बारह (१२) धनुष, विस्तार छह (६) धनुष और अबगाढ (मोटाई) चार (४) धनुष प्रमाण है ॥ ३० ॥

पणवीसं दोण्णि सया, उच्छेहो होदि जेट्टु-पासादे ।
दोहं ति-सय-धणूणि^२, विहस्स सद्धं च^३ विक्खंभं ॥३१॥

दड २२५ । ३०० । १५० ।

अर्थ—ज्येष्ठ प्रासादोंमें प्रत्येककी ऊंचाई दो सौ पच्चीस (२२५) धनुष, लम्बाई तीन सौ (३००) धनुष और विस्तार लम्बाईमें आधा अर्थात् एक सौ पचास (१५०) धनुष प्रमाण है ॥३१॥

ज्येष्ठ प्रासादोंके द्वारोंका विस्तारादि—

ताण दुवारुच्छेहो^४, वंडा छत्तीस^५ होदि पत्तेक्कं ।
अट्टारस विक्खंभो, बारस णियमेण अबगाढं ॥३२॥

द ३६ । १८ । १२ ।

अर्थ—ज्येष्ठ प्रासादोंके द्वारोंमें प्रत्येक द्वारकी ऊंचाई नियमसे छत्तीस (३६) धनुष, विष्कम्भ अठारह (१८) धनुष और अबगाढ बारह (१२) धनुष प्रमाण है ॥ ३२ ॥

मध्यम प्रासादोका विस्तारादि—

मञ्जिम-पासादाणं, हवेदि उबओ दिवड्ड-सय-बंडा ।
दोण्णि सया बोहत्तं, परोक्कं एक्क-सय-बंडं ॥३३॥

दड १५० । २०० । १०० ।

अर्थः—मध्यम प्रासादोमे प्रत्येककी ऊँचाई डेढसौ (१५०) धनुष, लम्बाई दोसौ (२००) धनुष और चौडाई एक सौ (१००) धनुष प्रमाण है ॥ ३३ ॥

मध्यम प्रासादोके द्वारोका विस्तारादि—

बउबीसं चावाणि, ताण बुघारेसु होदि उच्छेहो ।
बारस भट्ट कमेणं, बंडा वित्थार-अवगाढा ॥३४॥

दड २४ । १२ । ८ ।

अर्थः—इन प्रासादोमे प्रत्येक द्वारकी ऊँचाई चौबीस धनुष, विस्तार बारह धनुष और अवगाढ़ आठ धनुष प्रमाण है ॥ ३४ ॥

व्यन्तर नगरोका विशेष वर्णन—

सामण-चेत्त-कदली, गढभ-लदा-णाड-आसण-गिहाओ ।
गेहा होंति विच्चिता, वेंतर-णयरेसु रम्मयरा ॥३५॥

अर्थः—व्यन्तरनगरोमे सामान्यगृह, चैत्यगृह, कदलीगृह, गर्भगृह, लतागृह, नाटकगृह और आसनगृह, ये नानाप्रकारके रम्य गृह होते हैं ॥ ३५ ॥

मेट्टण-मडण-ओलग-बंदण-अभिसेय-णच्चणाणं पि ।
णाणाविह-सालाओ वर-रयण-विणिम्मिदा होंति ॥३६॥

अर्थः—(उन नगरोमे) उत्तम रत्नोंसे निर्मित मंथुनशाला, मण्डनशाला, ओलगशाला, वन्दनशाला, अभिषेकशाला और नृत्यशाला, इसप्रकार नानाप्रकारकी शालाएँ होती हैं ॥ ३६ ॥

प्रासादोमे अवस्थित आसन—

करि-हरि-सुक-मोरानं, मयर-बालाखं गरुड-हंसाणं ।

सारिच्छाईं तेसुं, रम्भेसुं आसणाणि चेट्टते ॥३७॥

अर्थः—उन रमणीय प्रासादोमे हाथी, सिंह, शुक, मयूर, मगर, व्याल, गरुड़ और हंसके सहस्र (आकारवाले) आसन रखे हुए हैं ॥ ३७ ॥

प्रासाद स्थित शय्याएँ—

वर-रयण-विरइवाणि, विचित्र-सयणाणि मउड-पासाइं ।

रेहंति मंदिरेसुं, दोपास-ठिदोवधानाणि ॥३८॥

अर्थः—महलोमे उत्तम रत्नोसे निर्मित, मृदुल स्पशंवाली और दोनों पार्श्वभागोमें तकियोसे युक्त विचित्र शय्याएँ शोभायमान है ॥ ३८ ॥

व्यन्तर देवोका स्वरूप—

कणय ठव 'गिरुवलेवा, गिम्मल-कंती सुगंघि-गिस्सासा ।

वर-विबिह-भूसणधरा, रवि-मंडल-सरिस-^३मउड-सिरा ॥३९॥

रोग-जरा-परिहीणा, पत्तेक्कं दस-घणूणि उत्तुंगा ।

वेंतर-देवा तेसुं, सुहेण फीडंति सच्छंदा ॥४०॥

अर्थः—स्वर्ण सहस्र निर्लेप, निर्मल कान्तिके धारक, सुगन्धमय निश्वाससे युक्त, उत्तमोत्तम विविध आभूषणोको धारण करनेवाले, सूर्यमण्डलके समान श्रेष्ठ मुकुट धारण करनेवाले, रोग एव जरासे रहित और प्रत्येक दस धनुष ऊँचे व्यन्तर देव उन नगरोमे सुखपूर्वक स्वच्छन्द क्रीडा करते हैं ॥ ३९-४० ॥

व्यन्तर नगर अकृत्रिम है—

^३जिणमंदिर-जुत्ताइं, विचित्र-विण्णास-भवण-पुण्णाइं ।

सवदं अकट्टिमाइं, वेंतर-णयराणि रेहंति ॥४१॥

अर्थः—जिनमन्दिरोंसे सयुक्त और विचित्र रचनावाले भवनोसे परिपूर्ण वे अकृत्रिम व्यन्तर-नगर सदैव शोभायमान रहते हैं ॥ ४१ ॥

१. द. व. क. ज. गिरुवलेहो, उ. गिरुवलेहो ।

२. द. व. क. मंडसिरा, ज. मडलसिरा ।

३. द. व. क. जोमंदर, ज. जीमदप ।

जम्बूद्वीपके विजयादिक चार द्वारोंका निरूपण—

विजयंत-वेजयंतं, 'जयंत-अपराजयं च णामेहि ।

चत्तारि दुबाराइं, जंबूदीवे चउ-विसासुं ॥४२॥

अर्थ:—जम्बूद्वीपकी चारो दिशाओंमें विजयन्त (विजय), वेजयन्त, जयन्त और अपरा-जित नामवाले चार द्वार हैं ॥ ४२ ॥

पुव्व-विसाए विजयं, दक्षिण-श्रासाए बइजयंतम्मि ।

अवर-विसाए जयंतं अवराजिदमुत्तरासाए ॥४३॥

अर्थ:—विजयद्वार पूर्व दिशामे, वेजयन्त दक्षिण दिशामे, जयन्त पश्चिम दिशामे और अपराजित द्वार उत्तर दिशामे है ॥ ४३ ॥

एदाणं दाराणं, पत्तोक्कं अट्ट जौयणा उदओ ।

'उच्छेहमट्ट' रुदं, होदि पवेसो वि वास-समो ॥४४॥

= 1 4 1 4 1

अर्थ:—इन द्वारोंमेंसे प्रत्येक द्वारकी ऊंचाई आठ योजन, विस्तार ऊंचाईमें आधा (चार योजन) और प्रवेग भी विस्तारके सदृश चार योजन प्रमाण है ॥ ४४ ॥

वर-वज्ज-कवाड-जुदा, णाणाविह-रयण-दाम-रमणिज्जा ।

'णिच्छं रक्षिज्जंते, वेंतर-देवेहि चउदारा ॥४५॥

अर्थ:—वज्रमय उत्तम कपाटोंसे सयुक्त और नानाप्रकारके रत्नोंकी मानाओमें रमणीय ये चारों द्वार व्यन्तर देवोंमें मदा रक्षित रहते हैं ॥ ४५ ॥

द्वारों पर स्थित प्रामादोंका निरूपण—

दारोवरिमपएसे, पत्तोक्कं होंति दार-पासादा ।

सत्तारह-भूमि-जुदा, 'णाणावरमत्तवारणया ॥४६॥

द्विप्यंत-रयण-दीवा, विचित्त-वर-सालभंजि-अस्थंभा ।

'धुव्वंत-धय-वडाया, विविहालेक्खेहि' रमणिज्जा ॥४७॥

१. द. ज. जयं च अपराजय च, क. उ. जयंतं च अपराजय च । २. द. व. उच्छेहमट्ट, क. ज. उ. उच्छेहमट्ट । ३. उ. सिम्भ । ४. द. वरवत्त, व. वरवत्त । ५. द. क. ज. य. धट्ट भा, व. उ. धट्ट हा । ६. द. व. क. ज. उ. दुग्गत । ७. य. ज. भेदेहि ।

१लंबंत-रयण-भाणा, समंतदोविबिह-धूब-घड-जुता ।

२वेबच्छाराहि ३भरिदा, पट्टसुध-पहुवि-कय-सोहा ॥४८॥

अर्थ :—प्रत्येक द्वारके उपरिम भागमे सत्तरह भूमियोसे सयुक्त, अनेकानेक उत्तम बरामदोसे सुशोभित, प्रदीप्त रत्नदीपकोसे युक्त, नानाप्रकारकी उत्तम पुतलिकाओसे अकित स्तम्भों-वाले लहलहाती ध्वजा-पताकाओसे समन्वित, विविध आलेखोसे रमणीय, लटकती हुई रत्नमालाओसे संयुक्त, सब ओर विविध घूप घटोसे युक्त, देवो एव अम्पराओ से । परिपूर्ण और पट्टाशुक (रेशमी-वस्त्र) आदिसे शोभायमान द्वार प्रासाद है ॥ ४६-४८ ॥

उच्छेह-वास-पहुविसु, दारभववणाण जेत्तिया संखा ।

तप्परिमाण-परुवण-उवएसो संपहि पणट्टो ॥४९॥

अर्थ — द्वार-भवनोकी ऊंचाई तथा विस्तार आदिका जितना प्रमाण है, उस प्रमाणके प्ररूपणका उपदेश इस समय नष्ट हो चुका है ॥ ४९ ॥

गोपुरद्वारो पर जिनबिम्ब—

सोहासण-छत्तत्तय-भामण्डल-चामरादि-रमणिज्जा ।

रयणमया जिण-पडिमा, गोउर-दारसु रेहंति ॥५०॥

अर्थ — गोपुर-द्वारोपर सिंहासन, तीन छत्र, भामण्डल और चामरादिसे रमणीय रत्नमय जिन प्रतिमाएँ शोभायमान है ॥ ५० ॥

जम्बूद्वीपकी सूक्ष्म परिधिका प्रमाण—

तस्सि दीवे परिही, लक्खार्णि तिण्णि सोलस-सहस्सा ।

जोयण-सयाणि वोण्णि य, सत्तावीसादि-रित्तणि ॥५१॥

जो ३१६२२७ ।

पावूणं जोयणयं, अट्टाबीसुत्तरं सयं वंडा ।

किंकू-हत्थो णत्थि ह, हवेदि एक्का बिहत्थो य ॥५२॥

जो ३ । द १२८ । ० । ० । १ ।

१. द. अम्भतरयणमाणसमंतादो, ब. क. ज. अम्भतरयणमाणसमंतादो, य अम्भतरयासाणु समतादो विबिहवपुडजुत्तो । २. द. ब. क. ज. य दोबच्छाराहि । ३. द. ब. क. ज. भरिदा । ४. द. य घोस, ब. क. घस । ५. द. एत्ति हवेदीय कीविहदीह । क. ब. एत्थि हवेदी एको विहदीह । ज. एत्थि हवेदी एको विहद्दिह ।

पावट्टाणे सुण्णं, अंगुलमेक्कं तथा जवा पंच ।
एक्को जूबो 'एक्का लिक्खं कम्मक्खिस्वीण छब्बालं ॥५३॥

पा० । अं १ । ज ५ । जू १ । लि १ । क वा ६

सुण्णं जहण्ण-भोगक्खिविए मज्झिक्खल्ल-भोगभूमोए ।
सत्त च्चिय बालग्गा, पंचुत्तम-भोग-खोणीए ॥५४॥

० । ७ । ५ ।

एक्को तह रहरेणू, तसरेणू तिण्णि णत्थि तुडरेणू ।
दो^३वि य सण्णासण्णा, ओसण्णासण्णिया^४ बि तिण्णि पुढं ॥५५॥

१ । ३ । ० । २ । ३ ।

परमाणू य "अणंताणंता संखा हवेदि णियमेण ।
बोच्छामि तप्पमाण, 'णिस्संददि दिट्ठिवादावो ॥५६॥

अर्थ जम्बूद्वीपकी (सूक्ष्म) परिधि तीनलाख मोलह हजार दोसौ सनार्द्धम योजन, पादून एक योजन (तीन कोस), एकसौ अट्टाईस धनुष, किष्क और हाथके स्थानमे शून्य, एक वितस्ति, पादके स्थानमे शून्य, एक अंगुल, पाच जी, एक यूक, एक लीख, कर्मभूमिके छह बाल, जघन्य भोगभूमिके बालोके स्थानमे शून्य, मध्यम भोगभूमिके सात बालाग्र, उत्तम भोगभूमिके पांच बालाग्र, एक रथरेणु, तीन त्रसरेणु, त्रुटरेणुके स्थानमे शून्य, दो सत्रासत्र, तीन अवमत्रासत्र और अनन्तानन्त परमाणु प्रमाण है। दृष्टिवाद अङ्गसे उमका जितना प्रमाण निकलता है, वह अब कहता हूँ ॥ ५१-५६ ॥

विशेषार्थ — जम्बूद्वीपका व्यास एक लाख योजन है। इसी अधिकारकी गाथा ६ के नियमानुसार $\sqrt{१ \text{ लाख} \times १ \text{ लाख} \times १०} =$ परिधि। अर्थात् $\sqrt{१००००० \times १००००० \times १०} = \sqrt{१००००००००००} =$ परिधि। इसका वर्गमूल निकालनेपर ३१६२२७ योजन प्राप्त हुए और ३३३३३३ यो० अवशेष रहे। इनके कोस एवं धनुष आदि बनानेके लिए अंशमे क्रमशः कोस तथा धनुष आदिका गुणा कर हरका भाग देते जाना चाहिए। यथा— $\sqrt{१००००००००००} =$

१. क. ज. य. उ. एक्को । २. द. व. कहा । ३. ब. क. ज. य. त्तिय । ४. क. ज. य. उ. सण्णिया । ५. क. ज. उ. अणता । ६. ब. क. ज. णिस्ससिद ।

$$\begin{array}{l}
 ३१६२२७ \text{ योजन।} \frac{४८४४७१ \times (४ \text{ कोस})}{६३२४५४} = ३ \text{ कोस।} \frac{४०५२२ \times (२००० \text{ धनु})}{६३२४५४} = १२८ \text{ धनुष} \\
 \frac{१८९९३६ \times (८ \text{ सो})}{६३२४५४} = २ \text{ सन्नसन्न और} \frac{२५४५८० \times (८ \text{ अव०})}{६३२४५४} = ३ \text{ अवसन्नासन्न}
 \end{array}$$

अर्थात्

३१६२२७ योजन	१ अगुल	१ रधरेणु
३ कोस	५ लौ	३ त्रसरेणु
१२८ धनुष	१ जू	० त्रुटरेणु
० किष्कू	१ लील	२ सन्नासन्न
० हाथ	६ कर्मभूमि के बाल	२ अवसन्नासन्न
१ वितस्ति	० जघन्य भोगभूमि के बाल	३ अवसन्नासन्न और २३२१३/१०५४०९ शेष प्रमाण है। यह शेष अश अनन्तानन्त परमाणुओं के स्थानीय है।
० पाद	७ मध्यम " " " "	
	५ उत्तम " " " "	

तेवीस सहस्साणि, बेणिणं सयाणि च तेरस असा ।

हारो एकक लक्ख, पच्च सहस्साणि चउ सयाणि णव ।। ५७ ।।

२३२१३ । ख ख
१०५४०९

अर्थ तेईस हजार दसो तेरह अंश और एक लाख पाँच हजार चारसौ नौ हार है ।। ५७ ।।
नोट - सदृष्टिका ख ख अनन्तानन्तका सूचक है ।

उपर्युक्त अशका गुणकार-

एदस्स पुढ, गुणगारो होदि तस्स परिमाण ।

जाण अणताणत्त, परिभास-कमेण उप्पण्ण ।। ५८ ।।

अर्थ - इस अशका पृथक् गुणकार होता है । उसका परिमाण परिभाषा क्रम से उत्पन्न अनन्तानन्त (सख्या प्रमाण) जानो ।। ५८ ।।

विशेषार्थ : जम्बूद्वीप की सूक्ष्मपरिधिका प्रमाण योजन, कोस, धनुष आदि में निकाल लेने के बाद (गाथा ५७ के अनुसार) $\frac{२३२१३}{१०५४०९}$ अश अवशेष बचते हैं । इनका गुणकार अनन्तानन्त है । अर्थात् इस $\frac{२३२१३}{१०५४०९}$ अवशिष्ट अश में अनन्तानन्त परमाणुओं का गुणा करके पश्चात् परिभाषा क्रम के अनुसार योजन, कोस, धनुष, रिक्कू एवं हाथ आदि से लेकर अवसन्नासन्न पर्यन्त प्रमाण निकाल

लेने के बाद अवशिष्ट ($\frac{3}{4} \times \frac{3}{4} \times \frac{3}{4}$) राशि अनन्तानन्त परमाणुओं के स्थानीय मानी गई है। यदि मूल राशि अनन्त नन्त परमाणु स्वरूप न मानी जाय तो अवशिष्ट अंश को अनन्तानन्त स्वरूप नहीं कहा जा सकता। इसीलिए गाथा में "एदस्मस्म पुद् गुणगारा . अणनाणत' कहा गया है।

जम्बूद्वीपके क्षेत्रफलका प्रमाण—

अंबर-पंचेक-चऊ, णव-छुप्पण-सुण्ण-णवय-सत्तो व ।

अंक-कमे जोयणया, जंबूदीवस्स खेत्तफलं ॥५६॥

। ७६०५६६४४५० ।

अर्थ —शून्य, पांच, एक, चार, नौ, छह, पांच शून्य, नौ और मान, अंकोंको क्रममें रखनेपर जितनी मर्यादा हो उनमें योजन प्रमाण जम्बूद्वीपका क्षेत्रफल निकलता है ॥५६॥

विशेषार्थ .— 'विक्रम-चउत्थभागपहदा सा होदि खेत्तफल' गा० ६ अधिकार ४। अर्थात् परिधिको व्यासके चतुर्थांशमें गुणा करने पर वृत्तक्षत्रका क्षेत्रफल निकल आता है।

जम्बूद्वीपका व्यास १ लाख योजन और परिधि $3162277660168379331772 \times 100000 = 3162277660168379331772000$ योजन अर्थात् $3162277660168379331772000$ योजन जम्बूद्वीपका क्षेत्रफल हुआ। इस गाथामें केवल $3162277660168379331772000$ योजन दगयि गये है जेप योजनों के कोस एव धनुष आदि आगे दगयि जा रहे है।

एकको कोसो वंडा, सहस्समेकं हवेदि पंच-सया ।

तेवण्णाए सहिदा, किक्क-हत्थेसु' सुण्णाई ॥६०॥

को १ । द० १५५३ । ० । ० ।

एकका होदि विहत्थो, सुण्णं^२ पादम्मि अंगुलं एककं ।

अव-छक्क-त्तिज जूवा, लिक्खाओ तिण्णि णावव्वा ॥६१॥

१ । ० । १ । ६ । ३ । ३ ॥

अर्थ :—अडतालीस हजार चार सौ पचपन अश और एक लाख पाँच हजार चारसौ नो हार है ॥६५॥

विशेषार्थ :—जम्बूद्वीपकी परिधिको व्यास में गुणित कर योजन, कोस, धनुष सन्नासन्न और अबसन्नामन्न पर्यन्त क्षेत्रफल निकाल लेनेके बाद ३६६६६६ गणि अवशेष रहती हे जो अनन्तानन्त परमाणुओके स्थानीय है ।

उपयुक्त अणका गुणकार—

एदस्संसस्स पुढ, गुणगारो होदि तस्म परिमाणं ।

एत्थ अणंताणंतं, परिभास-कमेण उत्पण्णं ॥६६॥

अर्थ —इस अणका पृथक् गुणकार होना है । उमका परिमाण परिभागा क्रमसे उत्पन्न यह अनन्तानन्त प्रमाण है ॥६६॥

विशेषार्थ :—जम्बूद्वीपके मूठम क्षेत्रफलका प्रमाण योजन, कोस, धनुष आदि में निकाल लेने के बाद (गा० ६४ के अनुसार) ३६६६६६ अश अवशिष्ट रहते है । इनका गुणकार अनन्तानन्त है । (जेप विशेषार्थ गाथा ५८ के विशेषार्थ मट्टज ही हे ।)

विजयादिक द्वारोका अन्तर प्रमाण—

सोलस-जोयण-हीणे, जंबूदीवस्स परिहि-मज्झम्मि ।

दारंतर-परिमाणं, चउ-भजिदे होदि जं लद्धं ॥६७॥

अर्थ :—जम्बूद्वीपकी परिधिके प्रमाणमेसे सोलह योजन कम करके शेषमे चारका भाग देनेपर जो लब्ध आवे वह द्वारोंके अन्तरालका प्रमाण है ॥६७॥

जगदी-बाहिर-भागे^१, दाराणं होदि अंतर-पमाणं ।

उणसीदि-सहस्साणि, बावण्णा जोयणाणि अदरेगा^२ ॥६८॥

सप्त सहस्त्राणि घणू, पंच-सय्याणि च ह्येति बत्तीसं ।
तिष्णि-च्चिय^३ पट्वाणि, तिष्णि जवा किच्चिददिरत्ता^३ ॥६६॥

घ ७५३२ । अ ३ । जो ३ ।

अर्थः—जगतीके बाह्य-भागमे द्वारोके अन्तरालका प्रमाण उन्यासी हजार बावन (७६०५२) योजनसे अधिक है । (इस अधिकका प्रमाण) सात हजार पाँचमौ वत्तीस (७५३२) घनुष, तीन अगुल और कुछ अधिक तीन जी है ॥६६-६९॥

विशेषार्थः—(गाथा ५१ से ५६ पर्यन्त) जम्बूद्वीपकी परिधि ३१६२२७ योजन, ३ कोस, १२८ घनुष आदि कही गई है । इससे १६ योजन [जगतीमे चार द्वार हैं और प्रत्येक द्वार चार योजन चौड़ा है (गा० ४४), अतः १६ यो०] घटाकर चारका भाग देने पर जगतीके बाह्य भागमे द्वारोके अन्तरालका प्रमाण प्राप्त होता है । यथा— $316227 - 16 = 314561$ योजन, ३ योजन अवशेष ।
 $3 \text{ यो०} \times (४ \text{ को०}) + ३ = ३ \text{ कोस, अवशेष } ३ \text{ कोस । } \frac{(३ \times २००० \text{ घ०}) + १२८}{४} = १५३२ \text{ घनुष}$
अर्थात् ३ कोस १५३२ घनुष या ७५३२ घनुष, ० रिक्कू, ० हाथ, ० वितस्ति, ० पाद, ३ अगुल, ३ जी, २ जू, २ लीक, ३ कर्मभूमिके बाल, ४ ज० भो० के बाल, १ म० भो० का बाल, ७ उ० भो० के बाल, २ रथरेणु, २ तस०, ६ नूटरेणु, ० सन्नासन्न एव ४३ अवसन्नासन्न आदि द्वारोके अन्तरालमे अधिकका प्रमाण है ।

जगतीके अभ्यन्तरभागमे जम्बूद्वीपकी परिधि—

जगदी-अबभंतरए, परिही लबलाणि तिष्णि जोयणया ।
सोलस^३-सहस्स-इगि^४-सय-बावण्णा ह्येति किच्चूणा ॥७०॥

३१६१५२ ।

अर्थः—जगतीके अभ्यन्तर भागमे जम्बूद्वीपकी परिधि तीन लाख सोलह हजार एकसी बावन (३१६१५२) योजनसे कुछ कम है ॥७०॥

विशेषार्थः—गाथा १६ मे जगतीका मूल विस्तार १२ योजन कहा गया है । जो दोनों ओरका (१२ × २ =) २४ योजन हुआ । इन्हें एक लाख व्यासमेंसे घटा देनेपर ६६६७६ यो० प्राप्त हुए ।

१. द. पंचाणि । २. क. उ अधिरितो, ब. अधिरिते, व. अधिरित्ता । ३. क. सोल, ज. सोलह ।

४. व. इविस्सय ।

अर्थात् यह जगती का अभ्यन्तर व्यास हुआ। इसकी सूक्ष्म परिधि निकालने पर—३१६१५१ योजन, ३ कोस, ६७० धनुष, १ रिक्कू, १ हाथ, ० वि०, १ पाद और २३३३३३३ अंगुल प्राप्त होते हैं, इसीलिए गायामें परिधिका प्रमाण कुछ कम ३१६१५२ योजन कहा गया है।

अभ्यन्तर भागमें द्वारोके अन्तरालका प्रमाण—

जगदी-अभंतरए, वाराणं होदि अंतर-पमाणं ।

उणसीदि-सहस्सार्णि, चउतीसं जोयणाणि किच्चूणं ॥७१॥

७६०३४ ।

अर्थ :—जगतीके अभ्यन्तरभागमें द्वारोके अन्तरालका प्रमाण उन्वामी हजार चौतीस (७६०३४) योजनसे कुछ कम है ॥७१॥

विशेषार्थ :—जम्बूद्वीपकी जगतीके अभ्यन्तर भागमें परिधिका प्रमाण कुछ कम ३१६१५२ योजन अर्थात् ३१६१५१ योजन, ३ कोस, ९७० घ०, १ रिक्कू, १ हाथ, ० वि०, १ पाद और २३३३३३३ अंगुल कहा गया है। द्वारोका विस्तार ४-४ योजन है, अतः अभ्यन्तर परिधिके प्रमाणमेंसे १६ यो० घटाकर चारका भाग देने पर कुछ कम ७६०३४ योजन अर्थात् ७६०३३ यो०, ३ कोस, १७४२ धनुष, १ रिक्कू, ० हाथ, १ वि०, ० पाद और ५३३३३३ अंगुल प्रत्येक द्वारके अन्तरालका प्रमाण है।

जीवाके वर्ग एव धनुषके वर्गका प्रमाण —

विक्खंभद्ध-कदीओ, बिगुणा वट्टे दिसंतरे दीवे ।

जीवा-वग्गो पण-गुण-चउ-भजिदे होदि 'घणु-करणो ॥७२॥

अर्थ :—विष्कम्भके आवेके वर्गका दुगना, वृत्ताकार द्वीपकी चतुर्थांश परिधिरूप धनुषकी जीवाका वर्ग होता है। इस वर्गको पांचसे गुणाकर चारका भाग देनेपर धनुषका वर्ग होता है ॥७२॥

विशेषार्थ :—जम्बूद्वीपकी जगतीकी चारो दिशाओमें एक-एक द्वार है। एक द्वारसे दूसरे द्वार तकका क्षेत्र धनुषाकार है, क्योंकि पूर्व या पश्चिम द्वारसे दक्षिण एव उत्तर द्वार पर्यन्त जगतीका जो आकार है वह धनुष सदृश है और अभ्यन्तर भागमें एक द्वारसे दूसरे द्वार पर्यन्तके क्षेत्रका आकार धनुषकी डोरी अर्थात् जीवा सदृश है।

जम्बूद्वीपका विष्कम्भ १००००० योजन प्रमाण है, इसके अर्धभागके वर्गका दुगुना करने पर जो लब्ध प्राप्त होता है, वही द्वीपकी चतुर्थांश परिधिरूप जीवाके वर्गका प्रमाण है तथा इस वर्गका वर्गमूल जीवाका प्रमाण है। जीवाके वर्गको पांचसे गुणितकर चारका भाग देनेपर धनुषका वर्ग और इसका वर्गमूल धनुषका प्रमाण है।

जीवा और धनुषका यह प्रमाण ही द्वारोके अन्तरालका प्रमाण है जो गाथा ७३-७४ में दर्शाया जाएगा।

जीवाके वर्गका एव जीवाका प्रमाण -

$(\frac{1000000}{2} = 500000)^2 \times 2 = 500000000000$ जीवा का वर्ग। $\sqrt{500000000000} = 70710$ योजन, २ कोस, १४२४ धनुष, १ रिक्क, १ हाथ, १ वि०, १ पाद और $3\frac{4}{5}$ अंगुल जीवा का प्रमाण है।

धनुषका वर्ग और धनुषका प्रमाण -

$100000000000 \times 2 = 200000000000$ धनुषके वर्गका प्रमाण। $\sqrt{200000000000} = 44721$ योजन, ३ कोस एव $1\frac{1}{2}$ धनुष अथवा ७६०५६ योजन और $7\frac{1}{2}$ धनुष, धनुषका प्रमाण है।

नोट —गाथा ७४ का विशेषार्थ दृश्य है।

विजयादिक द्वारोके मीघे अन्तरालका प्रमाण—

सत्तरि-सहस्र-जोयण, सप्त-सया दस-जुदो य अदिरित्तो ।

जगदी-अब्भंतरए, दाराणं रिजु-सरूव-विच्चालं^१ ॥७३॥

जो ७०७१० ।

अर्थ :—जगतीके अभ्यन्तरभागमें द्वारोका ऋजु स्वरूप अर्थात् मीघा अन्तराल सत्तर हजार, सातमौ दस योजनसे कुछ अधिक है ॥७३॥

विशेषार्थ :—यहाँ ७०७१० योजनसे कुछ अधिकका प्रमाण २ कोस, १४२४ धनुष, १ रिक्क, १ हाथ, १ वि०, १ पाद और $3\frac{4}{5}$ अंगुल है।

उचसीबि-सहस्ताणि, छप्पणा जोयणाणि बंडाईं ।
सस-सहस्ता पञ्च-सय-बत्तीसा होंति किचूणा' ॥७४॥

जो ७६०५६ । दं ७५३२ ।

अर्थः—विजयादि द्वारोंका अन्तराल उन्चासी हजार, छप्पन योजन और सात हजार पाँचसी बत्तीस धनुष है जो कुछ कम है ॥७४॥

बिसेषार्थः—जम्बूद्वीपकी परिधिके ३ भागका प्रमाण ही द्वारोंके अन्तरालका प्रमाण है । जो ७६०५६ योजन, ३ कोस १५३२४३६६ धनुष है । अर्थात् द्वारोंका अन्तराल ७९०५६ योजन, ७५३२ धनुष, रिक्कू ०, हाय ०, वि० ०, पाद १, अंगुल १ और जो ४३३३६६ प्रमाण प्राप्त हो रहा है । किन्तु गाथामे 'किचूणा' पद दिया है जबकि अन्तरालका प्रमाण ७६०५६ यो० ७५३२ धनुषसे कुछ अधिक प्राप्त हो रहा है । अतएव "किचूणा" शब्दसे यह बोध लिया जाये कि गाथा मे दिया हुआ माप यथार्थ मापसे कुछ कम है ।

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिये]

तालिका : ३

जम्बूद्वीपकी परिधि, क्षेत्रफल तथा द्वारोंके अन्तरका प्रमाण

क्र०	प्रमाण (माप)	जम्बूद्वीपकी सूक्ष्म परिधि गा० ५१-५६	जम्बूद्वीपका सूक्ष्म क्षेत्रफल गा० ५९-६४	बाह्यभागमें विजयादि द्वारोका अंतर गा० ६८-६९	जगतीके अन्तर भागमें जम्बू- द्वीपकी परिधि गा० ७०	अन्तर भागमें द्वारों का अन्तराल गा० ७१	जीवाका प्रमाण अथवा द्वारोका सीधा अंतर गा० ७२-७३	धनुषका प्रमाण अथवा द्वारोंका अन्तराल गा० ७२-७४
१	योजन	३१६२२७	७९०५६४५- १५०	७९०५०	३१६१५१	७६०३३	७०७१०	७९०५६
२	कोम	३	१	३	३	३	२	३
३	धनुष	१२८	१५४३	१५३२	६७०	१७४२	१४२४	१५३२
४	रिक्कू	०	०	०	१	१	१	०
५	हाथ	०	०	०	१	०	१	०
६	वितस्त	१	१	०	०	१	१	०
७	पाद	०	०	०	१	०	१	१
८	अंगुल	१	१	३	२	५	३	१
९	जो	५	६	३	०	०	४	४
१०	जू	१	३	२	१	०	७	२
११	लीख	१	३	२	३	२	७	३
१२	कर्मसू के बालाग्र	६	२	३	६	७	४	५
१३	अ० भोगभूमि के बालाग्र	०	७	४	४	५	२	७
१४	म० भोगभूमि के बालाग्र	७	३	१	४	१	३	२
१५	उ० भागभूमि के बालाग्र	५	७	७	७	१	५	७
१६	रथरेणु	१	४	२	५	७	२	४
१७	प्रसरेणु	३	२	२	६	३	१	५
१८	मुटरेणु	०	३	६	४	५	२	४
१९	सप्तमश्र	२	७	०	०	०	६	४
२०	अथमश्र	३	१	४	२	०	३	७
२१	शेष	१३३३३ ५०२४०	४८४५५ ५०२४३	×	१२००३ ३६१५६	१२८३३ ३७६५६	१५२१ ३३५६	५१३३

मतान्तरसे विजयादि द्वारोका प्रमाण—

विजयादि दुबाराणं, पंच-सया जोयणाणि चित्थारो ।

पत्तेक्कं उच्छेहो, सत्त सयाणि च पण्णासा ॥७५॥

जो ५०० । ७५० ।

अर्थ :—विजयादिक द्वारोमेंसे प्रत्येकका विस्तार पाँचसौ (५००) योजन और ऊँचाई सातसौ पचास (७५०) योजन प्रमाण है ॥७५॥

नोट :—इसी अधिकारकी गाथा ४४ मे विजयादिक द्वारोमेंसे प्रत्येकका विस्तार चार योजन प्रमाण और ऊँचाई ८ योजन प्रमाण कही गयी है ।

मतान्तरसे द्वारोपर स्थित प्रासादोका प्रमाण—

दारोवरिम-घराणं, रुंदो दो जोयणाणि पत्तेक्कं ।

उच्छेहो चत्तारिं, केई एवं परूबंति ॥७६॥

जो २ । ४ ।

पाठान्तरम् ।

अर्थ :—द्वारोपर स्थित प्रासादो (घर) मे से प्रत्येकका विस्तार दो योजन और ऊँचाई चार योजन प्रमाण है, ऐसा भी कितने ही आचार्य प्ररूपण करते हैं ॥७६॥

पाठान्तर ।

नोट :—इसी अधिकारकी गा० २६ से ३४ पर्यन्त प्रासादोंके विस्तार आदिका प्रमाण इससे भिन्न कहा गया है ।

द्वारोके अधिपति देवोंका निरूपण—

एदेसि दाराणं, अहिबद्ध-देवा^१ हवंति^२ अंतरया ।

जं णामा ते दारा, तं णामा ते वि^३विक्खावा ॥७७॥

अर्थ :—इन द्वारोके अधिपति देव व्यन्तर होते हैं । जिन नामोके वे द्वार हैं उनके अधिपति व्यन्तरदेव भी उन्ही नामोसे प्रसिद्ध होते हैं ॥७७॥

१. क. उ. प्यरूबंति, ज. परूबंति, य. परवति । २. द. ब. क. ज. व. उ. देवो । ३. द. ब. क. ज. य. उ. चित्तरवा । ४. द. रिकखावा, व. उ. रक्खावा, क. ज. रक्खावो ।

द्वाराधिपति देवोंकी आयु आदिका निर्देश—

एक-पल्लिवोवमाऊ, हस-बंड-समाण-तुंग-बर^१-देहा ।

विष्णामल-मउड-धरा, सहिवा^२ - सहस्तेहि ॥७८॥

अर्थ :—ये देव एक पत्योपम आयुवाले; दस-धनुष प्रमाण उन्नत, उत्तम शरीरवाले; दिव्य निर्मल मुकुटके धारण करने वाले और हजारों देवियों सहित होते हैं ॥७८॥

विजयदेवके नगरका वर्णन—

दारस्स उबरि-वेसे, विजयस्स पुरं हवेदि^३ गयणम्हि ।

^४बारस - सहस्स - जोयण - दीहं तस्सड्ड - विक्खंभं ॥७९॥

१२००० । ६००० ।

अर्थ :—द्वारके उपरिम भागपर आकाशमे बारह हजार (१२०००) योजन लम्बा और इससे आधे (६००० योजन) विस्तार वाला विजयदेवका नगर है ॥७९॥

तटवेदीका निरूपण—

चउ-गोउर-संजुत्ता, तड-वेदी तम्मि ह्वेदि कणयमइं ।

^५चरियट्टालय-चारू, दारोवरि जिण-धरेहि^६ रम्मयरा ॥८०॥

अर्थ :—उस विजयपुरमें चार गोपुरोसे संयुक्त सुवर्णमयी तटवेदी है जो मार्गों एवं अट्टालिकाओंसे सुन्दर है और द्वारोंपर स्थित जिन भवनोसे रमणीय है ॥८०॥

विजयपुरम्मि विचित्ता, पासादा विविह-रयण-कणयमया ।

समचउरस्सा दीहा, अणेय - संठाण - सोहिल्ला ॥८१॥

अर्थ :—विजयपुरमे अनेक प्रकारके रत्नों और स्वर्णसे निर्मित, समचौरस, विशाल तथा अनेक आकारोंमें सुशोभित अद्भुत प्रासाद हैं ॥८१॥

१. द. ब. क. ज. य. उ. धरदेहा । २. द. क. ज. उ. देवि । ३. द. ब. उ. रयणम्मि, ज. लयणम्मि । ४. द. ब. उ. बार सहस्स । ५. द. क. ज. य. उ. तट । ६. द. चरियट्टालय, क. उ. चरियट्टालय । ७. द. क. ज. उ. रमयारो ।

कु^१द्वे^२संख-धबला, मरगय-वण्णा सुवण्ण-संकासा ।
वर-पउमराय-सरिसा, विचि^३त्त-वण्णंतरा पउरा ॥८२॥

^१ओलग्ग - मंत - भूसण - अभिसेउप्पत्ति^२ - मेहुणादीणं ।
सालाओ विसालाओ, रयण-मईओ विराजंति ॥८३॥

अर्थ :—वे प्रासाद कुन्दपुष्प, चन्द्रमा एव शख सदृश धवल, मरकतमणि जैसे (हृरित) वर्णवाले, स्वर्णके सदृश (पीले), उत्तम पचाराग मणियोंके सदृश (लाल) एवं बहुतसे अन्य विचित्र वर्णों वाले हैं । उनमें ओलगशाला, मन्त्रशाला, आभूषणशाला, अभिषेकशाला, उत्पत्तिशाला एव मैथुनशाला आदिक रत्नमयी विशाल शालाएँ शोभायमान हैं ॥८२-८३॥

ते पासादा सव्वे, विचि^३त्त-वणसंड-मंडणा रम्मा ।
विप्पंत-रयण-दीवा, वर-धूव-घडेहि संजुत्ता ॥८४॥

सत्तट्टु-णव-दसादिय-विचि^३त्त-भूमोहि-भूसिदा विउला ।
^३धुव्वंत-धय-वडाया, अकट्टिमा सुट्टु सोहंति ॥८५॥

अर्थ :—वे सब अकृत्रिम भवन विचित्र वन-खण्डोंमें मुगोभित, मरणीय प्रदीप्त रत्नदीपोसे युक्त, श्रेष्ठ धूपघटोसे सयुक्त, मात, आठ, नौ और दस इत्यादि विचित्र भूमियोंसे विभूषित; विशाल फहराती हुई ध्वजा-पताकाओ सहित विशिष्टतासे शोभायमान हैं ॥८४-८५॥

पास-रस-वण्ण-वर-भण्णि-गंधेहि^४ बहुबिहेहि कद-सरिसा ।
उज्जल-विचि^३त्त-बहुविह^५ - सयणासण - णिवह - संपुण्णा ॥८६॥

अर्थ.—अनेक प्रकारके स्पर्श, रस, वर्ण, उत्तमध्वनि एवं गन्धने जिनको समान कर दिया है । अर्थात् इनकी अपेक्षा जो समान हैं ऐसे वे भवन नाना प्रकारकी उज्ज्वल एवं अद्भुत शय्याओं एवं आसनोंके समूहसे परिपूर्ण हैं ॥८६॥

१. द. धोणलं, क. ज. य. उ. धोणलं, ब. पुउलंगं । २. ब. उप्पण्णि । ३. द. जुलंतं परदाया ।
उ. ब. दुण्ठंतर परदाया, क. ज. दित्तंतरवरदाया, य. दित्तंतरवरदीया । ४. क. विदेहि, ज. बिहेदि, य. बिहेहि,
उ. बिदेहि । ५. क. विव, ज. य. उ. विद ।

'एवास्ति जयरवरे, ब्रह्मविह-परिवार-^३परिगदो णिच्चं ।
देवी-ज्जत्तो भुंजदि, उवभोग-सुहाइ विजयसुरो'^१ ॥८७॥

अर्थः—इम श्रेष्ठ नगरमे अपने अनेक प्रकारके परिवारसे घिरा हुआ विजयदेव अपनी देवियों सहित सदा उपभोग सुखोको भोगता है ॥८७॥

विशेषार्थः—भोग और उपभोगके भेदमे भोग दो प्रकारके होते है । जो पदार्थ एक बार भोगनेमे आते है उन्हें भोग कहते हैं, जैसे भोज्य-पदार्थ और जो बार-बार भोगनेमे आते है उन्हे उपभोग कहते हैं, जैसे शय्या आदि । देव पर्यायमे उपभोग ही होते हैं क्योंकि उनके कवलाहार आदि नहीं होता ।

अन्य देवोके नगर--

एवं अवसेसाण, देवाणं पुरवराणि रम्माणि ।
दारोवरिम-पदेसे^४, णहम्मि जिणभवण-जुत्ताणि ॥८८॥

अर्थः—उसीप्रकार अन्य द्वारोके ऊपरके प्रदंशमे अर्थात् ऊपर आकाशमे जिनभवनोसे युक्त अवशिष्ट देवोके रमणीय उत्तम नगर हैं ॥८८॥

जगतीके अभ्यन्तर-भागमे स्थित वनखण्डोका वर्णन —

जगदीए अब्भतरभागे^५ वे-कोस-वास-संजुत्ता ।
भूमितले वणसंडा^६, वर-^७तरु-णियरा बिराजंति ॥८९॥

अर्थः—जगतीके अभ्यन्तरभागमे पृथिवीतलपर दो कोस विस्तारसे युक्त और उत्तम वृक्षोके समूहोसे परिपूर्ण वनसमूह शोभायमान हैं ॥८९॥

तं उज्जाणं सीयल-छायं वर-सुरहि-कुसुम-परिपुणं^८ ।
दिव्वाभोद-सुगंधं, सुर-स्येयर-मिह्वण-मण-हरणं ॥९०॥

अर्थः—शीतल छायासे युक्त, उत्तम सुगन्धित पुष्पोसे परिपूर्ण और दिव्य सुगन्धसे सुगन्धित वह उद्यान देवों और विद्याधर-युगलोके मनोको हरण करने वाला है ॥९०॥

१. द. व. क. ज. य. उ. एरेसि । २. व. परिगदा । ३. व. क. ज. य. उ. विजयपुरी ।
४. द. व. क. ज. उ. पदेसे । य. पदेतो । ५. द. व. क. ज. य. उ. भाको । ६. द. व. क. ज. उ. संडो ।
७. द. तुणु, व. तणु । ८. द. क. ज. उ. परिपुष्णा, य. परिपुष्णा ।

वन-वेदिकाका प्रमाण—

बे कोसा उबिबद्धा, उज्जाण-वणस्स वेदिया दिव्वा ।

पंच-सय-चाव-रुंवा, कंचण-वर-रण-णियरमई ॥६१॥

॥ जगदी समत्ता ॥

अर्थः—स्वर्ण एव उत्तमोत्तम रत्नोके समूहसे निर्मित उद्यान वनकी दिव्य वेदिका दो कोस ऊँची और पाँचसौ घनुष प्रमाण चौड़ी है ॥६१॥

जगतीका वर्णन समाप्त हुआ ।

जम्बूद्वीपस्थ सात क्षेत्रोंका निरूपण—

तस्सि जंबूदीवे, सत्त-च्चिय होंति जणपदा पवरा ।

'एदाणं विच्चात्ते, छक्कुल-सेला विरायंते ॥६२॥

अर्थः—उस जम्बूद्वीपमे सात प्रकारके श्रेष्ठ जनपद हैं और इन जनपदोंके अन्तरालमे छह कुलाचल शोभायमान हैं ॥६२॥

दक्खिण-दिसाए भरहो, हेमवदो हरि-विदेह-रम्माणि ।

हेरण्णवदेरावद - वरिसा कुल - पव्वदंतरिदा ॥६३॥

अर्थः—दक्षिण दिशासे लेकर भरत, हेमवत, हरि, विदेह, रम्यक, हैरण्यवत और ऐरावत क्षेत्र कुलपर्वतोमे विभक्त है ॥६३॥

कप्पतरु-धवल-छत्ता, वर-उववण-चामरोहि चास्तरा ।

वर-कुंड-कुंडलेहि, विच्चित्त-रुवेहि रमणिज्जा ॥६४॥

वर-वेदी-कडिसुत्ता, बहुरयणुज्जल-गिरिंद मउड-धरा ।

सरि-जल-पवाह-हारा, खेत्त-णरिदा विराजंति ॥६५॥

अर्थः—कल्पवृक्ष रूपी धवल छत्र एवं उत्तम उपवनरूपी चँवरोसे अत्यन्त मनोहर, अद्भुत सुन्दरतावाले श्रेष्ठ कुण्डरूपी कुण्डलोंसे रमणीय, अनेक प्रकारके रत्नोंसे उज्ज्वल कुलपर्वतरूपी मुकुट,

उत्तम वेदीरूपी कटिसूत्र तथा नदियोंके जलप्रवाहरूपी हारको धारण करनेवाले भरतक्षेत्रादि राजा सुशोभित हैं ॥६४-६५॥

जम्बूद्वीपस्थ कुलाचलोका निरूपण—

हिमबन्त-महाहिमबन्त - णिसह-णीलद्भि^१-रुम्मि-सिहरि-गिरी ।
 मूलोवरि-समवासा, पुव्वावर-जलहि^२ संलग्ना ॥६६॥
 एदे हेमज्जुण-तवणिज्जय - वेहलिय - रजद-हेममया ।
 एषक-दु-चउ-चउ-दुग-इगि-जोयण-सय-उदय-सजुदा कमसो ॥६७॥

१०० । २०० । ४०० । ६०० । २०० । १०० ।

अर्थ:—हिमवान्, महाहिमवान्, निषध, नील, रुक्मी और शिखरी कुलपर्वत मूलमे एव ऊपर समान विस्तारसे युक्त है तथा पूर्वापर समुद्रोमे मलग्न है। ये छहो कुल पर्वत क्रमशः सुवर्ण, चांदी, तपनीय, वैदूर्यमाण, रजत और स्वर्णके सदृश वर्णवाले तथा एकसौ, दोसौ, चारसौ, चारसौ, दोसौ और एकसौ योजन प्रमाण ऊँचाई वाले हैं ॥६६-६७॥

कुलाचलरूपी राजाके विशेषण—

'वर-दह-सिदादवत्ता, 'सरि-चामर-विज्जमाणया परिदो ।
 कप्पतरु-चारु^३ - चिधा, वसुमइ^४ - सिहासणारूढा ॥६८॥
 वर-वेदी-कडिसुत्ता, विविहुज्जल-रयण-कूड-मउडधरा ।
 लंबिद - णिज्भरहारा, चंचल - तरु - कुंडलाभरणा ॥६९॥
 गोउर - तिरोट - रम्मा, पायार - सुगंध-कुसुम-दामग्गा ।
 सुरपुर-कण्ठाभरणा, 'वण-राजि-बिचित्त-बत्थ-कयसोहा ॥१००॥
 'तोरण-कंकण - जुत्ता, 'वज्ज-पणाली-फुरंत'^५ - केऊरा ।
 जिणवर - मंदिर - तिलया, भूधर - राया विरायति ॥१०१॥

१. द. ब. एणिलद्धि । २. ब. उ. जलदेहि । ३. द. ब. उ. वरवा हसिदा रत्ता । य. ज. क. वरदा हरिदा रत्ता । ४. द. ब. क. ज. उ. सवि । ५. द. ब. क. य. उ. चारविदा, ज. चारविधा । ६. द. ब. क. च. ब. उ. वसुहमही । ७. ब. उ. वरराजि । ८. द. ब. क. ज. य. उ. तारिण । ९. द. वज्जकणाली, य. १०. द. क. ज. य. उ. पुरत ।

अर्थः—उत्तम ब्रह्मरूपी सफेद छत्रसे विभूषित; चारों ओर नदीरूपी चामरोसे वीज्यमान, कल्पवृक्षरूपी सुन्दर चिह्नों सहित, पृथिवीरूपी सिंहासनपर विराजमान, उत्तम बेदीरूपी कटिसूत्रसे युक्त, विविध प्रकारके उज्ज्वल रत्नोंके कूटरूपी मुकुटको धारण करने वाले निर्भररूपी लटकते हुए हारसे शोभायमान, चंचल वृक्षरूपी कुण्डलोसे भूषित, गोपुररूप कीरीटसे सुन्दर, कोटरूपी सुगन्धित फूलोंकी मालासे अग्रभागमें सुशोभित, मुरपुररूपी कण्ठाभरणसे अभिराम, वनपक्तिरूप विचित्र वस्त्रोंसे शोभायमान, तोरणरूपी कंकणसे युक्त, वज्र-प्रणालीरूपी स्फुरायमान केयूरों सहित और जिनालयरूप तिलकसे मनोहर, कुलाचलरूपी राजा अत्यन्त सुशोभित हैं ॥१८-१०१॥

धेत्रोका स्वरूप—

पुन्वावरदो दीहा, सत्त वि खेत्ता अणादि-विष्णासा ।

कुलगिरि-कय-मज्जादा^१, वित्थिष्णा दक्खिणुत्तरदो ॥१०२॥

अर्थः—(भरतादि) सातो ही धेत्र पूर्व-पश्चिम लम्बे, अनादि-रचना युक्त (अनादि-निघन), कुलाचलोसे सीमित और दक्षिण-उत्तरमें विस्तीर्ण है ॥१०२॥

भरतक्षेत्रका विस्तार—

णउदो-जुद-सद-भजिदे, जंबूदीवस्स बास-परिमाणे ।

जं लद्धं तं रुदं, भरहक्खेत्तम्मि णादब्बं ॥१०३॥

अर्थः—जम्बूद्वीपके विस्तार प्रमाणमें एकसौ नव्वैका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना भरतक्षेत्रका विस्तार समझना चाहिए ॥१०३॥

धेत्र एव कुलाचलोकी शलाकाओका प्रमाण—

भरहम्मि होदि^१ एक्का, तत्तो दुगुणा य खुल्ल-हिम्बते^३ ।

एवं दुगुणा^५ दुगुणा, होदि^२ सलाया विवेहंतं ॥१०४॥

१।१।२।४।८।१६।३२।६४।

१. क. व. उ. मज्जादो । २. व. एक्को । ३. व. व. क. ज. उ. हिम्बतो । ४. व. दुगुणा-दुगुणा, उ. दुगु दुगुणा । ५. क. उ. सलायं, व. सलोयं, य. सलोम ।

अद्धं खु विदेहादो, 'णीले णीला दु रम्मगो' होदि ।

एवं अद्धाओ, एरावद - खेत्त - परियंतं ॥१०५॥

। ३२ । १६ । ८ । ४ । २ । १ ।

अर्थः—भरतक्षेत्रमें एक शलाका है, क्षुद्रहिमवान्की इससे दूनी है, इसीप्रकार विदेह क्षेत्र पर्यन्त दूनी-दूनी शलाकाएँ हैं । विदेह से अर्धशलाकाएँ नील पर्वतमें और नीलसे अर्धशलाकाएँ रम्यक क्षेत्रमें हैं । इसीप्रकार ऐरावत क्षेत्र पर्यन्त उत्तरोत्तर अर्ध-अर्ध शलाकाएँ होती गई है ॥१०४-१०५॥

वरिसादीण सलाया, मित्तिदे णउदोए अहियमेवक-सयं ।

एसा जुत्ती^१ हारस्स भासिदा^२ आणुपुग्घोए ॥१०६॥

अर्थः—क्षेत्रादिकोकी शलाकाएँ मिलाकर कुल (१, २, ४, ८, १६, ३२, ६४, ३२, १६, ८, ४, २, १=) एकसौ नब्बे होती हैं । इसप्रकार अनुक्रममें यह हार (भाजक) की युक्ति बतलाई गई है ॥१०६॥

क्षेत्र एव कुलाचलोका विस्तार—

भाग-भजिदम्हि लद्धं, पण-सय-छब्बीस-जोयणाणि^३ पि ।

'छच्चिय कलाओ कहिदो, भरहवखेत्तम्मि विक्खंभो ॥१०७॥

। ५२६१६ ।

'वरिसादु दुगुण बद्धो, अद्दीदो दुगुणिवो परो वरिसो ।

जाव विदेहं होदि हु, तत्तो अद्ध-हाणोए ॥१०८॥

१०५२१२ । २१०५१६ । ४२१०१० । ८४२११६ । १६८४२२ । ३३६८४४ ।

१६८४२२ । ८४२११६ । ४२१०१० । २१०५१६ । १०५२१२ । ५२६१६ ।

॥ एवं विष्णासो समत्तो ॥

१. क. ज. उ. एणो। २. क. ज. य. उ. रम्मको। ३. व. उ. सलाया, क. य. सलाया ।
 ४. य. जुत्ता। ५. क. ज. य. उ. भासिदो। ६. व. जोयणाण। ७. व. क. य. उ. छच्चिय ।
 ८. व. व. य. उ. वरिसादु दुगुणवद्धी भाषीदो। क. वरिसादु दुगुणावद्धी भाषीदो ।

वर्ष:—जम्बूद्वीपके विस्तार (१००००० यो०) में एकसौ नब्बेका भाग देनेपर पाँचसौ छब्बीस योजन और छह कला (५२६ $\frac{१}{४}$ यो०) प्रमाण भरतक्षेत्रका विस्तार कहा गया है। वर्ष (क्षेत्र) से दूना पर्वत और पर्वतसे दूना आगेका वर्ष (क्षेत्र)। इसप्रकार विदेहक्षेत्र पर्यन्त क्रमशः दूनी-दूनी वृद्धि होती गई है। इसके पश्चात् क्रमशः क्षेत्रसे पर्वत और पर्वतसे आगेके क्षेत्रका विस्तार आधा-आधा होता गया है ॥१०७-१०८॥

तालिका : ४

॥ इसप्रकार विन्यास समाप्त हुआ ॥

क्षेत्र—कुलाबलोंके विस्तार आदिका विवरण (गा० ६७ और १०४-१०८)								
क्रमांक	नाम	क्षेत्र/पर्वत	१६० शलाकाएँ	वर्ण	ऊँचाई		विस्तार	
					योजनो मे	मीलो मे	योजनो मे	मीलो मे
१	भरत	क्षेत्र	१	×	×	×	५२६ $\frac{१}{४}$	२१०५२६३ $\frac{१}{४}$
२	हिमवान्	पर्वत	२	स्वर्ण	१००	४०००००	१०५२३ $\frac{३}{४}$	४२१०५२६ $\frac{१}{४}$
३	हैमवत	क्षेत्र	४	×	×	×	२१०५ $\frac{१}{४}$	८४२१०५ $\frac{१}{४}$
४	महाहिमवान्	पर्वत	८	चाँदी	२००	८०००००	४२१० $\frac{३}{४}$	१६८४२१० $\frac{१}{४}$
५	हृरि	क्षेत्र	१६	×	×	×	८४२१ $\frac{१}{४}$	३३६८४२१ $\frac{१}{४}$
६	निषध	पर्वत	३२	तपनीय	४००	१६०००००	१६८४२ $\frac{३}{४}$	६०३६८४२१ $\frac{१}{४}$
७	विदेह	क्षेत्र	६४	×	×	×	३३६८ $\frac{३}{४}$	१३४७३६८ $\frac{३}{४}$
८	नील	पर्वत	३२	वैदूर्य	४००	१६०००००	१६८४२ $\frac{३}{४}$	६७३६८४२१ $\frac{१}{४}$
९	रम्यक	क्षेत्र	१६	×	×	×	८४२१ $\frac{१}{४}$	३३६८४२१ $\frac{१}{४}$
१०	रुक्मि	पर्वत	८	रजत	२००	८०००००	४२१० $\frac{३}{४}$	१६८४२१० $\frac{१}{४}$
११	हैरण्यवत	क्षेत्र	४	×	×	×	२१०५ $\frac{१}{४}$	८४२१०५ $\frac{१}{४}$
१२	शिखरी	पर्वत	२	स्वर्ण	१००	४०००००	१०५२३ $\frac{३}{४}$	४२१०५२६ $\frac{१}{४}$
१३	ऐरावत	क्षेत्र	१	×	×	×	५२६ $\frac{१}{४}$	२१०५२६३ $\frac{१}{४}$

भरतक्षेत्रस्थ विजयार्धपर्वतकी अवस्थिति एव प्रमाण—

भरहृक्खिवि-बहुमज्ज्भे, विजयद्धो णाम भूधरो तुंगो ।
रजदमओ 'बट्टेदि हु, णाणावर-रयण-रमणिज्जो ॥१०६॥

पणुबीस-जोयणुदओ, ^३वुत्तो तद्दुगुण-मूल-विक्खंभो ।
उदय-तुरिमंस-गाढो, जलणिहि-पुट्टो ति-सेट्ठि-गओ ॥११०॥

२५।५०। २५ |

अर्थः—भरतक्षेत्रके बहुमध्यभागमे नानाप्रकारके उत्तम रत्नोसे रमणीय रजतमय विजयार्ध नामक उन्नत पर्वत विद्यमान है । यह पर्वत पञ्चोस (२५) योजन ऊँचा, इससे दूने अर्थात् पचास (५०) योजन प्रमाण मूलमे विस्तार युक्त, ऊँचाईके चतुर्थ भाग प्रमाण (६३ योजन) नीच सहित, पूर्वापर समुद्रको स्पर्श करने वाला और तीन श्रेणियोंमे विभक्त कहा गया है ॥१०६-११०॥

विजयार्धका अवशिष्ट वर्णन —

दस-जोयणाणि उवरिं, गंतूणं तस्स दोसु पासेसुं ।
विज्जाहराण सेट्ठी, एककेवका जोयणाणि दस रुंदा ॥१११॥

१० ।

अर्थ — दस योजन ऊपर जाकर उस पर्वतके दोनो पार्श्वभागोमे दस योजन विस्तार वाली विद्याधरोंकी एक-एक श्रेणी है ॥१११॥

विजयड्ढायामेणं, हवति विज्जाहराण सेट्ठीओ ।
एककेवका ^३तडवेदी, णाणाविह-तोरणेहि कयसोहा ॥११२॥

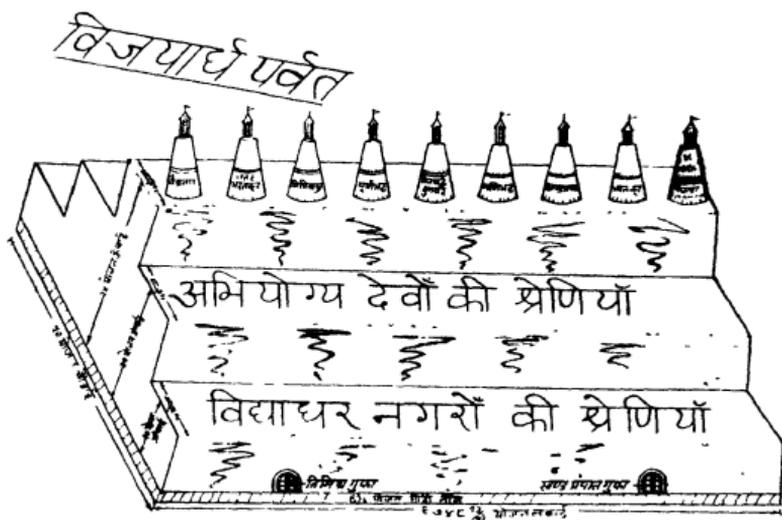
अर्थ :—विजयार्धके आयाम-प्रमाण विद्याधरोंकी श्रेणियाँ हैं तथा वहाँ नानाप्रकारके तोरणोंमे शोभायमान एक-एक नट वेदिका हैं ॥११२॥

दक्षिण-वित्त-सेढीए, पण्णास पुराणि पुब्बवर-दित्तम्मि ।

उत्तर - सेढीए तह, 'नवररणि सट्टि सेट्ट'ति ॥११३॥

द ५० । उ ६० ।

अर्थः—पूर्वसे पश्चिम दिशाकी ओर दक्षिण दिशाकी श्रेणीमे पचाम नगर और उत्तर दिशाकी श्रेणीमे साठ नगर स्थित हैं ॥११३॥



विशेषार्थः :- यह विजयार्ध पर्वत पूर्व-पश्चिम लम्बा है । इसकी कुल ऊँचाई २५ योजन है । इसके दक्षिण दिशा स्थित तट पर विद्याधरोके ५० नगर और उत्तर दिशागत तट पर ६० नगर स्थित हैं ।

१. द. बहुदम्मि, ब. क. ज, य. उ, बहुदित्तम्मि । २. द. ब. न. खररणां ।

विजयाधंकी दक्षिण श्रेणी स्थित नगरियोंके नाम—

तण्णामा किणामिद, किन्नरगीदाइ तह य नरगीदं ।
बहुकेटु - पुण्डरीया, सीहद्धय सेवकेट्टइं ॥११४॥

७

गरुडद्धयं सिरिप्पह - सिरिधर - लोहगला^१ अरिजयकं ।
^२बडरगल-बडरड्ढा, विमोच्चिया जयपुरी य सगडमुही ॥११५॥

१०

^३चट्टुमुह-बट्टुमुह-अरजकसयाणि विरजकस-नाम-विकसादं ।
तत्तो रहणूउर - मेहलग्ग - खेमपुरावराजिदया ॥११६॥

८

णामेण कामपुप्फं, गयणचरी विजयचरिय-सुक्कपुरी ।
तह संजयंत-णयरी, जयंत-विजय^४-वडजयंतं च ॥११७॥

८

खेमंकर - चंदाभा, सूराम - पुत्तमापुराइं^५ पि ।
च्चिच - महाकूडाइं, सुवण्णकूडो तिकूडो य ॥११८॥

८

वडचित्त -^६मेहकूडा, तत्तो वडसवणकूड - सूरपुरा ।
चंदं णिच्चुज्जोयं, विमुही तह णिच्चवाहिणी सुमुही ॥११९॥

। ६। ५०।

अर्थ :—उन नगरियोंके नाम—^१किनामित, ^२किन्नरगीत, ^३नरगीत, ^४बहुकेतु, ^५पुण्डरीक, ^६सिंहध्वज, ^७श्वेतकेतु, ^८गरुडध्वज, ^९श्रीप्रभ, ^{१०}श्रीधर, ^{११}लोहागल, ^{१२}अरिञ्जय, ^{१३}वज्रागल,

१. द. ब. क. ज. य. उ. लोयगला । २. द. ब. ज. उ. वडरगल बडरंदा, क. वडरपाल ।
३. द. ब. उ. चट्टुमुह, क. चदमह, ज. य. चट्टुमह । ४. क. ज. य. उ. विजाह । ५. द. ब. क. ज. य. उ.
पुसाइं । ६. द. ब. क. ज. य. उ. हेमकूटा ।

१^५बन्धाड्य, १^६विमोचिता, १^७जयपुरी, १^८शकटमुखी, १^९चतुर्मुख, १^{१०}बहुमुख, १^{११}अरजस्का,
 १^{१२}विरजस्का, १^{१३}रत्नपुर, १^{१४}भेखलापुर, १^{१५}क्षेमपुर, १^{१६}अपराजित, १^{१७}कामपुष्प, १^{१८}गगनचरी,
 १^{१९}विजयचरी, १^{२०}शुक्रपुरी, १^{२१}संजयंत नगरी, १^{२२}जयंत, १^{२३}विजय, १^{२४}वैजयंत, १^{२५}क्षेमङ्कर, १^{२६}चन्द्राभ,
 १^{२७}सूर्याभ, १^{२८}पुरोत्तम, १^{२९}चित्रकूट, १^{३०}महाकूट, १^{३१}सुवर्णकूट, १^{३२}त्रिकूट, १^{३३}विचित्रकूट, १^{३४}भेधकूट,
 १^{३५}वंशवर्णकूट, १^{३६}सूर्यपुर, १^{३७}चन्द्र, १^{३८}नित्योद्योत, १^{३९}विमुखी, १^{४०}नित्यवाहिनी और १^{४१}सुमुखी, ये
 पचास नगरियां दक्षिण श्रेणी में हैं ॥११४-११९॥

एदाओ जयरीओ, पण्णासा दक्खिणा य सेठीए ।

विजयड्ढायामेणं, विरच्चिद पंतीए णिवसंति ॥१२०॥

अर्थ :—दक्षिण श्रेणी में ये (उपयुक्त) पचास नगरियां हैं, जो विजयार्ध की लम्बाई में
 पंक्तिबद्ध स्थित हैं ॥१२०॥

विजयार्धको उत्तरश्रेणीगत नगरियोंके नाम—

१^१अञ्जुण-अरुणी-कइलास^१-आरुणीओ य विञ्जुपह-णामा ।

किलकिल-चूडामणियं, ससिपह-वंसाल-पुप्फचूलाइं ॥१२१॥

१०

णामेण हंसगढं, बलाहक-सिवंकराइ सिरिसउधं^३ ।

चमरं सिवमंदिर-वसुमक्खा-वसुमईं त्ति णामा च ॥१२२॥

८

सिद्धत्थपुरं सत्तुजयं च णामेण केडुमालो त्ति ।

सुरवइकंतं तह गगणणंदणं पुरमसोगं च ॥१२३॥

६

तत्तो विसोकयं बीदसोक - अलकाइ-तिलक - णामं च ।

अंबरतिलकं मंबर-कुमुदा कुंदं च गयणवल्लभयं ॥१२४॥

६

१. द. ब. क. उ. अञ्जुण, ज. य. अञ्जुल । २. न. क. ब. व. उ. कइलाइ । ३. द. क. व. उ.
 सउधं । ४. क. उ. गणणं ।

विष्वतिलयं च भ्रुमी, तिलबं गंधम्बपुर बरं तसो ।
मुत्ताहर - अइमिस - णामं ^१तहग्गिजाल - मह्जाला ॥१२५॥

७

णामेण सिरिणिकेदं, जयावहं सिरिणिवास-मणिवज्जा ।
^२महत्सम्ब - षणजय - माहिदा विजय - जयरं च ॥१२६॥

८

तह य सुगंधिणि-^३वेरद्धदरा-गोक्खीरफेणमक्खोभा ।
गिरिसिहर-धरणि-धारिणि-दुग्गाहं दुद्धरं सुदंसणयं ॥१२७॥

१०

रयणायर-रयणपुरा, उत्तर-सेढीअ सट्ठि णयरीओ ।
विजयद्धायामेणं, विरच्चिद - पंतीए णिवसंति ॥१२८॥

६० ।

अर्थः— ^१अर्जुनी, ^२अरुणी, ^३कंलास, ^४वारुणी, ^५विद्युत्प्रभ, ^६किलकिल, ^७बूडामणि,
^८शक्तिप्रभ, ^९वंशाल, ^{१०}पुष्पचूल, ^{११}हसगर्भ, ^{१२}बलाहक, ^{१३}शिवंकर, ^{१४}श्रीसौध, ^{१५}चमर, ^{१६}शिव-
मन्दिर, ^{१७}वसुमत्का, ^{१८}वसुमती, ^{१९}सिद्धार्थपुर, ^{२०}शत्रुञ्जय, ^{२१}केतुमाल, ^{२२}सुरपतिकान्त, ^{२३}गगन-
नन्दन, ^{२४}अशोक, ^{२५}विशोक, ^{२६}वीतशोक, ^{२७}अलका, ^{२८}तिलक, ^{२९}अम्बरतिलक, ^{३०}मन्दर,
^{३१}कुमुद, ^{३२}कुन्द, ^{३३}गगनवत्सभ, ^{३४}दिव्यतिलक, ^{३५}भूमितिलक, ^{३६}गन्धर्वपुर, ^{३७}मुक्ताहर,
^{३८}नैमिष, ^{३९}अग्निज्वाल, ^{४०}महाज्वाल, ^{४१}श्रीनिकेतन, ^{४२}जयावह, ^{४३}श्रीनिवास, ^{४४}मणिवज्ज,
^{४५}भद्राश्व, ^{४६}षणञ्जय, ^{४७}माहेन्द्र, ^{४८}विजयनगर, ^{४९}सुगन्धिनी, ^{५०}बज्राद्धतर, ^{५१}गोक्षीरफेन,

१. द. ब. क. ज य उ. तह अग्गि । २. क. ज. उ. षट् ।

३. द ब वेरंतदराणं.....

ज. य. ,, ,, क्षीरपेणमक्खोभा ।

उ. ,, ,, ,, सक्खोभा ।

क. ,, ,, ,, सक्खाभा ।

“अश्रोम, “गिगिखर, “धरणी, “धारिणी, “दुर्ग, “दुर्जर, “मुदर्शन, “रत्नाकर और “रत्नपुर ये साठ नगरियाँ उत्तरश्रेणीमे हैं, जो विजयाद्र की लग्नाईमे पत्तिकवद्ध स्थित है ॥१२१-१२८॥

विद्याधर नगरोंका विस्तृत वर्णन—

विज्जाहर-णयरवरा, अणाइ-णिहणा सहावणिप्पण्णा ।

णाणाविह-रयणमया, गोउर-पायार-तोरणादि-जुदा ॥१२९॥

अर्थ — जतेक प्रकारके रत्नोमे निर्मित गोपुर, प्राकार (गर्कोटा) और तोरणादिसे युक्त विद्याधरोंके वे श्रेष्ठ नगर अनादिनिघन ओर स्वभाव मिद्ध है ॥१२९॥

उज्जाण-वण-समिद्धा, पोक्खरणी-कूव-दिग्घिया-सहिदा ।

धुब्बंत^१-धय-वडाया, पासादा ते च रयणमया ॥१३०॥

अर्थ — रत्नमय प्रामाद वाले वे नगर उद्यान-वनोसे सयुक्त है और पुष्करिणी, कप एव दीघिकाओ तथा फहरानी हुई ध्वजा-पताकाओमे सुशोभित है ॥१३०॥

णाणाविह-जिणगेहा, विज्जाहर-पुर वरेसु रमणिज्जा ।

वर - रयण - कंचणमया, ^२ठाण - ट्ठाणसु सोहंति ॥१३१॥

अर्थ — उन श्रेष्ठ विद्याधर नगरोंमे स्थान-स्थान पर रमणीय, उत्तमरत्नमय और स्वर्ण-मय नानाप्रकारके जिनमन्दिर शोभायमान है ॥१३१॥

वरासंड-वत्थ-सोहा, ^३वेदी-कडिसुत्तएहि कंतिल्ला ।

तोरण-कंचण^४-जुत्ता, विज्जाहर-राय-भवण-मउडधरा^५ ॥१३२॥

मणिगिह-कंठाभरणा, चलंत-हिंडोल - कुंडलेहि जुदा ।

जिणवर - मंदिर - तिलया, णयर-णरिदा विरायंति ॥१३३॥

१. व. व. क. उ. धुब्बंतरयवडाया, ज. व. पुब्बतवयवडाया । २. द. व. क. उ. ताण । ३. द. वेदी वडि । ४. द. कचण । ५. द. व. क. ज. य. उ. मीडधरा ।

अर्थः—वन-खण्डरूपी वस्त्रसे मुशीभित, वेदिकारूप कटिसूत्रसे कान्तिमान्, तोरणरूपी ककरासे युक्त, विद्याधरोके राजभवन रूप मुकुटोको धारण करने वाले, मणियाग्ररूप कठाभरणसे विभूषित, चञ्चल हिडोलेरूप कुण्डलोमें युक्त और जिनेन्द्रमन्दिररूपी तिलकमें मयुक्त विद्याधरनगररूपी राजा अत्यन्त शोभायमान है ॥१३२-१३३॥

‘फुल्लिद-कमल-वर्णेहि, वावी-रिचएहि मंडिया विउला ।

पुर-बाहिर - भूभागा, उज्जाण - वर्णेहि रेहंति ॥१३४॥

अर्थः—नगरके बाहरी विशाल प्रदेश प्रफुल्लित कमल वनो, वापी-समूहो तथा उद्यान-वनोसे मंडित होते हुए शोभायमान है ॥१३४॥

कन्हार-कमल-कुवलय- कुमुदुज्जल-जलपवाह-पडहत्या^१ ।

दिव्व-तडाया विउला, तेसु पुरेसु विरायंति^३ ॥१३५॥

अर्थः—उन नगरमें कन्हार, कमल, कुवलय और कुमुदोसे उज्ज्वल, जलप्रवाहमें परिपूर्ण अनेक दिव्य तालाब शोभायमान है ॥१३५॥

शालि-जमणाल-तुवरी-तिल-जव-गोधुम्म - मास-पहुदीहि ।

सस्सेहि भरिबाहि, पुराइ सोहंति भूमोहि ॥१३६॥

अर्थः—शालि, यवनाल (जुवार), तुवर, तिल, जी, गेहूँ और उडद इत्यादिक समस्त उत्तम धान्योसे परिपूर्ण भूमियो द्वारा वे नगर शोभाको प्राप्त होते हैं ॥१३६॥

बहुदिव्व-गाम-सहिवा, दिव्व - महापट्टणेहि रमणिज्जा ।

कब्बड - दोणमुहेहि, संवाह - मडंबएहि परिपुण्णा ॥१३७॥

रयणाण आयरेहि, विहूसिया पउमराय - पहुदीणं ।

दिव्व-णयरेहि पुण्णा, धण - धण - समिद्धि - रम्मेहि ॥१३८॥

अर्थः—वे विद्याधरपुर बहुतसे दिव्य ग्रामो सहित, दिव्य महापट्टनोसे रमणीय; कर्वट, द्रोणमुख, सवाह, मटब और नगरोंसे परिपूर्ण; पधरागादिक रत्नोकी खानोसे विभूषित तथा धन-धान्यकी समृद्धिसे रमणीय है ॥१३७-१३८॥

१. द. व. क. ज. य. उ. पुब्बिद । २. क. ज. य. उ. पवहत्या । ३. य. विरायंति । ४. द. य. पुवणेहि । ५. व. क. ज. य. उ. सयायारहि । ६. क. ज. य. उ. विभूसियो । ७. द. व. क. ज. य. उ. पंमराय । ८. द. व. क. ज. य. उ. एयरहि ।

विद्याधरोंका वर्णन—

'देवकुमार-सरिच्छा, बहुबिह-विज्जाहि संजुदा पवग ।

विज्जाहुरा मणुस्सा, छक्कम्म-जुवा हवति सदा ॥१३६॥

अर्थ :—उन नगरोमे रहनेवाले उत्तम विद्याधर मनुष्य देवकुमारोके सदृश अनेक प्रकारकी विद्याओमे समुक्त होते हैं और सदा छह कर्मोमे सहित हैं ॥१३६॥

विशेषार्थ — वे विद्याधर मनुष्य देवपूजा, गुरु-उपासना, स्वाध्याय, संयम तप और दान इन छह कर्मोसे युक्त होते हैं तथा अनेक विद्याओके अधिपति होकर अपनी विद्याधर सजाको सार्थक करते हैं ।

अच्छर-सरिच्छ-रूवा,अहिणव-लावण-दीप्ति रमणिज्जा ।

विज्जाहुर - वणिताओ, बहुबिह - विज्जा - समिद्धाओ ॥१४०॥

अर्थ :—विद्याधरोंकी वनिताएँ अप्सराओके सदृश रूपवती, नवीन लावण्य युक्त, दीप्तिसे रमणीय और अनेक प्रकारकी विद्याओसे समृद्ध होती हैं ॥१४०॥

कुल-जाई-विज्जाओ, साहिय - विज्जा अणेय-भेयाओ ।

विज्जाहुर-पुरिस - पुरंबियाण^१ बर-सोक्ख - जणणीओ ॥१४१॥

अर्थ :—अनेक प्रकारकी कुल-विद्याएँ, जाति-विद्याएँ और साधित-विद्याएँ विद्याधर पुरुषो एव पुरंधियो (विद्याधरियो) को उत्तम सुख देनेवाली होती है ॥१४१॥

विद्याधरकी श्रेणियोंका एव उनपर निवास करनेवाले देवोंका वर्णन—

रम्मज्जाणोहि जुवा, होंति हु विज्जाहुराण सेढीओ ।

जिणभवण - भूसिवाओ, को सब्बइ वणिण्डुं सयसं ॥१४२॥

अर्थ :—विद्याधरोंकी श्रेणियाँ रमणीय उद्यानोसे युक्त हैं और जिनभवनोंसे भूषित हैं । इनका सम्पूर्ण वर्णन करनेमे कौन समर्थ हो सकता है ? ॥१४२॥

दस-जोयणाणि तत्तो, उर्बारिं गंतूण दोसु पासेसुं ।
अभियोगामर - सेढी, दस - जोयण - बित्थरा' होवि ॥१४३॥

अर्थ :—विद्याधर श्रेणियोंसे आगे दस योजन ऊपर जाकर विजयाधके दोनो पार्श्वभागोंमें दस योजन विस्तार वाली आभियोग्य देवोंकी श्रेणी है ॥१४३॥

वरकप्प-रुक्ख-रम्मा, फलिदेहि उववणेहि परिपुण्णा ।
बाबी - तडाग - पउरा, वर-अच्छरि-कीडणेहि जुदा ॥१४४॥
कंचण-वेदी-सहिदा, चउ-गोउर-सुं वरा य बहुचिन्ता ।
मणिमय - मंदिर - बहुला, परिखा-पायार-परियरिया ॥१४५॥

अर्थ :—यह श्रेणी उत्कृष्ट कल्पवृक्षोंसे रमणीय, फलित उपवनोसे परिपूर्ण, अनेक वापियों एव तालाबों सहित, उत्तम अप्सराओंकी क्रीडाओंसे युक्त, स्वर्णमय वेदी सहित, चार गोपुरोंसे सुन्दर, बहुत चित्रोंसे अलंकृत और अनेक मणिमय भवनोसे युक्त है तथा परिखा एवं प्राकारसे वेष्टित है ॥१४४-१४५॥

सोहम्म-सुरिदस्स य, वाहण-देवा हवन्ति वेतरया ।
दक्खिण - उत्तर - पासेसु लिए वर-दिव्व-रूवधरा ॥१४६॥

अर्थ :—इस श्रेणीके दक्षिण-उत्तर पार्श्वभागमें सोधमन्द्रके वाहनदेव-व्यन्तर होते हैं, जो उत्तम दिव्यरूपके धारक होते हैं ॥१४६॥

विजयाधके शिखरका वर्णन —

अभिजोग-पुराहितो, गंतूणं पंच-जोयणाणि तवो ।
दस-जोयण-बित्थिण्णं, वेयड्ढगिरिस्स वर - सिहरं ॥१४७॥
तिर्वासिबच्च-सरिस्सं, बिसाल-वर-वेदियाहि परियरियं ।
बहुतोरणवार-जुदा, विचिन्त-रयणेहि^३ रमणिज्जा ॥१४८॥

१. द. बित्थदो । २. द. व. क. य. उ. चित्तरया, ज. वित्तरया । ३. द. क. ज. य. उ. रयणम्मि ।

अर्थ :—अभियोगपुरोसे पाँच योजन ऊपर जाकर दस योजन विस्तारवाला वंताढ्यपर्वतका उत्तम शिखर है जो त्रिदशेन्द्रचाप अर्थात् इन्द्रधनुषके सदृश है, विशाल एवं उत्तम वेदिकाओंसे वेष्टित है, अनेक तोरणद्वारोमे संयुक्त है औग विचित्र रत्नोमे रमणीय है ॥१४७-१४८॥

शिखरके ऊपर स्थित नव-कूटोका वर्णन—

तत्थ-समभूमि-भागे, ^१फुरंत-वर-रयण-किरण-णियरम्मि ।

चेट्ट^२ते णव कूडा, कञ्जण - मणि - मंडिया दिव्वा ॥१४९॥

अर्थ :—वहाँ पर स्फुरायमान उत्तम रत्नोके किरण-समूहोसे युक्त समभूमि भागमे स्वर्ण एव मोतियोमे मण्डित दिव्य नौ कूट स्थित है ॥१४९॥

णामेण सिद्धकूडो, पुब्ब - दिसंतो तदो भरह-कूडो ।

^२खण्डप्पवाद - णामो, तुरिमो तह माणिभदो ति ॥१५०॥

विजयड्ढकुमारो पुण्णभद्-^३तिमिस्स-गुहा-विहाणा^४ य ।

उत्तर - भरहो कूडो, पच्छिम - अंतमिह वेसमणा ॥१५१॥

अर्थ :—पूर्व दिशाके अन्तमे सिद्धकूट, इसके पश्चात् भरतकूट, खण्डप्रपात, (चतुर्थ) मारिणभद्र, विजयार्धकुमार, पूर्णभद्र, तिमिस्रगुह, उत्तर भरतकूट और पश्चिम दिशाके अन्तमे वैश्रवण, नामक ये नौ कूट हैं ॥१५०-१५१॥

कूटोके विस्तार आदिका वर्णन—

कूडाणं उच्छेहो, पुह पुह छज्जोयणाणि इगि-कोसं ।

तेत्तियमेत्तं णियमा, हवेदि मूलमिह^५ विक्खंभो ॥१५२॥

जो ६ को १ । जो ६ को १^६ ।

अर्थ :—इन कूटोंकी ऊँचाई पृथक्-पृथक् छह योजन और एक कोस है तथा नियमसे इतना ही मूलमें विस्तार भी है ॥१५२॥

१. द. क. य. पुरत्त, ब. क. उ. पुरंत । २. द. क. ज. य. उ. खदप्प । ३. द. क. ज. य. उ. तिमिस्सं । ४. द. ब. क. ज. य. उ. विघाणो । ५. क. ज. य. उ. विक्खभा । ६. द. क. ज. य. उ. जो ४ । को १ । जो ३ । को ३ ।

विशेषार्थः—प्रत्येक कूटकी ऊँचाई ६ योजन १ कोस और मूल विस्तार भी ६ योजन एक कोम प्रमाण है ।

तस्सद्ध वित्थारो, पत्तेक्कं होदि कूड-सिहरम्हि' ।
मूल-सिहराण रुदं, मेलिय दल्लिदम्हि मज्झस्स ॥१५३॥

जो ३ । को ३ । जो ४ । को ३ ।

अर्थ—प्रत्येक कूटका विस्तार शिखर पर इससे आधा अर्थात् तीन योजन और आधा कोस है । मूल और शिखरके विस्तारको मिलाकर आधा करने पर जो प्रमाण प्राप्त हो उतना उक्त प्रत्येक कूटके मध्यका विस्तार है ॥१५३॥

विशेषार्थः—प्रत्येक कूटकी ऊँचाई ६ $\frac{३}{४}$ योजन और विस्तार भी ६ $\frac{३}{४}$ योजन है । शिखरके ऊपर विस्तार ३ $\frac{३}{४}$ योजन है । कूटका मध्य विस्तार (६ $\frac{३}{४}$ + ३ $\frac{३}{४}$) \div २ अर्थात् $\frac{३}{२}$ + $\frac{३}{२}$ = ४ $\frac{३}{४}$ योजन अथवा ४ यो० और २ $\frac{३}{४}$ या ३ $\frac{३}{४}$ कोस है ।

कूटस्थित जिनभवनका वर्णन—

आदिम-कूडे^३ चेदुदि, ^३जिण्णद-भवणं विचित्त - घयमालं ।
वर - कंचण - रयणमयं^४, तोरण - जुत्तं विमाणं च ॥१५४॥

अर्थ—प्रथम कूटपर विचित्र ध्वजा-समूहोंसे शोभायमान जिनेन्द्रभवन तथा उत्तम स्वर्ण और रत्नोंसे निर्मित तोरणोंसे युक्त विमान स्थित हैं ॥१५४॥

"दीहस्तमेक्क-कोसो, विण्णंभो होदि कोस-दल्ल-मेत्तं" ।
गाउद-त्ति-चरणभायो, उच्छेहो जिण - षिकेदस्स ॥१५५॥

को १ । ३ । ३ ।

अर्थ—जिनभवनकी लम्बाई एक कोस, चौड़ाई आधा कोस और ऊँचाई गण्युतिके तीन चौथाई भाग (३ $\frac{३}{४}$ कोस) प्रमाण है ॥१५५॥

१. द. व. क. ज. य. उ. सिहराणि । २. द. कूडो । ३. द. जिण्णद । ४. द. व. क. च. उ. मया । य. मयां । ५. क. च. य. उ. दोह्ल । ६. द. उ. सभेत्तं ।

कंचन - पायारत्तय - परियरिओ गोउरेहि 'संजुतो ।
 वर-बन्ध-बीस - बिदुम^१-भरगय - बेरुसिय - परिणामो ॥१५६॥
 'लंबंत - रयण - दामो, जाणा-कुसुमोपहार-कयसोहो ।
 गोसीस - मलयचंबण - कालागरु^२ - धूब - गंधडो ॥१५७॥
 वर-बन्ध-कवाड-जुदो, बहुबिह-दारेहि सोहिदो विउलो ।
 वर - माणचंभ - सहिदो, जिणिद - गेहो गिरवमाणो ॥१५८॥

अर्थ :- स्वर्णमय तीन प्राकारोंसे वैश्रित, गोपुरोंसे संयुक्त; उत्तम वज्र, नील, विद्रुम, मरकत और वैदूर्य-मणिजोंसे निमित, लटकती हुई रत्नमालाजोंसे युक्त, नाना प्रकारके फूलोंके उपहारसे शोभायमान, गोशीर्ष, मलयचन्दन, कालागरु और धूपकी गन्धसे व्याप्त; उत्कृष्ट वज्रकपाटोंसे संयुक्त बहुतप्रकारके द्वारोंसे सुशोभित, विशाल और उत्तम मानस्तम्भों सहित वह जिनेन्द्रभवन अनुपम है ॥१५६-१५८॥

भिगार - कलस - दप्पण - चामर - घंटादवत्त - पट्टुदीहि ।
 पूजा - दब्बेहि तदो, विचित्त - वर - वत्थ^३ - सोहिल्लो ॥१५९॥
 पुञ्जाय - जाय - चंपय - असोय-बउलादि-ककल-पुण्णोहि ।
 उज्जाणोहि सोहिदि, विविहेहि जिणिद - पासादो ॥१६०॥

अर्थ :- वह जिनेन्द्र-प्रासाद भारी, कलश, दर्पण, चामर, घंटा और भ्रातपत्र (छत्र) इत्यादिसे, पूजाद्रव्योंसे, विचित्र एवं उत्तम वस्त्रोंसे सुशोभित तथा पुञ्जाग, नाग, चम्पक, अशोक और बकुलादिक वृक्षोंसे परिपूर्ण विविध उद्यानोंसे शोभायमान है ॥१५९-१६०॥

सच्छ - जल - पूरिदेहि, 'कमलुप्पलसंड - मंडणधराहि' ।
 पोवसरणीहि रम्मो, मणिमय - सोवाण^४ - 'मालाहि ॥१६१॥

१. द. हजुता । २. द. क. ब. य. उ. बिज्जुम । ३. क. उ लंबंत । ४. ज. य. कालामुद ।
 ५. द. ब. क. ब. य. वत्थसोहि, उ. वत्थसेहि । ६. क उ. कमलपल । ७. द. क. ज. य. उ. मडण धराइं ;
 ८. द. ब. क. ज. य. उ. सोहाण । ९. द. क. ज. य. उ. मालाइं ।

अर्थ :—वह जिनभवन स्वच्छ जलसे परिपूर्ण, कमल और नीलकमलोंके समूहसे अलंकृत भूमिभागोंसे युक्त और मणिमय सोपान पत्तियोंसे शोभायमान पुष्करिणियोंसे रमणीय है ॥१६१॥

तस्मिन् जिनिद - पडिमा, अट्ट - महामंगलेहि संपुण्णा ।

सिहासणादि-सहिवा, चामर-कर-नाग-जक्स-मिहण-जुवा ॥१६२॥

अर्थ :—उस जिनेन्द्र मन्दिरमें अष्टमहामगलद्रव्योंसे परिपूर्ण, सिहासनादिक सहित और हाथमें चामरोको लिए हुए नाग यक्षोंके युगलसे सयुक्त जिनेन्द्र प्रतिमा विराजमान है ॥१६२॥

भिगार - कलस-दप्पण - वीयण-धय-छत्त-चमर-सुपइट्ठा ।

इय अट्ट - मंगलाहि, पत्तेक्कं अट्ट - अहियसयं ॥१६३॥

अर्थ :—भारी, कलश, दर्पण, व्यजन (पखा), ध्वजा, छत्र, चमर और सुप्रतिष्ठ (ठीना), इन आठ मगलद्रव्योंमेंसे प्रत्येक वहाँ एकसौ आठ-एकसौ आठ हैं ॥१६३॥

किन्तीए वर्णिज्जइ, जिनिद - पडिमाए ^१सासव-ठिदीए ।

^२जा हरइ सयल - डुरियं, सुमरण - मेत्तेण भन्वाणं ॥१६४॥

अर्थ :—जो स्मरण मात्रसे ही भव्य जीवोंके सम्पूर्ण पापोंको नष्ट करती है, ऐसी शाश्वत रूपमें स्थित उस जिनेन्द्र प्रतिमाका कितना वर्णन किया जाय ? ॥१६४॥

वृत्तं (इन्द्रवज्रा) :—

एवं हि रूवं पडिमं जिणस्स, तत्थं द्विदं ^३भत्ति-पसत्थ-चित्ता ।

भार्यति केई विविणट्ट-कम्मा, ते मोक्ख-माणंदकरं ^४लहते ॥१६५॥

अर्थ :—उस जिन-मन्दिरमें स्थित जिनेन्द्र भगवान्की इसप्रकारकी सुन्दर मूर्तिका जो भी कोई (भव्य जीव) प्रशस्त चित्त होकर भक्तिपूर्वक ध्यान करते हैं, वे कर्मोंको नष्ट कर आनन्दकारी मोक्षको प्राप्त करते हैं ॥१६५॥

१ व क ऊ. य उ. सामदरिदीए । २ व क. ज. य उ. जो । ३. द. क. ज. भत्ति-पसत्थ-चित्तो, व उ. भत्तिए सच्छ-चित्तो । ४. द. ब. क. ज य उ. माणं ।

एसा जिणिदप्पडिमा जणायं, भ्माणं कुणंताण-बहुप्पयारं ।
भावाणुसारेण अणंत-सोवखं, जिस्सेयसं ग्रम्भुवयं च देवि' ॥१६६॥

अर्थ :—यह जिनेन्द्र प्रतिमा अनेक प्रकारसे उसका ध्यान करनेवाले भव्य जीवोंको उनके भावोंके अनुसार अश्रुदय एवं अनन्तसुख स्वरूप मोक्ष प्रदान करती है ॥१६६॥

कूटोपर स्थित व्यन्तरदेवोंके प्रासादोंका वर्णन—

भरहाविसु कूडेसुं, अट्टसु बेंतर-सुराण पासादा ।
वर - रयण - कंचणमया, वेदी-गोउर-डुवार-कय-सोहा ॥१६७॥

उज्जाणोहि जुत्ता, मणिमय - सयणासणेहि परिपुण्णा ।
णच्चंत - धय - वडाया, बहुबिह - वण्णा विरायंति ॥१६८॥

अर्थ :—भरसादिक आठ कूटोपर व्यन्तरदेवोंके उत्तम रत्नों और स्वर्णसे निर्मित, वेदी तथा गोपुरद्वारोमे शोभायमान, उद्यानोंमे युक्त, मणिमय शय्याओं और आसनोसे परिपूर्ण एवं नाचती हुई ध्वजा-पताकाओसे सुशोभित अनेक वर्णवाले प्रासाद विराजमान हैं ॥१६७-१६८॥

बहुदेव - देवि - सहिदा, बेंतर - देवाण होंति पासादा ।
जिणवर - भवण - पवण्णिद - पासाद-सरिच्छ-रुंदादी ॥१६९॥

को १ । को २ । को ३ ।

अर्थ :—व्यन्तरदेवोंके ये प्रासाद बहुनसे देव-देवियों सहित हैं । जिन-भवनोंके वर्णनमें प्रासादोंके विस्तारदिका जो प्रमाण बतलाया जा चुका है, उसीके सदृश इनका भी विस्तारादिक जानना चाहिए । अर्थात् ये प्रासाद एक कोस लम्बे, आधा कोस चौड़े और पौन (३) कोस ऊँचे हैं ॥१६९॥

कूटोके अधिपति देवोके नाम, उनकी ऊँचाई एवं आयु—

भरहे कूडे भरहो, 'खंडपवावम्मि णट्टमाल - सुरो' ।

'कूडम्मि माणिभद्दे, अहिवइ-देवो अ माणभद्दो त्ति ॥१७०॥

वेयड्डकुमार - सुरो, वेयड्डकुमार - णाम - कूडम्मि ।

चेट्टेदि पुण्णभद्दो, 'अहिणाहो पुण्णभद्दम्मि ॥१७१॥

तिमिसगुहम्मि य कूडे, देवो णामेण वसदि कवमालो ।

उत्तरभरहे कूडे, अहिवइ - देवो भरह-णामो ॥१७२॥

कूडम्मि य वेसमणे, वेसमणो णाम अहिवई देवो ।

वस - धणु - वेहच्छेहा^५, सव्वे ते एकक - पल्लाऊ ॥१७३॥

अर्थ :— भरतकूटपर भरत नामक देव, खण्डप्रपात कूटपर नृत्यमाल देव और माणभद्र कूटपर माणभद्र नामक अधिपति देव है। वंताडघकुमार नामक कूटपर वंताडघकुमार देव और पूर्णभद्र कटपर पूर्णभद्र नामक अधिपति देव स्थित है। तिमिसगुह कूटपर कृतमाल नामक देव और उत्तरभरत कूटपर भरत नामक अधिपति देव रहता है। वैश्रवण कूटपर वैश्रवण नामक अधिनायक देव है। ये सब देव दम धनुष ऊँच शरीरके धारक है और एक पत्न्योपम आयुवाले है ॥१७०-१७३॥

विजयार्थ स्थित वनखण्ड, वन-वेदी एवं व्यन्तर देवोंके नगणोका वर्णन—

वे-गाउद वित्थिण्णा, दोसु वि पासेसु गिरि-समायामा ।

वेयड्डम्मि गिरिदे, वणमंडा होंति भूमितले^१ ॥१७४॥

अर्थ :- वंताडघ पर्वतके भूमिनलपर दोनों पाश्र्वभागोंमें दो गव्यति (दो कोस) विस्तीर्ण और पर्वतके बराबर लम्बे वनखण्ड है ॥१७४॥

१ द. ब. क. ज. य. उ विदप ।

२ द. ब. क. ज. य. उ. सुरा ।

३. ब. कूटम्मि ।

४. द. न. क. ज. य. उ. अहिणामो ।

५. द. ब. क. ज. य. उ. वेहच्छेहो ।

६. द. ब. ज. उ. तसि, क. तल ।

दो-कोस' उच्छेहो, पण - सय - 'चावप्यमाण - हं'दो हु ।

बण - वेदी - आयारो', तोरण - वारेहि संजुत्ता ॥१७५॥

अर्थ :—तोरण द्वारोंसे संयुक्त वन-वेदीका आकार दो कोस ऊँचा तथा पाँचसौ धनुष प्रमाण विस्तारवाला है ॥१७५॥

चरियट्टालय - चारू, पाणाबिह - जंत - लक्ख-संछण्णा ।

विविह-वर-रयण-खच्चिदा, णिरुवम - सोहाओ वेदीओ ॥१७६॥

अर्थ :—विशाल भवनों और मार्गोंसे सुन्दर, अनेक प्रकारके लाखो यन्त्रोंसे व्याप्त, विविध-रत्नोंसे खचित उन वेदियोंकी शोभा अनुपम है ॥१७६॥

सब्बेसु उववणेसु', वेंतर - देवाण होंति वर-णयरा ।

पायार - गोउर - जुवा, जिण-भवण विभूसिया बिउला ॥१७७॥

अर्थ :—इन सब उपवनोमे प्राकार और गोपुरो युक्त तथा जिनभवनोसे विभूषित व्यन्तर-देवोंके विशाल उत्कृष्ट नगर हैं ॥१७७॥

विजयाधंकी गुफाओका वर्णन—

रजद-णगे दोण्हि गुहा, पण्णासा जोयणाणि दीहाओ ।

अट्ट' उव्विद्धाओ, बारस - विक्खंभ - संजुत्ता ॥१७८॥

५० । ८ । १२ ।

अर्थ :—रजत पर्वत अर्थात् विजयाधंमे पचास योजन लम्बी, आठ योजन ऊँची और बारह योजन विस्तारसे युक्त दो गुफाएँ हैं ॥१७८॥

१. द. दो कोसु' वित्थाम्भो । ब. ज. उ. दोकोसु' वित्थारो । क. दो कोसुवि उच्छेहो । य. दो कोसो वित्थारो । २. द. व उ चावा पमाण्णदो उ । क. ज. य. चावा पमाण्ण हं'दाम्भो । ३. द. ब. क. ज. उ. आयारो होति हु ।

अबराए^१ तिमिसगुहा, ^२खंडपवादा विसाए पुब्बाए ।
वर-वज्ज-कवाड^३-जुदा, अणादि - णिहणाओ^४ सोहंति ॥१७६॥

अर्थ :—पश्चिम दिशामे तिमिसगुहा और पूर्व दिशामे खण्डप्रपात गुफा है । उत्तम वज्जमय कपाटोंसे युक्त ये दोनो अनादि-निघन गुफाएँ शोभायमान है ॥१७६॥

जमल-कवाडा दिव्वा, होति हु द्यज्जोयणाणि वित्थिणा ।
अट्ठच्छेहा^५ दोसु बि, गुहासु दाराण^६ पत्तेवकं ॥१८०॥

६ । ८ ।

अर्थ :—दोनों ही गुफाओंमें द्वारोंके दिव्य युगल कपाटोंमेंसे प्रत्येक कपाट छह योजन विस्तीर्ण और आठ योजन ऊँचा है ॥१८०॥

दक्षिण ओर उत्तर भरतका विस्तार

पण्णास - जोयणाणि, वेयडढ - णगस्स मूल - वित्थारो ।
त भरहादो ^७सोधिष, सेसद्धं दक्खिणद्धं तु ॥१८१॥
दुसया अट्ठत्तोस, निण्णि कलाओ य दक्खिणद्धम्मि ।
तस्स सरिरच्छ - पमाणो, उत्तर - भरहो हि^८ णियमेण ॥१८२॥

८३८ । १३ ।

अर्थ : विजयार्थ पर्वतका विस्तार मूलमें पचास योजन है । इसे भरतक्षत्रके विस्तारमें कम करके शेषका आधा करनेपर दक्षिण (अर्थ) भरतका विस्तार निकल जाता है । वह दक्षिण भरतका विस्तार दोसौ अडतीस योजन और एक योजनके उत्तरीय भागमेंसे तान जाय पमाण है । नियममें इसीके सदृश विस्तारवाला उत्तर भरत भी है ॥१८१-१८२॥

१ द व क ज उ अबरधरा, य अबधारा । २. द. व क ज उ खण्डपवादा, य खण्डपाटाला ।
३. द. व क. ज. उ कवाडाहि, य कवाडादि । ४. ज य उ गिह्हादि । ५ द अट्ठेव^५ निदाओ ।
व. अट्ठेव सदाओ । क अट्ठेवय विदाउ । ज अट्ठेवय विदाओ । उ अट्ठेवय सदाओ । य अट्ठेवय विदाओ ।
६. द व क ज य. उ. दागणि । ७. द. व. क ज. य. उ. सोधिष । ८. क ज. उ दि ।

विशेषार्थः—भरतक्षेत्रका विस्तार $५२६\frac{१}{४}$ यो० है और विजयार्थका मूलमें विस्तार ५० योजन है, अतः $(५२६\frac{१}{४} - ५०) \div २ = २३८\frac{१}{४}$ योजन दक्षिण भरतका और $२३८\frac{१}{४}$ योजन ही उत्तर भरतका विस्तार है ।

घनुषाकार क्षेत्रमें जीवाका प्रमाण निकालनेका विधान—

रुंददं इसु-हीषं, वग्मिय अवषिञ्ज रुंद-दल-वग्गे ।

सेस चउगुण - मूलं, जीवाए होदि परिमाणं ॥१८३॥

अर्थः—बाणसे रहित अर्ध-विस्तारका वर्ग करके उसे विस्तारके अर्ध भागके वर्गमेंसे घटा देनेपर अवशिष्ट राशिको चारसे गुणा करके प्राप्त राशिका वर्गमूल निकालने पर जीवाका प्रमाण प्राप्त होता है ॥१८३॥

घनुषका प्रमाण निकालनेका विधान—

बाण-बुद-रुंद-वग्गे^१, रुंद-कदी सोधिदूण दुगुण कदे ।

जं लदं तं होदि हू, करणी चावस्त परिमाणं ॥१८४॥

अर्थः—बाणसे युक्त व्यासके वर्गमेंसे व्यासके वर्गको घटाकर शेषको दुगुना करनेपर जो राशि प्राप्त हो वह घनुषका वर्ग होता है और उसका वर्गमूल घनुषका प्रमाण होता है ॥१८४॥

बाणका प्रमाण निकालनेका विधान—

जीव-कदी-तुरिमंसा, ^२वासद - कदीए सोहिदूण पदं ।

रुंददमि बिहीणे, ^३लदं बाणस्त परिमाणं ॥१८५॥

अर्थः—जीवाके वर्गके चतुर्थ भागको अर्ध विस्तारके वर्गमेंसे घटाकर शेषका वर्गमूल निकालने पर जो प्राप्त हो उसे विस्तारके अर्ध भागमेंसे कम कर देनेपर अवशिष्ट रही राशि प्रमाण ही बाणका प्रमाण होता है ॥१८५॥

विशेषार्थः—अथा—जम्बूद्वीपका व्यास एक लाख योजन और विजयार्थकी दक्षिण धीना $१८३३\frac{३}{४}$ या $१७४८\frac{३}{४}$ योजन है ।

$$\frac{१०००००}{२} - \sqrt{\left(\frac{१०००००}{२}\right)^2 - \left(\frac{१८५२२४}{१६}\right) २ \times \frac{१}{४}}$$

$$= ५०००० - \sqrt{\left(\frac{२५०००००००}{१} - \frac{८५७६६८८२५४४}{३६१}\right)}$$

$$= ५०००० - \frac{४६७६११३}{३६१} \text{ या } ४६७६१\frac{३}{३६१} = २३८\frac{३}{३६१} \text{ योजन दक्षिण-भरतका बाण ।}$$

विजयार्धकी दक्षिण जीवाका प्रमाण -

जोयण-भव य 'सहस्सा, सत्त - सम्य अट्टताल-संजुत्ता ।

बारस कलाओ अहिआ, रजदाचल - दक्षिणे^२ जीवा ॥१८६॥

$$६७४८\frac{३}{३६१} ।$$

अर्थ :—विजयार्धके दक्षिणमे जीवा नौ हजार सातसौ अड़तालीस योजन और एक योजनके उन्नीस भागोमेसे बारह भाग (६७४८ $\frac{३}{३६१}$ यो०) प्रमाण है ॥१८६॥

विशेषार्थ :—जम्बूद्वीपका व्यास एक लाख योजन और भरतक्षेत्रका बाण २३८ $\frac{३}{३६१}$ या ४६७६१ योजन प्रमाण है । गाथा १८३ के नियमानुसार— $\left(\frac{१०००००}{२} - \frac{४५२५}{१६}\right) २ = \frac{८६३६२२६७५६२५}{३६१}$ को विस्तारके अर्धभागके वर्ग $\left[\left(\frac{१०००००}{२}\right)^2 = २५००००००००\right]$ मेंसे घटा देनेपर $\left(\frac{२५०००००००० - ८६३६२२६७५६२५}{३६१}\right) = \frac{८५७७०२४३७५}{३६१}$ अवशेष रहे । इस अवशिष्ट राशिको ४ से गुणित करने पर $\frac{८५७७०२४३७५ \times ४}{३६१} = \frac{३४३०८०६७५००}{३६१}$ योजन हुए । इसका वर्गमूल निकालने पर $\frac{१८५२२४}{१६}$ अर्थात् ६७४८ $\frac{१२}{१६}$ योजन दक्षिण विजयार्धकी जीवा का प्रमाण प्राप्त हुआ । इसमें १६७३२४ अवशेष रहे जो छोड़ दिये गये हैं ।

दक्षिण जीवाके धनुषका प्रमाण—

तञ्जीवाए' चाबं, णव य सहस्साणि जोयणा होंति ।

सत्त - सया छासट्ठी, एकक - कला किच्चि' अबिरेक्का ॥१८७॥

। ६७६६,१ ।

अर्थ.—उसी जीवाका धनुष नौ हजार सातसौ छासठ योजन और एक योजनके उन्नीस भागोमेसे कुछ अधिक एक भाग (६७६६ $\frac{१}{१६}$ योजन) है ॥१८७॥

विशेषार्थ :—गाथा १८४ के नियमानुसार—

$$\text{धनुषका प्रमाण} = [\{ (१००००० + २३८\frac{३}{१६})^२ - (१०००००)^२ \} \times २]^{\frac{१}{२}}$$

$$= [\{ (१००२३८\frac{३}{१६})^२ - (१०००००)^२ \} \times २]^{\frac{१}{२}}$$

$$= [\{ (\frac{३६२७२१५४७५६२५}{३६१}) - (\frac{१००००००००००}{१}) \} \times २]^{\frac{१}{२}}$$

$$= (\frac{१७२१५४७५६२५}{३६१}) \times २]^{\frac{१}{२}}$$

$$= [\frac{३४४३०९५१२५०}{३६१}]^{\frac{१}{२}} = \frac{१८५५५५}{१६} \text{ या } ६७६६\frac{१}{१६} \text{ योजन विजयार्धके दक्षिण}$$

धनुषका प्रमाण है। सट्टिमे विजयार्धके दक्षिण धनुषका प्रमाण ६७६६ $\frac{१}{१६}$ यो० दर्शाया गया है, किन्तु गाथा में कुछ अधिक $\frac{१}{१६}$ कहा गया है। क्योंकि वर्गमूल निकाल लेनेके बाद $\frac{३६२७२१५४७५६२५}{३६१}$ योजन अवशेष बचते हैं। इनके कोस आदि बनाने पर अधिकका प्रमाण ३ कोस और ३२१ $\frac{३३३३३}{३६१}$ धनुष प्राप्त होता है।

विजयार्धकी उत्तर जीवाका प्रमाण—

वीसुत्तर-सत्त-सया, वस य सहस्साणि जोयणा होंति ।

एक्कारस - कल - अहिया, रजवाचल - उत्तरे जीवा ॥१८८॥

१०७२० । ११' ।

१. क. ज. य. उ. त । २. द. अक्षिकेकी, व. क. य. अ. अक्षिकेकी । ३. व. व. १०७२० $\frac{११}{१६}$ ।

व. अ. १०२० $\frac{११}{१६}$ । उ. १०७२ $\frac{११}{१६}$ ।

अर्थ—विजयार्धक उत्तरमे जीवाका प्रमाण दम हजार सातसौ बीस योजन और एक योजनके उन्नीस भागोंमेंसे स्यारह भाग है ॥१८८॥

विशेषार्थः—विजयार्धके बाणका प्रमाण ($२३८\frac{३}{४} + ५०$) = $२८८\frac{३}{४}$ या $२५\frac{३}{४}$ योजन है। इसे जम्बूद्वीपके वृत्त-विष्कम्भ मेसे घटा देनेपर $१८५\frac{३}{४}$ योजन अवशेष रहे। इसको बाणके चौगुने प्रमाण ($१५\frac{३}{४} \times ५$) से गुणित करने पर— $\frac{४१४६००६७५००}{३६१}$ योजन प्राप्त होते हैं। यह विजयार्धकी जीवाकृति का प्रमाण है। इसके वर्गमूल ($२०३१\frac{३}{४}$) को अपने ही भागहारका भाग देनेसे $१०७२०\frac{३}{४}$ योजन विजयार्धकी उत्तर जीवाका प्रमाण प्राप्त होता है।

उत्तर-जीवाके घनुषका प्रमाण—

एदाए जीवाए, घणुपुट्ट दस - सहस्स - सत्त - सया ।

तेवाल - जोयणाइं, पण्णरस - कलाओ 'अद्विरेओ ॥१८९॥

१०७४३ । ३३ ।

अर्थ—इस जीवाका घनुःपृष्ठ दस हजार सातसौ तैतालीस योजन और एक योजनके उन्नीस भागोंमेंसे पन्द्रह भाग अधिक है ॥१८९॥

विशेषार्थः—व्यास १ लाख यो० और बाण $२८८\frac{३}{४}$ या $२५\frac{३}{४}$ यो० ।

$$\text{घनुःपृष्ठ} = [२ \{ १००००० + २८८\frac{३}{४} \}^२ - (१०००००)^२]^{\frac{३}{४}}$$

$$= [२ \{ (१००२८८\frac{३}{४})^२ - १००००००००० \}]^{\frac{३}{४}}$$

$$= [२ \{ \frac{३६३०८३४९७५६२५}{३६१} - \frac{१०००००००००}{१} \}]^{\frac{३}{४}}$$

$$= [२ \times \frac{२०८३४९७५६२५}{३६१}]^{\frac{३}{४}}$$

$$= \sqrt[३]{\frac{४१६६६६११२५०}{३६१}}$$

$$= \frac{२०४१३२}{१६} \text{ अर्थात् } १०७४३\frac{३}{४} \text{ योजन उत्तर जीवाके अर्थात् विजयार्धके उत्तर घनुषका}$$

प्रमाण प्राप्त हुआ ।

चूलिकाका प्रमाण ज्ञात करनेकी विधि—

जेट्टाए जीवाए, मञ्जे सोहसु जहण्ण - जीवं च ।
सेस - दलं चूलोम्रो, हवेदि 'बस्से य सेले 'य ॥१६०॥

अर्थ—उत्कृष्ट जीवामेसे जघन्य जीवाको घटाकर शेषका अर्ध करने पर क्षेत्र और पर्वतमें चूलिकाका प्रमाण आता है ॥१६०॥

विजयार्धकी चूलिकाका प्रमाण—

चत्तारि सयाणि तथा, पणुसीदी - जोयणेहि जुत्ताणि ।
सत्तत्तीसद्ध - कला, परिमाणं 'चूलियाए इमं ॥१६१॥

$४८५ \frac{३९}{३२}$ ।

अर्थ—उस विजयार्धकी चूलिकाका प्रमाण चारसी पचासी योजन और एक योजनके उन्नीस भागमेसे सैंतीसके आधे अर्थात् साठे अठारह भाग ($४८५\frac{३९}{३२}$ योजन) है ॥१६१॥

विशेषार्थ :—गाथा १६० के नियमानुसार—

विजयार्धकी उत्तर (उत्कृष्ट) जीवाका प्रमाण $१०७२०\frac{१३}{३२}$ अर्थात् $२०\frac{३१}{३२}$ योजन और दक्षिण (जघन्य) जीवाका प्रमाण $६७४८\frac{३३}{३२}$ या $१८\frac{५३}{३२}$ योजन है । अत—

$$\left[\left(\frac{२०३६६१}{१९} - \frac{१८५२२४}{१९} \right) \times \frac{१}{२} \right] = \frac{१८४६७}{१९} \times \frac{१}{२} = \frac{१८४६७}{३८}$$
 या $४८५\frac{३९}{३२}$ योजन विजयार्ध की चूलिकाका प्रमाण है ।

पार्श्वभुजाका प्रमाण ज्ञान करनेकी विधि—

जेट्ठम्मि चावपुट्ठे, सोहेज्ज कणिट्ठ-चावपुट्ठं पि ।
"सेस - दलं पस्स - भुजा, हवेदि वरिसम्मि सेले य ॥१६२॥

१. द. ब. क. ज. य. उ. वसे । २. द. ब. उ उ । क. य. प्रो । ३. द. ब.
चूलियाइरि । ४. द. $\frac{३९}{३२}$ । ५. द. व. क. उ. सेसदलपयस भुजा । ज. य. सेसदलपयस भुजा ।

अर्थः—उत्कृष्ट चाप-पृष्ठमेसे लघु चाप-पृष्ठ घटाकर शेषको आधा करने पर क्षेत्र और पर्वतमें पार्श्वभुजाका प्रमाण निकलता है ॥१६२॥

विजयाधंकी पार्श्व-भुजाका प्रमाण—

अक्षरि सयाणि तथा, अडसीदी - जोयणेहि जुत्ताणि ।

तेत्तीसद्व - कलाओ, गिरिस्स पुठ्ठाबरम्मि पस्स-भुजा ॥१६३॥

४८८ । ३३ ।

॥ वेयड्ढा समत्ता ॥

अर्थः— विजयाधंके पूर्व-पश्चिममे पार्श्वभुजाका प्रमाण चारसौ अठ्ठासी योजन और एक योजनके उन्नीस भागोमेसे तैत्तीसके आधे अर्थात् माटे सोलह भाग है ॥१६३॥

विशेषार्थः— विजयाधंके उत्तरका चाप $१०७४३\frac{३}{४}$ अर्थात् $१०५१\frac{३}{४}$ योजन और विजयाधंके दक्षिणका चाप $६७६६\frac{१}{४}$ अर्थात् $६५५१\frac{१}{४}$ योजन है । इन्हें परस्पर घटाकर अर्ध करनेपर $(\frac{२०४१३२}{१६} - \frac{१८५५५५}{१६} = \frac{१८५७७}{१६}) \times \frac{१}{२} = \frac{१८५७७}{३२}$ अर्थात् $४८८\frac{३३}{३२}$ योजन विजयाधंके पूर्व-पश्चिममे पार्श्व भुजाका प्रमाण है ।

॥ विजयाधंका वर्णन समाप्त हुआ ॥

भरतक्षेत्रकी उत्तर-जीवाका प्रमाण—

चोहस - सहस्स - जोयण - अउस्सया एक्कसत्तरी-जुत्ता ।

पंख - कलाओ एस, जीवा भरहस्स उत्तरे^२ भागे ॥१६४॥

। १४४७१ । १२ ।

अर्थः— भरतक्षेत्रके उत्तर-भागमे यह जीवा चौदह हजार चार सौ इकहत्तर योजन और एक योजनके उन्नीस भागोमेंसे पाँच भाग प्रमाण है ॥१६४॥

विशेषार्थः— जम्बूद्वीपका विस्तार १ लाख यो० बाण $५२६\frac{१}{४}$ योजन है ।

$$\begin{aligned}
 \text{जीवा} &= \left[४ \left\{ \left(\frac{१०००००}{२} \right)^२ - \left(\frac{१०००००}{२} - \frac{१००००}{१६} \right)^२ \right\} \right]^{\frac{१}{२}} \\
 &= \left[४ \left\{ \left(\frac{५०००००}{१} \right)^२ - \left(\frac{४९०००००}{१६} \right)^२ \right\} \right]^{\frac{१}{२}} \\
 &= \left[४ \left(\frac{२५००००००००}{१} - \frac{८८३६००००००००}{३६१} \right) \right]^{\frac{१}{२}} \\
 &= \left[४ \times \frac{१८६००००००००}{३६१} \right]^{\frac{१}{२}} \\
 &= \sqrt{\frac{७५६०००००००००}{३६१}} = \frac{२७४६५४}{१६} \text{ अर्थात् } १४४७१\frac{१०}{१६} \text{ योजन } \text{भरतक्षेत्रकी उत्तर-} \\
 &\text{जीवाका प्रमाण है ।}
 \end{aligned}$$

भरत क्षेत्रके धनुषका प्रमाण—

भरतहस्त चाषपुटं, पंच-सयम्भहिय-चउदस-सहस्ता ।
 अडवीस जोयणाइं, हवंति एक्कारस कलाओ ॥१६५॥

१४४२८ । ११ ।

अर्थ—भरतक्षेत्रका धनुषपुट चौदह हजार पाच सौ अट्टाईस योजन और एक योजनके उत्तरीय भागोमेंसे ग्यारह भाग प्रमाण है ॥१०५॥

विशेषार्थ—द्वयाम १ लाख योजन । वाग ५२६३० योजन ।

$$\begin{aligned}
 \text{धनुषपुट} &= \left[२ \left\{ \left(\frac{१०००००}{१} + \frac{५२६३०}{१६} \right)^२ - (१०००००)^२ \right\} \right]^{\frac{१}{२}} \\
 &= \left[२ \left\{ \left(१००५२६\frac{३०}{१६} \right)^२ - (१०००००)^२ \right\} \right]^{\frac{१}{२}} \\
 &= \left[२ \left\{ \left(\frac{१६१०००००}{१६} \right)^२ - (१०००००)^२ \right\} \right]^{\frac{१}{२}} \\
 &= \left[२ \left(\frac{३६४८१०००००००००}{३६१} - \frac{३६१०००००००००००}{१} \right) \right]^{\frac{१}{२}} \\
 &= \left[२ \times \frac{३८१०००००००००}{३६१} \right]^{\frac{१}{२}}
 \end{aligned}$$

$$= \sqrt{\frac{७६२००००००००}{३६१}} = \frac{२७६०४३}{१६} \text{ अर्थात् } १४५२८१\frac{१}{२} \text{ योजन भरतक्षेत्रके धनुष्य}$$

का प्रमाण है।

भरतक्षेत्रकी चूलिकाका प्रमाण—

जोयण - सहस्समेवकं, अट्ट - सया पंचहत्तरी - जुत्ता ।
तेरस - अट्ट - कलाओ, भरह - खिदी - चूलिया एसा ॥१६६॥

$$१८७५ । ३\frac{१}{२} ।$$

अर्थ:—यह भरतक्षेत्रकी चूलिका एक हजार आठ सौ पंचहत्तर योजन और एक योजनके उन्नीस भागोमेसे तेरहके आधे अर्थात् साडे छह भाग प्रमाण (१८७५ $\frac{३१}{२}$ यो०) है ॥१६६॥

विशेषार्थ:—[(भरतक्षेत्रकी उत्कृष्ट जीवा ३०५३ $\frac{१५}{२}$ — ३०३ $\frac{११}{२}$ लघु जीवा) × ३] = ३३ $\frac{३३}{२}$ × ३ = १८७५ $\frac{३१}{२}$ योजन भरतक्षेत्रकी चूलिकाका प्रमाण है ।

भरतक्षेत्रकी पार्श्वभुजाका प्रमाण—

एवक - सहस्सट्ट - सया, बाणउदी जोयणाणि भागा वि ।
पण्णारसट्ट एसा, भरहक्खेत्तस्स पस्स - भुजा ॥१६७॥

$$१८६२ । ३\frac{१}{२} ।$$

अर्थ:—भरतक्षेत्रकी पार्श्वभुजा एक हजार आठसौ वानवे योजन और एक योजनके उन्नीस भागोमेसे पन्द्रहके आधे अर्थात् साडे सात भाग (१८६२ $\frac{३१}{२}$ यो०) प्रमाण है ॥१६७॥

विशेषार्थ:—(भरतक्षेत्रका उत्कृष्ट धनुष ३०५३ $\frac{१५}{२}$ — ३०३ $\frac{११}{२}$ लघु ध०) × ३ = ३३ $\frac{३३}{२}$ × ३ = १८६२ $\frac{३१}{२}$ योजन भरतक्षेत्रकी पार्श्वभुजाका प्रमाण है ।

तालिका न० ५ अगले पृष्ठ पर देखिये

भारतक्षेत्र और विजयार्थ के ध्यास, जीवा, धनुष, बूलिका तथा पारसंधुजाका प्रमाण									
क्र०	नाम	ध्यास	उत्तर-जीवा	दक्षिण-जीवा	उत्तर धनुष	दक्षिण धनुष	बूलिका	पारसंधुजा	
१	भारतक्षेत्र	$\frac{५२६}{१९}$ यो०	(गा० १९४) $\frac{१४७१}{१९}$ यो०	$\frac{१०७६०}{१९}$ यो०	(गा० १९५) $\frac{१४५२८}{१९}$ यो०	$\frac{१०७११५}{१९}$ यो०	(गावा १९६) $\frac{१८७५१९}{१९}$ यो०	(गा० १९७) $\frac{१५८९३५}{१९}$ यो०	
२	विजयार्थ	(गा० १८१) ५० यो०	(गा० १८८) $\frac{११०७२०}{१९}$ यो०	(गा० १८५) $\frac{६७४८१२}{१९}$ यो०	(गा० १८६) $\frac{१०७४२१६}{१९}$ यो०	(गा० १८७) $\frac{१०९६११६}{१९}$ यो०	(गा० १९१) $\frac{४८५१७७}{१९}$ यो०	(गा० १९४) $\frac{४८८३३६}{१९}$ यो०	

पद्म-द्रहका विस्तार—

हिमवंताचल - मज्जे, पउम-बहो पुब्ब - पच्छिमायामो ।

पण - सय - जोयण - हं दो, तद्दुगुणायाम - संपुण्णो ॥१६८॥

५०० । १००० ।

अर्थ :—हिमवान् पर्वतके मध्यमे पूर्व-पश्चिम लम्बा पद्मसरोवर है । जो पांच सौ योजन विस्तार और इससे दुगुने आयामसे सम्पन्न है । अर्थात् ५०० योजन चौड़ा और १००० योजन लम्बा है ॥१६८॥

दस - जोयणावगाहो, चउ - तोरण-वेदियाहि संजुत्तो ।

तस्सि पुब्ब - विसाए, णिग्गच्छदि णिम्मगा गंगा ॥१६९॥

अर्थ :—यह दस योजन गहरा और चार तोरण एव वेदिकाओंसे सयुक्त है । इसकी पूर्व दिशासे गंगा नदी निकलती है ॥१६९॥

उद्गम स्थानमे गंगाका विस्तार—

छज्जोयणेक्क-कोसा, णिग्गद-ठाणम्मि होदि ^१वित्थारो ।

गंगा - ^२तरंगिणीए, ^३उच्छेहो कोस - दल - मेत्तो ॥२००॥

जो ६ । को १ । को ३ ।

अर्थ :—उद्गम स्थानमे गंगानदीका विस्तार छह योजन, एक कोस (६३ यो०) और ऊंचाई आधा (३) कोम प्रमाण है ॥२००॥

तोरणका विस्तार—

गंगा - णईए णिग्गम, ठाणे चिट्ठेदि तोरणो दिव्वो ।

पण - जोयणाणि तुंगो, दिवड्ढ - कोसादिरित्तो य ॥२०१॥

६ । ३ ।

१. क. ज. य. उ. वित्थारा । २. द. क. ज. य. उ. तरंगिणीए । ३. द. क. ज. य. उ. उच्छेदो व उच्छेदो ।

अर्थः—गंगा नदीके निर्गम स्थानमें नौ योजन और डेढ़ कोस अर्थात् ९ $\frac{१}{२}$ योजन ऊँचा दिव्य तोरण है ॥२०१॥

तोरण-स्थित जिनप्रतिमाएँ—

चामर - घंटा - किकिणि-बंधन-मालासएहि^१ कयसोहा ।

भिगार - कलस - दप्पण - पूजण - दब्बेहि रमणिज्जा ॥२०२॥

रयणमय-बंधन-जोजिद-बिचित्त-वर-सालभंजिया^२ - रम्मा ।

वज्जिदणील - मरगय - कक्केयण - पउमराय - जुदा ॥२०३॥

ससिकंत - सूरकंत - प्पमुह -^३मयूखेहि णासिय-तमोघा ।

लंबंत^४ - कणयदामा^५, अणादि - णिहणा^६ अणुबमाणा ॥२०४॥

छत्त-त्तयादि-सहिदा, वर रयणमईओ फुरिद-किरणोघा ।

सुर-खेयर-सहिदाओ, जिण-पडिमा तोरणुवरि णिवसंति ॥२०५॥

अर्थः—इस तोरणपर चामर, घण्टा, किकिणी (क्षुद्र घण्टिका) और संकडो वन्दन-मालाओसे शोभायमान, भारी, कलश, दपण तथा पूजा-द्रव्योंमें रमणीय, रत्नमय स्तम्भोपर नियोजित विचित्र और उत्तम पुतलिकाओसे सुन्दर; वज्र, इन्द्रनील, मरकत, कर्कतन एव पचराग मणियोंसे युक्त, चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त प्रमुख मणियोंकी किरणोंसे अंधकार समूहको नष्ट करनेवाली; लटकती हुई स्वर्णमालाओसे सुशोभित, अनादि-निघन, अनुपम, छत्र-त्रयादि सहित, उत्तम रत्नमय, प्रकाशमान किरणोंके समूहसे युक्त और देवो एव विद्याधारोंसे पूजित जिनप्रतिमाएँ विराजमान हैं ॥२०२-२०५॥

प्रासाद एव दिक्कन्या देवियाँ—

तम्हि सम-भूमि-भागे, पासादा विविह-रयण-कणयमया ।

वज्ज - कवाडेहि जुदा, चउ - तोरण - वेदिया - जुत्ता ॥२०६॥

१. द. ब. क. ज. य. उ. मालासहेदि । २. द. ब. क. उ. सालभद्वियारम्मी । ३. द. ब. क. ज. य. उ. मईखेहि । ४. द. ब. क. ज. उ. लंबद । ५. क. ज. य. उ. कणयदामो । ६. क. ज. य. उ. अणुबमाणा ।

अर्थः—वहाँ समभूमिभागमें विविधरत्नों एवं स्वर्णसे निर्मित वज्रमय कपाटों तथा चार तोरण एवं वेदिकासे युक्त प्रासाद हैं ॥२०६॥

एवेसु मंबिरेसु, होंति दिसा - कण्वयाओ देवीओ ।

बहु - परिवारानुगदा, चिरुवम - लावण्य - रुवाओ ॥२०७॥

अर्थः—इन प्रासादोंमें बहुत परिवारसे युक्त और अनुपम लावण्य-रूपको प्राप्त दिक्कन्या देवियाँ (रहती) हैं ॥२०७॥

कमलाकार कूट आदिका वर्णन—

पउम - बहादु दिसाए, पुब्वाए शोव - भूमिमेत्तम्मि ।

गंगा - जईण मज्जे, उब्भासदि पउम - चिहो कूडो ॥२०८॥

अर्थः—पद्मद्रहसे पूर्व दिशामें थोड़ीसी भूमिपर गंगा नदीके बीचमें कमलके सट्टा कूट प्रकाशमान है ॥२०८॥

वियसिय - कमलायारो, रम्मो वेहलिय-बाल-संजुत्तो ।

तस्स दला ^१अइरत्ता, पत्तेक्कं कोस - दलमेत्तं ॥२०९॥

अर्थः—खिले हुए कमलके आकारवाला वह रमणीय कूट वेदूर्य (मणि) की नालसे सयुक्त है। उसके पत्ते अत्यन्त लाल हैं। उनमेंसे प्रत्येकका विस्तार अर्ध (१) कोस प्रमाण है ॥२०९॥

सलिला दु उवरि उदओ, एक्कं कोसं हवेदि एदस्स ।

दो कोसा बित्थारो, चामीयर - केसरेहि संजुत्तो ॥२१०॥

अर्थः—पानीसे ऊपर इसकी ऊँचाई एक कोस तथा विस्तार दो कोस है। यह कमल स्वर्ण-मय परागसे सयुक्त है ॥२१०॥

इणि - कोसोदय - रुंदो, रयणमई तस्स कण्विया होदि ।

तोए उवर्णि चेट्ठदि, पासादो मणिमओ विब्बो^२ ॥२११॥

अर्थ :—उस कमलाकार कूटकी रत्नमय-कणिका एक कोस ऊँचो और इतने ही (एक कोम) विस्तारसे युक्त है । उसके ऊपर मणिमय दिव्य भवन स्थित है ॥२११॥

तप्पासादे^१ णिवसदि, बंतरदेवी बलेत्ति विक्खादा^२ ।

^३एकक - पलिदोवमाऊ, बहु - परिवारेहि संजुत्ता ॥२१२॥

अर्थ :—उस भवनमे बला (इम) नामसे प्रसिद्ध, एक पत्योगम प्रायुवाली और बहुत परिवारसे युक्त व्यन्तर देवी निवास करती है ॥२१२॥

गंगा नदीका वर्णन —

एव पउम - दहादो, पंच - सया जोयणाणि गंतूणं ।

गंगा-कूडमपत्ता^४, जोयण - अद्धेण दक्खिणावत्तिया ॥२१३॥

अर्थ :— इस प्रकार गङ्गा नदी पद्मद्रहसे पाँचमी योजन आगे जाकर और गंगाकूट तक न पहुँचकर उससे अर्धं योजन पहिले ही दक्षिण की ओर मुड़ जाती है ॥२१३॥

चुल्ल - हिमवंत - रुंदे, णदि-रुंदं^५ सोधिदूरा अद्धकदे ।

दक्खिण - भागे पव्वद - उवरिम्मि ह्वेवि णइ - दोहं ॥२१४॥

अर्थ :—क्षुद्र हिमवान्के विस्तारमेसे नदीके विस्तारको घटाकर अवशिष्टको आधा करने पर दक्षिण भागमे पर्वतके ऊपर नदीकी लम्बाईका प्रमाण प्राप्त होता है ॥२१४॥

विशेषार्थ :—हिमवान् पर्वतका विस्तार १०५२३३ योजन है और नदीका विस्तार ६३ योजन है । पर्वतके विस्तारमेसे नदीका विस्तार घटाने पर ($\frac{३०९००}{३५} = ८८३$) योजन अवशेष रहे । इनको आधा करनेपर ($\frac{४४३३}{२} = २२१६$) योजन हिमवान् पर्वतके ऊपर दक्षिण-भागमे गंगा नदीकी लम्बाईका प्रमाण प्राप्त होता है ।

पंच - सया तेवीसं, अट्टहदा^६ ऊणतीस - भागा य ।

दक्खिणदो प्रागच्छिय, गंगा गिरि - जिठ्ठिभयं पत्ता ॥२१५॥

। ५२३ । ३३ । ८ ।^७

१ द. व. क. ज. उ. तप्पासादा । २. द. व. क. ज. उ. विक्खादा । ३. व. एका ।
४. द. व. क. ज. उ. मपत्ता । ५. द. रुंदस्ताधिदूरा । ६. द. अट्टहिदा, व. क. ज. व. उ. अट्टहिदा ।

अर्थ — पाँचसौ तेईस योजन और आठसे गुणित (उन्नीस) अर्थात् एकसौ बावनमेंसे उनतीस भाग $(\frac{१०५२ \frac{१३}{१६} - ६ \frac{१}{४}}{२} = ५२३ \frac{२६}{१५२})$ प्रमाण दक्षिणसे आकर गङ्गा नदी पर्वतके तटपर स्थित जिह्मिकाको प्राप्त होनी है ॥२१५॥

हिमवंत-अंत-मणिमय-वर-कूड-मुहम्मि वसह - ह्वम्मि ।

पबिसिय णिवडइ 'धारा, दस-जोयण-वित्थरा य ससि-धवला ॥२१६॥

अर्थ :— हिमवान् पर्वतके अन्तमे वृषभाकार मणिमय उत्तम कूटके मुखमे प्रवेशकर गंगाकी चन्द्रमाके समान धवल और दस योजन विस्तारवाली धारा नीचे गिरती है ॥२१६॥

छ्ज्जोयणेक्क - कोसा, पणालियाए हवेदि विक्खंभो^१ ।

^२आयामो वे कोसा, तेत्तियमेत्तं^३ च बहलत्तं ॥२१७॥

॥ ६ । को १ । को २ । को २ ॥

अर्थ :— उम प्रणालीका विस्तार छह योजन और एक कोस (६३ योजन), लम्बाई दो कोस और वाहुत्य भी इतना (दो कोस) ही है ॥२१७॥

'सिग-मुह-कण्ण-जीहा-लोयण-भूवादिएहि^४ गो-सरिसो ।

वसहो त्ति तेण भण्णइ, रयणमई जीहिया तत्थ ॥२१८॥

अर्थ :— वह प्रणाली सीग, मुख, कान, जिह्वा, लोचन (नेत्र) और भृकुटि आदिकसे गौके सदृश है, इसीलिए उम रत्नमय जृम्भिकाको "वृषभ" कहते हैं ॥२१८॥

पण्णीस^५ जोयणाणि, हिमवंते तत्थ 'अंतरेदूणं ।

दस - जोयण - वित्थारे, गंगा - 'कुडम्मि णिवडदे गंगा ॥२१९॥

अर्थ :— वहाँ पर गंगा नदी हिमवान् पर्वतको पञ्चीस योजन छोड़कर दस योजन विस्तार वाले गङ्गाकुण्डमे गिरती है ॥२१९॥

१ क. ज. द. य. उ. दारा । २. क. ज. य. उ. विवसभा । ३. क. ज. य. उ. आयामा ।

४. व. क. उ. ततियमेत्त । ५. ज. य. तिह । ६. व. क. ज. य. उ. भूवाभोएहि वासरिसो । ७. व. पण्णीस ।

८. क. ज. य. उ. अंतरेदूणा । ९. द. व. क. ज. य. उ. कुडम्मि ।

पञ्चवीस - जोयणाइं, वाराए^१ मुहम्मि होदि^२ विक्खंजो ।

^३सम्मायसि - कत्तारो, एवं जियमा परुवेदि ॥२२०॥

। २५ ।

पाठान्तरं ।

अर्थः—घाराके मुखमे गया नदी का विस्तार पच्चीस योजन है । सम्मायणीके कर्ता डम (प्रकार) नियमसे निरूपण करते हैं ॥२२०॥

पाठान्तर ।

गंगाकुण्डका विस्तार आदि—

जोयण - सट्टी - रुदं, समवृत्तं अत्थि तत्त्व वर-कुंडं ।

दस - जोयण - उच्छेदं^४, मणिमय - सोबाण-सोहिल्लं ॥२२१॥

। ६० । १० ।

अर्थः—वहाँ पर साठ योजन विस्तार वाला, समवृत्त (गोल), दस-योजन गहरा और मणिमय सीढियोंसे शोभायमान उत्तम कुण्ड है ॥२२१॥

वासट्ठि जोयणाइं, दो कोसा होदि कुंड - वित्थारो ।

सम्मायसि - कत्तारो, एवं जियमा जिरुवेदि ॥२२२॥

। ६२ । को २ ।

पाठान्तरं ।

अर्थः—उस कुण्डका विस्तार बासठ योजन और दो कोस (६२३ यो०) है, सम्मायसीके कर्ता इस (प्रकार) नियमसे निरूपण करते हैं ॥२२२॥

पाठान्तर ।

१. क. वाराए, व. व. उ. वाराव । २. क. व. व. उ. विक्खंजा । ३. व. सम्मासि कत्तालय-
पण्डिय वा । व. संभावाने कत्तारो । व. क. व. उ. सम्मासिकत्तालय । ४. व. क. व. व. उ. उच्छेदं ।

द्वीप वर्णन -

चउ-तोरण-वेदि-जुदो, सो कुंडो तस्स होवि बहुमज्जे ।
दोदो रयण-विचित्तो, चउ-तोरण-वेदियाहि कयसोहो^१ ॥२२३॥

अर्थ :- वह कुण्ड चार तोरण और वेदिकासे युक्त है। उसके बहुमध्यभागमें रत्नोंसे विचित्र और चार तोरण एव वेदिकासे शोभायमान एक द्वीप है ॥२२३॥

दस-जोयण-उच्छेहो, सो जल-मज्जम्मि अट्ट-वित्थारो^२ ।
जल-उर्वारि दो कोसो, तम्मज्जे होवि बज्जमय-सेसो^३ ॥२२४॥

। १० । ८ । को २ ।

अर्थ :- वह द्वीप जलके मध्यमें दस योजन ऊंचा और आठ योजन विस्तार वाला तथा जलके ऊपर दो कोस (ऊंचा) है। इसके बीचमें एक वज्रमय शैल स्थित है ॥२२४॥

शैल एवं उसके ऊपर स्थित प्रामादका वर्णन-

मूले मज्जे उर्वारि, चउ-दुग-एक्का कमेण वित्थिण्णो^४ ।
दस-जोयण-उच्छेहो, चउ-तोरण-वेदियाहि कयसोहो^५ ॥२२५॥

। ४ । २ । १ । १० ।

अर्थ :- उस (शैल) का विस्तार मूलमें चार योजन, मध्यमें दो योजन और ऊपर एक योजन है। वह दस योजन ऊंचा और चार तोरण एव वेदिकासे शोभायमान है ॥२२५॥

तप्पव्वदस्स उर्वारि, बहुमज्जे होवि दिव्व - पासादो^६ ।
वर - रयण - कंचणमजो, गगाकुंडोत्ति षामेण ॥२२६॥

अर्थ :- उस पर्वतके ऊपर बहुमध्यभागमें उत्तम रत्नों एव स्वर्णसे निर्मित और गङ्गाकूट नामसे प्रसिद्ध एक दिव्य प्रासाद है ॥२२६॥

चउ - तोरणेहि जुत्तो, वर-वेदी-परिगदो^७ विचित्तयरो ।
बहुविह - जंत - सहस्सो, सो पासादो निरुवमाणो ॥२२७॥

१. क. ज. उ. सोहा । २. क. ज. य. उ. वित्थारा । ३. क. ज. य. उ. सेसा । ४. क. ज. य. उ. वित्थिण्णा । ५. क. ज. उ. सोहा । ६. क. ज. य. उ. पासादा । ७. द. व. क. य. उ. परिगदो । ८. क. ज. य. उ. वत्त ।

अर्थ :—वह प्रासाद चार तोरणोमे युक्त, उत्तम वेदीसे वेष्टित, अतिविचित्र, बहुत प्रकारके हजारों यंत्रो सहित और अनुपम है ॥२२७॥

मूले मऊभे उर्वारि, ति-दु-^१-एक-सहस्स-दंड-वित्यारो ।

दोष्णि - सहस्सोत्तुंगो, सो दीसदि कूड - संकासो ॥२२८॥

। ३००० । २००० । १००० । २००० ।

अर्थ :—वह प्रासाद मूलमे तीन (३०००) हजार, मध्यमे दो (२०००) हजार और ऊपर एक (१०००) हजार धनुष प्रमाण विस्तार युक्त है तथा दो (२०००) हजार धनुष प्रमाण ऊँचा होता हुआ कूट सदृश दिखता है ॥२२८॥

तस्सब्भंतर - रुंदो^२, पण्णासब्भहिय - सत्त - सय-दंडा ।

चालीस - चाव - वासं, असीदि - उदयं च तदारं ॥२२९॥

७५० । ४० । ८० ।

अर्थ :—उसका अभ्यन्तर विस्तार सातसौ पचास (७५०) धनुष है तथा द्वार चालीस धनुष विस्तारवाला एव अस्सी धनुष ऊँचा है ॥२२९॥

[तालिका ६ अगले पृष्ठ पर देखिये]

मणि-तोरण-रमणिज्जं, वर-वज्ज-कवाड-जुगल-सोहिल्लं ।

णाणाविह - रयणपहा - णिच्चुज्जोयं विराजदे दारं ॥२३०॥

अर्थ.—उसका द्वार मणिमय तोरणोसे रमणीय, उत्तम वज्रमय दो कपाटोसे शोभायमान और अनेक प्रकारके रत्नोंकी प्रभासे नित्य प्रकाशमान होता हुआ सुशोभित है ॥२३०॥

वर-वेदि-परिविखत्ते, चउ-गोउर-^१मंडितम्मि पासादे ।

रम्मुज्जाणे^२ तस्सि^३, गंगादेवी सयं वसइ ॥२३१॥

अर्थ :—उत्तम वेदीसे वेष्टित, चार गोपुरोसे मृशोभित तथा रमणीय उद्यानसे युक्त उम भवनमे स्वय गङ्गादेवी रहती है ॥२३१॥

गगाकट पर स्थित जिनेन्द्र प्रतिमाका स्वरूप—

भवणोवरि कूडम्मि य, जिण्णिद-पडिमाओ^४ सासद-ठिदीओ^५ ।

चेट्ठंति किरण - मंडल - उज्जोइद - सयल - आसाओ^६ ॥२३२॥

अर्थ—उस भवनके ऊपर कटपर किरण—समूहसे सम्पूर्ण दिशाओको प्रकाशित करनेवाली और शाश्वत स्थितिवाली अर्थात् अकृत्रिम जिनेन्द्र प्रतिमाएँ स्थित है ॥२३२॥

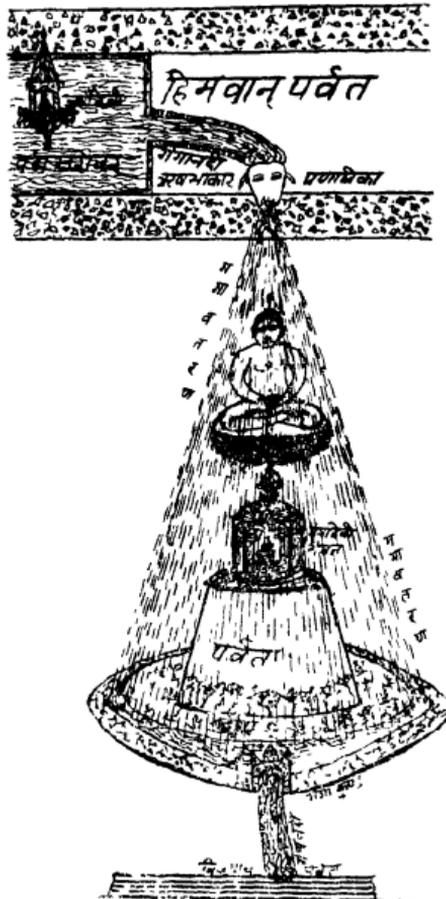
आदि-जिणप्पडिमाओ, ताओ जडा-मउड-सेहुरिल्लाओ^७ ।

पडिमावरिम्मि गंगा, अभिसित्तु - मणा व सा पडदि ॥२३३॥

अर्थ :—आदि जिनेन्द्रको वे प्रतिमाएँ जटा-मुकुटरूप शेखर सहित है । इन प्रतिमाओपर वह गगानदी मानो मनमे अभिषेककी भावना रखती हुई (ही) गिरती है ॥२३३॥

[चित्र ग्रन्थे पृष्ठ ५५ देखिये]

१ द मंदरम्मि । २ क. ज य उ. रम्मुज्जाणु । ३. क ज य. उ नासे । ४. द व क. उ. पडिमादि । ५. द. क. ज. रिदीओ, व. उ. रदीउ । ६. द यसओ, क. व. ज. उ दिसओ । ७. द. तोओजद मउड पासेहुरिल्लाओ । व. क. य. ज. उ. तोउज्जद मउड पासेहुरिल्लाओ । द. द. क. ज. य. अभिसित्तुमणप्पसा, व. उ अभिसित्तुमणप्पसा ।



१पुष्पिद-पकज-पीढा^२, कमलोवर-सरिस-वण्ण-वर-देहा ।
पढम-जिणप्पडिमाओ, ३भजंति जे ताण षंति णिव्वाणं ॥२३४॥

१ द. ब. क. ज. य. उ. पुष्पिद । २ ज. य. उ. पीढा । ३. द. क. ज. य. सरति ।

अर्थ :—आदि जिनेन्द्रकी वे प्रतिमाएँ खिले हुए कमलासनपर विराजमान हैं और कमलके उदर (मध्यभाग) सट्टे वर्षवाले उत्तम शरीरसे युक्त हैं । जो (भव्य जीव) इनकी उपासना करते हैं उन्हें ये निर्वाण प्रदान करनी हैं ॥२३४॥

गङ्गानदीका अवशेष वर्षान —

कुण्डस्स दक्षिणेषणं, तोरण - दारेण 'णिग्गदा गंगा ।

भूमि - विभागे 'बक्का, होद्वेष गदा य रजदगिरि ॥२३५॥

अर्थ :—गंगानदी इस (गंगा) कुण्डके दक्षिण तोरणद्वारसे निकलती हुई और भूमि-प्रदेशमें मुड़ती हुई रजनगिरि (विजयार्ध) को प्राप्त हुई है ॥२३५॥

रम्माआरा^३ गंगा, संकुलिदूरां पि दूरदो^४ एसा ।

विजयडडगिरि-गुहाए, 'पबिसदि 'खिदी - बिले भुजंगी ॥२३६॥

अर्थ :—यह गम्याकार गङ्गानदी दुग्से ही संकुचिन होती हुई विजयार्ध पर्वतकी गुफामें उसप्रकार प्रवेश करती है जैसे भुजगी (सर्पिणी) क्षितिबिल (बाँवी) में (प्रवेश करती है) ॥२३६॥

गंगा - तरंगिणीए, 'उभयत्तड - वेदियाण वण - संडा ।

अत्तुट्ट - सरुवेणं, 'संपत्ता रजद - सेलंतं ॥२३७॥

अर्थ :—गङ्गानदीकी दोनों ही तट-वेदियों पर स्थित वन-खण्ड अखण्डरूपसे रजत (विजयार्ध) पर्वत तक चले गये हैं ॥२३७॥

वर - वज्ज - कवाडाणं, संबरण - पवेसणाइ भोत्तूण ।

सेस - गुहब्भंतरये, गंगा - तड - वेदि - वण - संडा ॥२३८॥

अर्थ :—उत्तम वज्जमय कपाटोके सवरण और प्रवेशभागको छोड़कर गङ्गातटवेदी गम्बन्धी शेष वन खण्ड गुफाके भीतर हैं ॥२३८॥

१ य. शिग्गता । २ क. ज. य. उ. बक्को । ३. ब. उ. रम्मायाए, क. ज. य. रम्माआरा ।

४. क. ज. य. उ. दूरिदो । ५. द ब. क. ज. उ. परिडदि । ६. द ब. क. ज. य. उ. वेदाभिलेभुजगिद् ।

७. द क. ज. य. उ. उभयतर । ८ द. ब. क. ज. उ. सपत्तं, य. समत ।

स्वगिरिस्स^१ सुहाए, गमज - पवेसम्मि ह्वेदि वित्थारो ।
बंवातरंगिणीए, अट्टं चिय जोयणाणि पुढं ॥२३६॥

अर्थ :—रूप्याचल (विजयाचं) की मुफामें प्रवेश करनेके स्थानपर गङ्गानदीका विस्तार बाठ योजन प्रमाण हो जाता है ॥२३६॥

उन्मग्ना-निमग्ना नदियोंका स्वरूप—

विजयद्वदगिरि - सुहाए^२, संगंतूर्णं जोयणाणि पञ्चीसं^३ ।
पुब्बावरायदाओ^४, उम्मग्ग - ञिमग्ग - सरिजाओ ॥२४०॥

अर्थ :—विजयाचं पर्वतकी मुफामें पञ्चीस योजन जाने पर उन्मग्ना और निमग्ना ये दो नदियां पूर्व-पश्चिमसे आई हुई हैं ॥२४०॥

चिय-जलपवाह-पडिदं, दब्बं^५ गद्वं पि षेदि उवरित्तं ।
जम्हा तम्हा भण्णइ, उम्मग्गा बाहिणी एसा ॥२४१॥

अर्थ :—क्योंकि यह नदी अपने जलप्रवाहमें गिरे हुए भारीसे भारी द्रव्यको भी ऊपरी तटपर ले आती है, इसलिए यह नदी 'उन्मग्ना' कही जाती है ॥२४१॥

चिय-जल-भर-उवरि^६-गद्वं, दब्बं लहुगं पि षेदि हेट्टम्मि ।
जेजं तेजं भण्णइ, एसा सरिया ञिमग्ग स्ति ॥२४२॥

अर्थ :—क्योंकि यह अपने जलप्रवाहके ऊपर आई हुई हलकीसे हलकी वस्तुको भी नीचे ले जाती है, इसीलिए यह नदी 'निमग्ना' कही जाती है ॥२४२॥

१. ज. य गिरि । २. ट. क. ज. य. सुहामुं यंतूर्णं । ३. ज. क. य. पण्णोत्त, उ. पुञ्चीस ।
४. ब. पुब्बावरा सुदाओ, क. पुब्बावराणु बाओ । ५. य. ज. नरिमाओ । ६. क. गद्वं पि सोइ उवरिणि ।
ज. गद्वं पि षेदि उवरिणि । य. नुठवम्मि षेदि उवरम्मि । उ. गद्वं पिसो उवरिणि ।
७. ज. य. पवाह-पडिद ।

सेल - गुहा - कुंढासं, मणि - तोरणदार जिस्सरंतीघो ।

बद्धई^१-रयण-विणिम्मिय-संकम-पहुवीव^२ विच्छिण्णा ॥२४३॥

वण - वेदी - परिसिस्ता, पत्ते वकं दोष्णि जोयणायामा ।

वर - रयणमया गंगा - ञईए पवहम्मि पविसंति ॥२४४॥

अर्थ :- (ये दोनों नदियाँ) पर्वतीय गुफा-कुण्डोंके मणिमय तोरण द्वारोंसे निकलती हुई बद्धई (स्वपति) रत्नसे निर्मित संक्रम (एक प्रकारके पुल) आदिसे विभक्त, वन-वेदीसे वेष्टित, प्रत्येक (नदी) दो योजन प्रमाण आयाम सहित और उत्कृष्ट रत्नोंसे युक्त होती हुई गंगानदीके प्रवाहमें प्रवेश करती है ॥२४३-२४४॥

गंगाका विजयार्धसे निकलकर समुद्रप्रवेश आदि—

पण्णास - जोयणाइं, अहियं गंतूण पव्वय - गुहाए ।

दक्खिण - दिस - दारेणं, ^३सुभिदा भोगीव - णिगगदा गंगा ॥२४५॥

अर्थ :- गङ्गानदी पचास योजन अधिक जाकर पर्वतकी गुफाके दक्षिण दिशाके द्वारसे क्रोधित हुए सर्पके सदृश निकलती है ॥२४५॥

जिस्सरिट्ठुणं^४ एसा, दक्खिण-भरहम्मि^५ रुप्प-सेलादो ।

उणवीसन्महिय - सयं, आगच्छदि जोयणा अहिया ॥२४६॥

। ११६ । $\frac{3}{2}$ ।

अर्थ :- यह नदी विजयार्ध पर्वतसे निकलकर एकसी उन्नीस योजनोंसे कुछ अधिक दक्षिण-भरतमें आती है ॥२४६॥

विशेषार्थ :- भरतक्षेत्रका प्रमाण $५२६\frac{१}{२}$ योजन है । इससे ५० योजन विजयार्धका व्यास घटा देनेपर ($५२६\frac{१}{२} - ५०$) = $४७६\frac{१}{२}$ योजन अवशेष रहे । इसको आधा करनेपर ($४७६\frac{१}{२} \div २$) = $२३८\frac{१}{४}$ योजन दक्षिण भरतक्षेत्रका प्रमाण प्राप्त होता है । गङ्गानदी विजयार्धकी गुफासे निकलकर दक्षिण भरतके अर्धभाग पर्यन्त आई है अतः ($२३८\frac{१}{४} \div २$) = $११९\frac{१}{८}$ योजन आकर ही पूर्व दिशामें मुड़ जाती है ।

१. द. वत्त (पत्त) इ, क. ज. उ. बद्धई । २. क. ज. य. उ. विच्छिण्णा । ३. य. सुभिदा ।

४. द. क. ज. य. एसा । ५. द. ब. क. ज. य. उ. इंद ।

आगंतुश्च 'जियते, पुञ्च' - मुहे ^३मागहम्मि तित्थयरे ।

ओहस - सहस्स - सरिया - परिवारा पविसवे ^५उवहि ॥२४७॥

अर्थः—इस प्रकार गङ्गानदी दक्षिण भरतमें आकर और पूर्वकी ओर मुड़कर चौदह हजार प्रमाण परिवार नदियोंसे युक्त होती हुई अन्ततः मागघ तीर्थपर समुद्रमें प्रवेश करती है ॥२४७॥

गंगा - महाणदीए, अड्ढाइज्जेसु मेच्छ - संबेसु ।

कु'डज-सरि'-परिवारा, हुवंति ण हु ^६अज्ज-संडम्मि ॥२४८॥

अर्थः—कुण्डोंसे उत्पन्न हुई गङ्गा महानदीकी (ये) परिवार नदियाँ ढाई म्लेच्छखण्डोंमें ही हैं, धार्यखण्डमें नहीं हैं ॥२४८॥

बासट्ठि जोयणाइं, दोष्णि य कोसाणि वित्थरा गंगा ।

पण कोसा ^७गाढत्तं, उवहि - पवेसप्पदेसम्मि ॥२४९॥

अर्थः—समुद्र-प्रवेशके प्रदेशमें गङ्गाका विस्तार बासठ-योजन दो-कोस (६२३ यो०) और गहराई पांच कोस हो जाती है ॥२४९॥

तोरणोका सविस्तार वर्णन—

दीव-जगदीअ पासे, णइ-जिल'-वदधम्मि तोरणं दिव्वं ।

विविह-वर-रयण-खचिदं, खंभट्टिय-सालभंजिया-खिबहं ॥२५०॥

अर्थः—द्वीपकी वेदीके पास नदीबिलके मुसपर अनेक प्रकारके उत्तमोत्तम रत्नोंसे खचित और खम्भोंपर स्थित पुत्तलिकासमूहसे युक्त दिव्य तोरण है ॥२५०॥

खंभाखं उच्छेहो, तेणउदी जोयणाणि तिय कोसा ।

एवाण अंतरालं, बासट्ठी जोयणा ^८दुवे कोसा ॥२५१॥

। यो ६३ । को ३ । ६२ । को २ ।

१. द. व. क. ख. व. उ. सियतो । २. द. व. क. ख. व. पुञ्चमही । ३. य. ख. मागघम्मि ।
४. द. उवहि । ५. य. ख. सरिस । ६. क. ख. व. उ. इज्ज । ७. द. धागाढत्तं । ८. व. उ. छद्-विचवत्-
खम्मि । य. साइ-विसवणखम्मि । ९. व. दुरेकोसो । क. दुरे कोसा, ख. व. दुरे कोसे, व. दुरे कोसो, उ.
पुरे कोसा ।

अर्थ :—स्तम्भोंकी ऊँचाई तेरानवें योजन और तीन कोम (६३ ३/४ यो०) तथा इनका अन्तराल बासठ योजन और दो कोस (६२ १/२ यो०) है ॥२५१॥

छत्तसयादि-सहिदा^१, जिण्णव-पडिमाओ^२ तोरणवरिम्मि ।

चेट्टंति^३ सासदाओ, सुमरण - मेत्तेण दुरिद - हरा ॥२५२॥

अर्थ :—तोरण पर तीन छत्रादि (छत्र, भामण्डल और सिंहासन आदि) सहित तथा स्मरण मात्रसे ही पापोंका हरण करनेवाली जिनेन्द्र प्रतिमाएँ शाश्वतरूपमें स्थित हैं ॥२५२॥

वर-तोरणस्स उच्चरिं, पासादा होंति रयण-कणयमया ।

चउ - तोरण - वेदि - जुवा, वज्ज-कवाडुज्जल-दुवारा ॥२५३॥

अर्थ :—उत्कृष्ट तोरणके ऊपर चार तोरणों एव वेदीसे युक्त तथा वज्रमय कपाटोंसे उज्ज्वल द्वार वाले रत्नमय और स्वर्णमय भवन हैं ॥२५३॥

एदेषु मंदिरेसु^४, देवीओ दिक्कुमारि - णामाओ ।

णाणाविह - परिवारा, बेतरियाओ^५ बिराजंति ॥२५४॥

अर्थ :—इन भवनमें नानाप्रकारके परिवारसे युक्त दिक्कुमारी नामक व्यन्तरदेवियाँ विराजमान हैं ॥२५४॥

सिन्धु नदीका वर्णन—

पउम - 'दहादो पण्छिम-दारेणं णिस्सरेदि सिधु-णदी ।

तट्ठाण-वास-^६गाढो, तोरण-पहुवीसु^७ सुरणइ-सरिच्छा ॥२५५॥

अर्थ :—सिन्धु नदी पश्चिमद्वारेके पश्चिम द्वारसे निकलती है। इसके स्थानके विस्तार एवं अबगाह (गहराई) तथा तोरण आदिका कथन गङ्गानदीके सदृश है ॥२५५॥

१. द. क. ज. य. उ. सहिदो । २. य. उ. तोरणवरिम्मि । ३. द. व. क. ज. य. उ. सासदाओ । ४. द. व. उ. चोतोरण । ५. ज. य. बिराजंति । ६. द. ज. दहादु, य. दहाओ । ७. द. व. रादी, क. ज. य. उ. रादो । ८. द. व. पहुवीसुरणवि - सरिच्छा, क. ज. य. उ. पहुवी - सुरणवि - सारिच्छा ।

गंतूण थोवभूमि^१, सिंधू - मज्झम्मि होदि वर - कूडो ।
विलसिय - कमलायारो, रम्मो बेरलिय - रणल - जुदो ॥२५६॥

अर्थ :—थोड़ी दूर चलकर सिन्धु नदीके मध्यमे विकसित कमलके आकाररूप, रमणीय और वैदूर्यमणिमय नालसे युक्त एक उत्तम कूट (कमल) है ॥२५६॥

तत्स दला^२ अइरत्ता^३, दोह-जुदा^४ होति कोस-दल-मेत्त^५ ।
उच्छेहो सलिलादो, उवरि - पएसम्मि इगि-कोसो^६ ॥२५७॥

अर्थ :—जलके उपरिम भागमे इस कूटकी ऊंचाई एक कोस है । इसके पत्ते अत्यन्त लाल है एवं प्रत्येक पत्ता अर्ध कोम प्रमाण लम्बाईसे युक्त है ॥२५७॥

बे कोसा^७ वित्थिणो, तैत्तिय-मेत्तोदएण संपुणो ।
वियसत - पउम - कुमुमोवमाण - संठाण-सोहिल्लो^८ ॥२५८॥

अर्थ :—(उपयुक्त) कमलाकार कूट दो कोस विस्तीर्ण है एवं इतनी ही (दो कोस) ऊंचाईसे परिपूर्ण यह कूट विकसित कमल-पुष्प सदृश आकारसे शोभायमान है ॥२५८॥

इगि-कोसोदय^९ - रुंदा, रयणमई^{१०} कण्णिया य अदिरम्मा ।
तोए उवरि विच्चित्तो, पासादो होदि रमणिज्जो ॥२५९॥

अर्थ :—उस कूटकी कणिका एक कोस ऊंची, एक कोस चौड़ी तथा रमणीय एवं रत्नमयी है । उसके ऊपर अद्भुत एव अति रमणीय प्रासाद है ॥२५९॥

वर-रयण-कंचणमओ, फुरंत-किरणोघ-णासिय^{११} तमोघो ।
सो उत्तुंगसोरण - दुवार-सुं'बेर^{१२} - सुट्ठ - सोहिल्लो ॥२६०॥

१. य. भूमि । २. द. ब. क. ज. य. उ. तला । ३. ब. ज. क. य. उ. अइरित्ता । ४. क. ज. य. उ. जुदो । ५. द. क. ज. य. उ. उच्छेहा । ६. द. क. उ. कोसा । य. ज. कोसं । ७. क. ज. य. उ. विच्छिणो । ८. ब. क. ज. उ. तत्तिय, य. तत्तिय । ९. ज. य. सोहिल्ला । १०. द. ब. कोसं बे, ज. य. उ. कोसदय । ११. द. ब. क. उ. कण्णिया य धीरम्मा, ज. कण्णियाय धीरंमा, य. कण्णियया धीरम्मा । १२. द. पुंणासिअंत, ब. क. ज. उ. पणासिअतमो, य. पुणासिअत । १३. द. ब. य. सुं'दार, क. उ. सं'दर, ज. सुवरा ।

अर्थ :—उत्तम रत्नों एवं स्वर्णसे निर्मित, प्रकाशमान किरणोंसे युक्त तथा अंधकार समूहकी नष्ट करने वाला यह प्रासाद उन्नत तोरणद्वारोंके सौन्दर्यसे भले प्रकार शोभायमान है ॥२६०॥

तस्मिन् गिल्लए णिवसइ, लवणा णामेण 'बेंतरा - देवी ।

एकक - पल्लिवोवमाऊ^१, गिरुवम - लावण - परिपुण्णा ॥२६१॥

अर्थ :—उस भवनमें एक पल्योपम आयुवाली और अनुपम लावण्यसे परिपूर्ण लवणा नामकी व्यन्तरदेवी रहती है ॥२६१॥

पउम - दहादो पणुसय - मेत्ताई जोयणाइ गंतूणं ।

सिधू - कूडमपत्ता^२, दु - कोसमेत्तेण दक्खिणावल्लिदा^३ ॥२६२॥

उभय-तड-वेदि-सहिदा, उववण-संडेहि सुटठु सोहिल्ला ।

गंग व्व पडइ सिधू, जिब्भादो सिधु - कूड-उवरिम्मि ॥२६३॥

अर्थ :—पद्मद्रहसे पांचसौ योजन प्रमाण आगे जाकर, सिन्धुकूटको प्राप्त न होती हुई और उससे दो कोस पहिले ही दक्षिणकी ओर मुड़ती हुई, दोनो तटोपर स्थित वेदिका सहित तथा उपवन खण्डोसे भले प्रकार शोभायमान सिन्धु नदी गङ्गा नदीके समान जिह्निकासे सिन्धुकूटके ऊपर गिरती है ॥२६२-२६३॥

कुंडं 'दीवो 'सेलो, भवणं भवणस्त उवरिमं कूडं ।

तस्मिन् जिणपडिमाओ, सव्वं पुव्वं व वत्तव्वं ॥२६४॥

अर्थ :—कुण्ड, द्वीप, पर्वत, भवन, भवनके ऊपर कूट और उसके ऊपर जिनप्रतिमाएँ इन सबका कथन पहिलेके समान ही करना चाहिए ॥२६४॥

णवरि विसेसो एसो, सिधूकूडम्मि सिधुदेवि त्ति ।

बहुपरिवारेहि जुदा, उवभुजदि बिबिह-सोक्खाणि^४ ॥२६५॥

अर्थ :—विशेषता केवल यह है कि सिन्धुकूटपर बहुत परिवार सहित सिन्धुदेवी विविध सुखोका उपभोग करती है ॥२६५॥

गंगाणई व सिधू, विजयइड - गुहाअ उत्तर - दुवारे ।

पविसिय वेदी - जुत्ता, दक्खिण - दारेण गिस्सरदि ॥२६६॥

१. य. ज. वितरा । २. क. ज. य. उ. पल्लिवोवमाओ । ३. द. क. ज. य. उ. मपसो ।

४. क. उ. बसिदो । ५. क. उ. दीवा । ६. क. य. उ. वेला । ७. द. व. क. ज. य. उ. सोक्खाणि ।

अर्थ :—गङ्गा नदीके सहस्र सिन्धु नदी भी विजयाधंकी गुफाके उत्तर द्वारसे प्रवेशकर वेदी सहित दक्षिण द्वारसे निकलती है ॥२६६॥

दक्षिण-भरहृत्सद्धं, पाबिय पच्छिम-प्रभास-तित्थम्मि ।

चोहस - सहस्स - सरिया, परिवारा पबिसए उर्वाहि ॥२६७॥

अर्थ :—पश्चात् दक्षिण भरतके अर्धभागको प्राप्त कर चौदह हजार परिवार-नदियों सहित पश्चिम (दिशा स्थित) प्रभास तीर्थपर समुद्र मे प्रवेश करती है ॥२६७॥

तोरण - उच्छेहादी, गंगाए वणिग्गवा जहा पुब्बं ।

तस्सव्वा सिधूए, वत्तव्वा णिउण - बुद्धीहि ॥२६८॥

अर्थ :—जिस प्रकार पहले गङ्गानदीके वर्णनमे तोरणोंकी ऊँचाई आदिका विवेचन किया जा चुका है, उसीप्रकार बुद्धिमानोंको उन सबका कथन यहाँ भी कर लेना चाहिए ॥२६८॥

भरतक्षेत्रके खण्ड विभाग—

गंगा - सिधु - णईहि^३, वेयड्ड - णणेण^५ भरहृत्तम्मि ।

छक्खंडं संजादं, ताण विभागं परूवेमो ॥२६९॥

अर्थ :—गंगा एवं सिन्धु नदी और विजयाधं पर्वतसे भरतक्षेत्रके जो छह खण्ड हुए हैं, अब उनके विभागोंका प्ररूपण करता हूँ ॥२६९॥

उत्तर-दक्षिण-भरहे^१, खंडाणि तिण्णि होंति पत्तेक्कं ।

दक्षिण-तिय-खंडेसु, अज्जा - खंडो सि मज्झिल्लो ॥२७०॥

अर्थ :—उत्तर और दक्षिण भरतक्षेत्रमें प्रत्येक क्षेत्रके तीन-तीन खण्ड हैं । दक्षिण-भरतके तीन-खण्डोंमें मध्यवर्ती खण्ड आर्यखण्ड है ॥२७०॥

१. द. व. य. उत्सेहादी। २. द. व. सस्सब्बं, क. ज. व. उ. सस्सब्ब। ३. द. व. क. व. व. उ. णईहिं। ४. द. एणे। ५. द. व. क. ज. व. उ. णणेणो। ६. य. व. खंडाणि। ७. द. व. क. व. उ.

सेसा वि पंच खंडा, नामेषं ह्येति 'मेच्छखंड स्ति ।

उत्तर - तिय - खंडेषु, मञ्जुसु, मञ्जुसु - खंडस्तु बहु-मञ्जु ॥२७१॥

बककोष माण-मबणो, जाणा-बकहर-गाम-संखणो^१ ।

मूलोवरि - मञ्जुसु, रयणमजो होदि बसहगिरी ॥२७२॥

अर्थः—शेष पांचांही खण्ड म्लेच्छखण्ड नामसे प्रसिद्ध है । उत्तर-भरतके तीन खण्डोंमें मध्यवर्ती खण्डके बहुमध्यभागमें चक्रवर्तियोंके मानका मर्दन करनेवाला, नाना चक्रवर्तियोंके नामोंसे बंकि (आच्छादित), मूल, मध्य एवं शिखरमें सर्वत्र रत्नमय वृषभगिरि है ॥२७१-२७२॥

वृषभगिरिका वर्णन--

जोयण - सय - मुज्विद्धो, पञ्चुबीसं जोयणाणि अवगाढो ।

एक^३-सय - मूल-रुं दो^४, पणत्तरि मञ्जु - वित्थारो ॥२७३॥

। १०० । २५ । १०० । ७५ ।

अर्थः—यह पर्वत सौ (१००) योजन ऊंचा, पञ्चीस (२५) योजन प्रमाण नीववाला, मूलमें सौ (१००) योजन और मध्यमें पचहत्तर (७५) योजन विस्तारवाला है ॥२७३॥

पण्णास - जोयणाइं, 'वित्थारो होदि तस्तु सिहरम्मि ।

मूलोवरि - मञ्जुसु, चेदुंते वेदि - वण - संडा ॥२७४॥

अर्थः—वृषभगिरिका विस्तार शिखरपर पचास योजन प्रमाण है । इसके मूलमें, मध्यमें और ऊपर वेदियां एवं वनखण्ड स्थित हैं ॥२७४॥

चउ-त्तोरभेहि 'जुत्ता, 'पोक्खरिणी-वावि-कूव-परिपुण्णा ।

वज्जिज्जदणोल - मरगय - कक्केयण - पउमरायमया ॥२७५॥

ह्येति हु वर - पासादा, विचित्त-विण्णास-मणहरायारा ।

द्विप्यंत - रयण - दीवा, बसह - गिरिदस्तु सिहरम्मि ॥२७६॥

वर-रयण-कंचणमया, जिणभवणा विविह-सुंइरायारा ।

चेदुंति वण्णाजाओ, पुब्बं पिव ह्येति सञ्जाओ ॥२७७॥

१. द. मेच्छखंडम्मि । २. द. ज. सखण्णो । ३. द. एकस्तय । ४. क. ब. उ. वथा ।

५. व. वित्थारा । ६. द. व. क. व. व. उ. जुत्तो । ७. द. क. व. य. उ. बोक्खरणी ।

अर्थः—वृषभगिरीन्द्रके शिखर पर चार तोरणों सहित, पुष्करिणियों, बावड़ियों एवं कूपोंसे परिपूर्ण; वज्र, इन्द्रनील, मरकत, कर्कतन और पथराग मणि-विशेषोंसे निर्मित; विचित्र रचनाओंसे मनोहर आकृतिको धारण करने वाले और दैदीप्यमान रत्न-दीपकोंसे युक्त उत्तम भवन हैं तथा उत्तम रत्नों एवं स्वर्णसे निर्मित विविध सुन्दर आकारोंवाले जिनभवन स्थित हैं। इनका (अन्य) सब वर्णन पूर्व वर्णित प्रासादों एवं जिनभवनोंके सदृश है ॥२७५-२७७॥

गिरि - उबरिम - पासावे, वसहो जामेण अंतरो वेधो ।

विबिह-परिवार-सहिदो, उबभुजवि विबिह-सोक्खाइं ॥२७८॥

अर्थः—वृषभनामका व्यन्तरदेव इस पर्वतके उपरिम भवनमें अपने विविध परिवार सहित अनेक प्रकारके सुखोंका उपभोग करता है ॥२७८॥

एक - पलिदोवमाऊ, दस-चाव-पमाण-देह-उच्छेहो ।

पिबुवच्छो' दोहसुजो, एसो सव्वंग - सोहिल्लो ॥२७९॥

। छत्रबंदं गदं ।

अर्थः—यह देव एक पत्योपम आधु सहित, दस धनुष प्रमाण शरीर की ऊँचाई वाला है। विस्तृत-वक्षःस्थल और लम्बी भुजाओंवाला यह देव सर्वाङ्ग सुन्दर है ॥२७९॥

। छह खण्डोंका वर्धन समाप्त हुआ ।

कालका स्वरूप एवं उसके भेद

तस्सि अज्जा - लंडे, जाणा - मेदेहि संजुदो कालो ।

बट्टइ तस्स सरुवं, बोच्छामो आणुपुब्बोए ॥२८०॥

अर्थः—उस आर्यखण्डमें नाना भेदोंसे संयुक्त कालका प्रवर्तन होता है, उसके स्वरूपको अनुक्रमसे कहता है ॥२८०॥

कास-रस-गंध-वर्णोहि^३ विरहिदो अणुस्तु-भुण-भुत्तो ।

बट्टए - लक्खण - कलियं, कास - सरुवं इमं होदि ॥२८१॥

१. द. वसुबंधो, व. क. उ. बट्टवसो, ज. व. वसुबंधो । २. द. व. क. व. उ. दिहवुंजो ।

३. द. व. क. व. उ. वण्णोवदि ।

अर्थः—स्यञ्चं, रस, गन्ध और वर्णं रहित, अगुरुलघुगुरु सहित और वर्तनालक्षण युक्त ऐसा कालका स्वरूप है ॥२८१॥

कासस्त दो वियप्या, भुक्साभुक्सा ह्वन्ति एवेसु^१ ।

मुक्साधार - बलेचं, अमुक्स - कालो पवट्टेदि ॥२८२॥

अर्थः—कालके मुख्य (निश्चय) और अमुख्य (व्यवहार) इस प्रकार दो भेद हैं । इनमेंसे मुख्य कालके आश्रयसे अमुख्य (व्यवहार) कालकी प्रवृत्ति होती है ॥२८२॥

जोबास पुगलाणं, ह्वन्ति परिवट्टणाइ बिबिहाइं ।

एदाणं पन्जाया, वट्टते मुक्स - काल - आघारे ॥२८३॥

अर्थः—जीवों और पुद्गलोंमें विविध परिवर्तन हुआ करते हैं । इनकी पर्यायें मुख्य-काल आश्रयसे प्रवर्तती हैं ॥२८३॥

सव्वाच पयत्थाणं, णियमा परिणाम - पहुवि-विस्तीओ ।

बहिरंतरंग - हेइ^२ हि, सव्वग्गेवेसु वट्टति ॥२८४॥

अर्थः—सर्व पदार्थोंके समस्त भेदोंमें नियमसे बाह्य और अभ्यन्तर निमित्तोंके द्वारा परिणामादिक (परिणाम, क्रिया, परत्वापरत्व) वृत्तियाँ प्रवर्तती हैं ॥२८४॥

बाहिर-हेइ^३ कहिदो, णिच्छय-कालो त्ति सव्वदरिसीहिं ।

अन्ततरं णिमित्तं, णिय णिय दव्वेसु चेट्ठेदि ॥२८५॥

अर्थः—सर्वज्ञदेवने निश्चय कालको सर्व पदार्थोंके प्रवर्तनेका बाह्य निमित्त कहा है । अभ्यन्तर निमित्त (स्वयं) अपने-अपने द्रव्योंमें स्थित है ॥२८५॥

कालस्साण-भिण्णा, ^३अण्णोण्ण - पवेसणेण परिहीणा ।

पुह पुह लोयायासे, चेट्ठे ^४संचएण विणा ॥२८६॥

अर्थः—अन्योन्य-प्रवेशसे रहित कालके भिन्न-भिन्न अणु संचयके विना लोकाकाशमें पृथक्-पृथक् स्थित हैं ॥२८६॥

१. क. ब. म. उ. हेइहि । २. क. ब. म. उ. कहिदा । ३. क. उ. अणुण, ब. अणुणा, म. अणुणा । ४. ब. म. पण्यएण ।

समऊणेषक - मुहत्तं, भिण्णमुहत्तं मुहत्तया तीसं ।
दिवसो पण्णरसेहि, दिवसेहि एक - पक्खो^१ हु ॥२६१॥

अर्थ :—समय कम एक मुहूर्तको भिन्नमुहूर्त कहते हैं । तीस मुहूर्तका एक दिन और पन्द्रह दिनोका एक पक्ष होता है ॥२६१॥

दो पक्खेहि मासो, मास - दुगेणं उडू उडुत्तिवयं ।
अयणं अयण - दुगेणं, वरिसो पंच - वच्छरेहि जुगं ॥२६२॥

अर्थ :—दो पक्षोका एक मास, दो मासोकी एक ऋतु, तीन ऋतुओका एक अयन, दो अयनोका एक वर्ष और पांच वर्षोका एक युग होता है ॥२६२॥

माघादी^२ होंति उडू, सिसिर-वसंता णिदाघ-पाउसया ।
सरओ हेमंता वि य, णामाई ताण जाणिज्जं ॥२६३॥

अर्थ :—माघ माससे प्रारम्भ कर जो ऋतुएँ होती है उनके नाम शिशिर, वसन्त, निदाघ (ग्रीष्म), प्रावृष (वर्षा), शरद् और हेमन्त, इस प्रकार जानने चाहिए ॥२६३॥

^३बेण्णि जुगा दस वरिसा, ते दस-गुणिदा हवेदि वास-सदं ।
^४एवस्सि दस - गुणिदे, वास - सहस्सं वियाणेहि ॥२६४॥

अर्थ :—दो युगोके दस वर्ष होते हैं, इन दस वर्षोको दससे गुणा करने पर शत (सौ) वर्ष और शतवर्षको दससे गुणा करने पर सहस्र (हजार) वर्ष जानना चाहिए ॥२६४॥

दस वास-सहस्साण, वास - सहस्सम्मि दस-हदे^५ होंति ।
^६तेहि दस - गुणिदेहि, लक्खं णामेण णादक्खं ॥२६५॥

अर्थ :—सहस्र वर्षको दससे गुणा करनेपर दस-सहस्र वर्ष और इनको भी दससे गुणा करने पर लक्ष (लाख) वर्ष जानने चाहिए ॥२६५॥

१. द. ब. क. ज. य. उ. पक्खा । २. क. उ. मायादी । ३. क. वेण्णि, ज. य. दोष्णि, उ. क्षेप्पि ।
४. ब. एदेस्सि, क. य. एदस्सि । ५. ज. य. हद । ६. ज. य. तिहि ।

तालिका : ७

आवलीसे लक्ष पर्यन्त व्यवहार कालकी परिभाषाएँ

१. असख्यात समय = १ आवली ।
२. संख्यात आवली (या ३३३३३ सेकेण्ड) = १ उच्छ्वास ।
३. ७ उच्छ्वास (या ५११११ सेकेण्ड) = १ स्तोक ।
४. ७ स्तोक (या ३७३३३ सेकेण्ड) = १ लव ।
५. ३८३ लव (या २४ मिनट) = १ नाली ।
६. २ नाली (या ४८ मिनट) = १ मुहूर्त ।
७. [१ मुहूर्त — १ समय = भिन्नमुहूर्त]
८. ३० मुहूर्त (या २४ घण्टा) = १ दिनरात ।
९. १५ दिन = १ पक्ष ।
१०. २ पक्ष = १ मास ।
११. ३ मास = १ ऋतु ।
१२. ३ ऋतु = १ अयन (६ मास) ।
१३. २ अयन = १ वर्ष ।
१४. ५ वर्ष = १ युग ।
१५. २ युग = दश वर्ष ।
१६. १० × १० वर्ष = शत वर्ष ।
१७. शत × १० = मद्रस्य वर्ष ।
१८. सहस्र × १० = दस सहस्र वर्ष ।
१९. १० सहस्र × १० = लक्ष वर्ष ।

पूर्वाङ्गसे अक्षलात्म पर्यन्त कालाशोका प्रमाण -

चलसीदि - हृदं लक्षं, पुब्बंगं तस्स वग्ग परिमाणं ।

पुब्बं सत्तरि कोडी, लक्ष्सा छप्पण्ण तह सहस्साणि ॥२६६॥

७०५६०००००००००० ।

अर्थः—एक लाख वर्षको चौरासीसे गुणा करनेपर एक 'पूर्वाङ्ग' और इसका वर्ग करनेपर प्राप्त हुए ७०५६०००००००००० को 'पूर्वका' प्रमाण जानना चाहिए ॥२६६॥

विशेषार्थः—(१) १००००० वर्ष \times ८४ = ८४००००० वर्षका एक पूर्वाङ्ग । (२) ८४ लाख \times ८४ लाख = ७०५६०००००००००० वर्षका एक पूर्व ।

पुव्वं चउत्सीदि - हव्वं, पव्वंगं होदि तं पि गुणिवव्वं ।

चउत्सीदी - लक्खेहि, जाव्वा पव्व परिमाणं ॥२६७॥

अर्थः—पूर्वको चौरासीसे गुणा करनेपर एक 'पूर्वाङ्ग' होता है और इस पूर्वाङ्गको चौरासी लाखसे गुणा करनेपर एक 'पूर्वका' प्रमाण कहा गया है ॥२६७॥

(३) एक पूर्व \times ८४ = ५६२७०४ \times १० शून्य प्रमाण वर्षका एक पूर्वाङ्ग ।

(४) एक पूर्वाङ्ग \times ८४ लाख = ४६७८७१३६ \times १५ शून्य प्रमाण वर्षका एक पूर्व ।

पव्वं चउत्सीदि - हव्वं, णउदंगं होदि तं पि गुणिवव्वं ।

चउत्सीदी - लक्खेहि, णउदस्स' पमाणमुद्दिट्ठं ॥२६८॥

अर्थः—पूर्वको चौरासीसे गुणा करनेपर एक 'न्युताङ्ग' होता है और इसको चौरासी लाखसे गुणा करनेपर एक 'न्युत' का प्रमाण कहा गया है ॥२६८॥

विशेषार्थः—(५) एक पूर्व \times ८४ = ४१८२११६४२४ \times १५ शून्य प्रमाण वर्ष का एक न्युताङ्ग । (६) एक न्युताङ्ग \times ८४ लाख = ३५१२६८०३१६१६ \times २० शून्य प्रमाण वर्षका एक न्युत ।

णउदं चउत्सीदि - हव्वं, कुमुदंगं होदि तं पि गुणिवव्वं ।

चउत्सीदि - लक्ख - वासेहि^२ कुमुदं णामं समुद्दिट्ठं ॥२६९॥

अर्थः—चौरासीसे गुणित न्युत-प्रमाण एक 'कुमुदाङ्ग' होता है । इसको चौरासी लाख वर्षसे गुणा करनेपर 'कुमुद' नाम कहा गया है ॥२६९॥

विशेषार्थः—(७) एक न्युत \times ८४ = २६५०६०३४६५७४४ \times २५ शून्य प्रमाण वर्षका एक कुमुदाङ्ग । (८) एक कुमुदाङ्ग \times ८४ लाख = २४७८७५६६११०८२४६६ \times २५ शून्य प्रमाण वर्षका एक कुमुद ।

कुमुदं चउसीदि हवं, पउमंगं होदि तं पि गुणिदब्बं ।

चउसीदि - लक्खवासे, पउमं णामं समुद्दिट्ठं ॥३००॥

अर्थ :- चौरासीसे गुणित कुमुद-प्रमाण एक 'पद्माङ्ग' होता है । इसको चौरासी लाख वर्षोंसे गुणा करनेपर 'पद्म' नाम कहा गया है ॥३००॥

विशेषार्थ :- (६) एक कुमुद $\times ८४ = २०८२१५७४८५३०६२६६६४ \times २५$ शून्य प्रमाण एक पद्माङ्ग । (१०) एक पद्माङ्ग $\times ८४$ लाख = $१७४६०१२२८७६५६८०६१७७६ \times ३०$ शून्य प्रमाण वर्षोंका एक पद्म ।

पउम चउसीदि - हवं, णलिणंगं होदि तं पि गुणिदब्बं ।

चउसीदि - लक्खवासे, णलिणं णामं वियाणाहि ॥३०१॥

अर्थ :- चौरासीसे गुणित पद्म-प्रमाण एक 'नलिनाङ्ग' होता है । इसको चौरासी लाख वर्षोंसे गुणा करनेपर 'नलिन' नाम जानना चाहिए ॥३०१॥

विशेषार्थ :- (११) एक पद्म $\times ८४ = १४६६१७०३२१६३४२३६७०६१८४ \times ३०$ शून्य प्रमाण वर्षोंका एक नलिनाङ्ग । (१२) एक नलिनाङ्ग $\times ८४$ लाख = $१२३४१०३०७०१७२७६१३-५५७१४५६ \times ३५$ शून्य प्रमाण वर्षोंका एक नलिन ।

णलिणं चउसीदि - गुणं, कमलंगं णाम तं पि गुणिदब्बं ।

चउसीदी - लक्खेहि, कमलं णामेण णिद्दिट्ठं ॥३०२॥

अर्थ :- चौरासीसे गुणित नलिन प्रमाण एक 'कमलाङ्ग' होता है । इसको चौरासीलाखसे गुणा करने पर 'कमल' नामसे कहा गया है ॥३०२॥

विशेषार्थ :- (१३) एक नलिन $\times ८४ = १०३६६४६५७८६४५११६५३८८००२३०४ \times ३५$ शून्य प्रमाण वर्षोंका एक कमलाङ्ग । (१४) एक कमलाङ्ग $\times ८४$ लाख = $८७०७८३१२६३१३-६००४१२५६२१६३५३६ \times ८०$ शून्य अर्थात् ६७ अक प्रमाण वर्षोंका एक कमल ।

कमलं चउसीदि - गुणं, तुडिदंगं होदि तं पि गुणिदब्बं ।

चउसीदी - लक्खेहि, तुडिदं णामेण णादब्बं ॥३०३॥

अर्थ :—कमलसे चौरासी-गुणा 'त्रुटिताङ्ग' होता है । इसको चौरासी-लाखसे गुणा करने-पर 'त्रुटित' नाम समझना चाहिए ॥३०३॥

बिसेषाचं :—(१५) एक कमल \times ८४ = ७३१४५७८२६१०३६७६३४६५७७४४२५७०२४ \times ४० शून्य प्रमाण वर्षोंका एक त्रुटिताङ्ग । (१६) एक त्रुटिताङ्ग \times ८४ लाख = ६१४४२४५७३६-२७०८८१३११२५०५१७५६००१६ \times ४५ शून्य अर्थात् ७६ अंक प्रमाण वर्षोंका एक त्रुटित ।

तुडिदं चउत्सीदि-हृवं, 'अडडंगं' होदि तं पि मुखिबव्वं ।

चउत्सीदी - लक्खेहि, अडडं रामेण गिहिदुं ॥३०४॥

अर्थ :—चौरासीसे गुणित त्रुटित-प्रमाण एक 'अटटाङ्ग' होता है । इसके चौरासीलाखसे गुणित होने पर अटट (इस) नामसे कहा गया है ॥३०४॥

बिसेषाचं :—(१७) एक त्रुटित \times ८४ = ५१६११६६४२०६८७५४०३०१४५०४३४७७-५६१३४४ \times ४५ शून्य अर्थात् ७६ अंक प्रमाण वर्षोंका एक अटटाङ्ग । (१८) एक अटटांग \times ८४ लाख = ४३३५३७६७६३६२६५३३८५३२१८३६५२११५१५२८६६ \times ५० शून्य प्रमाण वर्षोंका एक अटट ।

अडडं चउत्सीदि - गुणं अममं चं होदि तं पि मुखिबव्वं ।

चउत्सीदी - लक्खेहि, अममं रामेण गिहिदुं ॥३०५॥

अर्थ :—चौरासीसे गुणित अटट-प्रमाण एक 'अममाण' होता है । इसको चौरासीलाखसे गुणा करने पर 'अमम' नामसे निर्दिष्ट किया गया है ॥३०५॥

बिसेषाचं :—(१६) एक अटट \times ८४ = ३६४१७१६०२६६४८८०८४३६७०३४२६७७-७६७२८४३२६४ \times ५० शून्य प्रमाण वर्षोंका एक अममाण । (२०) एक अममाण \times ८४ लाख = ३०५६०४६६८२३८५६६६०८६८३०८७८४६३२४५१८८३४१७६ \times ५५ शून्य प्रमाण वर्षोंका एक अमम ।

अममं चउत्सीदि - गुणं, 'हाहंगं' होदि तं पि मुखिबव्वं ।

चउत्सीदी - लक्खेहि, हाहा नामं^३ समुदिदुं ॥३०६॥

अर्थ:- चौरासीसे गुणित 'अमम' प्रमाण एक हाहाग होता है। इसको चौरासी लाखसे गुणा करनेपर 'हाहा' नामसे कहा गया है ॥३०६॥

विशेषार्थ:- (२१) एक अमम $\times ८४ = २५६९५६६९४५२०३३६६२३२६३७६३७६३५-३२५६५८२०७०७८४ \times ५५$ शून्य प्रमाण वर्षोंका एक हाहांग । (२२) एक हाहांग $\times ८४$ लाख = $२१५८४६१४३३६७०८५५३५५६६७८६७८६४८३३३८०४८६३६४५८५६ \times ६०$ शून्य प्रमाण वर्षोंका एक हाहा ।

हाहा-चउसीदि - गुणं, हूहंगं होदि तं पि गुणिदन्वं ।

चउसीदी - लक्खेहि, हूह - णामस्स परिमाणं ॥३०७॥

अर्थ:- हाहाको चौरासीसे गुणा करनेपर एक 'हूहंग' होता है। इसको चौरासीलाखसे गुणा करने पर 'हूह' नामक कालका प्रमाण होता है ॥३०७॥

विशेषार्थ:- (२३) एक हाहा $\times ८४ = १८१३१०७६०४५३५५१८४६७६१००६००६-४६०३६६१००६१४५१६०४ \times ६०$ शून्य प्रमाण वर्षोंका एक हूहांग । (२४) एक हूहांग $\times ८४$ लाख = $१५२३०१०३६७८०६८३५३८६५६२४७५६५४२६७३२७३३१६८१६५६६३६ \times ६५$ शून्य प्रमाण वर्षोंका एक हूह ।

हूह चउसीदि - गुणं, एकक - सतदंगं हवेदि गुणिदन्वं ।

चउसीदी - लक्खेहि, परिमाणमिणं सदा - ञामे ॥३०८॥

अर्थ:- चौरासीसे गुणित हूहका एक 'सताग' होता है। इसको चौरासीलाखसे गुणा करनेपर 'सता' नामक प्रमाण उत्पन्न होता है ॥३०८॥

विशेषार्थ:- (२५) एक हूह $\times ८४ = १२७९३२८७२५७६०२६१८५२७२५७६७६५४६-५८४५५४६५८६१२८४६३४६२४ \times ६५$ शून्य अर्थात् ११४ अंक प्रमाण वर्षोंका एक सताग । (२६) एक सताग $\times ८४$ लाख = $१०७४६३६१२६६३८६१६६५६२८६६४५०८२१६५१०२६१६५२३४७६०६३-०८४१६ \times ७०$ शून्य अर्थात् १२१ अंक प्रमाण वर्षोंका एक सता ।

चउसीदि - हव - सदाए, महासदंगं हवेदि गुणिदन्वं ।

चउसीदी - लक्खेहि, महासदा ञाममुद्धुं ॥३०९॥

अर्थ :—चौरासीसे गुणित लता-प्रमाण एक 'महालतांग' होता है। इसको चौरासीलाखसे गुणा करनेपर 'महालता' नाम कहा गया है ॥३०९॥

वितोषार्थ :—(२७) एक लता $\times ८४ = ६०२६४३४८८६४४०७६३२८३३०१८६६०१-$
 $८६८६१६७८७६७२२४३८१६०६६४४ \times ७०$ शून्य प्रमाण वर्षोंका एक महालतांग। (२८) एक
 महालतांग $\times ८४$ लाख = $७५८२६३२५३०७३०१०२४११५७९७३५६६६७५६९६४०६२१८६६६८-$
 ४८०८०१८३२६६×७५ शून्य प्रमाण वर्षोंका एक महालता।

चउत्सोद-लकल-गुणिदा^१, महालतादो हवेदि^२ सिरिकम्प^३ ।

चउत्सोद - लकल - गुणिदं, तं हृत्पहेलिनदं नाम ॥३१०॥

अर्थ :—चौरासीलाखसे गुणित महालता-प्रमाण एक 'श्रीकल्प' होता है। इसको चौरासी-लाखसे गुणा करनेपर 'हस्तप्रहेलिन' नामक प्रमाण उत्पन्न होता है ॥३१०॥

वितोषार्थ :—(२९) एक महालता $\times ८४$ लाख = $६३६९४१३२५८१३२८६०२५७२६-$
 $६७७६८७७६५८४९५१२२३६३२१५२३८७३३६६६६४ \times ८०$ शून्य प्रमाण वर्षोंका एक श्रीकल्प
 होता है। (३०) एक श्रीकल्प $\times ८४$ लाख = $५३५०३०५५१३६८३१६०२६१६१०६६१५०६७४८५-$
 $१३८४२२८१०३००८००५३७७३३३६५७६ \times ८५$ शून्य प्रमाण वर्षोंका एक हस्तप्रहेलित होता है।

हृत्पहेलिनद - नामं, गुणिदं चउत्सोद - लकल - बासेहि^४ ।

अचलप्य^५ - नामधेओ, कालं^६ कालानुवेदि - जिह्दि^७ ॥३११॥

अर्थ :—चौरासी लाख वर्षोंसे गुणित हस्तप्रहेलित-प्रमाण एक 'अचलात्म' नामका काल होता है, ऐसा कालानुधोके जानकार अर्थात् सर्वज्ञदेवने निर्दिष्ट किया है ॥३११॥

वितोषार्थ :—(३१) एक हस्तप्रहेलित $\times ८४$ लाख = $४४६४२५६६३१४६३८५६१६७-$
 $५२६५६६८१८८७५१६२७५१६०६५२६७२४५१६६६०२७२३८४ \times ९०$ शून्य प्रमाण वर्षोंका एक
 अचलात्म नामका कालांश होता है।

एकलतोस - ट्वाणे, चउत्सोदि पुह पुह हुवेद्वं^८ ।

अज्जोण्य - हूदे लद्धं, अचलप्यं होदि^९ अउदि-सुण्णं^{१०} ॥३१२॥

८४।३१।६०।

१. च. व. बुखिदं। २. व. सिरिकं, व. क. च. उ. सिरिकं। ३. व. अचलप्यं नाम धो। ४.
 १. अचलप्यनामधेओ। ५. व. कालात् हवेदि, व. कालानु हवेदि। ६. व. व. व. जिह्दि। ७. व. कलपी।

अर्थः—पृथक्-पृथक् इकतीस (३१) स्थानोंमें चौरासी (८४) को रखकर और उनका परस्पर गुणा करके आगे नब्बे शून्य रखनेपर 'अचलात्म' का प्रमाण प्राप्त होता है ॥३१२॥

विशेषार्थः— $८४^{३१} \times ६०$ शून्य = अचलात्म नामक कालाय । अर्थात् १५० अंक प्रमाण वर्षोंका एक अचलात्म होता है ।

एवं 'एसो कालो, संखेज्जो वच्छराण गणणाए ।
उक्कत्सं संखेज्जं, 'जावं तावं 'पवत्तेओ ॥३१३॥

अर्थः—इसप्रकार वर्षोंकी गणना द्वारा जहाँ तक उत्कृष्ट संख्यात प्राप्त हो वहाँ तक इस संख्यात कालको ले जाना चाहिए अर्थात् ग्रहण करना चाहिए ॥३१३॥

वयण :

एत्थ उक्कत्स-संखेज्जय^१-जाण-णमित्तं जंबूदीव-वित्थारं सहस्स-
जोयण उब्बेध^२ - पमाणां च चत्तारि - सरावया^३ कादब्बा ।
सलागा पडिसलागा महासलागा एदे तिण्णि वि अबट्ठिदा^४
चउत्थो 'अणवट्ठिदो । एदे सन्वे पण्णाए ठविदा ।

अर्थः—यहाँ उत्कृष्ट संख्यात जाननेके निमित्त जम्बूद्वीप सहस्र (एक लाख योजन) विस्तारवाले और एक हजार योजन प्रमाण गहरे चार गड्ढे करने चाहिए । इनमें शलाका, प्रति-शलाका एव महाशलाका ये तीन गड्ढे अवस्थित तथा चौथा गड्ढा अनवस्थित है । ये सब गड्ढे बुद्धिसे स्थापित किए गए हैं ।

एत्थ चउत्थ-सरावय-अब्भंतरे दुबे सरिसवे त्थुदे तं जहण्णं संखेज्जयं जावं ।
एवं पढम-वियप्यं । तिण्णि सरिसवे 'च्छुद्धे अजहण्णमणुक्कत्स-संखेज्जयं । एवं सरावए^{१०}
पुण्णे^१ एवमुत्तरि मज्झिम-वियप्यं ।

१ क. एव सो । २. द. व. क. ज. य. उ. जावलतीवं । ३. व पव्वत्त उ. व. पवत्तेषो ।
४. क. ज. य. उ. संखेज्जय । ५. द. व. क. ज. य. उ. उब्बेद । ६. द. व. क. ज. य. उ. सरावय ।
७. क. व. व. उ. अणवट्ठिदो । ८. क. ज. य. उ. अणवट्ठिदा । ९. द. व. त्थुदे । १०. द. क. व. य. उ.
सरावयो । ११. द. व. क. ज. य. उ. पुण्णो ।

अर्थ :—इनमेसे चौथे (अनवस्था नामक) कुण्डके भीतर सरसोंके दो दाने डालनेपर वह जघन्य संख्यात होता है। संख्यातका यह प्रथम विकल्प है। तीन सरसों डालने पर अजघन्यानुकृष्ट (मध्यम) संख्यात होता है। इसीप्रकार एक-एक सरसों डालने पर उस (अनवस्था) कुण्डके पूर्ण होने तक (यह) तीनसे ऊपर सब मध्यम संख्यातके विकल्प होते हैं।

पुणो भरिद^१-सराबया देओ वा हाणओ वा हत्थे घेतूण दीवे समुद्दे एक्केवकं सरिसव^२ देउ^३। सो गिण्ठिदो तक्काले सलाय - अउभंतरे एग-सरिसओ^४ च्छुद्धो। जम्हि सलाया^५ समत्ता तम्हि सरावओ^६ वड्ढो वेयव्वो।

अर्थ :—पुनः सरसोंसे (पूर्ण) भरे हुए इस कुण्डमेसे देव अथवा दानव हाथमे (सरसों) ग्रहणकर क्रमशः (एक-एक) द्वीप और समुद्रमे एक-एक सरसों देता जाय; इसप्रकार जब वह (अनवस्था) कुण्ड समाप्त (खाली) हो जाय, तब (उस समय) शलाका कुण्डके भीतर एक सरसों डाला जाय। जहाँ (जिस द्वीप या समुद्र) पर प्रथम कुण्डकी शलाका^७ समाप्त हुई हों उस द्वीप या समुद्रकी सूचीप्रमाण उम अनवस्था कुण्डको बढ़ा दे।

तं भरिदूण हत्थे घेतूण दीवे समुद्दे गिण्ठिवव्वा^१। जम्हि गिण्ठिवं तम्हि सरावयं वड्ढा-वेयव्वं। सलाय-सरावए दोणिण^२ सरिसवे च्छुद्धे।

अर्थ :—पुनः उस (नवीन बनाये हुए अनवस्था कुण्ड) को सरसोंसे भरकर पहलेके ही सदृश (उन्हे) हाथमे ग्रहण कर क्रमशः आगे (आगे) के द्वीप और समुद्रमे एक-एक सरसों डालकर उन्हे पूरा कर दे। जिस द्वीप या समुद्रमे इस कुण्डके सरसों पूर्ण हो जावे उसकी सूची-व्यास बराबर पुनः (नवीन) अनवस्थाकुण्डको बढ़ावे और शलाका कुण्डोंमे एक दूसरा सरसों डाल दें।

बिरोध :—[इसीप्रकार बढ़ते हुए व्यासके साथ हजार योजन गहराईवाले उतनेबार अनवस्था कुण्ड बन जाएँ, जितने कि प्रथम अनवस्था कुण्डमे सरसों थे, तब एक बार शलाका कुण्ड भरेगा। एक बार शलाका कुण्ड भरेगा तब एक सरसों प्रतिशलाका कुण्डमें डालकर शलाका कुण्ड खाली कर दिया जायगा तथा जिस द्वीप या समुद्रकी सूची व्यास सदृश अनवस्था कुण्ड बने उससे आगेके द्वीप-समुद्रोंमे एक-एक दाना डालते हुए जहाँ सरसों पुनः समाप्त हो जाए वहाँसे लेकर जम्बू-

१. ज. व. भरदि। २. द. व. क. उ. देय, ज. य. देइ। ३. द. धूवा, व. त्थुदो। ४. व. क. ज. य. उ. सम्मत्ता। ५. द. व. क. ज. य. उ. सरावउ वड्ढारेयंतु। ६. क. ज. गिण्ठिवव्वा। ७. द. व. व. सरिसवत्थुदे।

द्वीप पर्यन्त नवीन अनवस्था कुण्ड बनाकर भरा जाएगा तब एक दाना शलाका कुण्डमें डाला जाएगा । पुनः उस नवीन अनवस्था कुण्डके सरसो ग्रहणकर आगे-आगेके द्वीप समुद्रोंमें एक-एक दाना डालते हुए जहाँ सरसों समाप्त हो जाय, उतने व्यास वाला अनवस्था कुण्ड जब भरा जायगा तब शलाका कुण्डमें एक दाना और डाला जाएगा । इसप्रकार करते हुए जब पुनः नवीन-नवीन (वृद्धिगत) व्यासको लिए हुए प्रथम अनवस्था कुण्डकी सरसोंके प्रमाण बराबर नवीन अनवस्था कुण्ड बन चुकेगे तब शलाकाकुण्ड भरेगा और दूसरा दाना प्रतिशलाका कुण्डमें डाला जाएगा ।

इसप्रकार बढ़ते हुए क्रमसे जितने सरसों प्रथम अनवस्था कुण्डमें थे, उनके वर्ग प्रमाण जब अनवस्था कुण्ड बन चुकेगे तब शलाकाकुण्ड उतने ही सरसों प्रमाण बार भरेगा तब एक बार प्रतिशलाका कुण्ड भरेगा और एक दाना महाशलाका कुण्डमें डाला जाएगा । इसप्रकार क्रमशः वृद्धिगत होनेवाला अनवस्थाकुण्ड जब प्रथम अनवस्थाकुण्ड की सरसोंके घन प्रमाण बार बन चुकेगे तब प्रथम अनवस्था कुण्डकी सरसोंके वर्ग प्रमाण बार शलाका कुण्ड भरे जायेंगे, तब प्रथम अनवस्था कुण्डकी सरसों प्रमाण बार प्रतिशलाका कुण्ड भरेगे और तब एक बार महाशलाका कुण्ड भरेगा ।

मानलो !—प्रथम अनवस्थाकुण्ड सरसोंके १० दानोंसे भरा था, अतः बढ़ते हुए व्यासके साथ १० अनवस्था कुण्डोंके बन जाने पर एक बार शलाका कुण्ड भरेगा तब एक दाना प्रतिशलाका-कुण्डमें डाला जाएगा । इसीप्रकार वृद्धिगत व्यासके साथ १० के वर्ग (१०×१०) = १०० अनवस्था-कुण्ड बन जानेपर १० बार शलाका कुण्ड भरेगा तब एक बार प्रतिशलाका कुण्ड भरेगा और तब एक दाना महाशलाका कुण्डमें डाला जाएगा ।

इसीप्रकार बढ़ते हुए व्यासके साथ १० के घन ($१० \times १० \times १०$) = १००० अनवस्था कुण्ड बन जाने पर १० के वर्ग (१०×१०) = १०० बार शलाका कुण्ड भरेगा तब १० बार प्रतिशलाका कुण्ड भरेगा और तब एक बार महाशलाका कुण्ड भरेगा ।]

[कुण्डों का चित्र अगले पृष्ठ पर देखिये]



एवं सलाय-सरावया 'पुष्पा, पडिसलाय-सरावया 'पुष्पा, महासलाय-सरावया पुष्पा । जह दीव-समुद्दे तिष्णि^१ सरावया पुष्पा तस्संखेज्ज-दीव-समुद्द-वित्थरेण सहस्स-जोयणागाहेण^२ (सरावये) सरिसवं भरिदे तं उक्कस्स - संखेज्जयं अदिच्छिन्नूणं^३ जहण्ण-परिसासंखेज्जयं गंतूण जहण्ण-असंखेज्जअं पडिदं । तवो^४ एगरूवमवणोदे जादमुक्कस्स-संखेज्जयं । जम्हि जम्हि संखेज्जयं^५ मग्गिज्जदि तम्हि तम्हि अजहण्णमणुक्कस्संखेज्जयं घेत्तवं । तं कस्स विसओ ? चोद्दस्स-पुण्विस्स ।

अर्थ : - इसप्रकार शालाकाकुण्ड पूर्ण हो गये, प्रतिशालाका कुण्ड पूर्ण हो गये और महा-शालाका कुण्ड पूर्ण हो गया । जिस द्वीप या समुद्रमे ये तीनों कुण्ड भर जाएँ उतने सख्यात द्वीप-समुद्रोके विस्तार स्वरूप और एक हजार योजन गहरे गड्ढेको सरसोसे भर देने पर उत्कृष्ट संख्यातका अतिक्रमण कर जघन्यपरीतासख्यात जाकर जघन्य असख्यात प्राप्त होता है । उसमेसे एक रूप कम कर देनेपर उत्कृष्ट सख्यातका प्रमाण होता है । जहाँ-जहाँ संख्यात खोजना हो वहाँ वहाँ अजघन्यानु-त्कृष्ट (मध्यम) सख्यात ग्रहण करना चाहिए । यह किसका विषय है ? यह चौदह पूर्वके ज्ञाता श्रुतकेवलीका विषय है ।

१. द. ब. क. ज. य. उ. पुष्पो । २. क. ज. य. उ. तिष्णि सरावया पुष्पो, जह दीव-समुद्दे संखेज्ज-दीव-समुद्द-वित्थरेण । ३. क. ज. य. उ. नदेण । ४. द. अदिच्छि । ५. क. ज. य. उ. तदा ।
६. द. क. ज. य. संखेज्जयं घेत्तवं ।

उक्कस्स-सख-मज्झे, इगि-समय-जुडे 'जहण्णयमसंखं ।

तत्तो असंख - कालो, उक्कस्स - असंख - समयत्तं ॥३१४॥

अर्थ :—उत्कृष्ट सख्यातमे एक समय मिलानेपर जघन्य असंख्यात होता है । इसके भागे उत्कृष्ट असंख्यात प्राप्त होने तक असंख्यात काल है ॥३१४॥

जं तं असंखेज्जयं तं तिविहं, परित्तासंखेज्जयं, जुत्तासंखेज्जयं, असंखेज्जा-संखेज्जयं वेदि । जं तं परित्तासंखेज्जयं तं तिविहं, जहण्ण - परित्तासंखेज्जयं, अजहण्ण-मणुक्कस्स-परित्तासंखेज्जयं, उक्कस्स-परित्तासंखेज्जयं वेदि । जं तं जुत्तासंखेज्जयं तं तिविहं, जहण्ण-जुत्तासंखेज्जयं, अजहण्णमणुक्कस्स-जुत्तासंखेज्जयं, उक्कस्स-जुत्तासंखेज्जयं वेदि । जं तं असंखेज्जासंखेज्जयं तं तिविहं^१, जहण्ण-असंखेज्जासंखेज्जयं, अजहण्णमणुक्कस्स-असंखेज्जासंखेज्जयं, उक्कस्स-असंखेज्जासंखेज्जयं वेदि ।

अर्थ :—जो यह असंख्यात है वह तीन प्रकार है—परीतासंख्यात, युक्तासंख्यात और असंख्यातासंख्यात । जो यह परीतासंख्यात है वह तीन प्रकारका है—जघन्य-परीतासंख्यात, अजघन्या-नुत्कृष्ट-परीतासंख्यात और उत्कृष्ट-परीतासंख्यात । जो यह युक्तासंख्यात है वह भी तीन प्रकार है—जघन्ययुक्तासंख्यात, अजघन्यानुत्कृष्ट-युक्तासंख्यात और उत्कृष्ट-युक्तासंख्यात । जो यह असंख्यातासंख्यात है, वह भी तीन प्रकार है—जघन्य असंख्यातासंख्यात, अजघन्यानुत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात और उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात ।

जं तं जहण्ण-परित्तासंखेज्जयं तं विरत्तेदूण^२ एककेक्कस्स खवस्स जहण्ण परित्तासंखेज्जयं 'दादूण अण्णोण्णभत्थे कडे उक्कस्स-परित्तासंखेज्जयं 'अविच्छेदूण जहण्ण-जुत्तासंखेज्जयं गंतूण^३ पडिदं । तदो एगरूवे अवणीदे जावं उक्कस्स-परित्तासंखेज्जयं ।

जम्हि जम्हि आबलिया 'एक्कज्ज तम्हि तम्हि जहण्णजुत्तोसंखेज्जयं धेत्तम्बं ॥

१ द म जहण्णाइमसख, व क. ज. य उ छ जहण्णाइमसख । २ क. ज. य उ य तं । ३ व. उ. विविध । ४ द. विरलोदूण । ५ क उ दोदूण । ६ द. धदलिच्छेदूण, व उ. धाविच्छेदूण, क. धाविच्छेदूण, ज धावलिच्छेदूण । ७ व क उ. पहिदत्तादो, ज. पहिदत्तादा । ८ द. व. क. ज. उ. धप्रियावज्ज ।

अर्थ :—जो यह जघन्य परीतासंख्यात है उसका विरलन कर एक-एक अंक पर (वही) जघन्यपरीतासंख्यात देय देकर परस्पर गुणा करनेसे उत्कृष्ट परीतासंख्यातका उल्लंघनकर जघन्य-युक्तासंख्यात प्राप्त होता है। (जो आवली मटश है।) अर्थात् आवलीके समय जघन्य-युक्तासंख्यात प्रमाण है।

जहाँ-जहाँ एक आवलीका अधिकार हो वहाँ-वहाँ जघन्य-युक्तासंख्यात ग्रहण करना चाहिए।

अं तं जहण्य-जुचासंखेज्जयं तं सयं वगिदो उक्कस्स-जुत्तासंखेज्जयं 'अदिच्छिदूण जहण्यमसंखेज्जासंखेज्जयं गंतूण पडिदं । तदो एग-रूब-अवणीदे जादं उक्कस्स-जुत्ता-संखेज्जयं ।

अर्थ :—जो यह जघन्य-युक्तासंख्यात है, उसका एक बार वर्ग करने पर उत्कृष्ट-युक्ता-संख्यातका उल्लंघनकर जघन्य-असंख्यातासंख्यात प्राप्त होता है। इससे एक अंक कम कर देनेसे उत्कृष्ट-युक्तासंख्यात प्राप्त होता है।

तदा जहण्यमसंखेज्जासंखेज्जयं दोप्पडि-रासिं कादूण एग-रासि-सलाय^१-पमाणं ठविय एग-रासिं विरलेदूण^३ एक्केक्कस्स^२ रूबस्स एग-पुंज-पमाणं^४ दादूण अण्णोण्णमत्थं करिय सलाय-रासिदो एग-रूबं^५ अवणेदव्वं । पुणो वि उप्पण्णरासिं विरलेदूण एक्केक्कस्स रूबस्स तमेव उप्पण्णरासिं दादूण अण्णोण्णमत्थं^६ कादूण सलाय-रासिदो 'एगरूबमवणे-दव्वं । एदेण कमेण सलाय-रासी णिट्ठिदा ।

अर्थ :—इसके बाद जघन्य-असंख्यातासंख्यातकी दो प्रतिराशियाँ कर उनसे एक राशिको शलाका प्रमाण स्थापित करके और एक राशिका विरलन करके एक-एक अंकके प्रति एक-एक पुञ्ज-प्रमाण देकर परस्पर गुणा करके शलाका राशिसे एक अंक कम कर देना चाहिए। इसप्रकार जो राशि उत्पन्न हो उसको पुनः विरलन कर एक-एक अंकके प्रति उसी उत्पन्न राशिको देय देकर और परस्पर गुणा करके शलाका राशिसे एक अंक और कम कर देना चाहिए। इसी क्रमसे शलाका राशि समाप्त हो गई।

१. क. उ. अधिच्छिदूणं अ. अधिच्छेदूणं । २. द. सलायममाण, ब उ सलायासणाम, क. ज. सलायासमाण । ३. द. विरलोदूण । ४. क. अ. य. उ एक्केक्कं सरूबस्स । ५. क. ज. य. उ. समाण । ६. क. अ. उ. अवणीदव्वं । ७. द. ब. क. अ. उ. अण्णोण्णमंतप्पो । ८. द. व. एयरूब ।

शिष्टिय-सद्वर्धन्तर-रासि बुप्पडिरासि कादूष एय-पुंजं सलायं ठविय एयपुंजं
विरलिवूष एककेकस्तस रूपस्त उप्यञ्ज-रासि दादूष । अण्णोञ्जन्मत्त्वं कादूष सलाय-
रासिदो एयरुवं अवणेदव्वं । एदेण सरुवेण विदिय-सलाय-पुंजं समत्तं ।

अर्थः—उस राशिकी समाप्तिके अनन्तर उत्पन्न हुई राशिकी दो प्रतिराशियाँ करें।
उनमेंसे एक पुंज शलाका रूपसे स्थापित कर और एक पुंजका विरलन कर, एक-एक अंकके प्रति
उत्पन्न (हुई) राशिकी देय देकर परस्पर गुणा करनेके पश्चात् शलाका राशिकीसे एक अंक कम
करना चाहिए। इस प्रक्रियासे द्वितीय शलाका राशि समाप्त हो गई।

समाप्तकाले उप्यञ्ज-रासि बुप्पडि-रासि कादूष एयपुंजं सलायं ठविय एयपुंजं
विरलिवूष एककेकस्तस रूपस्त उप्यञ्ज-रासि-पमाजं दादूष अण्णोञ्जन्मत्त्वं कादूष सलाय-
रासिदो एयरुवं अवणेदव्वं । एदेण कमेण तदिय-पुंजं विट्ठिदं ।

अर्थः—(द्वितीय शलाका राशिके) समाप्ति कालमें उत्पन्न राशिकी दो प्रतिराशियाँ
करें। उनमेंसे एक पुंज शलाका रूप स्थापित करें और एक पुंजको विरलित कर एक-एक अंकके
प्रति उत्पन्न राशिकी देय देकर परस्पर गुणा करनेके पश्चात् शलाका-राशिकीसे एक अंक कम कर
देना चाहिए। इस क्रमसे तृतीय पुंज समाप्त हो गया।

एवं कदे उक्कस्त-असंसेज्जासंसेज्जयं ष पावदि । धम्मावम्म लोयायासं
एगजीव-पवेसा । असारि वि लोणागास-भेसा, पत्तेम-सरीर-बादर-पदिट्ठिमा^१ एदे वो वि
किचूष सायरोधमं विरलीदूष विभंगदादूष अण्णोञ्जन्मत्त्वं कदे रासि-पमासं होवि ।
एवेदे^२ असंसेज्जरासीघो पुंविबल-रासिस्त उवरि पक्खिविदूष पुव्वं व तिण्णिवार-
वगिगद-संबगिगे कदे उक्कस्त-असंसेज्जासंसेज्जयं^३ ष उप्यञ्जदि ।

अर्थः—ऐसा करनेपर भी उत्कृष्ट-असंख्यातासंख्यात प्राप्त नहीं होता। (असंख्यात प्रदेशी)
(१) धर्मद्रव्य, (२) अधर्मद्रव्य (३) लोकाकाश और (४) एक जीव, इन चारोंके प्रदेश नोकाकाश
प्रमाण हैं। तथा (५) प्रत्येक शरीर (अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति स्वरूप यह जीव राशि एक जीवके
प्रदेशोंसे असंख्यात गुणी है) और (६) बादर प्रतिष्ठित, (प्रनिष्ठित प्रत्येक वनस्पति स्वरूप यह

१ क. ज. उ. एककोकस्तसुवं । २ द. व. एवक्यस्तस । ३ द. ज. क. ज. उ. कदो ।

४ क. व. उ. लोयायासा । ५ क. ज. उ. पदिट्ठिमं । ६ द. व. क. ज. उ. क्खिक पदे । ७ द. क.
असंसेज्जासंसेज्जदो ।

जीवराशि प्रत्येक धरीद बनस्पति जीव राशिसे धसंख्यात गुयी है ।) इन दोनों राशियोंका प्रमाण कुछ कम सागरोपम राशिका विरसनकर और उसीको देय देकर परस्पर कुला करने पर जो राशि उत्पन्न हो उतना है (जो क्रमशः असंख्यात-लोक, धसंख्यात लोक प्रमाण हैं) । इन छहों असंख्यात-राशियोंको पूर्व (तीन बार वगितसंवगित प्रक्रियासे) उत्पन्न राशिमें मिलाकर पूर्वके सदृश पुनः तीन बार वगित-संवगित करनेपर भी उत्कृष्ट-असंख्यातासंख्यात उत्पन्न नहीं होता ।

तदा ठिदिबंध - ठाणाणि, ठिदिबंधवससाय - ठाणाणि, कलायोदय - ठाणाणि, अनुभाग-बंधवससाय-ठाणाणि, 'योगविभागपटिच्छेदाणि, उत्सर्पिणि-ओसर्पिणीसमयाणि च । एदाणि पक्खिविदूण पुब्बं व वग्गिदसंवग्गिदं कवे तदा उक्कस्स-असंखेज्जासंखेज्जयं अदिच्छिदूण जहण्ण - परिस्ताणंतयं गंतूण पट्ठिदं । तदो एगख्खं अबग्गिदे जादं उक्कस्स-असंखेज्जासंखेज्जयं । जम्हि जम्हि असंखेज्जासंखेज्जयं 'मग्गिज्जदि तम्हि तम्हि अजहण्ण-मज्जकस्स-असंखेज्जासंखेज्जयं घेत्तव्वं । तं कस्स विसओ ? ओहिणाणित्तस ।

अर्थः—तब फिर उस राशिमें स्थितिवन्धस्वान, स्थितिवन्धाध्यवसायस्थान, कषायोदय-स्थान, अनुभाग-बन्धाध्यवसायस्थान, योगिके अविभागप्रतिच्छेद और उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी कालके समय, इन (छह) राशियोंको मिलाकर पूर्व सदृश ही वगित-संवगित करने पर उत्कृष्ट-असंख्याता-संख्यातका अतिक्रमण कर जघन्य-परीतानन्त प्राप्त होता है । इसमेंसे एक एक कम कर देनेपर उत्कृष्ट-असंख्यातासंख्यात होता है । जहाँ-जहाँ असंख्यातासंख्यातकी खोज करना हो वहाँ-वहाँ अजघन्या-नुकृष्ट असंख्यातासंख्यात को ग्रहण करना चाहिए । यह किसका विषय है ? यह भवधि-ज्ञानीका विषय है ।

उक्कस्स - असंखेज्जे, अबराणंतो हवेदि ख्व - जुदे^१ ।

तत्तो बड्ढदि 'कालो, केवलणाराणस्स परियंतं ॥३१५॥

अर्थः—उत्कृष्ट असंख्यात (असंख्यातासंख्यात) में एक एक मिला देनेपर जघन्य अनन्त होता है । उसके आगे केवलज्ञान पर्यन्त काल वृद्धिगत होता जाता है ॥३१५॥

जं तं अणंतं तं तिविहं, परिस्ताणंतयं, जुस्ताणंतयं, अणंताराणंतयं वेदि । 'जं तं परिस्ताणंतयं तं तिविहं, जहण्ण-परिस्ताणंतयं, अजहण्णमज्जकस्स-परिस्ताणंतयं, उक्कस्स-

१. अ. जोगपतिच्छेदाणि । २. द. व. उ. वग्गिज्जदि । ३. अ. य. जुदो । ४. क. अ. व. व. काला । ५. द. व. क. अ. उ. जुत ।

परिसार्णतयं चेदि । अं तं अस्तार्णतयं तं तिविहुं, अहृष्य-अस्तार्णतयं, अजहृष्यमनुषकस्स-
अस्ता-र्णतयं, उषकस्स-अस्ता-र्णतयं चेदि । अं तं अर्णतार्णतयं तं तिविहुं अहृष्यमर्णतार्णतयं,
अजहृष्यमनुषकस्स-अर्णतार्णतयं, उषकस्स-अर्णतार्णतयं चेदि ।

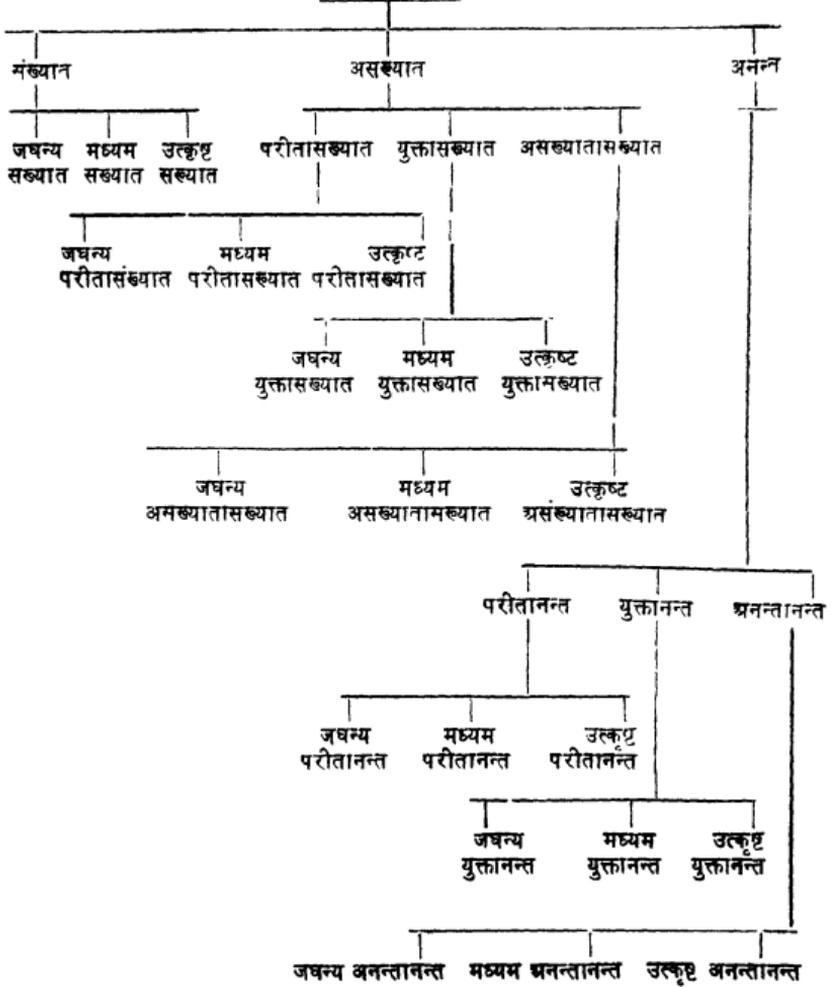
अर्थः—जो यह अनन्त है वह तीन प्रकार है—परीतानन्त, युक्तानन्त और अनन्तानन्त । इनमेंसे जो परीतानन्त है वह तीन प्रकार है—जघन्य परीतानन्त, अजघन्यानुत्कृष्ट परीतानन्त और उत्कृष्ट परीतानन्त । इसीप्रकार युक्तानन्त भी तीन प्रकार है—जघन्य युक्तानन्त, अजघन्यानुत्कृष्ट युक्तानन्त और उत्कृष्ट युक्तानन्त । अनन्तानन्त भी तीन प्रकार है—जघन्य अनन्तानन्त, अजघन्यानुत्कृष्ट अनन्तानन्त और उत्कृष्ट अनन्तानन्त ।

विशेषार्थः—संख्यात, असंख्यात और अनन्तके भेद प्रभेदोंकी तासिका—

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिये]

तालिका : ८

संख्या प्रमाण



जं तं जहण्ण-परित्ताणंतयं तं विरलेदूण एककेकस्स रुवस्स जहण्ण-परित्ताणंतयं दादूण अण्णोण्णभत्थे कदे उक्कस्स-परित्ताणंतयं अदिच्छिदूण जहण्ण-जुत्ताणंतयं गंतूण पडिदं । एवदिओ अभच्च-सिद्धिय-रासो । तदो एग-रुवे अवणीदे जादं उक्कस्स-परित्ताणंतयं । तदो जहण्ण-जुत्ताणंतयं सइ वग्गिदं उक्कस्स-जुत्ताणंतयं अदिच्छिदूण जहण्णमणंताणंतयं गंतूण पडिदं । तदो एग-रुवे अवणीदे जादं उक्कस्स-जुत्ताणंतयं । तदो जहण्णमणंताणंतयं पुव्वं व तिण्णिवार वग्गिद-संबग्गिद कदे उक्कस्स-अणंताणंतयं ण पावदि ।

अर्थ :- यह जो जघन्य-परीतानन्त है, उसका विरलन कर और एक-एक अकके प्रति जघन्य-परीतानन्त (ही) देय देकर परस्पर गुणा करनेपर उत्कृष्ट-परीतानन्तका उल्लघन कर जघन्य-युक्तानन्त प्राप्त होता है । इतनी ही अभव्यराशि है (जघन्य युक्तानन्त की जितनी सख्या है उतनी सख्या प्रमाण ही अभव्य राशि है) । इस जघन्य युक्तानन्तमेसे एक अक कम करने पर उत्कृष्ट-परीतानन्त होता है । तदश्चात् जघन्ययुक्तानन्तका एक बार वर्ग करनेपर उत्कृष्टयुक्तानन्तको लीधकर जघन्य-अनन्तानन्त प्राप्त होता है । इसमेसे एक अक कम कर देनेपर उत्कृष्ट-युक्तानन्तकी प्राप्ति होती है । पश्चात् जघन्य-अनन्तानन्त रूप राशि को तीन बार वर्गित-मवर्गित करनेपर (भी) उत्कृष्ट-अनन्तानन्त प्राप्त नहीं होता ।

सिद्धा णिगोद-जीव, वणप्पदि कालो य पोग्गत्ता चेव ।

'सव्वमलोगागासं, छप्पेदे णंत - पक्खेवा ॥३१६॥

अर्थ :- सिद्ध (जो सम्पूर्ण जीव राशिके अनन्तवे भाग प्रमाण हैं), निगोद जीव (जो सिद्धराशिके अनन्तगुणी और पृथिवीकाय आदि चार स्थावर, प्रत्येक वनस्पति एवं त्रम इन तीन राशियोसे रहित ससार राशि प्रमाण हैं), वनस्पति (प्रत्येक वनस्पति सहित निगोद वनस्पति), पुद्गल (जो जीव राशिके अनन्तगुणा है), काल (जो पुद्गलसे अनन्तगुणे हैं ऐसे कालके समय) और अलोकाकाश (जो काल द्रव्यसे अनन्तगुणे हैं) ये छह अनन्त प्रक्षेप हैं ॥३१६॥

ताणि पक्खिदूण पुव्वं व तिण्णिवारे वग्गिद - संबग्गिदं कदे, तदो उक्कस्स-अणंताणंतयं ण पावदि । तदो धम्मट्ठियं अधम्मट्ठियं अगुरुलह्वुणं अणंताणंतं पक्खिदूण पुव्वं व तिण्णिवारे वग्गिद - संबग्गिदं कदे उक्कस्स - अणंताणंतयं ण उप्पज्जदि । तदो

केवलणाण-केवलदंसणस्स वाणंता - भागा तस्सुव्वारि 'पक्खित्ते उक्कस्स-अणंताणंतयं उप्पण्णं ।

अत्थि त भायणं णत्थि तं दव्वं एवंबं भणियो । एवं वगिय उप्पण्ण-सव्व-वगग-रासीणं पुंजं केवलणाण-केवलदंसणस्स अणंतिमभागं होवि तेण कारणेण अत्थि तं भाजणं णत्थि तं दव्वं । जम्मिह जम्मिह अणंताणंतयं 'मग्गिज्जदि तम्मिह तम्मिह अजहण्णमणुक्कस्स-अणंताणंतयं धेतव्वं । तं कस्स विसमो ? केवलणाणित्तस्स ।

अर्थः— इन छह राशियोंको मिलाकर पूर्वके सदृश तीन दार वागित-सर्वागित करनेपर उत्कृष्ट अनन्तानन्त प्राप्त नहीं होता, अतः इम राशिमे, धर्म और अधर्म द्रव्यमे स्थित अनन्तानन्त अगुरुलघुगुरु (के अविभागीप्रतिच्छेदां) को मिलाकर पूर्वके सदृश तीन दार वागित-सर्वागित करना चाहिए। इसके पश्चात् भी जत्र उत्कृष्ट अनन्तानन्त उत्पन्न नहीं होता तत्र केवलज्ञान अथवा केवलदर्शनके अनन्त बहुभागको (अर्थात् केवलज्ञानके अविभागी प्रतिच्छेदोमेसे उपयुक्त महाराशि घटा देनेपर जो अवशेष रहे वह) उसी राशि मे मिला देनेपर (केवलज्ञानके अविभागीप्रतिच्छेदांके प्रमाण स्वरूप) उत्कृष्ट अनन्तानन्त प्राप्त होता है। यथा—

मानसो :— उपयुक्त सम्पूर्ण प्रक्रियासे उत्पन्न होने वाली राशि १०० है, जो मध्यम अनन्तानन्त स्वरूप है, इसे उत्कृष्ट अनन्तानन्त स्वरूप १००० मे से घटा देनेपर (१०००—१००) = ९०० शेष रहे, इस शेष (९००) को १०० मे जोड़कर (९००+१००) = १००० स्वरूप उत्कृष्ट अनन्तानन्तका प्रमाण प्राप्त हो जाता है। उस पूर्वोक्त राशिमे मिलाने पर उत्कृष्ट अनन्तानन्त उत्पन्न हुआ (सख्य प्रमाण मे इससे बड़ा और कोई प्रमाण नहीं है) ।

अर्थ— वह भाजन है द्रव्य नहीं है, इस प्रकार कहा गया है, क्योंकि इस प्रकार वर्गसे उत्पन्न सर्ववर्ग राशियोगा पुञ्ज केवलज्ञान-केवलदर्शनके अनन्तवे भाग है, इसी कारणसे वह भाजन है, द्रव्य नहीं है। जहाँ-जहाँ अनन्तानन्तका ग्रहण करना हो वहाँ-वहाँ अजघन्यानुत्कृष्ट-अनन्तानन्तका ग्रहण करना चाहिए। यह किसका विषय है ? यह केवलज्ञानीका विषय है।

अवसप्पिणी एव उत्सप्पिणी कालोका स्वरूप एव उनका प्रमाण—

भरहक्खेत्तम्मि इमे, अज्जा-खंडम्मि काल-परिभागा^१ ।

अवसप्पिणि - उत्सप्पिणि - पज्जाया ढोण्णि होंति पुं० ॥३१७॥

१. द. व. क. ज. उ. पक्खित्तो । २. द. व. क. ज. उ. मग्गिज्जदि । ३. द. पक्खिणा ।

४. य. ओत्सप्पिणि ।

अर्थ—भरतक्षेत्रके आयंखण्डमे ये कालके विभाग हैं। यहाँ पृथक्-पृथक् अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी रूप दोनो ही कालकी पर्याय होती है ॥३१७॥

गर-तिरियाणं आऊ, उच्छेह-विभूवि-पहुदियं सव्वं ।
अवसर्पिणिए हायदि, उस्सर्पिणियासु बड्ढेदि ॥३१८॥

अर्थ—अवसर्पिणी कालमे मनुष्य एव तिर्यञ्चोकी आयु, शरीरकी ऊँचाई एव विभूति आदि सब ही घटते रहते है तथा उत्सर्पिणी कालमे बढ़ते रहते हैं ॥३१८॥

अद्धारपल्ल-सायर - उवमा दस होंति^१ कोडिकोडीओ ।
अवसर्पिणि - परिमाणं, तेत्तियमुस्सर्पिणी - कालो ॥३१९॥

अर्थ—अद्धारपल्लोसे निर्मित दस कोडाकोडी सागरोपम-प्रमाण अवसर्पिणी और इतना ही उत्सर्पिणी काल भी है ॥३१९॥

दोण्णि वि मिलिदे कप्पं, छब्भेवा होंति तत्थ पचेक्कं ।
सुसमसुसमं च सुसमं, तद्दुज्जयं^२ सुसमदुस्समयं ॥३२०॥

दुस्समसुसमं दुस्सममविदुस्समयं च तेसु पढम्मि ।
चत्तारि - सायरोवम - कोडीकोडीओ परिमाणं ॥३२१॥

सुसमम्मि तिण्णि जलही-उवमाणं होंति कोडिकोडीओ ।
दोण्णि तवियम्मि तुरिमे, बावाल-सहत्स-विरहिदो एक्को ॥३२२॥

इगिबोस-सहत्साणि, वासाणि^३ दुस्समम्मि परिमाणं ।
अदिदुस्समम्मि काले, तेत्तियमेत्तं मि णावव्वं ॥३२३॥

अर्थ—इन दोनोको मिलानेपर बीस कोडाकोडी सागरोपम प्रमाणाका एक कल्पकाल होता है। अवसर्पिणी और उत्सर्पिणीमेंसे प्रत्येक के छह-छह भेद होते हैं—सुषमासुषमा, सुषमा, सुषमा-दुष्वमा, दुष्वमासुषमा, दुष्वमा और अतिदुष्वमा। इन छहो कालोंमेंसे प्रथम सुषमासुषमा चार

१ व. उच्छेहा । २ द. हति, य, होदि । ३. द. सुसुमदुस्समयं । ४. द. व. क. ज. उ. दुस्सहम्मि, य. दुस्सयम्मि ।

सुषमासुषमा कालका निरूपण—

सुसमसुसमम्मि 'काले, 'भूमो रज-धूम-जलण-हिम-रहिवा ।
 कंडिय 'अभसिला - बिच्छियादि - कीडोवसग्ग-परिचत्ता ॥३२४॥
 निम्मल-दप्पण-सरिसा', निदिद - दब्बेहि विरहिवा तीए ।
 सिकवा हवेदि 'दिब्बा, तणु-मण-णयणाण सुह-जलणी ॥३२५॥

अर्थ :—सुषमासुषमा कालमे भूमि रज, धूम, दाह और हिमसे रहित साफ-सुथरी, बोनावृष्टि तथा बिच्छू आदि कीडोके उपसर्गसे रहित निर्मल दर्पणके समान; निन्द्यपदाथसे रहित दिव्य-बालुकामय होती है जो तन-मन और नेत्रोको सुख उत्पन्न करती है ॥३२४-३२५॥

विष्फुरिद-पंच-वण्णा, सहाव-मउवा य महुर-रस-जुत्ता ।
 चउ-अंगुल-परिमाणा', तुणं' पि जाएवि सुरहि-गंधड्ढा' ॥३२६॥

अर्थ :—उस पृथिवी पर पांच प्रकारके वर्णोंसे स्फुरायमान, स्वभावसे मृदुल, मधुर रससे युक्त, सुगन्धसे परिपूर्ण और चार अंगुल प्रमाण ऊँचे तृण उत्पन्न होते हैं ॥३२६॥

तीए 'गुच्छा गुम्मा, कुसुमंकुर-फल-पवाल-परिपुण्णा ।
 बहओ विचित्त - वण्णा, रुक्ख - समूहा समुत्तुंगा ॥३२७॥

अर्थ :—उस कालमें पृथिवी पर गुच्छा, गुल्म (झाड़ी), पुष्प, अंकुर, फल एवं नवीन पत्तोंसे परिपूर्ण, विचित्र वर्णवाले और ऊँचे वृक्षोंके बहुतेसे समूह होते हैं ॥३२७॥

कल्हार-कमल-कुवलय-कुमुदुज्जल-जल-पवाह-पडहत्था'° ।
 पोक्खरणी - वावोओ, मअरादि'' - विवज्जिया होंति ॥३२८॥

अर्थ :—कल्हार (सफेद कमल), कमल, कुवलय और कुमुद (कमलपुष्पों) एवं उज्ज्वल जल-प्रवाहसे परिपूर्ण तथा मकरादि जल-जन्तुओंसे रहित पुष्करिणी और वापिकाएँ होती हैं ॥३२८॥

१. द. काल, उ. कालो । २. द. व. क. ज. उ. भूमि । ३. द. व. क. ज. उ. उभाह ।

४. व. उ. सरसा । ५. द. व. क. ज. य. उ. दब्बा । ६. क. ज. द. य. उ. परिमाणा । ७. क. व. उ. व.

द. व. भाएँ ति । ८. क. य. उ. गण्ट । ९. द. व. व. गणा । १०. द. व. क. ज. य. उ. पडहत्थो ।

११. द. व. क. ज. य. उ. मअरादि ।

पोक्खरणी-पहुदीणं, चउ-तड-भूमोसु रयण-सोवाणा^१ ।

तेसुं वर - पासादा^२, सयणासण - णिवह - परिपुण्णा ॥३२६॥

अर्थ :- (इन) पुष्करिणी आदिककी चारो तट-भूमियोंमें रत्नोंकी सीढियाँ होती हैं । उनमें शय्या एवं आसनोके समूहोंसे परिपूर्ण उत्तम भवन हैं ॥३२६॥

णिस्सेस-वाहि-णासण-अमिदोवम^३-बिमल-सलिल-परिपुण्णा ।

रेहंति दिग्घयाओ, जल - कीडण - दिव्व - वव्व - जुदा ॥३३०॥

अर्थ :- सम्पूर्ण व्याधियोंको नष्ट करनेवाले अमृतोपम निर्मल जलसे परिपूर्ण और जल-क्रोडाके निमित्तभूत दिव्य द्रव्योंमें संयुक्त दीधिकाएँ (वापिकाएँ) शोभायमान होती हैं ॥३३०॥

अइमुत्तयाण भवणा, सयणासण - सोहिदा सुपासादा ।

बिबिचित्तं भासते, णिरुवमं भोगभूमोए ॥३३१॥

अर्थ :- भोगभूमिमें (भोगभूमियोंके) अत्यन्त रमणीय भवन और उत्तम प्रामाद अनेक प्रकारकी शय्याओं एवं अनुपम आमनोंमें सुन्दर प्रतिभासित होते हैं ॥३३१॥

धरणिधरा उत्तुंगा^४, कंचण-वर-रयण-णियर-परिणामा ।

णाणाविह - कप्पद्दुम^५ - संपुण्णा दिग्घिआदि - जुदा ॥३३२॥

अर्थ :- (वहाँ पर) स्वर्ण एवं उत्तम रत्न समूहोंके परिणाम रूप, नाना प्रकारके कल्प-वृक्षोंसे परिपूर्ण तथा दीधिकादिक (सरोवरो) में संयुक्त उन्नत पर्वत हैं ॥३३२॥

धरणी वि पंचवण्णा, तणु-मण-सयणाण णंदणं कुणइ ।

वज्जिदणील-मरगय-मुत्ताहल-पउमराय-फलिह-जुदा ॥३३३॥

अर्थ :- पंचवर्ण वाली और हीरा, इन्द्रनील, मरकत, मुक्ताफल, पधराण तथा स्फटिक मणिमें संयुक्त वहाँ की पृथिवी भी तन, मन, एवं नयनों को आनन्द देती है ॥३३३॥

१ ब. क. उ सोवाणो । २ द. ब. क. ण. उ वर पासादो, य वर पासादो । ३ द. ब. क. ज. य. उ. अविदावम । ४ द. ब. भासतो, क. ज. य. उ. पभासतो । ५ द. ज. उत्त गा । ६ द. ब. क. ज. य. उ. कप्पद्दुमा । ७. द. ब. क. ज. उ. पउमरायपसिह ।

पबरामो बाहिणीओ, दो-तड-सोहंत-रयण-सोबाचा^१ ।
अमय-बर-खीर-पुण्णा, मणिमय सिकदादि सोहंति ॥३३४॥

अर्थ :- (वहाँ) उभय तटोंपर शोभायमान रत्नमय सीढियोंसे सयुक्त और अमृत सदृश उत्तम क्षीर (जल) से परिपूर्ण श्रेष्ठ नदियाँ मणिमय बालुका से शोभायमान होती हैं ॥३३४॥

संख-पिपीलिय-मक्कुण-गोमच्छो-दंस-मसय-किमि-पहुदी ।
वियल्लिदिया ण होंति हु, णियमेणं पढम-कालम्मि ॥३३५॥

अर्थ :- प्रथम (सुषमसुषम^१) कालमे नियमसे संख, चीटी, खटमल, गोमक्षिका, डाँस, मच्छर और कृमि आदिक विकलेन्द्रिय जीव नहीं होते ॥३३५॥

णत्थि असण्णी जीवो, णत्थि तहा सामि-भिच्च भेदो^२ य ।
कलह - महाजुद्धादी, ईसा - रोगादि ण हु होंति ॥३३६॥

अर्थ :- इस कालमे असंजी जीव नहीं होते, स्वामी और भृत्यका भेद भी नहीं होता, कलह एवं भीषण युद्ध आदि तथा ईर्ष्या और रोग आदि भी नहीं होते हैं ॥३३६॥

रत्ति - दिणाणं भेदो, तिमिरादव-सोद-वेदणा-णदा ।
परदार - रदो परघण - चोरो^३ या णत्थि णियमेण ॥३३७॥

अर्थ :- प्रथम कालमे नियमसे रात-दिनका भेद, अन्धकार, गमी एवं क्षीतकी वेदना, तिरंदा, परस्त्री रमण और परधन हरण नहीं होता ॥३३७॥

जमलाजमल-पसूदा, वर-वैजण-लक्खणेहि परिपुण्णा ।
वदर - पमाणाहारं, अट्टम - भत्तेसु भुजंति ॥३३८॥

अर्थ :- इस कालमे युगल-युगलरूपसे उत्पन्न हुए (स्त्री-पुरुष) उत्तम व्यञ्जनों (तिल-मस आदि) और चिह्नो (शस्त्र-चक्र आदि) से परिपूर्ण होते हुए अष्टम भक्तमें (चौथे दिन) बेरके बराबर आहार ग्रहण करते हैं ॥३३८॥

१. द. ब. क. ज. य. उ. मोहाणो । २. द. ब. क. व. य. भेदाओ । उ. भेदाउ । ३. द. ब. क. ज. य. उ. चारी ।

तस्सि काले छ 'चिचय', चाव-सहस्साणि' बेह-उस्सेहो ।

तिग्णि पलिदोबभाइं, आऊणि एराण णारीणं ॥३३६॥

अर्थ :—इस कालमे पुरुष और स्त्रियों के शरीर की ऊंचाई छह-हजार धनुष एव आयु तीन पत्य प्रमाण होती है ॥३३६॥

पुट्टीए होंति अट्टी, छपण्णा समहिया य दोग्णि सया ।

सुसमसुसमम्मि काले, णराण णारीण पत्तेक्कं ॥३४०॥

अर्थ :—मुषमासुषमा कालमे पुरुष और स्त्रियोंमेंसे प्रत्येकके पृष्ठ भागमे दो सौ छपन हड्डियाँ होती हैं ॥३४०॥

भिण्णिव-णील-केसा, णिरुवम-सावण्य-रुव-परिपुण्णा ।

सुइ - सायर - मज्झगया, णीलुप्पल-सुरहि-णिस्सात्ता ॥३४१॥

अर्थ :—(इस कालमे मनुष्य) भिन्न इन्द्रनीलमणि अर्थात् खण्डित इन्द्रनीलमणि जैसे बीचसे गहरी नीली (काली) होती है उसके सदृश गहरे काले केशवाले, अनुपम लावण्यरूपसे परिपूर्ण सुखसागर मे निमग्न और नीलकमल सदृश सुगन्धित निश्वास से युक्त होते है ॥३४१॥

तवभोगभूमि-जादा, णव-णाग-सहस्स-सरिस-बल-जुत्ता ।

आरत्ता - पाणि - पादा, णवचंपय - कुसुम - गंधड्ढा ॥३४२॥

मद्दव - अज्जव - जुत्ता, मंदकसाया सुसील - संपण्णा ।

आदिम - संहण - जुदा, समचउरत्संग - संठाणा ॥३४३॥

बाल-रवी सम-तेया, कबलाहारा वि विगद-णीहारा ।

ते जुगल - धम्म - जुत्ता, परिवारा णत्थि तक्काले ॥३४४॥

गाम-णयरदि सव्वं, ए होदि ते होंति विव्व-कप्पतरू ।

णिय - णिय - मण - संकप्पिद-वत्थीण वैति जुगत्ताणं ॥३४५॥

अर्थ :—उस भोगभूमिमें उत्पन्न हुए मनुष्य नौ हजार हाथियों के बलके सदृश बलसे युक्त, किंचित् लाल हाथ-पैर वाले, नव-चम्पकके फूलोकी सुगन्धसे व्याप्त, मार्दव एवं आर्जव (गुणों) से सयुक्त, मन्दकषायी, सुशील (गुण से) सम्पूर्ण, आदि (वज्रवृषभनाराच) सहनन से युक्त, समचतुरस्र-शरीर-संस्थानवाले, उदित होते हुए सूर्य सदृश तेजस्वी, कवलाहार करते हुए भी मल-भूत्रसे रहित और युगलघर्म युक्त होते हैं। इस कालमें नर-नारीके अतिरिक्त अन्य परिवार नहीं होता। ग्राम एवं नगरादि सब नहीं होते, मात्र दिव्य कल्पवृक्ष होते हैं, जो युगलो को अपनी-अपनी मन इच्छित (सकल्पित) वस्तुएँ दिया करते हैं ॥३४२-३४५॥

दस प्रकारके कल्पवृक्ष—

पाणंग - तूरियंगा, भूसण - बत्थंग - भोयणंगा य ।

आलय - दीविय - भायण - माला-तेजंग-आदि-कल्पतरू ॥३४६॥

अर्थ :—(भोगभूमिमें) पानाङ्ग, तूर्याङ्ग, भूषणाङ्ग, वस्त्राङ्ग, भोजनाङ्ग, आलयाङ्ग, दीपाङ्ग, भाजनाङ्ग, मालाङ्ग और तेजाङ्ग आदि कल्पवृक्ष होते हैं ॥३४६॥

पाणं महुर - सुसादं, छ-रसेहि जुबं पसत्थ - मइसीदं ।

बत्तीस - भेद - जुत्तां, पाणंगा देति तुट्टि - पुट्टियरं ॥३४७॥

अर्थ — (इनमेंसे) पानाङ्ग जातिके कल्पवृक्ष (भोगभूमिजोको) महुर, मुम्बाडु, छह रसोसे युक्त, प्रशस्त, अतिशीतल तथा तुष्टि और पुष्टिकारक बत्तीस प्रकारके पेय (द्रव्य) दिया करते हैं ॥३४७॥

तूरंगा वर - वीणा, ^१पडुपडह - मुइंग - भल्लरी - संखा ।

दुहुभि - भंभा - भेरी - काहल-पमुहाइ देति ^३वज्जाइं ॥३४८॥

अर्थ :—तूर्याङ्ग जातिके कल्पवृक्ष उत्तम वीणा, पट्ट पटह, मृदङ्ग, भालर, शख, दुन्दुभि, भम्भा, भेरी और काहल इत्यादि भिन्न-भिन्न प्रकारके बाजे (वादित्र) देने हैं ॥३४८॥

तरओ वि भूसणंगा, कंकण - कडिसुत्त - हार - केयूरा ।

मञ्जीर - कडय - कुंडल - तिरीड - मउडादियं देति ॥३४९॥

अर्थ —भूषणाङ्ग जातिके कल्पवृक्ष कंकण, कटिसूत्र, हार, केयूर, मञ्जीर, कटक, कुण्डल, किरोट और मुकुट इत्यादि आभूषण प्रदान करते हैं ॥३४९॥

१. क. ज. य. उ पाणगा । २. ब. पटह । ३. द. ब. क. ज. य. उ तूरंगा ।

वत्थंगा गिलां 'पडचीण-सुबर-खउम-पहुवि-वत्थाणि ।

मण - जयणाणंदकरं, गाणा - वत्थादि ते दैति ॥३५०॥

अर्थ :—वस्त्राङ्ग जातिके कल्पवृक्ष नित्य चीनपट (सूती वस्त्र) एव उत्तम क्षीम (रेशमी) आदि वस्त्र तथा मन और नेत्रोको आनन्दित करने वाले नाना प्रकारके अन्य वस्त्र देने हैं ॥३५०॥

सोलस - बिहमाहारं, सोलसमेयाणि वैज्याणि पि ।

चोदसविह - सूपाइं, खज्जाणि विगुणचउवणं ॥३५१॥

सायाणं च पयारे, तेसट्टी - संजुदाणि ति - सयाणि ।

रस - भेदा तेसट्टी, दैति फुडं भोयणंग - दुमा ॥३५२॥

अर्थ :—भोजनाङ्ग जातिके कल्पवृक्ष सोलह प्रकारका आहार, सोलह प्रकारके व्यञ्जन, चौदह प्रकारके मूप (दाल आदि) चउवनके दुगुने (१०८) प्रकारके खाद्य पदार्थ, नोनसौ तिरैसठ प्रकारके स्वाद्य पदार्थ एव तिरैसठ प्रकारके रस भेद पृथक्-पृथक् दिया करते हैं ॥३५१-३५२॥

सत्थिय - णंदावत्तं, पमुहा जे के वि दिव्व - पासादा ।

सोलस - भेदा रम्मा, दैति हु ते आलयंग - दुमा ॥३५३॥

अर्थ - आलयाङ्ग जातिके कल्पवृक्ष, स्वस्तिक एव नन्द्यावर्त आदि सोलह प्रकारके रमणीय दिव्य भवन दिया करने हैं ॥३५३॥

दीवंग-दुमा 'साहा - पवाल - फल - कुसुममंफुरादीहि ।

दीवा इव पज्जलिदा, पासादे दैति उज्जोवं ॥३५४॥

अर्थ :—दीपाङ्ग जातिके कल्पवृक्ष पासादोमे शाखा, प्रवाल, फल, फूल और अकुरादिके द्वारा जलते हुए दीपकोके मद्दय प्रकारके देने हैं ॥३५४॥

भायणअंगं कंचण - बहुरयण - विणिम्मियाइ थालाइं ।

भिगार - कलस - गग्गरि - चामर पीढादियं दैति ॥३५५॥

अर्थ :—भाजनाङ्ग जातिके कल्पवृक्ष स्वर्ण एव बहुत प्रकारके रत्नोंसे निर्मित थाल, भागी, कलश, गागर, चामर और ग्रामनादिक प्रदान करते हैं ॥३५५॥

बल्ली-तद-गुच्छ-लवुम्भबाण^१ सोलस - सहस्स - भेदाणं ।

मालंग - दुमा वेंति ह, कुसुमाणं विविह - मालाओ ॥३५६॥

अर्थ :—मालाङ्ग जातिके कल्पवृक्ष बल्ली, तरु, गुच्छों और लताओंसे उत्पन्न हुए सोलह हजार भेद रूप पुष्पोंकी विविध मालाएँ देते हैं ॥३५६॥

तेजंगा मज्झंदिण-दिणयर-कोडीण किरण-संकासा ।

राक्खत्त - चंद - सूर - प्पहुदीणं कंति - संहरणा^२ ॥३५७॥

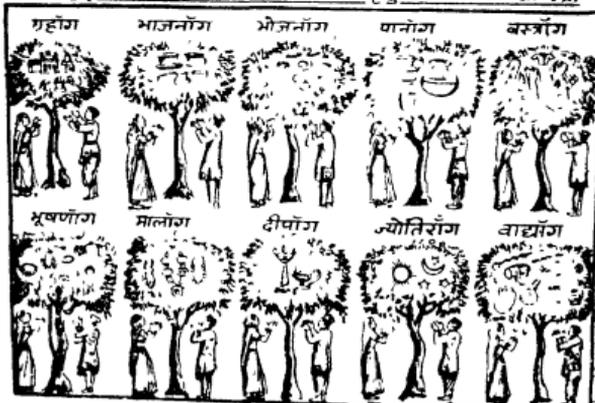
अर्थ :—तेजाङ्ग जातिके कल्पवृक्ष मध्यदिनके करोडों सूर्योकी किरणोंके सदृश होते हुए नक्षत्र, चन्द्र और सूर्यादिककी कान्तिका सहरण करते हैं ॥३५७॥

ते सव्वे कप्पदुमा, ए^३वणप्पदी णो वेंतरा देवा ।

णव्वरि पुठवि - सरूवा, पुष्पा - फल वेंति जीवाणं ॥३५८॥

अर्थ :—वे सर्व कल्पवृक्ष न तो वनस्पति ही है और न कोई व्यन्तर देव है । किन्तु पृथिवी रूप होते हुए वे वृक्ष जीवोंको उनके पुष्प (कर्म) का फल देते हैं ॥३५८॥

भोग भूमि में दस प्रकार के कल्प वृक्षों से भोग सामग्री



१. द. ब. लवुम्भबाण, क. ज. य. उ. लवुम्भबाणा । २. द. ब. क. ज. य. उ. सहरण । ३. द. क.

ब. वणप्पदीणो ए वेंतरा, उ बसुष्पदी । ४. द. ब. क. ज. य. उ. हावरो ।

गोद - रवेसुं सोत्तं, रुबे चक्खु सुत्तोरेहे घाणं ।
जोहा विविह - रसेसुं, फासे फासिवियं रमइ ॥३५६॥

अर्थः—भोगभूमिजोंकी श्रोत्र-इन्द्रिय गीतोकी ध्वनिमें, चक्षु रूपमें, द्राण सुन्दर सीरभमें, जिह्वा विविध प्रकारके रसोंमें और स्पर्शन इन्द्रिय स्पर्शमें रमण करती है ॥३५६॥

इय अण्णोष्णासत्ता, ते जुगला वर गिरंतरे भोगे' ।
सुलभे वि ण सत्तिंति, इंदिय - विसएसु पावंति ॥३६०॥

अर्थः—इसप्रकार परस्पर आसक्त हुए वे युगल (नर-नारी) उत्तम भोग-सामग्रीके निरन्तर सुलभ होने पर भी इन्द्रिय-विषयोमें तृप्त नहीं हो पाते ॥३६०॥

जुगलाणि अग्रंतगुणं, भोगं चक्कहर-भोग-लाहावो' ।
भुंजंति जाव' आउं, कदलीघावेण रहिदासि ॥३६१॥

अर्थः—भोगभूमियोंके वे युगल कदलीघात-मरणसे रहित होते हुए आयु-पर्यन्त चक्रवर्तीके भोग-लाभकी अपेक्षा अनन्तगुणें भोग भोगते हैं ॥३६१॥

कप्पडुम - दिष्ण - वत्थुं, घेषू ण विक्खव्वाणए बहुवेहे ।
काइणं ते जुगला, अण्येय - भोगाई' भुंजंति ॥३६२॥

अर्थः—वे युगल, कल्पवृक्षों द्वारा दी गई वस्तुओंको ग्रहण करके और विक्रिया द्वारा बहुत प्रकारके शरीर बना कर अनेक भोग भोगते हैं ॥३६२॥

पुरिसा वर - मउड'- घरा, देविवावो वि सु'वरायारा ।
अच्छर - सरिसा इत्थो, मणि-कुंडल-मंडिय-कवोला ॥३६३॥

अर्थः—(वहाँ पर) उत्तम मुकुटको धारण करने वाले पुरुष इन्द्रसे भी अधिक सुन्दराकार होते हैं और मणिमय कुण्डलोंसे विभूषित कपोलों वाली स्त्रियों अप्सराओंके सदृश होती हैं ॥३६३॥

१. द. व. क. ख. ग. उ. ज्ञाने । २. द. व. क. ख. उ. भोगवाहावो, व. भागवाहावो । ३. द. व. पाव, क. ख. ग. उ. ज्ञान । ४. क. भोगव, ज. भोगव । ५. द. व. क. ख. उ. मोक्षवरा ।

मउडं कुंडल - हारा, मेहल - पालंब - बम्हसुत्ताई ।
अंगव - कडय - प्यह्वबी, होंति सहावेरल आभरखा ॥३६४॥

अर्थ :—भोगभूमिजोके मुकुट, कुण्डल, हार, मेखला, प्रालम्ब, ब्रह्मसूत्र, अगद और कटक इत्यादिक आभूषण स्वभावमे ही हुआ करते हैं ॥३६४॥

कुंडल - मंगव^१ - हारा, मउडं केयूर - पट्ट - कडयाई ।
पालंब - सुत्त - णेउर - दो-मुद्दी-मेहलासि-छुरियाओ^२ ॥३६५॥
^३मेवेज्ज कण्णपूरा, पुरिसाणं होंति सोलसाभरणा ।
चोहस इत्थीआणं, छुरिया - करवाल - हीणाई ॥३६६॥

अर्थ :—भोगभूमिमे ^१कुण्डल, ^२अङ्गद, ^३हार, ^४मुकुट, ^५केयूर, ^६पट्ट, (भालपट्ट), ^७कटक, ^८प्रालम्ब, ^९सूत्र (ब्रह्मसूत्र), ^{१०}नूपुर, ^{११}दो मुद्रिकाएँ, ^{१२}मेखला, ^{१३}असि (करवाल), ^{१४}छुरी, ^{१५}अवेयक और ^{१६}कर्णपूर, ये सोलह आभरण पुरुषवर्ग के होते हैं। इनमेसे छुरी एवं करवालसे रहित शेष चौदह आभरण महिलावर्गके होते हैं ॥३६५-३६६॥

^१कडय-कडि-सुत्त - णेउर - तिरीड-पालंब-सुत्त-मुद्दीओ ।
हारा कुंडल - मउडदहार - चूडामणी बि मेविज्जा ॥३६७॥
अंगव - छुरिया खग्गा, पुरिसाणं होंति सोलसाभरणा ।
चोहस इत्थीण तथा, छुरिया - खग्गेहि परिहीरणा ॥३६८॥

पाठान्तरं ॥

अर्थ :—^१कडा, ^२कटिसूत्र, ^३नूपुर, ^४किरीट, ^५प्रालम्ब, ^६सूत्र, ^७मुद्रिका, ^८हार, ^९कुण्डल, ^{१०}मुकुट, ^{११}अर्धहार, ^{१२}चूडामणि, ^{१३}अवेय, ^{१४}अगद, ^{१५}छुरी और ^{१६}तलवार ये सोलह आभरण पुरुषोके तथा छुरी और तलवारसे रहित शेष चौदह आभरण स्त्रियों के होते हैं ॥३६७-३६८॥

पाठान्तर ।

१. क. ज. उ. मंगल, य मडल । २. द ब. क. ज. य. उ. सुछुरियाओ । ३. ब. मेवज्जा ।
४. द. ब. क. ज. य. उ. कडिय ।

१	भूमि	स्वच्छ, साफ, कीड़ों आदिमे रहित, निर्मल, दर्पण महण, पंच वर्षकी ।	३२४- ३२५
२	तृण (घास)	पाँच वर्षकी मृदुल, मधुर, मुगन्धित और चार अंगुल प्रमाण ।	३२६
३	वापिकाएँ	जल जन्तु रहित और सर्व व्याधियोंको नष्ट करने वाले अमृतोपम निर्मल जलसे युक्त ।	३२८ से ३३०
४	प्रासाद	अनेक प्रकारकी मृदुल शाय्याओं और अनुपम आसनोसे युक्त ।	३३१
५	पर्वत	स्वर्ण एवं रत्नोंके परिणाम स्वरूप तथा कल्पवृक्षोसे युक्त और उन्नत ।	३३२
६	नदियाँ	उभय तटों पर रत्नमय सीढियोंसे संयुक्त और अमृत सदृश उत्तम जलसे सहित ।	३३४
७	जीव	विकलत्रय एवं असंजी जीवोंका तथा रोग, कलह और ईर्ष्या आदिका अभाव ।	३३५ ३३६
८	काल	रात-दिनके भेद, अन्धकार गर्मी-मर्दी की वाधा और पापोंसे रहित ।	३३७
९	उत्पत्ति	युगल उत्पत्ति होती है । अन्य परिवार एवं ग्राम नगरादि से रहित होते हैं ।	३३८ और ३४४-४५
१०	बल	एक पुरुषमें नौ हजार हाथियोंके बराबर ।	३४२
११	शरीर	प्रशस्त ३२ लक्षण युक्त । कवलाहार करते हुए भी निहार से रहित ।	३४४
१२	कल्पवृक्ष	१० प्रकार के ।	३४६
१३	पेय पदार्थ	३२ प्रकार के ।	३४७
१४	वादित्र	नाना प्रकार के ।	३४८
१५	आहार	१६ प्रकारका । (१६) व्यञ्जन-१७ प्रकारके । (१८) दाल-१४ प्रकारकी ।	३५१
१६	खाद्य पदार्थ	१०८ प्रकार के ।	३५१
२०	स्वाद्य पदार्थ	३६३ प्रकारके । (२१) रम-६३ प्रकार के ।	३५२
२२	भवन	स्वस्तिक एवं नन्दावर्त आदि १६ प्रकारके ।	३५३
२३	फूल मानाएँ	१६००० प्रकार की ।	३५६
२४	भोग	चक्रवर्तीके भोगसे अनन्तमुणे ।	३६१
२५	भोग साधन	विक्रिया द्वारा अनेक प्रकारके शरीर बनाते हैं ।	३६२
२६	आभूषण	पुरुषके १६ प्रकारके और स्त्रीके १४ प्रकारके ।	३६६
२७	कला-गुण	६४ कलाओंसे युक्त ।	३६८
२८	संहनन	बन्धवृषभनाराच ।	३४३
२९	संस्नान	समस्तुरल शरीर ।	३४३
३०	मरण	कदली घात रहित ।	
३१	मरणका कारण	पुरुषका छींक और स्त्रीके जम्भाई ।	३८१

भोगभूमिमे उत्पत्तिके कारण

भोगमहीए सञ्चे, जायंते मिच्छ - भाव - संजुत्ता ।
 मंद - कसाया मज्जुवा, पेमुष्णासूय - दंब - परिहीणा ॥३६६॥

वज्जिद - मंसाहारा, महु - मज्जोदुं बरेहि ^१परिचत्ता ।
^२सच्च-जुदा मव-रहिवा, चोरिय-परदार-परिहीणा ॥३७०॥

गुणधर-गुणेषु ^३रत्ता, जिण-पूजं जे कुणंति परवसदो ।
 उववास - तणु - सरीरा, अज्जव - पहुबोहि संपण्णा ॥३७१॥

आहार-दान-जिरदा, जडीसु वर-विबिह-जोग-जुत्तेसु ^४ ।
 बिमलतर - संजमेसु य, बिमुक्क - गंघेसु मत्तोए ॥३७२॥

अर्थः—भोगभूमिमें वे मब जीव उत्पन्न होते हैं जो मिथ्यात्वभावसे युक्त होते हुए भी मन्द-कषायी हैं, पैशुन्य, असूयादि एवं दम्भसे रहित हैं, मांसाहारके त्यागी हैं, मधु, मद्य तथा उदुम्बर फलोंके भी त्यागी हैं, सत्यवादी हैं, अभिमानसे रहित हैं, चोरी एव परस्त्रीके त्यागी हैं, गुणियोकें गुणोंमें अनुरक्त हैं, (भक्तिके) आधीन होकर जिनपूजा करते हैं, उपवाससे शरीरको कृश करने वाले हैं, भ्राजंवादि (गुणो) से सम्पन्न हैं; तथा उत्तम एवं विविध योगोंसे युक्त, अत्यन्त निर्मल संयमके धारक और परिग्रहसे रहित यतियोंको भक्तिसे आहारदान देनेमें तत्पर रहते हैं ॥३६९-३७२॥

पुष्पं बद्ध - शराऊ, पच्छा तित्थयर - पाव - भूलम्मि ।
 पाबिद - खाइय - सम्मा, जायंते केइ भोगभूमोए ॥३७३॥

अर्थः—पूर्वमें मनुष्य आयु बाँधकर पश्चात् तीर्थकरके पादमूलमें क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त करने वाले कितने ही सम्यग्दृष्टि पुरुष भी भोगभूमिमें उत्पन्न होते हैं ॥३७३॥

एवं मिच्छाबिद्धी, जिग्गंघाणं जडीण ^१वाणाइं ।
 दावूण पुष्प - पाके, भोगमही केइ जायंति ॥३७४॥

१. व. उ. परिचिता । २. द. व. क. व. य. उ. सत्त्व । ३. द. व. क. व. य. उ. रत्तो ।

४. व. उ. दीणाइं ।

अर्थः— इसप्रकार कितने ही मिथ्यादृष्टि मनुष्य निर्ग्रन्थयतियोको दानादि देकर पुण्योदय ग्राने पर भोगभूमि में उत्पन्न होते हैं ॥३७४॥

आहाराभय - दाणं बिबिहोसह-पोत्थयावि-दाणं च ।

पत्त - बिसेसे दादूण भोगभूमिए जायंति ॥३७५॥

अर्थः— (कितने ही मनुष्य) पात्र-विशेषो को आहारदान, अभयदान, विविध श्रौचधियाँ एव ज्ञानके उपकरण स्वरूप शास्त्र आदिका दान देकर भोगभूमिमे उत्पन्न होते हैं ॥३७५॥

दादूण केइ दाणं, पत्त - बिसेसेसु के वि दाणाणं ।

अणुमोदणेण तिरिया, भोगभूमिए बि जायंति ॥३७६॥

अर्थः— कोई पात्र विशेषोको दान देकर और कोई दानोकी अनुमोदना करनेसे तिर्यंच भी भोगभूमि मे उत्पन्न होते हैं ॥३७६॥

^१गह्निदूणं जिणलिंगं, संजम-सम्मत्त-भाव-परिचत्ता ।

मायाचार - पयट्टा, चारित्तं णासयंति जे ^२पावा ॥३७७॥

दादूण ^३कुलिगीणं, णाणा - दाणाणि जे णरा मूढा ।

^४तब्बेस - धरा केई, भोगभूमिए ह्वंति ते तिरिया ॥३७८॥

अर्थः— जो पापी जिनलिंग ग्रहण कर समय एवं सम्यक्त्वको छोड़ देते है और पश्चात् मायाचार मे प्रवृत्त होकर चारित्र को (भी) नष्ट कर देते हैं, तथा जो कोई मूर्ख मनुष्य कुलिगियोंको नाना प्रकारके दान देते हैं या उन (कुलिग) भेषोको धारण करते हैं, वे भोगभूमिमे तिर्यंच होते हैं ॥३७७-३७८॥

भोगभूमिमे गर्भ, जन्म एवं मरण काल तथा मरणके कारण—

भोगज-णर-तिरियाणं, णव-मास-पमाण-आउ-अबसेसे ।

ताणं ह्वंति गग्भा, एण सेस - कालम्मि कइ या बि ॥३७९॥

१. द. व. गरह्निदूण, क. ज. उ. रह्निदूण । २. क. ज. व. उ. पाव । ३. द. कुलिगीणं ।

४. द. व. क. ज. य. उ. त वेसबरा ।

'पुष्पमि य हावमासे, भू-सयणे सोबिऊण जुगलाइं ।
गढभादो जुगलेसुं, 'णिक्कंतेसुं' मरंति तक्कालं ॥३८०॥

अर्थ :- भोगभूमिज मनुष्य और तिर्यचोकी नौ मास आयु अवशेष रहने पर ही उनके गर्भ रहता है, शेष कालमें किसीके भी गर्भ नहीं रहता । नव-मास पूर्ण हो जाने पर युगल (नर-नारी) भू-शय्या पर सोकर गर्भसे युगलके निकलने पर तत्काल ही मरण को प्राप्त हो जाते हैं ॥३७६-३८०॥

छिक्केण मरदि पुरिसो, जिभारंभेण कामिणी दोहं ।
'सारद - मेघ ष्व तणू, आमूलादो विलीएदि ॥३८१॥

अर्थ :- पुरुष छीकसे और स्त्री जँभाई आनेसे मृत्युको प्राप्त होते हैं । दोनोंके शरीर शरत्कालीन मेघके समान आमूल विलीन हो जाते हैं ॥३८१॥

भोगभूमिजो की आगति—

भावण - वेतर - जोइस-सुरेसु जायंति मिच्छ-भाव-जुदा ।
सोहम्म - दुगे भोगज - णर - तिरिया सम्म-भाव-जुदा ॥३८२॥

अर्थ :- (मृत्युके बाद) भोगभूमिज मिथ्यादृष्टि मनुष्य-तिर्यच भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें तथा सम्यग्दृष्टि मनुष्य-तिर्यञ्च सौधर्म युगल पर्यन्त उत्पन्न होते हैं ॥३८२॥

जन्मके पश्चात् भोगभूमिज जीवो का वृद्धिक्रम—

जादाण भोगभूवे, सयणोवरि बालयाण सुत्ताणं ।
णिय - अंगुट्टय - लिहणे, गच्छंते तिण्णि विवसाणि ॥३८३॥
'बइसण-अस्थिर-गमणं, धिर-गमण-कला-गुणेण पत्तेक्कं ।
'तारुणेणं सम्मत्त - गहण - पाउग्ग तिदिणाइं' ॥३८४॥

अर्थ :- भोगभूमिमे उत्पन्न हुए बालकोके शय्यापर सोते हुए अपना अगूठा घूसनेमे तीन दिन व्यतीत होते हैं, पश्चात् उपवेशन (बैठने), अस्थिर-गमन, स्थिर-गमन, कला गुणोंकी प्राप्ति,

१. द. ब. क. ज. घ. ङ. पुष्पमि । २. द. ब. ज. घ. ङ. णिक्कतेसम्मरंति । ३. द. ब. क. ज. घ. ङ. सारमेपुब्ब । ४. द. ब. उ पीइसण । ५. ब. ज. य. ता पुण्णोणं । ६. द. ब. ङ. ठिदिणाइं ।

तारुण्य प्राप्त एवं सम्यक्त्व ग्रहणकी योग्यता, इनमेंसे क्रमशः प्रत्येक अवस्थामें उनके तीन-तीन दिन व्यतीत होते हैं ॥३८३-३८४॥

सम्यक्त्व ग्रहण के कारण—

जादि - भरणेण केई, केई पडिबोहणेण देवाणं ।

चारणमुणि - पहुबीणं, सम्मत्तं तत्थ गेण्हंति ॥३८५॥

अर्थ :—(भोगभूमिज) कोई जीव जाति-स्मरणसे, कोई देवोके प्रतिबोधसे और कोई चारणमुनि आदिकके सदुपदेशसे सम्यक्त्व ग्रहण करते है ॥३८५॥

भोगभूमिज जीवोंका विशेष स्वरूप—

देवी-देव-सरिच्छा, बत्तीस-पसत्थ-लक्खणेहि जुवा ।

कोमल - देहा - मिहुणा^१, समच्चउरस्संग - संठाणा^२ ॥३८६॥

धादुभयंगा वि तथा, छेतुं भेतुं च ते किर^३ ण सक्का ।

असुचि - विहीणत्ताबो, मुत्त - पुरीसासबो णत्थि ॥३८७॥

अर्थ :—भोगभूमिज नर-नारी, देव-देवियोंके सदृश बत्तीस प्रशस्त लक्षणों सहित, सुकुमार, देह-रूप-वैभववाले और समचतुरस्र-सस्थान सयुक्त होते हैं । उनका-शरीर धातुमय होते हुए भी छेदा-भेदा नहीं जा सकता । अशुचितासे रहित होनेके कारण उनके शरीरसे मूत्र तथा विष्टाका आस्रव नहीं होता ॥३८६-३८७॥

ताण जुगलाण देहा, अढं गुच्चट्टणं जण-विहीणा ।

मुह-वंत-णयण-धोबण-^४णह-कट्टण-विरहिवा षि रेहंति ॥३८८॥

अर्थ :—उन युगल नर-नारियोंके शरीर, तैल-मर्दन, उबटन और अञ्जनसे तथा मुख, दाँत एवं नेत्रोंके धोने तथा नाखूनोंके काटनेसे रहित होते हुए भी शोभायमान होते हैं ॥३८८॥

अक्खर-आलेबसेसुं, गणिबे गंघब्ब - सिप्प - "पहुबीसुं" ।

ते चउसट्ठि - कलासुं होंति सहाबेण णिउणयरा ॥३८९॥

अर्थ :—वे अक्षर, चित्र, गणित, गन्धर्व और शिल्प इत्यादि चौंसठ-कलाओंमें स्वभावसे ही अतिशय निपुण होते हैं ॥३८९॥

१. द. क. ज. य. उ. बिहुणा । २. द. ब. क. ज. उ. संठाण । ३. ब. क. ज. य. उ. किर एण सक्का । ४. द. ब. क. ज. उ. णय-कंदण । ५. द. क. ज. य. उ. पहुबेसुं ।

ते सञ्चे वर - जुगला, अण्णोण्णुप्पण - पेम्म - संमुडा^१ ।

जम्हा तम्हा तेसुं, सावय - वद - संजमो णत्थि ॥३६०॥

अर्थ :— वे सब उत्तम युगल पारस्परिक प्रेममे अत्यन्त मुग्ध रहा करते हैं, इसलिए उनके श्रावकोचित व्रत-संयम नहीं होते ॥३६०॥

कोइल - महुरालावा, किण्णर - कंठा हवन्ति ते जुगला ।

कुल - जादि - भेद - हीणा, सुहसणा चत्त - दारिद्रा ॥३६१॥

अर्थ — वे नर-नारी युगल, कोयल सदृश मधुर-भाषी, किन्नर सदृश कण्ठ वाले, कुल एवं जाति भेदसे रहित, सुखमे आसक्त और दारिद्र्य रहित होते हैं ॥३६१॥

भोगभूमिज तिर्यचोका वर्णन—

तिरिया भोगखिदीए, जुगला जुगला हवन्ति वर-वण्णा ।

सरला मंदकसाया, णाणाविह - जादि - संजुसा^२ ॥३६२॥

अर्थ :— भोगभूमिमे उत्तम वर्ण-विशिष्ट, सरल, मन्द-कषायी और नाना प्रकारकी जातियों वाले तिर्यञ्च जीव युगल-युगल रूपसे होते हैं ॥३६२॥

गो-केसरि-करि-मयरा-सूवर-सारंग - रोज्ज-महिंस-वया ।

वाणर-गवय-तरच्छा, वग्घ -^३सिगालच्छ-भल्ला य ॥३६३॥

कुक्कुड - कोइल - कीरा, पारावद - रायहंस - कारंडा ।

वक-कोक-कोच-^४किजक - पट्टुवीओ होंति अण्णे वि ॥३६४॥

अर्थ :— (भोगभूमिमे) गाय, सिंह, हाथी, मगर, झूकर, सारङ्ग, रोम्भ (ऋश्य), भंस, वृक (भेडिया), बन्दर, गवय, तेंदुआ, व्याघ्र, शृगाल, रीछ, भालू, मुर्गा, कोयल, तोता, कबूतर, राजहंस, कारड, बगुला, कोक (चकवा) क्राँच एवं किञ्जक तथा और भी तिर्यञ्च होते हैं ॥३६३-३६४॥

जह मण्णुवाणं भोगा, तह तिरियाणं हवन्ति एवाणं ।

णिय - णिय - जोग्गत्तेणं, फल - कंद - तणंकुरादीणि ॥३६५॥

१. द.व.क.ज.उ. षडूडा, य. समूसा । २. व.ल. समुवा । ३. व.उ. सिगालस्स, क सिगालस्स ।

४. व. क. य. उ. किजक, द. ज. किजक, य. कडगा ।

अर्थ :—वहा जिस प्रकार मनुष्योंके भोग होते हैं उसीप्रकार इन तिर्यञ्चोंके भी अपनी-अपनी योग्यतानुसार फल, कन्द, तृण और अंकुरादिके भोग होते हैं ॥३६५॥

वग्धादी भूमिचरा, वायस - पट्टवी य खेयरा तिरिया ।

मांसाहारेण विना, भुञ्जते सुरतरुण महुर - फलं ॥३६६॥

अर्थ :—वहाँ व्याघ्रादिक भूमिचर और काक आदि नभचर तिर्यञ्च, मांसाहारके विना कल्पवृक्षोंके मधुर फल भोगते हैं ॥३६६॥

हरिचादि-^१तणचरा तह, भोगमहीए तण्णाणि दिव्वाणि ।

भुञ्जति जुवल - जुगला, उदय-विणोस-प्यहा सब्बे ॥३६७॥

अर्थ :—भोगभूमिमें उदयकालीन सूर्यके सदृश प्रभा वाले समस्त हरिणादिक तृण-जीवी पशुओंके युगल दिव्य तृणोंका भोजन करते हैं ॥३६७॥

सुषमासुषमा काल (के वर्णन) का उपसंहार—

कालम्मि सुसमसुसमे, ^२चउ-कोडाकोडि-उवहि-उवमम्मि ।

पडभावो हीयते, उच्छेहाळ - बलद्धि - तेआइ^३ ॥३६८॥

अर्थ :—चार कोड़ाकोड़ी सागरोपम (प्रमाण) सुषमासुषमा कालमें पहिलेसे क्षरीरकी ऊँचाई, आयु, बल, ऋद्धि एवं तेज आदि हीन-हीन होते जाते हैं ॥३६८॥

सुषमा कालका निरूपण—

उच्छेह-पट्टुदि खोणे, सुसमो णामेण पविसवे कालो ।

तस्स पमाणं सायर - उवमाणं तिण्णा कोडिकोडीओ ॥३६९॥

अर्थ :—इस प्रकार उत्सेध-आदि क्षीण होनेपर सुषमा नामका द्वितीय काल प्रविष्ट होता है। उसका प्रमाण तीन कोड़ाकोड़ी सागरोपम है ॥३६९॥

मनुष्योंकी आयु, उत्सेध एवं कान्ति—

सुसमस्सादिम्मि ^४गराणुच्छेहो चउ - सहस्स - चावाणि ।

वो पल्ल - पमाणाळ, संपुण्णमियंक - सरिस - पहा ॥४००॥

। दं ४००० । प २ ।

अर्थ :—सुषमा कालके प्रारम्भमें मनुष्योंके शरीरका उत्प्रेष चार ह्वाय (४०००) घनुष, वायु दो बल्य प्रमास्य और प्रभा (शरीरकी कान्ति) पूर्णचन्द्र सदृश होती है ॥४००॥

पृष्ठभागी हृद्दियोंका प्रमाण—

अट्टाचीसुतर - समयट्टी पुट्टीए होंति एवाचं ।

अञ्जुर-सरिसा इत्थी, तिदस- सरिच्छा जरा होंति ॥४०१॥

अर्थ :—इनके पृष्ठभागमें एकसी अट्टाईस हृद्दियाँ होती हैं । (उस समय) स्त्रियाँ अप्सराओं सदृश और पुरुष देवों सदृश होते हैं ॥४०१॥

सस्थान एव आहार—

तस्सि काले मणुवा, अबल्ल-फल-सरिसममिदमाहार^१ ।

मुञ्जंति छट्ठ - भत्ते, समचउरस्संग - संठाणा ॥४०२॥

अर्थ :—उस कालमें, मनुष्य समचतुरस-संस्थानसे युक्त होते हुए षष्ठभक्त (तीसरे दिन) अन्न (बहेड़ा) फल बराबर अमृतमय आहार करते हैं ॥४०२॥

उत्पन्न होनेके बाद वृद्धिक्रम—

तस्सिं संजादाणं, समयोवरि बालयाण सुत्ताणं ।

णिय - अंगुट्ठिय - लिहणे^३, पंच विणाणिं पबच्चंति ॥४०३॥

अर्थ :—उस कालमें उत्पन्न हुए बालकोके शय्यापर सोते हुए अपना अगूठा चूसनेमें पाँच दिन व्यतीत होते हैं ॥४०३॥

बइसण-अत्थिर-गमणं, चिर-गमण-कला-गुणेण पत्तेक्कं ।

तरुणेणं सम्मत्त - गहण-जोगेण जंति^४ पंच - विणा ॥४०४॥

अर्थ :—पश्चात् उपवेशन, अत्थिरगमन, चिरगमन, कलागुण प्राप्ति, तारुण्य और सम्यक्त्व ग्रहणकी योग्यता, इनमेंसे क्रमशः प्रत्येक अवस्थामें उन बालकोके पाँच-पाँच दिन जाते हैं ॥४०४॥

१. ब. उ. सरिसा । २. द. मविदमाहारं । ३. द. व. विलीहणे । ४. द. व. दिस्साणेव चच्चंति, क. उ. दिस्साणेव पबच्चंति । ५. दिग्गाणि पचवति । ६. द. तरुण्येण, ब. क. उ. तारुणेण । ७. द. व. क. व. उ. जोग-जंति ।

प्रवशेष कथन—

एत्सिय - मेत्स - बिसेत्सं, मोत्सूणं सेस-वण्णर-पयारा ।
सुसमंसुसमम्मि काले, जे भणिदा' एत्थ वत्तब्बा ॥४०५॥

अर्थ :—उपर्युक्त इतनी मात्र विशेषताको छोड़कर शेष वर्णनके प्रकार जो सुषमसुषमा कालमें कहे गये हैं, उन्हें यहाँ भी कहना चाहिए ॥४०५॥

दूसरे कालका प्रमाण आदि—

कालम्मि सुसमणामे, तिय-कोडोकोडि-उबहि-उबमम्मि ।
पडमादो हीयते, उच्छेहाऊ - बलद्धि - तेजावी ॥४०६॥

अर्थ :—तीन कोड़ाकोड़ी सागरोपम-प्रमाण सुषमा नामक कालमें पहिले से ही उत्सेध, आयु, बल, ऋद्धि और तेज आदि उत्तरोत्तर हीन-हीन होते जाते हैं ॥४०६॥

सुषमादुषमा कालका निरूपण—

उच्छेह-पट्टि-सीधे, पबिसेदि हु सुसमदुस्समो कालो ।
तस्स पमाणं सायर - उबमाणं दोण्हि कोडिकोडीयो ॥४०७॥

अर्थ :—उत्सेधादिक क्षीण होने पर सुषमदुषमा काल प्रवेश करता है । उस कालका प्रमाण दो कोड़ाकोड़ी सागरोपम है ॥४०७॥

तत्कालादिम्मि 'जराणुच्छेहो दो सहस्स - चाबाणि ।
एक्क - पल्लिदोबमाऊ, प्रियंगु - सारिच्छ - वण्ण-धरा ॥४०८॥

। दं २००० । प १ ।

अर्थ :—उस कालके प्रारम्भमें मनुष्योंको ऊँचाई दो हजार (२०००) धनुष, आयु एक पल्प प्रमाण और वर्ण प्रियंगु फल सदृश होता है ॥४०८॥

चउसट्ठी पुट्टोए, खराख - खारोण होंति अट्टो वि ।
अच्छर - खरिसा रामा, अमर - समाणो जरो होदि ॥४०९॥

अर्थ :- उस कालमे स्त्री-पुरुषोंके पृष्ठभागमें चीसठ हड्डियाँ होती हैं, तथा नारियाँ अप्सराओं सदृश और पुरुष देवों सदृश होते हैं ॥४०६॥

तत्काले ते मणुषा, आमलक - पमाणमनिय - आहारं ।

भुञ्जति दिणंतरिया, समचउरस्संग - संठाणा ॥४१०॥

अर्थ :- उस कालमे समचतुरस्रस्थानसे युक्त वे मनुष्य एक दिनके अन्तरसे जाँवले बराबर अमृतमय आहार ग्रहण करते हैं ॥४१०॥

तस्सि संजादाणं, सयणोवरि बालयाण सुत्ताणं ।

णिय - भ्रंगुद्वय - लिहणे, सत्त विणाणि पवच्चन्ति ॥४११॥

अर्थ :- उस कालमें उत्पन्न हुए बालकोंके शय्यापर सोते हुए अपना अंगूठा नूसनेमें सात दिन व्यतीत होते हैं ॥४११॥

बइसण-अस्थिर-गमणं, धिर-गमण-कला-गुणेण पत्तेक्कं ।

तरुणेणं सम्मत्तं, गहणं जोगेण सत्त - दिणं ॥४१२॥

अर्थ :- पश्चात् उपवेशन, अस्थिरगमन, स्थिरगमन, कलागुणप्राप्ति, तारुण्य और सम्यक्त्व-ग्रहणकी योग्यतासे प्रत्येक अवस्थामे क्रमशः सात-सात दिन जाते हैं ॥४१२॥

एत्थिय - भेत्त - विसेसं, मोत्तूणं सेस-वण्णण-पयारा ।

कालम्मि सुसम - गामे, जे^३ भणिदा एत्थ वत्तच्चा ॥४१३॥

अर्थ :- इतनी मात्र विशेषताको छोड़कर शेष वर्णनके प्रकार जो सुखमा नामक दूसरे कालमे कह आए हैं, वे ही यहाँ पर कहने चाहिए ॥४१३॥

भोगखिदीए ण होति हु, चोरारिप्पहुदि-विविह-बाधाओ ।

असि - पहुदि - च्छक्कम्मा, सीदादप-भाव-वरिसाणि ॥४१४॥

अर्थ :- भोगभूमिमे चोर एवं शत्रु आदि की विविध बाधाएँ, असि आदिक छह-कर्म तथा शीत, आतप, वात (प्रचण्ड वायु) एवं वर्षा नहीं होती ॥४१४॥

भोगभूमिजोमे मार्गणा आदिका निरूपण—

गुणजीवा पञ्जसी, पाणा सण्णा य मग्गणा कमसो ।

उबजोमो कहिदब्बा, भोगखिदी - संभवाण जह-जोग्ग' ॥४१५॥

अर्थ :—भोगभूमिज जीवोके यथायोग्य गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, मार्गणा और उपयोगका कथन क्रमशः करना चाहिए ॥४१५॥

भोगभुवाणं अबरे, दो गुणठाणं विरम्मि चउ - संज्ञा ।

मिच्छाडट्टी सासण - सम्मा मिस्साविरद - सम्मा ॥४१६॥

अर्थ :—भोगभूमिज जीवोके जघन्यसे अर्थात् अपर्याप्त अवस्थामे मिथ्यात्व और सासादन ये दो गुणस्थान होते हैं, तथा उत्कृष्टतासे अर्थात् पर्याप्त अवस्थामें मिथ्यादृष्टि, सासादनमम्यक्त्व, मिश्र और अविरतसम्यग्दृष्टि ये चार गुणस्थान होते हैं ॥४१६॥

ताण अपच्चक्खसाणावरणोदय - सहिद सच्च जीवाणं ।

विसयाणंद - जुवाणं, णाणाविह - राग - पउराणं ॥४१७॥

वेसविरवादि उच्चरि, दस - गुणठाराण - हेवु - भूवाओ ।

जाओ विसोहियाओ, कइया ण ताओ जायते ॥४१८॥

अर्थ :—अप्रत्याख्यानावरण-कषायोदय सहित दीर्घ रागवाले वे सभी जीव विषयोके भ्रानन्दसे मुक्त होते हैं । देशविरतसे लेकर दसवे गुणस्थान पर्यन्तकी कारणभूत उत्पन्न हुई विषुद्धि वही किसी भी जीवके नहीं पाई जाती है ॥४१७-४१८॥

जीव - समासा दोण्ण य, निब्बत्तिय-पुण्णपुण्ण-भेदेणं ।

पञ्जसी छग्गेया, तेसिय - मेत्ता अयज्जसी ॥४१९॥

अर्थ :—इन जीवोंके निर्दूत्यपर्याप्त और पर्याप्तके भेदसे दो जीवसमास, छहो पर्याप्तियाँ और इतनी ही अपर्याप्तियाँ होती हैं ॥४१९॥

अक्खा 'मण-वच-काया, उस्सासाऊ हवंति वस पाणा ।

'पज्जत्ते इदरस्सि, मण - वच - उस्सास - परिहीणा ॥४२०॥

अर्थ :- उनके पर्याप्त अवस्थामे पांचो इन्द्रियां, मन, वचन, काय, इवामोच्छ्वास एव आयु ये वस प्राण तथा इतर अर्थात् अपर्याप्त अवस्थामे मन, वचन और इवामोच्छ्वासमे रहित श्रेय सात प्राण होते हैं ॥४२०॥

चउ-सण्णा एर-तिरिया, सयला तस-काय जोग-एक्करसं ।

चउ-मण-चउ-वयणाइं, 'ओराल-दुगं च कम्म - इयं ॥४२१॥

पुरिसित्थी-वेद-जुदा, सयल - कसाएहि संजुदा शिच्चं ।

छण्णाण - जुदा ताइं, मदि ओहीणाण - सुद - णाणे ॥४२२॥

मदि - सुद - अण्णाणाइं, विभंगणाणं असंजदा सव्वे ।

तिहंसणा य ताइं, चक्खु - अचक्खूणि ओहि-दंसराय ॥४२३॥

भोगपुण्णए^१ मिच्छे, सासण - सम्मे य असुह-तिय-लेस्स ।

काऊ जहण्ण सम्मे, मिच्छ - चउषके सुह - तियं पुण्णे^२ ॥४२४॥

भव्वाभव्वा छस्सम्मत्ता 'उवसमिय - खइय - सम्मत्ता ।

तह वेदय - सम्मत्तं, सासण - मिस्ता य मिच्छा य ॥४२५॥

सण्णी जीवा होंति ह, दोण्णि य आहारिणो अणाहारा ।

सायार - अणायारा, उवजोगा होंति नियमेणं ॥४२६॥

अर्थ :- भोगभूमिज जीव आहार, भय, मंथुन एवं परिग्रह इन चार संज्ञाओं से; मनुष्य और तिर्यञ्च गतिसे; सकल अर्थात् पचेन्द्रिय जातिसे; तस कायसे, चारो मनोयोग, चारो वचनयोग दो श्रोदारिक (श्रोदारिक, श्रोदारिक मिश्र) तथा कामंश इन ग्यारह योगोंसे; पुरुषवेद और स्त्री

१. द. मणु । २. द. व. क. ज. य उ. पज्जत्ती । ३. व. क. उ. उराल । ४. द. व. क. ज.

य. उ. पुण्णम । ५. व. उ. पुणे । ६. द. वेवसमिय ।

वेदसे; नित्य सम्पूर्ण कषायोसे, मति, श्रुत, भ्रवधि, मति अज्ञान, श्रुताज्ञान एवं विभंगज्ञान, इन छह ज्ञानोसे; सर्व असयम; चक्षु, अचक्षु और भ्रवधि इन तीन दर्शनोंसे संयुक्त होते हैं। अपर्याप्त भ्रवस्थामें मिथ्यात्व एवं सासादन गुणस्थानोंमें कृष्ण, नील, कापोत इन तीन अशुभ लेश्याओंसे और चतुर्थ गुणस्थानमें कापोत लेश्याके जघन्य अक्षो से तथा पर्याप्त अवस्थामें मिथ्यात्वादि चारो गुणस्थानोंमें तीनों शुभ लेश्याओंसे युक्त; भ्रव्यत्व तथा अभ्रव्यत्वसे; औपशमिक, क्षायिक, वेदक, मिश्र, सासादन और मिथ्यात्व इन छहो सम्यक्त्वोंसे संयुक्त होते हैं। संजी, आहारक और अनाहारक होते हैं तथा नियमसे साकार (ज्ञान) और निराकार (दर्शन) उपयोग वाले होते हैं ॥४२१-४२६॥

मंद - कसायेण जुदा, उदयागद-सस्थ-पयडि-संजुत्ता ।

विबिह - विणोदासत्ता, णर - तिरिया भोगजा होंति ॥४२७॥

अर्थ :—भोगभूमिज मनुष्य और तिर्यच मन्दकषायसे युक्त, उदयमें आयी हुई पुष्य-प्रकृतियोमें संयुक्त तथा अनेक प्रकारके विनोदोमें आसक्त रहते हैं ॥४२७॥

तालिका : १०

सुषमा-सुषमा आदि तीन कालोंमें आयु, आहारादिकी वृद्धि-हानिका प्रदर्शन

क्र०	विषय	सुषमासुषमा	सुषमा	सुषमा-सुषमा
१	भूमि-रचना	उत्तम भोगभूमि	मध्यम भोगभूमि	जघन्य भोगभूमि
२	काल-प्रमाण	४ कोडाकोड़ी सागर	३ कोडाकोड़ी सागर	२ कोडाकोड़ी सागर
३	आयु—उत्कृष्ट जघन्य	३ पत्य २ पत्य	२ पत्य १ पत्य	१ पत्य १ समय + १ पूर्वकोटि
४	आहार प्रमाण	बेर प्रमाण	बहेडा प्रमाण	श्रीवला प्रमाण
५	श्रवणाहना—उत्कृष्ट जघन्य	६००० धनुष ४००० धनुष	४००० धनुष २००० धनुष	२००० धनुष ५०० धनुष
६	आहार-अन्तराल	३ दिन बाद	२ दिन बाद	१ दिन बाद
७	कवला है किन्तु निहारका	अभाव	अभाव	अभाव
८	उत्तानशयन अगूठा चूस	३ दिन पर्यन्त	५ दिन पर्यन्त	७ दिन पर्यन्त
९	उपवेशन (बैठना)	३ दिन पर्यन्त	५ दिन पर्यन्त	७ दिन पर्यन्त
१०	अस्थिर गमन	३ दिन पर्यन्त	५ दिन पर्यन्त	७ दिन पर्यन्त
११	स्थिर गमन	३ दिन पर्यन्त	५ दिन पर्यन्त	७ दिन पर्यन्त
१२	कला गुण प्राप्ति	३ दिन पर्यन्त	५ दिन पर्यन्त	७ दिन पर्यन्त
१३	तारुण्य प्राप्ति	३ दिन पर्यन्त	५ दिन पर्यन्त	७ दिन पर्यन्त
१४	सम्यक्त्व-योग्यता	३ दिन पर्यन्त	५ दिन पर्यन्त	७ दिन पर्यन्त
१५	शरीर पृष्ठभागकी हड्डियाँ	२५६	१२८	६४
१६	सयम	अभाव	अभाव	अभाव
१७	गुरास्थान प्रपर्याप्तमे पर्याप्तमे	मिथ्यात्व-सासादन पहले से चार तक	मिथ्यात्व-सासादन पहले से चार तक	मिथ्यात्व-सासादन पहलेसे चार तक
१८	शरीर की कान्ति	सूर्य प्रभा सदृश	पूर्ण चन्द्रप्रभा सदृश	प्रियगु फल सदृश
१९	भरणके बाद शरीर	मेघवत् विलीन	मेघवत् विलीन	मेघवत् विलीन
२०	भरण बाद गति— मिथ्यादृष्टि सम्यग्दृष्टि	भवनत्रिक में दूसरे स्वर्ग पर्यन्त	भवनत्रिकमें दूसरे स्वर्ग पर्यन्त	भवनत्रिकमें दूसरे स्वर्ग पर्यन्त

प्रतिश्रुति नामक प्रथम कुलकरका निरूपण—

पलिदोबमट्टमसे, किञ्चूणे तदिय - काल - अबसेसे ।
पढमो कुलकर-पुरिसो, उप्पज्जदि पडिसुदी सुवण्ण-णिहो ॥४२८॥

प
८

अर्थ :—तृतीय कालके कुछ कम एक पत्न्योपमके आठवें भाग प्रमाण (काल) अवशेष रहने पर सुवर्ण सदृश प्रभासे युक्त प्रतिश्रुति नामक प्रथम कुलकर पुरुष उत्पन्न होता है ॥४२८॥

एवक-सहस्सं अडसय-सहिदं चावाणि तस्स उच्छेहो ।
पल्लस्स दसमभागो, आऊ देवी 'सयंपहा' शाम ॥४२९॥

। दं १८०० । प-१० । १

अर्थ :—उसके शरीरका उत्सेघ एक हजार आठ सौ घनुष, आयु पत्यके वसवें भाग प्रमाण और स्वयंप्रभा नामकी देवी थी ॥४२९॥

णभ-गज-घंट-णिहाणं^१, चंदाइच्चाण मंडलाणि तदा ।
आसाढ - पुण्णिमाए, वट्ठणं भोगभूमिजा सञ्जे ॥४३०॥

*आकस्सिकमदिघोरं, उप्पाद जादमेवमिदि मत्ता ।
पज्जाउला पकंपं, पत्ता पवणेज पहद - हवसो उव ॥४३१॥

अर्थ :—उस समय समस्त भोगभूमिज आषाढ मासकी पूर्णिमामें आकाशरूपी हाथीके घंटे सदृश चन्द्र और सूर्यके मण्डलोंको देखकर व्याकुल होते हुए 'यह कोई आकस्मिक महा भयानक उत्पात हुआ है, ऐसा समझकर वायुसे आहत वृक्षके सदृश प्रकम्पनको प्राप्त हुए ॥४३०-४३१॥

'पडिसुद-शामो कुलकर-पुरिसो एवाण 'देइ अमय-गिरं ।
तेजंगा कालवत्ता, संजादा मंद - किरणोघा ॥४३२॥

१. द. व. क. ज. व. उ. सयंपहो । २. द. । प १० । ३. द. व. क. ज. व. उ. भाणं ।

४. क. ज. व. उ. आकस्मिकमदिघोरं । ५. द. व. क. ज. व. उ. जादमेवमिदि । ६. द. मधिसुदि ।

७. क. ज. व. उ. दधि । ८. अ. व. तेजवार ।

तत्कारणेण ^१एण्हि, ससहर-रविमंडलाणि गयणम्मि ।
पयडाणि षत्थि तुम्हं, एदाण विसाए भय - हेव्वं ॥४३३॥

अर्थ :- तब प्रतिश्रुति नामक कुलकर पुरुषने उनको निर्भय करने वाली वाणीसे बतलाया कि कालवश अब तेजाग जातिके कल्पवृक्षोके किरण-समूह मन्द पड गये हैं, इस कारण इस समय आकाशमे चन्द्र और सूर्यके मण्डल प्रगट हुए हैं। इनकी ओरसे तुम लोगोंको भयका कोई कारण नहीं है ॥४३२-४३३॥

रिगच्चं चिय ^२एदाणं, उदयत्थमग्गाणि होंति आयासे ।
पडिहद - किरणाण ^३ पुढं तेयंगदुमाण तेएहि ॥४३४॥

अर्थ :- आकाशमे यद्यपि इनका उदय और अस्त नित्य ही होता रहा है, परन्तु तेजाङ्ग जातिके कल्पवृक्षोके तेजसे उनकी किरणोके प्रतिहत होनेमे (अब तक) वे प्रगट नहीं दिखते थे ॥४३४॥

जंबूदीवे मेरुं, कुव्वंति पदाहिणं तरणि - चंदा ।
रत्ति - दिणाण विभागं, ^४कुणमाणा किरण - सत्तोए ॥४३५॥

अर्थ :- ये सूर्य एवं चन्द्रमा अपनी किरणगतिमे दिन-रातरूप विभाग करते हुए जम्बू-द्वीपमे मेरुपर्वतकी प्रदक्षिणा किया करते हैं ॥४३५॥

सोऊण तस्स वयणं, संजादा णिब्भया तदा सव्वे ।
अच्चंति चलण - कमले ^५, युणंति बहुविह - पयारेहि ॥४३६॥

अर्थ :- इस प्रकार उन (प्रतिश्रुति) के वचन सुनकर वे सब नर-नारी निर्गम्य होकर बहुत प्रकारसे उनके चरणकमलोकी पूजा और स्तुति करते हैं ॥४३६॥

१ द. ब. क. ज. य. उ. यण्हि । २ द. ब. उ. भवदेहो, क. ज. व. भयहेयो । ३. द. ज. क. एदाणि । ४ द. ब. क. ज. य. उ. किरणाणि । ५. ब. क. उ. कुणमाणो । ६ द. कमलो ।

सन्मति नामक मनुका निरूपण—

पडिसुव - मरणाहु तदा, पत्नस्सासीदिबंस - विच्छेदे^१ ।

उप्पन्जवि विविय - मणू, सम्मदि - नामो सुवण्ण-जिहो ॥४३७॥

। प १० ।

अर्थ :—प्रतिश्रुति कुलकरकी मृत्युके पश्चात् पत्यके अस्सीवें-भागके व्यतीत हो जाने पर स्वर्ण सदस्र कान्ति वाला सन्मति नामक द्वितीय मनु उत्पन्न होता है ॥४३७॥

एक - सहस्रं ति-सयस्सहिर्वं दंढाणि तस्स उच्छेहो ।

पलिदोवम-सद-भागो, आऊ देवी जसस्सदो नामो ॥४३८॥

। दंढ १३०० । ^{प १}_{१००} ।

अर्थ :—उसके शरीरकी ऊँचाई एक हजार तीनसौ धनुष प्रमाण और आयु पत्योपमके सौवें भाग प्रमाण थी उसकी देवीका नाम यस्सवती था ॥४३८॥

तक्काले तेयंगा, जहु - पभावा ह्वंति ते सब्बे ।

तत्तो सूरत्थमणे, बट्ठण तमाइ^२ तारात्ति ॥४३९॥

उप्पादा अहघोरा, अबिहु - पुब्बा^३ विअंभिदा एदे ।

इय भोगज-जर-तिरिया, जिअर-भय-भंससा^४ जादा ॥४४०॥

अर्थ :—उस समय तेजाङ्ग जातिके सब कल्पवृक्ष प्रगाहीन हो जाते हैं, इसीलिए सूर्यके अस्तङ्गत होनेपर अन्धकार और तारा पंक्तियों को देखकर 'ये अत्यन्त भयानक अदृष्ट-पूर्व उत्पात प्रकट हुए' यह मानकर वे भय भूमिज मनुष्य-तिर्यञ्च भयसे अत्यन्त व्याकुल हुए ॥४३९-४४०॥

सम्मदि-शामो कुलकर-पुरिसो^५ भोदास वेहि अमय-मिरं ।

तेयंगा कासवसा, जिम्मूस - पचहु - किरलोघा ॥४४१॥

१. व. व. विच्छेदो । २. व. व. ताराइ । ३. द. विअंभिदा, व. क. व. उ. विअंभिदा ।
४. द. अवेत्तसा, व. क. व. उ. अम्मसा । ५. द. व. क. व. उ. भेदास देवि । व. भेदास देवि ।

तेषु तमं चित्चरिदं, ताराचं मंडलं पि गयन्तसे ।

तुम्हाण' नित्य किंचि वि, एवाण विसाए भय - हेइ ॥४४२॥

अर्थः—ननु सन्मति नामक कुलकर उन भयभीत हुए भोगभूमियोंको निर्भय करने वाली वाणीसे कहते हैं कि अब कालवश तेजाङ्ग कल्पवृक्षोंके किरण समूह सर्वथा नष्ट हो चुके हैं । इस कारण आकाश प्रदेशमें इस समय अन्धकार और (साथ ही) ताराओंका समूह भी फँस गया है । पुत्र लोगोंको इनकी ओरसे कुछ भी भयका कारण नहीं है ॥४४१-४४२॥

अतिय सदा अंधारं, ताराओ 'तेयंग - तर - गणोह ।

पडिहद-किरणा पुब्बं, काल-वसेणञ्ज 'पायडा जादा ॥४४३॥

अर्थः—अन्धकार और नारागण तो सदा ही रहते हैं, किन्तु पूर्वमें तेजाङ्ग जातिके कल्प-वृक्षोंके समूहोंसे वे प्रतिहत-किरण थे, सो आज कालवश प्रगट हो गये हैं ॥४४३॥

बंबुदीवे मेरुं, कुब्बंति पदाहिणं गहा तारा ।

नक्खत्ता णिच्चं ते, तेज - विणासा तमो होदि ॥४४४॥

अर्थः—वे ग्रह, तारा और नक्षत्र जम्बूद्वीपमें मेरुकी प्रदक्षिणा नित्य किया करते हैं । तेजके विनाशसे ही अंधकार होता है ॥४४४॥

सोऊए तस्स वयणं, संजादा णिब्भया तदा सव्वे ।

अच्चंति चसण - कमसे, बुच्चंति 'विबिहेहि तुत्तोहि ॥४४५॥

अर्थः—तब कुलकरके ये वचन सुनकर वे सब निर्भय हो गये और उसके चरण-कमलोंकी पूजा करने लगे तथा अनेक स्तोत्रोंसे स्तुति करने लगे ॥४४५॥

शेमङ्कर नामक कुलकरका निरूपण—

सम्मदि - सम्म - पवेसे, अट्ट-सयाबहिद-पत्त-विच्छेदे" ।

शेमं करो सि कुत्तयर - पुरिसो' उप्पञ्जदे तदिओ ॥४४६॥

। प . ० . ।

१. द. व. क. व. उ. तुम्हाण । २. द. व. व. तेयन्तरणोह, व. क. उ. तेयन्तरणोह ।

३. द. व. व. पायदा । ४. द. व. क. व. य. उ. विबिहेरुत्तोहि । ५. द. व. व. विच्छेदो । ६. द. व. व. तदिओ ।

अर्थ :-सन्मति नामक कुलकरके स्वर्ग चले जाने पर आठ सौ से भाजित एक पत्य कालके पश्चात् क्षेमङ्कर नामक तीसरा कुलकर पुरुष उत्पन्न हुआ ॥४४६॥

'अदु-सय-चाव-तु'गो, सहस्स - हरिदेवक-पल्ल-परमाऊ ।

चामोयर - सम - बण्णो, तस्स सुणंवा महादेवी ॥४४७॥

। द ८०० । $\frac{१}{२०००}$ ।

अर्थ :- इस कुलकरके शरीरकी ऊंचाई आठ सौ (८००) धनुष थी । आयु हजारसे भाजित एक पत्य प्रमाण और वर्ण स्वर्ण सदृश था । उमकी महादेवी मुनन्दा थी ॥४४७॥

बग्घादि-तिरिय-जीवा, काल-बसा क्रूर-भाबभावण्णा ।

'तबभयदो भोग - जरा, सव्वे ^३अच्चाउला जावा ॥४४८॥

अर्थ :- उस समय कालवश व्याघ्रादिक तिर्यञ्च जीवोके क्रूर-परिणामी होनेसे सर्व भोगभूमिज मनुष्य उनके भयमे अत्यन्त ध्याकुल होगये थे ॥४४८॥

लेमंकर - णाम^५ मणू, भीदाणं^६ देदि दिव्व - उववेसं^१ ।

कालस्स बिकारादो, एदे क्रूरसणं पत्ता ॥४४९॥

ता 'एण्हि बिस्सासं, पापाणं मा करेज्ज कइया^७ वि ।

तासेज्ज 'कल्लस - वयणा, इय भणिदे णिबभया जावा ॥४५०॥

अर्थ :- तब क्षेमङ्कर नामक मनु उन भयभीत प्राणियोंको दिव्य उपदेश देते हैं कि कालके विकारसे ये तिर्यञ्च जीव क्रूरताको प्राप्त हुए हैं, इसलिए अब इन पापियोंका विश्वास कदापि मत करो; ये विकृतमुल प्राणी तुम्हें त्रास दे सकते हैं । उनके ऐसा कहने पर वे भोगभूमिज निर्भयता को प्राप्त हुए ॥४४९-४५०॥

१ द. ब. क. ज. उ. सट्टु । २ द. ब. क. ज. य. उ. तबभयदा । ३ द. अच्चाउला ।

४ द. क. ज. य. उ. णामो । ५ द. ब. क. ज. य. उ. भयवहासं देहि । ६ द. क. उ. उववेसं ।

७ क. ज. य. उ. एण्हि । ८ द. ब. क. ज. य. उ. कइयाणि । ९ द. ब. क. ज. य. उ. कल्लस ।

क्षेमधर नामक मनुका निरूपण—

सम्मणुबे तिबिष-गदे, अट्ट - सहस्सावहरिद - पल्लम्मि ।
अंतरिदे उप्पज्जदि, तुरिमो खेमंधरो' य मणू ॥४५१॥

। १ २००० ।

अर्थ :—उस कुलकरका स्वर्गनाम होनेपर आठ हजारसे भाजित पल्प-प्रमाण कालके अनन्तर क्षेमधर नामक चतुर्थ मनु उत्पन्न हुआ ॥४५१॥

तस्सुबुद्धेहो बंडा, सत्त - सया पंचहत्तरी - जुत्ता^१ ।
सय - कदि - हिदेक्क - पल्ला आउ - पमाणं पि एदस्स ॥४५२॥

। १ ७७५ । ५ , ०००० ।

अर्थ :—उसके शरीरकी ऊंचाई मात सौ पचहत्तर धनुष और आयु सौ के वर्ग (१००००) में भाजित एक पल्प प्रमाण थी ॥४५२॥

सो कंचण-सम-वण्णो, देवी विमला^३ त्ति तस्स 'विकखादा ।
तक्काले' सीहादी, कूरमया खंति मणुब - मंसाइं ॥४५३॥

अर्थ :—उसका वर्ण स्वर्ण सदृश था उसकी देवी 'विमला' नामसे विख्यात थी । उस समय क्रूरता को प्राप्त हुए सिंहादिक मनुष्योंका मांस खाने लगे थे ॥४५३॥

सीहप्पहुदि - भएणं, अदिभीदा भोगभूमिजा ताहे^४ ।
उवदिसदि मणू ताणं, बंडादि सुरक्खणोबायं ॥४५४॥

अर्थ :—तब सिंहादिकके भयसे अत्यन्त भयभीत हुए भोगभूमिजोको क्षेमधर मनुने उनसे अपनी सुरक्षाके उपायभूत दण्डादिक रखने का उपदेश दिया ॥४५४॥

१ द. ब. क. ज. य. उ. वेमधरा । २ क. ज. य. उ. जुत्ता । ३. क. ज. य. उ. विमलं ।
४ द. ब. क. ज. य. उ. विकखादी । ५ ज. य. तक्कालो । ६. द. ज. य. तादे, द. क. उ. ताबो ।

सीमङ्कर नामक मनुका निरूपण—

तम्मणुवे षाक - गवे, सीबी-सहस्सावहरिद-पल्लम्मि ।
अंतरिदे^१ पंचमओ, जम्मदि सीमंकारो त्ति मणू ॥४५५॥

। प १ ।
८०००० ।

अर्थ :—इस कुलकके स्वर्ग चले जानेपर अस्सी हजारसे भाजित पत्य प्रमाण कालके अन्तरसे पाँचवे सीमङ्कर मनुका जन्म हुआ ॥४५५॥

तत्सुच्छेहो दंडा^२, पण्णासब्भहिय - सत्त - सय - मेत्ता ।
सवसेण भजिद - पल्लं, आऊ वण्णो सुवण्ण-णिहो ॥४५६॥

। द ७५० । प १ ।
१००००० ।

अर्थ :—उसके शरीरका उत्सेष सातसौ पचास (७५०) धनुष, आयु एक लाखसे भाजित पत्य प्रमाण और वर्ण स्वर्ण सदृश था ॥४५६॥

देवी तत्स पसिद्धा, णामेण मणोहरि त्ति तवकासे ।
कप्पतरू अण्ण - फला, ^३अदिलोहो होदि मणुवाणं ॥४५७॥

अर्थ :—उसकी देवी 'मनोहरी' नामसे प्रसिद्ध थी । इस समय कल्पवृक्ष अल्प फल देने लगे थे और मनुष्योंमें लोभ बढ़ चला था ॥४५७॥

सुरतरू - लुद्धा^४ जुगला, अण्णोण्णं ते कुणति संवावं ।
सीमंकरेण सीमं, कादूण णिबारिवा सव्वे ॥४५८॥

१. द. व. क. उ. अतरिदे पंचमदी, ज. त अंतरिदे पंचमदी । २. द. क. ज. य. उ. दंडो ।

३. द. व. ज. आदिलोहादि । ४. द. क. लद्धा ।

अर्थ :—कल्पवृक्षोमे लुब्ध हृण वे युगल परस्पर विवाद करने लगे थे । तब सीमा निर्धारित करके सीमङ्कर द्वारा उन सबका पारस्परिक सघर्ष रोका गया ॥४५८॥

उपयुक्त पांच कुलकरोकी दण्ड व्यवस्था—

सिक्खं कुण्ति ताणं, पडिसुदि - पट्टदी कुलंकरा पंच ।

सिक्खण - कम्म - णिमित्तं, दंडं कुव्वति 'हाकारं' ॥४५९॥

अर्थ :—प्रतिश्रुति आदि पांच कुलकर उन (भोगभूमिजो) को शिक्षा देते हैं और इम शिक्षण कार्यके निमित्त 'हा' इस प्रकारका दण्ड (विधान) करते हैं ॥४५९॥

सीमन्धर नामक कुलकरका निरूपण—

तम्मणुवे तिदिब - गदे, अड-लक्खावहिद-पस्स-परिकंते ।

सीमंधरो त्ति छट्ठो, उप्पज्जदि 'कुलकरो पुरिसो ॥४६०॥

| प १
द ल

अर्थ :—इस (सीमङ्कर) कुलकरके स्वर्ग चले जानेपर अठ लाखसे भाजित पत्य प्रमाण काल बाद सीमन्धर नामक छठा कुलकर पुरुष उत्पन्न होता है ॥४६०॥

तस्सुक्खेहो 'बंधा, पचबीसअभिय - सत्त - सय - मेत्ता ।

दस-लक्ख - भजिद - पल्लं, आऊ देवी जसोहरा णाम ॥४६१॥

। दड ७२५ । प १,००००००

अर्थ :—उसके शरीरका उत्सेध सातसौ पच्चीस धनुष था और आयु दस लाखसे भाजित पत्य प्रमाण थी । इसके 'यशोधरा' नामकी देवी थी ॥४६१॥

तत्काले कप्पहुमा, अदिबिरला उप्प-फल-रत्ता ह्वंति ।

भोग - णराणं तेषु, कलहो उप्पज्जदे णिक्खं ॥४६२॥

अर्थ :—इस कुलकरके समयमें कल्पवृक्ष अत्यन्त विरल और अल्पफल एवं अल्प रस वाने हो चाते हैं, इसलिये भोगभूमिज मनुष्यों के बीच इनके विषयमें नित्य ही कलह उत्पन्न होने लगता है ॥४६२॥

सव्यवकलह - विदारण - हेतुओ ताज कुणइ सीमाओ ।

तर - शुच्छादी चिन्हं, तेण य सीमंघरो^१ भजिओ ॥४६३॥

अर्थ :—वह कुलकर कलह दूर करनेके निमित्त वृक्षां तथा पाषां (या फलोंके गुच्छों) आदिको चिह्न रूप मानकर सीमा नियत करता है अतः वह सीमन्तर कहा गया है ॥४६३॥

विमलवाहन कुलकरका निरूपण—

तम्मजुवे सग्य - गदे, असीदि-लक्खावहरिद-पल्लम्मि ।

बोसीणे उप्पण्णो, सत्तमओ^२ विमलवाहणो सि मणू ॥४६४॥

१ ?
००००००० ।

अर्थ :—सीमन्तर मनुके स्वर्ग चले जानेपर अस्सी लाखसे भाजित पत्य प्रमाण काल बाद विमलवाहन नामक सातवां मनु उत्पन्न हुआ ॥४६४॥

सत्त-सय-चाव - तुंयो, इगि-कोडो-भजिद-पल्ल-परमाऊ ।

कंचण - सरिच्छ - वण्णो, सुमदी - जामा महादेवी ॥४६५॥

?
दंड ७०० । ५ १००००००० ।

अर्थ :—यह मनु सातसौ धनुष-प्रमाण ऊँचा, एक करोड़से भाजित पत्यप्रमाण आमुका धारक और स्वर्ण सट्टा बर्णवाना था । इसके सुमति नामकी महादेवी थी ॥४६५॥

तत्काले भोग - जरा, गमजायमणेहि पीडिदा संता^३ ।

आरोहति करिद - प्यहुदि तस्सोबवेसेण^४ ॥४६६॥

१ क. क. व. उ. सम्पाकसह । २. क. असीमकर । ३. द. व. क. व. उ. विमलवाहण ।
४. द. क. व. व. सत्ता । ५. द. क. व. उ. तस्सोबवेसेण ।

अर्थ :—इस समय गमनागमनसे पीड़ाको प्राप्त हुए भोगभूमिज मनुष्य इस मनुके उपदेशसे हाथी आदि पर सवारी करने लगे थे ॥४६६॥

चक्षुष्मान कुलकरका निरूपण—

सत्तमए ञाक - गदे, अड-कोडो-भजिद-पत्स-विच्छेदे ।

उपपञ्जदि अट्टमप्रो, चक्षुष्मो कणय - वण - तण ॥४६७॥

१
। प ८००००००० ।

अर्थ :—सप्तम कुलकरके स्वर्गस्थ होने पर आठ करोड़से भाजित पत्य-प्रमाण कालके अनन्तर स्वर्ग सट्ट वषर्ण वाले शरीरमे युक्त चक्षुष्मान् नामक आठवाँ कुलकर उत्पन्न होता है ॥४६७॥

तस्सुच्छेहो दंडा, पणवीस - विहोण - सत्त - सय-मेत्ता ।

दस - कोडि - भजिदमेक्कं, पलिदोवममाउ - परिमाणं ॥४६८॥

१
। दं ६७५ । प १०००००००० ।

अर्थ —उसके शरीरकी ऊँचाई पच्चीस कम सातती (६७५) धनुष और आयु दस करोड़से भाजित एक पत्योपम प्रमाण थी ॥४६८॥

देवी धारिणि - ञामा, तक्काले भोगभूमि - जुगलाचं ।

संजजिदे णिय - बाले, वट्ठण महम्मयं होवि ॥४६९॥

अर्थ :—(इस कुलकरके) धारिणी नामकी देवी थी । इसके समयमें उत्पन्न हुए अपने बाल युगलको देखकर भोगभूमिज युगलोंको महाभय उपस्थित होता है ॥४६९॥

एस मणू भोदाणं, ताणं भासेदि दिव्वमुखसेसं ।

तुम्हाण सुवा एदे, वेच्छह पुण्णिदु - सुंदरं वदणं ॥४७०॥

अर्थ :—तब यह मनु उन भयभीत युगलोंको दिव्य उपदेश देता है कि ये तुम्हारे पुत्र-पुत्री हैं, पूर्ण चन्द्र सट्ट इनके सुन्दर मुख देखो ॥४७०॥

१. द. व. क. ज. य. उ. उपपञ्चदि । २. व. क. ज. य. उ. सावण्णिदे । ३. द. व. क. ज. य. उ. त्रेवालं । ४. द. व. क. उ. तुम्हेण, व. य. तुम्हेणु ।

तम्मन्नु - उषएसावो, बालय - बबणास्त्रि देविसङ्गुच पुढं ।

भोग - जरा तक्काले, झाउ - बिहीणा विलीयति ॥४७१॥

अर्थ :- इस मनुके उपदेशसे स्पष्ट रूपसे अपने बालकोंके मुक्त देखकर भोगभूमिज (युगल) तत्काल ही आयुसे रहित होकर विचीन हो जाते थे ॥४७१॥

यज्ञस्वी मनुका निरूपण—

अट्टमए ञाक - गदे, असोदि-कोडीहि भजिद-पल्सम्मि ।

बोलीणे उप्पज्जदि, जसस्सि - ञामो मणू जबमो ॥४७२॥

। प ८०००००००० ।

अर्थ :- जाठवें कुलकरके स्वर्ग-गमन पश्चात् अस्सी करोड़से भाजित पत्यके व्यतीत होने पर यज्ञस्वी नामक नवम मनु उत्पन्न हुआ ॥४७२॥

पण्णासाधिय - छस्सय - कोदंड - पमाच - देह - उच्छेहो ।

कंचण - वण्ण - सरीरो, सय - कोडी - भजिद - पल्साऊ ॥४७३॥

। दं ६५० । प १००००००००० ।

अर्थ :- वह स्वर्ण सट्टम वर्ण वाले शरीरसे युक्त, छह सौ पचास अनुष ऊंचा और सौ करोड़से भाजित पत्योपम प्रमाण आयु वाला था ॥४७३॥

ञामेण कंतमाला, ह्वेदि देवी इमस्स तक्काले ।

ञामकरणुच्छवट्टं, उवदेसं देदि जुगलानं ॥४७४॥

अर्थ :- इसके कान्तमाला नामकी देवी थी। यह उस समय युगलौको अपनी सन्तानके नामकरण-उत्सवके लिए उपदेश देता है ॥४७४॥

सट्टू णं उवदेसं, ञामाणि कुणंति ते वि बालाणं ।

विबसिय बोधं कालं, 'पवसीणाऊ विलीयति ॥४७५॥

अर्थ :—इस उपदेशको पाकर वे युगल भी बालकोंके नाम करने (रखते) हैं और बड़े समय रह कर आयु क्षीण होने पर विलीन हो जाते हैं ॥४७५॥

अभिचन्द्र नामक कुलकरका निरूपण—

'णवमे सुरलोच - गदे, अडसय - कोडीर्हि भजिद - पत्तस्मि ।
अंतरिदे उप्पज्जदि, अहिचंदो णाम दसम - मणू ॥४७६॥

?

। प ८०००००००००० ।

अर्थ :—नवम कुलकरके स्वर्गस्थ होने पर आठ मी करोड़से भाजित पत्यके अनन्तर अभिचन्द्र नामक दसवां मनु उत्पन्न होता है ॥४७६॥

पणुबीसाधिय - छस्सय - कोदंड - पमाण - देह - उच्छेहो ।
कोडो - सहस्स - भजिदा पसिदोवममेत्त - परमाऊ ॥४७७॥

?

। दं ६२५ । प १००००००००००० ।

अर्थ :—उसके शरीरकी ऊंचाई छह सौ पच्चीस धनुष और आयु एक हजार करोड़मे भाजित पत्योपम प्रमाण थी ॥४७७॥

कंचण - समाण - वण्णो, देवी णामेण सिरिमदी तस्स ।
तो वि सिसूणं रोदण - वारण - हेदु कहेदि उवदेसं ॥४७८॥

अर्थ :— उसके शरीरका वर्ण स्वर्ण सट्ट था । उसके श्रीमती नामकी देवी थी । वह (कुलकर) भी शिशुओंका रुदन रोकने हेतु उपदेश देता है ॥४७८॥

रत्तीए ससिबिंबं, दरिसिय ^३खेलावणाणि कादूणं ।
ताण ^३वयणोवदेसं, सिक्खावह कुणह जवणं मि ॥४७९॥

१. द. क. सुवमो । २. द. व. नेवापकाणि । ३. द. वधलोदीयं, व. उ. वधलोदीयं,
क व य. वधलोदीयं ।

अर्थ :- रात्रिमें चन्द्रमण्डल दिखाकर और खिलावन करके उन्हें वचनोपदेश (बोलना) सिखाओ तथा यत्न (पूर्वक उनका रक्षण) करो ॥४७६॥

सोऊणं उवएसं, भोग-णरा तह करंति बालाणं ।

अच्छिय थोव-दिणाइं, पक्खीणाऊ विलीयंति ॥४८०॥

अर्थ :- यह उपदेश सुनकर भोगभूमिज मनुष्य शिशुओंके साथ वैया ही व्यवहार करते हैं । वे (युगल) थोड़े दिन रह कर आयुके क्षीण होने पर विलीन हो जाते हैं ॥४८०॥

उपर्युक्त पांच कुलकरोंकी दण्ड व्यवस्था—

लोहेणाभिहदाणं, सोमंधर - पट्टुदि - कुलकरा पंच ।

ताणं सिक्खण-हेट्टुं, हा - मा - कारं कुणंति ^३दंडत्थं ॥४८१॥

अर्थ :- सोमंधरादिक पांच कुलकर लोभसे आक्रान्त उन युगलों के शिक्षण हेतु दण्डके लिये हा (खेद सूचक) और मा (निषेध सूचक) शब्दोंका उपयोग करते हैं ॥४८१॥*

चन्द्राभ मनुका निरूपण—

अहिचंदे तिविच-गवे, दस - ^३घण-हव-अट्ट-कोडि-हिव-पल्ले ।

अंतरिदे चंदाहो, एक्कारसमो हवेवि मणू ॥४८२॥

१

। प ८०००००००००० ।

अर्थ :- अभिचन्द्र कुलकरका स्वर्गारोहण हो जाने पर दसके घन (१०००) से गुणित आठ करोड़ (आठ करोड़ × १०००) से भाजित पत्य प्रमाण अन्तरालके पश्चात् चन्द्राभ नामक ग्यारहवां मनु उत्पन्न होता है ॥४८२॥

छस्सय - ^४दंडुच्छेहो, वर-चामीयर-सरिच्छ-तणु-वण्णो ।

दस - कोडि - सहस्सेहिं, भाजिव - पल्ल - प्यमाणाऊ ॥४८३॥

१. द. व. क. ज. य. उ. लोभेणाभयदाए । २. द. दंडत्था । * बिलोकसार वा० ७९८ के आधार पर शेष कुलकरोंके समय हा-मा-चिक्की व्यवस्था थी । ३. द. व. क. ज. य. उ. दसपुणहव । ४. द. दणुच्छेहो । ५. व. क. ज. य. उ. भजिवे ।

। दं ६०० । प १,०००००००००००० ।

अर्थः—उसके शरीरकी ऊँचाई छह सौ धनुष, शरीरका वर्ण उत्तम स्वर्ण सदृश और आयु दस हजार करोड़ से भाजित पत्योपम प्रमाण थी ॥४८३॥

गिरुदम-लावण्य-जुदा, तस्स य देवी पहाबदी-खामा ।
तक्काले अदिसीदं, होदि तुसारं च अविवाऊ ॥४८४॥

सीदाणिल-फासादो, अइदुक्खं पाबिदूण भोगणरा ।
चंदादो - जोदि - गणे, तुसार - छण्णे ण पेच्छंति ॥४८५॥

अदि - भीदाण इमाणं, चंदाहो देदि दिव्व - उच्चवेसं ।
भोगावणि-हाणीए, जादा कम्मक्खिदी ^३णिग्गडा ॥४८६॥

अर्थः—उस (कुलकर) के अनुपम लावण्य युक्त प्रभावती नामकी देवी थी । उस कालमें शीत बढ गई थी, तुषार छाने लगा था और अति वायु चलने लगी थी । शीतल वायुके स्पर्शसे अत्यन्त दुःख पाकर भोगभूमिज मनुष्य तुषारमें आच्छादित चन्द्रादिक ज्योतिषगणको नहीं देख पाते थे । इस कारण अत्यन्त भयको प्राप्त उन भोगभूमिज पुरुषोंको चन्द्राभ कुलकर यह दिव्य उपदेश देता है कि भोगभूमिकी हानि होने पर अब कर्मभूमि निकट आ गई है ॥४८४-४८६॥

कालस्स विकारादो, एस सहाओ पयट्टे णियमा ।
णसइ तुसारमेधं, एण्ह मत्तंउ - किरणेहि ॥४८७॥

अर्थः—कालके विकारसे नियमतः यह स्वभाव प्रवृत्त हुआ है । अब यह तुषार सूर्यकी किरणोंसे नष्ट होगा ॥४८७॥

सोदूण तस्स वयणं, ते सव्वे भोगभूमिजा मणुवा ।
रवि - ^३किरणसिद्ध-सीदा, पुत्त-कलत्तेहि जीवंति ॥४८८॥

अर्थः—उस (कुलकर) के वचन सुनकर वे सब भोगभूमिज मनुष्य सूर्यकी किरणोंसे शीतको नष्ट करते हुए पुत्र-कलत्रके साथ जीवित रहने लगे ॥४८८॥

१. द. व. य. पासादो । २. द. व. क. उ. लण्णदा, ज. लण्णदा, य. लण्णदा । ३. द. व. क. च. व. उ. रविकिरणसिद्धसीदा ।

मरुदेव कुलकरका निरूपण—

चंदाहे सग्ग-गदे, सोदि-सहस्सेहि गुणिव-कोडि-हिदे ।
पत्ते गयम्मि जम्मइ, मरुदेवो नाम बारसमो ॥४८६॥

१
। ५ ८००००००००००० ।

अर्थ :—चन्द्राभ कुलकरके स्वर्ग चले जानेके बाद अस्ती हजार करोड़से भाजित पत्य व्यतीत होने पर मरुदेव नामक बारहवें कुलकरने जन्म लिया ॥४८६॥

पांच - सया पण्णत्तरि - सहिवा चावाणि तस्स उच्चेहो ।
इगि-त्तक्ख-कोडि-भज्जिं, पलिदोवममाउ - परिमाणं ॥४८७॥

। ६ ५७५ । ५ १०००००००००००० ।

अर्थ :—उसके शरीरकी ऊँचाई पाँचसौ पचहत्तर घनुष और आयु एक लाख करोड़से भाजित पत्योपम प्रमाण थी ॥४८७॥

कंचण - ण्हस्स तस्स य, सरुचा णामेण अणुवमा देवी ।
तक्काले गज्जंता, मेघा वरिसंति तडिबंता ॥४८९॥

अर्थ :—स्वर्ण सटश प्रभावाले उस कुलकरके 'सत्या' नामकी अनुपम देवी थी । उसके समयमें विजली युक्त मेघ गरजते हुए बरसने लगे थे ॥४८९॥

कट्टम - पवह - णदीओ, अदिट्ट-पुब्बाओ ताव वट्ठुणं ।
अदिभोदाण णराणं काल - विभागं अणेदि^३ मरुदेवो ॥४९२॥

अर्थ :—उस समय पहले कभी नहीं देखी गयी कीचड़ युक्त जल-प्रवाहवाली नदियोंको देख कर अत्यन्त भयभीत हुए मनुष्योंको मरुदेव काल-विभाग प्ररूपित करता है ॥४९२॥

कालस्स विकारादो, आसण्णा होबि तुम्ह कम्म-मही ।
 'णावादीहि णदोणं, उत्तारह भूधरेसु सोबाणे ॥४६३॥
 कादूण चल्ह 'तुम्हे, पाउत्त-कालम्मि-धरह छत्ताइं^३ ।
 सोदूण तस्स वयणं, सव्हे ते भोगभूमि - णरा ॥४६४॥
 उत्तरिय वाहिणीओ, आरहदूण च तुंग^४-सेलेसुं ।
 बि - णिबारिद - बरिसाओ, पुत्त - कलत्तेहि जीवन्ति ॥४६५॥

अर्थ :—कालके विकारसे अब कर्मभूमि तुम्हारे निकट है । अब तुम लोग नदियोंको नौका आदिसे पार करो, सीढियोंसे होकर पहाड़ों पर चलो (चढो) और वर्षाकालमें छत्रादि धारण करो । उस कुलकरके वचन सुनकर वे सब भोगभूमिज मनुष्य नदियों को उतर कर, उत्तुङ्ग पहाड़ों पर चढकर और वर्षाका निवारण करते हुए पुत्र एव कलत्रके साथ जीवित रहने लगे ॥४६३-४६५॥

प्रमेनजित् कुलकरका निरूपण—

मरुदेवे तिविध-गदे, अड-कोडो-लक्ख-भजिद-पल्लम्मि ।
 अंतरिदे उप्पज्जदि, 'पसेणजिण्णाम तेरसमो ॥४६६॥

?

प ८००००००००००००० ।

अर्थ :—मरुदेवके स्वर्गस्थ हो जाने पर आठ लाख करोड़से भाजित पत्य-प्रमाण अन्तरालके पदचात् प्रसेनजित् नामक तेरहवां कुलकर उत्पन्न होता है ॥४६६॥

चामीपर-सम-^१वण्णो, दस-हृद-परणवण्ण-चाव-उच्छेहो ।
 दस-कौडि - लक्ख - भाजिद - पलिदोबममेत्त - परमाऊ ॥४६७॥

द ५५० । प १००००००००००००० ।

१. द व. गावादीण । २. द ब क. ज य. उ. तुम्हो । ३. द. ब. क. ज. य. उ. छत्ताहि ।
 ४. द. ब क ज य. उ. तुरगसेसेसु । ५. द. पसेणविष्णाम । ६. द. ब. क. ज. उ. वण्णा ।

अर्थ :—वह कुलकर स्वर्ण सहस्र वर्ष वाला, दससे गुणित पञ्चपन अर्थात् ५५० धनुष प्रमाण ऊँचा और दस लाख करोड़से भाजित पत्न्योपम प्रमाण आयु वाला था ॥४६७॥

अमिदमदी तद्द्वी, तत्काले वत्ति-पडल-परिवेडा^१ ।

^२जायंति जुगलबाला, देविस्य भीदा किमेदमिदि ॥४६८॥

भय-जुत्ताण षराणं, पसेणजिग्भणदि दिव्व-उवदेसं ।

^३वत्ति-पडलापहरणं, कहिदम्मि कुणंति ते सव्वे ॥४६९॥

अर्थ :—उसके 'अमितमती' नामक देवी थी । उस समय वत्तिपटल (जरायु) से वेष्टित युगल शिशु जन्म लेते हैं । उन्हें देखकर माता-पिता भयभीत होते हैं और यह क्या है ? ऐसा सोचते हैं । इस प्रकार भयसे संयुक्त मनुष्योंको प्रमेनजित् मनु बनि - पटल दूर करनेका दिव्य उपदेश देते हैं । (उनके) कथनानुसार वे मव मनुष्य बनि - पटल दूर करने लगे ॥४६८-४६९॥

पेच्छंते बालाणं, मुहाणि^४ वियसत्त-कमल-सरिसाणि ।

कुर्वंति पयत्तेणं, सिंसूरा रक्खा षरा सव्वे ॥५००॥

अर्थ :—मव मनुष्य शिशुको विकसित कमल सदृश मुखोंको देखने लगे और प्रयत्न-पूर्वक उनका रक्षण करने लगे ॥५००॥

चाँदह्वे नाभिराय मनुका निरूपण—

तम्मणु-तिदिष^५-पवेसे, कोडि-हदासीदि-त्तक्ख-हिद-पत्ते ।

^६अंतरिदे संसूदो, चोद्दसमो षाभिराअ - मणू ॥५०१॥

१ प ०००००००००००००० ।

अर्थ :—उस मनुके स्वर्गस्थ होने पर अस्सी लाख करोड़से भाजित पत्न्य प्रमाण कालके अन्त-रालसे चाँदह्वे नाभिराय मनु उत्पन्न हुए ॥५०१॥

१. द. ब. क. ज. पडल परिवेदा, ज. य. पद पन्विदा । २. क. ज. य. उ. जायती । ३. द. उ. विति । ४. द. ब. क. ज. य. उ. वमट्ट । ५. द. ब. उ. तिवष । ६. द. ब. क. उ. अंतरिदो ।

पञ्चबीसुत्तर-यस्-सय-चाउज्जेहो सुवज्ज-वज्ज-जिहो ।
इनि-पुज्ज-कोठि-आऊ, मरुदेवी चाम तस्स बहू ॥५०२॥

। दं ५२५ । पुज्ज कोठि १ आउ ।

अर्थ :—वह पाँचसौ पञ्चीस धनुष ऊँचा, स्वर्ण सटस्र वर्ष वाला और एक पूर्ब कोटि प्रमाण आमुसे युक्त था । उसके मरुदेवी नामकी पत्नी थी ॥५०२॥

तस्सि कासे होबि हू, बासाणं चाभिजाल - मइवीहं ।
तक्कत्तपोवदेसं, कहवि मणू ते पक्कुब्बन्ति ॥५०३॥

अर्थ :—उस समय बालकोंका नाभिनाल अत्यन्त लम्बा होने लगा था, नाभिराय कुलकर उसे काटनेका उपदेश देते हैं और वे मनुष्य वंसा ही करते हैं ॥५०३॥

कल्पद्दुमा पणट्ठा, ताहे^१ विविहो^२सहोणि सस्साणि ।
महुर - रत्ताइ फलाइं, पेज्जंति सहावदो धरिचोसु ॥५०४॥

अर्थ :—उस समय कल्पवृक्ष नष्ट हो गये और पृथिवी पर स्वभावसे ही उत्पन्न हुई अनेक प्रकारकी औषधियाँ, सस्य (घान्यादि) एवं मधुर रस युक्त फल दिखाई देने लगे ॥५०४॥

कप्पतरुण विजासे, तिब्ब-भया भोगमूमिजा मणुवा ।
सब्बे वि चाहिराजं, सरणं पविसन्ति रक्खेत्ति ॥५०५॥

अर्थ :—कल्पवृक्षोंके नष्ट हो जाने पर तीव्र भयसे युक्त सब ही भोगमूमिज मनुष्य नाभिराय कुलकरकी शरणमें पहुँचे और बोले 'रक्षा करो' ॥५०५॥

करुणाए चाहिराओ, जराण उवदिसदि जीवरणोवायं ।
मुंजह वणप्पदीणं, चोचादीणं फलाइ भक्खाणि ॥५०६॥

अर्थ :—नाभिराय करुणा-पूर्वक उन मनुष्योंको आजीविकाके उपायका उपदेश देते हैं । (वे बताते हैं कि) भक्षण करने योग्य चोचादिक (छिलके वाली) वनस्पतियोंके फल (केला, श्रीफल आदि) खाओ ॥५०६॥

शालि-जव-वल्ल-^१तुवरी-तिल-मास-प्यट्टवि-विबिह-वण्णाइं ।

^२उवभुंजह पियह तहा, सुरहि-प्यट्टवीण दुद्धारिण ॥५०७॥

अर्थ :—शालि, जी, वल्ल, तूवर, तिल और उड़द आदि विविध प्रकारके धान्य खाओ और गाय आदिका दूध पियो ॥५०७॥

अण्णं बहु उवदेसं, वेदि दयालू णराण सयलाणं ।

तं काट्टणं ^३सुखिदा, जीवन्ते तप्पसाएण ॥५०८॥

अर्थ :—(इसके अतिरिक्त) दयालु नाभिराय उन सब मनुष्योंको अन्न भी अनेक प्रकारकी शिक्षा (सीख) देते हैं । तदनुसार आचरण करके वे सब मनुष्य, मनु नाभिरायके प्रसादसे सुख-पूर्वक जीवन व्यतीत करने लगे ॥५०८॥

मतान्तरसे कुलकरोकी आयुका निर्धारण—

पलिदोवम-वसमंसो, ऊणो थोवेण पदिसुदिस्साऊं ।

अममं अडडं तुडियं, कमलं णलिनं च पउम-पउमंगा ॥५०९॥

कुमुव-कुमुवंग-^४णउदा, णउदगं पदव-पुडव-कोडीओ ।

सेस-मणूणं आऊ, कमसो केई ^५णिरूव्वेति ॥५१०॥

पाठान्तरं ॥

अर्थ :—प्रतिश्रुति कुलकरोकी आयु कुछ कम पत्थोपमके दसवें भाग प्रमाण थी । इसके आगे शेष तेरह कुलकरोकी आयु क्रमगः अमम, अडड, वृटित, कमल, नलिन, पद्य, पद्याङ्ग, कुमुद, कुमुदाङ्ग, नयुत, नयुताङ्ग, एवं ओर पूर्व कोटि प्रमाण थी, ऐसा कोई आचार्य कहते हैं ॥५०९-५१०॥

नोट :—४२८ से ५१० पर्यन्तकी गाथाओंसे सम्बन्धित मूल मट्टियोंके अर्थ, देवियोंके नाम और दण्ड व्यवस्था आदिका निदर्शन इसप्रकार है—

१. द. व. क. ज. य. उ. तोवरी ... विविहवण्णाइ । २. द. व. क. ज. य. उ. उवभुंजदि ।

३. द. व. क. ज. य. उ. सुखिदो । ४. क. ज. य. उ. पदिसुदिमाऊ । ५. द. व. क. ज. य. उ. णारिणा ।

६. द. एरुव्वति ।

तालिका : ११

कुलकरोंके उत्सेध, आयु एवं अन्तरकाल आदिका विवरण—

गाथा ४२८ से ५१०

क्रमांक	नाम	उत्सेध (धनुषोमे)	आयु-प्रमाण	मतान्तरसे आयु प्र०	जन्मका अन्तर काल	देवीके नाम	दण्ड निर्धारण	
१	प्रतिश्रुति	१८००	$\frac{\text{पल्य}}{१०}$	कुछ कम	$\frac{\text{पल्य}}{१०}$	०	स्वयंप्रभा	हा
२	सन्मति	१३००	$\frac{\text{पल्य}}{१००}$	अमम	$\frac{\text{पल्य}}{८०}$		यशस्वती	हा
३	क्षेमङ्कर	८००	$\frac{\text{पल्य}}{१०००}$	अड्ड	$\frac{\text{पल्य}}{८००}$		मुनन्दा	हा
४	क्षेमन्धर	७७५	$\frac{\text{पल्य}}{१००००}$	श्रुति	$\frac{\text{पल्य}}{८०००}$		विमला	हा
५	सीमङ्कर	७५०	$\frac{\text{पल्य}}{१०००००}$	कमल	$\frac{\text{पल्य}}{८००००}$		मनोहरी	हा
६	सीमन्धर	७२५	$\frac{\text{पल्य}}{\text{दस लाख}}$	नलिन	$\frac{\text{पल्य}}{\text{८ लाख}}$		यशोधरा	हा मा
७	विमलवाहन	७००	$\frac{\text{पल्य}}{१ क०}$	पद्म	$\frac{\text{पल्य}}{\text{८० लाख}}$		सुमती	हा मा
८	चक्षुष्मान्	६७५	$\frac{\text{पल्य}}{१० क०}$	पद्मान्न	$\frac{\text{पल्य}}{\text{८ क०}}$		धारिणी	हा मा
९	यशस्वी	६५०	$\frac{\text{पल्य}}{१०० क०}$	कुमुद	$\frac{\text{पल्य}}{\text{८० क०}}$		कान्तमाला	हा मा
१०	अभिचन्द्र	६२५	$\frac{\text{पल्य}}{१००० क०}$	कुमुदाज्ञ	$\frac{\text{पल्य}}{\text{८०० क०}}$		श्रीमती	हा मा
११	चन्द्राभ	६००	$\frac{\text{पल्य}}{१० हजार क०}$	नयुत	$\frac{\text{पल्य}}{\text{८००० क०}}$		प्रभावती	त्रि.सा.गा ७६= हा मा धिक्
१२	मरुदेव	५७५	$\frac{\text{पल्य}}{१ लाख क०}$	नयुताज्ञ	$\frac{\text{पल्य}}{\text{८० हजार क०}}$		सत्या	" " "
१३	प्रसेनजित्	५५०	$\frac{\text{पल्य}}{१० लाख क०}$	पर्व	$\frac{\text{पल्य}}{\text{८ लाख क०}}$		अभितमती	" " "
१४	नाभिराय	५२५	पूर्व कोटि वर्ष	पूर्वकोटि	$\frac{\text{पल्य}}{\text{८० लाख क०}}$		मरुदेवी पत्नी	" " "

कुलकरोका विशेष निरूपण --

एदे चउदस मणुओ, पडिसुद-पहुदी हु णाहिराबंता ।
पुव-भवम्मि विवेहे, रायकुमारा महाकुसे 'जावा ॥५११॥

अर्थ :—प्रतिश्रुतिको आदि लेकर नाभिराय-पर्यन्त ये चौदह मनु पूर्व-भवमे विवेह क्षेत्रके अन्तर्गत महाकुलमे राजकुमार थे ॥५११॥

कुसला दाणादीसुं, 'मंजम-तव-णाणवंत-पत्ताणं ।
णिय-जोग^१-अणुट्टाणा, मद्दव-अज्जव-गुणेहि संजुत्ता ॥५१२॥

मिच्छत्त-भावणाए, भोगाउं बंधिऊण^२ ते सव्वे ।
'पच्छा खाइय-सम्मं, गेण्हति जिण्हि च लण-मूलम्मि ॥५१३॥

अर्थ :—संयम, तप और ज्ञानसे संयुक्त पात्रोको दानादिक देनेमे कुशल, अपने योग्य अनुष्ठानसे युक्त तथा मार्दव-आर्जवादि गुणोसे सम्पन्न वे सब पूर्वमे मिथ्यात्व-भावनामे भोगभूमिकी आयु बाँध कर पश्चात् जिनेंद्र भगवानके पादमूलमे धायिक सम्यक्त्व ग्रहण करते हैं ॥५१२-५१३॥

णिय-जोग-सुवं^३ पडिदा, खीणे आउम्मि ओहिणाण-^४जुदा ।
उप्पज्जिदूण भोगे, केइ^५ णरा ओहि-णाणे^६ ॥५१४॥

जावि-भरणेण केई, भोग-मणुस्साण जीवणोवायं ।
भासंति जेण तेषं, मणुणो भणिदा मुणिदेहं ॥५१५॥

अर्थ :—अपने योग्य श्रुतको पढ़कर (इनमेसे) कितने ही राजकुमार आयु-क्षीण हो जाने पर भोगभूमिमें अवधिज्ञान सहित मनुष्य उत्पन्न होकर अवधिज्ञानसे और कितने ही जाति-स्मरणसे भोगभूमिज मनुष्योको जीवनके उपाय बताते हैं, इसलिये ये मुनीन्द्रों द्वारा 'मनु' कहे गये हैं ॥५१४-५१५॥

१. द. उ. जावो । २. द. व. क. ज. य. उ. मंजम । ३. द. क. उ. जोगा । ४. द. बंधवूण, य बंधिदूण । ५. द. व. क. ज. उ. पच्छा । ६. द. व. क. ज. य. उ. पडिदा । ७. द. व. अ. उ. जुदो । ८. व. केई ।

कुल-धारणादु सख्ये, कुलधर-गामेण भुवण-विकल्पादा ।

कुल-करणम्मि य कसला, कुलकर-गामेण-सुपसिद्धा ॥५१६॥

अर्थ :-ये सब कुलोके धारण करनेसे 'कुलधर' नामसे और कुलोके करनेमें कुशल होनेसे 'कुलकर' नामसे भी लोकमें प्रसिद्ध हैं ॥५१६॥

शलाका पुरुषोकी संख्या एव उनके नाम—

एतो सलाय-^१पुरिसा, तेसद्वी सयल-^३भुवण-विकल्पादा ।

जायंति भरह-खेत्ते, णरसीहा पुष्ण-पाकेण ॥५१७॥

अर्थ :-अत्र (नाभिराय कुलकरके पश्चात्) भरतक्षेत्रमें पुष्योदयसे मनुष्योंमें श्रेष्ठ और सम्पूर्ण लोकमें प्रसिद्ध निरसठ शलाका-पुरुष उत्पन्न होने लगते हैं ॥५१७॥

तित्थयर-चक्क-बल-हरि-पडिसत्तू णाम विस्सुदा कमसो ।

बि - गुणिय - बारस - बारस - पयत्थ - णिहि - रंथ - संखाए ॥५१८॥

। २४।१२।६।६।६ ।

अर्थ :-ये शलाका पुरुष तीर्थङ्कर, चक्रवर्ती, बलभद्र, नारायण और प्रतिशत्रु (प्रति-नारायण) नामोंसे प्रसिद्ध हैं । इनकी संख्या क्रमशः बारहकी दुगुनी (चौबीस), बारह, नौ (पदाथं), नौ (निधि) और नौ (रन्ध्र) है ॥५१८॥

विशेषार्थं :-प्रत्येक उत्सर्पिणी-प्रवसर्पिणी कालमें चौबीस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ती, नौ बलभद्र, नौ नारायण और नौ प्रतिनारायण ये ६३ महापुरुष होते हैं । भरतक्षेत्र के इस अवसर्पिणी कालमें भी इतने ही हुए हैं, जिनके नाम आदि इस प्रकार हैं—

वर्तमान कालीन चौबीस तीर्थंकरोंके नाम—

उसहमजियं च संभवमहिणंवाण-सुमइ-णाम-धेयं च ।

पउमप्पहं सुपासं, चंबप्पह-पुप्फवंत-सीयलए ॥५१९॥

सेयंस-वासुपुञ्जे, विमलाणंते य धम्म-संती य ।
कुंथु-अर-मल्लि-सुव्वय-णमि-णेमी-पास-वड्ढमाणा य ॥५२०॥

पणमह चउवीस-जिणे, तित्थयरे तत्थ भरह-लेत्तम्मि ।
भव्वाणं भव-रुक्खं, छिदंती णाण-परसूहि ॥५२१॥

अर्थ :—भरतक्षेत्रमे उत्पन्न हुए १ ऋषभ, २ अजित, ३ सम्भव, ४ अग्निनन्दन, ५ मुमति, ६ पद्मप्रभ, ७ सुपाश्वर्ष, ८ चन्द्रप्रभ, ९ पुष्पदन्त, १० शीतल, ११ श्रेयास, १२ वासुपुज्य, १३ विमल, १४ अनन्त, १५ धर्म, १६ शान्ति, १७ कुन्थु, १८ अर, १९ मल्लि, २० (मुनि) सुव्रत, २१ नमि, २२ नेमि, २३ पाश्वर्ष और २४ वड्ढमान इन चौबीस तीर्थङ्करोंको नमस्कार करो । ये जानरूपी फरसेसे भव्य जीवोंके समाररूपी वृक्षको छेदते हैं ॥५१९-५२१॥

चक्रवर्तियोंके नाम—

भरहो सगरो मघवा, सणवकुमारो य संति-कुंथु-अरा ।
तह य 'सुभोमो पउमो, हरिजयसेणा^१ य बम्हदत्तो य ॥५२२॥

छक्खंड-पुढवि-मंडल-पसाहणा कित्ति-भरिय-^३भुवणयला ।
एदे बारस जादा, चक्कहरा भरह-लेत्तम्मि ॥५२३॥

अर्थ :—भरतक्षेत्रमे १ भरत, २ सगर, ३ मघवा, ४ सनत्कुमार, ५ शान्ति, ६ कुन्थु, ७ अर, ८ सुभोम, ९ पय, १० हरिषेण, ११ जयसेन और १२ ब्रह्मदत्त ये बारह चक्रवर्ती छह खण्ड-रूप पृथिवीमंडलको सिद्ध करनेवाले और कीर्तिसे भुवनतलको भरने वाले उत्पन्न हुए हैं ॥५२२-५२३॥

बलदेवोंके नाम—

बिजयाचला सुधम्मो, सुप्पह-णामो सुवंसणो णंदी ।
तह णंविमित्त-रामा, पउमो णव होंति बलदेवा ॥५२४॥

१. ब. क. ज. य. उ. सुभोमो । २. ब. क. ज. य. उ. सेणो । ३. व. व. क. ज. व. उ.

अणयला ।

अर्थ :—(भरतक्षेत्रमे) विजय, अचल, सुधर्म, सुप्रभ, सुदर्शन, नन्दी, नन्दिमित्र, राम और पद्म ये नौ बलदेव हुए हैं ॥५२४॥

नारायणोके नाम—

तह य तिविट्ट-डुविट्टा, सयंभू पुरिसुत्तमो पुरिससीहो ।
पुं'डरिय'-दत्त-नारायणा य किण्हो हवंति णव विण्हू ॥५२५॥

अर्थ :—तथा त्रिपुष्ट, द्विपुष्ट, स्वयम्भू, पुरुषोत्तम, पुरुषसिंह, पुण्डरीक, दत्त, नारायण (लक्ष्मण) और कृष्ण ये नौ विष्णु (नारायण) हैं ॥५२५॥

प्रतिनारायणोके नाम—

अस्सग्गीवो तारय-मेरक-मधुकीडभा तह णिसुंभो ।
बलि-पहरण-रावणा य, जरसंघो णव य पडिसत्तू ॥५२६॥

अर्थ :—अश्वघोष, तारक, मेरक, मधुकैटभ, निशुम्भ, बलि, प्रहरण, रावण और जरासंध, ये नौ प्रतिष्ठा (प्रतिनारायण) हैं ॥५२६॥

रुद्रोके नाम—

भीमाबलि-जियसत्तू, रुद्रो 'बडसाणलो य 'सुपइट्टो ।
तह अचल पुं'डरीओ, अजियंधर अजियणाभि-वेडाला ॥५२७॥

सच्चइसुडो य एवे, एक्कारस होंति तिसवयर-काले ।
रहा रउइ-कम्मा, अहम्म-बाबार-संलग्गा ॥५२८॥

अर्थ :—तीर्थंकर कालमे भीमाबलि, जितशत्रु, रुद्र, विश्वानल, सुप्रतिष्ठ, अचल, पुण्डरीक, अजितन्धर, अजितनाभि, पीठ और सात्यकिसुत ये ग्यारह रुद्र होते हैं । ये सब अधर्मपूर्ण व्यापारमें संलग्न होकर रौद्रकर्म किया करते हैं ॥५२७-५२८॥

१. क. ज. घ. उ. पुंडरीय । २. च. ब. क. उ. वेदसायणो । ३. क. ब. घ. उ. सुषट्ठा ।

तीर्थङ्करोके अवनरण-स्थान—

सख्वत्थसिद्धि-ठाणा, अवइण्णा उसह-धम्म-पट्टुदि-तिया ।
विजया णदण-अजिया, चंदप्पह वइजयंताडु ॥५२६॥

अपराजियाभिहाणा, अर-णमि-मल्लीओ णेमिणाहो य ।
सुमई जयंत-ठाणा, आरण-जुगला य 'सुविहि-सीयलया ॥५३०॥

पुफोत्तराभिहाणा, अणंत-सेयंस-वड्डमाण-जिणा ।
विमलो य 'सदाराणद-पाणद-कप्पा य सुव्वदो पासो ॥५३१॥

हेट्टिम-मज्झिम-उवरिम-गेवेज्जादागदा महासत्ता ।
संभव-सुपास-पउमा, महसुवका^३ वासुपुज्ज-जिणो^४ ॥५३२॥

अर्थ — ऋषभ और धर्मादिक (धर्म, शान्ति, कुन्दु) तीन तीर्थङ्कर सर्वाथसिद्धिमे अबतीर्ण हुए थे; अभिनन्दन और अजितनाथ विजयसे; चन्द्रप्रभ वंजयन्तसे; अर, नमि, मल्लि और नेमिनाथ अपराजित नामक विमानसे, सुमतिनाथ जयन्त विमानसे; पुष्यदन्त और शीतलनाथ क्रमशः आरणा युगलसे; अनन्त, श्रेयास और वर्धमान जिनेन्द्र पुष्पोत्तर विमानसे; विमल, शतार कल्पसे; (मुनि) सुव्रत और पार्श्वनाथ क्रमशः आनत एवं प्राणत कल्पसे; सम्भव, सुपाह्व और पद्मप्रभ महापुरुष क्रमशः अधोर्ध्वेयक, मध्यर्ध्वेयक और ऊर्ध्वर्ध्वेयकसे, तथा वासुपूज्य जिनेन्द्र महाशुक्र कल्पसे अबतीर्ण हुए थे ॥५२६-५३२॥

ऋषभादि चौबीस तीर्थङ्करो के जन्म स्थान, माता-पिता, जन्मतिथि एवं जन्मनक्षत्रोके नाम—

जादो हु अरवञ्जाए, उसहो मरुदेवि-णाभिराएहि ।
जेत्तासिय-णवमीए, णक्खत्ते "उत्तरासाढे ॥५३३॥

अर्थ :— ऋषभनाथ तीर्थंकर अयोध्या नगरीमें, मरुदेवी माता एवं नाभिराय पितारसे चैत्र-कृष्णा नवमीको उत्तराषाढा नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥५३३॥

१. द. ब. ज. य. उ. सुहई । २. द. सहारापाणद, ज. सहाराणदपाणद, य. सहसाणदपाणद ।

३. द. व. क. ज. य. उ. महसुवके । ४. द. व. क. उ. जिणा । ५. द. व. क. ज. य. उ. उत्तरासाढा ।

माघस्स सुक्क-पक्खे, रोहिणि-रिक्खम्मि इसमि-दिवसम्मि ।

साकेदे अजिय-जिणो, जावो जियसत्तु-बिजयार्हाहि ॥५३४॥

अर्थ :—अजित जिनेन्द्र साकेत नगरीमें, पिता जितशत्रु एवं माता विजयासे, माघ शुक्ला दसमीके दिन रोहिणी नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥५३४॥

सावट्टीए संभवदेवो य जिदारिणा' सुतेणाए ।

मगसिर-पुणिमाए, जेट्टा-रिक्खम्मि संजावो ॥५३५॥

अर्थ :—सम्भवदेव श्रावस्ती नगरीमें पिता जितारि और माता सुषेणासे मगसिरकी पूर्णिमाके दिन ज्येष्ठा नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥५३५॥

माघस्स बारसीए, सिदम्मि पक्खे पुणव्वसु-रिक्खे ।

संवर-सिद्धत्थार्हाहि, साकेदे णंदणो जावो ॥५३६॥

अर्थ :—अभिनन्दनस्वामी साकेतपुरीमें पिता संवर और माता सिद्धार्थासे माघ शुक्ला द्वादशीको पुनर्वसु नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥५३६॥

मेघप्पहेण सुमई, साकेद-पुरम्मि मंगलाए य ।

सावण-सुक्केयारसि-दिवसम्मि मघासु संजिणवो ॥५३७॥

अर्थ :—सुमतिनाथजी साकेतपुरीमें पिता मेघप्रभ और माता मङ्गलासे श्रावण-शुक्ला एकादशीके दिन मघा नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥५३७॥

अस्सज्जुब-किण्ह-तेरसि-विणम्मि पउमप्पहो अ चित्तासु ।

धरणेण सुसीमाए, कोसंबी-पुरवरे जावो ॥५३८॥

अर्थ :—पद्मप्रभने कौशाम्बी पुरीमें पिता धरण और माता सुसीमासे आसोज कृष्णा त्रयोदशीके दिन चित्रा नक्षत्रमें जन्म लिया ॥५३८॥

१. व ऐ जिदारिणा । ब. राजिदारिणा । क. ज. व. उ. ए जिदारिणा । २. ब. ज. मेघव्वएण, ब. क. उ. मेघरवएण ।

बाराणसिए 'पुहबी-सुपइदठोह सुपास-बेबो य ।
जेदुस्स सुक्क-बारसि-विणम्मि जादो विसाहाए ॥५३६॥

अर्थ :—सुपाश्वदेव बाराणसी (बनारस) नगरीमे पिता सुप्रतिष्ठ और माता पृथिवीसे ज्येष्ठ शुक्ला द्वादशीके दिन विद्याक्षा नक्षत्रमें उत्पन्न हुए थे ॥५३६॥

३चंदपहो चंदपुरे, जादो महसेण-लच्छिमइ आहि ।
पुस्सस्स किण्ह-एयारसिए अणुराह-णक्खत्ते ॥५४०॥

अर्थ :—चन्द्रप्रभ जिनेन्द्र चन्द्रपुरीमे पिता महासेन और माता लक्ष्मीमती (लक्ष्मणा) से पीथ कृष्णा एकादशीको अनुराधा नक्षत्रमे अवतीर्ण हुए ॥५४०॥

रामा-सुगोवेहि, काकंदीए य पुप्फयंत-जिणो ।
मगसिर-पाडिवाए, सिबाए मूलम्मि संजणिवो ॥५४१॥

अर्थ :—पुष्पदन्त जिनेन्द्र काकन्दीमे पिता सुग्रीव और माता रामासे मगसिर शुक्ला प्रति-पदाको मूल नक्षत्रमे उत्पन्न हुए ॥५४१॥

माघस्स बारसीए, पुन्वासाढासु किण्ह-पक्खम्मि ।
सोयल-सामो दिठरह-णंदाहिं भहिले जादो ॥५४२॥

अर्थ :—श्रीनलनाथ म्यामी भद्रलपुर (भद्रिकापुरी) मे पिता दृढरथ और माता नन्दासे माघके कृष्ण पक्षकी द्वादशीको पूर्वाषाढा नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥५४२॥

सिहपुरे सेयंसो, विण्ह-णरिवेण वेणु-देवीए ।
एक्कारसिए फग्गुण-सिद-पक्खे सवण-भे जादो ॥५४३॥

अर्थ :—श्रेयासनाथ सिंहपुरीमे पिता विष्णु नरेन्द्र और माता वेणुदेवीसे फाल्गुन शुक्ला एकादशीको श्रवण नक्षत्रमे उत्पन्न हुए ॥५४३॥

१. ब. क. उ पुहईवी । २ क. ज. य. उ. जादा । ३. द. ज. य. चदपहो । ४ द. घाईहि,
ब. क. ज. उ. घाईहि, य घाईदि ।

चंपाए ^१वासुपुञ्जो, बसुपुञ्ज-जरेसरेण विजयाए ।

फग्गुण-सुबक-चउट्टसि-दिणम्मि जादो बिसाहासु ॥५४४॥

अर्थ :- वासुपुञ्जजी चम्पापुरीमे पिता वसुपुञ्जराजा और माता विजयासे फाल्गुन शुक्ला चतुर्दशीके दिन विशाखा नक्षत्रमे उत्पन्न हुए ॥५४४॥

कंपिल्लपुरे विमलो, जादो कदवम्म-^२जयस्सामाहि ।

माघ-सिद-चोहसीए, णक्खत्ते पुब्बभहपदे ॥५४५॥

अर्थ :- विमलनाथ कम्पिलापुरीमे पिता कृतवर्मा और माता जयश्यामासे माघशुक्ला चतुर्दशीको पूर्वभाद्रपद नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥५४५॥

जेट्टस्स बारसीए, किण्हाए रेवदीसु य अणत्तो ।

साकेदपुरे जादो, सब्बजसा-सिहसेणेहि ॥५४६॥

अर्थ :- अनन्तनाथ त्रयोध्यापुरीमे पिता सिहसेन और माता सर्वयज्ञासे ज्येष्ठ-कृष्णा द्वादशीको रेवती नक्षत्रमे श्रवतीर्ण हुए ॥५४६॥

रयणपुरे धम्म-जिणो, भाणु-णरिदेण ^३सुब्बदाए य ।

माघ-सिद-तेरसीए, जादो पुत्सम्मि णक्खत्ते ॥५४७॥

अर्थ :- धर्मेनाथ तीर्थकर रत्नपुरमे पिता भानु नरेन्द्र और माता सुव्रतासे माघशुक्ला त्रयोदशीको पुष्य नक्षत्रमे उत्पन्न हुए ॥५४७॥

जेट्ट-सिद-बारसीए, भरणी-रिक्खम्मि संतिणाहो य ।

हत्थिणउरम्मि ^४जादो, अइराए विस्ससेणेण ॥५४८॥

अर्थ :- शान्तिनाथजी हस्तिनापुरमे पिता विश्वसेन और माता ऐरासे ज्येष्ठ-शुक्ला द्वादशी को भरणी नक्षत्रमे उत्पन्न हुए ॥५४८॥

१. द. व. वसुपुञ्जो । २. द. व. क. ज. य. उ. जाद । ३. द. व. क. ज. य. उ. सुब्ब-
साए अं । ४. द. ज. जादा ।

तत्त्व किचय कुंभ-जिणो, सिरिमइ-देवीसु सूरसेजेण ।

बइसाह-पाडिवाए, सिय-यक्खे किचियासु संजणिदो ॥५४६॥

अर्थ :—कुन्थुनाथ जिनेन्द्र हस्तिनापुरमें पिता सूर्यसेन और माता श्रीमती देवीसे वैशाख शुक्ला प्रतिपदाको कृतिका-नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥५४६॥

मगसिर-चोहूसीए, सिद-यक्खे रोहिणीसु अर-देवो ।

जागपुरे संजणिदो, मिस्ताए सुवरिसणावणिवेसु ॥५४७॥

अर्थ :—अरनाथजी हस्तिनापुरमें पिता सुदर्शन राजा और माता मित्रासे मगसिर-शुक्ला चतुर्दशी को रोहिणी नक्षत्रमें अवतीर्ण हुए ॥५४७॥

'मिहिलाए मल्लि-जिणो, पहवदीए 'कुंभअण्डिदीसेहि ।

मगसिर-सुक्क-एक्कादसीए' अस्सिणीए संजादो ॥५४८॥

अर्थ :—मल्लिनाथजी मिथिलापुरीमें पिता कुम्भ और माता प्रभावतीसे मगसिर शुक्ला एकादशीको अश्विनी नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥५४८॥

रायणिहे मुणिसुब्बय-देवो पउमा-सुमित्त-राएहि ।

अस्सजुव-बारसीए, सिद-यक्खे सबसा-भे जादो ॥५४९॥

अर्थ :—मुनिसुव्रतदेव राजगृहमें पिता सुमित्र राजा और माता पद्मासे आसोज-शुक्ला द्वादशीको श्रवण नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥५४९॥

मिहिला-परिए जादो, विजय-वर्दिणेण वप्पिलाए य ।

अस्सिणि-रिक्खे' आसाढ' सुक्क-वसमीए णमिसामी ॥५५३॥

अर्थ :—नमिनाथ स्वामी मिथिलापुरीमें पिता विजयनरेन्द्र और माता वप्रिलासे आषाढ शुक्ला दशमीको अश्विनी नक्षत्रमें अवतीर्ण हुए ॥५५३॥

१. द. क. ज. य महिलाए । २. द. व. ज. य. उ. कुंभअण्डिदीसेहि । ३. द. क. ज. य. उ. एकादसिए । ४. व. उ. अस्सिणी जवा एसं । ५. क. ज. य. अस्सिणी जुवा एण । ६. द. व. क. उ. रेक्खे । ६. द. आसाढे ।

सउरी-पुरम्मि 'जावो, सिवदेवीए समुद्रविजएण ।
बइसाह-तेरसीए, सिवाए चित्तामु जेमि-जिणो ॥५५४॥

अर्थ :—नेमि जिनेन्द्र शीरीपुरमे पिता समुद्रविजय और माता शिवदेवीसे वंशाख-शुक्ला त्रयोदशीको चित्रा नक्षत्रमें अवतीर्ण हुए ॥५५४॥

हयसेण-वम्मिसाहि^१, जावो^२ वाणारसीए पास-जिणो ।
पुसस्स बहल-एक्कारसिए रिक्खे विसाहाए ॥५५५॥

अर्थ :—पाश्वर्नाथ जिनेन्द्र बाराणसी नगरीमे पिता अश्वसेन और माता बर्मिला (बामा) से पीथ-कृष्णा एकादशीको विशाखा नक्षत्रमे उत्पन्न हुए ॥५५५॥

सिद्धत्थराय-पियकारिणीह् गयरम्मि 'कुंडले वीरो' ।
उत्तरफण्णि-रिक्खे, चेत-सिद तेरसीए उप्पण्णो ॥५५६॥

अर्थ :—वीर जिनेन्द्र कुण्डलपुरमे पिता सिद्धार्थ और माता प्रियकारिणी (त्रिशला) से चैत्र-शुक्ला त्रयोदशीको उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमे उत्पन्न हुए ॥५५६॥

चौबीस तीर्थङ्करोके वंशोका निर्देश—

इंदवज्जा —

धम्मर-कुंथू कुव्वंस-जावा, रणाहोग्ग-वंसेसु^३ वि वीर-पासा ।
सो सुव्ववो जादव-वंस-जम्मा, जेमी अ इक्खाकु-कुलम्मि सेसा ॥५५७॥

अर्थ :—धर्मनाथ, अरनाथ और कुंथुनाथ कुव्वशमे उत्पन्न हुए । महावीर और पाश्वर्नाथ क्रमशः नाथ एव उग्र वंशमें, मुनिसुव्रत और नेमिनाथ यादव (हरि) वंशमें तथा शेष सब तीर्थङ्कर इक्ष्वाकु कुलमे उत्पन्न हुए ॥५५७॥

१ क. ज उ जावा । २. द. ज. य. वम्मिसाहि । ३. क. ज. य. उ. जावा । ४. द. कवलो । ५. द. वीरा, ज. व. वीरा । ६. ब. क. ज. य. उ. सुविबीरपासो ।

चौबीस तीर्थङ्करोकी भक्ति करनेका फल—

इंदवज्जा—

एदे जिण्णिदे भरहम्मि खेत्ते, भव्वाए पुण्णोहि कवावतारे ।

काएएण बाष्वा मयसा एमंता, सोक्खाइ मोक्खाइ लहंति भव्वा ॥५५८॥

अर्थ :—भव्य-जीवों के पुण्योदयसे भरतक्षेत्रमे अवतीर्ण हुए इन चौबीस तीर्थङ्करोको जो
-भव्यजीव मन-बचन-कायसे नमस्कार करते हैं, वे मोक्षमुख पाते हैं ॥५५८॥

घोडक^१— (दोषक वृत्तम्)

केवलगाण - ^२वणप्फइ - कंवे,

तित्थयरे चउबीस - जिण्णिदे^३ ।

जो अहिणंवइ भत्ति - पयत्तो,

बज्भइ तस्स पुरंदर - पट्टो ॥५५९॥

अर्थ :—भक्तिमे प्रवृत्त होकर जो कोई भी केवलज्ञानरूप वनस्पतिके कन्द और तीर्थके
-प्रवर्तक चौबीस तीर्थङ्करोका अभिनन्दन करता है उसके इन्द्रका पट्ट बंधना है ॥५५९॥

[तानिका न० १२ पृष्ठ १५८-१५९ पर देखे]

चौबीस तीर्थकरों की आगति, जन्म विवरण एवं वंश आदि का निरूपण—

गाथा ५१९-५५७

क्र	नाम	आगति	जन्मनगरी	पिता का नाम	माता का नाम	जन्म				वंश
						मास	पक्ष	तिथि	नक्षत्र	
१	ऋषभनाथ	सर्वाथसिद्धि	अयोध्या	नाभिराय	महेदवी	चैत्र	कृष्ण	नवमी	उत्तराषाढा	इक्ष्वाकुवंशी
२	अजितनाथ	विजय से	साकेत	जितशत्रु	विजया	माघ	शुक्ल	दशमी	रोहणी	"
३	सम्भवनाथ	अद्यो शै०	श्रावस्ती	जितारि	सुसेना	मगसिर	शुक्ल	पूर्णिमा	ज्येष्ठा	"
४	अभिनन्दन	विजय से	साकेत	सबर	सिद्धार्था	माघ	शुक्ल	द्वादशी	पूर्नवर्षु	"
५	सुमतिनाथ	जयन्त	साकेत	मेघप्रभ	माला	श्रावण	शुक्ल	एकादशी	मघा	"
६	पदमप्रभ	ऊर्ध्व शै०	कौशाम्बी	घरण	सुसीमा	आसौज	कृष्ण	त्रयोदशी	चित्रा	"
७	सुपाश्र्वनाथ	मध्य शै०	वारणसी	सुप्रतिष्ठ	पृथ्वी	ज्येष्ठ	शुक्ल	द्वादशी	विशाखा	"
८	चन्द्रप्रभ	वैजयत	चन्द्रपुरी	महासेन	लक्ष्मीमती	पौष	कृष्ण	एकादशी	अनुराधा	"
९	पुष्पदन्त	आरण	काकन्दी	सुगीव	राना	मगसिर	शुक्ल	प्रतिपदा	मूल	"
१०	शीतलनाथ	अच्युत	भदलपुर	दृढरथ	नन्दा	माघ	कृष्ण	द्वादशी	पूर्वाषाढा	"
११	श्रेयासनाथ	पुष्पोत्तर	सिंहपुरी	विष्णु	वेणुदेवी	फाल्गुन	शुक्ल	एकादशी	श्रवण	"

१२	वासुपुण्यु	महाशुक	चम्पापुरी	वसुपूज्य	विजया	फाल्गुन	शुक्ल	चतुर्दशी	विशाखा	इक्ष्वाकुवंशी
१३	विमलनाथ	शतार	कपिला	कृतवर्मा	जययामा	माघ	शुक्ल	चतुर्दशी	पूर्वाभाद्रपद	"
१४	अनन्तनाथ	पुण्योत्तर	अयोध्या	सिहसेन	सर्वमशा	ज्येष्ठ	कृष्ण	द्वादशी	रेवती	इक्ष्वाकुवंशी
१५	धर्मनाथ	सर्वार्थसिद्धि	रत्नपुर	भानु	सुव्रता	माघ	शुक्ल	त्रयोदशी	पुष्य	कुरुवंशी
१६	शांतिनाथ	सर्वार्थसिद्धि	हस्तिनापुर	विश्वसेन	ऐरा	ज्येष्ठ	शुक्ल	द्वादशी	भरणी	इक्ष्वाकुवंशी
१७	कुन्धुनाथ	सर्वार्थसिद्धि	हस्तिनापुर	सूसैन	श्रीमती	वैशाख	शुक्ल	प्रतिपदा	कृत्तिका	कुरुवंशी
१८	अरनाथ	अपराजित	हस्तिनापुर	सुदर्शन	मित्रा	मगसिर	शुक्ल	चतुर्दशी	रोहणी	कुरुवंशी
१९	मलिनाथ	अपराजित	मिथिला	कुम्भ	प्रभावती	मगसिर	शुक्ल	एकादशी	अश्वनी	इक्ष्वाकुवंशी
२०	मुनिसुब्रत	आनत	राजगृह	सुमित्र	पद्मा	आशीज	शुक्ल	द्वादशी	श्रवण	यादववंशी
२१	नमिनाथ	अपराजित	मिथिला	विजय	वप्रिता	आषाढ	शुक्ल	दशमी	अश्वनी	इक्ष्वाकुवंशी
२२	नेमिनाथ	अपराजित	श्रीरीपुर	समद्विविजय	शिवदेवी	वैशाखा	शुक्ल	त्रयोदशी	चित्रा	यादववंशी
२३	पार्वनाथ	प्राणत	वाराणसी	अपवसेन	वामा	पौष	कृष्ण	एकादशी	विशाखा	उग्रवंशी
२४	महावीर	पुण्योत्तर	कुण्डलपुर	सिन्धार्थ	प्रियकारिणी	चैत्र	शुक्ल	त्रयोदशी	उत्तरफाल्गुनी	नाथवंशी

चीबीस तीर्थङ्करोके जन्मान्तरालका प्रमाण—

सुसम-दुसमम्मि णामे, सेसे चउत्तीदि-सक्ख-पुब्बाणि ।
वास-त्तए अइ-मासे, इगि-पक्खे उसह-उप्पत्ती ॥५६०॥

॥ पुब्ब व ८४ ल । व ३, मा ८, प १ ॥

अर्थ :—सुषमदुषमा नामक कालमें चौरासी लाख पूर्व, तीन वर्ष, आठ माह और एक पक्ष अवशेष रहने पर भगवान् ऋषभदेवका जन्म हुआ ॥५६०॥

पण्णास-कोडि-सक्खा, बारसहद-पुब्ब-सक्ख-वास-जुवा ।
जादम्मि उवहि-उवमा, उसहुप्पत्तीए अजिय-उप्पत्ती ॥५६१॥

॥ सा ५० को ल । पुब्ब घण १२ ल ॥

अर्थ :—ऋषभदेवकी उत्पत्तिके पश्चात् पचास लाख - करोड़ सागरोपम और बारह लाख वर्षपूर्वके ध्यतीत हो जाने पर अजितनाथ तीर्थङ्करका जन्म हुआ ॥५६१॥

अह तीस-कोडि-सक्खे, बारस-हद-पुब्ब-सक्ख-वास-जुवे ।
गल्लिदम्मि उवहि-उवमे, अजियुप्पत्तीए संभवुप्पत्ती ॥५६२॥

॥ सा ३० को ल । घण पुब्ब १२ ल ॥

अर्थ :—अजितनाथकी उत्पत्तिके पश्चात् बारह लाख वर्ष पूर्व सहित तीस लाख करोड़ सागरोपमोके निकल जाने पर सम्भवनाथकी उत्पत्ति हुई ॥५६२॥

दस-पुब्ब-सक्ख-संजुव-सायर-दस-कोडि-सक्ख-वोच्छेए ।
संभव - उप्पत्तीए, अहिणंदण - देव - उप्पत्ती ॥५६३॥

॥ सा १० को ल । घण पुब्ब १० ल ॥

अर्थ :—सम्भव जिनेन्द्रकी उत्पत्तिके पश्चात् दस-लाख पूर्व सहित दस लाख करोड़ सागरोपमोके ध्यतीत हो जाने पर अभिनन्दननाथका जन्म हुआ ॥५६३॥

दस-पुब्ब-सक्ख-संजुव-सायर-णव-कोडि-सक्ख-पड्डिल्लित्ते ।
णवण - उप्पत्तीए, सुमह-जिण्णदस्स उप्पत्ती ॥५६४॥

। सा ६ को ल । धरण पुव्व व १० ल ।

अर्थ :—अभिनन्दन स्वामीकी उत्पत्तिके पश्चात् दस लाख पूर्व सहित नौ लाख करोड़ सागरोपमोके बीत जाने पर मुमति जिनेन्द्रकी उत्पत्ति हुई ॥५६४॥

दस-पुव्व-लक्ख-समहिय, सायर-कोडी-सहस्स-णववीए ।

पक्खित्ते पउमप्पह-जम्मो सुमइस्स जम्मादो ॥५६५॥

। सा ६०००० को । धरण पुव्व व १० ल ।

अर्थ :—सुमतिनाथ तीर्थङ्करके जन्मके पश्चात् दस लाख पूर्व सहित नव्व हजार करोड़ सागरोपमोके व्यतीत हो जानेपर पद्यप्रभका जन्म हुआ ॥५६५॥

दस-पुव्व-लक्ख-समहिय, सायर-कोडी-सहस्स-णववम्मि ।

बोलीणे पउमप्पह-संभूवीए सुपास-संभूवी ॥५६६॥

। सा ९००० को । धरण पुव्व १० ल ।

अर्थ :—पद्यप्रभके जन्मके पश्चात् दस लाख पूर्व सहित नौ हजार करोड़ सागरोपमोका अतिक्रमण हो जानेपर सुपाश्वनाथका जन्म हुआ ॥५६६॥

दस-पुव्व-लक्ख-संजुद-सायर-णव-कोडि-सय-विरामम्मि ।

चंदप्पह - उप्पत्ती, उप्पत्तीदो सुपासस्स ॥५६७॥

। सा ६०० को । पुव्व १० ल ।

अर्थ :—सुपाश्वनाथकी उत्पत्तिके पश्चात् दस लाख पूर्व सहित नौ सौ सागरोपमोके बीत जाने पर चन्द्रप्रभ जिनेन्द्रकी उत्पत्ति हुई ॥५६७॥

अड-लक्ख-पुव्व-समहिय-सायर-कोडीण णउदि-बिच्छेवे^१ ।

चंदपहउप्पत्तीदो^३, उप्पत्ती पुप्फवंतस्स ॥५६८॥

१. क. ज. य. उ. परिवंसे ।

२. द. विच्छेदो ।

३. द व. क. ज. य. उ. चंदप्पह-

। सा ६० को । घग्ग पुब्ब व ढ ल ।

अर्थ :—चन्द्रप्रभकी उत्पत्तिमे आठ लाख पूर्व सहित नब्बे करोड़ सागरोपमोका विच्छेद होनेपर भगवान् पुण्यदन्तकी उत्पत्ति हुई ॥५६८॥

इगि-पुब्ब-लक्ख-समहिय-सायर-णव-कोडि-भेत्त-कालम्मि ।
गलियम्मि पुप्फवंतुप्पत्तीदो सीयलुप्पत्ती ॥५६९॥

। सा ६ को । धरा पुब्ब १ ल ।

अर्थ :—पुण्यदन्तकी उत्पत्तिके अनन्तर एक लाख पूर्व सहित नौ करोड़ सागरोपमोंके बीत जानेपर शीतलनाथका जन्म हुआ ॥५६९॥

इगि-कोडि-पण्ण-सक्खा-छब्बीस-सहस्स-वास-भेत्ताए ।
अभहिएणं जलणिहि-उवमसयेणं बिहीणाए ॥५७०॥

बोलीणाए सायर-कोडीए पुब्ब-सक्ख-जुत्ताए ।
सीयल-संभूदीदो, सेयंस-जिणस्स संभूदी ॥५७१॥

। सा को १ । पुब्ब व १ ल । रिण सागरोपम १०० । व १५०२६००० ।

अर्थ :—शीतलनाथकी उत्पत्तिके पश्चात् सौ सागरोपम और एक करोड़ पचास लाख छब्बीस हजार वर्ष कम एक लाख पूर्व सहित करोड़ सागरोपमोंके अतिक्रान्त हो जानेपर श्रेयांस जिनेन्द्र उत्पन्न हुए ॥५७०-५७१॥

बारस-हव-इगि-लक्ख-अभहियाए वास-उवहि-माणेसु ।
अउवण्णेसु गवेसु, सेयंस-अच्चादु वासुपुब्ब-भबो ॥५७२॥

। सा ५४ वस्स १२ ल ।

अर्थ :—श्रेयासनाथकी उत्पत्तिके बाद बारह लाख वर्ष सहित जीवन सागरोपमोंके व्यतीत हो जाने पर वासुपूज्य तीर्थंकरका जन्म हुआ ॥५७२॥

तीसोवहीण विरमे, बारस-हव-वरिस-लक्ख-अहियाणं ।
जाणेज्ज वासुपुज्जुप्पसीदो^१ विमल-उप्पत्ती ॥५७३॥

। सा ३० वस्स १२ ल ।

अर्थ :- वामुपूज्यकी उत्पत्तिके अनन्तर बारह लाख वर्ष अधिक तीस सागरोपमांके बीतने-पर विमलनाथकी उत्पत्ति जाननी चाहिए ॥५७३॥

उवहि-उवमाण-णवके, तिय-हव-वह-लक्ख-वास-अदिरित्ते^२ ।
बोलीणे विमल-जिणुप्पत्तीदो^३ अह अणंत-उप्पत्ती ॥५७४॥

। सा ६ वस्स ३० ल ।

अर्थ :- विमल जिनेन्द्रकी उत्पत्तिके बाद तीस लाख वर्ष अधिक नौ सागरोपमांके व्यतीत हो जानेपर अनन्तनाथ उत्पन्न हुए ॥५७४॥

बीस-हव-वास-लक्खग्गभहिण्णसुं चउत्तु उवहि-उवमेसुं ।
विरदेसु धम्म-जम्मो, अणंत-सामिस्स जम्मादो ॥५७५॥

। सा ४ वस्स २० ल ।

अर्थ :- अनन्तनाथ स्वामीके जन्मके पश्चात् बीस लाख वर्ष अधिक चार सागरोपमांके बीतने पर धर्मनाथ प्रभुने जन्म लिया ॥५७५॥

उवहि-उवमाण-तिवए, बोलीणे णवय-लक्ख-वास-जुदे ।
पावोण^४-पल्ल-रहिदो, संति-भवो^५ धम्म-भवदो य ॥५७६॥

सा ३ वस्स घण ६ ल रिण प ३ ।

अर्थ :- धर्मनाथकी उत्पत्तिके पश्चात् पीन पत्य कम और नौ लाख वर्ष सहित तीन सागरोपमांके व्यतीत हो जाने पर शान्तिनाथ भगवान्ने जन्म लिया ॥५७६॥

१ द. वासुपुज्जुप्पसीदा । २. द. व. क. ज. उ. अदिरित्ती । ३. द. जिणुप्पत्तीदा ।

४. द. पावाण । ५. द. व. क. ज. य. उ नवा ।

पल्लद्धे बोलोणे, पण-वास-सहस्समाण'-अदिरित्ते ।

कुंधु-जिणे-संजणणं, जणणादो संति-णाहस्स ॥५७७॥

। प ३ धण वस्स ५००० ।

अर्थ :- ज्ञान्तिनाथके जन्मके पश्चात् पाँच हजार वर्ष अधिक आधे पल्यके बीतनेपर कुन्धुनाथ जिनेन्द्र उत्पन्न हुए ॥५७७॥

एक्करस-सहस्सूणिय-कोडि-सहस्सूण-पल्ल-पादम्मि ।

विरवम्मि अर-जिणिदो, कुंधुप्पत्तीए उप्पणो ॥५७८॥

। प ३ रिया वस्स को १००० रिग वस्स ११००० ।

अर्थ :- कुन्धुनाथकी उत्पत्तिके पश्चात् ग्यारह हजार कम एक हजार करोड़ वर्षोंके रहित पाव पल्यके व्यतीत हो जाने पर अर जिनेन्द्र उत्पन्न हुए ॥५७८॥

उणतोस-सहस्साहिय-कोडि-सहस्सम्मि वस्सतीदम्मि ।

अर-जिण-उप्पत्तीदो, उप्पत्ती मल्लि-णाहस्स ॥५७९॥

। वस्स को १००० धण व २६००० ।

अर्थ :- अर जिनेन्द्रकी उत्पत्तिके बाद उणतोस हजार अधिक एक हजार करोड़ वर्षोंके बीत जाने पर मल्लिनाथका जन्म हुआ ॥५७९॥

पणुवीस-सहस्साहिय-णव-हद-छल्लवख-वासबोच्छेद्वे ।

मल्लि-जिणुभूदीदो, उवभूदी सुव्वय-जिणस्स ॥५८०॥

। वा ५४२५००० ।

अर्थ :- मल्लि-जिनेन्द्रकी उत्पत्तिके पश्चात् पच्चीस हजार अधिक नी से गुणित छह (चौवन) लाख वर्षोंके बीत जाने पर मुनिसुव्वत जिनेन्द्रकी उत्पत्ति हुई ॥५८०॥

बीस-सहस्सम्भहिया, छल्लक्ख-पमाण-वासवोण्ण्येदे ।
सुब्बय-उप्पत्तीवो, उप्पत्ती णमि-जिण्हस्स ॥५८१॥

। वा ६२०००० ।

अर्थ :—मुनिसुव्रतनाथकी उत्पत्तिके पश्चात् बीस हजार अधिक छह लाख वर्ष प्रमाण काल व्यतीत हो जाने पर नमि जिनेन्द्रका जन्म हुआ ॥५८१॥

पण-लक्खेसु गवेसु, णवय-सहस्साहिएसु वासाणं ।
णमियाहूप्पत्तीदो, उप्पत्ती णेमि-णाहस्स ॥५८२॥

। वा ५०६००० ।

अर्थ :—नेमिनाथकी उत्पत्तिके पश्चात् ती हजार अधिक पांच लाख वर्ष व्यतीत हो जाने पर नेमिनाथकी उत्पत्ति हुई ॥५८२॥

पण्णासाहिय-छस्सय-चुलसीदि-सहस्स-वस्स-परिबड्ढे ।
णेमि-जिणुप्पत्तीदो, उप्पत्ती पास-णाहस्स ॥५८३॥

। वा ८४६५० ।

अर्थ :—नेमिनाथ तीर्थङ्करकी उत्पत्तिके पश्चात् चौरासी हजार छह गो पचास वर्षोंके व्यतीत हो जाने पर पार्श्वनाथकी उत्पत्ति हुई ॥५८३॥

अट्टत्तरि-अहियाए, वे-सद-परिमाण-वास-अदिरित्ते^१ ।
पास-जिणुप्पत्तीदो, उप्पत्ती वड्ढमाणस्स ॥५८४॥

। वा २७८ ।

अर्थ :—भगवान् पार्श्वनाथकी उत्पत्तिके पश्चात् दो सौ अठतर वर्ष व्यतीत हो जाने पर वद्धमान तीर्थंकरका जन्म हुआ ॥५८४॥

इदवज्जा (उपजाति)

एवं जिणाणं जणणंतरालप्पमाणमाणंवकरं जणस्स ।
कम्मगगलाइं^१ बिह्वडविदूण, उग्घाडए मोक्खपुरी-कवाडं ॥५८५॥

॥ उत्पत्तियतर समत्त ॥

अर्थ — लोगोको आनन्दित करने वाला तीर्थङ्करोके अन्तरालकालका यह प्रमाण उन (भव्यों) की कर्मरूपी अर्गलाको नष्ट करके मोक्षपुरीके कपाटको उदघाटित करता है ॥५८५॥

॥ उत्पत्तिके अन्तरालकालका कथन समाप्त हुआ ॥

ऋषभादि तीर्थङ्करोका आयु प्रमाण—

उसहावि-दससु आऊ, चुलसीवी तह^२ बहत्तरी सट्टी ।
पण्णास-ताल-तीसा, बीसं बस-दु-इगि-लक्ख-पुग्वाइं^३ ॥५८६॥

आदिजिणे पुव्व ८४ ल । अजिय पुव्व ७२ ल ।
मभव पुव्व ६० ल । अहिणदरा पुव्व ५० ल ।
सुमं पुव्व ४० ल । पउमप्पह पुव्व ३० ल ।
मुपाससाह पुव्व २० ल । चदप्पह पुव्व १० ल ।
पुप्फयत पुव्व २ ल । सीयल पुव्व १ ल ।

अर्थ :—ऋषभादिक दस तीर्थङ्करोकी आयु क्रमशः चौरासी लाख पूर्व, बहत्तर लाख पूर्व, साठ लाख पूर्व, पचास लाख पूर्व, चालीस लाख पूर्व, तीसलाख पूर्व, बीस लाख पूर्व, दस लाख पूर्व, दो लाख पूर्व और एक लाख पूर्व प्रमाण थी ॥५८६॥

ततो य वरिस-लक्खं, चुलसीवी तह^४ बहत्तरी सट्टी ।
तीस-दस-एक्कमाऊ, सेयंस-प्यहुवि-छक्कस्स ॥५८७॥

१ व. क. ज. घ. उ. कम्मगगलाइ । २. द. बिह्वडविदूण उग्घोड मोक्खस्स, व. क. व. घ. उ. बिह्वडविदूण उग्घाड-मोक्खस्स । ३. द. ज. घ. बिहत्तरी । ४. द. बिहत्तरी, व. घ. वत्तरी, उ. बहत्तरी ।

मेयंस-वरिस ८४ ल । वासुपुञ्ज वस्स ७२ ल ।

विमल-वस्स ६० ल । अणत वस्स ३० ल ।

धम्म वस्स १० ल । संति वस्स १ ल ।

अर्थ :—इसके आगे श्रेयांसनाथको आदि लेकर छह तीर्थङ्करोंकी आयु क्रमशः चौरासी लाख, बहत्तर लाख, साठ लाख, तीस लाख, दस लाख और एक लाख वर्ष प्रमाण थी ॥५८७॥

तप्तो वरिस-सहस्सा, पणणउदो अदुरसीदि पणवण्णं ।

तीस^१-दस-एकमाऊ, कुंशु-जिण-पपहुदि-छक्कस्स ॥५८८॥

कुंशुणाह वरिस ६५००० । अर वरिस ८४००० । मल्लि वरिस ५५००० ।

सुब्बय वरिस ३०००० । णमि वरिस १०००० । णेमिणाह वरिस १००० ।

अर्थ :—इसके आगे कुन्धुनाथको आदि लेकर छह तीर्थङ्करोंकी आयु क्रमशः पचानव हजार, चौरासी हजार, पचपन हजार, तीस हजार, दस हजार और एक हजार वर्षप्रमाण थी ॥५८८॥

वास-सवमेक्कमाऊ, पास-जिणेंदस्स होइ णियमेण ।

तिरि-वड्ढमाण-आऊ, बाहत्तरि-वस्स-परिमाणो ॥५८९॥

पास-जिणे वस्म १०० । वीर-जिणेंदस्स वस्स ७२ ।

। आऊ-समत्ता ।

अर्थ :—भगवान् पार्श्वनाथकी आयु नियमसे सौ वर्ष और वर्धमानजिनेन्द्रकी आयु बहत्तर वर्ष प्रमाण थी ॥५८९॥

॥ जिनेन्द्रोकी आयुका कथन समाप्त हुआ ॥

वृषभादि तीर्थङ्करोंका कुमारकाल—

पढमे कुमार-कालो, जिण-रिसहे बीस-पुब्ब-सवस्साणि ।

अजियादि-अर-जिणेंते, सग-सग-आउस्स पावेगो^२ ॥५९०॥

उसह पुब्ब २० ल । अजिय पुब्ब १८ ल । संभव पुब्ब १५ ल । अहिणंदरा
पुब्ब १२५०००० । सुमइ पुब्ब १० ल । पउमप्पह पुब्ब ७५००००^१ । सुपास
पुब्ब ५ ल । चदप्पह पुब्ब २५०००० । पुप्फयंत पुब्ब ५०००० । सीयल
पुब्ब २५००० । सेयस वस्स २१ ल । वासुपुज्ज वस्स १८ ल । विमल
वस्स १५ ल । अणत वस्स ७५०००० । धम्म वस्स २५०००० । संति
वस्स २५००० । कु थु वस्स २३७५० । अरणाह वस्स २१००० ।

अर्थ :—प्रथम जिनेन्द्रका कुमारकाल बीस लाख पूर्व और अजितनाथको आदि लेकर
अर जिनेन्द्र पर्यंत अपनी-अपनी आयुके चतुर्थभाग प्रमाण कुमार-काल था ॥५६०॥

तच्चो कुमार-कालो, एग^२-सयं सग-सहस्स-पांच-सया ।

पणुबीस-सयं ति-सयं, तीसं तीसं च छक्कस्स ॥५६१॥

मल्लिणाह १००^३ । मुगिसुव्वय ७५०० । एगि २५०० । णेमि ३०० ।

पागगाह ३० । वीरगाह ३० ।

॥ एव कुमार-कालो ममत्तो^४ ॥

अर्थ :—इसके आगे छह तीर्थङ्करोंका कुमारकाल क्रमशः एक सौ, सात हजार पांच सौ
(७५००), पच्चीस सौ, तीन सौ, तीस और तीस वर्ष प्रमाण था ॥५६१॥

विशेषार्थ :—गाथामे मल्लिनाथका कुमारकाल १०० वर्ष मान कहा गया है । इसका
अर्थ है कि उन्होंने १०० वर्षकी आयुमें ही दीक्षा ग्रहण कर ली थी । दीक्षाके बाद वे ६ दिन छयस्थ
श्रवस्थामें और ५४८६६ वर्ष ११ माह २४ दिन केवली श्रवस्थामे रहे । इन सबका योग (१०० +
५४८६६ वर्ष ११ माह, २४ दिन =) ५५००० वर्ष होता है और उनकी आयु भी इतनी ही थी ।

॥ इस प्रकार कुमार-काल समाप्त हुआ ॥

१. द ७१००००० ।

२. द एकसय ।

३. द. १०००० ।

४. द. ममत्ता,

ऋषभादि तीर्थकरोंके शरीरका उत्सेध—

पंचसय-घनु-पमाणो, उसह-जिणेंबस्स होबि उच्छेहो ।

तसो पण्णासूणा, णियमेचं पुष्फदंत-वेरते ॥५६२॥

उ ५०० । अ ४५० । स ४०० । अ ३५० । सु ३०० । प २५० ।

सु २०० । चब १५० । पुष्फ १०० ।

अर्थ — भगवान् ऋषभनाथके शरीरकी ऊँचाई पाँचसी घनुष प्रमाण थी । इसके आगे पुष्पदन्त पर्यन्त जिनेन्द्रोंके शरीरकी ऊँचाई नियमसे पचास-पचास घनुष कम होती गई है ॥५६२॥

एसो जाब अणंतं, दस-दस-कोदंड-मेच-परिहीणो ।

तसो णेमि जिणंतं, पण-पण-चावेहि परिहीणो ॥५६३॥

सी ६० । से ८० । वा ७० । वि ६० । अ ५० । घ ४५ । सं ४० ।

कुं ३५ । अर ३० । म २५ । मुक्क २० । ण १५ । णे १० ।

अर्थ :— इसके आगे अनन्तनाथ पर्यन्त दस-दस घनुष और फिर नेमिनाथ पर्यन्त पाँच-पाँच घनुष उत्सेध कम होता गया है ॥५६३॥

णव हत्या पास-जिणे^१, सग हत्या बड्डमाण-णामम्मि ।

एसो तित्ययराणं, सरीर-घणं पुरुबेमो ॥५६४॥

पा ह ६ । वीर ह ७ ।

॥ उच्छेहो समत्तो^२ ॥

अर्थ :— भगवान् पार्श्वनाथके शरीरका उत्सेध नौ हाथ और वर्षमान स्वामीके शरीरका उत्सेध सात हाथ प्रमाण था । अब तीर्थङ्करोंके शरीरके वर्ण (रंग) का कथन करता हूँ ॥५६४॥

॥ उत्सेधका कथन समाप्त हुआ ॥

ऋषभादि तीर्थं कुरोका शरीर-वर्ण—

'श्वपह-पुष्पवंता', कुर्वेदु-सुसार-हार-संकासा ।
शीला-सुपास-पासा, सुव्यय-जेमी सणीर-घण-वण्णा ॥५६५॥

विद्युत्तुम-समाण-वेहा, पञ्चमपह-वासुपुञ्ज-जिणणाहा^३ ।
सेसाण जिणवराणं, काया चामीयरायारा ॥५६६॥

॥ मरीर-वण्ण^४ गर्द ॥

अर्थः—भगवान् चन्द्रप्रभ और पुष्पदन्त कुन्दपुष्प, चन्द्रमा, बर्क तथा (मुक्ता) हार सदृश घवल वर्णके थे । सुपादर्वनाथ और पादर्वनाथ नीलवर्णके थे । मुनिसुव्रतनाथ और नेमिनाथ जलयुक्त बादल (मेघ) के वर्ण सदृश अर्थात् श्याम वर्णके तथा पद्मप्रभ एव वासुपुञ्ज जिनेन्द्रके शरीर प्रवाल सदृश रक्तवर्णके थे । शेष (सोलह) तीर्थंकरोके शरीर स्वर्ण (पीत) वर्णके थे ॥५६५-५६६॥

॥ शरीरके वर्णका कथन समाप्त हुआ ॥

ऋषभादि तीर्थंकरोका राज्यकाल—

तेसट्टि-पुव्व-लक्खा, पढम-जिणे रज्ज-काल-परिमाणं ।
तेवण्ण-पुव्व-लक्खा, अजिदे पुव्वंग-संजुत्ता ॥५६७॥

। पुव्व ६३ ल । अजि ५३ ल पुव्वंग १ ।

अर्थः—आदि जिनेन्द्रके राज्यकालका प्रमाण त्रिसठ लाख पूर्व और अजित जिनेन्द्रके राज्यकालका प्रमाण एक पूर्वांग सहित त्रिपन लाख पूर्व था ॥५६७॥

अज्जबाल-यमाणाइं, संभव-सामिस्स पुव्व-लक्खाइं ।
अउ-पुव्वंग-ज्जूदाइं, णिट्ठि^५ सव्व-दरिसीहिं ॥५६८॥

। पुव्व ४४ ल । पूर्वांग ४ ।

१. द. क. ज. य. चदण्ह । २. द. व. क. ज य उ. पुष्पवंतो । ३. द व. क ज य.
उ. जिणणाहो । ४. द. व. ज. उ. वण्णम ।

अर्थ :—सम्भवनाथ स्वामीके राज्यकालका प्रमाण सर्वज्ञदेवने बार पूर्वांग सहित चवालीस लाख पूर्व प्रमाण बतलाया है ॥५६८॥

छत्तीस-पुष्प-लक्ष्मा, पण्णास-सहस्स-पुष्प-संजुत्ता ।
अड-पुष्पगेहि जुवा, अहिणंदण-जिणवरिवस्स ॥५६९॥

। पुष्प ३६५०००० । पूर्वांग ८ ।

अर्थ :—अभिनन्दन जिनेन्द्रके राज्यकालका प्रमाण आठ पूर्वाङ्ग सहित छत्तीस लाख पचास हजार पूर्व था ॥५६९॥

एककोणतीस-परिमाण-पुष्प-लक्ष्माणि बद्धराणं पि ।
पुष्पंगारिणं बारस-सहिवाणि सुमइ-सामिस्स ॥६००॥

। पुष्प २६ ल । पूर्वांग १२ ।

अर्थ :—सुमतिनाथ स्वामीका राज्यकाल बारह पूर्वाङ्ग सहित उनतीस लाख वर्ष पूर्व प्रमाण था ॥६००॥

इगिदीस-पुष्प-लक्ष्मा, पण्णास-सहस्स-पुष्प-संजुत्ता ।
सोलस-पुष्पंगहिया, रज्जं पउमप्यह-जिणस्स ॥६०१॥

। पुष्प २१५०००० । पूर्वांग १६ ।

अर्थ :—पद्यप्रभ जिनेन्द्रका राज्यकाल सोलह पूर्वांग सहित इक्कीस लाख पचास हजार पूर्व प्रमाण था ॥६०१॥

चोहस सयस्सहस्सा, पुष्पारणं तह य पुष्प-अंगगाइं ।
बीसदि-परिमाणार्हं, जेयाणि सुपास-सामिस्स ॥६०२॥

। पुष्प १४ ल । पूर्वांग २० ।

अर्थ :—सुपाश्वनाथ स्वामीका राज्यकाल बीस पूर्वाङ्क सहित चौदह लाख पूर्व प्रमाण जानना चाहिये ॥६०२॥

पण्णास-सहस्साहिय-छत्तलकस-पमाण-वरिस-पुब्बाणि ।
पुब्बंगा चउबीसा, चंदप्पह-जिणवरिदस्स ॥६०३॥

। पुब्ब ६५०००० । पूर्वांग २४ ।

अर्थ :—चन्द्रप्रभ त्रिनेन्द्रक राज्यकालका प्रमाण छह लाख पचास हजार वर्ष पूर्व और चौबीस पूर्वाङ्क है ॥६०३॥

अडवीस-पुब्ब-अंगम्भहियं सुविहिस्स पुब्ब-लकखद्ध ।
सीयल-देवस्स तथा, केवलयं पुब्ब-लकखद्ध ॥६०४॥

। पु ३ १०००० अंग २८ । पुब्ब ५०००० ।

अर्थ : मुविधिनाथ (पुष्पदेव) स्वामीका राज्यकाल अट्ठाईस पूर्वाङ्क अधिक अर्ध लाख पूर्व और शीतलनाथका राज्यकाल मात्र अर्धलाख पूर्व प्रमाण था ॥६०४॥

सेयंस-जिणेसस्स य, 'दुवाल-संखाणि बास-लकखाणि ।
पढमं चिय परिहरिया, रज्जसिरी वासुपुज्जेण ॥६०५॥

। वस्साणि ४२ ल ।

अर्थ :—भगवान् श्रेयासनाथका राज्यकाल ब्यालीस लाख वर्ष प्रमाण था । वासुपुज्य जिनेन्द्रने पहिले ही राज्यलक्ष्मी छोड दी थी ॥६०५॥

बिमलस्स तीस-लकखा, अणतणाहस्स-पंच-वत्त-सकखा ।
लकखा पणप्पमाणा, बासाणं धम्म-सान्निस्स ॥६०६॥

। बासाणि ३० ल । वस्स १५ ल । वस्स ५ ल ।

अर्थ :—विमलनाथका राज्यकाल तीस लाख, अनन्तनाथका पन्द्रह लाख और धर्मनाथ स्वामीका पाँच लाख वर्ष प्रमाण था ॥६०६॥

लखखस्स पाद-माणं, संति-जिणेसस्स मंडली-सत्तं ।
तस्स य चक्कघरत्तो, तत्तियमेत्ताणि वस्साणि ॥६०७॥

। २५००० । २५००० ।

अर्थ :—शान्तिनाथ जिनेन्द्रका मण्डलेशत्व-काल एक लाखके चतुर्थांश प्रमाण और चक्र-वर्तित्व-काल भी इतने ही वर्ष प्रमाण था ॥६०७॥

तेबीस सहस्साइं, सग-सय-पण्णास मंडली-सत्तं ।
कुंथु-जिणिदस्स तहा, 'ताइं चिय चक्कवट्टित्ते ॥६०८॥

। २३७५० । २३७५० ।

अर्थ :—कुन्धु जिनेन्द्र तेईस हजार मातसी पचास वर्ष तक मण्डलेश और फिर इतने ही वर्ष प्रमाण चक्रवर्ती रहे ॥६०८॥

इगिबीस सहस्साइं, वस्साइं होंति मंडली-सत्ते ।
अर-णामम्मि जिणिदे, ताइं चिय चक्कवट्टित्ते ॥६०९॥

। २१००० । २१००० ।

अर्थ :—अरनाथ जिनेन्द्रके इक्कीस हजार वर्ष मण्डलेश अवस्थामें और इतने ही वर्ष चक्रवर्तित्वमें व्यतीत हुए ॥६०९॥

ण हि रज्जं मल्लि-जिणे, पण्णारस-पण-सहस्स-बासाइं ।
सुब्बय-णमिणाहाणं, णेमिसिबयस्स^१ ण हि रज्जं ॥६१०॥

। मल्लि० । मुणिसुब्बय १५००० । णमि ५००० । णेमि० । पास० । वीर० ।

[तालिका न० १३ पृष्ठ १७४-१७५ पर देखें]

तालिका : १३

ऋषभादि चौबीस तीर्थकरों के जन्मान्तर, आयु

क्रमांक	नाम	जन्मान्तर-काल	आयु
१	ऋषभनाथ	तृतीयकाल मे ८४ ला पू ३ व ८ $\frac{१}{३}$ मा शेष० ५० लाख करोड सागर(+) १२ लाख पूर्व वर्ष	८४ लाख पूर्व
२	अजितनाथ	३० लाख करोड सागर (+) १२ लाख पूर्व वर्ष	७२ लाख पूर्व
३	सम्भवनाथ	१० लाख करोड सागर (+) १२ लाख पूर्व वर्ष	६० लाख पूर्व
४	अभिनन्दननाथ	९ लाख करोड सागर (+) १० लाख पूर्व वर्ष	५० लाख पूर्व
५	सुमतिनाथ	९० हजार करोड सागर (+) १० लाख पूर्व वर्ष	४० लाख पूर्व
६	पद्मप्रभ	९००० करोड सागर (+) १० लाख पूर्व वर्ष	३० लाख पूर्व
७	सुपार्श्वनाथ	९०० करोड सागर (+) १० लाख पूर्व वर्ष	२० लाख पूर्व
८	चन्द्रप्रभ	९० करोड सागर (+) १० लाख पूर्व वर्ष	१० लाख पूर्व
९	पुष्पदन्त	९ करोड सागर (+) १ लाख पूर्व वर्ष	२ लाख पूर्व
१०	शीतलनाथ	(१ को सा (+) १ ला पू)(-)(१०० सा १५०२६००० वर्ष)	१ लाख पूर्व
११	श्रेयासनाथ	५४ सागर (+) १२ लाख वर्ष	८४ लाख वर्ष
१२	वासुपूज्य	३० सागर (+) १२ लाख वर्ष	७२ लाख वर्ष
१३	विमलनाथ	९ सागर (+) १२ लाख वर्ष	६० लाख वर्ष
१४	अनन्तनाथ	४ सागर (+) २० लाख वर्ष पूर्व	३० लाख वर्ष
१५	धर्मनाथ	३ सागर (+) ९ ला वर्ष(-)३/४ पत्य	१० लाख वर्ष
१६	शान्तिनाथ	१/२ पत्य (+) ५००० वर्ष	१ लाख वर्ष
१७	कुन्धुनाथ	१/४ पत्य (-) ९९९९९८९००० वर्ष	९५००० वर्ष
१८	अरनाथ	१०००००२९००० वर्ष	८४००० वर्ष
१९	मल्लिनाथ	५४२५००० वर्ष	५५००० वर्ष
२०	मुनिसुव्रत	६२०००० वर्ष	३०००० वर्ष
२१	नमिनाथ	५०९००० वर्ष	१०००० वर्ष
२२	नेमिनाथ	८४६५० वर्ष	१००० वर्ष
२३	पार्श्वनाथ	२७८ वर्ष	१०० वर्ष
२४	महावीर	चतुर्थकाल मे ७५ वर्ष ८ $\frac{१}{३}$ मास शेष रहने पर उत्पन्न हुए।	७२ वर्ष

कुमारकाल, उत्सेध, वर्ण, राज्यकाल एवं चिह्न निर्देश- गाथा : ५६०-६१२

कुमार-काल	उत्सेध	वर्ण	राज्य-काल	चिह्न
२० लाख पूर्व	५०० धनुष	स्वर्ण	६३ लाख पूर्व	बैल
१८ लाख पूर्व	४५० धनुष	स्वर्ण	५३ लाख पूर्व + १ पूर्वांग	गज
१५ लाख पूर्व	४०० धनुष	स्वर्ण	४४ लाख पूर्व + ४ पूर्वांग	अश्व
१२ $\frac{१}{३}$ " "	३५० "	स्वर्ण	३६ $\frac{१}{३}$ " + ८ "	बन्दर
१० $\frac{१}{३}$ " "	३०० "	स्वर्ण	२९ " + १२ "	चकवा
७ $\frac{१}{३}$ " "	२५० "	रक्त	२१ $\frac{१}{३}$ " + १६ "	कमल
५ " "	२०० "	नील	१४ " + २० "	नन्दावर्त
२ $\frac{१}{३}$ " "	१५० "	धवल	६ $\frac{१}{३}$ " + २४ "	अर्धचन्द्र
५०००० पूर्व	१०० "	धवल	१/२ " + २८ "	मगर
२५००० पूर्व	९० "	स्वर्ण	५०००० पूर्व	स्वस्तिक
२१०००० वर्ष	८० "	स्वर्ण	४२०००० वर्ष	गोडा
१८०००० "	७० "	रक्त	०	भैसा
१५०००० "	६० "	स्वर्ण	३००००० वर्ष	शूकर
७५०००० "	५० "	स्वर्ण	१५००००० वर्ष	सेही
२५०००० "	४५ "	स्वर्ण	५००००० वर्ष	वज्र
२५००० "	४० "	स्वर्ण	मण्डलेश २५००० वर्ष, चक्र २५००० वर्ष	हरिण
२३७५०	३५ "	स्वर्ण	" २३७५० वर्ष, " २३७५०	छाग
२१००० "	३० "	स्वर्ण	" २१००० वर्ष, " २१०००	मत्स्य
१०० "	२५ "	स्वर्ण	०	कलश
७५०० "	२० "	गहरा नीला	१५००० वर्ष	कूर्म
२५०० "	१५ "	स्वर्ण	५००० वर्ष	उत्पल
३०० "	१० "	गहरा नीला	०	शंख
३० "	९ हाथ	नील	०	सर्प
३० "	७ हाथ	स्वर्ण	०	सिंह

अर्थः—मल्लि जिनेन्द्रने राज्य नहीं किया । मुनिसुवत श्रीर नमिनाथका राज्यकाल क्रमशः पन्द्रह हजार और पाँच हजार वर्ष प्रमाण था । नेमिनाथ, पादर्वनाथ और वीर प्रभुने राज्य नहीं किया ॥६१०॥

ऋषभादि चौबीस तीर्थकरोंके चिह्न—

रिसहादीणं चिह्नं, गोवदि-नाय-तुरय-बाणरा कोका ।
पदमं णंदावत्तं, अद्धससि-मयर-सत्तियाइं पि ॥६११॥

मंडं महिस-बराहा', 'साही-वज्जाणि हरिण-छगला' य ।
तगरकुसुमा य कलसा, कुम्मुप्पल-संख-अहि-सिहा ॥६१२॥

अर्थः—बैल, गज, अश्व, बन्दर, चकवा, कमल, नन्दावतं, अर्धचन्द्र, मगर, स्वस्तिक, गंडा, भंसा, शूकर, सेही, वज्र, हरिण, छाग, तगरकुसुम (मत्स्य), कलश, कुर्म, उत्पल (नीलकमल), शख, सर्प और सिंह ये क्रमशः ऋषभादिक चौबीस तीर्थङ्करोंके चिह्न हैं ॥६११-६१२॥

नोटः—गाथा ५६० से ६१२ पर्यन्तकी मूलसदृष्टियोंके अर्थ तालिका न० १३ द्वारा स्पष्ट किचे गये हैं, जो पृष्ठ १७४-१७५ पर देखें ।

राज्य पद निर्देश—

अर-कुंथु-संति-णामा, तिस्थयरा चक्कवट्टिणो' भूदा ।
सेसा अनुवम-भुजबल-साहिय-रिपु"मंडला जादा ॥६१३॥

अर्थः—अरनाथ, कुन्थुनाथ और शान्तिनाथ नामके तीन तीर्थङ्कर चक्रवर्ती हुए थे । शेष तीर्थङ्कर अपने अनुपम बाहुबलसे रिपु वर्गको सिद्ध करनेवाले (माण्डलिक राजा) हुए ॥६१३॥

चौबीसों तीर्थङ्करोंकी वैराग्य उत्पत्तिका कारण—

संति-बुग-वासुपुज्जा, सुमइ-बुगं 'सुवदावि-पंच-जिणा ।
णिय-पच्छिम-जम्माणं, उवओगा' जाद-वेरग्गा ॥६१४॥

१ द. बराहो । २ द. व. क. ज. य. उ. सीहा । ३. द. व. क. ज. उ. तगरा । ४. व. क. ज. य. उ. चक्कवट्टिणा । ५. द. रिसमडला, व. उ. रिक्कडला, ज. य. रिसमडला, क. रिसमडला । ६. व. उ. सुवदावि । ७. क. उवउगा ।

अर्थ :—शान्तिनाथ, कुन्धुनाथ, वासुपूज्य, मुमतिनाथ एव पद्यप्रभु ये पाँच (तीर्थङ्कर) तथा सुव्रतादिक (मुनिमुव्रत, नमिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ एव वर्धमान) पाँच, इस प्रकार कुल दस तीर्थङ्कर अपने पूर्व (पिछले) जन्मोके स्मरणसे वैराग्यको प्राप्त हुए ॥६१४॥

अजिय-जिण-पुप्फदंता, अणंतदेओ य धम्म-सामी-य ।

दट्ठण उक्कपडणं, संसार-सरीर-भोग-णिविण्णा ॥६१५॥

अर्थ :—अजित जित, पुष्पदन्त, अनन्तदेव और धर्मनाथ स्वामी (ये चार तीर्थङ्कर) उल्कापात देखकर समार, शरीर एवं भोगोमे विरक्त हुए ॥६१५॥

अर-संभव-विमल-जिणा, अरुभ-विणासेण जाद-वेरग्गा ।

सेयंस-सुपास-जिणा, वसंत-वणलच्छि-णामेण ॥६१६॥

अर्थ :—अरनाथ, सम्भवनाथ और विमल जितेन्द्र मेघ विनाशसे, तथा भगवान् श्रेयास और सुपाश्वर्क जितेन्द्र वसन्तकालीन वन-वर्माका विनाश देखकर वैराग्यको प्राप्त हुए ॥६१६॥

चंदप्पह-मल्लि-जिणा, अद्धुव-पहुदीहि जाद-वेरग्गा ।

सीयलओ हिम-णासे, उसहो णोलंजणाए मरणाओ ॥६१७॥

अर्थ—चन्द्रप्रभु आर मल्लि जितेन्द्र अद्धुव (विजली) आदिमे शीतलनाथ हिम-नाथसे पार ऋषभदेव नोलाञ्जनाके मरणसे वैराग्यको प्राप्त हुए ॥६१७॥

गंधव-णयर-णासे, णदणदेवो चि जाद-वेरग्गो ।

इय बाहिर-हेट्ठीहि, जिणा विरागेण चिंतंति ॥६१८॥

अर्थ—अभिनन्दन स्वामी गन्धर्व नगरा नाथ देख विरक्त हुए । उस प्रकार इन वासु हेतुओसे विरक्त होकर वे तीर्थंकर चिन्तवन करने है ॥६१८॥

ऋषभादि चौबीस तीर्थंकरों द्वारा चिन्तन की हुई वैराग्य-भावनाके अन्तर्गत नरकगतिके दुःख—

णिरएसु णत्थि सोक्खं, णिमेममेत्तं^१ पि णारयाण सदा ।

दुक्खाइ^२ वारुणाइ^३, वट्टते पच्चमाणाणं ॥६१९॥

अर्थ :—नरकोंमें पचनेवाले नारकियोंको क्षणमात्र भी सुख नहीं है, वे सदैव दारुण दुःखों का अनुभव करते रहते हैं ॥६१६॥

जं कुणदि विसय-लुद्धो^१, पावं तस्सोदयम्मि गिरएसु ।
तिव्वाओ^२ वेयणाओ, पावंतो विलबदि विसण्णो ॥६२०॥

अर्थ :—विषयोमें लुब्ध होकर जीव जो कुछ पाप करता है उसका उदय आने पर नरकोंमें तीव्र वेदनाओको पाकर विषण्ण (दुःखी) हो विलाप करता है ॥६२०॥

^३खणमेत्ते विसय-सुहे, जे दुक्खाइं असंख-कालाइं ।
विसहंति घोर-गिरए, ताण समो णत्थि णिब्बुद्धो ॥६२१॥

अर्थ :—जो जीव क्षणमात्र रहनेवाले विषय सुखके निमित्त असंख्यातकाल तक घोर नरकोमें दुःख महान करते है उनके महान निवृद्धि और कोई नहीं है ॥६२१॥

^४अधो णिबडइ कूवे, बहिरो ण सुणेदि साधु-उववेसं ।
पेच्छंती णिसुणंतो, गिरए जं पडइ तं चोज्जं ॥६२२॥

अर्थ :—यदि अन्धा कुएमें गिरता है और बहरा सदुपदेश नहीं सुनता तो कोई आश्चर्य नहीं किन्तु जो देखता एव सुनता हुआ नरकमें पडता है, यह आश्चर्य है ॥६२२॥

निर्यञ्चगतिके दुःख--

भोत्तूण णिमिसमेत्तं, विसय-सुहं विसम-दुक्ख-बहुलाइं ।
तिरय-गदीए पावा, चेठ्ठंति अणंत-कालाइं ॥६२३॥

अर्थ :—पापी जीव क्षणमात्र विषय-सुखको भोगकर विषम एव प्रचुर दुःखोंको भोगते हुए अनन्तकाल तक निर्यञ्चगतिमें रहते है ॥६२३॥

१. द. व. क. उ. लडा, ज. य. लडा ।

२. क. उ. तिक्वाउ ।

३. द. बलसमत्तो ।

४. द. व. धंभा ।

ताडण-तासण-बंधण-बाहण-लंछण-विभेदणं^१ दमणं ।

कण्ठछेदण-णासा-विधण-णिल्लंछणं^२ चैव ॥६२४॥

छेदण-भेदण-दहणं, णिप्पीडण-गालणं क्षुधा तण्हा ।

भक्खण-महण-मलणं, विकत्तणं सीदमुण्हं च ॥६२५॥

अर्थ :—तिर्यञ्चगतिमे, ताडना, त्रास देना, बाधना, बोझा लादना, चिह्नित (शङ्कादिकके आकारसे जलाना) करना, मारना, दमन करना, कानोका छेदना, नाक वेधना, अण्डकोशको कुचलना (बधिया करना), छेदन, भेदन, दहन, निष्पीडन, गालन, क्षुधा, तृषा, भक्षण, मर्दन, मलन, विकर्तन, शीत और उष्ण (आदि दु ख प्राप्त होते हैं) ॥६२४-६२५॥

एवं अणंत-खुत्तो, णिच्च-चदुग्गवि-णिगोद-मज्झम्मि ।

जम्मण-मरण-रहट्टं, अणंत-खुत्तो^३ परिगदो जं ॥६२६॥

अर्थ :—इस प्रकार अनन्तवार नित्य निगोद और चतुर्गति (उतर) निगोदके मध्य जाकर अनन्तवार जिम जन्म-मरणरूप अरहट्ट (घटोयन्त्र) को प्राप्त किया है (उसके विषयमे विचार करना) ॥६२६॥

मनुष्यगतिरे दुःखाके अन्तर्गत गर्भस्थ बालकका क्रमिक विकास—

पुठ्वकद-पाव-गुरुगो, मादा-पिदरस्स रत्त-सुक्कादो ।

जादूण य दस-रत्तं, अच्छदि^४ कललस्सरुव्हेण ॥६२७॥

“कलुसो-कदम्मि अच्छदि, दस-रत्तं तत्तिथम्मि थिर-भूवं ।

परोक्कं मासं चिय, बुब्बुद-घणभूद-मांसपेसो य ॥६२८॥

पंच - पुलगाउ^५ - अंगोबंगाइ^६ चम्म-रोम-णह-रुव ।

फंदणमट्टम-मासे, णवमे दसमे य णिग्गमणं ॥६२९॥

१. द. ब. क. ज. य उ विहेदण। २. द. क. ज. य मेलिच्छण, ब. उ. मेलिच्छणं। ३. द. क. ज. य परिगदाज, य उ. परिगदाज। ४. द. कललहस्स। ५. द. ब. क. ज. य उ. कलुसे। ६. द. ज. य बुब्बुदद। ७. द. ब. क. ज. य उ. बलकाप्रो। ८. द. ज. य. मणमरोमरुव, ब. क. उ. चणमरोमरुव।

अर्थ :-—पूर्वकृत महा पापके उदयसे जीव माताके रक्त और पिताके शुक्रसे उत्पन्न होकर दस रात्रि पर्यन्त कललरूप (कर्दम सदृश गाढ़ी) पर्यायमे रहता है। पश्चात् दस रात्रि पर्यन्त कलुषी-कृत पर्यायमे और इनती ही अर्थात् दस रात्रि पर्यन्त स्थिरीभूत (निष्कम्प) पर्यायमे रहता है। इसके पश्चात् प्रत्येक मासमे क्रमशः बुदबुद, घनभूत (ठोस), मासपेशी, पांच पुलक (दो हाथ, दो पैर और एक सिर), अङ्गोपाङ्ग और चर्म तथा रोम एव नखोकी उत्पत्ति होती है। पुनः आठवे मासमे स्पन्दन क्रिया और नाँवे या दसवे मासमे निगमन (जन्म) होता है ॥६२७-६२९॥

योनि का स्वरूप एव गर्भाशयके दुःख—

असुची अपेक्खणीयं, दुग्गंधं मुत्त-सोणिव-दुभारं ।

बोत्तुं पि लज्ज-णिज्जं, पोट्टमुहं जम्मभूमि मे ॥६३०॥

अर्थ :-—अशुचि, अदगंभीय, दुग्न्धमे युक्त, सूत्र एव सूतिका द्वार तथा जिसका कथन करने में भी लज्जा आती है ऐसा जो उदरका मुख (योनि) है वह इस मनुष्यका जन्म स्थान है ॥६३०॥

आमासयस्स हेट्ठा, उवारिं पक्कासयस्स सूथम्मि ।

मज्झम्मि 'वत्थि-पडले, पच्छण्णो वमिक-पिज्जंतो ॥६३१॥

अच्छदि णाव-दस-मासे, गवमे 'आहरदि सव्व-अरोसु ।

गूथरसं अडकुणिसं, घोरतरं दुक्ख-संभूदं ॥६३२॥

अर्थ :- (यह प्राणी) गर्भ समयमे आमाशयके नीचे और पक्काशयके ऊपर मलके बीचो-बीच वस्ति-पटल (जरायु पटल) में आच्छादित, वान्ति (वमन) को पीता हुआ नौ-दस मास गर्भमें स्थित रहता है और वहाँ सब अङ्गोमे दुःखमे उत्पन्न अत्यन्त नीच दुग्न्धसे युक्त विष्टा-रसको आहारके रूपमें ग्रहण करता है ॥६३१-६३२॥

मनुष्यपर्यायका कालध्रप --

बालत्तणम्मि गुरुगं, दुक्खं पत्तो अजाण-माणेण ।

जोव्वण-काले मज्झे, इत्थी-पासम्मि संसत्तो ॥६३३॥

अर्थ :—यह जीव बालकपनमे अज्ञानके कारण प्रचुर दुःखको प्राप्त हुआ तथा यौवन-कालमें स्त्रीके साथ आमक्त रहा ॥६३३॥

वेडेदि^१ विसय-हेदु^२, कलत्त-पासेहि दुग्घिमोचेहि ।

कोसेण कोसकारो, ब^३ बुम्मदी मोह-पासेसु ॥६३४॥

अर्थ :—जिस प्रकार रेशमका कीड़ा रेशमके तन्तु-जालमे अपने आपको ही वेष्टित करता है, उसी प्रकार यह दुर्मति (जीव) विषयके निमित्त दुर्बिमोच स्त्रीरूप पाशोमे अपने आपको मोह-जालमे फँसा लेता है ॥६३४॥

कामातुरस्स गच्छदि, खणमिच्च संबच्छराणि बहुगणि ।

पाणितल-धरिद-गंडो^४, बहुसो वित्तेदि दीण-मुहो^५ ॥६३५॥

अर्थ :—कामातुर जीवके बहुतमे वर्ष एक क्षणके सदृश बीत जाते हैं। वह हस्ततलपर कपोल रखकर दीनमुख होता तथा वहुत प्रकारमे चिन्ता करता है ॥६३५॥

कामुम्मत्तो पुरिसो, कामिज्जंते जणे^६ अलभमाणे ।

घत्तदि मरिदुं बहुघा, मरुप्पपातादि-करणेहि^७ ॥६३६॥

अर्थ :—कामोन्मत्त पुरुष अभीष्ट जन (स्त्री आदि) को न प्राप्त कर बहुधा मरु-प्रपातादि नाघनोसे मरनेकी चेष्टा करता है ॥६३६॥

कामप्पुण्णो पुरिसो, तिलोक्कसारं पि जहदि सुद-लाहं ।

कुण्णदि-असंजम-बहुलं, अणंत-संसार-संजणणं ॥६३७॥

१. द. ब. क. ज. घ. उ. वेदेदि । २. द. ब. क. ज. य. उ. हेदु । ३. द. क. ज. य. उ. बद्धमदी । ब. बद्धुममदी । ४. व. बरामदि । ५. ब. उ. पाणितल । ६. द. क. य. गघो । ७. द. ब. क. ज. य. उ. मुहे । ८. द. ज. य. जणो य. अणममाणो, क. जणो ब. अणममाणो, उ. जणो य. अणममाणो, ब. जणे य. अणममाणो । ९. द. ब. क. ज. उ. पुत्तदि, य. पुत्तादे । १०. द. ज. करणहि, य. करणहि । ११. द. काम पुणो, ब. क. ज. य. उ. काम पुणो ।

अर्थ :—कामसे परिपूर्ण पुरुष तीन लोकमे श्रेष्ठ श्रुत-लाभको भी छोड़ देता है और अनन्त ससारको उत्पन्न करनेवाले प्रचुर असयमको (ग्रहण) करता है ॥६३७॥

‘उच्चो धीरो बीरो, बहुमाणीओ वि विसय-लुद्ध’-मई ।

सहदि गिच्चं गिच्चं, सहदि हि बहुगं^३ पि अवमाणं ॥६३८॥

अर्थ :— उच्च, धीर, वीर और बहुत माननीय मनुष्य भी विषयोमें लुब्ध-बुद्धि होकर नीचसे नीचका भी सेवन करता है और अनेक प्रकारके अपमान सहता है ॥६३८॥

दुखलं दुज्जस-बहुलं, इह लोगे दुग्गादि पि परलोगे ।

हिडवि दूरमपारे, संसारे विसय-लुद्ध-मई ॥६३९॥

अर्थ :—विषयोमें आसक्त बुद्धिवाला पुरुष इस लोकमे प्रचुर अपकीर्ति युक्त दुःखको तथा परलोकमे दुर्गतिको प्राप्त कर अपार ससारमे बहुत काल तक परिभ्रमण करता है ॥६३९॥

विसयामिसेहि^१ पुण्णो, अरांत-सोवखारा हेवु सम्मत्तं ।

सच्चारित्तं^२ जहदि हु, तरां व लज्जं च मज्जादं ॥६४०॥

अर्थ :—विषय-भोगोंसे परिपूर्ण पुण्य अनन्तमुखके कारणभूत सम्यक्त्व, सम्यक्चारित्र तथा लज्जा और मर्यादाको तृण सदृश छोड़ देता है ॥६४०॥

सीदं उण्हं तण्हं, ह्रुधं च दुस्सेज्ज-भत्त-पंथ-समं ।

सुकुमालको वि कामी, सहदि वहदि भारमदि-गुरुगं ॥६४१॥

अर्थ :—सुकुमार भी कामी पुरुष शीत, उष्ण, तृषा, क्षुधा, दुष्टशय्या, श्वेता आहार और मार्गश्रमको सहता है तथा अत्यन्त भारी बोझ होता है ॥६४१॥

अपि च बधो जीवाणं, मेहण-सण्णाए होवि बहुगाणं ।

तिस-णालीए^३ तत्तायस-प्पवेसो व्व जोणीए^४ ॥६४२॥

१. द. ब. ज. य. उ. उच्चा । २. द. क. ज. य. उ. सद्ध । ३. द. ब. क. ज. य. उ. बहुवाणि ।
४. ब. क. उ. पुणो । ५. द. ब. ज. य. जादि हु । ६. द. ज. य. साणीए, ब. क. उ. चाणीए । ७. द. क.
ज. य. उ. तसप । ८. द. ब. क. ज. य. उ. जाणीए ।

अर्थ :—तथा, मैथुन संज्ञासे तिलोकी नालीमें तप्त लोहेके प्रवेशके सदृश योनिमे बहुतेमे जीवोका बध होता है ॥६४२॥

इह लोमे वि महल्लं, दोसं^१ कामस्स बस-गदो पत्तो ।

काल-गदो वि अणंतं, वुक्खं पावेदि कामंधो ॥६४३॥

अर्थ :—कामके वशीभूत हुआ पुरुष इस लोकमे भी महान् दोषको प्राप्त होता है और कामान्ध होता हुआ मरकर परलोकमें भी अनन्त दुःख पाता है ॥६४३॥

सोणिय-सुक्कप्पाइय^२-देहो^३ वुक्खाइ गब्भ-वासम्मि ।

सहिवूण वारुणाइं, विट्ठो^४ पावाइ कुणइ पुणो ॥६४४॥

अर्थ :—शोणित और शुक्रसे उत्पन्न हुई देहसे युक्त जीव गर्भवासमे महा भयानक दुःख सह कर निर्लज्ज हुआ फिरसे पाप करता है ॥६४४॥

वाहि-णिहाणं^५ देहो, बहुपोस-सुपोसियो वि सय-वारं^६ ।

अत्थी पवण-परणोल्लियं^७-पावप-वल-चंचल-सहावो^८ ॥६४५॥

अर्थ :—बहुतेसे पुष्टिकारक पदार्थों द्वारा संकड़ों बार अच्छी तरह पोषा गया भी व्याधियों का निघानभूत यह शरीर पवनसे प्रेरित वृक्षके पत्ते सदृश चंचल स्वभाव वाला है ॥६४५॥

तारुणं तडि-तरलं, विसया-पेरंत विरस-वित्थारा ।

अत्थो अणत्थ-मूलो, अबिचारिय-सुंवरं सव्वं ॥६४६॥

अर्थ :—विषयोसे प्रेरित (यह) तारुण्य विजली सदृश चंचल है और अर्थ (इन्द्रिय-विषय) नीरसता पूर्ण हैं, अनर्थके मूल कारण हैं; इस प्रकार ये सब (अनर्थके मूल) मात्र अविचारितरम्य ही हैं ॥६४६॥

१. द. ब. क. ज. य. उ. दोसा । २. द. सुक्कंपाइय, ब. सुक्कंपाइय, क. य. ज. उ. सुक्कंपाइय ।

३. द. दोहो, ब. क. ज. य. उ. दाहो । ४. द. क. ब. व. विट्ठो, ब. उ. विट्ठो । ५. द. व. क.

उ. णिहाणं । ६. द. व. क. ज. य. उ. वार । ७. द. व. क. ज. य. उ. परणोणिय ।

८. द. व. क. ज. य. उ. सहावा ।

मादा पिदा कलत्तं, पुत्ता बंधू य इंब-जाला य ।
बिट्ठ-पराट्ठाइ खणे', मणस्स दुसहाइ' सल्लाइ' ॥६४७॥

अर्थ :—माता, पिता, पत्नी, पुत्र और बन्धुजन इन्द्रजाल सदृश क्षण-मात्रमे देखते-देखते नष्ट हो जाते हैं ये सब मनके निये दुस्सह शन्य है ॥६४७॥

देवगतिके दुःख एव उपमहार—

पत्ताए थोवेहिं, सोखं भावेहिं रिणच्च-^३गरुबाइ' ।
दुक्खाइ माणसाइ', देव-गदीए अणुभवंति ॥६४८॥

अर्थ :—देवगतिमे किञ्चित् सुखको प्राप्त हुए जीव उस (सुख) के विनाशकी चिन्ता रूप भावसे नित्य ही महान् मानसिक दुःखोका अनुभव किया करते हैं ॥६४८॥

चइदूण चउ-गदीओ, दारुण-दुब्बार-दुक्ख-खाणीओ ।
परमाणंद-गिहाणं, णिब्बाणं आसु वच्चाओ ॥६४९॥

अर्थ :—अतएव दारुण और दुर्निवार दुःखोकी खानिभूत इन चारो गतियोको छोड कर हम उत्कृष्ट आनन्दके निधान-स्वरूप मोक्षको शीघ्र ही प्राप्त करे ॥६४९॥

ऋषभादि तीर्थकरोके दीक्षा-स्थान—

तम्हा मोक्खस्स कारणं—

दारवदीए' णमी, सेसा तेबीस तेसु तित्थयरा ।
णिय-णिय-जाद-पुरेसु', गिण्हंति जिण्णद-बिक्खाइ' ॥६५०॥

अर्थ :—इसीलिए मोक्षके निमित्त—

उन चौबीस तीर्थङ्करोमेसे (भगवान्) नेमिनाथ द्वारावती नगरीमे और शेष तेईस तीर्थंकर अपने-अपने जन्म-स्थानोमे जेनेन्दी-दीक्षा ग्रहण करते हैं ॥६५०॥

१. द. क. लणो । २. द. ब. क. ज. य. उ. दुसमाइ' । ३. द. ब. क. ज. य. उ. गरुबाहि ।

ऋषभादि तीर्थकरोकी दीक्षा-तिथि, पहर (काल), नक्षत्र, वन और दीक्षा समय उपवासोके प्रमाणोका निरूपण—

चेत्ता-सिद्ध-नवमीए, तदिए पहरम्मि उत्तरासाढे ।

सिद्धत्थ-वणे उसहो, उबवासे छट्टम्मि निक्कंतो' ॥६५१॥

अर्थ :—भगवान् ऋषभदेव चंद्र कृष्णा नवमीके तीसरे पहर उत्तराषाढ नक्षत्रमे सिद्धार्थ वनमे षष्ठ (मासके) उपवासके साथ दीक्षित हुए ॥६५१॥

माघस्त सुक्क-नवमी-अवरण्हे रोहिणीसु अजिय-जिणो ।

रम्मे सहेदुग-वणे, अट्टम-भत्तम्मि निक्कंतो ॥६५२॥

अर्थ :—अजित जिनेन्द्र माघ शुक्ला नवमीके दिन अपराह्णमें रोहिणी नक्षत्रके रहते सुन्दर सहेतुक वनमें अष्टम भक्तके माघ दीक्षित हुए ॥६५२॥

मगसिर-पुण्णिमाए, तदिए पहरम्मि तदिय-उबवासे ।

जेट्टाए निक्कंतो, संभव-सामी सहेदुगम्मि वणे ॥६५३॥

अर्थ :—सम्भवनाथ स्वामीने मगसिरकी पूर्णिमाको तृतीय पहरमे ज्येष्ठा नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें तृतीय उपवासके साथ दीक्षा ग्रहण की ॥६५३॥

सिद्ध-वारसि-पुठवण्हे, माघे मासे पुणवसू-रिक्खे ।

उग-वणे उबवासे, तदिए अभिजंबणो य निक्कंतो' ॥६५४॥

अर्थ :—अभिनन्दन भगवान्ने माघ शुक्ला-द्वादशीके दिन पूर्वाह्णमें पुनर्वसु नक्षत्रके रहते उग्रवनमे तृतीय उपवासके साथ दीक्षा धारण की ॥६५४॥

नवमीए पुठवण्हे, मघासु बइसाह-सुक्क-पक्खम्मि ।

सुमई सहेदुग-वणे, निक्कंतो तदिय-उबवासे ॥६५५॥

अर्थ :—भगवान् मुमतिनाथ वंशात् शुक्ला नवमीको पूर्वाह्णमे मघा नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें तृतीय उपवासके साथ दीक्षित हुए ॥६५५॥

चेत्तासु किण्ह-तेरसि-अवरण्हे कित्तियस्स णिक्कंतो ।

पउमप्पहो जिण्णदो, तदिए खवणे मणोहउज्जाणे ॥६५६॥

अर्थ :—पद्मप्रभ जिनेन्द्र कार्तिक कृष्णा त्रयोदशीके अपराह्णमे चित्रा नक्षत्रके (उदित) रहते मनोहर उद्यानमें तृतीय उपवासके साथ दीक्षित हुए ॥६५६॥

सिद-वारसि-पुब्बण्हे, जेट्ठस्स विसाहभम्मि जिण-द्विक्खं ।

गेण्हेदि तदिय-खवणे, सुपासदेवो सहेतुगम्मि वणे ॥६५७॥

अर्थ :—सुपार्ष्वनाथने ज्येष्ठ शुक्ला द्वादशीके पूर्वाह्णमें विशाखा नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें तृतीय उपवासके साथ जिन दीक्षा ग्रहण की ॥६५७॥

अणुराहाए पुस्से, बहुसे एयारसीए अवरण्हे ।

चंदपहो धरइ तथं, सव्वत्थ-वणम्मि तदिय-उववासे ॥६५८॥

अर्थ :—चन्द्रप्रभने पौष कृष्णा एकादशीके अपराह्णमे अनुराधा नक्षत्रके रहते तृतीय उपवासके साथ सर्वार्थवनमें तप धारण किया ॥६५८॥

अणुराहाए पुस्से, सिद-पक्खेकारसीए अवरण्हे ।

पुब्बउज्जइ पुक्कवणे, तदिए खवणम्मि पुक्कयंत-जिणो^३ ॥६५९॥

अर्थ :—पुण्यदन्त तीर्थकर पौष-शुक्ला एकादशीके अपराह्णमे अनुराधा नक्षत्रके रहते पुष्य-वनमें तृतीय उपवासके साथ प्रव्रजित (दीक्षित) हुए ॥६५९॥

माघस्स किण्ह-वारसि-अवरण्हे मूलभम्मि पव्वउजा ।

गहिया सहेतुग-वणे, सोयल-वेवेण तदिय-उववासे ॥६६०॥

१. द. व. क. ज. य. उ. चदप्पह । २. द. व. क. ज. य. उ. पवज्जिव । ३. द. क. ज. य. उ. जिणे । ४. द. व. किण्हे ।

अर्थ : शीतलनाथ स्वामीने माघ कृष्णा द्वादशीके अपराह्णमे मूल नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमे तृतीय उपवासके साथ प्रव्रज्या ग्रहण की ॥६६०॥

एककारसि-पुठवण्हे, फगुण-बहुलै मणोहरुज्जाणे ।

सबणम्मि तदिय-खवणे, सेयंसो धरइ जिण-दिव्खं ॥६६१॥

अर्थ :—श्रेयासदेवने फाल्गुन कृष्णा एकादशीके पूर्वाह्णमे श्रवण नक्षत्रके रहते मनोहर उद्यानमे तृतीय उपवासके साथ जिन दीक्षा धारण की ॥६६१॥

फगुण-कसण-चउट्टसि-अवरण्हे वासुपुञ्ज-तव-गहणं ।

रिखम्मि विसाखाए, इगि-उववासे मणोहरुज्जाणे ॥६६२॥

अर्थ —वासुपुञ्ज जिनेन्द्रने फाल्गुन कृष्णा चतुर्दशीके अपराह्णमे विगाखा नक्षत्रके रहते मनोहर उद्यानमें एक उपवासके साथ तप ग्रहण किया ॥६६२॥

माघस्स सिद-चउत्थी, अवरण्हे तह सहेदुगम्मि वणे ।

उत्तरभट्टपासुं, विमलो णिककमइ तदिय-उववासे ॥६६३॥

अर्थ :—विमलनाथ स्वामीने माघ शुक्ला चतुर्थीके अपराह्णमे उत्तर भाद्रपद नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें तृतीय उपवासके साथ दीक्षा ग्रहण की ॥६६३॥

जेट्टस्स बहुल-बारसि, अवरण्हे रेवदीसु खवणतिए ।

धरिया सहेदुग-वणे, अणंतदेवेण तव-खच्छी ॥६६४॥

अर्थ :—अनन्तनाथ स्वामीने ज्येष्ठ कृष्णा द्वादशीके दिन अपराह्णमें रेवती नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें तृतीय उपवासके साथ तपो लक्ष्मी धारण की ॥६६४॥

सिद-तेरसि-अवरण्हे, भट्टपावे पुस्सभम्मि खवण-तिए ।

णमिऊणं सिद्धाणं, सालि-वणे णिककमइ धम्मो ॥६६५॥

अर्थ :—धर्मनाथ तीर्थकरने भाद्रपद शुक्ला त्रयोदशीके अपराह्णमें पुष्य नक्षत्रके रहते सालि-वनमें तृतीय उपवासके साथ सिद्धोंको नमस्कार कर जिन दीक्षा ग्रहण की ॥६६५॥

जेट्टस्स बहुल-^१चउथो-अवरण्हे भरणिभम्मि खूब-वणे ।
पडिबज्जदि पब्बउब्बं, संति-जिणो तविय-उववासे ॥६६६॥

अर्थ :- शान्तिनाथ जिनेन्द्रने ज्येष्ठ कृष्णा चतुर्थीके अपराह्णमें भरणी नक्षत्रके रहते आश्रवणमें तृतीय उपवासके साथ जिन दीक्षा धारण की ॥६६६॥

बइसाह-सुद्ध-पाडिव-अवरण्हे किसियासु खबण-तिए ।
कुं^२ू सहेंदुग-वणे, पब्बजिओ पणमिऊण सिद्धाणं^३ ॥६६७॥

अर्थ :- कुन्धुनाथ स्वामी वंशाख शुक्ला प्रतिपदाके अपराह्णमें कुत्तिका नक्षत्रके रहते सहेंदुग वनमें तृतीय उपवासके साथ सिद्धोंको प्रणाम कर दीक्षित हुए ॥६६७॥

मगसिर-सुद्ध-दसमी-अवरण्हे रेवदीसु अर-देवो ।
तविय-खबणम्मि गेण्हदि, जिणिव-रूबं सहेंदुगम्मि वणे ॥६६८॥

अर्थ :- भरनाथ तीर्थङ्करने मगसिर शुक्ला दसमीके अपराह्णमें रेवती नक्षत्रके रहते सहेंदुग वनमें तृतीय उपवासके साथ जिनेन्द्ररूप ग्रहण किया ॥६६८॥

मगसिर-सुद्ध-एककारसिए अह अत्तिसणीसु पुब्बण्हे ।
^४वरदि तवं सालि-वणे, ^५मल्ली छट्ठेण भत्तेण ॥६६९॥

अर्थ :- मल्लि जिनेन्द्रने मगसिर-शुक्ला एकादशीके अर्वाह्णमें अश्विनी नक्षत्रके रहते सालि वनमें षष्ठ भक्तके साथ तप धारण किया ॥६६९॥

बइसाह-बहुल-दसमी अवरण्हे सबणभम्मि नील-वणे ।
उववासे तवियम्मि य, सुब्बदेवो^६ महाववं वरदि ॥६७०॥

अर्थ :- मुनिसुव्रतदेवने वंशाख कृष्णा दसमीके अपराह्णमें श्रवण नक्षत्रके उदय रहते नील-वनमें तृतीय उपवासके साथ महाव्रत धारण किये ॥६७०॥

१. द. व. उ. बोली, क. य. बोली । २. व. उ. सिद्धाणां । ३. व. उ. वरिदि, व. क.
व. य. वरिदि । ४. व. व. क. य. उ. मल्लि । ५. व. व. क. उ. देवा ।

आसाठ-बहुल-वसमी-अवरण्हे अस्सिणीसु वेत्त-वणे ।
णमि-भाहो पव्वज्जं, पडिवज्जदि तदिय-खवणम्मि ॥६७१॥

अर्थ :—नेमिनाथने आपाठ कृष्णा दसमीके अपराङ्गमें अश्विनी नक्षत्रके रहते चंद्र-वनमें तृतीय उपवासके साथ दीक्षा स्वीकार की ॥६७१॥

चेत्तासु-सुद्ध-छट्ठी-अवरण्हे सावणम्मि णेमि-जिणो ।
तदिय-खवणम्मि गेण्हदि, सहकार-वणम्मि तव-वरणं ॥६७२॥

अर्थ :—नेमिनाथने ध्रावण शुक्ला षष्ठीके अपराङ्गमें चित्रा नक्षत्रके रहते सहकार वनमें तृतीय उपवासके साथ तप ग्रहण किया ॥६७२॥

माघस्सिद-एककारसि-पुव्वण्हे गेण्हदे विसाहासु ।
पव्वज्जं पासजिणो, अस्सत्त-वणम्मि छट्ठ-भत्तेण ॥६७३॥

अर्थ :—पाठबनाथने माघ शुक्ला एकादशीके पूर्वाङ्गमें विशाखा नक्षत्रके रहते षष्ठ भक्तके साथ अश्वत्थ वनमें दीक्षा ग्रहण की ॥६७३॥

मगसिर-बहुल-वसमी-अवरण्हे उत्तरासु णाथ-वणे ।
तदिय-खवणम्मि गहिदं, महव्वदं वड्डमाणेण ॥६७४॥

अर्थ :—वर्धमान भगवान्ने मगसिर कृष्णा दसमीके अपराङ्गमें उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रके रहते नाथवनमें तृतीय उपवासके साथ महाव्रत ग्रहण किये ॥६७४॥

मह-दीक्षित राजकुमारोकी सख्या—

पव्वजिदो मल्लि-जिणो, रायकुमारेहि त्तिसय-मेत्तेहि ।
पास-जिणो वि तह च्चिचय, एक्कोच्चिचय वड्डमाण-जिणो ॥६७५॥

मल्लि ३०० । पास ३०० । वीर ० ।

[तालिका नं० १४ पृष्ठ १६०-१६१ पर देखे]

१. द. ब. क. ज. य. उ. वेतवणे । २. द. ज. णाधरणे, ब. उ. गापवणे, क. णायवणे, य. साधवणे । ३. द. ब. क. उ. पव्वज्जिदो । ४. द. ब. क. ज. उ. जिणे ।

चौबीस तीर्थकरों के वैराग्य का कारण और दीक्षा का सम्पूर्ण विवरण गाथा ६१४-६१८ और ६५० ६७६

क्र	नाम	वैराग्य का कारण	दीक्षा स्थान	दीक्षा						सहदीक्षित	
				मास	पक्ष	तिथि	काल	नक्षत्र	वन		दीक्षोपवास
१	ऋषभनाथ	नीलाञ्जना मरण	अयोध्या	चैत्रा	कृष्ण	नवमी	अपराह्न	उत्तराषाढा	सिद्धार्थ	छहमास	४०००
२	अजितनाथ	उल्कापात	साकेत	माघ	शुक्ल	नवमी	अपराह्न	रोहणी	सहेतुक	अष्टभक्त	१०००
३	सम्भवनाथ	मेघविनाश	श्रावस्ती	मगसिर	शुक्ल	पूर्णिमा	अराह्न	ज्येष्ठा	सहेतुक	तीन उपो	१०००
४	अभिनन्दन	गधर्वनगर	साकेत	माघ	शुक्ल	द्वादशी	पूर्वाह्न	पुनर्वसु	सहेतुक	तीन उपो	१०००
५	सुगतिनाथ	नाश	साकेत	वैशाख	शुक्ल	नवमी	पूर्वाह्न	मघा	सहेतुक	तीन उपो	१०००
६	पद्मनाथ	जातिस्मरण	कौशाम्बी	कार्तिक	कृष्ण	त्रयोदशी	अपराह्न	चित्रा	मनोहर	तीन उपो	१०००
७	सुपाशर्वनाथ	पतझड	बनारस	ज्येष्ठ	शुक्ल	द्वादशी	पूर्वाह्न	विशाखा	सहेतुक	तीन उपो	१०००
८	चन्द्रप्रभ	बिजली	चन्द्रपुरी	पौष	कृष्ण	एकादशी	अपराह्न	अनुराधा	सर्वाथ	तीन उपो	१०००
९	पुष्यदन्त	उल्कापात	काकन्दी	पौष	शुक्ल	एकादशी	अपराह्न	अनुराधा	पुष्य	तीन उपो	१०००
१०	शीतलनाथ	हिमनाश	भदलपुर	माघ	कृष्ण	द्वादशी	अपराह्न	मूल	सहेतुक	तीन उपो	१०००
११	श्रेयासनाथ	पतझड	सिंहपुरी	फाल्गुन	कृष्ण	एकादशी	पूर्वाह्न	श्रवण	मनोहर	तीन उपो	१०००

१२	वासुपूज्य	जातिस्मरण	चम्पपुरी	फाल्गुन	कृष्ण	चतुर्दशी	अपराहन	विशाल	मनोहर	एक उप०	६७६
१३	विमलनाथ	मेघनाथ	कपिला	माघ	शुक्ल	चतुर्थी	अपराहन	उ०भा०	सहेतुक	तीन उप०	१०००
१४	अनन्तनाथ	उल्कापाल	अयोध्या	ज्येष्ठ	कृष्ण	द्वादशी	अपराहन	रेवती	सहेतुक	तीन उप०	१०००
१५	धर्मनाथ	उल्कापाल	रत्नपुर	भाद्रपद	शुक्ल	त्रयोदशी	अपराहन	पुष्य	शशिचम	तीन उप०	१०००
१६	शान्तिनाथ	जातिस्मरण	हस्तिनापुर	ज्येष्ठ	कृष्ण	चतुर्दशी	अपराहन	भरणी	आम्र	तीन उप०	१०००
१७	कुन्धुनाथ	जातिस्मरण	हरितनापुर	वैशाख	शुक्ल	प्रतिपदा	अपराहन	जृत्तिका	सहेतुक	तीन उप०	१०००
१८	अरनाथ	मेघनाथ	हस्तिनापुर	मगसिर	शुक्ल	दशमी	अपराहन	रेवती	सहेतुक	तीन उप०	१०००
१९	मस्तिनाथ	बिजली	मिथिला	मगसिर	शुक्ल	एकादशी	पूर्वाहन	अश्विनी	शालि	षष्ठ भक्त	३००
२०	मुनिमुव्रत	जातिस्मरण	राजगृह	वैशाख	कृष्ण	दशमी	अपराहन	श्रवण	नील	तीन उप०	१०००
२१	नमिनाथ	जातिस्मरण	मिथिला	आषाढ	कृष्ण	दशमी	अपराहन	अश्विनी	चैत्र	तीन उप०	१०००
२२	नेमिनाथ	जातिस्मरण	द्वारावती	श्रवण	शुक्ल	षष्ठी	अपराहन	चित्रा	सहकार	तीन उ०	१०००
२३	पार्ष्वनाथ	जातिस्मरण	वाराणसी	माघ	शुक्ल	एकादशी	पूर्वाहन	विशाला	अश्वत्थ	षष्ठ भक्त	३००
२४	महावीर	जातिस्मरण	कुण्डलपुर	मगसिर	कृष्ण	दशमी	अपराहन	उत्तरा	नाथ	तीन उप०	०

अर्थ :—मल्लिनाथ जिनेन्द्र तीन सौ राजकुमारोंके साथ दीक्षित हुए । पार्ष्वनाथ भी उतने ही (तीन सौ) राजकुमारोंके साथ दीक्षित हुए तथा वर्धमान जिनेन्द्र अकेले ही दीक्षित हुए (उनके साथ किसी की भी दीक्षा नहीं हुई) ॥६७५॥

छावत्तरि-ब्रुव-छस्सय-संखेहि वासुपुञ्जसामी य ।

उसहो तालसएहि, सेसा पुह-पुह सहस्स-मेत्तेहि ॥६७६॥

वासु ६७६ । उसह ४००० । सेसा पत्तोक्का १००० ।

अर्थ :—वासुपुञ्ज स्वामी छह सौ छिहत्तर (६७६), ऋषभनाथ चार हजार (४०००) और शेष तीर्थंकर पृथक्-पृथक् एक-एक हजार (१०००-१०००) राजकुमारोंके साथ दीक्षित हुए ॥६७६॥

दीक्षा-ग्रवस्था-निर्देश—

पेमी मल्ली बीरो, कुमार-कालम्मि वासुपुञ्जो य ।

वासो वि य गहिद-तवा, सेस-जिणा रज्ज-चरिमम्मि ॥६७७॥

अर्थ :—भगवान् नेमिनाथ, मल्लिनाथ, महावीर, वासुपुञ्ज और पार्ष्वनाथ इन पाँच तीर्थंकरोंने कुमार-कालमें और शेष तीर्थंकरोंने राज्यके अन्तमें तप ग्रहण किया ॥६७७॥

प्रथम पारगगाका निर्देश—

एषक-वरिसेण उसहो, उच्छुरसं कणइ पारणं अवरे ।

गो-खोरे गिप्पण, अण्णं बिबियम्मि दिवसम्मि ॥६७८॥

अर्थ :—भगवान् ऋषभदेवने एक वर्षमें इक्षुरसकी पारणा की थी और इतर तीर्थंकरोंने दूसरे दिन गो-क्षीरमें निष्पन्न अन्न (खीर) की पारगा की थी ॥६७८॥

विशेषार्थ :—भगवान् ऋषभदेवने छह मासके उपवास सहित दीक्षा ग्रहण की थी परन्तु उनकी पारणा एक वर्ष बाद हुई थी । शेष तेईस तीर्थंकरोमेंसे २० ने तीन उपवास, दो तीर्थंकरोंने दो उपवास और श्री वासुपुञ्ज स्वामीने एक उपवासके साथ दीक्षा ग्रहण की थी । इन सबकी पारणा दीक्षोपवासके दूसरे दिन ही हो गई थी ।

पारणा के दिन होने वाले पञ्चाश्र्चर्य-

सव्वाण पारण-दिणे, णिवदई वर-रयण-वरिसमबरदो ।

पण-घण-हद-दह-लक्खं, जैट्ट अवर सहस्स-भागं च ॥६७९॥

। १२५०००००० । १२५०००० ।

अर्थ :- पारणा के दिन (सब दाताओ के यहां) आकाश से उत्तम रत्नों की वर्षा होती है, जिसमे अधिक से अधिक पाँच के घन (१२५) से गुणित दस लाख (१२५००००००) प्रमाण और कम से कम इसके हजारवे भाग (१२५०००) प्रमाण रत्न बरसते हैं ॥ ६७९ ॥

दत्ति-विसोहि-विसेसोब्भेद-निमित्तं खु रयण-उट्ठीए ।

बायति दुंदुहीओ, देवा जलदेहि अंतरिदा ॥ ६८० ॥

अर्थ :- दान-विशुद्धि की विशेषता प्रकट करने के निमित्त, देव मेघो से अन्तर्हित होते हुए रत्नवृष्टि पूर्वक दुन्दुभी (बाजे) बजाते हैं ॥ ६८० ॥

पसरइ दाणुघोसो, वादि सुगधो सुसीयलो पवणो ।

दिव्व-कुसुमेहि गयण, वरिसइ इय पच-चोज्जणि ॥ ६८१ ॥

अर्थ :- उस दान का उद्घोष (जय-जय शब्द) फैलता है, सुगन्धित एव शीतल वायु चलती है और आकाश से दिव्य फूलो की वर्षा होती है । इस प्रकार ये पञ्चाश्र्चर्य होते हैं ॥ ६८१ ॥

तीर्थकरो के छद्मस्थ काल का प्रमाण-

उसहादीसुं वासा, सहस्स-बारस-चउइसड्ढरसा ।

बीस ददुमत्थ-कालो, छच्चियप पउमप्पहे मासा ॥ ६८२ ॥

अर्थ- । उसह वासा १००० । अजिय १२ । संभव १४ । अहिणदण १८ । सुमई २० । थउपप्पह मा ६ ।

१ दबकउ पणपणहद, दजय पणपणहद । २ द सुमधा, कजयउ सुयधो । ३ दबकजयउ चोज्जणि ।

४ बतउ छुदुमड्ढ, जय छुदुमत्थ । ५ दबकअयउ छव्विह ।

अर्थ :—ऋषभादिक पांच तीर्थङ्करोका छयस्थ काल क्रमशः एक हजार वर्ष, बारह वर्ष, चौदह वर्ष, अठारह वर्ष और बीस वर्ष प्रमाण तथा पद्यप्रभका मात्र छह मास प्रमाण ही है ॥६८२॥

बासाणि णव सुपासे, मासा चंदप्पहम्मि तिणिण तदो ।

चट्टु-ति-ट्टु-एक्का ति-ट्टु-इगि-सोलस-चउवग्ग-चउकवी वासा ॥६८३॥

सुपास वास ६ । चद मा ३ । पुष्क वा ४ । सीयल वास ३ । सेयं वा २ ।

वासु १ । विमल ३ । अणत २ । धम्म १ । सति १६ । कुधु १६ । अर १६ ।

अर्थ :—सुपाश्वनाथ स्वामीका छयस्थ काल नौ वर्ष, चन्द्रप्रभका तीन मास और इसके आगे क्रमशः चार, तीन, दो, एक, तीन, दो, एक, सोलह, चारका वर्ग (सोलह) और फिर चारकी कृति (सोलह) वर्ष प्रमाण है ॥६८३॥

मल्लि-जिणे छद्दिवसा, एक्कारस सुव्वदे जिणे मासा ।

णमिणाहे णव वासा, दिणाणि छप्पण णेमि जिणे ॥६८४॥

। मल्लि-दिरा ६ । सुव्वद मा ११ । रागि वा ६ । णेमि दि ५६ ।

अर्थ :—छयस्थ कालमे मल्लि जिनेन्द्रके छह दिन, मुनिसुव्रत जिनेन्द्रके ग्यारह मास, नमिनाथके नौ वर्ष और नेमिनाथके छपन दिन व्यतीत हुए ॥६८४॥

पास-जिणे चउमासा, बारस-वासाणि वड्ढमाण-जिणे ।

एत्तियमेत्ते समए, केवलणाणं ण ताण उप्पणं ॥६८५॥

। पास मास ४ । वीर वामा १२ ।

अर्थ :—पार्श्व जिनेन्द्रका चार मास और वर्धमान जिनेन्द्रका बारह वर्ष प्रमाण छयस्थ-वान रह्य है । इतने समय (उपर्युक्त छयमन्थ काल) तक उन तीर्थंकरोको केवलजान नदी हुआ था ॥६८५॥

चीबीसो तीर्थद्वारोंके केवलज्ञानकी तिथि. समय. नक्षत्र श्रीर म्थानका निर्देश

फगुण-किण्हेयारसि-पुव्वण्हे पुरिमताल-णयरम्मि ।

उत्तरसाढे उसहे, उप्पण्ण केवलं णाणं ॥६८६॥

अर्थ :—ऋषभनाथको फाल्गुन-ऋषणा एकादशके पूर्वाह्णमे उत्तरापाढा नक्षत्रके उडिन रहते पुरिमताल नगरमे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥६८६॥

पुसस्स सुक्क-चोद्वसि-अवरण्हे रोहिणिम्मि णक्खत्ते ।

अजिय-जिणे उप्पण्णं, अणंतणाणं सहेदुगम्मि वणे ॥६८७॥

अर्थ — अजित जिनेन्द्रको पौष-शुक्ला चतुर्दशीके अपराह्णमे रोहिणी नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥६८७॥

कत्तिय-सुक्के पंचमि-अवरण्हे मिगसिरम्मि रिक्खम्मि ।

संभव-जिणस्स जादं, केवलणाणं खु तम्मि वणे ॥६८८॥

अर्थ — सम्भवनाथ जिनेन्द्रको कार्तिक शुक्ला पचमीके अपराह्णमे मृगशिरा नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥६८८॥

पुसस्स पुण्णिमाए, रिक्खम्मि पुणव्वसुम्मि अवरण्हे ।

उग-वणे अभिणंदण-जिणस्स संजाद-सव्वगयं ॥६८९॥

अर्थ — अभिनन्दन जिनेन्द्रको पौष (शुक्ला) पूर्णिमाके अपराह्णमे पुनर्वसु नक्षत्रके रहते उग्र-वनमें सर्वगत (केवलज्ञान) उत्पन्न हुआ ॥६८९॥

वइसाह-सुक्क-दसमी, मघाए रिक्खे सहेदुगम्मि वणे ।

अवरण्हे उप्पण्णं, सुमइ-जिणे केवलं णाणं ॥६९०॥

अर्थ :—सुमति जिनेन्द्रको वंशाख-शुक्ला दसमीके अपराह्णमे मघा नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥६९०॥

वइसाह-सुक्क-दसमी, चेत्ता-रिक्खे मणोहरज्जाणे ।

अवरण्हे उप्पण्णं, पडमप्पह-जिणवरिदस्स ॥६९१॥

अर्थ :—पद्मप्रभ जिनेन्द्रको बैसाख-शुक्ला दसमीके अपराह्णमे चित्रा नक्षत्रके रहते मनोहर उद्यानमे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥६९१॥

फगुण-कसियो सप्तमि, विसाह-रिक्खे सहेदुगम्मि वणे ।
अवरण्हे 'असवत्तं, सुपास-णाहस्स संजादं ॥६९२॥

अर्थ :—सुपासर्वाथको फाल्गुन कृष्णा मन्मतीके आराह्णमे विजाखा नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमे असपत्त (केवलज्ञान) उत्पन्न हुआ था ॥६९२॥

तद्दिसे अणुराहे, सब्बस्थ-वणे दिणस्स पच्छिमए ।
चंदप्पह-जिण-णाहे, संजादं लब्धभाव-गदं ॥६९३॥

अर्थ :—चन्द्रप्रभ जिनेन्द्रको उसी दिन (फाल्गुन कृष्णा सप्तमीको) दिनके पश्चिम भाग (अपराह्ण) मे अनुराधा नक्षत्रके रहते सब्बस्थ वनमे सम्पूर्ण पदार्थोको अदम्य करने वाला केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥६९३॥

कत्तिय-मुक्के तदिए, अवरण्हे मूल-भे य पुप्फवणे ।
सुविहि-जिणे उत्पण्णं, तिहुवण-संखोभयं णाणं ॥६९४॥

अर्थ :—सुविधि जिनेन्द्रको कार्तिक-शुक्ला तृतीयाके अपराह्णमे मूल नक्षत्रके रहते पुष्प-वनमे तीनों लोकोको आश्चर्यान्वित करनेवाला केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥६९४॥

पुस्सस्स किण्ह-चोदिसि-पुव्वासाठे दिणस्स पच्छिमए ।
सोयल-जिणस्स जादं, अणंतणाणं सहेदुगम्मि वणे ॥६९५॥

अर्थ :—शीतलनाथ तीर्थद्वारको पीप-कृष्णा चतुर्दशीको दिनके पश्चिम भागमे पूर्वाषाढा नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमे अनन्तज्ञान उत्पन्न हुआ ॥६९५॥

माघस्स य अमबासे, पुव्वण्हे सबणभम्मि सेयंसे ।
जादं केवलणाणं, सुविसाल-मणोहरज्जाणे ॥६९६॥

अर्थ :—श्रेयांग जिनेन्द्रको माघकी अमावस्याके दिन पूर्वाह्णमें श्रवण नक्षत्रके रहते मनोहर उद्यानमे केवलज्ञान प्राप्त हुआ ॥६९६॥

माघस्स पुण्णिमाए, विसाह-रिक्खे मणोहरुज्जाणे ।

अवरण्हे संजादं, केवलणाणं खु वासुपुज्ज-जिणे ॥६९७॥

अर्थ :—वासुपुज्य जिनेन्द्रको माघ (शुक्ला) पूर्णिमाके अपराह्णमे विशाखा नक्षत्रके रहते मनोहर उद्यानमे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥६९७॥

पुस्से सिद-दसमीए, अवरण्हे तह य उत्तरासाढे ।

विमल-जिण्णिदे^१ जादं, अणंतणाणं सहेदुगम्मि वणे ॥६९८॥

अर्थ :—विमल जिनेन्द्रको पौष-शुक्ला दसमीके अपराह्णमें उत्तराषाढा नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें अनन्तज्ञान उत्पन्न हुआ ॥६९८॥

चेत्तस्स य अमवासे, रेवदि-रिक्खे सहेदुगम्मि वणे ।

अवरण्हे संजादं, केवलणाणं अणंत जिणे ॥६९९॥

अर्थ :—अनन्त जिनेन्द्रको चैत्रमासकी अमावस्याके अपराह्णमे रेवती नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥६९९॥

पुस्सस्स पुण्णिमाए, पुस्से रिक्खे सहेदुगम्मि वणे ।

अवरण्हे संजादं, धम्म-जिण्णिदस्स^२ सव्वगदं ॥७००॥

अर्थ :—धर्मनाथ जिनेन्द्रको पौष मासकी पूर्णिमाके दिन अपराह्णमे पुष्य नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें सर्व पदार्थोंको जानने वाला केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥७००॥

पुस्से^३ सुक्केयारसि-भरणी-रिक्खे विणस्स पच्छिमए ।

अह-वणे^४ संजादं, संति-जिणेसस्स केवलं णाणं ॥७०१॥

१. व. क. उ. जिण्णिदे ।

२. व. जिण्णदस्स, उ. जिण्णदस्स ।

३. व. बारसि ।

४. व.

अर्थ :—शान्ति जिनेशको पौष शुक्ला एकादशीके दिन दिवसके पश्चिम भागमे भरणी नक्षत्रके रहते आन्नवनमे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥७०१॥

चेत्तस्स सुक्क-तदिए, कित्तिय-रिवखे सहेदुगम्मि वणे ।

अवरण्हे उत्पण्णां, कुंथु-जिणेसस्स केवलं णाणं ॥७०२॥

अर्थ :—कुन्थु जिनेन्द्रको चैत्र-शुक्ला तृतीयाके दिन अपराल्लमे कृत्तिका नक्षत्रके उदय रहते सहेतुक वनमे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥७०२॥

कित्तिय-सुक्के बारसि-रेवदि-रिक्खे सहेदुगम्मि वणे ।

अवरण्हे उत्पण्णां, केवलणाणं अर-जिणस्स ॥७०३॥

अर्थ :—अरनाथ जिनेन्द्रको कार्तिक-शुक्ला द्वादशीके अपराल्लमे रेवती नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥७०३॥

फग्गुण-किण्हे बारसि, अस्सिणि-रिक्खे मणोहहज्जाणे ।

अवरण्हे मल्लि-जिणे, केवलणाणं समुत्पण्णां ॥७०४॥

अर्थ :—मल्लिनाथ जिनेन्द्रको फाल्गुन कृष्णा द्वादशीके अपराल्लमे अश्विनी नक्षत्रके रहते मनोहर उद्यानमे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥७०४॥

फग्गुण-किण्हे छट्ठी-पुव्वण्हे सबण-भे य णील-वणे ।

मुणिसुट्ठवयस्स जादं, असहाय-परक्कमं णाणं ॥७०५॥

अर्थ :—मुनिसुव्रत जिनेशको फाल्गुन कृष्णा षष्ठीके पूर्वाह्णमे श्रवण नक्षत्रके रहते नील वनमे असहाय-पराक्रमरूप केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥७०५॥

चेत्तस्स सुक्क-तदिए, अस्सिणि-रिक्खे दिणस्स पच्छिमए ।

चित्त-वणे संजादं, अणंत-णाणं णमि-जिणस्स ॥७०६॥

अर्थ :—नमिनाथ जिनेन्द्रको चैत्र-शुक्ला तृतीयाको दिनके पश्चिम भागमे अश्विनी नक्षत्रके रहते चित्र वनमें अनन्तज्ञान उत्पन्न हुआ ॥७०६॥

अस्सउज-सुकक-पडिबदि-पुव्वण्हे उज्जयंत-गिरि-सिहरे ।

चित्ते रिक्खे जादं, णंमिस्स य केवल णाणं ॥७०७॥

अर्थ :—नेमिनाथको आसोज शुक्ला प्रतिपदाके पूर्वाह्णमे चित्रा नक्षत्रके रहते ऊर्जयन्त-गिरिके शिखर पर केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥७०७॥

चित्ते बहुल-चउत्थी-विसाह-रिक्खम्मि पासणाहस्स ।

सकपुरे पुव्वण्हे, केवलणाणं समुप्पणं ॥७०८॥

अर्थ :—पार्श्वनाथको चैत्र कृष्णा चतुर्थीके पूर्वाह्णमे विशाखा नक्षत्रके रहते शक्रपुरमे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥७०८॥

बइसाह-सुकक-दसमी, हत्ते रिक्खम्मि बीर-णाहस्स ।

^१रिजुकूल-णदी-तीरे, अवरण्हे केवलं णाणं ॥७०९॥

अर्थ :—बीरनाथ जिनेन्द्रको वैशाख शुक्ला दसमीके अपराह्णमे हस्त नक्षत्रके रहते ऋजुकूल नदीके किनारे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥७०९॥

नीर्थङ्करोके केवलज्ञानका अन्तरकाल—

जणन्तरेसु पुह पुह, पुव्विल्लाणं^२ कुमार-रज्जत्तं ।

छुट्ठमत्थस्सा य कालं, अवणिय^३पच्छिल्ल-तित्थकत्तारं^४ ॥७१०॥

कोमार-रज्ज-छट्ठमत्थसयमाणम्हि नेलिदे होदि ।

केवलणाणुप्पत्ती - अंतरमाणं^५ जिणिवाणं ॥७११॥

अजि = सा ५० ल को । व ८३६६०१२ ।

संभ = सा ३० ल को । अंगाणि ३ । वास २ ।

१. व. ऋजुकूल । २. व. व. क. य. पच्छिल्लाणं । ३. व. व. क. ज. य. उ. पुव्विल्लं ।
४. व. व. उ. तित्थकत्तारं । ५. व. व. क. ज. य. उ. अणन्तमाणं दिणिवाणं ।

अभि	= सा १० ल को । अ ४ । वा ४ ।
मु	= सा ६ ल को । अग ४ । वा २ ।
पड	= सा २०००० को । अ ३ । व ८३६६६६६० । मा ६ ।
मुपा	= सा २००० को । अग ४ । वास ८ । मा ६ ।
चद	= सा २०० को । अग ३ । वरस ८३६६६६१ मा ३ ।
सुविहि	= सा ९० को । अग ४ । वा ३ । मा ६ ।
माय	= सा ६ को । पु ७४६६६६ । अग ८३६६६६१ । वा ८३६६६६६६ ।
संय	= सा ६६६६६०० । पु २४६६६६ । वास ७०५५६६६१२७३६६६ ।
वासपुज्ज	= सा ५४ रिण वास ३३००००१ ।
विमल	= मा ३० । वास ३६००००२ ।
अणत	= मा ६ । वास ७४६६६६६ ।
धम्म	= मा ४ । वास ४६६६६६६ ।
नति	= सा ३ । वा २२५०१५ रिण ७ ३ ।
कुशु	= प ३ । वा १०५०४ ।
अर	= प ३ रिण वा ६६६६६६७२५० ।
मल्लि	= वाम ९९९९९६६०८४ । दिण ६ ।
मुणि	= ५४४७४०० । मा १० । दिण २४ ।
गामि	= वाम ६०५००८ । मा १ ।
पेमि	= वास ५०१७६१ । दिण ५६ ।
पाम	= वाम ८४३८० । मा २ । दिण ४ ।
वीर	= वास २८६ । मा ८ ।

॥ केवलणाणतरं गय ॥

अर्थ :- जन्मके अन्तरकालमेसे पृथक्-पृथक् पूर्व-पूर्व तीर्थकरोके कुमारकाल, राज्यकाल और छद्मस्थकालको कम करके तथा पिछले तीर्थकरोके कुमार, राज्य और छद्मस्थकालके प्रमाणको मिला देने पर जिनेन्द्रोके केवलज्ञानकी उत्पत्तिके अन्तरकालका प्रमाण होता है ॥७१०-७११॥

॥ केवलज्ञानका अन्तर-काल समाप्त हुआ ॥

[तालिका सं० १५ पृष्ठ २०२-२०३ पर देखे]

केवलज्ञानका स्वामी—

(शाङ्खलविक्रीडित वृत्तम्)

'जे संसार-सरीर-भोग-विसए, णिव्वेय-णिव्वाहिणो' ।
जे सम्मत्त-विभूसिदा सविणया, घोरं चरंता तव्वं ॥
जे सञ्जाय-महद्धि-वड्ढिब गदा, भाणं च कम्मंतकं ।
ताणं केवलणाणमुत्तम-पदं, जाएवि किं कोटुकं ? ॥७१२॥

अर्थ :—जो संसार, शरीर और भोग-विषयोमें निर्वेद धारण करने वाले हैं, सम्यक्त्वसे विभूषित हैं, बिनयसे सयुक्त हैं, घोर तपका आचरण करते हैं, स्वाध्यायसे महान् ऋद्धि एव वृद्धिको प्राप्त हैं और कर्मोंका अन्त करने वाले ध्यानको भी प्राप्त है, उनके यदि केवलज्ञानरूप उत्तम पद उत्पन्न होता है तो इसमें क्या आश्चर्य है ? ॥७१२॥

केवलज्ञानोत्पत्तिके पश्चात् शरीरका ऊर्ध्वगमन—

जावे केवलणाणे, परमोरालं जिणाणं^३सव्वाणं ।
गच्छदि^५उर्वरिं चावा, पंच-सहस्साणि वसुहादो ॥७१३॥

अर्थ :—केवलज्ञान उत्पन्न होने पर समस्त तीर्थंकरोका परमौदारिक शरीर पृथिवीसे पाँच हजार धनुष प्रमाण ऊपर चला जाता है ॥७१३॥

इन्द्रादिकों को केवलोत्पत्तिका परिज्ञान—

भुवणत्तयस्स ताहे^१, अइसय^२-कोडीअ होवि पक्खोहो ।
सोहम्म-पहुवि-इंदाणं^४ आसणाइं^६ पि कपंति ॥७१४॥

अर्थ :—उस समय तोनो लोकोमें अतिशय मात्रामे प्रभाव उत्पन्न होता है और सीधर्मादिक इन्द्रोके आसन कम्पायमान होते हैं ॥७१४॥

१. द जो । २. क. ज. व. उ. णिव्वाहिणे ३. क. य. उ. सव्वाण । ४. द. व.
क. ज. य. उ. उवरे । ५. द. व. क. ज. य. उ. तासो । ६. व. क. उ. पइक्षया । ७. द. व.
क. ज. उ. इंदा आसणाड ।

तीर्थंकरों का छद्मस्य काल, केवलज्ञान उत्पत्ति के मास, पक्ष आदि तथा केवलज्ञानोत्पत्तिका अंतरकाल- गाथा ६८३-७११

क्र. म.	नाम	छद्मस्य काल	केवलज्ञान उत्पत्ति के						केवलज्ञानोत्पत्ति अन्तराल	
			मास	पक्ष	तिथि	समय	नक्षत्र	स्थान		
१	ऋषभनाथ	१०० वर्ष	फाल्गुन	कृष्ण	एकदशी	पूर्वाह्न	उत्तराषाढा	रोहिणी	पुरिमताल नगर	X X X X X
२	अजितनाथ	१२ वर्ष	पौष	शुक्ल	चतुर्दशी	अपराह्न	अपराह्न	मृग०	सहेतुक वन	५० लाख कोटि सागर + ८३९८७१२ वर्ष।
३	सम्भवनाथ	१४ वर्ष	कार्तिक	कृष्ण	पंचमी	अपराह्न	अपराह्न	पुन०	सहेतुक वन	३० लाख कोटि सागर + ३ पूर्वांग, २ वर्ष।
४	अभिन्नन्दन	१८ वर्ष	पौष	शुक्ल	पूर्णिमा	अपराह्न	अपराह्न	मेष	उग्रवन	१० लाख कोटि सागर + ४ पूर्वांग, ४ वर्ष।
५	सुमतिनाथ	२० वर्ष	वैशाख	शुक्ल	दसमी	अपराह्न	अपराह्न	मिथुन	सहेतुक मनोहर	९ लाख कोटि सागर + ४ पूर्वांग २ वर्ष।
६	पद्मप्रभ	६ मास	वैशाख	शुक्ल	दसमी	अपराह्न	अपराह्न	चित्रा	मनोहर	९८०० कोटि सागर + ३ पूर्वांग, ८३९९९८० - $\frac{१}{८}$ वर्ष।
७	सुपाद्वनाथ	९ वर्ष	फाल्गुन	कृष्ण	सप्तमी	अपराह्न	अपराह्न	विशाख	सहेतुक	२००० कोटि सागर + ४ पूर्वांग ८ - $\frac{१}{८}$ वर्ष।
८	चन्द्रप्रभ	३ मास	फाल्गुन	कृष्ण	सप्तमी	अपराह्न	अपराह्न	अनुराधा	मर्तन्ध	९८० कोटि सागर + ३ पूर्वांग ८३९९९९ $\frac{१}{८}$ वर्ष।
९	पुष्पवन्त	४ वर्ष	कार्तिक	शुक्ल	द्वितीया	अपराह्न	अपराह्न	मूल	पुष्यवन	९० कोटि सागर + ४ पूर्वांग ३ - $\frac{१}{८}$ वर्ष।
१०	शीतलनाथ	३ वर्ष	पौष	कृष्ण	चतुर्दशी	अपराह्न	अपराह्न	पूर्वा०	सहेतुक	९ कोटि सागर ७४९९९ पूर्व, ८३९९९९ पूर्व ८३९९९९ वर्ष।
११	श्रेयासनाथ	२ वर्ष	मघ	कृष्ण	अमावस	पूर्वाह्न	पूर्वाह्न	श्रवण	मनोहर	९९९९००० सागर, २४९९९ पूर्व और ७०५५८९९९९९ वर्ष।
१२	वासुदेव	६ वर्ष	माघ	शुक्ल	पूर्णिमा	अपराह्न	अपराह्न	विशाख	मनोहर	५६ सागर ३३००००१ वर्ष।

१३	विमलनाथ	३ वर्ष	पौष	शुक्ल	दसमी	अपराह्न	पू०शा०	सहेतुक	३० सागर ३९०००२ वर्ष।
१४	अनन्तनाथ	२ वर्ष	चैत्र	कृष्ण	अमा०	अपराह्न	रेवती	सहेतुक	९ सागर ७४९९९९ वर्ष।
१५	धर्मनाथ	१ वर्ष	पौष	शुक्ल	पूर्णिमा	अपराह्न	पुष्य	सहेतुक	४ नागर ४९९९९९ वर्ष।
१६	शान्तिनाथ	१६ वर्ष	पौष	शुक्ल	एकादशी	अपराह्न	भरणी	आम्रवन्	३ सागर २२५०१५ वर्ष ३/४पत्न्य।
१७	कुच्युनाथ	१६ वर्ष	चैत्र	शुक्ल	तृतीया	अपराह्न	कुलिका	सहेतुक	१/२ पत्न्य १२५० वर्ष।
१८	अरनाथ	१६ वर्ष	कार्तिक	शुक्ल	द्वादशी	अपराह्न	रेवती	सहेतुक	१/४ पत्न्य-९९९९९८७२५० वर्ष।
१९	महिम्नाथ	६ दिन	फाल्गुन	कृष्ण	द्वादशी	अपराह्न	अश्विनी	मनोहर	९९९९९६६०८४ वर्ष ६ दिन।
२०	मुनिसुव्रत	११ मास	फाल्गुन	कृष्ण	षष्ठी	पूर्वाह्न	श्रवण	नीलवन्	५४४७४०० वर्ष १० मास २४ दिन।
२१	नमिनाथ	९ वर्ष	चैत्र	शुक्ल	तृतीया	अपराह्न	अश्विनी	चित्रवन्	६०५००८ वर्ष १ मास।
२२	नेमिनाथ	५६ दिन	आशोच	शुक्ल	प्रतिपदा	पूर्वाह्न	चित्रा	उर्जयन्त पर्वत	५०९७९१ वर्ष १ मास २६ दिन।
२३	पार्वनाथ	४ मास	चैत्र	कृष्ण	वसुंधी	पूर्वाह्न	मिशाखा	शक्रपुर	८४३८० वर्ष २ मास ४ दिन।
२४	महावीर	१२ वर्ष	वैशाख	शुक्ल	दसमी	अपराह्न	हस्त	ऋजुकुला नदी तट	२८९ वर्ष ८ माह बाद वीर प्रभु को केवलज्ञान हुआ।

तक्कंपेजं इवा, संसृग्धोसेण भवणवासि-सुरा ।
पटह-रवेहि बंतर, सीह-णिणावेण जोइसिया ॥७१५॥

घंटाए कप्पवासी, जाणुप्पत्ति जिणाण गावूणं ।
पणमंति भत्ति-जुत्ता, मंतूणं सत्त वि कमाओ^१ ॥७१६॥

अर्थ :—आसन कम्पित होनेसे इन्द्र, शङ्खके उद्घोषसे भवनवासी देव, पटहके शब्दसे
व्यन्तरदेव, सिंहनादसे ज्योतिषी देव और घंटाके शब्दसे कल्पवासी देव तीर्थंङ्करोके केवलज्ञानकी
उत्पत्ति जानकर भक्तियुक्त होते हुए उसी दिशामे सात कदम चलकर प्रणाम करते हैं ॥७१५-७१६॥

अहंमिवा जे देवा, आसण-कंपेण तं वि गावूणं ।
मंतूण तेत्तिअं चिय, तत्थ ठिया ते णमंति जिणे^२ ॥७१७॥

अर्थ :—जो अहमिन्द्र देव है वे भी आसन कम्पित होनेसे केवलज्ञानकी उत्पत्ति जानकर
और उतने ही (७ कदम) आगे जाकर वहा स्थित होते हुए, जिनेन्द्रदेवको नमस्कार करते हैं ॥७१७॥

कुबेर द्वारा समवसरणकी रचना—

ताहे सक्काणाए, जिणाण सयलाण समवसरणाणि ।
विकिरियाए घणदो, विरएदि विचित्त-रुवेहि ॥७१८॥

अर्थ :—उस समय सोधमन्द्रकी आज्ञासे कुबेर विक्रिया द्वारा सभी तीर्थंङ्करोके समवसरणों
की अद्भुत रूपमें रचना करता है ॥७१८॥

समवसरणका निरूपण करनेकी प्रतिज्ञा—

उबमातीदं ताणं, को सक्कइ वणिण्दुं सयल-रुब्बं ।
एहि^३ लव-मेत्तामहं, साहेमि जहाणुपुब्बीए ॥७१९॥

अर्थ :—उन समवसरणोंके सम्पूर्ण अनुपम स्वरूपका वर्णन करनेमें कौन समर्थ है ? अब मैं
(यतिवृषभाचार्य) आनुपूर्वी क्रमसे उनके स्वरूपका अल्प मात्र (बहुत थोड़ा) कथन करता हूँ ॥७१९॥

समवसरणोके निरूपणमें इकतीस अधिकारोंका निर्देश—

सामञ्जभूमि-भ्रातृ, भाणं सोबाणयाण विष्णासो ।
बीही धूसीसाला, चेत्यप्पासाद-भूमिओ ॥७२०॥

६

णट्टयसाला थंभा, वेदी खादी य वेदि-वल्लि-खिदी ।
साला उदवण-वसुहा, णट्टयसाला य वेदि-घय-खोणी ॥७२१॥

११

सालो कप्पमहीओ, णट्टयसाला य वेदि-भबणमही ।
थूहा साला सिरिमंडव^१ य बारस-गणाण विष्णासो ॥७२२॥

६

वेदी पढमं बिदियं, तदियं पीढं च^२ गंधउडि-माणं ।
इदि इगितोसा पुह पुह, अहियारा समवसरणाणं ॥७२३॥

५

अर्थ :—१ सामान्य भूमिका प्रमाण, २ सोपानोंका प्रमाण, ३ विन्यास, ४ बीबी, ५ धूलि-
शाल, ६ चेत्यप्रासाद-भूमियाँ, ७ नृत्यशाला, ८ मानस्तम्भ, ९ वेदी, १० स्नातिका, ११ वेदी, १२ लता-
भूमि, १३ साल, १४ उपवनभूमि, १५ नृत्यशाला १६ वेदी, १७ ध्वज-क्षोणी, १८ साल, १९ कल्प-
भूमि, २० नृत्यशाला, २१ वेदी, २२ भवनमही, २३ स्तूप, २४ साल २५ श्रीमण्डप, २६ बारह
सभामोकी रचना, २७ वेदी, २८ पीठ, २९ द्वितीय पीठ, ३० तृतीय पीठ और ३१ गंधकुटीका प्रमाण,
इस प्रकार समवसरणके कथनमें पृथक्-पृथक् ये इकतीस अधिकार हैं ॥७२०-७२३॥

१. द. ज. य. सिरिमदियहिरसगणाण, ब. सिरिमदबि य हरिसगणाण । ङ. सिरिमंदबि य हरिस-
गणाण, क. सिरिमंदबि य हिरिसगणाण । २. क. उ. गधनदि, द. ज. य. गधमदि ।

सामान्य भूमि, उसका प्रमाण एवं अवसर्पिणीकालके समवसरणोका प्रमाण—

रविमंडल षड् बट्टा, सयला वि अखण्ड-इंबणीलमई ।

सामण्ण-खिदी बारस, जोयण-मेत्तं मि उसहत्स ॥७२४॥

तत्तो वे - कोसूणो, पत्तोयं णेमिणाह - पज्जंतं ।

चउभागेण विहीणा, पासत्स य वड्ढमाणस्स ॥७२५॥

उ जोयण १२ । अजिय ३३ । स ११ । अहिण ३१ । सु १० । प १९ ।

सु ६ । च १७ । पु ८ । सो १५ । से ७ । वा १३ । वि ६ । अ १३ ।

घ ५ । स ३ । कु ४ । अ ३ । म ३ । मु ३ । ण २ । णे ३ । पा ३ । वी १ ।

अर्थ :—भगवान् ऋषभदेवके समवसरणकी सम्पूर्ण सामान्य-भूमि सूर्यमण्डलके सदृश गोल, अखण्ड, इन्द्रनीलमणिमयी तथा बारह योजन प्रमाण विस्तारसे युक्त थी । इसके आगे नेमिनाथ पर्यंत प्रत्येक तीर्थङ्करके समवसरणकी सामान्य भूमि दो कोस कम तथा पार्श्वनाथ एवं वर्धमान तीर्थङ्करकी योजनके चतुर्थ भागसे ($\frac{1}{4}$ यो०) कम थी ॥७२४-७२५॥

उत्सर्पिणीकाल सम्बन्धी समवसरणोका प्रमाण—

अवसर्पिणि ए एवं, भणिदं उत्सर्पिणी ए विवरीयं ।

बारस-जोयण-मेत्ता, सयल-विदेह-तित्थ-कत्ताणं ॥७२६॥

१ । ५ । ३ । २ । ३ । ३ । ३ । ४ । ३ । ५ । ३ । ६ । ३ । ७ । ३ ।

८ । ३ । ८ । ३ । १० । ३ । ११ । ३ । १२ ।

अर्थ :—यह जो सामान्य भूमिका प्रमाण बतलाया गया है, वह अवसर्पिणी कालका है । उत्सर्पिणी कालमें इससे विपरीत है । विदेह क्षेत्रके सभी तीर्थङ्करोंके समवसरणकी भूमि बारह योजन प्रमाण ही रहती है ॥७२६॥

मतान्तरमे समवसरणका प्रमाण—

इह केई आइरिया, पण्णारस-कम्ममूमि-जादाणं ।

तित्थयराणं बारस-जोयण-परिमाण-मिच्छति ॥७२७॥

। १२ ।

पाठान्तरम्

। सामण्ण-भूमी समत्ता ।

अर्थ :—यहाँ कोई आचार्य पन्द्रह कर्मभूमियोंमें उत्पन्न हुए तीर्थङ्करोंकी समवसरण-भूमिको बारह योजन प्रमाण मानते हैं ॥७२७॥

पाठान्तर

। सामान्य-भूमिका वर्णन ममाप्त हुआ ।

सोपानोंके विस्तार आदिका निर्देश—

सुर-णर-तिरियारोहण-सोबाणा चउदिसासु पत्तेयं ।**बीस-सहस्रा गयणे, कणयमया उड्ड-उड्डम्मि ॥७२८॥**

। सोपान २०००० । ४ ।

अर्थ :—देवी, मनुष्यों और तिर्यञ्चोंके चढ़नेके लिए आकाशमें चारों दिशाओंमें प्रत्येक दिशामें ऊपर-ऊपर स्वर्णमय बीस-बीस हजार सीढियाँ होती हैं ॥७२८॥

उसहादी चउबीस, जोयण एकूण णेमि-पज्जंतं ।**चउबीसं भजिदब्बा, दीहं सोबाण णादब्बा ॥७२९॥**

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४

९	८	७	६	५	४	३
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४

अर्थ :—ऋषभदेवके (समवसरणमें) सोपानोंकी लम्बाई २४ से भाजित चौबीस योजन है । पश्चात् नेमिनाथ पर्यन्त (भाज्य राशिमेंसे) क्रमशः एक-एक योजन कम होती गई है ॥७२९॥

पासम्मि पंच कोसा, चउ बीरे अट्टताल-अवहरिवा ।**इगि-हत्थुच्छेहा ते, सोबाणा एक-हत्थ-वासा य ॥७३०॥**

५	४	उह १	दीह १
४८	४८		

॥ सोबाणा' समत्ता ॥

अर्थ :—भगवान् पार्श्वनाथके समवसरणमें सीढियोंकी लम्बाई अड़तालीससे भाजित पांच कोस और वीरनाथके अड़तालीससे भाजित चार कोस प्रमाण थी। वे सीढियाँ एक हाथ ऊँची और एक ही हाथ विस्तारवालीं थीं ॥७३०॥

। सोपानोका कथन समाप्त हुआ ।

समवसरणोका विन्यास—

चउ साला वेदीओ, पंच तवंतेसु अट्ट भूमिओ ।
सठवठभंतरभागे, पत्तेवकं तिण्णि पीढाणि ॥७३१॥

। साला ४ । वेदी ५ । भूमि ८ । पीढाणि ३ ।

। विण्णासो समत्तो' ।

अर्थ :—चार कोट, पांच वेदियाँ, इनके बीच आठ भूमियाँ और सर्वत्र प्रत्येकके अन्तर - भागमें तीन पीठ होते हैं ॥७३१॥

। विन्यास समाप्त हुआ ।

समवसरणस्थ वीथियोका निरूपण—

पत्तेवकं चउसंखा, बीहीओ पढम-पीठ-पज्जंता ।
णिय-णिय-जिण-सोवाणय-बीहत्तण-सरिस-वित्थारा ॥७३२॥

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४

८	७	६	५	४	[३	५	४]
२४	२४	२४	२४	२४	[२४	४८	४८]

अर्थ :—प्रथम पीठ पर्यन्त प्रत्येकमें अपने-अपने तीर्थ स्तूपके समवसरणभूमिस्थ सोपानोंकी लम्बाईके बराबर विस्तार वाली चार वीथियाँ होती हैं ॥७३२॥

एक्केवकाण दो-हो', कोसा वीहीण रुं-परिमाणं ।
 कमसो हीणं जाव य, वीर-जिणं के^२ वि इच्छन्ति ॥७३३॥
 च सहणे णिय-सोवाणाण दीहत्तणं पि ।

पाठान्तरम् ।

अर्थ :—एक-एक वीथीके विस्तारका परिमाण दो-दो कोस है और वीर जिनेन्द्र तक यह क्रमशः हीन होता गया है, ऐसा अन्य कितने ही आचार्य कहुते हैं ॥७३३॥

च शब्दसे अपने-अपने सोपानोकी दीर्घता भी (उसी प्रकार दो-दो कोस है और क्रमशः कम होती गई है, ऐसा जानना चाहिए ।)

पाठान्तर

पंच-सया बावण्णा, कोसाणं वीहियाण दीहत्तं ।
 चउवीस-हिदा कमसो, तेवीसूणा य णेमि-पउजंतं ॥७३४॥

५५२	५२६	५०६	४८३	४६०	४३७	४१४	३९१	३६८
२४	२४	०४	२४	२४	२४	०४	२४	२४

३४५	३२२	२९९	२७६	२५३	२३०	२०७	१८४	१६१
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	०४	२४

१३८	११५	९२	६९
२४	२४	२४	२४

अर्थ :—भगवान् ऋषभदेवके समवसरणमें वीथियोंकी लम्बाई चौबीस से भाजिन पाँचसौ बावन कोस प्रमाण थी और इसके आगे नेमिनाथ पर्यन्त क्रमशः भाज्यराशि (५५२) में से उत्तरोत्तर तेईस कम करके चौबीसका भाग देने पर जो लब्ध आवे उतनी वीथियोंकी दीर्घता होती है ॥७३४॥

पण्णारसेहि अहियं, कोसाण सयं च पासणाहम्मि ।
 देवम्मि बड्डमाणे, बाणउदो ऋहुताल-हिदा ॥७३५॥

११५	९२
४८	४८

अर्थ — भगवान् पार्श्वनाथके समवसरणमे वीथियोकी दीर्घता अडतालीससे भाजित एकसौ पन्द्रह कोस और वर्धमान जिनके अडतालीससे भाजित वानवै कोस प्रमाण थी ॥७३५॥

वीही-दो-पासेसुं, णिम्मल- फलिहोवलेहि^१ रइवाओ ।

दो वेदीओ वीही-वीहत्त-समाण-वीहत्ता ॥७३६॥

५५२	५२६	५०६	४८३	४६०	४३७	४१४	३९१	३६८	३४५	३२२
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४

२६६	२७६	२५३	२३०	२०७	१८४	१६१	१३८	११५	९२	६९
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४

११५	९२
४८	४८

अर्थ — वीथियोके दोनो पार्श्वभागमे वीथियोकी दीर्घताके सदृश दीर्घतासे युक्त और निर्मल स्फटिक-पाषाणसे रचित दो वेदियां होती हैं ॥७३६॥

वेदीण हंइ दंडा, अट्टट्टहिवाणि^२ छत्सहत्साणि ।

अट्टाइज्जसएहि, कमेण हीणाणि णेमि-पज्जंतं ॥७३७॥

६०००	५७५०	५५००	५२५०	५०००	४७५०	४५००	४२५०
८	८	८	८	८	८	८	८

४०००	३७५०	३५००	३२५०	३०००	२७५०	२५००	२२५०
८	८	८	८	८	८	८	८

२०००	१७५०	१५००	१२५०	१०००	७५०
८	८	८	८	८	८

अर्थ :— भगवान् ऋषभदेवके समवसरणमे वेदियोंकी मोटाई छह हजार धनुष प्रमाण थी । पुनः इससे आगे भगवान् नेमिनाथ पर्यन्त क्रमशः उत्तरोत्तर अट्टाई सौ-अट्टाई सौ कम होते गये हैं । ये सभी राशियां आठ-आठसे भाजित हैं ॥७३७॥

कोदंड-छ्रत्सयाहं, पणवीस-बुबाइ अट्ट-बिहत्साहं^१ ।
पासम्मि बड्डमाणे, पण-घण-वंडाणि वलिदाणि ॥७३८॥

६२५	१२५
८	२

अर्थ :-—भगवान् पार्श्वनाथके समवसरणमे वेदियांका विस्तार आठसे भाजित छह सौ पच्चीस घनुष और वर्धमान स्वामीके दो से भाजित पांचके घन (एक सौ पच्चीस) घनुष प्रमाण था ॥७३८॥

अट्टाणं भूमिणं, मूले बहवा ह्ठ तोरणद्वारा^२ ।
सोहिय-बज्ज-कवाडा, सुर-णर-तिरिएहि संचरिदा ॥७३९॥

अर्थ :-—आठो भूमियोंके मूलमे बज्जमय कपाटोसे सुशोभित और देवो, मनुष्यों एवं तिर्यञ्चोंके सञ्चारसे युक्त बहुतेसे तोरणद्वार होते है ॥७३९॥

णिय-णिय-जिणेसराणं^३, देहुस्सेहेण चउहि गुणिदेण ।
चरियट्टालय-चेंचइयाणं^४ वेदीण उस्सेहो ॥७४०॥

२००० । १५०० । १६०० । १४०० । १२०० । १००० । ५०० । ६०० ।
४०० । ३६० । ३२० । २८० । २४० । २०० । १५० । १६० । १४० । १२० ।
१०० । ८० । ६० । ४० । हत्थारिणं^५ ३६ । २८ ।

। वीही समन्ता^६ ।

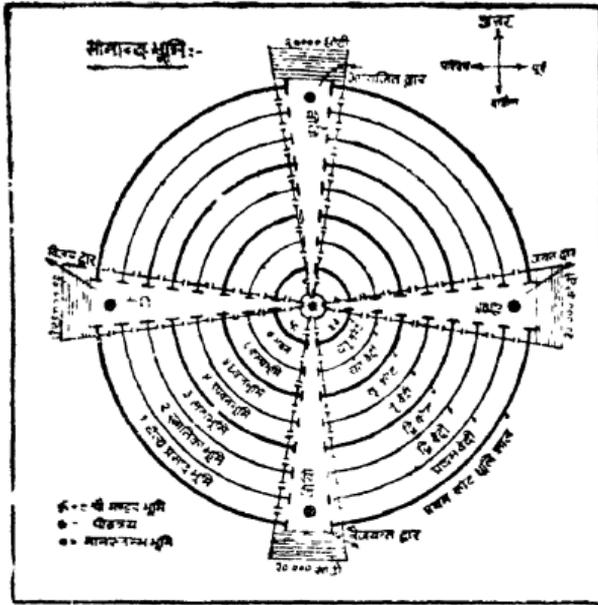
अर्थ :-—मार्गों एव अट्टालिकाओसे रमणीक वेदियोंकी ऊँचाई अपने-अपने जिनेन्द्रोंके शरीरके उत्सेघसे चौगुनी होती है ॥७४०॥

। वीथियोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

१. व. व. ज. अ. अट्टवीसहत्साहं, ब. क. उ. अट्टहत्साहं । २. व. व. ज. व. उ. तोरणद्वारा, क. तोरणं द्वारा ।
३. व. व. क. ज. उ. जिणेसठाणं । ४. व. चेतयाणा, ब. चेतइयाणु, क. व. उ.
५. व. व. ज. व. उ. पुब्बारिणं । ६. व. चम्मत्ता ।

समवसरणों, सोपानों, वीथियों और वेदियों का प्रमाण												
क्र. सं.	अवसरपिंजि काल के सम का प्रमाण	उत्तरपिंजि काल के सम का प्रमाण	समवसरणों के सोपानों की		वीथियों की		वेदियों की		तम्बाई	मोटाई	ऊँचाई	
			तम्बाई	चौड़ाई	चौड़ाई	तम्बाई	तम्बाई	मोटाई				
१	१२ योजन	१ योजन	१ योजन	१ हाथ	१ हाथ	४ कोस	$५ \frac{३}{४}$ योजन	$५ \frac{३}{४}$ योजन	$३ \frac{३}{४}$ योजन	७५० धनुष	२००० धनुष	
२	$११ \frac{१}{२}$ योजन	$१ \frac{१}{२}$ योजन	३ $\frac{१}{६}$ कोस	१ हाथ	१ हाथ	३ $\frac{१}{६}$ कोस	$५ \frac{४}{९}$ योजन	$५ \frac{४}{९}$ योजन	$४ \frac{४}{९}$ योजन	७१८ $\frac{१}{२}$ "	१८०० धनुष	
३	११ योजन	$१ \frac{१}{२}$ योजन	३ $\frac{२}{३}$ कोस	१ हाथ	१ हाथ	३ $\frac{२}{३}$ कोस	$५ \frac{११}{१८}$ योजन	$५ \frac{११}{१८}$ योजन	$५ \frac{११}{१८}$ योजन	६८७ $\frac{१}{२}$ "	१६०० धनुष	
४	$१० \frac{१}{२}$ योजन	२ योजन	३ $\frac{१}{२}$ कोस	१ हाथ	१ हाथ	३ $\frac{१}{२}$ कोस	$५ \frac{११}{१८}$ योजन	$५ \frac{११}{१८}$ योजन	$५ \frac{११}{१८}$ योजन	६५६ $\frac{१}{२}$ "	१४०० धनुष	
५	१० योजन	$२ \frac{१}{२}$ योजन	३ $\frac{१}{३}$ कोस	१ हाथ	१ हाथ	३ $\frac{१}{३}$ कोस	$४ \frac{११}{२४}$ योजन	$४ \frac{११}{२४}$ योजन	$४ \frac{११}{२४}$ योजन	६२५ "	१२०० धनुष	
६	$९ \frac{१}{२}$ योजन	३ योजन	३ $\frac{१}{६}$ कोस	१ हाथ	१ हाथ	३ $\frac{१}{६}$ कोस	$४ \frac{११}{२४}$ योजन	$४ \frac{११}{२४}$ योजन	$४ \frac{११}{२४}$ योजन	५९३ $\frac{३}{४}$ "	१००० धनुष	
७	९ योजन	$३ \frac{१}{२}$ योजन	३ कोस	१ हाथ	१ हाथ	३ कोस	$४ \frac{११}{२४}$ योजन	$४ \frac{११}{२४}$ योजन	$४ \frac{११}{२४}$ योजन	५६२ $\frac{१}{२}$ "	८०० धनुष	
८	$८ \frac{१}{२}$ योजन	४ योजन	२ $\frac{१}{६}$ कोस	१ हाथ	१ हाथ	२ $\frac{१}{६}$ कोस	$४ \frac{११}{२४}$ योजन	$४ \frac{११}{२४}$ योजन	$४ \frac{११}{२४}$ योजन	५३१ $\frac{१}{२}$ "	६०० धनुष	
९	८ योजन	$४ \frac{१}{२}$ योजन	२ $\frac{२}{३}$ कोस	१ हाथ	१ हाथ	२ $\frac{२}{३}$ कोस	$३ \frac{१}{६}$ योजन	$३ \frac{१}{६}$ योजन	$३ \frac{१}{६}$ योजन	५०० "	४०० धनुष	
१०	$७ \frac{१}{२}$ योजन	५ योजन	२ $\frac{१}{३}$ कोस	१ हाथ	१ हाथ	२ $\frac{१}{३}$ कोस	$३ \frac{११}{१८}$ योजन	$३ \frac{११}{१८}$ योजन	$३ \frac{११}{१८}$ योजन	४६८ $\frac{३}{४}$ "	३६० धनुष	
११	७ योजन	$५ \frac{१}{२}$ योजन	२ $\frac{१}{३}$ कोस	१ हाथ	१ हाथ	२ $\frac{१}{३}$ कोस	$३ \frac{११}{१८}$ योजन	$३ \frac{११}{१८}$ योजन	$३ \frac{११}{१८}$ योजन	४३७ $\frac{१}{२}$ "	३२० धनुष	
१२	$६ \frac{१}{२}$ योजन	६ योजन	२ $\frac{१}{६}$ कोस	१ हाथ	१ हाथ	२ $\frac{१}{६}$ कोस	$३ \frac{११}{१८}$ योजन	$३ \frac{११}{१८}$ योजन	$३ \frac{११}{१८}$ योजन	४०६ $\frac{१}{२}$ "	२८५ धनुष	

१३	६ योजन	६ $\frac{१}{३}$ योजन	२ कोस	१ हाथ	१ हाथ	२ कोस	१ हाथ	२ कोस	२ $\frac{१}{२}$ योजन	२ $\frac{१}{२}$ योजन	२ $\frac{१}{२}$ योजन	३७५ धनुष	२४० धनुष
१४	५ $\frac{१}{३}$ योजन	७ योजन	१ $\frac{१}{६}$ कोस	१ हाथ	१ हाथ	१ $\frac{१}{६}$ कोस	१ हाथ	१ $\frac{१}{६}$ कोस	२ $\frac{१}{६}$ योजन	२ $\frac{१}{६}$ योजन	२ $\frac{१}{६}$ योजन	३४३ $\frac{३}{४}$ धनुष	२०० धनुष
१५	५ योजन	७ $\frac{१}{३}$ योजन	१ $\frac{२}{३}$ कोस	१ हाथ	१ हाथ	१ $\frac{२}{३}$ कोस	१ हाथ	१ $\frac{२}{३}$ कोस	२ $\frac{१}{४}$ योजन	२ $\frac{१}{४}$ योजन	२ $\frac{१}{४}$ योजन	३१२ $\frac{१}{३}$ धनुष	१८० धनुष
१६	४ $\frac{१}{३}$ योजन	८ योजन	१ $\frac{१}{३}$ कोस	१ हाथ	१ हाथ	१ $\frac{१}{३}$ कोस	१ हाथ	१ $\frac{१}{३}$ कोस	२ $\frac{१}{३}$ योजन	२ $\frac{१}{३}$ योजन	२ $\frac{१}{३}$ योजन	२८१ $\frac{१}{४}$ धनुष	१६० धनुष
१७	४ योजन	८ $\frac{१}{३}$ योजन	१ $\frac{२}{३}$ कोस	१ हाथ	१ हाथ	१ $\frac{२}{३}$ कोस	१ हाथ	१ $\frac{२}{३}$ कोस	१ $\frac{१}{३}$ योजन	१ $\frac{१}{३}$ योजन	१ $\frac{१}{३}$ योजन	२५० धनुष	१४० धनुष
१८	३ $\frac{१}{३}$ योजन	९ योजन	१ $\frac{१}{३}$ कोस	१ हाथ	१ हाथ	१ $\frac{१}{३}$ कोस	१ हाथ	१ $\frac{१}{३}$ कोस	१ $\frac{१}{३}$ योजन	१ $\frac{१}{३}$ योजन	१ $\frac{१}{३}$ योजन	२३८ $\frac{३}{४}$ धनुष	१२० धनुष
१९	३ योजन	९ $\frac{१}{३}$ योजन	१ कोस	१ हाथ	१ हाथ	१ कोस	१ हाथ	१ कोस	१ $\frac{१}{३}$ योजन	१ $\frac{१}{३}$ योजन	१ $\frac{१}{३}$ योजन	१८७ $\frac{१}{३}$ धनुष	१०० धनुष
२०	२ $\frac{१}{३}$ योजन	१० योजन	५ कोस	१ हाथ	१ हाथ	५ कोस	१ हाथ	५ कोस	१ $\frac{१}{६}$ योजन	१ $\frac{१}{६}$ योजन	१ $\frac{१}{६}$ योजन	१५६ $\frac{१}{४}$ धनुष	८० धनुष
२१	२ योजन	१० $\frac{१}{३}$ योजन	३ कोस	१ हाथ	१ हाथ	३ कोस	१ हाथ	३ कोस	३ $\frac{१}{६}$ योजन	३ $\frac{१}{६}$ योजन	३ $\frac{१}{६}$ योजन	१२५ धनुष	६० धनुष
२२	१ $\frac{१}{३}$ योजन	११ योजन	१ कोस	१ हाथ	१ हाथ	१ कोस	१ हाथ	१ कोस	२ $\frac{१}{२}$ योजन	२ $\frac{१}{२}$ योजन	२ $\frac{१}{२}$ योजन	९३ $\frac{३}{४}$ धनुष	४० धनुष
२३	१ $\frac{१}{३}$ योजन	११ $\frac{१}{३}$ योजन	५ कोस	१ हाथ	१ हाथ	५ कोस	१ हाथ	५ कोस	२ $\frac{१}{४}$ योजन	२ $\frac{१}{४}$ योजन	२ $\frac{१}{४}$ योजन	७८ $\frac{१}{२}$ धनुष	३६ धनुष
२४	१ योजन	१२ योजन	१ कोस	१ हाथ	१ हाथ	१ कोस	१ हाथ	१ कोस	१ $\frac{१}{३}$ योजन	१ $\frac{१}{३}$ योजन	१ $\frac{१}{३}$ योजन	६२ $\frac{१}{३}$ धनुष	२८ धनुष



समवसरणका चित्र

धूमिमालोका सम्पूर्ण वर्णन—

सव्वाणं बाहिरए, धूलीसाला 'विसाल-समवट्टा ।

विष्फुरिय-यंच-वण्णा, मणुसुत्तर-पब्बदायारा ॥७४१॥

अरियट्टालय-रम्मा, पयल-पदाया-कलाव-रमणिज्जा ।

तिहुवण-विम्हय-जणणी, अउहि दुवारेहि परियरिया ॥७४२॥

अर्थ :—सबके बाहर पाँच-बगोंसे स्फुरायमान, विशाल एवं समानगोल, मानुषोत्तर पर्वतके आकार (सदृश) धूलिसाल नामक कोट होता है; जो मार्ग एवं अट्टालिकाओंसे रमणीय, चञ्चल पताकाओंके समूहसे सुन्दर, तीनों लोकोको विस्मित करने वाला और चार द्वारोंसे युक्त होता है ॥७४१-७४२॥

विजयं ति 'पुष्पदारं, दक्षिण-दारं च बहुजयंतेति ।

पच्छिम-उत्तर-दारा, जयंत-अपराजिदा नामा ॥७४३॥

अर्थ :—इनमें पूर्व-द्वारका नाम विजय, दक्षिण द्वारका वैजयन्त, पश्चिम द्वारका जयन्त और उत्तर-द्वारका नाम अपराजित होता है ॥७४३॥

एदे गोउर-दारा, तवणीयमया ति-भूमि-भूसणया ।

सुर-णर-मिहुण-सणाहा, तोरण-णचंचंत-मणिमाला ॥७४४॥

अर्थ :—ये चारों गोपुर-द्वार सुवर्णसे निर्मित, तीन भूमियोंसे विभूषित, देव एवं मनुष्योंके मिथुनो (जोड़ो) से सयुक्त तथा तोरणों पर नाचती (लटकती) हुई मणि-मालाओंसे शोभायमान होते हैं ॥७४४॥

एककेक-गोउराणं, बाहिर-मज्झम्मि दारदो पासे ।

बाउलया वित्थिण्णा, मंगल-णिहि-धूव-घड-भरिदा ॥७४५॥

अर्थ :—प्रत्येक गोपुरके बाहर और मध्यभागमें द्वारके पार्श्वभागमें मङ्गल-द्रव्य, निधि एवं धूप-घटसे युक्त विस्तीर्ण पुतलियाँ होती हैं ॥७४५॥

भिगार-कलस-वप्पण-चामर-धय-वियण-छस-सुपइहा ।

इय अट्ट मंगलाई, अट्ठुत्तर-सय-जुदाणि एककेकं ॥७४६॥

अर्थ :—झारी, कलश, दर्पण, चामर, ध्वजा, व्यजन, छत्र एवं सुप्रतिष्ठ, ये आठ मङ्गल-द्रव्य हैं । इनमेंसे प्रत्येक एक सौ आठ होते हैं ॥७४६॥

काल-महाकाल-पंडु, माणव-संखा य पउम-णइसप्या ।

पिगल-शारणा-रयणा, अटुत्तर-सय-जुवाणि जिहि एबे ॥७४७॥

अर्थ :—काल, महाकाल, पाण्डु, माणवक, ब्रह्म, पद्म, नैसर्ग, पिगल और नानारत्न ये नव निधियाँ प्रत्येक एक सौ आठ (एक सौ आठ) होती हैं ॥७४७॥

उडु-जोग-दव्व-भायण-घण्णाउह-तूर-वत्थ-हम्मणि ।

आभरण-सयल-रयणा^१, बेंति हू कालादिया कमसो ॥७४८॥

अर्थ :—उक्त कालादिक निधियाँ ऋतुके योग्य क्रमशः द्रव्य (मालादिक), भाजन, धान्य, आयुध, वादित्र, वस्त्र, प्रासाद, आभरण एवं सम्पूर्ण रत्न देती हैं ॥७४८॥

गोसीस-मलय-चंबरा-कालागरु-पहुदि-धूव-गंधुवा ।

एक्केक्के भूवलये, एक्केक्को होदि धूव-घटो ॥७४९॥

अर्थ :—एक-एक भूवलयके ऊपर गोसीर्ष, मलय-चन्दन और कालागरु आदिक धूपकी गन्धसे व्याप्त एक-एक घूप-घट होता है ॥७४९॥

धूलीसाला-गोउर-बाहिरए मयर-तोरण-सयाणि ।

अभंतरम्मि भागे, पत्तेयं रयण-तोरण-सयाणि ॥७५०॥

अर्थ :—धूलिसाल सम्बन्धी गोपुरोके प्रत्येक बाह्य भागमें सैकड़ों मकर-तोरण और आन्तर भागमें सैकड़ों रत्नमय तोरण होते हैं ॥७५०॥

गोउर-दुवार-मज्जे, दोसु वि पासेसु रयण-णिम्मविया ।

एक्केक्क-णट्ट-साला, णच्चंत सुरंगणा-णिबहा ॥७५१॥

अर्थ :—गोपुर-द्वारोके बीच दोनो पाद्वर्षभागोंमें रत्नोंसे निर्मित और नृत्य करती हुई देवाङ्गनाओंके समूहसे युक्त एक-एक नाट्यशाला होती है ॥७५१॥

१ द. रयणादी दती, ज. रयणादी देती, य. रणादी देती ।

२. क. उ. बाउणाए, द. ज. य.

धूलीसाला-गोउर-बारसुं चउसु होंति पत्तेकं ।

बर-रयल-बंड-हत्था, जोइसिया बार-रक्खमया ॥७५२॥

अर्थ :—धूलिसालके चारों गोपुरोंमें से प्रत्येकमे, हाथमें उलाम रत्नदण्डको लिए हुए ज्योतिष्क देव द्वार-रक्षक होते हैं ॥७५२॥

चउ-गोउर-बारसुं, बाहिर-अठभंतरम्मि मागम्मि ।

सुह-सुं बर-संचारा, सोवाणा बिबिह-रयणमया ॥७५३॥

अर्थ :—चारों गोपुरद्वारोके बाह्य और अन्त्यन्तर भागमें विविध प्रकारके रत्नोंसे निर्मित, सुख-पूर्वक सुन्दर संचार योग्य सीढियाँ होती हैं ॥७५३॥

धूलीसालाण पुढं, गिय-जिण-वेहोदय-प्पमाणेणं ।

चउ-गुणिवेणं उदओ, सव्वेसु वि समवसरणेसुं ॥७५४॥

२००० । १८०० । १६०० । १४०० । १२०० । १००० । ८०० । ६०० । ४०० ।

३६० । ३२० । २८० । २४० । २०० । १८० । १६० । १४० । १२० । १०० ।

८० । ६० । ४० । हत्थाणि ३६ । २८ ।

अर्थ :—सब समवसरणोमे धूलिसालोकी ऊँचाई अपने-अपने तीर्थकरके शरीरके उत्सेह प्रमाणसे चौगुनी होती है ॥७५४॥

तोरण-उदओ अहिओ, धूलीसालाण उवय-संखावो ।

तत्तो य साविरेगो, गोउर-बाराण सयलारुं ॥७५५॥

अर्थ :—धूलिसालोकी ऊँचाईकी संख्यासे तोरणोंकी ऊँचाई अधिक होती है और इनसे भी अधिक समस्त गोपुरोंकी ऊँचाई होती है ॥७५५॥

चउबीसं चैय कोसा, धूलीसालाण मूल-बित्थारा ।

बारस-बग्गेण हिवा, खेमि-जिखंतं कमेण एककूणा ॥७५६॥

२४ | २३ | २२ | २१ | २० | १९ | १८ | १७ | १६ | १५ | १४ | १३ |
 १४४ | १४४ | १४४ | १४४ | १४४ | १४४ | १४४ | १४४ | १४४ | १४४ | १४४ | १४४ |

१२ | ११ | १० | ९ | ८ | ७ | ६ | ५ | ४ | ३ |
 १४४ | १४४ | १४४ | १४४ | १४४ | १४४ | १४४ | १४४ | १४४ | १४४ |

अर्थ :—भगवान् ऋषभदेवके समवसरणमे धूलिसालका मूल-विस्तार बारहके वर्गसे भाजित चौबीस ही कोस प्रमाण था । फिर इसके आगे भगवान् नेमिनाथ पर्यन्त (भाज्य राशिमे से) क्रमशः एक-एक कम होता गया है ॥७५६॥

अडसीदि-दोसएहि, भजिवा पासम्मि पंच कोसा य ।

एक्को य बड्डमाणे, 'कोसो बाहचरो-हरिदो ॥७५७॥

| ५ | १ |
 | २८८ | ७२ |

अर्थ :—भगवान् पाण्डनाथके समवसरणमे धूलिसालका मूल विस्तार दो सौ अठासीसे भाजित पाँच कोस और वर्धमान भगवान्के समवसरणमे उसका विस्तार बहत्तरसे भाजित एक कोस प्रमाण था ॥७५७॥

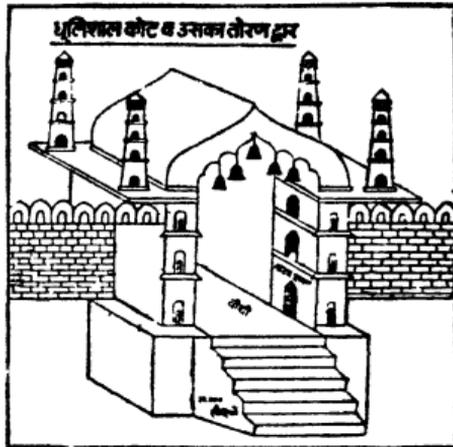
मज्झिम-उवरिम-भागे, धूलीसालाण रु'ब-उवएसो ।

काल-बत्सेण पणट्ठो, 'सरितीरुप्पण्ण-विडवो व्व ॥७५८॥

। धूलीसाला समत्ता ।

अर्थ :—धूलिसालके मध्य और उपरिम भागके विस्तारका उपदेश कालबत्से नदी-तीरोत्पन्न वृक्षके सदृश नष्ट हो गया है ॥७५८॥

। धूलिसालोका वर्धन समाप्त हुआ ।



धूलिसालकोट एवं उसका तोरणद्वार

चैत्यप्रासाद भूमियोका निरूपण—

सालभंत्तरभागे, चैत्यप्रासाद-नाम-भूमिओ ।
'वेदंति सयल-लेत्तं', जिणपुर-प्रासाद-सहिवाओ ॥७५६॥

अर्थ :- उन धूलिसालोके अभ्यन्तर भागमें जिणपुरसम्बन्धी प्रासादोसे युक्त चैत्य-प्रासाद नामक भूमियाँ सकलक्षेत्रको वेष्टित करती हैं ॥७५६॥

एककेकं जिण-भवनं, प्रासादा पंच पंच अंतरिवा ।
विबिह-वण-संड-मंडण-वर-वाओ-कूव-रमणिज्जा ॥७६०॥

अर्थ :- एक-एक जिणभवनके अन्तरालसे पाँच-पाँच प्रासाद हैं, जो विविध वन-समूहोसे मण्डित और उत्तम वापिकाओं एवं कुओंसे रमणीय होते हैं ॥७६०॥

१. द. व. क. व. य. उ. वेदंति । २. द. छलं । ३. द. व. ज. य. छ. सरिवाओ, क. सरिवाओ ।

जिनपुर-पासावाणं, उस्सेहो गिय-जिणिद-उवएण ।

बारस-ह्वेण सरिसो, णट्ठो बीहत्त-वास-उववेसो ॥७६१॥

६००० । ५४०० । ४८०० । ४२०० । ३६०० । ३००० । २४०० । १८०० ।

१२०० । १०८० । ९६० । ८४० । ७२० । ६०० । ५४० । ४८० । ४२० ।

३६० । ३०० । २४० । १८० । १२० । २७ । २१ ।

अर्थ :-जिनपुर और पासादोकी ऊँचाई अपने-अपने तीर्थक्षुरकी ऊँचाईसे बारह-गुणी होती है । इनकी लम्बाई और विस्तारके प्रमाणका उपदेश मनु हो गया है ॥७६१॥

दु-सय-चउसट्ठि-ओयणमुसहे 'एक्कारसोणमणुकमसो ।

चउवीस-बग-भजिदं, णोमि-जिणं जाव पढम-सिदि-हंढं ॥७६२॥

२६४ । २५३ । २४२ । २३१ । २२० । २०९ । १९८ । १८७ । १७६ । १६५ । १५४ ।
५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ ।

१४३ । १३२ । १२१ । ११० । ९९ । ८८ । ७७ । ६६ । ५५ । ४४ । ३३ ।
५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ । ५७६ ।

अर्थ :-भगवान् ऋषभदेवके समयसरणमें प्रथम पृथिवीका विस्तार बीबीसके वर्ग (५७६) से भाजित दो सौ चौंसठ योजन था । फिर इससे आगे नेमिनाथ तीर्थक्षुर पर्यन्त भाज्य राशिमेंसे क्रमशः उत्तरोत्तर ग्यारह-ग्यारह कम होते गये हैं ॥७६२॥

पणवण्णासा कोसा, पास-जिणे अट्ठसोदि-दु-सय-हिवा ।

बावीस 'बीरणाहे, बारस-बगगेहि पविभत्ता ॥७६३॥

को

५५	४४
२८८	२८८

। केविय-पासाद-भूमि सम्मत्ता ।

अर्थ :- पार्श्वनाथ तीर्थंकरके समवसरस्थमें प्रथम पृथिवीका विस्तार दो सौ अठ्ठासीसे भाजित पचपन कोस और बीरनाथ भगवान्के बारहके वर्ग (१४४) से भाजित बाईस कोस प्रमाण था ॥७६३॥

। चेत्य-प्रासाद-भूमिका कथन समाप्त हुआ ।

नाट्यशालाश्लोका निरूपण—

आदिम-खिवीसु पुह-पुह, बीहीणं दोसु दोसु पासेसुं ।
दोहो णट्टय-साला, वर-कंचण-रयण-णिम्मिबिया ॥७६४॥

। २ । २ ।

अर्थ :- प्रथम पृथिवियोंमें पृथक्-पृथक् बोधियोंके दोनों पार्श्वभागोंमें उत्तम स्वर्ण एवं रत्नोसे निर्मित दो-दो नाट्यशालाये होती है ॥७६४॥

णट्टय-सालाण पुढं, उस्सेहो णिय-जिण्णद-उवएहिं ।
बारस-ह्वेहि सरिसो, णट्टा बीहत्त-वास-उवएसा ॥७६५॥

दडा ६००० । ५४०० । ४८०० । ४२०० । ३६०० । ३००० । २४०० । १८०० । १२०० ।
१०८० । ९६० । ८४० । ७२० । ६०० । ५४० । ४८० । ४२० । ३६० । ३०० । २४० । १८० ।
णेमि १२० । पास २७ । वोर २१ ।

अर्थ :- नाट्यशालाओंकी ऊँचाई बारहसे गुणित अपने-अपने तीर्थंकरोंके शरीरकी ऊँचाईके सदृश होती है, तथा इनकी लम्बाई एक विस्तारका उपदेश नष्ट हो गया है ॥७६५॥

एक्केक्काए णट्टय-सालाए चउ हबट्ट रंगाणि ।
'एक्केक्कस्सि रंणे, भावण-कण्णाउ बसीसा ॥७६६॥

गायंति जिण्णिदाणं, विजयं विविहत्थ-विज्व-गीवेहिं ।
अभिणइय अच्चणीओ, खिबंति कुसुमंजलिं ताओ ॥७६७॥

अर्थ :—प्रत्येक नाट्यशालामें चारसे गुणित आठ (३२) रङ्गभूमियां और प्रत्येक रङ्गभूमिमें बत्तीस भवनवासी-कन्यायें अभिनयपूर्वक नृत्य करती हुई नानाप्रकारके अर्थासे युक्त दिव्य गीतों द्वारा तीर्थक्षुरोंकी विजयके गीत गाती हैं और पुष्पाञ्जलियोंका क्षेपण करती हैं ॥७६६-७६७॥

एककेवकाए णट्टय-सालाए दोण्णि दोण्णि धूब-घडा ।

णाणा-सुगंधि-धूबं, पसरेण वासिय-विगंता ॥७६८॥

। णट्टयसाला समत्ता ।

अर्थ :—प्रत्येक नाट्यशालामें नानाप्रकारकी सुगन्धित धूपसे दिङ्-मण्डलको सुवासित करने वाले दो-दो धूप घट रहते हैं ॥७६८॥

नाट्यशालाश्लोका वर्णन समाप्त हुआ ।

[तालिका न० १७ पृष्ठ २२३ पर देखे]

तालिका : १७

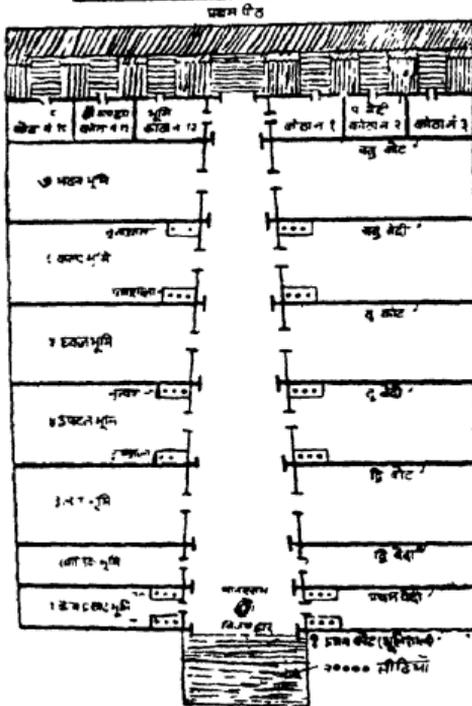
धूलसाल-प्रासाद-प्रथम-पृथवा एव नाट्यशालाआका प्रमाण—

न०	धूलिसालोकी ऊँचाई गाथा ७५४	धूलिसालोका मूल विस्तार गाथा ७५६	जिनपुर एव प्रासादोकी ऊँचाई गाथा ७६१	प्रथम पृथिवीका विस्तार गाथा ७६२	नाट्यशालाओकी ऊँचाई गाथा ७६५
१	२००० धनुष	३३३३ धनुष	६००० धनुष	१५ कोस	६००० धनुष
२	१८०० "	३१९५ "	५४०० "	१३३३ "	५४०० "
३	१६०० "	३०५५ "	४८०० "	१३३३ "	४८०० "
४	१४०० "	२९१५ "	४२०० "	१३३३ "	४२०० "
५	१२०० "	२७७५ "	३६०० "	१३३३ "	३६०० "
६	१००० "	२६३५ "	३००० "	१३३३ "	३००० "
७	८०० "	२५० "	२४०० "	१३३३ "	२४०० "
८	६०० "	२३६५ "	१८०० "	१३३३ "	१८०० "
९	४०० "	२२२५ "	१२०० "	१३३३ "	१२०० "
१०	३६० "	२०८५ "	१०८० "	१३३३ "	१०८० "
११	३२० "	१९४५ "	९६० "	१३३३ "	९६० "
१२	२८० "	१८०५ "	८४० "	१३३३ धनुष	८४० "
१३	२४० "	१६६५ "	७२० "	१३३३ "	७२० "
१४	२०० "	१५२५ "	६०० "	१३३३ "	६०० "
१५	१८० "	१३८५ "	५४० "	१३३३ "	५४० "
१६	१६० "	१२४५ "	४८० "	१३३३ "	४८० "
१७	१४० "	११०५ "	४२० "	१३३३ "	४२० "
१८	१२० "	९६५ "	३६० "	१३३३ "	३६० "
१९	१०० "	८३५ "	३०० "	१३३३ "	३०० "
२०	८० "	७०५ "	२४० "	१३३३ "	२४० "
२१	६० "	५७५ "	१८० "	१३३३ "	१८० "
२२	४० "	४३५ "	१२० "	१३३३ "	१२० "
२३	३६ हाथ	३९५ हाथ	२७ "	३५३ हाथ	२७ "
२४	२८ हाथ	२७ हाथ	२१ "	३०५ हाथ	२१ "

मानस्तम्भ के

एक दिशात्मक कोट, वेदी, भूमियों एवं नाट्यशास्त्राभों आदिका चित्रण—

एक दिशात्मक सामान्य भूमि



मानस्तम्भोंका निरूपण—

त्रिय-त्रिय-पदम-सिबीए, बहुमज्जे अउसु बीहि-मउभम्मि ।
 मानस्तम्भ-सिबीए, सम-बट्टा बिबिह-बण्णज-सहाओ ॥७६६॥

अर्थ :—अपनी-अपनी प्रथम पृथिवीके बहुमध्यभागमें चारों वीथियोंके बीचोंबीच समान कोल और विविध वर्णन-योग्य मानस्तम्भ भूमियाँ होती हैं ॥७६६॥

अभन्तरम्मि ताणं, चउ-गोउर-दार-सुं'दरा साला ।
णकन्त-धय-वडाया' मणि-किरणुजोइय-दिगंता' ॥७७०॥

अर्थ :—उनके (मानस्तम्भ-भूमियोंके) अभ्यन्तर भागमें चार गोपुरद्वारोंसे सुन्दर, नाचती हुई ध्वज-पताकाओं सहित और मणियोंकी किरणोंसे दिङ्-मण्डलको प्रकाशित करनेवाले कोट होते हैं ॥७७०॥

ताणं पि मज्झभागे, वण-संडा विविह-विब्ब-तरु-भरिया' ।
कल-कोकिल-कल-कलया, सुर-किण्णर-मिहूण'-संछण्णा ॥७७१॥

अर्थ :—उनके भी मध्य भागमें विविध दिव्य-वृक्षोंसे संयुक्त, सुन्दर कोयलोंके कल-कल शब्दोंसे मुखरित और सुर एव किन्नर-युगलोंसे संकीर्ण वन-खण्ड हैं ॥७७१॥

तम्मज्झे रम्माइं, पुब्बावि-विसासु लोयपालाणं ।
सोम-जम-वरुण-धणवा, हौंति महा-कीडण-पुराइं ॥७७२॥

अर्थ :—उनके मध्यमे पूर्वदिक् दिशाओंमें क्रमशः सोम, यम, वरुण और कुबेर, इन लोक-पालोंके अत्यन्त रमणीय मञ्जुक्रीडा नगर होते हैं ॥७७२॥

ताणम्भतर-भागे, साला चउ-गोउ रावि-परियरिया ।
तत्तो वण-वावीओ, कलिबबरमाणण-सहाओ ॥७७३॥

अर्थ :—उनके अभ्यन्तरभागमें चार गोपुरादिसे वेष्टित कोट और इसके आगे वन-वायिकाएँ होती हैं, जो प्रफुल्लित नीलकमलोंसे शोभायमान होती हैं ॥७७३॥

ताणं मज्झे णिय-णिय-विसासु दिब्बाणि कीडण-पुराइं ।
हुववह-णेरिवि-मारुद-ईसाणाणं च लोयपालाणं ॥७७४॥

अर्थ :—उनके बीचमे लोकपालोंके अपनी-अपनी दिशामें तथा आग्नेय, नैऋत्य, वायव्य और ईशान, इन विदिशाओंमें भी दिव्य क्रीडन-पुर होते हैं ॥७७४॥

१ ट क ज. य. उ वडाया । २. द. क. ज. य. उ. अघिचती, व. अदियते । ३. द.

चरिया, न. चरिया । ४ द व क. ज. य. उ. मिहूणाणि ।

ताजमन्तरभागे, सालाओ बर-विसाल-बाराओ ।
तम्भज्जे धीठारिण, एक्केक्के' समवसरणम्मि ॥७७५॥

अर्थ :—उनके अग्र्यन्तर भागमे उत्तम विशाल द्वारोसे युक्त कोट होते हैं और फिर इनके बीचमें पीठ होते हैं । ऐसी संरचना प्रत्येक समवसरणमे होती है ॥७७५॥

वेरलियमयं पडमं, पीठं तस्सोवरिम्मि कणयमयं ।
दुइयं तस्स य उबरि, तवियं बहु-वण्ण-रयणमयं ॥७७६॥

अर्थ :—इनमेंसे पहला पीठ वंडूर्यमणिमय, उसके ऊपर दूसरा पीठ सुवर्णमय और उसके भी ऊपर तीसरा पीठ बहुत वर्णके रत्नोसे निर्मित होता है ॥७७६॥

आविम-पीठुच्छेहो, वंडा चउवीस रुव-तिय-हरिडा ।
उसह-जिणिवे कमसो, रुबूणा जेमि-पण्णतं ॥७७७॥

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०
३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३

९	८	७	६	५	४	३
३	३	३	३	३	३	३

अर्थ :—भगवान् ऋषभदेवके समवसरणमे प्रथम पीठकी ऊँचाई तीनसे भाजित चौबीस धनुष प्रमाण थी । इसके आगे नेमिनाथ पर्यन्त क्रमशः उत्तरोत्तर भाज्य-राशिमेसे एक-एक अंक कम होता गया है ॥७७७॥

पासे पंच च्छहिदा, तिदय-हिदा दोण्णि बडुमाण-जिणे ।
सेसाण अद्धमाणा, आविम-पीठस्स उदयाओ ॥७७८॥

५	२
६	३

तालिका : १८

पीठोंका विस्तार अर्बि एवं सीढ़ियोंका प्रमाण—				बाबा ७७७-७८२			
क्रमांक	समबतरण स्थित प्रथम पीठोंकी ऊँचाई गा. ७७७	द्वितीय पीठोंकी ऊँचाई	तृतीय पीठोंकी ऊँचाई	प्रथम पीठों की सीढ़ियों का प्रमाण	द्वितीय पीठों की सीढ़ियों का प्रमाण	तृतीय पीठों की सीढ़ियों का प्रमाण	तृतीय पीठका विस्तार गा. ७८१-८२
१	८ घनुष	४ घनुष	४ घनुष	सीढ़ियाँ ८ हैं	४ हैं	४ हैं	१००० घनुष
२	७ " "	३ " "	३ " "	८ " "	४ " "	४ " "	९५८ " "
३	७ " "	३ " "	३ " "	८ " "	४ " "	४ " "	९१८ " "
४	७ " "	३ " "	३ " "	८ " "	४ " "	४ " "	८७५ " "
५	६ " "	३ " "	३ " "	८ " "	४ " "	४ " "	८३३ " "
६	६ " "	३ " "	३ " "	८ " "	४ " "	४ " "	७९० " "
७	५ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	७४८ " "
८	५ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	७०६ " "
९	५ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	६६५ " "
१०	५ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	६२५ " "
११	४ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	५८५ " "
१२	४ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	५४५ " "
१३	४ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	५०० " "
१४	३ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	४६५ " "
१५	३ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	४२५ " "
१६	३ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	३८५ " "
१७	२ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	३४५ " "
१८	२ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	३०५ " "
१९	२ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	२६५ " "
२०	२ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	२२५ " "
२१	२ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	१८५ " "
२२	२ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	१४५ " "
२३	२ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	१०५ " "
२४	२ " "	२ " "	२ " "	८ " "	४ " "	४ " "	६५ " "

पीढाण उवरि माणत्थंभा उसहम्मि ताण' बहलत्तं ।
दु-पण-णव-ति-दुण-वंडा, अक-कमे तिगुण-अट्ट-पबिहत्ता ॥७८३॥

अड-णउवि-अहिय-णव-सय-ऊणा कमसो य णेमि-परियत्तं ।
पण-कदी पचूणा, चउवीस-हिवा य पासणाहम्मि ॥७८४॥

अर्थ — पीढोके ऊपर मानस्तम्भ होते हैं। उनका बाह्य ऋषभदेवके समवसरणमें आठके तिगुने (२४) से भाजित, अक क्रमसे दो, पाँच, नौ, तीन और दो (२३६५२) धनुष प्रमाण था। इसके आगे नेमिनाथ तीर्थङ्कर पर्यन्त भाज्य राशिसे क्रमशः उत्तरोत्तर नौ सौ अट्टानवें कम होते गये हैं। पार्श्वनाथके समवसरणमें मानस्तम्भोका बाह्य चौबीससे भाजित पचासके वर्गसे पाँच कम (३३५५) धनुष प्रमाण था ॥७८३-७८४॥

उसहादि-पास-परियत—

२३६५२ २४	२२६५४ २४	२१६५६ २४	२०६५८ २४	१९६६० २४	१८६६२ २४	१७६६४ २४	
१६६६६ २४	१५६६८ २४	१४६७० २४	१३६७२ २४	१२६७४ २४	११६७६ २४	१०६७८ २४	
९६८० २४	८६८२ २४	७६८४ २४	६६८६ २४	५६८८ २४	४६९० २४	३६९२ २४	२६९४ २४
२४६५ २४							

पंच-सया रुऊणा, छक्क-हिवा वडुमाण-वेवम्मि ।
णिय-णिय-जिण-उदयेहि, बारस-गुणिदेहि थंभ-उच्छेहो ॥७८५॥

५५५ । ६००० । ५४०० । ४८०० । ४२०० । ३६०० । ३००० । २४०० ।
१८०० । १२०० । १०८० । ९६० । ८४० । ७२० । ६०० । ५४० । ४८० ।
४२० । ३६० । ३०० । २४० । १८० । १२० । २७ । २१ ।

अर्थ :—वर्द्धमान तीर्थङ्करके समवसरणमें मानस्तम्भोका बाह्य छहसे भाजित एक कम पाँच सौ घनुष प्रमाण था । इन मानस्तम्भोंकी ऊँचाई अपने-अपने तीर्थङ्करके शरीरकी ऊँचाईसे बारह-गुणी होती है ॥७८५॥

जोयष-अहियं उदयं, माणत्थंभाण उसह-सामिम्मि ।

कम-हीणं सेसेसुं, एषं केई जिलुबंति ॥७८६॥

पाठान्तरम्

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४

१०	९	८	७	६	५	४	३	५	४
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	४८	४८

अर्थ :—ऋषभनाथ स्वामीके समवसरणमें मानस्तम्भोकी ऊँचाई एक योजनसे अधिक थी । शेष तीर्थङ्करोके मानस्तम्भोकी ऊँचाई क्रमशः हीन होती गई है । ऐसा कितने ही आचार्य कहते हैं ॥७८६॥

पाठान्तरम्

१. व.	५	४
	२४	४८

तालिका : १६

मानस्तम्भोका बाहृत्य एवं ऊँचाई—		गाथा ७८३-७८६	
नं०	मानस्तम्भोका बाहृत्य	मानस्तम्भोकी ऊँचाई	प्रकारान्तरसे मानस्तम्भोकी ऊँचाई गाथा ७८६
१	६६८ घनुष	६००० घनुष	१ योजन
२	६५६३३३ " "	५५०० " "	३३३ कोस
३	६१५३३३ " "	५८०० " "	३३३ " "
४	८७३३३३ " "	५२०० " "	३३३ " "
५	८३३३३३ " "	३६०० " "	३३३ " "
६	७६०३३३ " "	३००० " "	३३३ " "
७	७५८३३३ " "	२५०० " "	३३३ " "
८	७०६३३३ " "	१८०० " "	३३३ " "
९	६६५३३३ " "	१२०० " "	३३३ " "
१०	६२३३३३ " "	१०८० " "	३३३ " "
११	५८२३३३ " "	९६० " "	३३३ " "
१२	५५०३३३ " "	८५० " "	३३३ " "
१३	५६९ " "	७२० " "	३३३ " "
१४	५५७३३३ " "	६०० " "	३३३ " "
१५	५१५३३३ " "	५५० " "	३३३ " "
१६	३७५३३३ " "	५८० " "	३३३ " "
१७	३३३३३३ " "	५२० " "	३३३ " "
१८	२९१३३३ " "	३६० " "	३३३ " "
१९	२५९३३३ " "	३०० " "	३३३ " "
२०	२०७३३३ " "	२५० " "	३३३ " "
२१	१६६३३३ " "	१८० " "	३३३ " "
२२	१२५३३३ " "	१३० " "	३३३ " "
२३	१०३३३३ " "	२७ " "	३३३ " "
२४	८३३ " "	२१ " "	३३३ " "

शंभाण मूलभागा, बु-सहस्स-यमाण वज्जदारवा^१ ।
मज्झिम-भागा^२ बद्धा, पत्तेवकं फलिह-णिम्मविया ॥७८७॥

२००० ।

उच्चरिम-भागा उज्जल-वेदलियमया विमूसिया परवो ।
चामर - घंटा - किकिणि - रयणाबलि - केदु - पहुदीहि ॥७८८॥

अर्थ :—प्रत्येक मानस्तम्भका मूलभाग दो हजार (धनुष) प्रमाण है और वज्र-दारोसे युक्त होता है । मध्यम भाग स्फटिक मणिसे निर्मित और वृत्ताकार होता है तथा उज्ज्वल बंधूर्य मणिमय उपरिम भाग चारों ओर चामर, घण्टा, किकिणी, रत्नहार एवं ध्वजा इत्यादिकोसे विभूषित रहता है ॥७८७-७८८॥

ताणं मूले उच्चरि, अट्ट-महापाडिहेरि-जुत्ताओ ।
पडिदिसमेक्केक्काओ, रम्माओ जिणिव-पडिमाओ ॥७८९॥

अर्थ :—प्रत्येक मानस्तम्भके मूलभागमें एवं उपरिमभागमें प्रत्येक दिशामें आठ-आठ महा-प्रतिहार्योसे युक्त एक-एक रमणीय जिन प्रतिमा होती है ॥७८९॥

माणुत्तासिय-मिच्छा, वि दूरवो दंससेण शंभाणं ।
जं होंति गलिब-भाणा, माणत्थंभेत्ति^३ तं^४ भणिवं ॥७९०॥

अर्थ :—क्योंकि मानस्तम्भोंको दूरसे ही देख लेनेपर अभिमानी मिथ्यादृष्टि लोग अभिमान से रहित हो जाते हैं अतः इन (स्तम्भों) को 'मानस्तम्भ' कहा गया है ॥७९०॥

सालत्तय-बाहिरए, पत्तेवकं चउ-बिसासु होंति बहा ।
वीहि पडि पुब्बादि-क्कमेण सज्जेसु समबसरणेसु ॥७९१॥

१. द. व. क. उ. वज्जदारवा, ज. व. वज्जदारवा ।

२. द. भावी, ज. व. भावा ।

३. द. ज. व. माणत्थंम तित्थय ।

४. व. क. उ. वं ।

अर्थ :—सब समवसरणोंमें तीनों कोटोके बाहर चार-दिशाओमेंसे प्रत्येक दिशामें क्रमशः पूर्वादिक बीबीके आश्रित द्रह (बापिकाएँ) होते हैं ॥७६१॥

णंदुस्तर-णंदाओ, णंदिमई णंदिघोस-णामाओ ।
पुब्बत्थंमे पुब्बाविएसु भागेसु चत्तारो ॥७६२॥

अर्थ :—पूर्वदिशागत मानस्तम्भके पूर्वादिक भागोमे क्रमशः नन्दोत्तरा, नन्दा, नन्दिमती और नन्दिघोषा नामक चार द्रह होते हैं ॥७६२॥

विजया य बइजयंता, जयंत-अबराजिवाइ णामेहिं ।
दक्खिण-थंमे पुब्बाविएसु भागेसु चत्तारो ॥७६३॥

अर्थ :—दक्षिण दिशा स्थित मानस्तम्भके आश्रित पूर्वादिक भागोमे क्रमशः विजया, वैजयन्ता, जयन्ता और अपराजिता नामक चार द्रह होते हैं ॥७६३॥

अभिहाणे य असोगा, सुप्पइबुद्धा य कुमुद-पुंडरिया ।
पच्छिम-थंमे पुब्बाविएसु भाएसु चत्तारो ॥७६४॥

अर्थ :—पश्चिम दिशागत मानस्तम्भके आश्रित पूर्वादिक भागोमें क्रमशः अशोका, सुप्रति-बुद्धा (सुप्रसिद्धा), कुमुदा और पुण्डरीका नामक चार द्रह होते हैं ॥७६४॥

हिवय-महाणंदाओ, सुप्पइबुद्धा पहंकरा णामा ।
उत्तर-थंमे पुब्बाविएसु भाएसु चत्तारो ॥७६५॥

अर्थ :—उत्तर दिशावर्ती मानस्तम्भके आश्रित पूर्वादिक भागोमें क्रमशः हृदयानन्दा, महा-नन्दा, सुप्रतिबुद्धा और प्रभङ्करा नामक चार द्रह होते हैं ॥७६५॥

एवे सम-चउरस्ता, पवर-वहा पउम-पहुवि-संजुषा ।
टंकुक्किण्णा वेदिय-चउ-तोरण-रयणमाल-रमणिज्जा ॥७६६॥

अर्थ :—ये उपर्युक्त उत्तम ब्रह्म समचतुष्कोण, कमलादिकसे संयुक्त, टङ्कोत्कीर्ण और वेदिका, चार तोरण एवं रत्नमालाओंसे रमणीय होते हैं ॥७६६॥

सम्ब-ब्रह्माणं मन्त्रिमय, सोबाणा चउ-तडेसु पत्तेवर्कं ।

जल-कीडण-ओगोहं, संपुष्णं दिव्य-बन्धोहि ॥७६७॥

अर्थ :—सब ब्रह्मके चारों तटोंमेंसे प्रत्येक तटपर जलक्रीड़ाके योग्य दिव्य बन्धोंसे परिपूर्ण मणिमयी सोपान होते हैं ॥७६७॥

भावण-बैतर-जोइस-कप्पंवासी य कीडण-पयट्टा ।

णर-किण्णर-मिह्ण्णं, कुं कुम-पंकेण पिजरिवा ॥७६८॥

अर्थ :—इन ब्रह्ममें भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और कल्पवासी देव क्रीड़ामें प्रवृत्त होते हैं । ये ब्रह्म नर एवं किन्नर-युगलोके कुंकुम-पङ्कसे पीतवर्ण रहते हैं ॥७६८॥

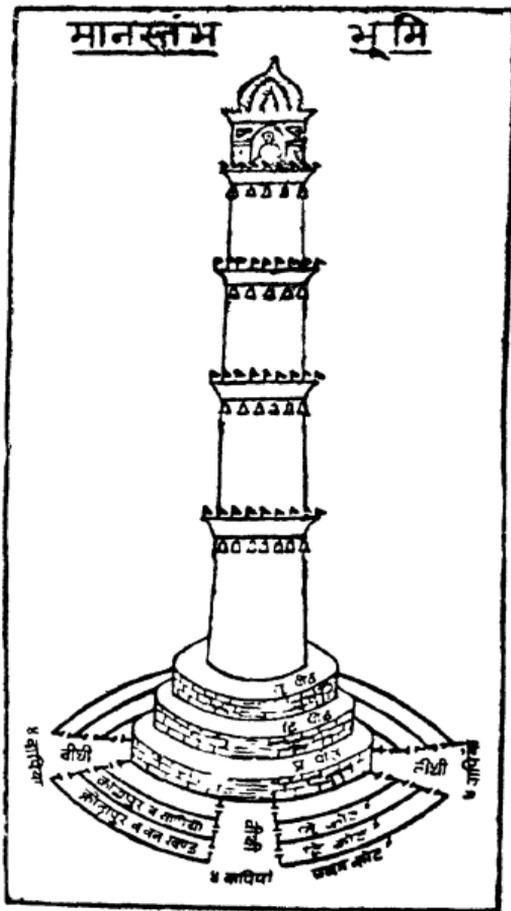
एक्केवक-कमल-संघे, बोहो कुं डारिण रिम्मल-जलाइं ।

सुर-णर-तिरिया तेसुं, धुब्बंतो चरस-रेणुओ ॥७६९॥

। माएत्थंभा समत्ता ।

अर्थ :—प्रत्येक कमलखण्ड अर्थात् ब्रह्मके आश्रित निर्मल जलसे परिपूर्ण दो-दो कुण्ड होते हैं, जिनमें देव, मनुष्य एवं तिर्यञ्च अपने परोकी धूलि धोया करते हैं ॥७६९॥

। मानस्तम्भोंका वर्णन समाप्त हुआ ।



प्रथम वेदीका निरूपण—

वर-रयण-केतु-तोरण-घंटा-जासाविएहि कुत्ताओ ।

आदिम-वेदीओ तहा, सव्वेसु वि समवसरणेसु ॥८००॥

अर्थ :—सभी समवसरणोंमें उत्तम रत्नमय खज्जा, तोरण और घण्टाओंके समूहादिकसे युक्त प्रथम वेदियाँ भी उसीप्रकार होती हैं ॥८००॥

गोउर-बुवार-वाउल-पहुवी सव्वान वेदियाण^१ तहा ।

अट्ठत्तर-सय-मंगल-णव-णिहि-बव्वाइ पुव्वं व ॥८०१॥

अर्थ :—सर्व वेदियोंके गोपुरद्वार, नौ निघियाँ, पुत्तलिका इत्यादि तथा एक सौ आठ मंगल द्रव्य पूर्वके सदृश ही होते हैं ॥८०१॥

णवरि विसेसो णिय-णिय-धूलिसालाण मूल-रंवेहि ।

मूलोवरि-भागेसु^२, समाण-वासाओ वेदीओ ॥८०२॥

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२
१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४

११	१०	९	८	७	६	५	४	३	२	१
१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	२८८	७२

। पठम-वेदी समता ।

अर्थ :—विशेषता मात्र यह है कि इन वेदियोंके मूल और उपरिम भागका विस्तार अपने-अपने धूलिसालोके मूल विस्तारके सदृश होता है ॥८०२॥

। प्रथम वेदीका कथन समाप्त हुमा ।

खाइय-खेत्ताणि^३ तवो, हवंति^४ वर-सच्छ-सलिल-पुष्पाइं ।

रिणय-रिणय-जिणय-उवर्णाहि, चउ-भजिरेहि सरिच्छ-गहिराणि ॥८०३॥

१. द. ब. क. ज. य. उ. तदा ।

२. द. ज. य. वेदियाण ।

३. द. ब. य. वेत्ताणि ।

४. द. ब. क. ज. य. उ. वरवत्त ।

१२५ | २२५ | १०० | १७५ | ७५ | १२५ | ५० | ७५ | २५ | ४५ | २० | ३५ |
 १५ | २५ | ४५ | १० | ३५ | १५ | २५ | ५ | १५ | ५ | ह्रस्वा ६ | ७ |

अर्थ :—इसके आगे उत्तम एव स्वच्छ जलसे परिपूर्ण और अपने-अपने जिनेन्द्रकी ऊँचाईके अनुसार भाग प्रमाण गहरे खातिका-क्षेत्र होते हैं ॥८०३॥

फुल्लंत-कुमुद-कुवलय-कमल-वनामोद-भर'-सुगंधीणि ।

मणिमय-सोबाणाणि, जुबाणि पक्खीहि^१ हंस-पट्टवीहि^२ ॥८०४॥

अर्थ :—ये खातिकाएँ फूले हुए कुमुद, कुवलय और कमल-वनोके आमोदसे सुगन्धित तथा मणिमय सोपानो एवं हंसादि पक्षियो सहित होती हैं ॥८०४॥

णिय-णिय-पढम-खिवीणं, जैत्तियमेरां लु वास-परिमाणं ।

णिय-णिय-विदिय-खिवीणं, तेत्तियमेरां च पत्तेयं ॥८०५॥

२६४ | २५३ | २४२ | २३१ | २२० | २०९ | १९८ | १८७ | १७६ | १६५ | १५४
 ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६

१४३ | १३२ | १२१ | ११० | ९९ | ८८ | ७७ | ६६ | ५५ | ४४ | ३३
 ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६ | ५७६

५५ | ११ |
 २८८ | ७२ |

अर्थ :—अपनी-अपनी प्रथम पृथिवीके विस्तारका जितना प्रमाण होता है, उतना ही विस्तार अपनी-अपनी प्रत्येक द्वितीय पृथिवीका भी हुआ करता है ॥८०५॥

षेत्तप्पासाव-खिंवि, केई णेच्छंति ताणं उच्चएसे ।

लाइय-खिवीण जोयणमुसहे सेसेसु कम-हीणं ॥८०६॥

अर्थ :—कोई-कोई आचार्य चैत्य-प्रासाद-भूमिको स्वीकार नहीं करते हैं । उनके उप-देशानुसार ऋषभदेवके समवसरणमें खातिका-भूमिका विस्तार एक योजन प्रमाण वा धौर शेष तीर्थक्षुरोंके समवसरणमें क्रमशः हीन-हीन वा ॥८०६॥

धूलीसातानां वित्थारे हि सहिय-खाइय-खेत्तानां कमसो रुंद-जोयराणि—

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४

७	६	५	४	३	५	४
२४	२४	२४	२४	२४	४८	४८

अर्थ :—धूलिसालके विस्तारके साथ खातिका-क्षेत्रका विस्तार क्रमशः इतने योजन रहता है । (तालिकामें देखिए)

तत्थ धूलीसालाण कमसो मूल-वित्थारो—

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८
१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३	५	४
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	५७६	५७६

अर्थ :—क्रमशः धूलिसालका मूल विस्तार (तालिकामें देखिए) ।

सग-सग धूलीसालाणं वित्थारेण विरहिदे सग-सग-खाइय-खेत्तानां वित्थारो—

२६४	२५३	२४२	२३१	२२०	२०९	१९८	१८७	१७६	१६५	१५४	१४३
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८
१३२	१२१	११०	९९	८८	७७	६६	५५	४४	३३	५५	४४
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	५७६	५७६

। खाइय-खेत्तानां ममत्ता ।

पाठान्तरम् ।

अपने-अपने धूलिसालोंके विस्तारसे रहित अपने-अपने खातिका-क्षेत्रोंका विस्तार । (तालिकामें देखिए)

खातिका-क्षेत्रका वर्णन समाप्त हुआ ।

तालिका : २०

खातिका आदि क्षेत्रोंका प्रमाण—

नं०	वेदियोंके मूल एवं उपरिम भागका विस्तार गा.८०२	खातिका क्षे.की गहराईका प्रमाण गा.८०३	दूसरी पृथिवी का विस्तार गाथा ८०५	धूलिसाल सहित खातिका क्षे.का विस्तार	प्रकारान्तरसे धूलिसालका मूल विस्तार	धूलिसाल रहित खातिका क्षेत्रका विस्तार	
१	३३३	धनुष	१२५ धनुष	१५ कोस	१ योजन	१६६६ घ०	२३ कोस
२	३१९	"	११२	"	३ कोस	१५२	"
३	३०५	"	१००	"	"	१५२	"
४	२९१	"	८७	"	"	१४५	"
५	२७७	"	७५	"	"	१३८	"
६	२६३	"	६२	"	"	१३१	"
७	२५०	"	५०	"	"	१२४	"
८	२३६	"	३७	"	"	११७	"
९	२२२	"	२५	"	"	११०	"
१०	२०८	"	२२	"	"	१०३	"
११	१९४	"	२०	"	"	९६	"
१२	१८०	"	१७	धनुष	"	९०	"
१३	१६६	"	१५	"	"	८३	"
१४	१५२	"	१२	"	"	७६	"
१५	१३८	"	१०	"	"	७०	"
१६	१२४	"	९	"	"	६३	"
१७	११०	"	७	"	"	५६	"
१८	९६	"	५	"	"	५०	"
१९	८२	"	४	"	"	४३	"
२०	६८	"	३	"	"	३६	"
२१	५४	"	२	"	"	३०	"
२२	४०	"	१	"	"	२४	"
२३	२६	नाथ	१	"	"	१८	"
२४	१२	"	१	"	"	१२	"

दूसरी वेदी एवं बल्ली क्षेत्रका विस्तार—

बिबियाओ वेदीओ, गिय-गिय-पडमिल्ल-वेबियाहि समा ।

एसो णवरि विसैसो, वित्थारो दुगुण-परिमाणं ॥८०७॥

वित्थारं दुगुण-दुगुणं होदि—

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११
७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२
१०	९	८	७	६	५	४	३	२	१				
७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	१४४	३६			

। बिदिय-वेदी-पमाण सम्मत्तं ।

अर्थ :—दूसरी वेदियाँ अपनी-अपनी पूर्व वेदिकाओंके सट्टण हैं । परन्तु विशेषता यह है कि इनका विस्तार दुगुने-दुगुने प्रमाण है ॥८०७॥

विस्तार दूना-दूना होता है (तालिकामे देखिए) ।

। द्वितीय वेदियोंका प्रमाण समाप्त हुआ ।

पुष्पाग-णाग-कुञ्जय - सयवत्तइमुत्त^१-पहुवि-जुत्ताणि ।

बल्ली-खेत्ताणि तदो^२, कीडण-गिरि-गुरुव^३-सोहाणि ॥८०८॥

मणि-सोबाण-मणोहर-पोक्खरणी-फुल्ल-कमल-संडाणि ।

ताणं रुंदो दुगुणो, लाइय-खेत्ताण-रुंदावो ॥८०९॥

२६४	२५३	२४२	२३१	२२०	२०९	१९८	१८७	१७६	१६५
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८
१५४	१४३	१३२	१२१	११०	९९	८८	७७	६६	५५
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८

। तदिय-बल्ली-खिदी-समत्ता ।

अर्थ :—इसके आगे पुष्पाग, नाग, कुञ्जक, शतपत्र एवं अतिमुक्त आदिसे संयुक्त, क्रीडा-पर्वतोंसे अतिशय शोभायमान और मणिमय-सोपानोंसे मनोहर, वापिकाओंके विकसित कमल-

समूहों सहित बल्ली-क्षेत्र होते हैं। इनका विस्तार छाविका-क्षेत्रोंके विस्तारसे दुगुना रहता है ॥८०८-८०९॥

। तृतीय-बल्ली-भूमि समाप्त हुई ।

दूसरा कोट—

तप्तो विदिया साला, धूलीसालाण' वण्णणेहि समा ।

दुगुणो रुंदो' दारा, रजदमया जक्ख-रक्खणा णवारी ॥८१०॥

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२
७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२

११	१०	९	८	७	६	५	४	३	५	१
७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	१४४	३६

। विदिय-माला समत्ता ।

अर्थ :—इसके आगे दूसरा कोट है, जिसका वर्णन धूलिसालोंके सदृश ही है परन्तु इतना विशेष है कि इसका विस्तार दुगुना है और इसके द्वार रजतमय हैं । यह कोट यक्ष जातिके देवों द्वारा रक्षित है ॥८१०॥

। द्वितीय कोट का वर्णन समाप्त हुआ ।

उपवन भूमि—

तत्तो चउत्थ-उववण-भूमोए असोय-सत्तपष्ण-वणा ।

चंपय-चूव-वणाइं, पुब्बादि-दिसासु राजंति ॥८११॥

अर्थ :—इसके आगे चौथी उपवन भूमि होती है, जिसमें पूर्वादि दिशाओंके क्रमसे अशोकवन, सप्तपर्णवन, चम्पकवन, और आम्रवन, ये चार वन शोभायमान होते हैं ॥८११॥

विविह-वणसंड-मंडण-विविह-णई-पुलिण-कीडण-गिरीहि ।

विविह-वर-वाविआहि, उववण-भूमोउ' रम्माओ ॥८१२

अर्थ :—ये उपवन भूमियाँ विविध प्रकारके वन-समूहसे मण्डित, विविध नदियोंके पुलिन और क्रीड़ा पर्वतो से तथा अनेक प्रकार की उत्तम वापिकाओंसे रमणीय होती है ॥८१२॥

एककेवकाए उषवण-खिबिए तरबो असोप-सत्तबला ।

चंपय^१-बूवा सुं'दर-रूवा चचारि चत्तारि ॥८१३॥

अर्थ :—एक-एक उपवन-भूमिमें अशोक, सप्तच्छद, चम्पक एव आम्र, ये चार-चार सुन्दर रूपवाले वृक्ष होते हैं ॥८१३॥

चेत्यवृक्षो की ऊंचाई एव जिन-प्रतिमाएँ—

चामर-पहुवि-जुवाणं, चेत्त-तरूणं हबंति उच्छेहा^२ ।

जिय-बिय-जिण-उदएहि, बारस-गुणिदेहि सारिच्छा ॥८१४॥

६००० । ५४०० । ४८०० । ४२०० । ३६०० । ३००० । २४०० । १८०० ।

१२०० । १०८० । ९६० । ८४० । ७२० । ६०० । ५४० । ४८० । ४२० ।

३६० । ३०० । २४० । १८० । १२० । २७ । २१ ।

अर्थ :—चामरादि सहित चैत्य-वृक्षोकी ऊंचाई बारहसे गुणित अपने-अपने तीर्थकरोंकी ऊंचाईके सदृश होती है ॥८१४॥

मणिमय-जिण-पडिमाओ, अहु-महापाडिहेर-जुसाओ^३ ।

एककेवकसिंत्त चेत्तदुबुमम्मि चत्तारि चत्तारि ॥८१५॥

अर्थ :—एक-एक चैत्यवृक्षके आश्रित घाट महाप्रातिहार्योंसे संयुक्त चार-चार मणिमय जिन-प्रतिमाएँ होती हैं ॥८१५॥

१. द. पञ्चवसुवा सुन्दरबूवा, ब. व. पञ्चवसुवा सुन्दरबूवा । २. द. व. क. अ. व. उ. उच्छेही ।

३. द. व. क. अ. व. उ. उंचुत्तो ।

धन्वपुत्र गृभिः-



सात भव निरीक्षण—

उबवण-वावि-जलेोहं, सिता पेण्छति एक-भव-आइं ।

तस्स णिरिक्खण-मेत्ते, सस-भवातोद-भावि-जावीओ ॥८१६॥

अर्थ :—उपवनकी वापिकाओके जलसे अभिषिक्त जन-समूह एक भवजाति (जन्म) को देखते हैं, तथा उनके (वापीके जलमे) निरीक्षण करने पर अतीत-सुखं अनागत-सम्बन्धी सात भव-जातियोको देखते हैं ॥८१६॥

विशेषार्थः—समवसरणकी उपवन भूमिमें स्थित बापिकाओंके जलसे स्नान करने पर वर्तमान भवके आगे-पीछेकी बात जानते हैं और बापिकाओंके जलमे देखने पर तीन अतीतके, तीन भावी और एक वर्तमान का इसप्रकार सात भव देखते हैं ।

मानस्तम्भका विवेचन- -

सालत्तय-परिअरिया', पीठ-त्तय-उवरि माणथंभा य ।

चत्तारो चत्तारो, एककेक्के चेत-रुक्खम्मि ॥८१७॥

अर्थ :—एक-एक चेत्यवृक्षके आश्रित तीन कोठोमे वेष्टित एवं तीन पीठोके ऊपर चार-चार मानस्तम्भ होने हैं ॥८१७॥

सहिदा वर-वावोहि, कमलुप्पल-कुमुद-परिमलित्ताहि^१ ।

सुर-णर-मिहुण-तणुगय-कुं कुम-पंकेहि पिजर-जलाहि ॥८१८॥

अर्थ :—ये मानस्तम्भ कमल, उत्पल एवं कुमुदोकी सुगन्धमे युक्त तथा देव और मनुष्य-युगलांके शरीरमे निकली हुई केसरके पङ्कसे पीत जलवाली उत्तम बापिकाओ सहित होते हैं ॥८१८॥

कत्थ वि हम्मा रम्मा, कोडण-सालाओ कत्थ वि वराओ ।

कत्थ वि णड्डय-साला, णच्चंत सुरंगणाइष्णा^३ ॥८१९॥

अर्थ :—वहाँ पर कही रमणीय भवन, कही उत्तम क्रोडनशाला और कहीं नृत्य करती हुई देवाङ्गनाओसे आकीर्ण नाट्यशालाएँ होती हैं ॥८१९॥

बहुभूमि-भूसणया, सव्वे वर-विविह-रयण-णिम्मविदा ।

एदे पंति-कमेणं, उववण-भूमोसु सोहंति ॥८२०॥

अर्थ :—बहुत भूमियो (खण्डो) मे भूषित तथा उत्तम और नानाप्रकारके रत्नोसे निर्मित ये सब भवन पंक्ति क्रमसे उपवनभूमियोमे शोभायमान होते हैं ॥८२०॥

१. द. परिहरिया । २. द. परिमलुत्ताहि । ३. व. सुरंगणाइगणा, क. उ. णच्चंति सुरगणा

ताभं हम्मादीणं, सव्वेसु^१ होंति समवसरणेषु^२ ।
 गिय-गिय^३-जिण-उवर्णाहं, बारस-गुणिवेहि सम-उवया ॥८२१॥

६००० । ५४०० । जेमि १२० पास २७ । वीर २१ ।

अर्थ :—सर्व समवसरणोमे इन हम्म्यादिकोंकी ऊँचाई बारहसे गुणित अपने-अपने तीर्थकरोकी ऊँचाईके बराबर होती है ॥८२१॥

गिय-गिय-पहम-खिवीणं, जेतिय-भेत्तं ह्व रुं व-परिमाणं ।
 गिय-गिय-वण-भूमिणं, तेत्तिय-भेत्तं ह्वे दुगुणं ॥८२२॥

२६४ | २५३ | २४२ | २३१ | २२० | २०९ | १९८ | १८७ | १७६ |
 २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ |

१६५ | १५४ | १४३ | १३२ | १२१ | ११० | ९९ | ८८ | ७७ | ६६ | ५५ |
 २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ |

४४ | ३३ | ५५ | ४४ |
 २८८ | २८८ | ५७६ | ५७६ |

। तुरिम^३-वण-भूमि समत्ता ।

अर्थ :—अपनी-अपनी प्रथम पृथिवीके विस्तारका जितना प्रमाण होता है, उससे दूना प्रमाण अपनी-अपनी उपवन-भूमियोके विस्तारका होता है ॥८२२॥

। चतुर्थ वन-भूमिका कथन समाप्त हुआ ।

तालिका २१

बेदी, वल्लीभूमि, कोट, चेत्यवृक्ष, प्रासाव एवं उपवनभूमिका प्रमाण—

न०	दूसरी बेदीका विस्तार गाथा ८०७	वल्लीभूमिका विस्तार गाथा ८०६	दूसरे कोटका विस्तार गाथा ८१०	चेत्यवृक्षोकी ऊँचाई गाथा ८१४	प्रासादोकी ऊँचाई गाथा ८२१	उपवनभूमिका विस्तार गाथा ८२२
१	६६६३ घनुष	३३ कोस	६६६३ घनुष	६००० घनुष	६००० घनुष	३३ कोस
२	६३८६ " "	३३ " "	६३८६ " "	५४०० " "	५४०० " "	३३ " "
३	६११३ " "	३३ " "	६११३ " "	४८०० " "	४८०० " "	३३ " "
४	५८३३ " "	३३ " "	५८३३ " "	४२०० " "	४२०० " "	३३ " "
५	५५५३ " "	३३ " "	५५५३ " "	३६०० " "	३६०० " "	३३ " "
६	५२७३ " "	२७ " "	५२७३ " "	३००० " "	३००० " "	२७ " "
७	५०० " "	२७ " "	५०० " "	२४०० " "	२४०० " "	२७ " "
८	४७२३ " "	२७ " "	४७२३ " "	१८०० " "	१८०० " "	२७ " "
९	४४४३ " "	२७ " "	४४४३ " "	१२०० " "	१२०० " "	२७ " "
१०	४१६३ " "	२७ " "	४१६३ " "	१०८० " "	१०८० " "	२७ " "
११	३८८३ " "	२७ " "	३८८३ " "	९६० " "	९६० " "	२७ " "
१२	३६१३ " "	१७ " "	३६१३ " "	८४० " "	८४० " "	१७ " "
१३	३३३३ " "	१७ " "	३३३३ " "	७२० " "	७२० " "	१७ " "
१४	३०५३ " "	१७ " "	३०५३ " "	६०० " "	६०० " "	१७ " "
१५	२७७३ " "	१७ " "	२७७३ " "	५४० " "	५४० " "	१७ " "
१६	२५० " "	१७ " "	२५० " "	४८० " "	४८० " "	१७ " "
१७	२२२३ " "	१७ " "	२२२३ " "	४२० " "	४२० " "	१७ " "
१८	१९४३ " "	१७ " "	१९४३ " "	३६० " "	३६० " "	१७ " "
१९	१६६३ " "	१७ " "	१६६३ " "	३०० " "	३०० " "	१७ " "
२०	१३८३ " "	१७ " "	१३८३ " "	२४० " "	२४० " "	१७ " "
२१	१११३ " "	१७ " "	१११३ " "	१८० " "	१८० " "	१७ " "
२२	८३३ " "	१७ " "	८३३ " "	१२० " "	१२० " "	१७ " "
२३	६९३ " "	१७ " "	६९३ " "	७७ " "	७७ " "	१७ " "
२४	५५३ " "	१७ " "	५५३ " "	२१ " "	२१ " "	१७ " "

दो-दोसुं पासेसुं, सव्व-वण-प्पणिधि-सव्व-वीहीणं ।
 दो-दो णट्टय-साला, ताण पुढं आविमट्ट-सालासु ॥८२३॥
 भावण-सुर-कण्णाओ, णच्चन्ते कप्पवासि-कण्णाओ ।
 अग्गिम-अड-सालासुं, पुब्बा' व सुवण्णणा सट्वा ॥८२४॥

। गट्टयसाला समत्ता ।

अर्थ :—सर्व वनोंके आश्रित सर्व वीथियोंके दोनो पार्श्वभागोंमें दो-दो नाट्यशालाएँ होती हैं । इनमें से आदिकी आठ नाट्यशालाओमें भवनवामिनी देव-कन्याएँ और इससे आगेकी आठ नाट्यशालाओमें कल्पवासिनी कन्याएँ नृत्य करती हैं । इन नाट्य-शालाओका सुन्दर वर्णन पूर्वके सट्टश ही है ॥८२३-८२४ ॥

। नाट्यशालाओका कथन समाप्त हुआ ।

तदियाओ वेदीओ, ह्वन्ति णिय-बिबिय-वेवियाहि समा ।
 णवरि बिसेसो एसो, जक्खिदा दार-रक्खणया ॥८२५॥

। तदिया वेदी ममत्ता ।

अर्थ :—तीसरी वेदियाँ अपनी-अपनी दूसरी वेदियोंके सट्टश होती हैं । केवल विशेषता यह है कि यहाँ पर यक्षेन्द्र द्वार-रक्षक हुआ करते हैं ॥८२५॥

। तृतीय वेदी समाप्त हुई ।

ध्वज-भूमिका वर्णन—

तत्तो धय-भूमिण, विठ्ठ-धया ह्वन्ति ते च दस-भेया ।
 सीह-गय-वसह-खगवड-सिहि-ससि-रवि-हंस-पउम-चक्का-य ॥८२६॥

अर्थ :—इसके आगे ध्वज-भूमिमें सिंह, गज, वृषभ, गरुड, मयूर, चन्द्र, सूर्य, हंस, पक्ष और चक्र इन चिह्नोंसे विहित दस प्रकारकी दिव्य ध्वजाएँ होती हैं ॥८२६॥

अट्टुत्तर^१-सय-सहिया, एक्केक्का तं पि अट्टु-अहिय-सया ।

खुल्लय-धय-संजुसा, पत्तेक्कं चउ-विसामु-फुडं ॥८२७॥

अर्थ :—चारों दिशाओंमेंसे प्रत्येक दिशामें इन दस प्रकारकी ध्वजाओंमें से एक-एक ध्वजा एक सौ आठ रहती है और इनमें से भी प्रत्येक ध्वजा अपनी एक सौ आठ क्षुद्रध्वजाओंसे सयुक्त होती है ॥८२७॥

सुण्ण-अड-अट्ट-णभ-सग-चउक्क-अंक्कमेण-मिलिदाण ।

सन्व-धयाणं संखा, एक्केक्के समवसरण्हि ॥८२८॥

। ४७०८८० ।

अर्थ :—शून्य, आठ, आठ, शून्य, सात एव चार अकोके क्रमशः मिलाने पर जो सख्या उत्पन्न हो उतनी ध्वजाएँ एक-एक समवसरणमें हुआ करती हैं ॥८२८॥

विशेषार्थ :—१०-१० प्रकारकी महाध्वजाएँ चारो दिशाओंमें हैं, अतः $१० \times ४ = ४०$ । प्रत्येक महाध्वजा १०८, १०८ है, अतः $१०८ \times ४० = ४३२०$ कुल महाध्वजाएँ हुईं । इनमेंसे प्रत्येक महाध्वजा १०८, १०८ क्षुद्र ध्वजाओं सहित हैं । इसप्रकार $(४३२० \times १०८ = ४६६५६०) + ४३२० = ४७०८८०$ कुल ध्वजाएँ एक समवसरणमें होती हैं ।

संलग्गा सयल-धया, कणयत्थंभेसु रयण-खच्चिदेसु ।

अंभुच्छेहो णिय-णिय-जिण^२-तणु-उदएहि बारस-हदोहि ॥८२९॥

६००० । ५४०० । ४८०० । ४२०० । ३६०० । ३००० । २४०० । १८०० ।

१२०० । १०८० । ९६० । ८४० । ७२० । ६०० । ५४० । ४८० । ४२० ।

३६० । ३०० । २४० । १८० । १२० । २७ । २१ ।

अर्थ :—समस्त ध्वजाएँ रत्नोसे खचित स्वर्णमय स्तम्भोमें सबल रहती है । इन स्तम्भोंकी ऊँचाई अपने-अपने तीर्थकरोके शरीरकी ऊँचाईसे बारह-गुणी हुआ करती है ॥८२९॥

स्तम्भोंको विस्तार—

उसहम्मि थंभ-हंवं, चउसट्ठी-अहिय-नु-सय-पब्बाणि ।

तिय-भजिदाणि कमसो, एक्करसूणाणि णेमि-पज्जंतं ॥८३०॥

१. ब. उ. अट्टुत्तरसहिए । २. द जिण अणु उदएहि, ज उ. जिण जिणु उदएहि ।

पासस्मि शंभ-हंदा, पण्वा पणवण्ण छक्क-पविहस्ता ।

अडवाला छक्क-हिदा, णिहिट्टा वडुमाणम्मि ॥८३१॥

२६४ | २५३ | २४२ | २३१ | २२० | २०६ | १६८ | १८७ | १७६ | १६५ | १५४ |

३ | ३ | ३ | ३ | ३ | ३ | ३ | ३ | ३ | ३ | ३ |

अर्थ :—ऋषभदेवके समवसरणमे इन स्तम्भोका विस्तार तीनसे भाजित दो सौ चौंसठ अंगुल था । फिर इसके आगे नेमिनाथ पर्यन्त क्रमशः भाज्य राशि मे ग्यारह-ग्यारह कम होते गये हैं । पार्वनाथके समवसरणमे इन स्तम्भोका विस्तार छह से विभक्त पचपन अंगुल और वर्धमान स्वामीके छहसे भाजित चवालीस अंगुल प्रमाण कहा गया है ॥८३०-८३१॥

ध्वजदण्डोका अन्तर—

धय-दंडाणं अंतरमुसह-जिणे छस्सयाणि चावाणि ।

अडबीसेहि हिदाणि, पण-कदि-हीणाणि जाव णेमि-जिणं ॥८३२॥

६०० | ५७५ | ५५० | ५२५ | ५०० | ४७५ | ४५० | ४२५ | ४०० | ३७५ | ३५० |

२४ | २४ | २४ | २४ | २४ | २४ | २४ | २४ | २४ | २४ | २४ |

पणुबीस-अहिय-धणु-सय 'अडवाल-हिदं च पासणाहम्मि ।

बीर - जिणे एक - सयं, तेत्तिय - मेत्तेहि अवहरिदं ॥८३३॥

| १२५ | १०० |
| ४८ | ४८ |

अर्थ :—ऋषभ जिनेन्द्रके समवसरणमें ध्वज-दण्डोका अन्तर चौबीससे भाजित छह सौ धनुष प्रमाण था । फिर इसके आगे नेमि-जिनेन्द्र पर्यन्त भाज्य राशिमेसे क्रमशः उत्तरोत्तर पाँचका वर्ग अर्थात् पचबीस-पचबीस कम होते गये हैं । पार्वनाथ तीर्थकरके समवसरणमे इन ध्वज-दण्डोका अन्तर अडतालीससे भाजित एक सौ पचवीस धनुष एव बीर जिनेन्द्रके समवसरण मे इतने मात्र (अडतालीस) से भाजित एक सौ धनुष-प्रमाण था ॥८३२-८३३॥

ध्वजभूमियोंका विस्तार—

णिय-णिय-बल्लि-खिबीरां, जेतिय-मेत्तो हुवेवि बित्त्यारो ।

णिय - णिय - धय - भूमिणं, तेत्तिय - मेत्तो मुण्येयब्बो ॥८३४॥

२६४	२५३	२४२	२३१	२२०	२०९	१९८	१८७	१७६	१६५	१५४	१४३
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८
१३२	१२१	११०	९९	८८	७७	६६	५५	४४	३३	२२	११
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८

। पंचम-धय-भूमी समत्ता ।

अर्थ :— अपनी-अपनी लता-भूमियोंका जितना विस्तार होता है उतना ही विस्तार अपनी-अपनी ध्वज-भूमियों का भी जानना चाहिए ॥८३४॥

। पंचम ध्वजभूमिका वर्णन समाप्त हुआ ।

तीसरे कोटका विस्तार—

तदिय साला अज्जुण-वण्णा णिय-धूलिसाल-सरिसणुणा ।

णवरि य 'वुणुणो वासो, भावणया वार-रक्खणया ॥८३५॥

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८
१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३	२	१
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८

। तदिय-साला समत्ता ।

अर्थ :— इसके आगे चाँदीके सदृश वर्णवाला तीसरा कोट अपने धूलिसाल कोटके ही सदृश होता है । परन्तु यहाँ इतनी विशेषता है कि इस कोटका विस्तार दूना होता है और इसके द्वाररक्षक, भवनवासी देव होते हैं ॥८३५॥

। तीसरे कोटका वर्णन समाप्त हुआ ।

कल्पभूमिका विस्तार—

ततो छट्टी भूमौ, बलविह - कल्पवृक्षोऽसि संयुक्ता ।

गिय - गिय - वय - भूमौर्चं वास-पद्मा-कल्पतरु-भूमौ ॥८३६॥

२६४	२५३	२४२	२३१	२२०	२०९	१९८	१८७	१७६	१६५	१५४	१४३
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८
१३२	१२१	११०	९९	८८	७७	६६	५५	४४	३३	२२	११
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८

अर्थ :—इसके आगे छठी कल्पभूमि है, जो दस प्रकारके कल्पवृक्षोसे परिपूर्ण और अपनी-अपनी ध्वज-भूमियोके विस्तार प्रमाण विस्तार वाली होती है ॥८३६॥

[तालिका · २२ पृष्ठ म० २५३ पर देखिये]

कल्पभूमियोका वर्णन—

पानग-तूरियंगा, भूसण-वत्थंग-भोयगंगा य ।

आलय-दीविय'-भायण-माला-तेयगया तरओ ॥८३७॥

अर्थ :—इस भूमिमे पानाङ्ग, तूर्याङ्ग, भूषणाङ्ग, वस्त्राङ्ग, भोजनाङ्ग, आलयाङ्ग, दीपाङ्ग, भाजनाङ्ग, मालाङ्ग और तेजाङ्ग ये दस प्रकारके कल्पवृक्ष होते हैं ॥८३७॥

ते पाण - तूर - भूसण - वत्थाहारालयप्पदीवाणि ।

भायण - माला - जोदिणि देती संकप्प - मेत्तेण ॥८३८॥

अर्थ :—वे (कल्पवृक्ष मनुष्योको) सकल्प मात्रसे पानक, वाद्य, आभूषण, वस्त्र, भोजन, प्रासाद, दीपक, बर्तन, मालाएँ एव तेजयुक्त पदार्थ देते हैं ॥८३८॥

स्तम्भों, ध्वजदण्डों एवं ध्वजभूमियों तथा तृतीय कोट का प्रमाण						
न	स्तम्भों की ऊँचाई गाथा ८२९	स्तम्भों का विस्तार गाथा ८३०	ध्वजदण्डों का अन्तर गाथा ८३२	ध्वजभूमियों का विस्तार गाथा ८३४	तृतीय कोट का विस्तार गाथा ८३५	कल्प भूमिक विस्तार ८३६
१	६०० धनुष	३ $\frac{२}{३}$ हाथ	२५ धनुष	३ $\frac{२}{३}$ कोस	६६६ $\frac{२}{३}$ धनुष	३ $\frac{२}{३}$ कोस
२	५४०० धनुष	३ $\frac{३७}{७२}$ हाथ	२३ $\frac{२३}{२४}$ धनुष	३ $\frac{३७}{७२}$ कोस	६३२ $\frac{३७}{७२}$ धनुष	३ $\frac{३७}{७२}$ कोस
३	४८०० धनुष	३ $\frac{३३}{३६}$ हाथ	२२ $\frac{३३}{३६}$ धनुष	३ $\frac{३३}{३६}$ कोस	६११ $\frac{३३}{३६}$ धनुष	३ $\frac{३३}{३६}$ कोस
४	४२०० धनुष	३ $\frac{५}{२४}$ हाथ	२१ $\frac{५}{२४}$ धनुष	३ $\frac{५}{२४}$ कोस	६५० $\frac{५}{२४}$ धनुष	३ $\frac{५}{२४}$ कोस
५	३६०० धनुष	३ $\frac{१}{१८}$ हाथ	२० $\frac{१}{१८}$ धनुष	३ $\frac{१}{१८}$ कोस	६५५ $\frac{१}{१८}$ धनुष	३ $\frac{१}{१८}$ कोस
६	३००० धनुष	२ $\frac{६५}{७२}$ हाथ	१६ $\frac{६५}{७२}$ धनुष	२ $\frac{६५}{७२}$ कोस	६१७ $\frac{६५}{७२}$ धनुष	२ $\frac{६५}{७२}$ कोस
७	२४०० धनुष	२ $\frac{३}{४}$ हाथ	१८ $\frac{३}{४}$ धनुष	२ $\frac{३}{४}$ कोस	६०० $\frac{३}{४}$ धनुष	२ $\frac{३}{४}$ कोस
८	१८०० धनुष	२ $\frac{५३}{७२}$ हाथ	१७ $\frac{५३}{७२}$ धनुष	२ $\frac{५३}{७२}$ कोस	६४७ $\frac{५३}{७२}$ धनुष	२ $\frac{५३}{७२}$ कोस
९	१२०० धनुष	२ $\frac{४३}{७२}$ हाथ	१६ $\frac{४३}{७२}$ धनुष	२ $\frac{४३}{७२}$ कोस	६४४ $\frac{४३}{७२}$ धनुष	२ $\frac{४३}{७२}$ कोस
१०	१०८० धनुष	२ $\frac{७}{२४}$ हाथ	१५ $\frac{७}{२४}$ धनुष	२ $\frac{७}{२४}$ कोस	६४६ $\frac{७}{२४}$ धनुष	२ $\frac{७}{२४}$ कोस
११	९६० धनुष	२ $\frac{५}{२४}$ हाथ	१४ $\frac{५}{२४}$ धनुष	२ $\frac{५}{२४}$ कोस	६६५ $\frac{५}{२४}$ धनुष	२ $\frac{५}{२४}$ कोस
१२	८४० धनुष	१ $\frac{७५}{७२}$ हाथ	१३ $\frac{७५}{७२}$ धनुष	१ $\frac{७५}{७२}$ कोस	६६१ $\frac{७५}{७२}$ धनुष	१ $\frac{७५}{७२}$ कोस
१३	७२० धनुष	१ $\frac{५}{२४}$ हाथ	१२ $\frac{५}{२४}$ धनुष	१ $\frac{५}{२४}$ कोस	६३३ $\frac{५}{२४}$ धनुष	१ $\frac{५}{२४}$ कोस
१४	६०० धनुष	१ $\frac{४९}{७२}$ हाथ	११ $\frac{४९}{७२}$ धनुष	१ $\frac{४९}{७२}$ कोस	६०५ $\frac{४९}{७२}$ धनुष	१ $\frac{४९}{७२}$ कोस
१५	५४० धनुष	१ $\frac{३६}{३६}$ हाथ	१० $\frac{३६}{३६}$ धनुष	१ $\frac{३६}{३६}$ कोस	६४७ $\frac{३६}{३६}$ धनुष	१ $\frac{३६}{३६}$ कोस
१६	४८० धनुष	१ $\frac{३}{८}$ हाथ	९ $\frac{३}{८}$ धनुष	१ $\frac{३}{८}$ कोस	६४० $\frac{३}{८}$ धनुष	१ $\frac{३}{८}$ कोस
१७	४२० धनुष	१ $\frac{३}{३}$ हाथ	८ $\frac{३}{३}$ धनुष	१ $\frac{३}{३}$ कोस	६२२ $\frac{३}{३}$ धनुष	१ $\frac{३}{३}$ कोस
१८	३६० धनुष	१ $\frac{७२}{७२}$ हाथ	७ $\frac{७२}{७२}$ धनुष	१ $\frac{७२}{७२}$ कोस	६४४ $\frac{७२}{७२}$ धनुष	१ $\frac{७२}{७२}$ कोस
१९	३०० धनुष	२२ अगुल	६ $\frac{१}{४}$ धनुष	$\frac{११}{१२}$ कोस	६६६ $\frac{१}{४}$ धनुष	$\frac{११}{१२}$ कोस
२०	२४० धनुष	१० $\frac{१}{३}$ अगुल	५ $\frac{१}{२४}$ धनुष	$\frac{५५}{७२}$ कोस	६६८ $\frac{१}{३}$ धनुष	$\frac{५५}{७२}$ कोस
२१	१८० धनुष	१४ $\frac{१}{५}$ अगुल	४ $\frac{१}{२४}$ धनुष	$\frac{११}{१८}$ कोस	१११ $\frac{१}{५}$ धनुष	$\frac{११}{१८}$ कोस
२२	१२० धनुष	११ अगुल	३ $\frac{१}{८}$ धनुष	$\frac{११}{२४}$ कोस	६२ $\frac{१}{५}$ धनुष	$\frac{११}{२४}$ कोस
२३	२७ धनुष	६ $\frac{१}{५}$ अगुल	२ $\frac{१}{४८}$ धनुष	$\frac{५५}{१४४}$ कोस	६६ $\frac{१}{५}$ धनुष	$\frac{५५}{१४४}$ कोस
२४	२१ धनुष	७ $\frac{१}{३}$ अगुल	२ $\frac{१}{१२}$ धनुष	$\frac{११}{३६}$ कोस	५५ $\frac{१}{५}$ धनुष	$\frac{११}{३६}$ कोस

कत्थं वि वर-वाचीओ, कमलुप्पल-कुमुद-परिमलित्ताओ ।

सुर-गर-मिहण-तणुगय - कुं कुम - पंकेहि पिजर-जलाओ ॥८३६॥

कत्थं वि हम्माम्मा रम्माम्मा, कीडण-सालाओ कत्थं वि वराओ ।

कत्थं वि पेक्खण-साला, गिञ्जंत-जिणिद-जय-वरिया ॥८४०॥

अर्थ :- कल्प भूमिमें कही पर कमल, उत्पल एवं कुमुदोकी सुगन्धसे परिपूर्ण तथा देव एवं मनुष्य युगलोके शरीरसे निकले हुए केशरके कर्दमसे पीत-जलवानी उत्तम वापिकाएँ, कही पर रमणीय प्रासाद, कही पर उत्तम क्रीडन-शालाएँ और कहीपर जिनेन्द्रदेवके विजय-चरित्रके गीतोसे युक्त प्रेक्षण (नृत्य देखनेकी) शालाएँ होती हैं ॥८३६-८४०॥

बहु-भूमि-भूसणया, सव्वे वर-विविह-रयण-णिम्मविदा ।

एदे पंति-कमेणं, सीहंते कप्प - भूमोसु ॥८४१॥

अर्थ :- उत्तम नाना रत्नोमे निर्मित और अनेक खण्डो (मजिनो) मे सुशोभित ये सब हर्म्यादिक (प्रासाद, क्रीडाग्रह, प्रेक्षाग्रह आदि) पक्ति क्रममे इन कल्पभूमियोमे शोभायमान होते है ॥८४१॥

चत्तारो चत्तारो, पुव्वादिसु^१ महा णमेह-मंदारा ।

संताण-पारिजादा, सिद्धत्था^२ कप्प - भूमोसु ॥८४२॥

अर्थ :- कल्पभूमियो पर पूर्वादिक दिशाओमे नमक, मन्दार, मन्तानक और पारिजात, ये चार-चार महान् सिद्धार्थ वृक्ष होते हैं ॥८४२॥

सव्वे सिद्धत्थ-तरू, तिप्पायारा ति^३-मेहलसिरत्था ।

एक्केक्कस्स य तरुणो, मूले चत्तारि चत्तारि ॥८४३॥

सिद्धाण पडिमाओ, विचित्त-पीढाओ रयण-मड्डयाओ ।

वंदण - मेत्त - णिवारिय - दुरंत - ससार - भीदीओ ॥८४४॥

अर्थ :- ये सब सिद्धार्थवृक्ष तीन कोटोसे युक्त और तीन-मेखलाओके ऊपर स्थित होते है । इनमें मे प्रत्येक वृक्षके मूल भागमे अदभुत पीढोसे सयुक्त और वन्दना करने मात्रसे ही दुरन्त ससारके भयको नष्ट करनेवाली ऐसी रत्नमय चार-चार प्रतिमाएँ सिद्धोकी होती हैं ॥८४३-८४४॥

सालराय-संबेदिय-ति-पीठ-उबरम्मि भाजबंभाओ ।

चसारो चसारो, सिद्धत्थ-तरम्मि एक्केक्के ॥८४५॥

अर्थ :—एक-एक सिद्धार्थ वृक्षके छाश्रित, तीन कोटोंसे संबेष्टित पीठत्रयके ऊपर चार-चार मानस्तम्भ होते हैं ॥८४५॥

कप्पतरू सिद्धत्था, कीडण - सालाओ तालु 'पासादा ।

णिय-णिय-जिण-उबर्योह्णं बारस-गुणिवेहि सम-उबया ॥८४६॥

६००० । ५४०० । ४८०० । ४२०० । ३६०० । ३००० । २४०० । १८०० ।

१२०० । १०८० । ९६० । ८४० । ७२० । ६०० । ५४० । ४८० । ४२० ।

३६० । ३०० । २४० । १८० । १२० । २७ । २१ ।

। छट्ट भूमि-समत्ता ।

अर्थ :—कल्पभूमियोंमें स्थित सिद्धार्थ-कल्पवृक्ष, कीडणशालाएँ एवं प्रासाद बारहसे गुणित अपने-अपने जिनेन्द्रकी ऊँचाई सदृश ऊँचाई वाले होते हैं ॥८४६॥

। छठी भूमिका वर्णन समाप्त हुआ ।

कल्पतरुभूमि स्थित नाट्यशालाएँ—

कप्प-तरु-भूमि-पणिसु, बोहि पडि दिव्व-रयण-णिम्मिबिवा ।

चउ चउ णट्टय-साला, णिय-चेत्त-तरुहि सरिस-उब्बेहो ॥८४७॥

६००० । ५४०० । ४८०० । ४२०० । ३६०० । ३००० । २४०० । १८०० ।

१२०० । १०८० । ९६० । ८४० । ७२० । ६०० । ५४० । ४८० । ४२० । ३६० ।

३०० । २४० । १८० । १२० । २७ । २१ ।

अर्थ :—कल्पतरु-भूमिके पार्श्वभागोंमें प्रत्येक कीचीके छाश्रित दिव्य रत्नोंसे निर्मित और अपने चैत्य-वृक्षोंके सदृश ऊँचाई वाली चार-चार नाट्यशालाएँ होती हैं ॥८४७॥

पण-भूमि-भूसिदाओ, सच्चाओ दु-तीस-रंग-भूमिओ ।
जोइसिय - कण्णयाहि, पणच्चमाणाहि रम्माओ ॥८४८॥

। णट्टयसाला समत्ता ।

अर्थ :—सर्व नाट्यशालाएँ पाँच भूमियो (खण्डो-मजिलो) से विभूषित, बत्तीस रङ्ग-भूमियो सहित और नृत्य करती हुई ज्योतिषी कन्याओसे रमणीय होती है ॥८४८॥

। नाट्यशालाओका वर्णन समाप्त हुआ ।

चतुर्थ वेदी—

तत्तो चउत्थ-वेदी, हवेदि णिय-पढम-वेदिया-सरिसा ।
णवरि विसेसो भावण - देवा दाराणि रक्खन्ति ॥८४९॥

। तुरिय-वेदी समत्ता ।

अर्थ :—इसके याग अपना प्रथम वेदी सदृश चौथी वेदी होती है । विशेषता मात्र इतनी है कि यहाँ द्वारो की रक्षा भवनवासी देव करने है ॥८४९॥

। चौथी वेदीका वर्णन समाप्त हुआ ।

भवन-भूमियाँ—

तत्तो भवण-खिदीओ, भवणाइं तामु रयण-रइवाई ।
धुव्वंत - धय - 'बडाइं, वर - तोरण - तुंग - दाराइं ॥८५०॥

अर्थ :—इससे आगे भवन-भूमियाँ होती है; जिनमे फहराती हुई ध्वजा-पताकाओ सहित एव उत्तम तोरण-युक्त उन्नत द्वारो वाले रत्न-निर्मित भवन होते हैं ॥८५०॥

सुर-मिहुण - गेय - णच्चण-तूर-रवेहि जिणाभिसेएहि ।
सोहंते ते भवणा, एक्केक्के भवण - सूमीसु ॥८५१॥

अर्थ :—भवन-भूमियोपर स्थित वे एक-एक भवन सुर-युगलोंके गीत, नृत्य एवं बाजोंके शब्दोंसे तथा जिनाभिषेकोसे शोभायमान होते हैं ॥८५१॥

उचवरण-पहुर्वि सव्वं, पुव्वं विय भवण-भूमि-विवसंभो ।

णिय-पडम-वेदि-वासे, गुणिबे एक्कारसेहि सारिच्छा ॥८५२॥

२६४	२५३	२४२	२३१	२२०	२०९	१९८	१८७	१७६	१६५	१५४	१४३
५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६

१३२	१२१	११०	९९	८८	७७	६६	५५	४४	३३	२२	११
५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	११५२	११५२

। भवणस्त्रिदो समस्ता ।

अर्थ :—यहाँ उपवनादिक सब पूर्व सदृश ही होते हैं । उपयुक्त भवन-भूमियोगा विस्तार म्यारह से गुणित अपनी प्रथम वेदी के विस्तार सदृश है ॥८५२॥

। भवनभूमिका वर्णन समाप्त हुआ ।

स्तूपोंका वर्णन—

भवण-स्त्रिद्वि-प्यञ्चिधोसुं, वीहि पडि होंति णव-णवा बूहा ।

जिण - सिद्ध - प्यञ्चिमाहि, अप्पञ्चिमाहि समाइज्जा ॥८५३॥

अर्थ :—भवन-भूमिके पादवर्भागोमे प्रत्येक वीथीके मध्यमे जिन (महन्त) और सिद्धोकी अनुपम प्रतिमाओंसे व्याप्त नौ-नौ स्तूप होते हैं ॥८५३॥

छरावि-विभव-जुसा, णच्चंत-विचिरा-धय-बलालोला' ।

अड - मंगल - परिपरिया, ते सव्वे विव्व - रयथमया ॥८५४॥

अर्थ :—वे सब स्तूप छत्रादि बंधवसे संयुक्त, फहराती हुई ध्वजाओंके समूहसे चञ्चल, घाट मङ्गल द्रव्योंसे-सहित और दिव्य-रत्नोंसे निम्नित होते हैं ॥८५४॥

एक्केक्केसि बूहे, अंतरयं मयर - तोरणण सयं ।

उच्छेहो 'बूहाणं, णिय - वेरा - बुमाण-उवय - सत्तं ॥८५५॥

६००० । ५४०० । ४८०० । ४२०० । ३६०० । ३००० । २४०० । १८०० । १२०० ।
 १०८० । ९६० । ८४० । ७२० । ६०० । ५४० । ४८० । ४२० । ३६० । ३०० ।
 २४० । १८० । १२० । २७ । २१ ।

अर्थ :- एक-एक स्तूपके बीचमें मकराकार सौ तोरण होने हैं । इन स्तूपोंकी ऊंचाई इनके अपने चतुर्भुजोंकी ऊंचाई मद्दश होती है ॥८५५॥

**दीहता - रुंढ - माणं, ताणं संपइ परणट्टु - उवएसं ।
 'भव्वाभिसेय - णच्चण - पदाहिणं तेसु कुव्वंति ॥८५६॥**

। धृहा ममता ।

अर्थ :- इन स्तूपोंकी लम्बाई एवं विस्तारके प्रमाण का उपदेश इस समय नष्ट हो चुका है । भव्य-जीव इन स्तूपोंका अभिषेक, पूजन और प्रदक्षिणा करते हैं ॥८५६॥

। स्तूपोंका कथन समाप्त हुआ ।

चतुर्थ कोट—

**तत्तो चउत्थ - साला, हवेइ आयास-फलिह-संकासा ।
 मरगय - मणिमय - गोउर-दार - चउक्केण रमणिज्जा ॥८५७॥**

अर्थ :- इसके आगे निर्मल-स्फटिक रत्न मद्दश और मरकत-मणिमय चार-गोपुर-द्वारोंमें रमणीय गेमा चतुर्थ कोट होना है ॥८५७॥

**वर-रयण - दंड - मंडल-भुज-दंडा कप्पवासिणो देवा ।
 जिणपाद - कमल-भत्ता, गोउर - दाराणि रक्खंति ॥८५८॥**

अर्थ :- जिनके भुजदण्ड उत्तम रत्नमय दण्डोंसे मण्डित हैं और जिनेन्द्र भगवान्के चरण-कमलोंमें जिनकी भक्ति है ऐंसे कल्पवासी देव यहाँ गोपुर द्वारोंकी रक्षा करते हैं ॥८५८॥

**सालारुं विक्खंभो, कोसं चउबीस वसह - एाहम्मि ।
 अडसोवि - दुसय - भजिवा एककूणा जाव जेमि-जिणं ॥८५९॥**

२४ | २३ | २२ | २१ | २० | १९ | १८ | १७ | १६ | १५ | १४ | १३ | १२ |
२८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ |

११ | १० | ९ | ८ | ७ | ६ | ५ | ४ | ३ |
२८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ | २८८ |

अर्थ :—वृषभनाथ भगवान्के समवसरणमें कोटका विस्तार दो सौ अठासीसे भाजित बीबीस कोस प्रमाण था। इसके आगे नेमिनाथ पर्यन्त क्रमशः एक-एक कोस कम होता गया है ॥८५६॥

पणबीसाहिय - छस्सय - बंडा छत्तीस^१-संबिहत्था य ।

पासम्मि बड्डमाणे, णव - हिव - पणुबीस-अहिय-सयं ॥८६०॥

| ६२५^३ | १२५ |
३६ | ६ |

। तुरिम-साला समत्ता ।

अर्थ :—भगवान् पार्श्वनाथके समवसरणमें कोटका विस्तार छत्तीससे विभक्त छहसौ पच्चीस धनुष और वर्धमान स्वामीके कोटका विस्तार नौसे भाजित एकसौ पच्चीस धनुष प्रमाण था ॥८६०॥

। चतुर्थ कोटका वर्णन समाप्त हुआ ।

श्रीमण्डपभूमि—

अह तिरि-भंडव-भूमो, अट्टमया^३अणुबमा मणोहरया ।

वर - रयण - थंअ - धरिया, मुत्ता-जालाइ^४-कय-सोहा ॥८६१॥

अर्थ :—इसके पश्चात् अनुपम, मनोहर, उत्तम रत्नोंके स्तम्भों पर स्थित और मुक्ता-जालादिसे शोभायमान आठवी श्रीमण्डपभूमि होती है ॥८६१॥

जिम्मल-पलिह-विजिम्मिय-सोलस-भिलीण अंतरे कोट्टा ।

बारस तारां उदओ, जिय-जिण-उवएहि बारस-हवैहि ॥८६२॥

१. व. बत्तीस । २. व. ३३३^३ । ३. व. मणुबमा, व. ज. य. मणुबमासमणो, क. मणुबमसो, उ. मणुबमासं मणो । ४. व. क. ज. य. उ. जामाओकमसोहा ।

६००० । ५४०० । ४८०० । ४२०० । ३६०० । ३००० । २४०० । १८०० । १२०० ।
 १०८० । ९६० । ८४० । ७२० । ६०० । ५४० । ४८० । ४२० । ३६० । ३०० ।
 २४० । १८० । १२० । २७ । २१ ।

अर्थ :-निर्मल स्फटिकसे निर्मित सोलह दीवालोके मध्य बारह कोठे होते हैं । इन कोठोकी ऊँचाई अपने-अपने जिनेन्द्रकी ऊँचाईसे बारह-गुणी होती है ॥८६२॥

वीसाहिय - कोस - सयं, रुवं कोट्टाण उसह-णाहम्मि ।

बारस - वग्गेण हिं, पणहीणं जाव णेमि - जिरां ॥८६३॥

पास-जिरो पणवीसा, अडसीदो-अहिय-दुसय-पविहचा ।

वीर-जिणिदे वंडा, पंच-घणा दस-हदा य एव-भजिदा ॥८६४॥

१२०	११५	११०	१०५	१००	९५	९०	८५	८०	७५	७०
१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४
६५	६०	५५	५०	४५	४०	३५	३०	२५	२०	१५
१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४

२५	१०५०
०८८	९

। सिरिमंडवा समप्ता ।

अर्थ :-ऋषभतीर्थकरके समवयररामे कोठोका विस्तार बारहके वर्ग (१४४) से भाजित एक सौ बीस कोस प्रमाण था । इसके आगे नेमिनाथ पर्यंत क्रमशः उत्तरोत्तर पाँच-पाँच कम होते गये हैं । पार्श्व जिनेन्द्र के यह विस्तार दो सौ अठासीसे भाजित पच्चीस कोस और महावीरके पाँचके घनको दससे गुणाकर नौ का भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतने घनुष प्रमाण था ॥८६३-८६४॥

। श्रीमण्डपोका वर्णन समाप्त हुआ ।

तालिका : २३

कल्पवृक्षों... नाट्यशालाओं, स्तूपों एवं कोठों आदि का प्रमाण—

नं०	कल्पवृक्ष कीटन या मीर प्रासादोंकी अंबाई गा. ८४६	नाट्यशालाओं की अंबाई गा. ८४७	भवन-भूमियोंका विस्तार गा. ८५२	स्तूपोंकी अंबाई गा. ८५५	चतुर्भुजकोट का विस्तार गा. ८५६	दीवारों(कोठों) की अंबाई गा. ८६२	कोठोंका विस्तार गा. ८६३
१	६००० घनुष	६००० घनुष	१६ कोस	६००० घ.	१६६३ घ.	६००० घ.	१६६६३ घ.
२	५४०० "	५४०० "	१५६३ "	५४०० "	१५६३ "	५४०० "	१५६३ "
३	४८०० "	४८०० "	१५३३ "	४८०० "	१५२३ "	४८०० "	१५२३ "
४	४२०० "	४२०० "	१५३३ "	४२०० "	१४५३ "	४२०० "	१४५३ "
५	३६०० "	३६०० "	१५३३ "	३६०० "	१३८३ "	३६०० "	१३८३ "
६	३००० "	३००० "	१५३३ "	३००० "	१३१३ "	३००० "	१३१३ "
७	२४०० "	२४०० "	१५३३ "	२४०० "	१२५ "	२४०० "	१२५० "
८	१८०० "	१८०० "	१५३३ "	१८०० "	११८३ "	१८०० "	११८३ "
९	१२०० "	१२०० "	१५३३ "	१२०० "	१११३ "	१२०० "	१११३ "
१०	१०८० "	१०८० "	१५३३ "	१०८० "	१०४३ "	१०८० "	१०४३ "
११	९६० "	९६० "	१५३३ "	९६० "	९७३ "	९६० "	९७३ "
१२	८४० "	८४० "	१५३३ घ	८४० "	९०३ "	८४० "	९०३ "
१३	७२० "	७२० "	१५३३ "	७२० "	८३३ "	७२० "	८३३ "
१४	६०० "	६०० "	१५३३ "	६०० "	७६३ "	६०० "	७६३ "
१५	५४० "	५४० "	१५२७३ "	५४० "	६९३ "	५४० "	६९३ "
१६	४८० "	४८० "	१५३३ "	४८० "	६२३ "	४८० "	६२३ "
१७	४२० "	४२० "	१२२२३ "	४२० "	५५३ "	४२० "	५५३ "
१८	३६० "	३६० "	१०६९३ "	३६० "	४८३ "	३६० "	४८३ "
१९	३०० "	३०० "	९९३३ "	३०० "	४१३ "	३०० "	४९३३ "
२०	२४० "	२४० "	७६३३ "	२४० "	३४३३ "	२४० "	३४७३ "
२१	१८० "	१८० "	६९३३ "	१८० "	२७३ "	१८० "	२७७३ "
२२	१२० "	१२० "	५५८३ "	१२० "	२०३ "	१२० "	२०८३ "
२३	२७ "	२७ "	३०१३३ "	२७ "	१७३३ "	२७ "	१७३३ "
२४	२१ "	२१ "	३०५३ "	२१ "	१३३ "	२१ "	१३३३ "

समवसरणगत बारह कोठोमें बैठने वाले जीवोंका विभाग—

चेट्टंति 'बारह - गणा, कोट्टाणभंतरेसु पुट्टादी ।

पुह पुह पदाहिणेणं गणाण साहेमि विण्णासा ॥८६५॥

अर्थ :—इन कोठोके भीतर पूर्वदि प्रदक्षिण-क्रमसे पृथक्-पृथक् बारहगण बैठते हैं । इन गणोंके विन्यासका कथन आगे करता हूँ ॥८६५॥

अकस्लीण - महाणसिया, सप्पो-खीरामियासव^१-रसाओ ।

^३गणहर - देव - प्पमुहा, कोट्टे पढम्मि चेट्टंति ॥८६६॥

अर्थ :—इन बारह कोठोमेंसे प्रथम कोठेमें अक्षीणमहानसिक ऋद्धि तथा सपिरासव, क्षीरासव एव अमृतासवरूप रम-ऋद्धियोके धारक गणधर देवप्रमुख बंठा करते हैं ॥८६६॥

बिदियम्मि फल्लिह-भित्तो-अंतरिदे कप्पवासि-देवीओ ।

तदियम्मि अज्जियाओ, ^५सावइयाओ विणीदाओ ॥८६७॥

अर्थ :—स्फटिकमणिमयी दीवालोसे व्यवहित दूसरे कोठेमें कल्पवासिनी देवियाँ एव तीसरे कोठेमें अतिशय विनम्र आयिकाएँ और श्राविकाएँ बैठती हैं ॥८६७॥

तुरिये जोइसियाणं, देवीओ परम-भत्ति-मंतीओ ।

पंचमए विणिदाओ, वितर - देवाण देवीओ ॥८६८॥

अर्थ :—चतुर्थ कोठेमें परम-भक्तिसे सयुक्त ज्योतिषी देवोकी देवियाँ और पाँचवें कोठेमें अन्तर देवोंकी विनीत देवियाँ बंठा करती हैं ॥८६८॥

छट्टम्मि जिणवरच्चण-कुसलाओ भवणवासि-देवीओ ।

सत्तमए जिण - भत्ता, दस - भेदा भावणा देवा ॥८६९॥

अर्थ :—छठे कोठेमें जितेन्द्रदेवके अर्चनमें कुशल भवनवासिनी देवियाँ और सातवें कोठेमें दस प्रकारके जिन भक्त भवनवासी देव बैठते हैं ॥८६९॥

१. क मणहराइ, द ज. य हिरमसाइ, व उ, रिहिगसाइ । २. व. ब. क ज. य. उ मिया-मीरसओ । ३. मणहरदेव । ४. द ज. य. सावइयाओ वि विणिदाओ, क सावइयाओ विणिदाओ ।

अट्टमए अट्टुबिहा, बेंतरदेवा य किष्णर - प्यट्टुबी ।
बबमे ससि-रवि-पट्टुबी, जोइसिया जिस्स-सिबिहु-मया ॥८७०॥

अर्थ :—घाठवें कोठेमें किष्णरादिक घाठ प्रकारके व्यन्तरदेव और नवम कोठेमें जिनेन्द्र-देवमें मनको निविष्ट करने वाले चन्द्र-सूर्यादिक ज्योतिषी देव बैठे हैं ॥८७०॥

सोहम्माबी अच्चुब - कप्पंता देव - रायणो बसमे ।
एककरसे चक्कहुरा, मंडलिया पत्तिवा मच्चुवा ॥८७१॥

अर्थ :—दसवें कोठेमें सौषर्मस्वर्गसे लेकर अच्युत स्वर्ग पर्यन्तके देव एवं उनके इन्द्र तथा ग्यारहवें कोठेमें चक्रवर्ती, माण्डलिक राजा एवं अन्य मनुष्य बैठे हैं ॥८७१॥

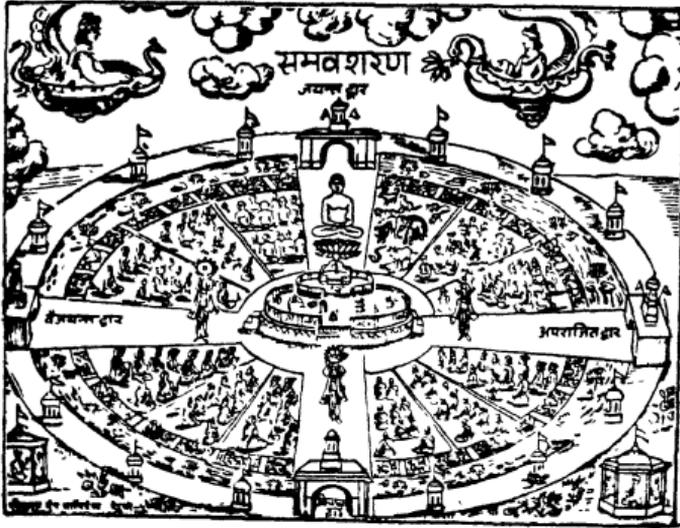
बारसमम्मि य तिरिया, करि-केसरि-वग्घ-हरिस्स'-पट्टुबीओ ।
मोसूएण पुच्च - बेरं, ससू वि सुमित्त - भाव - बुवा ॥८७२॥

। गस्स-विष्णासा समस्ता ।

अर्थ :—बारहवें कोठेमें हाथी, सिंह, व्याघ्र और हरिणादिक तिर्यञ्च जीव बैठे हैं । इनमें पूर्व वरको छोड़कर शत्रु भी उत्तम मित्र भावसे संयुक्त होते हैं ॥८७२॥

[समवशरण चित्र पृष्ठ २६४ पर देखें]

। गणोंकी रचना समाप्त हुई ।



पाँचवी वेदी—

अह पंचम-वेदीओ, शिम्मल-फलहोबलेहि रइदाओ ।

णिय-णिय-चउस्थ-साला-सरिच्छ - उच्छेह-पहुदीओ ॥८७३॥

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८

१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३	५	४
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	५७६	५७६

। पंचम-वेदी समत्ता ।

अर्थ :— इसके अनन्तर निर्मल स्फटिक पाषाणोंसे विरचित और अपने-अपने चतुर्थ कोटके सदृश विस्तारादि सहित पाँचवी वेदियां होती हैं ॥८७३॥

। पाँचवी वेदीका वर्णन समाप्त हुआ ।

प्रथम पीठका प्रमाण—

तथो पढमे पीढा, वेरुलिय - मणीहि णिम्मिवा ताणं ।

णिय - माणत्थंभादिम - पीढुच्छेहोव्व उच्छेहा' ॥८७४॥

२४ ३	२३ ३	२२ ३	२१ ३	२० ३	१९ ३	१८ ३	१७ ३	१६ ३	१५ ३	१४ ३	१३ ३	१२ ३
१० ३	९ ३	८ ३	७ ३	६ ३	५ ३	४ ३	३ ३	२ ३	१ ३	० ३	० ३	० ३

अर्थ :—इसके आगे बेटूर्य-मरिणयोसे निमित्त प्रथम पीठ है । इन पीठोकी ऊँचाई अपने-अपने मानस्तम्भादि की ऊँचाई सदृश है ॥८७४॥

पत्तेक्कं कोट्टाणं, 'पणधीसुं' तह य सयल-वीहीणं ।

होंति हु सोलस सोलस, सोवाणा पढम पीढेसुं ॥८७५॥

अर्थ :—प्रथम पीठोके ऊपर (उपर्युक्त) बारह कोठोमेसे प्रत्येक कोठोके प्रवेश-द्वारमे एक समस्त (चारो) वीथियोके सम्मुख सोलह-सोलह सोपान होते है ॥८७५॥

रुद्धेण पढम-पीढा, कोसा चउवीस बारसेहि^३हिवा ।

उसह - जिणदे कमसो, एक्केक्कणाणि नेमि - जिणं ॥८७६॥

२४ १२	२३ १२	२२ १२	२१ १२	२० १२	१९ १२	१८ १२	१७ १२	१६ १२	१५ १२	१४ १२	१३ १२	१२ १२
११ १२	१० १२	९ १२	८ १२	७ १२	६ १२	५ १२	४ १२	३ १२	२ १२	१ १२	० १२	० १२

अर्थ :—ऋषभ-जिनेन्द्रके सम्बसरणमे प्रथम पीठका विस्तार बारहसे भाजित चौबीस कोस था । फिर इसके आगे नेमि जिनेन्द्र पर्यन्त क्रमशः एक-एक अंक कम होता गया है ॥८७६॥

१ द. ब. क. ज. उ. महीदुच्छेहो हवति दुच्छेहो, य. महीदुच्छेहो वति उच्छेहो । २. द. पणवीसुत्तय-सय-वीहीण, व. ज. य. उ. पणधीसुत्तय-सयल-वीहीणं । क. पणधीसुत्तयसयल वोहाणं । ३. द. व. क. ज. य. उ. हवा ।

पञ्च-परिमाणा कोसा, चउवीस हिवा य पासणाहम्मि ।

एक्को च्चिय छक्क - हिदे देवे त्तिरिबद्धमाणम्मि ॥८७७॥

५	१
२४	६

अर्थ :—पार्व-जिनेन्द्रके समवसरणमे प्रथम पीठका विस्तार चौबीससे भाजित पाँच कोस और वर्धमान जिनेन्द्रके समवसरणमे छहसे भाजित एक कोस प्रमाण ही था ॥८७७॥

पीठोंकी परिधियोंका प्रमाण—

पीठानं परिहीओ, णिय-णिय-वित्थार-तिगुणिय-पमाणा ।

वर - रयण - णिम्मियाओ, अणुवम-रमणिज्ज-सोहाओ ॥८७८॥

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३
४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४

१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३	५	४
४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	८	८

अर्थ :—पीठोंकी परिधियोंका प्रमाण अपने-अपने विस्तारसे तिगुणा होता है । ये पीठिकाएँ उत्तम रत्नोंसे निर्मित एवं अनुपम रमणीय शोभासे सम्पन्न होती हैं ॥८७८॥

धर्मचक्र—

वलयोवम - पीढेसुं, विविह्चच्चण-दव्व-मंगल-जुदेसुं ।

सिर-धरिद-धम्म-चक्का, चेट्टुं ते चउ-दिसासु जक्खिदा ॥८७९॥

अर्थ :—चूड़ी सदृश गोल तथा नाना प्रकारके पूजा-द्रव्य एवं मंगल-द्रव्यों सहित इन पीठों पर चारो दिशाओंमें धर्मचक्रको सिर पर रखे हुए यक्षेन्द्र स्थित रहते हैं ॥८७९॥

मेखलाका विस्तार—

चावाणि छस्सहस्सा, अट्ट - हिवा पीढ-मेह्ला-रुंदं ।

उसह - जिणे पण्णाहिय-दो-सय-ऊणाणि णेमि - जिणं ॥८८०॥

पणबीसाहिय - छत्सय, अट्ट-बिहत्तं च पास-णाहम्मि ।

एक - सयं पणबीसभहियं वीरम्मि बोहि हिं ॥८८१॥

६०००	५७५०	५५००	५२५०	५०००	४७५०	४५००	४२५०	४०००	३७५०
८	८	८	८	८	८	८	८	८	८
३५००	३२५०	३०००	२७५०	२५००	२२५०	२०००	१७५०	१५००	१२५०
८	८	८	८	८	८	८	८	८	८
१०००	७५०	६२५	१२५						
८	८	८	८						

अर्थ :—ऋषभजिनेन्द्रके समवसरणमें पीठकी मेखलाका विस्तार आठसे भाजित छह हजार धनुष प्रमाण था । पुनः इसके आगे नेमिनाथ पर्यन्त क्रमशः उत्तरोत्तर दोसी पचास-दोसी पचास अंक कम होते गये हैं तथा पार्श्वनाथके यह विस्तार आठसे भाजित छहसी पच्चीस धनुष एवं वीर प्रभुके दो से भाजित एकसी पच्चीस धनुष प्रमाण था ॥८८०-८८१॥

गणधरादिको द्वारा की हुई भक्ति—

आरुहिद्वणं तेषु, ^१गणहर - देवादि - बारस- गणा ते ।

काद्वण ^२ति - प्पदाहिणमच्चंति मुहं मुहं णाहं ॥८८२॥

थोद्वण थुदि - सएहि, असंल्लगुणसेदि-कम्म-णिज्जरणं ।

काद्वण पसण्ण - मणा, णिय - णिय - कोट्टेसु पविसंति ॥८८३॥

। पठम-पीढा समत्ता ।

अर्थ :—वे गणधरदेवादिक बारह-गण उन पीठो पर चढ़कर और तीन प्रदक्षिणा देकर बार-बार जिनेन्द्र देवकी पूजा करते हैं, तथा सैकड़ों स्तुतियों द्वारा कीर्तन कर कर्मोंकी भ्रसंख्यात-गुणश्रेणीरूप निर्जरा करके प्रसन्न-चित्त होते हुए अपने-अपने कोठोंमें प्रवेश करते हैं । अर्थात् अपने-अपने कोठोंमें बैठ जाते हैं ॥८८२-८८३॥

। प्रथम पीठोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

१. द. व. क. व. य. उ. गणगहादेवादि । २. द. विप्वसावाहीण, क विप्वबीहीण, व. व. उ. विप्ववाहीण ।

विशेषार्थः—समोसरणके बारह कोठोमे क्रमशः ऋषि (गणधरादिक), कल्पवासी देवियाँ, आर्यिकाएँ, श्राविकाएँ, ज्योतिष देवियाँ, व्यन्तर देवियाँ, भवनवासिनी देवियाँ, भवनवासी देव, व्यन्तरदेव, ज्योतिषी देव, कल्पवासी देव, चक्रवर्ती आदि पुरुष तथा तिर्यचोके बंठनेकी व्यवस्था रहती है। जिनेन्द्र भगवानको ये सब अपने-अपने कोठोंमें प्रविष्ट होकर ही नमस्कार, वन्दना एवं स्तुति करते हैं। परन्तु सब कोठोके प्रधान, प्रमुख गण (गणधर प्रमुख, कल्पवासी देवी प्रमुख, आर्यिका प्रमुख आदि-आदि) प्रथम पीठ पर चढकर तीन प्रदक्षिणा देकर जिनेन्द्र भगवान्की पूजा-स्तुतिरूप कीर्तन द्वारा असख्यात गुणश्रेणीरूप निर्जरा करते है। भगवान महावीरके समवसरणमे यह गौरव ऋषियोमे गौतमगणधरको, आर्यिकाओमे आर्यिका चन्दनाको, श्रावकोमें राजा श्रेणिक को, पशुओमे सिंह को एवं अन्य-अन्य प्रमुखोको अवश्य ही मिला है और गन्धकुटोकी जिस प्रथम पीठ पर खडे होकर गणधर देवादि ने स्तुति की है उसी पीठ पर आर्यिका, श्राविका, देवियाँ और सिंहने भी पहुँच कर भक्ति-भाव पूर्वक स्तुति, वन्दनादि की है।

[तालिका : २४ पृष्ठ २६६ पर देखिये]

तालिका : २४

वेदी, पीठ, परिधियाँ एवम् मेखला का विस्तार आदि

नं०	पाँचवी वेदी का विस्तार गा० ८७३	प्रथम पीठ की ऊँचाई गा० ८७४	प्रथम पीठका विस्तार गा० ८७६	पीठोंकी परिधियो का प्रमाण गा० ८७८	पीठ की मेखला का विस्तार गा० ८८०	
१	१६६३ घ.	८	धनुष	२ कोस	६ कोस	७५० धनुष
२	१५६३ "	७	"	१ १/२ "	५ १/२ "	७१८ "
३	१५६३ "	७	"	१ १/२ "	५ १/२ "	६५६ "
४	१५६३ "	७	"	१ १/२ "	५ १/२ "	६५६ "
५	१३८८ "	६	"	१ १/२ "	५ "	६२५ "
६	१३८८ "	६	"	१ १/२ "	५ १/२ "	५६३ १/२ "
७	१३८८ "	६	"	१ १/२ "	५ १/२ "	५६२ १/२ "
८	१३८८ "	५ १/२	"	१ १/२ "	५ १/२ "	५३१ १/२ "
९	१३८८ "	५ १/२	"	१ १/२ "	५ "	५०० "
१०	१०५३ "	५	"	१ १/२ "	५ १/२ "	५६८ १/२ "
११	१०५३ "	५ १/२	"	१ १/२ "	५ १/२ "	५३७ १/२ "
१२	१०५३ "	५ १/२	"	१ १/२ "	५ १/२ "	५०६ १/२ "
१३	८५३ "	५	"	१ १/२ "	५ १/२ "	३७५ "
१४	८५३ "	५ १/२	"	१ १/२ ३/४ घ०	५ १/२ "	३५३ १/२ "
१५	८५३ "	५ १/२	"	१ १/२ ३/४ "	५ १/२ "	३१२ १/२ "
१६	८५३ "	५ १/२	"	१ ५/८ ० ०	५ १/२ "	२८१ १/२ "
१७	५५३ "	५ १/२	"	१ ३/४ ३/४ "	५ १/२ "	२५० "
१८	५५३ "	५ १/२	"	१ ३/४ ३/४ "	५ १/२ "	२१८ १/२ "
१९	५५३ "	५ १/२	"	१ ० ० ०	५ १/२ "	१८७ १/२ "
२०	५५३ "	५ १/२	"	८ ३/४ ३/४ "	५ १/२ "	१५६ १/२ "
२१	५५३ "	५ १/२	"	९ ३/४ ३/४ "	५ १/२ "	१२५ "
२२	५५३ "	५ १/२	"	५ ० ०	५ १/२ "	९३ १/२ "
२३	५५३ "	५ १/२	"	५ ३/४ ३/४ "	५ १/२ "	७८ १/२ "
२४	५५३ "	५ १/२	"	५ ३/४ ३/४ "	५ १/२ "	६२ १/२ "

दूसरे पीठका वर्णन—

षट्शोडशरश्मि विद्विया, पीठा चेद्वृत्ति ताण उच्छेहो ।

चउ-बंडा आदि-जिणे, छद्मभागेणूण' जाव षेमिजिरणं ॥८८४॥

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०
६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६

९	८	७	६	५	४	३
६	६	६	६	६	६	६

अर्थ :—प्रथम पीठोके ऊपर दूसरे पीठ होते है । ऋषभदेवके समवसरणमें उनके (दूसरे) पीठकी ऊँचाई चार धनुष थी । फिर इसके आगे उत्तरोत्तर क्रमशः नेमिजिनेन्द्र पर्यन्त एक बटा छह— एक बटा छह (६) भाग कम होता गया है ॥८८४॥

पास-जिणे पण-बंडा, बारस-भजिदा य वीर-णाहम्मि ।

एक्को चिचय तिय-भजिदा णाणावर-रयण-^३णिलय-इला ॥८८५॥

५	१
१२	३

अर्थ :—पार्श्वनाथ तीर्थकरके समवसरणमें दूसरी पीठकी ऊँचाई बारहसे भाजित पाँच धनुष श्रीर वीरनाथके तीन से भाजित एक धनुष मात्र थी । ये दूसरी पीठिकाएँ नाना प्रकारके उत्तम रत्नोसे खचित भूमि-युक्त है ॥८८५॥

दूसरी पीठोकी मेखलाओंका विस्तार—

चावाणि छस्सहस्सा, अट्ट - हिदा ताण मेहला - रुंदा ।

उसह-जिणे पण्णा-हिय-वो-सय-ऊणा य षेमि-परियंतं ॥८८६॥

पण्णोसाहिय-छस्सय, अट्ट - बिहत्तं च पास - सामिस्स ।

एक्क - सयं पण्णोसवभिहियं वीरम्मि वोहि ^३हिवं ॥८८७॥

६०००	५७५०	५५००	५२५०	५०००	४७५०	४५००	४२५०	४०००
३७५०	३५००	३२५०	३०००	२७५०	२५००	२२५०	२०००	१७५०
१५००	१२५०	१०००	७५०	६२५	१२५			

अर्थ :- ऋषभनाथके समवसरणमे उनकी (दूसरी पीठोकी) मेखलाओका विस्तार आठसे भाजित छह हजार धनुष था । इसके आगे नेमिनाथ पर्यन्त क्रमशः दो सौ पचास-दो सौ पचास भाग कम होता गया है । पार्श्वनाथ [के समवसरणमे द्वितीय पीठकी मेखलाओ] का विस्तार आठसे भाजित छह सौ पच्चीस धनुष श्रीग वीरनाथ भगवान्के यह विस्तार दोसे भाजित एकसौ पच्चीस धनुष प्रमाण था ॥८८६-८८७॥

सोपान एव ध्वजाओका वर्णन—

ताणं कणयमयाणं, पीढाणं पंच - वण्ण - रयणमया ।

समबद्धा सोबाणा, चेद्वृत्ते चउ - विसासु अद्वुद्वं ॥८८८॥

। ८ । ८ ।

अर्थ :-उन स्वर्णमय पीठोके ऊपर चढनेके लिए चारो दिशाओमे पांच वर्णके रत्नोसे निर्मित समान आकार वाले आठ-आठ सोपान होते है ॥८८८॥

केसरि-वसह-सरोरुह-चक्रकंबर-वाम-गरुड-हृत्थि-धया ।

मणि - थंभ - लंबमाणा, राजते बिदिय - पीढेसुं ॥८८९॥

अर्थ :-द्वितीय पीठोके ऊपर मणिमय स्तम्भोपर लटकती हुई सिंह, बैल, कमल, चक्र, वस्त्र, माला, गरुड और हाथी इन चिह्नोसे युक्त ध्वजाएँ शोभायमान होती हैं ॥८८९॥

ध्व-घडा णव-णिहिणो, अच्चण-इब्बाणि 'मंगलाणि पि ।

चेद्वृत्ति बिदिय - पीढे, को सबकइ ताण वण्णेदुं ॥८९०॥

अर्थ :-द्वितीय पीठपर जो धूपघट, नव निषियाँ, पूजन द्रव्य और मंगलद्रव्य स्थित रहते हैं, उनका वर्णन कर सकनेमें कौन समर्थ है ? ॥८९०॥

द्वितीय पीठका विस्तार—

बीसाहिय-सय-कोसा, उसह-जिणे बिदिय-पोढ-बित्यारा ।

पंचूणा छण्णउदी, भजिवा कमसो य णेमि - पज्जंतं ॥८६१॥

पास - जिणे पण्णुत्तीसं, अट्ठूणं वोसएहि भ्रवहरिदा ।

पंच च्चिय वीरजिणे, पविहसा अट्ठतालेहि ॥८६२॥

१२०	११५	११०	१०५	१००	९५	९०	८५	८०	७५	७०
९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६

६५	६०	५५	५०	४५	४०	३५	३०	२५	२०	१५
९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६

२५	५
१६२	४८

। बिदिय-पीठा समत्ता ।

अर्थ :—ऋषभनाथ जिनेन्द्रके समवसरणमे द्वितीय पीठका विस्तार छपानवसे भाजित एक सौ बीस कोस प्रमाण था । पश्चात् इसके आगे नेमिनाथ पर्यन्त क्रमशः पाँच-पाँच भाग कम होते गये हैं । पार्श्व जिनेन्द्रके यह विस्तार आठ कम दोसोसे भाजित पच्चीस कोस तथा वीर जिनेन्द्रके अट्ठतालीसे भाजित पाँच कोस प्रमाण था । ८६१-८६२॥

। द्वितीय पीठोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

तीसरी पीठिकाग्रोंकी ऊँचाई एव विस्तार—

ताणोवरि तदियाइं, पीठाइं बिबिह-रयण-रइवाइं ।

णिय-णिय-बुइज्ज-^१पीठुच्छेह-समा ताण ^२उच्छेहा ॥८६३॥

२४ ६	२३ ६	२२ ६	२१ ६	२० ६	१९ ६	१८ ६	१७ ६	१६ ६	१५ ६	१४ ६
१३ ६	१२ ६	११ ६	१० ६	९ ६	८ ६	७ ६	६ ६	५ ६	४ ६	३ ६

अर्थ :—द्वितीय पीठोंके ऊपर विविध प्रकारके रत्नोंसे खचित तीसरी पीठिकाएँ होती हैं । इनकी ऊँचाई अपनी-अपनी दूसरी पीठिकाओकी ऊँचाई सदृश होती है ॥८६३॥

रिण्य-आदिम-पीढारणं, वित्यार-चउत्थ-भाग-सारिच्छा ।

एदाणं वित्यारा^१, ^२तिउण-कवे तत्थ समहिए परिही ॥८६४॥

२४ ४८	२३ ४८	२२ ४८	२१ ४८	२० ४८	१९ ४८	१८ ४८	१७ ४८	१६ ४८	१५ ४८	१४ ४८	१३ ४८
१२ ४८	११ ४८	१० ४८	९ ४८	८ ४८	७ ४८	६ ४८	५ ४८	४ ४८	३ ४८		
								५ ६६	४ ६६		

अर्थ :—इनका विस्तार अपनी प्रथम पीठिकाओंके विस्तारके चतुर्थ भाग प्रमाण होता है और तिगुणे विस्तारसे कुछ अधिक इनकी परिधि होती है ॥८६४॥

ताणं विणयर - मंडल - समवट्टारणं हवंति अट्टु^३ ।

सोवाणा रयणमया, चउसु दिसासु^३ सुहप्पासा ॥८६५॥

। तदिय-पीढा समत्ता ।

अर्थ :—सूर्य मण्डल मद्य गोल उन पीठोंके चारों ओर रत्नमय एव सुखकर स्पर्शवाली आठ-प्राठ सोदिय्याँ होती है ॥८६५॥

। तृतीय पीठिकाओका वर्णन समाप्त हुआ ।

१. द. ज. य. उ. वित्यारो । २. द. उ. तउण । ३. द. ब. ज. य. सुहप्पासा । क. सुहप्पासुं, उ. सुह-उपपासुं ।

गन्धकुटीका निरूपण—

एक्केक्का 'गंधउडी, होदि तवो तदिय-पीठ-उवरिम्मि ।

चामर - किकिणि - खंवनमाला - हारादि-रमणिज्जा ॥८६६॥

गोसीस^१ - मलय - खंदरा-कालागर-पहुदि- धूव-गंधड्डा ।

पजसंत - रयरा - बीवा, णच्चंत - विचित्त - धय-पंती ॥८६७॥

अर्थ :— इसके आगे इन तीसरी पीठिकाओके ऊपर एक-एक गन्धकुटी होती है । यह गन्ध-कुटी चामर, किकिणी, वन्दनमाला एव हारादिकसे रमणीय, गोशीर, मलयचन्दन और कालागर इत्यादिक धूपोंकी गन्धसे व्याप्त, प्रज्वलित रत्नदीपकोंसे युक्त तथा नाचती हुई विचित्र ध्वजाओंकी पंक्तियोंसे सयुक्त होती है ॥८६६-८६७॥

तोए रुंदायामा, छस्सय - दंडारिण उसहणाहम्मि ।

पण-कदि - परिहीणाणि, कमसो सिरि-णेमि-परियंतं ॥८६८॥

पणुबीसढ्भहिय - सयं, दोहि विहत्तं च पासणाहम्मि ।

विगुणिय - पणुबीसाहं, तिस्थयरे वड्डमाणम्मि ॥८६९॥

६०० । ५७५ । ५५० । ५२५ । ५०० । ४७५ । ४५० । ४२५ । ४०० । ३७५ । ३५० ।

३२५ । ३०० । २७५ । २५० । २२५ । २०० । १७५ । १५० । १२५ । १०० ।

७५ । १३५ । ५० ।

अर्थ :— उस गन्धकुटीकी चौड़ाई और लम्बाई ऋषभनाथके समवसरणमे छहसौ धनुष प्रमाण थी । पश्चात् नेमिनाथ पर्यन्त क्रमशः उत्तरोत्तर पांचका वर्ग अथवा २५-२५ धनुष कम होती गई है । पार्श्वनाथकी गन्धकुटी दो से विभक्त एक सौ पच्चीस धनुष तथा वर्धमान स्वामीकी दुगुणित पच्चीस (५०) धनुष प्रमाण थी ॥८६८-८६९॥

उदओ गंधउडीए, दंडाणं णव - सयाणि उसह - जिणे ।

कमसो णेमि-जिणंतं, चउबीस-विहत्त-पभव-हीणाणि ॥८७०॥

पणुहत्तरि-जुव-ति-सया, पास-जिणिदम्मि चउविहत्ता य ।

पणुवीसोणं^१ च सयं, जिणपवरे वीर - णाहम्मि ॥६०१॥

६०० | १७२५ | १६५० | १५७५ | १५०० | १४२५ | १३५० | १२७५ | १२०० | ११२५ |
 २ | २ | २ | २ | २ | २ | २ | २ | २ | २ |
 १०५० | ९७५ | ९०० | ८२५ | ७५० | ६७५ | ६०० | ५२५ | ४५० | ३७५ | ३०० |
 २ | २ | २ | २ | २ | २ | २ | २ | २ | २ |
 २२५ | ३७५ | ७५ |

अर्थ :- ऋषभ जिनेन्द्रके समवसरणमें गन्धकुटीकी ऊँचाई तीसौ धनुष प्रमाण थी । पश्चात् क्रमशः नेमिनाथ पर्यन्त चौबीससे विभक्त मुख (६०० - २४ = ३७६) प्रमाण हीन होती गई है । पार्श्व जिनेन्द्रके चारसे विभक्त तीनसौ पचत्तर धनुष और वीरजिनेन्द्रके पच्चीस कम तीस धनुष प्रमाण थी ॥९००-९०१॥

सिंहासनाणि मज्जे, गंधउडीणं सपाद - पोढाणि ।

वर - फलिह-णिम्मिदाणि^३ घंटा - जालादि रम्माणि ॥६०२॥

अर्थ .— गन्धकुटीयोंके मध्य पादपीठ सहित, उत्तम स्फटिकमसियोंसे निर्मित एक घण्टाओं के समूहादिकसे रमणीय सिंहासन होते हैं ॥६०२॥

[तालिका : २५ अगले पृष्ठ २७६ पर देखिये]

रयण-खच्चिदाणि ताणि, जिणिद-उच्छेह-जोग-उदयाणि ।

इत्थं तित्थयरारणं, कहिदाइं समवसरणाइं ॥६०३॥

। इदि समवसरणा समत्ता ।

१. द. पणुवीसोळं च । २. द. व. क. ज. ग. उ. गंधमदीण । ३. व. उ. णिम्मदाणि ।

तालिका : २५

दूसरे एवं तीसरे पीठोंका तथा गन्धकुटीका बिस्तार आदि—

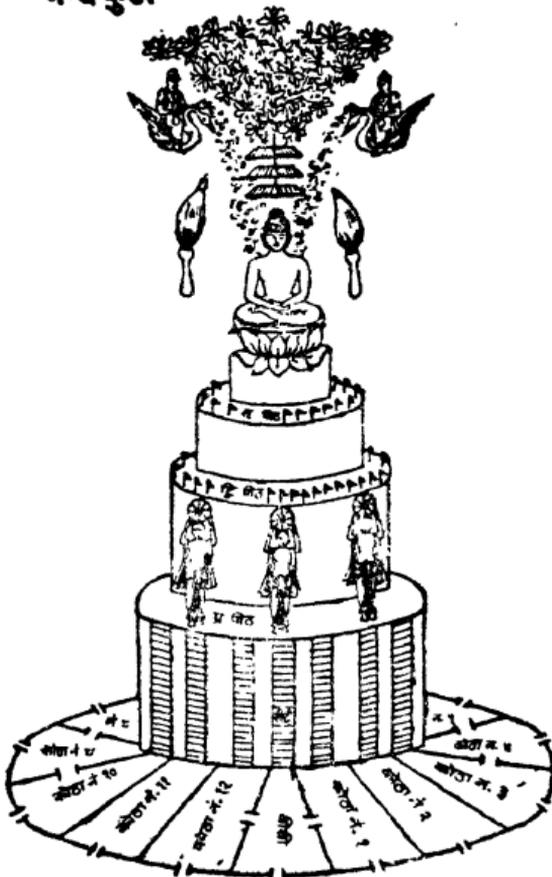
दूसरे पीठों की ऊँचाई गा० न०८४	दूसरे पीठोंकी भेखलाओका वि० गा० न०८६	दूसरे पीठोंका बिस्तार गा० न०८९	तीसरे पीठों की ऊँचाई गा० न०९३	तीसरे पीठोंका बिस्तार गाथा न०९४	गन्ध कुटीकी लम्बाई और चौ० गा० न०९८	गन्ध कुटीकी ऊँचाई गा० ९००
४ धनुष	७५० घ०	१३ कोस	४ धनुष	१००० धनुष	६०० धनुष	६०० धनुष
३५ " "	७१८ " "	१३ " "	३५ " "	९५८ " "	५७५ " "	६६२ " "
३३ " "	६८७ " "	१३ " "	३३ " "	९२७ " "	५५० " "	६२५ " "
३१ " "	६५६ " "	१३ " "	३१ " "	८९६ " "	५२५ " "	७८७ " "
२९ " "	६२५ " "	१३ " "	२९ " "	८६५ " "	५०० " "	७५० " "
२७ " "	५९४ " "	१२७६ घ०	२७ " "	८३४ " "	४७५ " "	७१२ " "
२५ " "	५६३ " "	१८७५ " "	२५ " "	८०३ " "	४५० " "	६७५ " "
२३ " "	५३२ " "	१७७४ " "	२३ " "	७७२ " "	४२५ " "	६३७ " "
२१ " "	५०१ " "	१६७३ " "	२१ " "	७४१ " "	४०० " "	६०० " "
१९ " "	४७० " "	१५७२ " "	१९ " "	७१० " "	३७५ " "	५६२ " "
१७ " "	४३९ " "	१४७१ " "	१७ " "	६७९ " "	३५० " "	५२५ " "
१५ " "	४०८ " "	१३७० " "	१५ " "	६४८ " "	३२५ " "	४८७ " "
१३ " "	३७७ " "	१२६९ " "	१३ " "	६१७ " "	३०० " "	४५० " "
११ " "	३४६ " "	११६८ " "	११ " "	५८६ " "	२७५ " "	४१२ " "
९ " "	३१५ " "	१०६७ " "	९ " "	५५५ " "	२५० " "	३७५ " "
७ " "	२८४ " "	९५६६ " "	७ " "	५२४ " "	२२५ " "	३३७ " "
५ " "	२५३ " "	८४६५ " "	५ " "	४९३ " "	२०० " "	३०० " "
३ " "	२२२ " "	७३६४ " "	३ " "	४६२ " "	१७५ " "	२६२ " "
१ " "	१९१ " "	६२६३ " "	१ " "	४३१ " "	१५० " "	२२५ " "
० " "	१६० " "	५१६२ " "	० " "	४०० " "	१२५ " "	१८७ " "
० " "	१२९ " "	४०६१ " "	० " "	३६९ " "	१०० " "	१५० " "
० " "	९१ " "	३०६० " "	० " "	३३८ " "	७५ " "	११२ " "
० " "	६० " "	२०६० " "	० " "	३०७ " "	६२ " "	९३ " "
० " "	३० " "	१०६० " "	० " "	२७६ " "	५० " "	७५ " "

अर्थ :—रत्नोंसे खचित उन सिंहासनों की ऊँचाई तीर्थंकरोंकी ऊँचाईके ही योग्य हुआ करती है । इस प्रकार यहाँ तीर्थंकरोंके समवसरणोंका कथन किया गया है ।।६०३।।

। इसप्रकार समवसरणोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

गन्धकुटी का चित्रण—

गन्धकुटी



अरहन्तोंकी स्थिति सिंहासनसे ऊपर—

'चउरंगुलंतराले, उर्वरि सिंहासनाणि अरहंता ।

चेद्वंति गयण - मग्गे, लोयालोय - प्पयास - मत्तंडा ॥६०४॥

अर्थ .—लोक-अलोकको प्रकाशित करनेके लिए सूर्य सदृश भगवान् अरहन्तदेव उन सिंहासनोके ऊपर आकाशमार्गमें चार अंगुलके अन्तरालसे स्थित रहते हैं ॥६०४॥

जन्मके दस अतिशय—

णिस्सेदत्तं णिम्मल - गत्तत्तं दुद्ध - धवल - रुहिरत्तं ।

आदिम - संहडणत्तं, समचउरस्संग - संठाणं ॥६०५॥

। ५ ।

अणुवम - रूवत्तं एव - चंपय-वर-सुरहि - गंध-धारित्तं ।

अट्ठत्तर-वर-लक्खण-सहस्स-धरणं अणंतबल - विरियं ॥६०६॥

। ४ ।

मिदु-हिद-मधुरालाओ, साभाविय-अदिसयं च दह-भेदं ।

एवं तित्थयराणं जम्मग्गहणादि - उप्पण्णं ॥६०७॥

। १ ।

अर्थ :— १ वेद-रहितता, २ निर्मल-शरीरता, ३ दूध सदृश धवल रुधिर, ४ वर्षर्षभनाराच-सहनन, ५ समचतुरस्र-शरीर सस्थान, ६ अनुपम रूप, ७ नवीन चम्पक की उत्तम गन्ध सदृश गन्धका धारण करना, ८ एक हजार आठ उत्तम लक्षणों का धारण करना, ९ अनन्त बल-वीर्य और १० हितकारी मृदु एवं मधुर भाषण, ये स्वाभाविक अतिशयके दस भेद हैं । ये अतिशय तीर्थकरोंके जन्म-ग्रहणसे ही उत्पन्न हो जाते हैं ॥६०५-६०७॥

केवलज्ञानके ग्यारह अतिशय—

जोयण-सद-मज्जादं, सुभिक्षदा चउ-दिसासु णिय-ठाणा ।

णहयल - गमणमहिंसा, भोयण - उवसग्ग - परिहीणा ॥६०८॥

सव्वाहि - मुह - द्वियत्तं, अच्छायत्तं 'अपमृहकंविष' ।
 विज्जाणं ईसत्तं, सम - णह - रोमसणं सरीरम्मि ॥६०६॥

अट्टरस - महाभासा, खुल्लय-भासा सयाइ सत्त-तहा ।
 अक्खर - अणक्खरप्पय सण्णी-जीवाण सयल-भासाओ ॥६१०॥

एदासि भासाणं, तालुव - दंतोट्टु - कंठ - 'वावारे ।
 परिहरिय एक - कालं, भव - जणे विव्व-भासित्तं ॥६११॥

पगदीए अक्खल्लिदो, संभ्रुत्तिदयम्मि णव - मुहुत्ताणि ।
 णिस्सरवि णिक्खमाणो, विव्वभुणो जाव 'जोयणयं ॥६१२॥

अवसेस - काल - समए, गणहर - देविद - चक्कवट्टीणं ।
 पण्हाणुक्खमत्थं', विव्वभुणी सत्त - भंगीहि ॥६१३॥

छट्ठव - णव - पयत्थे', पंचट्टीकाय - सत्त - तच्चवाणि' ।
 णाणाविह - हेड्डीहं, दिव्वभुणी' भणइ भव्वाणं ॥६१४॥

'घादिकखएण जावा, एक्कारस अदिसया महच्छरिया ।
 एदे तित्थयराणं, केवलणाणम्मि उप्पण्णे ॥६१५॥

अर्थ :—अपने स्थानसे चारों दिशाओंमें १ एकसौ योजन पर्यन्त सुभिक्षता, २ आकाश-गमन, ३ अहिंसा (हिंसाका अभाव), ४ भोजन एवं ५ उपसाय का अभाव, ६ सबकी ओर मुख करके स्थित होना, ७ छाया नही पड़ना, ८ निर्निमेष दृष्टि, ९ विद्याभोगी ईशता, १० शरीरमें नखों एवं बालों का न बढ़ना, अठारह महाभाषा, सातसौ क्षुद्र-भाषा तथा और भी जो संज्ञी जीवोंकी समस्त अक्षर-अनक्षरात्मक भाषाएँ हैं उनमें तालु, दाँत, ओष्ठ और कण्ठके व्यापारसे रहित होकर एक ही समय (एक साव) भव्य जनोंको दिव्य उपदेश देना ।

भगवान् जिनेन्द्रकी स्वभावतः अस्खलित तथा अनुपम ११ दिव्य-ध्वनि तीनों सन्ध्या-कालोंमें नव-मुहूर्तों तक निकलती है और एक योजन पर्यन्त जाती है । इसके अतिरिक्त गणधरदेव,

१. व. क. ज. य. उ. अपमृहपित्तं, व. अपमृहं दित्तं । २. व. व. क. ज. य. उ. वावारे ।
 ३. व. उ. जोयणं । ४. व. व. क. ज. य. उ. पण्हाणुक्खमत्थ । ५. व. व. क. ज. उ. पयत्थो । ६. व. व. व.
 तत्ताणि, क. उ. तत्ताणि । ७. व. दिव्वभ्रुणि । ८. व. उ. घादिकखएण व ।

इन्द्र एवं चक्रवर्तीके प्रश्नानुरूप ग्रन्थके निरूपणार्थ यह दिव्य-ध्वनि शेष समयोमे भी निकलती है । यह दिव्यध्वनि भव्य जीवोको छह-द्रव्य, नौ-पदार्थ, पाँच अस्तिकाय और सात तत्त्वोंका निरूपण नानाप्रकारके हेतुधो द्वारा करती है । इसप्रकार घातिया कर्मोंके क्षयसे उत्पन्न हुए, महान् आश्चर्य-जनक ये ग्यारह अतिशय तीर्थकरोंको केवलज्ञान उत्पन्न होने पर प्रगट होते हैं ॥६०८-६१५॥

देवकृत तेरह श्रतिशय—

माहृप्पेण जिणाणं, संखेज्जेसुं च जोयणेषु वणं ।
 पल्लव - कुसुम - फलद्वी - भरिदं जायदि अकालम्मि ॥६१६॥

कंठय-सक्कर-पट्टादि, अवणिस्ता वादि सुरकदो वाऊ ।
 मोत्तूण पुव्व - वेरं, जीवा वडुंति मेत्तोसु ॥६१७॥

दप्पण-तल्ल-सारिच्छा, रयणमई होदि तेत्तिया भूमि ।
 गंधोदकेइ वरिसइ, मेघकुमारो पि सक्क - आणाए ॥६१८॥

फल-भार-णमिद-साली-जवादि-सस्सं सुरा विकुब्बंति ।
 सव्वाणं जीवाणं, उप्पज्जदि णिच्चमाणंदो ॥६१९॥

वायदि विक्किरियाए, वायुकुमारो हु सीयलो पवणो ।
 कूव - तडायादीणि, णिम्मल - सलिलेण पुण्णाणि ॥६२०॥

धूमुककपडण - पट्टदीहि विरहिदं होदि णिम्मलं गयणं ।
 रोगादीणं बाधा, ण होंति सयसाण जीवाणं ॥६२१॥

जिक्खिद-मत्थएसुं, किरणुज्जल-दिव्व-धम्म-चक्काणि ।
 दट्ठूण संठियाइं, चत्तारि जणस्स अक्खरिया ॥६२२॥

छप्पण चउदिसासुं, कंठण - कमलाणि तित्थ-कत्ताणं ।
 एक्कं च पायपीडे, अक्खण-दव्वाणि दिव्व-विहिवाणि ॥६२३॥

। चोत्तीस अइसया समत्ता ।

अर्थ :—१ तीर्थकरोके माहात्म्यसे सख्यात योजनी तक वन प्रदेश असमयमें ही पत्रो, फूलो एवं फलोंसे परिपूर्ण समृद्ध हो जाता है; २ कांटो और रेतो आदिको दूर करती हुई सुखदायक बायु प्रवाहित होती है, ३ जीव पूर्व वैरको छोड़कर मंत्री-भावसे रहने लगते हैं; ४ उतनी भूमि दपंगतल सदृश स्वच्छ एव रत्नमय हो जाती है; ५ सौधर्म इन्द्रकी आज्ञासे मेघकुमार देव सुगन्धित जलकी वर्षा करता है; ६ देव विक्रियासे फलोंके भारसे नम्रीभूत शालि और जौ आदि सस्यकी रचना करते हैं; ७ सब जीवोको नित्य आनन्द उत्पन्न होना है; ८ बायुकुमार देव विक्रियासे शीतल-पवन चलाता है; ९ कूप और तालाब आदिक निर्मल जलसे परिपूर्ण हो जाते हैं; १० आकाश धुआँ एव उल्का-पातादिसे रहित होकर निर्मल हो जाता है; ११ सम्पूर्ण जीव रोगबाधाओसे रहित हो जाते हैं, १२ यक्षेन्द्रोके मस्तको पर स्थित और किरणोंकी भाँति उज्ज्वल ऐसे चार दिव्य धर्मवक्रोको देखकर मनुष्योको आश्चर्य होता है तत्र १३ तीर्थकरोकी चारो दिशाओ (विदिशाओं) में छप्पन स्वर्ण-कमल, एक पादपीठ और विविध दिव्य पूजन-द्रव्य होते हैं ॥६१६-६२३॥

चाँतीस अतिशयोका वर्णन समाप्त हुआ ।

अशोक वृक्ष प्रातिहार्यका निरूपण—

जोसिं तरुण - मूले, उप्पण्णं जाण केवलं णाणं ।

उसह - प्पहुदि - जिणाणं, ते चिय असोय-रुक्ख ति ॥६२४॥

अर्थ :—ऋषभादि तीर्थकरोको जिन वृक्षोंके नीचे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ है वे ही अशोक-वृक्ष हैं ॥६२४॥

णग्गोह - सत्तपण्णं, सालं सरलं पियंगु तच्चेव ।

सिरिसं णागतरू वि य, अक्खा धूलीपलास त्तेव्वं ॥६२५॥

पाडल-जंबू पिप्पल - दहिबण्णो णंदि-तिलय-चूदा य ।

'कंकेलि - चंप - बउलं, मेसयसिगं^१ धवं सालं ॥६२६॥

सोहंति असोय - तरू, पल्लव - कुसुमाणबाहि साहाहि ।

लंबंत - मुत्त - वामा, घंटा - जालादि - रमणिज्जा ॥६२७॥

अर्थ :—१ न्यग्रोध, २ सप्तपर्ण, ३ शाल, ४ सरल, ५ प्रियगु, ६ प्रियगु, ७ शिरोष, ८ नागवृक्ष, ९ अक्ष (बहेड़ा), १० धूलिपलाश, ११ तेंदू, १२ पाटल, १३ जम्बू, १४ पीपल, १५ दधिपर्ण, १६ नन्दी, १७ तिलक, १८ आम्र, १९ ककेलि (अशोक), २० चम्पक, २१ बकुल, २२ मेघशृङ्ग, २३ धव और २४ शाल, ये तीर्थकरोके अशोकवृक्ष हैं । लटकती हुई मोतियोंकी मालाओं और घण्टा-समूहादिकसे रमणीय तथा पल्लवो एव पुष्पोसे भुकी हुई शाखाओ वाले ये सब अशोक वृक्ष अत्यन्त शोभायमान होते हैं ॥९२५-९२७॥

णिय-णिय-जिण-उदएहि, बारस-गुणिवेण सरिस-उच्छेहा' ।

उसह - जिण - प्पहुदीणं, असोय - रुक्खा विरायति ॥६२८॥

अर्थ — ऋषभादिक तीर्थकरोके उपयुक्त चौबीस अशोकवृक्ष अपने-अपने जिनेन्द्रकी ऊँचाईसे बारह गुणे ऊँचे शोभायमान हैं ॥६२८॥

किं वण्णणेण बहुणा, दट्ठणमसोय - पादवे एदे ।

णिय - उज्जाए - वणेसुं, ण रमदि चित्तं सुरेसस्स ॥६२९॥

अर्थ :—बहुत वर्णनसे क्या ? इन अशोक वृक्षोको देखकर इन्द्रका भी चित्त अपने उद्यान-वनोमे नही रमता है ॥६२९॥

तीन छत्र प्रातिहार्यं—

ससि - मंडल - संकासं, मुत्ताजाल - प्पयास - 'संजुत्त' ।

छत्तसयं विरायदि सग्वाणं तित्थ - 'कसाणं' ॥६३०॥

अर्थ :—चन्द्र-मण्डल सहस्र और मुक्ता-समूहोंके प्रकाशसे सयुक्त तीन छत्र सब तीर्थकरोके (मस्तको पर) शोभायमान होते हैं ॥६३०॥

सिहासन प्रातिहार्यं—

सिहासणं विसालं, विमुद्ध - फलिहोवलेहि गिम्मविदं ।

वर-रण-णियर-खचिदं, को सक्कइ वण्णिदुं ताणं ॥६३१॥

अर्थ :—निर्मल स्फटिक-पाषाणसे निमित और उत्कृष्ट रत्नोके समूहसे खचित उन तीर्थकरोका जो विशाल सिहासन होता है, उसका वर्णन करनेमें कौन समर्थ हो सकता है ॥६३१॥

भक्ति युक्त गणों द्वारा वेष्टित प्रातिहार्य—

णिबभर-भस्ति-पसस्ता, अंजलि-हृत्था पफुल्ल-मुह-कमला ।

चेदुंति गणा सव्ये, एक्केक्कं वेदिऊण' जिणं ॥६३२॥

अर्थ :—गाढ भक्तिमें आसक्त. हाथ जोड़े हुए एव विकसित मुख कमलसे सयुक्त सम्पूर्ण (द्वादश) गण प्रत्येक तीर्थंकर को घेर कर (बारह सभाश्रोमे) स्थित रहते हैं ॥६३२॥

दुन्दुभिवाद्य प्रातिहार्य—

विसय-कसायासस्ता, हृद-मोहा पविस जिणपहू सरणं ।

कहिदुं वा भव्वाणं, गहिरं सुर - दुदुही सरइ ॥६३३॥

अर्थ :—“विषय-कषायोमें आसक्त (हे जीवो) मोहसे रहित होकर जिनेन्द्र प्रभुकी धरणमें जाओ,” भव्य जीवोको ऐसा कहनेके लिए ही मानो देवोका दुन्दुभी बाजा गम्भीर शब्द करता है ॥६३३॥

पुष्पवृष्टि प्रातिहार्य—

भूण-भूण-भूणंत-छप्पय-छणणा वरभस्ति-भरिद-सुरमुक्का ।

णिवडेवि कुसुम - बिट्ठी, जिणंद - पय-कमल - मूलेसुं ॥६३४॥

अर्थ :—भूत-भूत शब्द करते हुए भ्रमरोसे व्याप्त एव उत्तम भक्तियुक्त देवों द्वारा छोड़ी हुई पुष्पवृष्टि भगवान् जिनेन्द्रके चरण-कमलोंके मूलमें गिरती है ॥६३४॥

प्रभामण्डल प्रातिहार्य—

भव-सग-वंसण-हेदुं, वरिसण - मेल्लेण सयल - लोयस्स ।

भामंडलं जिणाणं, रवि - कोडि - समुज्जले जयइ ॥६३५॥

अर्थ :—जो दर्शन-मात्रसे ही सब लोगोको अपने-अपने सात भव देखनेमें निमित्त है और करोड़ों सूर्योके सदृश उज्ज्वल है तीर्थंकरोका ऐसा वह प्रभामण्डल जयवन्त होता है ॥६३५॥

चमर प्रातिहार्य—

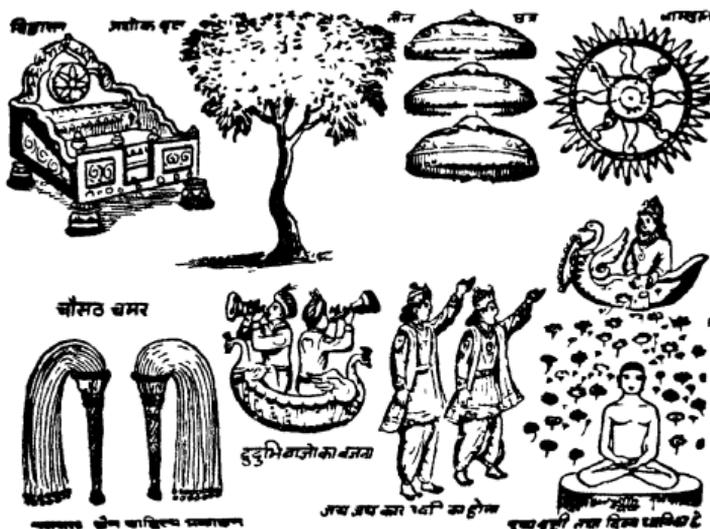
खउसट्टि - चामरेहि, मुणाल - कुदेंदु - संख - धवलेहि ।

सुर - कर - पल्लिविदोहि बिज्जिज्जंता जयंतु जिणा ॥६३६॥

। अद्दु महापाडिहेरा समत्ता ।

अर्थ :—देवोके हाथोसे झुलाये (ढोरे) गये मृणाल, कुन्दपुष्प, चन्द्रमा एव शङ्ख सदृश सफेद चौसठ चामरोसे वीज्यमान जिनेन्द्र भगवान् जयवन्त होवें ॥६३६॥

। आठ महाप्रातिहार्योका कथन समाप्त हुआ ।



नमस्कार—

चउतीसतिसय - संजुद'- अद्दु महापाडिहेर - संजुषे ।

मोक्षयरे तित्ययरे, तिहुबण - गाहे णमंसामि ॥६३७॥

अर्थ :—जो चौतीस-बतिसायोंको प्राप्त हैं, आठ महाप्रातिहार्योसे संयुक्त हैं, मोक्षको करने वाले (मोक्षमार्गके नेता) हैं और तीनों लोकोंके स्वामी हैं ऐसे तीर्थंकरोंको मैं नमस्कार करता हूँ ॥६३७॥

समोसरणोंमें बन्दनारत जीवोंकी संख्या—

जिण - बंदणा - पयट्टा, पल्लासंखेज्जभाग - परिमाणा ।

खेट्टंति विविह - जीवा, एक्केक्के समवसरणेषुं ॥६३८॥

अर्थ :—प्रत्येक समवसरणमें पत्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण विविध-प्रकारके जीव जिन-देवकी बन्दनामें प्रवृत्त होते हुए स्थित रहते हैं ॥६३८॥

अवगाहन शक्तिकी प्रतिशयता—

कोट्टाणं खेत्तादो, जीवखेत्तप्फलं असंख - गुणं ।

होदूण अपुट्ट त्ति हु, जिण - माहप्पेण ते सन्वे ॥६३९॥

अर्थ :—समवसरणके कोठोके क्षेत्रसे यद्यपि जीवोका क्षेत्रफल असंख्यातगुणा है, तथापि वे सब जीव जिनेन्द्रदेवके माहात्म्यसे एक दूसरेसे अस्पृष्ट रहते हैं ॥६३९॥

प्रवेश-निर्गमन प्रमाण—

सखेज्ज - जोयणाणि, बाल - प्पहुदी पवेस - णिग्गमणे ।

अत्तोमुहुत्त - काले, जिण - माहप्पेण गच्छंति ॥६४०॥

अर्थ :—जिनेन्द्र भगवान्के माहात्म्यसे बालक-प्रभृति जीव समवसरणमें प्रवेश करने करते अथवा निकलनेमें अन्तर्मुहूर्तकालके भीतर संख्यात योजन चले जाते हैं ॥६४०॥

समवसरणमें कौन नहीं जाते ?

मिच्छाइट्टि^१-अभट्ठा, तेसु असण्णो ण होंति कइयावि ।

तह य अणज्भवसाया, संबिद्धा विविह - विवरीया ॥६४१॥

अर्थ :—समवसरणमें मिथ्यादृष्टि, अभव्य और असजी जीव कदापि नहीं होते तथा अनध्यवसायसे युक्त, सन्देहसे सयुक्त और विविध प्रकारकी विपरीतताओ वाले जीव भी नहीं होते ॥६४१॥

समबसरणमें रोगादिका अभाव—

आतंक - रोग - मरणुप्पत्तीओ वेर - काम - बाधाओ ।

तण्हा - छुह - पीडाओ, जिण - माहूप्येण ण बि होंति ॥६४२॥

अर्थ :—जिन भगवान्के माहात्म्यसे आतङ्क, रोग, मरण, उत्पत्ति, वैर, कामबाधा तथा पिपासा और क्षुधाकी पीडाएँ वहाँ नहीं होती हैं ॥६४२॥

ऋषभादि तीर्थकरोके यक्ष—

जक्खणाम—

गोवदन - महाजक्खा, तिमुहो जक्खेसरो य तुंबुरओ ।

मावंग - विजय - अजियो, बम्हो बम्हेसरो य कोमारो ॥६४३॥

छम्मुहओ पादालो, किण्णर - किपुरिस - गरुड-गंधव्वा ।

तह य कुबेरो बरुणो, भकुडी-गोमेध-पास-मातंगा ॥६४४॥

गुज्झकओ इदि एदे, जक्खा चउबीस उसह - पट्टुदीहि ।

तित्थयराणं पासे, चेट्टंते भत्ति - संजुत्ता ॥६४५॥

अर्थ :—१ गोवदन, २ महायक्ष, ३ त्रिमुख, ४ यथेश्वर, ५ तुम्बुख, ६ मातंग, ७ विजय, ८ अजित, ९ ब्रह्म, १० ब्रह्मोत्तर, ११ कुमार, १२ षण्मुख, १३ पाताल, १४ किन्नर, १५ किम्पुह, १६ गरुड, १७ गन्धर्व, १८ कुबेर, १९ वरुण, २० भृकुटि, २१ गोमेध, २२ पाशर्व, २३ मातंग और २४ गुह्यक, भक्तिसे सयुक्त चौबीस यक्ष ऋषभादिक तीर्थकरोके पास स्थित रहते हैं ॥६४३-६४५॥

ऋषभादि तीर्थकरोकी यक्षिणियाँ—

जक्खीओ चक्केसरि - रोहिणि-पण्णत्ति-वज्जसिखलया ।

वज्जकुसा य अप्पदिचक्केसरि - पुरिसदत्ता^२ य ॥६४६॥

मणवेगा - कालीओ, तह जालामालिणी महाकाली ।

गउरी - गंधारीओ, वेरोटी णामया अणंदमदी ॥६४७॥

माणसि-महमाणसिया, जया य विजयापराजिबाभ्रो य ।

बहुरूपिणि - कुंभंडी, पउमा - सिद्धायिणीओ सि ॥६४८॥

अर्थ :- १ चक्रेश्वरी, २ रोहिणी, ३ प्रज्ञप्ति, ४ वज्रभृंखला, ५ वज्राकुशा, ६ अप्रति-
चक्रेश्वरी, ७ पुष्यदत्ता, ८ मनोवेगा, ९ काली, १० ज्वालामालिनी, ११ महाकाली, १२ गौरी,
१३ गान्धारी, १४ वैरोटी, १५ अनन्तमती, १६ मानसी, १७ महामानसी, १८ जया, १९ विजया,
२० अपराजिता, २१ बहुरूपिणी, २२ कूष्माण्डी, २३ पद्मा और २४ सिद्धायिनी ये यक्षिणियां भी
क्रमशः ऋषभादिक चौबीस तीर्थकरोके समीप रहा करती है ॥६४६-६४८॥

जिनेन्द्रभक्तिका फल -

वसन्ततिलकम्—

पीयूष - गिजभर - गिहं जिण - चंद - वाणि,
सोऊण बारस गणा 'गिय - कोट्टएसु' ।

गिचचं अणंत - गुणसेडि - विसुद्धि - लद्धा -
छिदंति कम्म - पडलं खु असखसेण ॥६४९॥

अर्थ :- जैसे चन्द्रमासे अमृत भरता है, उसी प्रकार जिनेन्द्र रूपी चन्द्रमाकी वाणीको
अपने-अपने कोठिमे सुनकर वे भिन्न-भिन्न जीवोके वारह गण नित्य अनन्त-गुणश्रेणीरूप विशुद्धिसे
सयुक्त शरीरको धारण करते हुए अस्ख्यातश्रेणीरूप कर्म-पटलको नष्ट करते हैं ॥६४९॥

इन्द्रवज्रा—

भत्तीए आसत्त-मगा जिणिव-पायारविदेसु गिवेसियत्था ।

णादीद-कालं ण पयट्टमाणं, णो भावि-कालं पबिभाबयंति ॥६५०॥

अर्थ :- जिनका मन भक्तिमे आसक्त है और जिन्होंने जिनेन्द्र-देवके पादारविन्दोमे आस्था
(श्रद्धा) रखी है वे भव्य जीव अतीत, वर्तमान और भावी कालको भी नहीं जानते हैं । अर्थात् भक्ति-
वश 'मैं कौन हूँ, कौन था और क्या होऊँगा' इस विकल्पसे रहित हो जाते हैं ॥६५०॥

इन्द्रवज्रा—

एवं पहावा भरहस्स खेत्ते, धम्म-प्यउत्ती^१ परमं विसंता ।

सव्वे जिणिवा वर-भव्व-संघस्सप्पोत्थिदं^२ भोक्ख-सुहाइ-वेतु ॥६५१॥

अर्थ :—उपर्युक्त प्रभावसे संयुक्त वे सब तीर्षकर भरत क्षेत्रमें उत्कृष्ट धर्म-प्रवृत्तिका उपदेश देते हुए उत्तम भव्य-समूहको आत्मासे उत्पन्न हुआ मोक्ष-सुख प्रदान करें ॥६५१॥

ऋषभादि तीर्थकरोंका केवलिकाल—

पुव्व्वाणमेव्वक - लक्खं, वासाणं ऊणिदं सहस्सेण ।

उसह - जिणिदे कहिदं, केवलि - कालस्स परिमाणं ॥६५२॥

उसह पू० १ ल ॥ रिण=वास १००० ॥

अर्थ :—ऋषभ जिनेन्द्रके केवलिकालका प्रमाण एक हजार वर्ष कम एक लाख पूर्व कहा गया है ॥६५२॥

वारस-वच्छर - समहिय-पुव्वंग-विहीण-पुव्व-इगि-लक्खं ।

केवलिकाल - पमाणं, अजिय - जिणिदे मुणेयव्वं ॥६५३॥

अजिय पू० १ ल ॥ रिण=पूर्वांग १ व १२ ।

अर्थ :—अजित जिनेन्द्रके केवलिकालका प्रमाण बारह वर्ष और एक पूर्वाङ्ग कम एक लाख पूर्व जानना चाहिए ॥६५३॥

चोद्दस-वच्छर - समहिय-चउ-पुव्वंगोण-पुव्व-इगि-लक्खं ।

संभव - जिणस्स भणिदं, केवलिकालस्स परिमाणं ॥६५४॥

संभव पू० १ ल ॥ रिण=पूर्वांग ४ । १४ वस्स ।

अर्थ :—संभव जिनेन्द्रका केवलिकाल चौदह वर्ष, चार पूर्वाङ्ग कम एक लाख पूर्व प्रमाण कहा गया है ॥६५४॥

अट्टारस - वासाहिव्व - अड-^३पुव्वंगोण-पुव्व-इगि-लक्खं ।

केवलिकाल - पमाणं, णंदणराहम्मि रिण्हिट्ठं ॥६५५॥

णदण पू० १ ल ॥ रिण=पूर्वांग ८ वस्स १८॥

अर्थ :—अभिनन्दन जिनेन्द्रका केवलिकाल अठारह वर्ष और ८ पूर्वाङ्ग कम एक लाख पूर्व प्रमाण निर्दिष्ट किया गया है ॥१५५॥

बीसदि - बच्छर-समहिय - बारस-पुव्वंग-हीण-पुव्वानं ।

एकं लक्षं होदि ह, केवलिकालं सुमहणाहम्मि ॥१५६॥

सुमइ पू० १ ल ॥ रिण=पुव्वंग १२ ॥ वास २० ॥

अर्थ :—सुमति जिनेन्द्रका केवलिकाल बीस वर्ष और १२ पूर्वाङ्ग कम एक लाख पूर्व प्रमाण है ॥१५६॥

विगुणिय-तिमास-समहिय-सोलस-पुव्वंग हीण - पुव्वानं ।

इगि - लक्ष पउमणाहे, केवलिकालस्स परिमाणं ॥१५७॥

पउम पू० १ ल ॥ रिण=पुव्वंग १६ ॥ मा ६ ॥

अर्थ :—पय जिनेन्द्रका केवलिकाल ६ मास और सोलह पूर्वाङ्ग कम एक लाख पूर्व प्रमाण है ॥१५७॥

राख - संबच्छर - समहिय-बीसदि-पुव्वंग-हीण-पुव्वानं ।

एकं लक्षं केवलिकाल - पमाणं सुपास - जिणे ॥१५८॥

सुपास पू० १ ल ॥ रिण=पुव्वंग २० ॥ वास ६ ॥

अर्थ :—सुपासर्व जिनेन्द्रका केवलिकाल नौ वर्ष और बीस पूर्वाङ्ग कम एक लाख पूर्व प्रमाण है ॥१५८॥

मास-तिवयाहिय'- चउबीसदि-पुव्वंग - रहिद - पुव्वानं ।

इगि - लक्षं चंदप्पह - केवलिकालस्स संखाणं ॥१५९॥

चदपह पू० १ ल ॥ रिण=पूर्वांग २४ ॥ मास ३ ॥

अर्थ :—चन्द्रप्रथ जिनेन्द्रके केवलिकालकी संख्या तीन माह और बीस पूर्वाङ्ग कम एक लाख पूर्व है ॥१५९॥

चउ-बञ्जर - समहिय-अडबीसदि-पुव्वंग-रहिद पुव्वानं ।
एवकं लक्खं केवलिकाल - पमाणं च पुप्फवंत - जिणे ॥६६०॥

पुप्फ पू० १ ल ॥ रिण=पूर्वांग २८ ॥ वास ४ ॥

अर्थ :—पुष्पदन्त जिनेन्द्रका केवलिकाल चार वर्ष और अट्ठाईस-पूर्वाङ्गकम एक लाख पूर्व प्रमाण है ॥६६०॥

संवस्सर-तिद - ऊणिय - पणवीस-सहस्सयाणि पुव्वानि ।
सीयलजिणम्मि कहिदं, केवलिकालस्स परिमाणं ॥६६१॥

सीयल पुव्व० २५००० । रिण=वास ३ ॥

अर्थ :—शीतल जिनेन्द्रके केवलिकालका प्रमाण तीन वर्ष कम पच्चीस-हजार पूर्व कहा गया है ॥६६१॥

इगिबीस-वस्स-लक्खा, दोहि विहीणा पहुम्मि सेयसे ।
चउवण्ण-वास-लक्खं, ऊणं एक्केण वासुपुज्जजिणे ॥६६२॥

॥ सेयंस वस्स^१ २०६६६६८ ॥ वासुपुज्ज वस्स ५३६६६६६ ॥

अर्थ :—श्रेयास जिनेन्द्रका केवलिकाल दो (वर्ष) कम इनकीस लाख वर्ष और वासुपूज्य जिनेन्द्रका एक कम चीवन लाख वर्ष प्रमाण है ॥६६२॥

पण्णरस-वास-लक्खा, तिदय-विहीणा य विमलणाहम्मि ।
सय-कदि-हय-पण्णरारि-वासा दो विरहिदा अणंतजिणे ॥६६३॥

॥ विमल^२ वस्स १४६६६६७ । अणंत वास ७४६६६८ ॥

अर्थ :—विमल जिनेन्द्रका केवलिकाल तीन कम पन्द्रह लाख वर्ष और अनन्तनाथ जिनेन्द्रका सोके वर्गसे गुणित पचहत्तरमेसे दो कम है ॥६६३॥

पंच - सयानं वग्गो, ऊणो एक्केण घम्मणाहम्मि ।
वस-घण - हद - पणुवीसा, सोलस - हीणा य संतीसे ॥६६४॥

॥ घम्म वस्स २४६६६६६ । सति २४९८४ ॥

अर्थ :—धर्मनाथ जिनेन्द्रका केवलिकाल पाँचसौके वर्गमेंसे एक कम और शान्तिनाथ जिनेन्द्रका दसके घनसे गुणित पच्चीसमेंसे सोलह वर्ष कम है ॥१६५॥

**चौतीसाहिय-सग-सय, तेबीस-सहस्सयाणि कुंभुम्मि ।
चउसीदो-जुव-णव-सय-बीस-सहस्सा अरम्मि वासाणं ॥१६५॥**

। कुंभु २३७३४ । अर २०१८४ ॥

अर्थ :—कुन्धुनाथ जिनेन्द्रका केवलिकाल तेईस हजार सातसौ चौतीस वर्ष और अरनाथ जिनेन्द्रका बीस हजार नौ सौ चौरासी वर्ष प्रमाण है ॥१६६॥

**एव-णउवि-अहिय-अउ-सय-चउवण-सहस्सयाणि वासाणि ।
एक्करसं चिय मासा, चउवीस दिणाइ मल्लिम्मि ॥१६६॥**

। मल्लि वाम ५४८१६ मा ११ दि २४ ।

अर्थ :—मल्लिनाथ जिनेन्द्रका केवलिकाल चौवन हजार आठ सौ निन्यानबे वर्ष, ग्यारह मास और चौबीस दिन प्रमाण है ॥१६६॥

**णवरणउवि-अहिय-चउ-सय-सत्त-सहस्साणि वस्सराणि पि ।
इगि - मासो सुव्वदए, केवलिकालस्स परिमाणं ॥१६७॥**

। सुव्वद वा० ७४१६ मा १ ।

अर्थ :—मुनिसुव्वन जिनेन्द्रका केवलिकाल सात हजार चारसौ निन्यानबे वर्ष और एक मास प्रमाण है ॥१६७॥

**वासाणि दो सहस्सा, चत्तारि सयाणि णमिम्मि इगिणउदो ।
एक्कोणा सत्त - सया, दस मासा चउ - दिणाणि णेमिस्स ॥१६८॥**

। णमि वा २४११ । णेमि वा ६१६ मा० १० दि ४ ।

अर्थ :—नमिनाथ जिनेन्द्रका केवलिकाल दो हजार चार सौ एकानबे वर्ष और नेमिनाथ जिनेन्द्रका एक कम सातसौ वर्ष, दस मास तथा चार दिन प्रमाण है ॥१६८॥

अड-मस-समहियाणं, ऊणत्तारि वस्सराणि पासजिणे ।
वीरम्मि तीस वासा, केवलिकालस्स संख्खं लि ॥६६६॥

। पाम वास ६६ मा ८ । वीर वास ३० ।

अर्थ :—पार्श्वजिनेन्द्रके केवलिकाल का प्रमाण आठ मास अधिक उनत्तर वर्ष और वीर जिनेन्द्रका तीस वर्ष है ॥६६६॥

प्रत्येक तीर्थकरके गणधरोकी सख्या—

चउसीदि णउदि पण-तिग-सोलस-एक्कारसुत्तर-सयाइं ।
पणणउदी ते - णउदी, गणहरदेवा हु अट्ट - परियत्तं ॥६७०॥

। उ ८४, अ ६०, स १०५, ण १०३, मु ११६, प १११, सु ६५, च. ६३ ।

अर्थ :—आठवे तीर्थकर पर्यन्त क्रमशः चौरासी, नब्बे, एकसौ पाँच, एकसौ तीन, एकसौ सोलह, एकसौ ग्यारह, पंचानवे और तेरानवे गणधर देव थे ॥६७०॥

अडसीदी सगसीदी, सत्तारि छक्क - समहिया सट्टी ।
पणवण्णा पण्णासा, तत्तो य अणत्तं - परियत्तं ॥६७१॥

। पु ८८, सी ८७, से ७७, वामु ६६, वि ५५ अण ५० ।

अर्थ :—अनन्तनाथ तीर्थकर पर्यन्त क्रमशः अठासी, सतासी, मतत्तर, छासठ, पचपन और चास गणधर थे ॥६७१॥

तेवालं छत्तीसा, पणतीसा तीस अट्टवीसा य ।
अट्टारस सत्तरसेक्कारस - दस - एक्करस य वीरत्तं ॥६७२॥

घ० ४३, संति ३६, कु थु ३५, अर ३०, म २८, मु १८, ए १७, णे ११, पा १०, वीर ११ ।

अर्थ :—धर्मनाथसे वीर जिनेन्द्र पर्यन्त क्रमशः तैतालीस, छत्तीस पंतीस, तीस, अट्टाईस, ठारह, सत्तर, ग्यारह, दस और ग्यारह गणधर थे ॥६७२॥

ऋषभादि तीर्थंकरोके आद्य गणधरोंके नाम -

'पद्मो हु उसहसेणो, केसरिसेणो य चारुदत्तो य ।
वज्जचमरो^२ य वज्जो, चमरो बलदत्ता - वेदग्भा ॥६७३॥

णागो कुंथू धम्मो, मंदिरणामा जओ अरिट्ठो य ।
सेणो चक्कायुहयो, सयंभू कुंभो विसाखो य ॥६७४॥

मल्लीणानो सोमा - वरदत्ता सयंभु - इंद्रभूदीओ ।
उसहादीणं आदिम - गणहर णामाणि एदाणि ॥६७५॥

अर्थ :—१ ऋषभसेन, २ केशरि (सिंह) सेन, ३ चारुदत्त, ४ वज्जचमर, ५ वज्ज, ६ चमर, ७ बलदत्त (बलिदत्तक), ८ वेदार्भ, ९ नाग (अनगार), १० कुन्थु, ११ घर्म, १२ मन्दिर, १३ जय, १४ अरिष्ट, १५ सेन (अरिष्टमेन), १६ चक्रायुध, १७ स्वयंभू, १८ कुम्भ (कुन्थु), १९ विशाख, २० मल्लि, २१ सोमक, २२ वरदत्त, २३ स्वयंभू और २४ इन्द्रभूति, ये क्रमशः ऋषभादि तीर्थंकरोंके प्रथम गणधरोंके नाम हैं ॥६७३-६७५॥

तालिका . ०६ अगले पृष्ठ पर देखिये

ऋद्धियोका स्वरूप कहनेकी प्रतिज्ञा एव उनके भेद—

एवे गणहर - देवा, सब्बे वि हु अट्ट-रिद्धि-संपुण्णा ।
तार्णं रिद्धि - सरुधं, लव - भेत्तं तं णिरुवेमो ॥६७६॥

अर्थ :—ये सब ही गणधरदेव आठ ऋद्धियोंसे सयुक्त होते हैं । यहाँ उन गणधरोंकी ऋद्धियोंके स्वरूपका हम लव-मात्र निरूपण करते हैं ॥६७६॥

तीर्थंकरोंका केवलिकाल, गणधरोंकी संख्या एवं नाम—

नं०	नाम	केवलिकाल (गा० ६५२-६६६)	गणधरोंकी संख्या ग. ६७१-७३	ऋषभादि तीर्थंके आद्य गणधरोंके नाम गा. ६७३-७५
१	ऋषभनाथ	६६६६६ पूर्व, ८३६६६६६ पूर्वांग, ८३६६००० वर्ष ।	८४	ऋषभसेन
२	अजितनाथ	६६६६६ पूर्व, ८३६६६६८ पूर्वांग, ८३६६६८८ वर्ष ।	६०	केशरि(सिंह)सेन
३	सम्भव	६६६६६ पूर्व, ८३६६६६५ पूर्वांग, ८३६६६८६ वर्ष ।	१०५	चारुदत्त
४	अभिनन्दन	६६६६६ पूर्व, ८३६६६६१ पूर्वांग, ८३६६६८२ वर्ष ।	१०३	वज्रचमर
५	सुमतिनाथ	६६६६६ पूर्व, ८३६६६८७ पूर्वांग, ८३६६६८० वर्ष ।	११६	वज्र
६	पद्मप्रभु	६६६६६ पूर्व, ८३६६६८३ पूर्वांग, ८३६६६६३ वर्ष ।	१११	चमर
७	सुपाश्वनाथ	६६६६६ पूर्व, ८३६६६७६ पूर्वांग, ८३६६६६१ वर्ष ।	६५	बलदत्त
८	चन्द्रप्रभ	६६६६६ पूर्व, ८३६६६७५ पूर्वांग, ८३६६६६६ वर्ष ।	६३	वैदर्भ
९	पुष्पदन्त	६६६६६ पूर्व, ८३६६६७१ पूर्वांग, ८३६६६६६ वर्ष ।	८८	नाग (अनगार)
१०	शीतलनाथ	२४६६६ पूर्व, ८३६६६६६ पूर्वांग, ८३६६६६७ वर्ष ।	८७	कुन्धु
११	श्रेयासनाथ	२०६६६६८ वर्ष ।	७७	धर्म
१२	वासुपूज्य	५३६६६६६ वर्ष ।	६६	मन्दिर
१३	विमलनाथ	१४६६६६७ वर्ष ।	५५	जय
१४	अनन्तनाथ	७४६६६६ वर्ष ।	५०	अरिष्ट
१५	धर्मनाथ	२४६६६६ वर्ष ।	४३	सेन (अरिष्टसेन)
१६	शान्तिनाथ	२४६६६ वर्ष ।	३६	चक्रायुध
१७	कुन्धुनाथ	२३७३४ वर्ष ।	३५	स्वयभू
१८	अरनाथ	२०६६६ वर्ष ।	३०	कुम्भ (कुन्धु)
१९	मल्लिनाथ	५४६६६ वर्ष, ११ मास, २४ दिन ।	२८	विशाख
२०	मुनिसुव्रत	७४६६ वर्ष, १ मास	१८	मल्लि
२१	नमिनाथ	२४६१ वर्ष ।	१७	सुप्रभ (सोमक)
२२	नेमिनाथ	६६६ वर्ष, १० मास, ४ दिन ।	११	वरदत्त
२३	पाश्वनाथ	६६ वर्ष, ८ मास ।	१०	स्वयभू
२४	वीरनाथ	३० वर्ष ।	११	इन्द्रभूति

बुद्धी-विकिरिय'-किरिया, तब-बल-ओसहि-रसक्लिदी रिद्धी ।

एबासु बुद्धि - रिद्धी, अट्टारस - भेद - विक्खादा ॥६७७॥

ओहि - मणपुजवाणं, केवलजाणी वि बीज - बुद्धी य ।

पंचमया कोट्टमई, पदानुसारित्तणं छट्टं ॥६७८॥

संभिण्णस्तोदित्तं, दूरस्सादं च दूरपत्तं च ।

दूरघाणं दूरस्सवणं तह दूरदंसणं खेव ॥६७९॥

दस-चोट्टस - पुग्गित्तं, णिमित्त-रिद्धीए तत्थ कुसलत्तं ।

पणसमणाहियाणं, कमसो पत्तेय - बुद्धि - वादित्तं ॥६८०॥

अर्थ :—१ बुद्धि, २ विक्रिया, ३ क्रिया, ४ तप, ५ बल, ६ औषधि, ७ रस और ८ क्षिति (क्षेत्र) के भेदसे ऋद्धियाँ आठ प्रकारकी हैं ।

इनमेसे बुद्धिऋद्धि—१ अवधिज्ञान, २ मनःपर्ययज्ञान, ३ केवलज्ञान, ४ बीजबुद्धि, ५ कोष्ठ-मति, ६ पदानुसारित्व, ७ संभिन्नश्रोतृत्व, ८ दूरास्वादन, ९ दूरस्पर्श, १० दूरघ्राण, ११ दूरश्रवण, १२ दूरदर्शन, १३ दसपूर्वित्व, १४ चौदह-पूर्वित्व, १५ निमित्तऋद्धि इनमें कुशलता, १६ प्रज्ञाश्रमण, १७ प्रत्येक-बुद्धित्व और १८ वादित्व इन अठारह भेदोंसे विख्यात है ॥६७७-६८०॥

बुद्धि-ऋद्धियोंके अन्तर्गत अवधिज्ञान ऋद्धिका स्वरूप—

अन्तिम - खंदंताई^१, परमाणु - प्यहृदि - मुत्ति-इब्बाई ।

अं पच्चक्खं जाणइ, तमोहिणाणं ति णादब्बं ॥६८१॥

। ओहिणाणं गदं ।

अर्थ :—जो (देश) प्रत्यक्ष-ज्ञान अन्तिम स्कन्ध-पर्यन्त परमाणु आदिक मूर्त द्रव्योंको जानता है उसको अवधिज्ञान जानना चाहिए ॥६८१॥

। अवधिज्ञानका वर्णन पूर्ण हुआ ।

मनःपर्ययज्ञान ऋद्धि—

चित्तिमच्चित्तियं वा, 'अद्ध' चित्तियमण्ये - भेय - गयं ।
जं जाणइ णर - लोए, तं चिय मणपज्जवं णाणं ॥६८२॥

। मणपज्जवणाणं गदं ।

अर्थ :—मनुष्य लोकमे स्थित अनेक भेद रूप चिन्तित, अचिन्तित अथवा अर्धचिन्तित पदार्थोंको जो ज्ञान जानता है वह मनःपर्ययज्ञान है ॥६८२॥

। मनःपर्ययज्ञान का वर्णन पूर्ण हुआ ।

केवलज्ञान—

उपविट्ठ-सयल-भावं, लोयालोएसु तिमिर - परिचत्तं ।
केवलमखंड - भेदं, केवलणाणं भणंति ^३जिणा ॥६८३॥

। केवलणाणं गदं ।

अर्थ :—जो ज्ञान प्रतिपक्षीसे रहित होकर सम्पूर्ण पदार्थोंको विषय करता है, लोक एवं अलोकके विषयमें अज्ञान-तिमिरसे रहित है, केवल (इन्द्रियादिक की सहायतासे रहित) है श्रीर अखण्ड है, उसे जिनेन्द्रदेव केवलज्ञान कहते हैं ॥६८३॥

। केवलज्ञान का वर्णन पूर्ण हुआ ।

बीजबुद्धि—

णोइंदिय - सुदणाणावरणाणं ^३वीरअंतरायाए ।
तिविहाणं पयडीणं, उक्कस्स - खओवसम - विसुद्धस्स ॥६८४॥
संखेज्ज - सरुबाणं, ^४सद्दाणं तत्थ लिग - संजुत्तं ।
एक्कं चिय बीजपदं, लद्धूण गुरुपदेसेणं ॥६८५॥

१. द. व. क. ज. य. उ. अत्यचिता य । २. व. उ. विहाणं । ३. द. क. ज. य. वीरिय ।

४. द. व. क. ज. य. उ. तत्ताणं ।

तस्मि पदे आहारे, सयल - सुदं चित्तिऊण' गेणहेवि ।
कस्स वि महेत्तिणो जा, बुद्धी सा बीज - बुद्धि त्ति ॥१८६॥

। बीज-बुद्धी समत्ता ।

अर्थ :—नोइन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्याग्नेराय इन तीन प्रकारकी प्रकृतियोंके उत्कृष्ट क्षयोपशमसे विमुक्त हुए किसी भी महर्षिकी जो बुद्धि सख्यात-स्वरूप गन्दोके मध्यमेमे लिङ्ग सहित एक ही बीजभूत पदको गुरुके उपदेशसे प्राप्त कर उस पदके आश्रयसे सम्पूर्ण श्रुतको विचार कर ग्रहण करती है, वह बीज-बुद्धि है ॥१८४-१८६॥

। बीज-बुद्धिकी वर्णना समाप्त हुई ।

कोष्ठबुद्धि—

उक्कस्स - धारणाए, जुत्तो पुरिसो गुरूवदेसेण ।
णाणाविह - गंधेसु^२, वित्थारे लिंग - सद् - बीजाणि ॥१८७॥

गहिऊण णिय-मदीए, मिस्सेण विणा धरेवि मदि-कोट्टे ।
जो होवि तस्स बुद्धी, णिट्ठिटा कोट्ट - बुद्धि त्ति ॥१८८॥

। कोट्ट-बुद्धी^३ गदा ।

अर्थ :—उत्कृष्ट धारणामे युक्त जो कोई पुरुष (ऋषि) गुरुके उपदेशमे नाना प्रकारके ग्रन्थोमेसे विस्तार पूर्वक लिङ्ग सहित शब्दरूप बीजोको अपनी बुद्धिसे ग्रहण कर उन्हें मिश्रणके त्रिना बुद्धिरूपी कोठेमे धारण करता है, उसकी बुद्धि कोष्ठ-बुद्धि कही गई है ॥१८७-१८८॥

। कोष्ठ बुद्धिकी वर्णना समाप्त हुई ।

पदानुसारिणी बुद्धिके भेद एव उनका स्वरूप -

बुद्धी वियक्ख - णाणं, पदानुसारी हवेदि तिवियप्पा ।
अणुसारी पडिसारी, जहत्य - णामा उभयसारी ॥१८९॥

१. द. ब. क. ज. य. उ. चित्तियाण । २. द. गंधेसु वित्थारे लिंग-सद्दु बीजाणि । ३. द. व.

अर्थ :—विशिष्ट ज्ञानको पदानुसारणी बुद्धि कहते हैं। उसके तीन भेद हैं—अनुसारणी, प्रतिसारणी और उभयसारणी। ये तीनों बुद्धियाँ यथार्थ नाम वाली हैं ॥६५६॥

आदि - अवसाण - मज्झे, गुरुवदेसेण एक्क-बीज-पदं ।

गेण्ह्य उवरिम-गंथं, जा गिण्हदि सा मवी हु अणुसारी ॥६६०॥

। अणुसारी गदा ।

अर्थ :—जो बुद्धि आदि, मध्य एवं अन्तमें गुरुके उपदेशसे एक बीज पदको ग्रहण करके उपरिम ग्रन्थको ग्रहण करती है वह अनुसारणी बुद्धि कहलाती है ॥६६०॥

। अनुसारणी बुद्धि की वर्णना समाप्त हुई ।

आदि-अवसाण-मज्झे, गुरुवदेसेण एक्क - बीज - पदं ।

गेण्ह्य हेट्टिम - गंथं, बुज्झदि जा सा च पडिसारी ॥६६१॥

। पडिसारी गदा ।

अर्थ :—गुरुके उपदेशसे आदि, मध्य अथवा अन्तमें एक बीज पदको ग्रहण करके जो बुद्धि अर्धस्तन ग्रन्थको जानती है, वह प्रतिसारणी बुद्धि कहलाती है ॥६६१॥

। प्रतिसारणी बुद्धि की वर्णना समाप्त हुई ।

णियमेण अणियमेण य, जुगवं एगस्स बीज - सहस्स ।

उवरिम - हेट्टिम - गंथं, जा' बुज्झइ उभयसारी सा ॥६६२॥

। उभयसारी गदा ।

। एवं पदानुसारी गदा ।

अर्थ :—जो बुद्धि नियम अथवा अनियममें एक बीज-शब्दके (ग्रहण करने पर) उपरिम और अर्धस्तन ग्रन्थको एक साथ जानती है, वह उभयसारणी बुद्धि है ॥६६२॥

। उभय-सारणी बुद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

। इसप्रकार पदानुसारणी बुद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

सम्भ्रमश्रोतृत्व-बुद्धि-ऋद्धि—

सोर्दिविय^१ - सुदण्णाणावरणाणं बोरियंतरायाए ।
 उक्कस्स - खवोवसमे, उद्विदंगोवंग - णाम - कम्मम्मि ॥६६३॥
 सोदुक्कस्स - खिदीदो, बाह्णं संखेज्ज - जोयण-पएसे ।
 संठिय - एए - तिरियाणं, बहुविह - सद्दे सुमुत्थंते ॥६६४॥
 अक्खर - अणक्खरमए, सोवूरां दस - विसासु पत्तेक्कं ।
 जं विज्जदि पडिवयणं, तं चिय संभिण्ण - सोदित्तं ॥६६५॥

। संभिण्ण-सोदित्तं गदं ।

अर्थ :—श्रोत्रेन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायका उत्कृष्ट क्षयोपशम तथा अङ्गोपाङ्ग नामकर्मका उदय होनेपर श्रोत्र-इन्द्रियके उत्कृष्ट क्षेत्रसे बाहर दमो दिशाओमें सख्यात योजन प्रमाण क्षेत्रमें स्थित मनुष्य एव तिर्यञ्चोके अक्षरानक्षरात्मक बहुत प्रकारके उठने वाले शब्दों को सुनकर जिससे प्रत्युत्तर दिया जाता है, वह सम्भ्रमश्रोतृत्व नामक बुद्धि-ऋद्धि कहलाती है ॥६६३-६६५॥

। सम्भ्रमश्रोतृत्व-बुद्धि-ऋद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

दूरास्वादित्व-ऋद्धि—

जिद्विभदिय - सुदण्णाणावरणाणं बोरियंतरायाए ।
 उक्कस्स - खवोवसमे उद्विदंगोवंग - णाम - कम्मम्मि ॥६६६॥
 जिद्विभुक्कस्स-खिदीदो, बाह्णं संखेज्ज-जोयण-ठियारां ।
 विविह - रसाणं सादं, जं जाणइ दूर - सादित्तं ॥६६७॥

। दूरसादित्तं गदं ।

अर्थ :—जिह्वेन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायका उत्कृष्ट क्षयोपशम तथा अङ्गोपाङ्ग नामकर्मका उदय होने पर जो जिह्वा-इन्द्रियके उत्कृष्ट विषय-क्षेत्रसे बाहर सख्यात योजन

प्रमाण क्षेत्रमें स्थित विविध-रसोंके स्वादको जानती है, उसे दूरास्वादित्व-ऋद्धि कहते हैं ॥६६६-६६७॥

। दूरास्वादित्व-ऋद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

दूरस्पर्शत्व-ऋद्धि—

घ्रांसिदिय - सुदण्डाणावरणाणं वीरियंतरायाए ।

उक्कस्स - खवोवसमे, उदिदंगोवंग - णाम - कम्मम्मि ॥६६८॥

घ्राणुक्कस्स-खिदीदो, बाहि संखेज्ज-जोयण-ठियाणं ।

अट्ट - विहप्फासाणि, जं जाणइ दूर - फासत्तं ॥६६९॥

। दूर-फासं गदं ।

अर्थ :—स्पर्शनेन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायका उत्कृष्ट क्षयोपशम तथा अङ्गोपाङ्ग नामकर्म का उदय होने पर जो स्पर्शनेन्द्रियके उत्कृष्ट विषय क्षेत्रसे बाहर संख्यात योजनोमे स्थित आठ प्रकारके स्पर्शोंको जानती है वह दूरस्पर्शत्व-ऋद्धि है ॥६६८-६६९॥

। दूर-स्पर्शत्व-ऋद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

दूर-घ्राणत्व-ऋद्धि—

घ्राणिदिय - सुदण्डाणावरणाणं वीरियंतरायाए ।

उक्कस्स - खवोवसमे, उदिदंगोवंग - णाम - कम्मम्मि ॥१०००॥

घ्राणुक्कस्स-खिदीदो, बाहि संखेज्ज-जोयण-गदाणि' ।

जं बहुविह - गंधाणि, तं घायदि दूर - घाणत्तं ॥१००१॥

। दूर-घाणत्तं गदं ।

अर्थ :—घ्राणेन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायका उत्कृष्ट क्षयोपशम तथा अंगोपाङ्ग नामकर्मका उदय होने पर जो घ्राणेन्द्रियके उत्कृष्ट विषय क्षेत्रसे बाहर संख्यात योजनोंमें प्राप्त हुए बहुत प्रकारके गन्धोंको सूँघती है, वह दूरघ्राणत्व ऋद्धि है ॥१०००-१००१॥

। दूरघ्राणत्व-ऋद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

दूर-श्रवणत्व-ऋद्धि—

सोर्दिविय - सुवणाणावरणाणं वीरियंतरायाए ।
 उक्कत्स - खओवसमे, उविदंगोबंग - णाम - कम्मम्मि ॥१००२॥
 सोदुक्कत्स - खिदीदो, बाहिं संखेज्ज - जोयण - पएसे ।
 चिट्ठंताणं माणुस - तिरियाणं बहु - वियप्पाणं ॥१००३॥
 अक्खर - अणक्खरमए, बहुविह - सहे विसेस-संजुत्ते ।
 उप्पण्णे आयण्णइ, जं भणिअं दूर - सवणरं ॥१००४॥

। दूरसवणत्तं गदं ।

अर्थ :—श्रोत्रेन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायका उत्कृष्ट क्षयोपशम तथा अङ्गोपाङ्ग नामकर्मका उदय होने पर जो श्रोत्रेन्द्रियके उत्कृष्ट विषय-क्षेत्रसे बाहर संख्यात योजन प्रमाण क्षेत्रमें स्थित-रहने वाले बहुत प्रकारके मनुष्यो एवं तिर्यञ्चोकी विशेषतासे संयुक्त अनेक प्रकारके अक्षरानक्षरात्मक शब्दोके उत्पन्न होने पर उनका श्रवण करनी है, उसे दूरश्रवणत्व ऋद्धि कहा गया है ॥१००२-१००४॥

। दूरश्रवणत्व-ऋद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

दूर-दर्शित्व-ऋद्धि—

सूर्दिविय - सुदणाणावरणाणं वीरियंतरायाए ।
 उक्कत्स - खओवसमे, उविदंगोबंग - णाम - कम्मम्मि ॥१००५॥
 रुउक्कत्स-खिदीदो, बाहिं संखेज्ज - जोयण - ठिदाइं ।
 जं बहुविह - दव्वाइं, वेक्खइ त दूरदरिसिणं णाम ॥१००६॥

। दूरदरिसिणं गदं ।

अर्थ :—चक्षुरिन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायका उत्कृष्ट क्षयोपशम तथा अङ्गोपाङ्ग नामकर्मका उदय होने पर जो चक्षुरिन्द्रियके उत्कृष्ट विषयक्षेत्रसे बाहर संख्यात योजनोंमें स्थित बहुत प्रकारके द्रव्योको देखती है, वह दूरदर्शित्व-ऋद्धि है ॥१००५-१००६॥

। दूरदर्शित्व-ऋद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

दस-पूर्वित्व-ऋद्धि—

रोहिणि - पट्टदीण महाविज्जाणं देवदाउ पंच सया ।

अंगुट्ट - पसेणाइं, 'खुल्लय - विज्जाण सत्त सया ॥१००७॥

एत्तूण पेसणाइं, मग्गंते दसम - पुव्व - पट्टणम्मि ।

णेच्छंति संजमंता, ताओ जे ते^१ अभिण्णदसपुव्वी ॥१००८॥

भुवणेतु सुप्पसिद्धा, विज्जाहर-समण-णाम-पज्जाया ।

ताणं मुणीण बुद्धी, दसपुव्वी णाम बोद्धवा ॥१००९॥

। दसपुव्वी गदा ।

अर्थ :— दस-पूर्वं पठनेमें रोहिणी आदि महाविद्याओंके पांचसी और अंगुष्ठ-प्रसेनाविक (प्रवनादिक) क्षुद्र (लघु) विद्याओंके सातसी देवता आकर आज्ञा मागते हैं । इस समय जो महर्षि जितेन्द्रिय होनेके कारण उन विद्याओंकी इच्छा नहीं करते, वे 'विद्याधर श्रमण' पर्याय नामसे भुवनमें प्रसिद्ध होते हुए अभिन्नदसपूर्वी कहलाते हैं । उन ऋषियोंकी बुद्धिको दस - पूर्वी जानना चाहिए ॥१००७-१००९॥

। दस-पूर्वित्व-ऋद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

चादह-पूर्वित्व-ऋद्धि—

सयलागम-पारगया, सुदकेवल - णाम - सुप्पसिद्धा जे ।

एदाण बुद्धि - रिद्धी, चोदसपुव्वि त्ति णामेण ॥१०१०॥

। चोदस-पुव्वित्त^३ गदं ।

अर्थ — जो महर्षि सम्पूर्ण आगमके पारगत हैं तथा शतकेवली नामसे सुप्रसिद्ध हैं उनके चौदहपूर्वी नामक बुद्धि-ऋद्धि होती है ॥१०१०॥

। चौदह-पूर्वित्व-ऋद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

निमित्त-ऋद्धिके अन्तर्गत नभ, भोम आदि निमित्तोका निरूपण—

णइमिस्तिका य रिद्धी, एभ - भउमंगं - सराइ वेंजणयं ।

लक्खण - चिण्हं सउणं, अट्ट - वियप्पेहि वित्थरिदं ॥१०११॥

अर्थ :—निमित्तिक ऋद्धि नभ, भोम, अग, स्वर, व्यजन, लक्षण, चिह्न (छिद्र ?) और स्वप्न इन आठ भेदोंसे विस्तृत है ॥१०११॥

रवि-ससि-गह-पहुदीणं, उदयत्यमणादिआइं' दट्ठूणं ।

कालत्तय-दुक्ख-सुहं, जं जाणइ तं हि णह - णिमिस्तं ॥१०१२॥

। णह-णिमित्तं गदं ।

अर्थ :—सूर्य, चन्द्र और ग्रह आदिके उदय एव अस्त आदिकोको देखकर जो कालत्रयके दुःख-सुख आदिका जानना है, वह नभ-निमित्त है ॥१०१२॥

। नभनिमित्तका कथन समाप्त हुआ ।

घण-सुसिर-णिद्ध-लुक्ख-प्पहुदि-गुणे भाबिदूण भूमोए ।

जं जाणइ खय-वडिड, तम्मयस-कणय-रजव-पमुहाणं ॥१०१३॥

दिस-विदिस-अंतरेसुं, चउरंग - बलं टिवं च दट्ठूणं ।

जं जाणइ जयमजयं, तं भउम - णिमिस्तमुदिट्ठं ॥१०१४॥

। भउम-णिमित्तं गदं ।

अर्थ :—पृथिवीके घन (मान्द्रता), सुषिर (पोलापन), स्निग्धता और रूक्षता आदि गुणोंका विचार कर जो तावा, लोहा, स्वर्ण एवं चाँदी आदि धातुओंकी हानि-वृद्धिको तथा दिशा-विदिशाओंके अन्तरालोंमें स्थित चतुरंगदलको देखकर जो जय-पराजय को भी जानता है, उसे भोम-निमित्त कहा गया है ॥१०१३-१०१४॥

। भोम-निमित्तका कथन समाप्त हुआ ।

बातादि - प्ययडीओ^१, रहिर - प्यहुविस्सहाव-सराइ^२ ।

जिण्णाण^३ उण्णयाणं, अंगोवंगण वंसणा पासा^४ ॥१०१५॥

णर-तिरियाणं दट्ठ^५, जं जाणइ दुक्ख-सोक्ख-मरणादि ।

कालत्तय - णिप्पण्णं, अंग - णिमित्तं पसिद्धं तु ॥१०१६॥

। अंग-णिमित्तं गदं ।

अर्थ — जिससे मनुष्य और तिर्यञ्चोके निम्न एव उन्नत अग-उपाङ्गोके दर्शन एवं स्पर्शसे बातादि तीन प्रकृतियों और रहिरादि सात स्वभावो (धातुओ) को देखकर तीनों कालोंमें उत्पन्न होने वाले सुख-दुःख तथा मरण-आदिको जाना जाता है, वह अङ्ग-निमित्त नामसे प्रसिद्ध है ॥१०१५-१०१६॥

। अङ्ग-निमित्तका कथन समाप्त हुआ ।

णर-तिरियाण विचित्तं, सद्दं सोदूण दुक्ख-सोक्खादि ।

कालत्तय - णिप्पण्णं, जं जाणइ तं सर - णिमित्तं ॥१०१७॥

। सर-णिमित्तं गदं ।

अर्थ :— जिसके द्वारा मनुष्यो और तिर्यञ्चोके विचित्र शब्दोंको सुनकर कालत्रयमे होने वाले दुःख-सुखको जाना जाता है, वह स्वर-निमित्त है ॥१०१७॥

। स्वर-निमित्तका कथन समाप्त हुआ ।

सिर-सुह-कंठ-प्यहुबिसु, तिल-भसय-प्यहुबिआइ^६ दट्ठूणं ।

जं तिय-काल-सुहाइ^७, जाणइ तं वैजण - णिमित्तं ॥१०१८॥

। वैजण-णिमित्तं गदं ।

अर्थ :— सिर, मुख और कण्ठ आदि पर तिल एव मसे आदिको देखकर तीनों कालके सुखादिक को जानना, सो व्यञ्जन-निमित्त है ॥१०१८॥

। व्यञ्जन-निमित्तका कथन समाप्त हुआ ।

१. द. व. क. ज. य. उ. परिदीओ । २. द. व. क. ज. य. उ. सत्तेइ । ३. द. व. क. ज. य. उ. तिण्णाण उण्णयाण । ४. द. व. क. ज. य. उ. पासा । ५. द. व. क. ज. य. उ. द्वादि ।

कर-चरणतल-प्पहुविसु, पंकय - कुलिसादियाणि दट्ठणं ।
जं तिय-काल-सुहाइ^१, लक्खइ तं लक्खण - णिमित्तं ॥१०१६॥

लक्खण-णिमित्तं गदं ।

अर्थ :- हस्ततल (हथेली) और चरणतल (पगतली) आदिमे कमल एव वज्र इत्यादि चिह्नोंको देखकर कालत्रयमे होने वाले सुखादिको जानना, यह लक्षण निमित्त है ॥१०१६॥

। लक्षण-निमित्तका कथन समाप्त हुआ ।

सुर-दाणव-रक्खस-गर-तिरिएहि^२ चिण्णा-सत्थ-वत्थाणि ।
पासाद - णयर - देसादियाणि चिण्हाणि दट्ठणं ॥१०२०॥
कालत्तय - संबूदं, सुहासुहं मरण - विबिह - दब्बं च ।
सुह - दुक्खाइ^३ लक्खइ, चिण्ह-णिमिच्छि तं जाणइ ॥१०२१॥

। चिण्ह-णिमित्तं गदं ।

अर्थ :- देव, दानव, राक्षस, मनुष्य और तिर्यञ्चोके द्वारा छेदे गये शस्त्र एव वस्त्रादि तथा प्रासाद, नगर और देशादिक चिह्नोंको देखकर त्रिकालमे उत्पन्न होने वाले शुभ-अशुभको, मरणको, विविध प्रकारके द्रव्योको और सुख-दुःखको जानना यह चिह्न निमित्त है ॥१०२०-१०२१॥

। चिह्न-निमित्तका कथन समाप्त हुआ ।

वातावि-दोस-चत्तो, पण्छिम - रत्ते मयंक-रवि-पहुदि ।
णिय-मुह-कमल-पविट्ठं^४, देक्खइ सउणम्मि सुह - सउणं ॥१०२२॥
घड - तेत्तलभंगावी, रासह - करभाविएसु^३ आरोहं ।
परदेस - गमण - सब्बं, जं देक्खइ असुह - सउणं तं ॥१०२३॥
जं भासइ दुक्ख - सुह - प्पमुहं कालत्तए वि संजावं ।
तं चिय सउण - णिमित्तं, चिण्हा मालो^५ सि दो-भेदं ॥१०२४॥

१. द. व. ज. उ. छद । २. द. वावादि । ३. द. ज. करभाविएसु । ४. द व क. ज. व. उ.

करि-केसरि-पहुदीणं, 'दंसण - मेलादि चिण्हे-सउणं तं ।

पुब्बावर - संबंधं, सउणं तं माल - सउणो त्ति ॥१०२५॥

। सउण-णिमित्तं गर्दं ।

॥ एवं णिमित्त-रिद्धी समथा ॥

अर्थ :—वात-पित्तादि दोषोंसे रहित सोया हुआ व्यक्ति पिछली रात्रिमें यदि अपने मुख-कमलमें प्रविष्ट होते हुए सूर्य-चन्द्र आदि शुभ स्वप्नोंको देखे तथा घृत एवं तैल आदि की मालिष, गर्दभ एवं ऊँट आदि पर सवारी और परदेश-गमनादिरूप अशुभ स्वप्न देखे तो उसके फलस्वरूप तीन कालमें होनेवाले सुख-दुःखादिको बतलाना स्वप्न-निमित्त है । इसके चिह्न और माला रूपसे दो भेद हैं । इनमेंसे स्वप्नमें हाथी एवं सिंहादिकके दर्शन मात्र आदिकको चिह्न-स्वप्न और पूर्वापर सम्बन्ध रखने वाले स्वप्नको माला स्वप्न कहते हैं ॥१०२२-१०२५॥

। स्वप्न-निमित्तका कथन समाप्त हुआ ।

। इसप्रकार निमित्त-ऋट्टिका कथन समाप्त हुआ ।

प्रज्ञा-श्रमण-ऋट्टि—

पगदीए सुदणानावरणाए वीरियंतरायाए ।

उक्कस्स - खवोबसमे, उप्पज्जइ पण्णा - समभट्ठी ॥१०२६॥

पण्णा-सवण्णद्धि-जुद्धो, चोहस-पुब्बोसु विसय-सुहुमसं ।

सब्बं हि सुदं जाणदि, अकअरुअणो वि रियमेरां ॥१०२७॥

भासंति तस्स बुद्धी, पण्णा - समणद्धि सा च चउ-भेदा ।

अउपत्तिय - परिणामिय-बइराइकी-कम्मजाभिघाणेहि ॥१०२८॥

अर्थ :—श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायकर्मका उत्कृष्ट क्षयोपशम होने पर प्रज्ञा-श्रमण-ऋट्टि उत्पन्न होती है । प्रज्ञा-श्रमण-ऋट्टिसे युक्त महर्षि बिना अध्ययन किए ही चौदह-पूर्वोंमें विषय-की सूक्ष्मता पूर्वक सम्पूर्ण श्रुतको जानता है और उसका नियम-पूर्वक निरूपण करता है । उसकी

बुद्धिको प्रज्ञा-श्रमण-ऋद्धि कहते हैं । वह धौत्पत्तिकी, पारिणामिकी, वैनयिकी और कर्मजा इन चार नामों वाली जाननी चाहिए ॥१०२६-१०२८॥

अउपत्तिकी भवंतर - सुद - विणएणं समुल्लसिदभावा ।

णिय-रिय-जावि-विसेसे, उप्पज्जा पारिणामिकी णामा ॥१०२९॥

वइणइकी विणएणं, उत्पज्जवि बारसंग-सुद-जोगे ।

उववेसेण विणा तव - विसेस-लाहेण कम्मजा तुरिमा ॥१०३०॥

। पण्णा-समणद्धि गदा ।

अर्थ :—पूर्व-भवमें श्रुतके प्रति की गई विनयसे उत्पन्न होने वाली श्रौत्पत्तिकी, निज-निज जाति-विशेषमें उत्पन्न हुई पारिणामिकी, द्वादशाङ्ग श्रुतके योग्य विनयसे उत्पन्न होने वाली वैनयिकी और उपदेशके बिना ही विशेष तपकी प्राप्तिसे आविर्भूत हुई चौथी कर्मजा प्रज्ञा-श्रमण-ऋद्धि समझनी चाहिए ॥१०२९-१०३०॥

। प्रज्ञा-श्रमण-ऋद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

प्रत्येक-बुद्धि—

कम्माण उवसभेण य, गुरुबवेसं विणा वि पावेवि ।

सण्णाण - तवप्पगमं, जीए' पत्तेय - बुद्धी सा ॥१०३१॥

। पत्तेय-बुद्धी गदा^२ ।

अर्थ :—जिसके द्वारा गुरुके उपदेशके बिना ही कर्मोंके उपशमसे सम्यग्ज्ञान और तपके वेषयमें प्रगति होती है, वह प्रत्येक-बुद्धि कहलाती है ॥१०३१॥

प्रत्येक बुद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

नादित्व-ऋद्धि -

सक्कादिं पि विपक्खं, बहुवादेहं णिरुत्तरं कुणदि ।

पर - दब्बाइ^१ गवेसइ, जीए वादित्त - बुद्धीए ॥१०३२॥

। वादित्त-रिद्धी-गवा ।

। एवं बुद्धि-रिद्धी-समत्ता ।

अर्थ :- जिस ऋद्धि द्वारा शाक्यादिक (या शक्रादि) विपक्षियोंको भी बहुत भारी वादसे नेरुत्तर कर दिया जाता है और परके द्रव्योंकी गवेपणा (परीक्षा) की जाती है (या दूसरोंके छिद्र प्रथवा दोष ढूँढे जाते हैं) वह वादित्व बुद्धि-ऋद्धि कहलाती है ॥१०३२॥

वादित्व-बुद्धि-ऋद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

॥ इसप्रकार बुद्धि-ऋद्धिका कथन समाप्त हुआ ॥

विक्रिया ऋद्धिके भेद एव उनका स्वरूप—

अणिमा-महिमा-लघिमा-गरिमा-पत्ती य तह^२ अ पाकम्मं ।

ईसत्त - वसित्ताइ^३, अण्पडिघाबंतघाणा य ॥१०३३॥

रिद्धी हु कामरूबा, एवं रूपेहि विविह - भेएहि ।

रिद्धि - बिकिरिया णामा, समणार्णं तव - बिसेसेणं ॥१०३४॥

अर्थ :- अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशत्व, वशित्व, अप्रतिघात, स्तर्धान और कामरूप, इस प्रकारके अनेक भेदोंसे युक्त विक्रिया नामक ऋद्धि तपो-विशेषसे श्रमणोंके आ करती है ॥१०३३-१०३४॥

१. [पर छिद्राद्य] । २. द तह अण्पकम्मं । ३. उ. तहा अ पाकम्म्य । ३. द. व. क. ज.

अणिमा-ऋद्धि—

अणु-तणु-करणं अणिमा, अणुच्छिद्ये पबिसिदूण तत्थेव ।

बिकिरदि खंघावारं, 'जिस्सेसं चक्कवट्टिस्स ॥१०३५॥

अर्थ :—शरीरको अणु बराबर (छोटा) कर लेना अणिमा-ऋद्धि है । इस ऋद्धिके प्रभावसे महर्षि अणुके बराबर छिद्रमें प्रविष्ट होकर वहाँ ही (विक्रिया द्वारा) चक्रवर्तिके सम्पूर्ण कटककी रचना करता है ॥१०३५॥

महिमा, लघिमा और गरिमा-ऋद्धिर्या—

मेरूवमाण^१- देहा, महिमा अणिलाउ लहुतरो लहिमा ।

वज्जाहितो गुरुवरणं च गरिम ति भण्णति ॥१०३६॥

अर्थ :—शरीरको मेरु बराबर (बड़ा) कर लेना महिमा, वायुसे भी लघुतर (पतला) करनेको लघिमा और वज्रसे भी अधिक गुप्ता युक्त कर लेनेको गरिमा ऋद्धि कहते हैं ॥१०३६॥

प्राप्त-ऋद्धि -

भूमोए वेट्टं तो, अंगुलि - अग्गेण सूर - ससि - पहुदि ।

मेरु - सिहराणि अण्णं, ज पावदि पत्ति - रिद्धो सा ॥१०३७॥

अर्थ :—भूमिपर स्थित रहकर अंगुलिके अग्रभागमे सूर्य-चन्द्र आदिको, मेरु-गिच्छरोको तथा अन्य भी वस्तुओको जो प्राप्त करती है वह प्राप्ति-ऋद्धि कहलानी है ॥१०३७॥

प्राकाम्य-ऋद्धि -

सलिले वि य भूमोए, उम्मज्ज-णिमज्जणाणि जं कुरादि ।

भूमोए वि य सलिले, गच्छदि पाकम्म - रिद्धो सा ॥१०३८॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिके प्रभावसे (भ्रमण) पृथिवीपर भी जलके सदृश उम्मज्जन-निमज्जन करता है तथा जलपर भी पृथिवीके सदृश गमन करता है, वह प्राकाम्य-ऋद्धि है ॥१०३८॥

ईशत्व-वशित्व-ऋद्धि—

जिस्सेसाण पटुसं, जणाण ईसत्त - णाम - रिद्धी सा ।

वसमेति तव - बल्लेणं, जं जीबोहा बसित्त - रिद्धी सा ॥१०३६॥

अर्थ :—जिससे सब मनुष्यों पर प्रभुत्व होता है, वह ईशत्व-नामक ऋद्धि है तथा जिससे तपो-बल द्वारा जीव-समूह वश में होते हैं, वह वशित्व ऋद्धि कही जाती है ॥१०३६॥

अप्रतिघात-ऋद्धि—

सेल-सिला-तरु-पमुहाणभंतंरं^१ होइवूण गयसं व ।

जं बच्चवि सा रिद्धी, अप्पडिघावेत्ति गुण - णामा ॥१०४०॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिके बलसे शैल, शिला और वृक्षादिकके मध्यमें होकर आकाशके सदृश गमन किया जाता है, वह सार्थक नामवाली अप्रतिघात-ऋद्धि है ॥१०४०॥

अदृश्यता एव कामरूपित्व-ऋद्धि—

जं हववि^२ अदिसत्तं, अंतद्धाणाभिहाण - रिद्धी सा ।

जुगवं बहुरूबाणि, जो विरयदि कामरूव - रिद्धी सा ॥१०४१॥

। विक्किरिया-रिद्धि^३ समत्ता ।

अर्थ :—जिस ऋद्धिसे अदृश्यता प्राप्त होती है, वह अन्तर्धान-नामक ऋद्धि और जिससे युगपत् बहुतसे रूप रचे जाते हैं, वह कामरूप-ऋद्धि है ॥१०४१॥

। विक्रिया-ऋद्धि-समाप्त हुई ।

त्रिग्या-ऋद्धिके भेद, आकाश-गामिनी-ऋद्धिका लक्षण एव चारण-ऋद्धिके भेद—

बुविहा किरिया - रिद्धी, णहयल-गामिस-चारणत्तोह ।

^४उट्ठीओ आसीणो, काउस्सगोण इवरेणं ॥१०४२॥

१. द. ब. क. ज. य उ. पमुहाण अतरत्तं होइवम्मि । २. द. ब. क. ज. य. उ. अदिसत्तं ।

३. ब. क. ऋद्धि । ४. द. ब. उ. उट्ठीओ, क. उट्ठीओ ।

गच्छेवि जिए गयणे, सा रिद्धी गयण-गामिणी णामा ।

चारण - रिद्धी बहुविह - वियप्प - संवोह - वित्थरिवा ॥१०४३॥

जल-जंघा-फल-पुप्फं, पत्तगिग - सिहाण धूम - मेघारणं ।

धारा-मक्कड^१ - तंतु - जोबी - मरुवाण चारणा कमसो ॥१०४४॥

अर्थ :- क्रिया-ऋद्धिके दो भेद हैं—नभस्तल-गामित्व और चारणत्व । इनमेंसे जिस ऋद्धिके द्वारा कायोत्सर्ग अथवा अन्य प्रकारसे ऊर्ध्व स्थित होकर या बैठकर आकाशमें गमन किया जाता है, वह आकाश-गामिनी नामवाली ऋद्धि है । दूसरी चारण-ऋद्धि क्रमशः जल-चारण, जङ्घा-चारण, फल-चारण, पुष्प-चारण, पत्र-चारण, अग्निशिखा-चारण, धूम-चारण, मेघ-चारण, धारा-चारण, मकड़ी-तन्तु-चारण, ज्योतिश्चारण और मरुच्चारण इत्यादि अनेक प्रकारके विकल्प-समूहोंसे विस्तारको प्राप्त है ॥१०४२-१०४४॥

जल-चारण-ऋद्धि—

अबिराहियप्पुकाए, जीबे पद - खेवणोहं जं जादि ।

धावेदि जलहि-मज्जे सब्बे य जल - चारणा^२ - रिद्धी ॥१०४५॥

अर्थ :- जिस ऋद्धिसे जीव समुद्रके मध्यमे अर्थात् जलपर पेर रखता हुआ जाता है और दौडता है किन्तु जलकायिक जीवोकी विराधना नहीं करता वह जल-चारण-ऋद्धि है ॥१०४५॥

जङ्घाचारण-ऋद्धि—

चउरंगुल-मेत्त-महिं, छंडिय गयणम्मि कुडिल-जाणु विणा ।

जं बहु - जोयण - गमणं, सा जंघाचारणा रिद्धी ॥१०४६॥

अर्थ :- चार-अंगुल प्रमाण पृथिवीको छोडकर तथा घुटनोको मोडे बिना जो आकाशमे बहुत योजनो पर्यन्त गमन करता है, वह जङ्घाचारण-ऋद्धि है ॥१०४६॥

फलचारण-ऋद्धि—

अबिराहिवूण जीबे, तल्लोणे वण - फलाण बिबिहाणं ।

उवरिम्मि जं पधाबदि, स च्चिय फल - चारणा रिद्धी ॥१०४७॥

अर्थ :- जिस ऋद्धिसे विविध-प्रकारके वन-फलोंमें रहने वाले जीवोंकी विराधना न करते हुए उनके ऊपरसे दौड़ता (चलता) है, वह फल-चारण-ऋद्धि है ॥१०४७॥

पुष्पचारण-ऋद्धि—

अधिराह्द्वूण जीवे, तस्लीणे बहु - बिहाण पुष्पाणं ।

उबरिम्मि जं पसप्पदि, सा रिद्धी पुष्फ-चारणा णामा ॥१०४८॥

अर्थ — जिस ऋद्धिके प्रभावसे बहुत प्रकारके फूलोंमें रहने वाले जीवोंकी विराधना न करके उनके ऊपरसे जाता है, वह पुष्पचारण नामक ऋद्धि है ॥१०४८॥

पत्रचारण-ऋद्धि—

अधिराह्द्वूण जीवे, तस्लीणे बहु - बिहाण पत्ताणं ।

जा उवरि वच्चच्चि भुरी, सा रिद्धी पत्त-चारणा णामा ॥१०४९॥

अर्थ :- जिस ऋद्धिका धारक मुनि बहुत-प्रकारके पत्तोंमें रहने वाले जीवोंकी विराधना न करके उनके ऊपरसे चला जाता है वह पत्र-चारण नामक ऋद्धि है ॥१०४९॥

अग्निशिखा-चारण ऋद्धि—

अधिराह्द्वूण जीवे, अग्निसिहा - संठिए विचित्ताणं ।

जं ताण उवरि गमणं, अग्निसिहा - चारणा रिद्धी ॥१०५०॥

अर्थ :- अग्निशिखाओंमें स्थित जीवोंकी विराधना न करके उन विचित्र अग्नि-शिखाओं परसे गमन करना अग्निशिखा ऋद्धि कहलाती है ॥१०५०॥

धूम-चारण-ऋद्धि—

अह-उद्ध-तिरिय-पसरं, धूमं 'अवलंबिऊण जं वेत्ति ।

पद - लेवे अवलल्लिया, सा रिद्धी धूम - चारणा णाम ॥१०५१॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिके प्रभावसे मुनिजन नीचे, ऊपर घोर तिरछे फैलने वाले झुँका झवलम्बन लेकर अस्खलित (एकसी गति) पादक्षेप करते हुए गमन करते हैं, वह-धूम-चारण नामक ऋद्धि है ॥१०५१॥

मेघ-चारण-ऋद्धि—

अविराहिदूण जीवे, अपुकाए बहु - विहाण मेघाणं ।

जं उवरि गच्छइ मुणी, सा रिद्धी मेघ - चारणा णाम ॥१०५२॥

अर्थ —जिस ऋद्धिसे मुनि अर्थात् जीवोको पीड़ा न पहुँचाकर बहुत प्रकारके मेघों परसे गमन करते हैं, वह मेघ-चारण नामक ऋद्धि है ॥१०५२॥

धारा-चारण-ऋद्धि—

अविराहिय तल्लोणे, जीवे घण-मुक्क-वारि-धाराणं ।

'उवरि जं जादि मुणी, सा धारा - चारणा रिद्धी ॥१०५३॥

अर्थ :—जिसके प्रभावसे मुनि मेघोसे छोड़ी गयी जलधाराओंमें स्थित जीवोकी विगधना न कर उनके ऊपरसे जाने हैं, वह धारा-चारण-ऋद्धि है ॥१०५३॥

मकडी-तन्तु-चारण-ऋद्धि—

मक्कडय-तंतु-पंती-उवरि अदिलघुओ तुरिद-पद-खेवे ।

गच्छेदि मुणि - महेसी, सा मक्कड-तंतु-चारणा रिद्धी ॥१०५४॥

अर्थ :—जिसके द्वारा मुनि-महर्षि शीघ्रतासे किए गये पद-विश्लेषमें अत्यन्त लघु होते हुए, मकडीके तन्तुओकी पक्ति परसे गमन करता है वह मकडी तन्तु-चारण-ऋद्धि है ॥१०५४॥

ज्योतिश्चारण-ऋद्धि

अह-उड्ढ-तिरिय-पसरे, किरणे अवलंबिऊण^१ जोदीणं ।

जं गच्छेदि तबस्सी, सा रिद्धी जोदि - चारणा णाम ॥१०५५॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिके द्वारा तपस्वी ज्योतिषी-देवोके विमानोंकी नीचे, ऊपर और तिरछे फैलनेवाली किरणोंका प्रबलम्बन लेकर गमन करता है, वह ज्योतिषचारण-ऋद्धि है ॥१०५५॥

मारुत-चारण-ऋद्धि—

जाणाबिह-गदि-मारुद-पदेस-पंतीसु^१ दैति^२ पदखेवे ।

जं अक्खलिया मुणियो, सा मारुद - चारणा - रिद्धी ॥१०५६॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिके प्रभावसे मुनि नानाप्रकारकी गतिसे युक्त वायुके प्रदेशोंकी पंक्तिबों पर अस्खलित होकर पद-विक्षेप करते हैं, वह मारुत-चारण-ऋद्धि है ॥१०५६॥

उपसहार—

अण्णे विविहा - भंगा , चारण-रिद्धीए भासिदा भेदा ।

ताण सख्खं कहणे,^३ उवएसो अम्ह उच्छिण्णो ॥१०५७॥

एवं किरिया-रिद्धी समत्ता ।

अर्थ :—विविध भङ्गोसे युक्त चारण-ऋद्धिके अन्य भेद भी भासित होते हैं, परन्तु उनके स्वरूपका कथन करने-वाला उपदेश हमारे लिए नष्ट हो चुका है ॥१०५७॥

। इसप्रकार क्रिया-ऋद्धि समाप्त हुई ।

नप-ऋद्धिके भेद-प्रभेद—

उगगतवा बित्ततवा, नत्ततवा तह महातवा तुरिमा ।

घोरतवा पंचमिया, घोर - परक्कम - तवा छट्ठी ॥१०५८॥

तव - रिद्धीए कहिदं, सत्तम य अघोर - बम्हचारित्तं ।

उगगतवा दो भेदा, उगगोग-अवट्टि-दुग्ग-त्तव-णामा ॥१०५९॥

१ द. व. ज. य उ. सतीसु, क. सुत्तीसु । २ द दिति । ३ द. ज. य मजा । ४. द. ज. य.

अर्थ :- उग्रतप, दीप्ततप, तप्ततप, (चतुर्थ) महातप, (पाँचवाँ) घोरतप, (छठा) घोर-पराक्रमतप और (सातवाँ) अघोरब्रह्मचारित्व, इसप्रकार तप-ऋद्धिके ये सात भेद कहे गये हैं। इनमेसे उग्रतप-ऋद्धिके दो भेद होते हैं—उग्रोग्रतप और अवस्थित-उग्रतप ॥१०५८-१०५९॥

उग्रोग्र-तप-ऋद्धि—

दिवखोपवासमादि, 'कादूणं एककाहि एकपचएण^१ ।

आमरणंतं जवणं, सा होदि उग्गोग - तव - रिद्धी ॥१०६०॥

अर्थ :- दीक्षोपवाससे प्रारम्भ कर मरण-पर्यन्त एक-एक अधिक उपवासको बढ़ाकर निर्वाह करना, उग्रोग्रतप-ऋद्धि है ॥१०६०॥

अवस्थित-उग्र-तप—

दिवखोपवासमादि, कादुं एकंतरोव वासाणि ।

कुब्बाणो जिण - णिभर - भत्ति - पसत्तेण चित्तेण ॥१०६१॥

उपपण्ण - कारणंतर, जादे छट्ठमादि उबवासे ।

हेट्ठं ण जादि जीए, सा होदि अवट्ठिदोग-तव-रिद्धी ॥१०६२॥

अर्थ :- दीक्षार्थ एक उपवास करके (पारणा करे और पुनः) एक-एक दिनका अन्तर देकर उपवास करता जाए। पुन कुछ कारण पाकर षष्ठ-भक्त, पुनः अष्टम-भक्त (पुनः दसम-भक्त, पुनः द्वादशम-भक्त) इत्यादि क्रमसे नीचे न गिर-कर जिनेन्द्रकी भक्ति-पूर्वक प्रसन्न-चित्तसे उत्तरोत्तर मरणपर्यन्त उपवासको बढ़ाते जाना अवस्थित-उग्र-तप-ऋद्धि है ॥१०६१-१०६२॥

दीप्त-तप-ऋद्धि—

बहुविह - उबवासोहि, रविसम-वड्ढंत-काय-किरणोहा ।

काय-मण-वयण-बलिणो, जीए^३ सा दित्त-तव-रिद्धी ॥१०६३॥

अर्थ :- जिस ऋद्धिके प्रभावसे मन, वचन और कायसे बलिष्ठ ऋषिके बहुत प्रकारके उपवासों-द्वारा शरीरकी किरणोंका समूह सूर्य-सदृश बढ़ता हो वह दीप्त-तप-ऋद्धि है ॥१०६३॥

तप्त-तप-ऋद्धि—

तत्ते लोह - कडाहे, पडिबंभु - कणं ब जीए भुसण्णं ।

भ्रिज्जदि षाऊहं सा, णिय - भाणाएहं तत्त - तत्ता ॥१०६४॥

अर्थ :—लोहेकी तप्त कडाहीमें गिरे हुए जल-कणके सदृश जिस ऋद्धिसे खाया हुआ अन्न धातुओं सहित क्षीण हो जाता है (मल-मूत्रादिरूप परिणामन नहीं करता) वह निज ध्यानसे उत्पन्न हुई तप्त-तप-ऋद्धि है ॥१०६४॥

महातप-ऋद्धि—

मंदरपंति - प्पमुहे, महोबवासे^१ करेदि सव्वे वि ।

चउ - सण्णाण - बत्तेणं,^२ जीए सा महातत्ता रिद्धी ॥१०६५॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिके प्रभावसे मुनि चार सम्यग्ज्ञानोके बलसे मन्दर-पंक्ति-प्रमुख सब ही महान् उपवासोंको करता है, वह महातप-ऋद्धि है ॥१०६५॥

घोर-तप-ऋद्धि—

जर - सूस - प्पमुहाणं, रोगेणच्छंत-पीडि-अंगं^३ वि ।

साहंति बुद्धर - तत्तं, जीए^४ सा घोर - तत्त - रिद्धी ॥१०६६॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिके बलसे ज्वर एव शूलादिक-रोगसे शरीरके अत्यन्त पीडित होने पर भी साधुजन बुद्धर-तपको सिद्ध करते हैं, वह घोर-तप-ऋद्धि है ॥१०६६॥

घोर-पराक्रम-तप-ऋद्धि—

णिक्कम-वडुडंत-तत्ता, तिहुवण-संहरण-करण-सत्ति-जुवा ।

कंटय-सिलगि-पव्वय-सुमुक्का-पहुवि - वरिसण-समत्था ॥१०६७॥

सहस सत्ति सयल-सायर-सलिलुप्पोलस्स सोसण-समत्था ।

जायति जीए^५ मुणिणो, घोर-परक्कम-तत्त सत्ति सा रिद्धी ॥१०६८॥

१. द. व. क. ज. य. उ. महोबवासो । २. द. व. क. ज. य. उ. जीवे । ३. द. व. क. ज. य. उ. अंगो । ४. द. व. क. ज. य. उ. जीवे । ५. द. व. क. ज. य. उ. णिय ।

अर्थ :—जिस ऋद्धिके प्रभावसे मुनिजन अनुपम एवं वृद्धिङ्गत तप सहिन, तीनो लोकोको सहार करनेकी शक्ति युक्त, कण्टक, शिला, अग्नि, पर्वत, घुघ्राँ तथा उल्का आदिके बरमानेमें समर्थ एवं सहसा सम्पूर्ण समुद्रके जल-समूहको सुखानेकी शक्तिसे भी संयुक्त होते हैं, वह घोरपराक्रम-तप-ऋद्धि है ॥१०६७-१०६८॥

अघोर-ब्रह्मचारित्व-ऋद्धि—

जीए ण होंति भुणिणो, खेत्तम्मि वि चोर-पहुदि-बाघाओ ।

कलह - महाजुद्धावी', रिद्धी साघोर - बम्हचारित्ता ॥१०६९॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिसे मुनिके क्षेत्रमे चौरादिक बाघाएँ श्रीर कलह एवं युद्धादिक नही होने हैं, वह अघोरब्रह्मचारित्व ऋद्धि है ॥१०६९॥

उबकस्स - खवोवसमे, चारित्तावरण - मोह - कम्मस्स ।

जा दुस्सिमणं णासइ, रिद्धी साघोर - बम्ह - चारित्ता ॥१०७०॥

अर्थ 1—चारित्र-निरोधक मोहकर्म (चारित्रमोहनीय) का उत्कृष्ट क्षयोपशम होनेपर जो ऋद्धि दुस्स्वप्नको नष्ट करती है वह अघोर-ब्रह्मचारित्व-ऋद्धि है ॥१०७०॥

अहवा—

सव्व - गुणेहि अघोरं, महेसिणो बम्हसइ - चारित्तं ।

विप्फुरिदाए जीए, रिद्धी साघोर - बम्ह - चारित्ता ॥१०७१॥

। एवं तव-रिद्धी समत्ता ।

अर्थ :—अथवा—

जिस ऋद्धिके आविर्भूत होनेसे महर्षिजन मव गुराणोके साथ अघोर (अविनश्वर) ब्रह्मचर्य का आचरण करते हैं, वह अघोर-ब्रह्मचारित्व-ऋद्धि है ॥१०७१॥

। इसप्रकार तप-ऋद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

बल-ऋद्धिके भेद एव मनोबल-ऋद्धि—

बल-रिद्धी ति - वियप्पा, मण-वयण-सरीरयाण भेदेण ।

सुव - णाणावरणाए, पयडीए वीरियंतरायाए ॥१०७२॥

उक्कस्स - खबोवसमे, मुहुत्ता - मेसांतरम्मि सयल-सुवं ।

चित्तइ जाणइ जीए, सा रिद्धी मण - बला णामा ॥१०७३॥

अर्थ :—मन. वचन और कायके भेदसे बल-ऋद्धि तीन प्रकार की है । इनमेसे जिस ऋद्धिके द्वारा श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तराय, इन दो प्रकृतियोंका उत्कृष्ट क्षयोपशम होनेपर (श्रमण) मुहूर्तमात्र (अन्तमुहूर्त) कालमे सम्पूर्ण श्रुतका चिन्तवन कर लेता है एव उसे जान लेता है, वह मनोबल नामक ऋद्धि है ॥१०७२-१०७३॥

वचनबल-ऋद्धि—

जिडिभविय - णोइदिय-सुवणाणावरण-विरिय-विग्घाणं ।

उक्कस्स - खबोवसमे, मुहुत्ता - मेसांतरम्मि मुणी ॥१०७४॥

सयलं पि सुवं जाणइ, उच्चारइ जीए' विप्फुरतीए ।

***असमो अहीण-कंठो, सा रिद्धी वयण - बल - णामा ॥१०७५॥**

अर्थ :—जिह्वेन्द्रियावरण, नोइन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायका उत्कृष्ट क्षयोपशम होने पर जिस-ऋद्धिके प्रगट होनेसे मुनि श्रम-रहित एव अहीन-कण्ठ (कण्ठसे बोले बिना ही) होते हुए (अन्तर) मुहूर्तमात्र कालके भीतर सम्पूर्ण श्रुतको जान लेते है एव उसका उच्चारण कर लेते हैं, उसे वचन-बल नामक ऋद्धि जानना चाहिए ॥१०७४-१०७५॥

कायबल-ऋद्धि—

उक्कस्स - खबोवसमे, पविसेसे विरिय-विग्घ-पयडीए ।

मास-चउमास-पमुहै^३, काउस्सगो वि सम - हीणा ॥१०७६॥

१. द. व. क. ज. य उ जिय विप्फुरतिए । २. द. व. क. उ. वसमे, ज. व. वसमो । ३. द. व. च. य. उ. पमुहो ।

उच्चट्टिय 'तेल्लोष्कं, भक्ति कणिट्टुंगुलीए अण्णत्थ ।

थविट्टुं जीए समत्था, सा रिद्धी काय - बल - नामा ॥१०७७॥

। एवं बल-रिद्धी समत्ता ।

अर्थ :— जिस ऋद्धिके बलसे बीर्यान्तराय प्रकृतिके उत्कृष्ट क्षयोपशमकी विशेषता होने पर मुनि मास एव चतुर्मासादिरूप कायोत्सर्ग करते हुए भी श्रमसे रहित होते हैं तथा शीघ्रतासे तीनों लोकोंको कनिष्ठ अगुलीके ऊपर उठाकर अन्यत्र स्थापित करनेमें समर्थ होते हैं, वह कायबल नामक ऋद्धि है ॥१०७६-१०७७॥

। इसप्रकार बल-ऋद्धिका वर्णन समाप्त हुआ ।

शोषधि-ऋद्धिके भेद—

आमरिस-खेल-जल्ला-मल-विड-सब्बा ओसही - पत्ता ।

मुह - बिट्टु - गिण्विसाओ, अट्ट - विहा ओसही रिद्धी ॥१०७८॥

अर्थ :— ग्रामशोषधि, श्लेष्मोषधि, जल्लोषधि, मलोषधि, विडोषधि, सबौषधि, मुखनिर्विष और दृष्टिनिर्विष, इसप्रकार शोषधिऋद्धि आठ प्रकारकी है ॥१०७८॥

आमशोषधि-ऋद्धि--

रिसि-कर-चरणादीणं, अल्लिय-मेत्तम्मि जीए पासम्मि ।

जोबा होंति गिरोगा, सा अमरीसोसही रिद्धी ॥१०७९॥

अर्थ :— जिस ऋद्धिके प्रभावसे ऋषिके हस्त एव पादादिके स्पर्शसे तथा समीप जाने मात्रसे (रोगी) जीव नीरोग हो जाते हैं, वह आमशोषधि-ऋद्धि है ॥१०७९॥

श्लेष्मोषधि-ऋद्धि—

जीए लालासेमच्छोमल^२ - सिहाण - आबिया सिग्गं ।

जीवाण रोग - हरणा, स षिच्चय खेलोसही रिद्धी ॥१०८०॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिके प्रभावसे (ऋषिके) लार, कफ, अक्षिमल, और नासिकामल शोध्र ही जीवोंके रोगोंको नष्ट करते हैं, वह क्षेलाषधि-ऋद्धि है ॥१०८०॥

जल्लोयधि-ऋद्धि—

सेयजलं अंगरयं, जल्लं भण्णंति जीए तेण्णावि ।

जीवाण रोग - हरणं, रिद्धी जल्लोसही णामा ॥१०८१॥

अर्थ :—स्वेदजल (पसीना) के आश्रित (उत्पन्न होने वाला) शरीरका (अङ्गरज) मल जल्ल कहा जाता है । जिस ऋद्धिके प्रभावसे उस अङ्गरजसे भी जीवोंके रोग नष्ट होते हैं, वह जल्लोषधि-ऋद्धि है ॥१०८१॥

मलोषधि-ऋद्धि—

जीहोह्व - वंत - णासा - सोत्तावि-मलं पि जीए सत्तीए ।

जीवाण रोग - हरणं, मलोसही णाम सा रिद्धी ॥१०८२॥

अर्थ :—जिस शक्तिके जिह्वा, ओठ, दाँत, नासिका और श्रोत्रादिकका मल भी जीवोंके रोगोंको दूर करनेवाला होता है वह मलोषधि नामक ऋद्धि है ॥१०८२॥

विडोषधि-ऋद्धि--

मुत्ता-पुरीसो वि पुढं, दारुण-बहुजोव-वाहि-संहरणा ।

जीए महामुणीणं, विडोसही णाम सा रिद्धी ॥१०८३॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिके प्रभावसे महामुनियोंका मूत्र एवं विष्ठा भी जीवोंके बहुत भयानक रोगोंको नष्ट करनेवाला होता है, वह विडोषधि नामक ऋद्धि है ॥१०८३॥

सवोषधि-ऋद्धि—

जीए पस्स-जलाणिल-रोम-ण्णावीणि'वाहि - हरणाणि ।

डुक्कर - तव - सुत्ताणं, रिद्धी सव्वोसही णामा ॥१०८४॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिके प्रभावसे दुष्कर तपसे युक्त मुनियों द्वारा स्पर्श किया हुआ जल एवं वायु तथा उनके रोम और नख आदि भी व्याधिके हरनेवाले हो जाते हैं, वह सबौषधि नामक ऋद्धि है ॥१०८४॥

वचननिर्विष-ऋद्धि—

तित्तादि-विविह-मध्यं, विसञ्चं जीए वयण-भेत्तेण ।

पाबेदि णिव्विसत्तां, सा रिद्धी वयण-णिव्विसा णामा ॥१०८५॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिके प्रभावसे तित्तादिक रस एवं विष संयुक्त विविध-प्रकारका अन्न (भोजन) वचनमात्रसे ही निर्विष हो जाता है, वह वचननिर्विष नामक ऋद्धि है ॥१०८५॥

अहवा बहुवाहीहि, परिमूवा भस्ति होंति णीरोगा ।

सोदुं वयणं जीए, सा रिद्धी वयण - णिव्विसा णामा ॥१०८६॥

अर्थ :—अथवा जिस ऋद्धिके प्रभावसे बहुत-व्याधियोंमें युक्त जीव (ऋषिके) वचन सुनकर ही शीघ्र नीरोग हो जाते हैं, वह वचन-निर्विष नामक ऋद्धि है ॥१०८६॥

दृष्टिनिर्विष-ऋद्धि—

रोग - विसेहिं पहावा, विट्ठीए जीए भस्ति^१ पावन्ति ।

णीरोग-णिव्विसत्तां, सा भणिदा विट्ठि-णिव्विसा रिद्धी ॥१०८७॥

। एवमोसहि-रिद्धी समत्ता ।

अर्थ :—जिस ऋद्धिके प्रभावसे रोग एव विषसे युक्त जीव (ऋषिके) देखने मात्रमें शीघ्र ही नीरोगता एव निर्विषताको प्राप्त करते हैं, वह दृष्टिनिर्विष-ऋद्धि कही गई है ॥१०८७॥

। इसप्रकार औषधि-ऋद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

रस-ऋद्धिके भेद—

छब्भेया रस - रिद्धी, आसी-विट्ठी-विसा य दो^२ तेसुं ।

खीर -^३महु - अमिय - सप्पीसबिओ चचारि होंति कमे ॥१०८८॥

१. द. व. क. ज. ग. उ. णिव्विसते ।

२. द. ज. ग. ज. वि ।

३. द. व. क. ज. ग. उ. यदा ।

अर्थ :—आशीविष और दृष्टिविष तथा क्षीरसूत्री, मधुसूत्री, अमृतसूत्री एवं सर्पिलसूत्री ऐसे दो तथा चार ऋषयः रस-ऋद्धिके छह भेद होते हैं ॥१०८८॥

आशीविष-ऋद्धि—

मर इषि भणिबे जीबो, मरेइ सहस चि जीए सत्तीए ।

दुष्कर-सब-जुब-मुणिषा, आसीबिस-णाम-रिद्धी सा ॥१०८९॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिके प्रभावसे दुष्कर-तप युक्त मुनिके द्वारा 'मर जाओ' इसप्रकार कहने पर जीव सहसा मर जाता है, वह आशीविष नामक ऋद्धि है ॥१०८९॥

दृष्टिविष-ऋद्धि—

जीए जीबो विट्टो, महेसिणो रोस - भरिय - हिवएण ।

अहि - वट्टो व मरिज्जबि, विट्टिविसा णाम सा रिद्धी ॥१०९०॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिके प्रभावसे रोष युक्त हृदयवाले महर्षि द्वारा देखा गया जीव सर्प द्वारा काटे गयेके सदृश मर जाता है वह दृष्टिविष नामक ऋद्धि है ॥१०९०॥

क्षीरसूत्री-ऋद्धि—

करयल - णिक्खिसाणं^१, इक्खाहारादियाणि^२ तक्कालं ।

पावन्ति क्षीर - भावं, जीए क्षीरोसूत्री रिद्धी ॥१०९१॥

अर्थ :—जिससे हस्ततल पर रखे हुए रूखे आहारादिक तत्काल ही दुग्ध-परिणामको प्राप्त हो जाते हैं, वह क्षीरसूत्री-ऋद्धि है ॥१०९१॥

अहवा दुक्खसप्पहुवी, जीए मुणि - वयण - सवण^३-नेत्तेणं ।

पसमवि णर - तिरियाणं, स च्चिय क्षीरासूत्री रिद्धी ॥१०९२॥

अर्थ :—अथवा, जिस ऋद्धिसे मुनियोंके वचनोंके अवगमनात्रसे ही मनुष्य-तिर्यञ्चोंके दुःखादिक शान्त हो जाते हैं, उसे क्षीरसूत्री-ऋद्धि समझना चाहिए ॥१०९२॥

मधुसवी-ऋद्धि—

मुसि-कर-बिबिसताणि, रुक्साहारावियाणि होंति खणे ।

जीए महुर - रसाई, स ऋच्चय महुयासवी रिद्धी ॥१०६३॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिसे मुनिके हाथमें रहे गये रूखे आहारादिक क्षणभरमें मधुर-रससे युक्त हो जाते हैं, वह मधुसवी ऋद्धि है ॥१०६३॥

अहवा बुक्ख - प्यहुवी, जीए मुणि-वयण-सवण-मेत्तेणं ।

जासवि णर - तिरियाणं, स ऋच्चय 'महुयासवी रिद्धी ॥१०६४॥

अर्थ :—अथवा, जिस ऋद्धिसे मुनिके वचनोंके श्रवणमात्रसे मनुष्य-तिर्यञ्चोंके दुःखादिक नष्ट हो जाते हैं, वह मधुसवी ऋद्धि है ॥१०६४॥

अमृतसवी-ऋद्धि—

मुणि-पाणि-संठियाणि, रुक्साहारावियाणि जीअ^१ खणे ।

पार्वति अमिय - भावं, एसा अमियासवी रिद्धी ॥१०६५॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिके प्रभावसे मुनियोंके हाथमें स्थित रूखे आहार आदिक, क्षणमात्रमें अमृतपनेको प्राप्त होते हैं, वह अमृतसवी ऋद्धि है । १०६५॥

अहवा बुक्खावीणि, महेसि-वयणस्स सबण-कालम्मि^३ ।

जासंति जीए सिग्घं, सा रिद्धी अमिय-आसवी णामा ॥१०६६॥

अर्थ :—अथवा, जिस ऋद्धिके वचन सुननेमात्रसे (श्रवणकालमे) शीघ्र ही दुःखादिक नष्ट हो जाते हैं, वह अमृतसवी नामक ऋद्धि है ॥१०६६॥

सर्पिसवी-ऋद्धि—

रिसि-पाणितल^५-णिहृसां, रुक्साहारादियं पि खण-मेत्ते ।

पावेदि सप्पिरूवं, जीए सा सप्पियासवी रिद्धी ॥१०६७॥

अर्थ :—जिस ऋद्धिसे ऋद्धिके हस्ततलमे निक्षिप्त रूखा आहारादिक भी क्षणमात्रमें घृतरूपताको प्राप्त करता है, वह सर्पिसवीऋद्धि है ॥१०६७॥

अहवा बुक्ख-प्पमुहं, सवणेण मुणिद-दिव्व-वयणस्स ।
उवस्सामदि जीवाणं, जीए सा सप्पियासवी रिद्धी ॥१०६८॥

। एवं रस-रिद्धी समत्ता ।

अर्थ :—अथवा, जिस ऋद्धिके प्रभावसे मुनीन्द्रके दिव्य वचनोके सुननेसे ही जीवोंके दुःखादिक शान्त हो जाते हैं, वह सपिलवी-ऋद्धि है ॥१०६८॥

। इसप्रकार रस-ऋद्धिकी वर्णना समाप्त हुई ।

क्षेत्र-ऋद्धिके भेद—

तिहुवण-विम्हय-जणणा, दो भेदा होंति खेत्त-रिद्धीए ।
अक्खीण - महाणसिया, अक्खीण-महालया च णामेण ॥१०६९॥

अर्थ :—त्रिभुवनको विस्मित करनेवाली क्षेत्र-ऋद्धिके दो भेद हैं, अक्षीणमहानसिक श्रीर अक्षीणमहालय ॥१०६९॥

अक्षीणमहानसिक-ऋद्धि—

लाहंतराय-कम्मक्खवोवसम-संजुवाए जीअ फुडं ।
मुणि'-भुत्त-सेसमण्णं, थालिय-मज्झम्मि एक्कं वि ॥११००॥
तद्दिसे खज्जंतं, खंधावारेण चक्कवट्टिस्स ।
भिज्जइ ण लवेण वि सा, अक्खीण-महाणसा रिद्धी ॥११०१॥

अर्थ :—लाभान्तरायकर्मके क्षयोपशमसे सयुक्त जिस ऋद्धिके प्रभावसे मुनिके आहारोप-रान्त थालीके मध्य वची हुई भोज्य सामग्रीसे एक भी वस्तुको यदि उस दिन चक्रवर्तीका सम्पूर्ण कटक भी खावे तो भी वह लेशमात्र क्षीण नहीं होती है, वह अक्षीण-महानसिक ऋद्धि है ॥११००-११०१॥

१. व. क. उ. मुणि-भुत्त-सेसेमुण्णद्धामज्झ पिय क पि ।

ज. य. मुण्णुत्त-सेसेमण्ण " " " ।

द. मुण्णुत्त-सेसेमण्ण " " " ।

अक्षीण-महालय-ऋद्धि—

जीए चउधणु-माणे, समचउरस्सालयम्मि ञर-तिरिया ।

मंति असंखेउजा सा, अक्खीण-महालया रिद्धी ॥११०२॥

। एव खेत्त-रिद्धी समत्ता ।

॥ एवमं अट्ट-रिद्धी समत्ता ॥

अर्थ :— जिस ऋद्धिके प्रभावसे समचतुष्कोण चार धनुष-प्रमाण क्षेत्रमे असंख्यात मनुष्य-तिर्यञ्च स्थान प्राप्त कर लेते हैं, वह अक्षीणमहालय-ऋद्धि है ॥११०२॥

। इसप्रकार क्षेत्रऋद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

। इसप्रकार आठो ऋद्धियोका वर्णन समाप्त हुआ ।

आठो ऋद्धियोके भेद-प्रभेदोंकी तालिका इसप्रकार है—

तालिका : २७

ऋद्धिया

१ बुद्धि-ऋद्धि

२ विक्रिया-ऋद्धि

३ क्रिया-ऋद्धि

४ तप-ऋद्धि

- १ अणिमा
- २ महिमा
- ३ लघिमा
- ४ गरिमा
- ५ प्राप्ति
- ६ प्राकाम्य
- ७ ईक्षत्व
- ८ वक्षित्व
- ९ अप्रतिघात
- १० अन्तर्घान
- ११ कामरूप

१ नभस्तल-
गामित्व

२ चारणत्व

- १ जलचारण
- २ जंघाचारण
- ३ फल "
- ४ पुष्प "
- ५ पत्र "
- ६ अग्नि "
- ७ धूम "
- ८ मेघ "
- ९ धारा "
- १० तन्दु "
- ११ ज्योतिषचा.
- १२ मरुच्चारण

१ उग्रतप

उग्रप्रतप
अवस्थितउग्र०

२ दीप्ततप

३ तप्ततप

४ महातप

५ धोरतप

६ धोरपरकम्०

७ धावोरबहुचा०

१ ध्रुवधिवान

२ मनःपर्ययज्ञान

३ केवलज्ञान

४ बोधबुद्धि

५ कोष्ठमति

६ पदानुसारित्व
अनुसारिणी
प्रतिसारिणी
उभयसारिणी

७ सधिमश्रोत्रित्व

८ दूरस्थादन

९ दूरस्पर्श

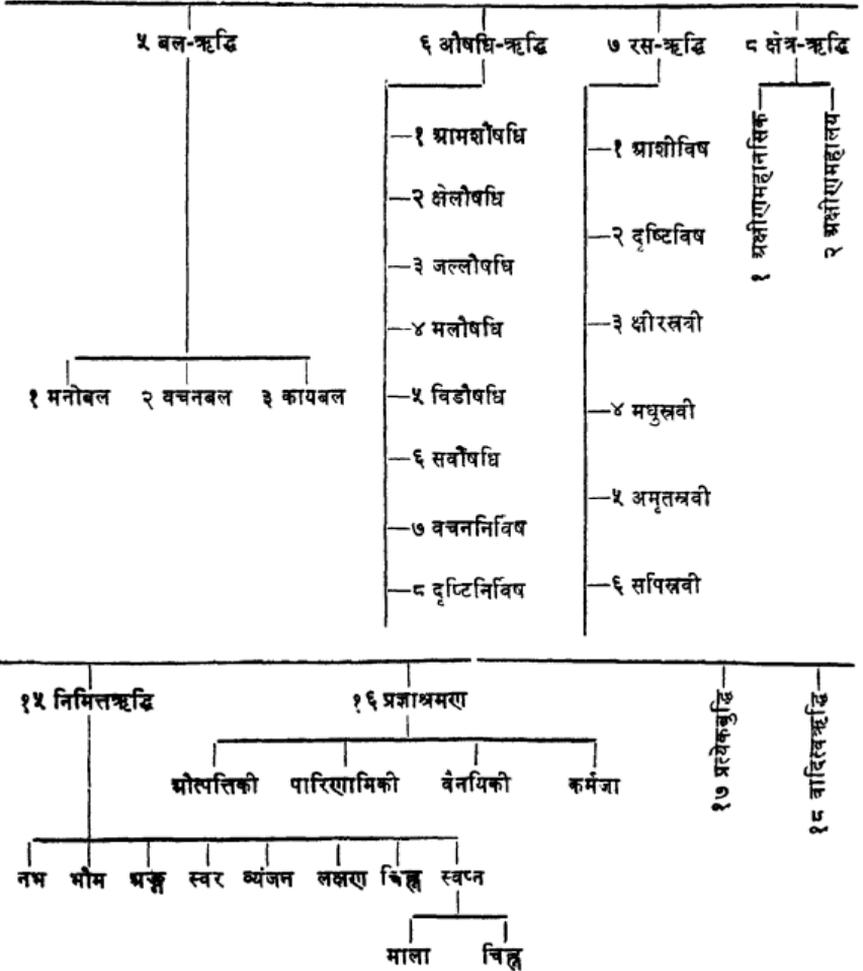
१० दूरद्राण

११ दूरश्रवण

१२ दूरदर्शन

१३ दक्षपूवित्व

१४ चीवहपूवित्व



ऋषियोंकी संख्या—

एतो^१ उबरि रिसि-संखं^२ भविस्सामि—

चउत्तीवि-सहस्साणि, रिसि-प्पमाणं हवेदि उसह-जिणे ।

इगि-डु-ति-लक्खा, कमसो अजिय-जिणे संभवम्मि णंदनए ॥११०३॥

उस ८४००० । अजि १ ल । संभव २ ल । अभि ३ ल ।

अर्थ :—यहसि आगे अब ऋषियोंकी संख्या कहता हू—

ऋषियोंका प्रमाण ऋषभ-जिनेन्द्रके समयमें चौरासी हजार तथा अजितनाथ, सम्भवनाथ एवं अभिनन्दननाथके समयमें क्रमशः एक लाख, दो लाख और तीन लाख था ॥११०३॥

बीस-सहस्स-जुवाइं, लक्खाइं तिण्णि सुमइ-देवम्मि ।

तीस-सहस्स-जुवाणि, पउमपहे तिण्णि लक्खाणि ॥११०४॥

सुमइ ३२०००० । पउम ३३०००० ।

अर्थ :—सुमतिनाथके समयमें ऋषियोंका प्रमाण तीन लाख, बीस हजार और पद्मप्रभके समयमें तीन लाख, तीस हजार था ॥११०४॥

तिण्णि सुपासे चंदप्पह-देवे दोण्णि अट्ट-संजुत्ता ।

सुविहि-जिण्णदम्मि बुवे, सीयलएणाहम्मि इगि-लक्खं ॥११०५॥

सुपास ३ ल । चंद २५०००० । पुप्फ २ ल । सीय १ ल ।

अर्थ :—ऋषियोंकी संख्याका प्रमाण सुपाश्वनाथस्वामीके समयमें तीन लाख, चन्द्रप्रभ-देवके अढ़ाई लाख, सुविधिजिनेन्द्रके दो लाख और शीतलनाथके एक लाख था ॥११०५॥

चउत्तीवि - सहस्साइं, सेयसे वासुपुज्ज - णाहम्मि ।

बावत्तरि अउत्तट्ठी, विमसे छावट्ठिया अणंतम्मि ॥११०६॥

से ८४००० । वा ७२००० । विम ६८००० । अण ६६००० ।

अर्थ :—श्रेयांस जिनेन्द्रके समयमें ऋषियोंका प्रमाण चौरासी हजार, वासुपुज्यस्वामीके बहत्तर हजार, विमलनाथके अड़सठ हजार और अनन्तनाथके छ्यासठ हजार था ॥११०६॥

धम्मम्मि संति-कुं-बू-अर-मस्सीसुं कमा सहस्साणि ।

चउत्सुदी बासट्टी, सट्टी पण्णास चासीसा ॥११०७॥

धम्म ६४००० । सं ६२००० । कुं ६०००० । अर २०००० । म ४०००० ।

अर्थ :—धर्मनाथ, शान्तिनाथ, कुन्धुनाथ, अरनाथ और मस्तिनाथ तीर्थकरके समयमें ऋषियोंकी संख्याका प्रमाण क्रमशः चौसठहजार, बासठहजार, साठहजार, पचासहजार और चासीस हजार था ॥११०७॥

सुब्बद-जमि-गेमीसुं, कमसो पासम्मि वड्ढमाणम्मि ।

तीसं बीसट्टारस, सोलस-बोद्दस' - सहस्साणि ॥११०८॥

सु ३०००० । रा २०००० । जेमि १८००० । पास १६००० । वीर १४००० ।

अर्थ :—मुनिसुव्रत, नमिनाथ, नेमिनाथ, पाश्वनाथ और वर्धमान स्वामीके समयमें ऋषियोंका प्रमाण क्रमशः तीस हजार, बीस हजार, अठारह हजार, सोलह हजार और चौदह हजार था ॥११०८॥

प्रत्येक तीर्थकरके सात गणोंके नाम—

पुब्बघर-सिक्ख-ओही-केवलि-वेउट्ठि-विउत्तमवि-वादी ।

पत्तेक्कं सत्त-गणा, सब्बाणं तित्थ - कत्ताणं ॥११०९॥

अर्थ :—सब तीर्थकरोंमेंसे प्रत्येक (तीर्थकर) के पूर्वघर, धिसक, अवधिज्ञानी, केवलो, विक्रिया-ऋद्धिघारी, विपुलमति एव वादी इसप्रकार ये सात संघ होते हैं ॥११०९॥

ऋषभ-तीर्थकरके गणोंकी संख्या—

चत्तारि सहस्सा सग - सयाइ - पण्णास पुब्बघर-संखा ।

सिक्खसग - संखा स च्चिय, छत्तसय ऊणी कवं णवरि ॥१११०॥

उसह पुब्ब ४७५० । सिक्ख ४१५० ।

अर्थ :—ऋषभ जिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वघरोंकी संख्या चार हजार सातसौ पचास थी । सिक्खोंकी संख्या भी यही थी परन्तु इसमेंसे छहसौ कम थे, इतनी यहाँ विशेषता है ॥१११०॥

षड - बीस - सहस्त्राणि, क्रमेण ओहीण केवलीणं पि ।

वेगुव्वीण सहस्त्रा, बीसच्चिय छस्सयब्भहिया ॥११११॥

ओ ६००० । के २०००० । वे २०६०० ।

अर्थ :—ऋषभजिनेन्द्रके क्रमशः अर्धजिज्ञानी नौ हजार, केवली बीस हजार और विक्रिया-घारी छहसौ अधिक बीस हजार थे ॥११११॥

विउलमदीणं बारस - सहस्त्रया सग - सयाइ पण्णासा ।

वादीण तत्तियं चिय, एदे उसहम्मि सत्त - गणा ॥१११२॥

वि १२७५० । वा १२७५० ।

अर्थ :—विपुलमति बारह हजार सातसौ पचास थे और वादी भी इतने ही थे । इसप्रकार ऋषभदेवके ये सात गण थे ॥१११२॥

अजित जिनेन्द्रके सात गणोका प्रमाण—

ति-सहस्त्रा सत्त-सया, पण्णा-अजिय-पहुम्मि पुव्वधरा ।

इगिबीस - सहस्त्राणि, सिक्खकया छस्सयाइं पि ॥१११३॥

पु ३७५० । सि २१६०० ।

चउणउदि-सया ओही, बीस-सहस्त्राणि होंति केवलिणो ।

वेगुव्वीण सहस्त्रा, बीस सयाणि पि चत्तारि ॥१११४॥

ओ ६४०० । के २०००० । वे २०४०० ।

विउलमदीओ बारस, सहस्त्रया चउ - सयाइ पण्णासा ।

वादीण सहस्त्राइं, बारस चत्तारि च सयाणि ॥१११५॥

वि १२४५० । वा १२४०० ।

अर्थ :—अजितप्रभुके सात गणोंमेंसे पूर्वधर तीन हजार सातसौ पचास, शिक्षक इक्कीस हजार छह सौ, अवधिज्ञानी नौ हजार चारसौ, केवली बीस हजार, विक्रिया-ऋद्धि धारक बीस हजार चारसौ, विपुलमति बारह हजार चारसौ पचास और वादी बारह हजार चारसौ थे ॥१११३-१११५॥

सम्भवनायके गणोंकी संख्या—

पुण्यधरा पण्णाहिय-इगिबीस-सयाणि संभव-जिणम्मि ।

उत्ततीस - सहस्साइं, इगिलक्खं सिक्खया ति - सया ॥१११६॥

। पु २१५० । सि १२६३०० ।

छण्णउवि-सया ओही, केवल्लिणो पण्णरस-सहस्सारिण ।

उत्तबीस - सहस्साइं, वेगुव्विय अड - सयाणि पि ॥१११७॥

ओ ६६०० । केवलि १५००० । वे १६८०० ।

होति सहस्सा बारस, पण्णाहियिग्गि-सयं च बिउलमदी ।

छक्केण य गुणिदारीण, बोण्णि सहस्सारिण वादि - गणा ॥१११८॥

। वि १२१५० । वादि १२००० ।

अर्थ :—सम्भवजिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वधर दो हजार एक सौ पचास, शिक्षक एक लाख उनतीस हजार तीन सौ, अवधिज्ञानी नौ हजार छह सौ, केवली पन्द्रह हजार, विक्रिया-ऋद्धि धारक उन्नीस हजार आठसौ, विपुलमति बारह हजार एकसौ पचास और वादि-गण छहसे गुणित दो हजार अर्थात् बारह हजार थे ॥१११६-१११८॥

अभिनन्दननायके गणोंकी संख्या—

पंचसयम्महियाइं, बोण्णि सहस्साइं होति पुण्यधरा ।

दो सिक्खग-सक्खाइं, तीस-सहस्साइं पण्णासा ॥१११९॥

। पु २५०० । सि २३००५० ।

अडणउवि-सया ओही, केवल्लिणो विगुण-अड-सहस्सारिण ।

वेगुव्वि - सहस्साइं, अहंति एकक्ख - बीसणि ॥११२०॥

। ओ ६८०० । के १६००० । वे १६००० ।

द्विगिबीस-सहस्साहं, पण्णाहिय-छस्सयाणि विउलमवी ।

एक्कं खेय सहस्सा, वादी अभिणंबणे वेवे ॥११२१॥

। वि २१६५० । वा १००० ।

अर्थ :—अभिनन्दन जिनेन्द्रके सात गणोमेंसे पूर्वघर दो हजार पांच सौ, शिक्षक दो लाख-तीस हजार पचास, अवधिज्ञानी नौ हजार आठ सौ, केवली दुगने आठ (सोलह) हजार, विक्रिया-श्रद्धिधारक एक कम बीस (उन्नीस) हजार, विपुलमति इक्कीस हजार छहसौ पचास और वादी केवल एक हजार ही थे ॥१११६-११२१॥

सुमतिनाथके गणोकी सख्या—

दोष्णि सहस्सा चउ-सय, जुत्ता सुमदि-प्पहुम्मि पुव्वधरा ।

अड्ढाइज्जं लक्खा, तेवाल-सयाइ सिक्खगा पण्णा ॥११२२॥

पुव्व २४०० । सि २५४३५० ।

एक्करस-तेरसाहं, कमे सहस्साणि भ्रोहि-केवल्लिणो ।

अट्टरस-सहस्साहं, चत्तारि सयाणि वेगुव्वी ॥११२३॥

ओ ११००० । के १३००० । वे १८४००

विउलमवी य सहस्सा, दस-संखा चउसएहि संजुत्ता ।

पण्णास-जुव-सहस्सा, दस चउ-सय-अहिय वाविगणा ॥११२४॥

। वि १०४०० । वा १०४५० ।

अर्थ :—सुमतिजिनेन्द्रके सात गणोमेंसे पूर्वघर दो हजार चार सौ, शिक्षक दो लाख चौवनहजार तीन सौ पचास, अवधिज्ञानी म्यारह हजार, केवली तेरह हजार, विक्रिया-श्रद्धि धारक अठारह हजार चार सौ, विपुलमति दस हजार चार सौ और वादी दस हजार चार सौ पचास थे ॥११२२-११२४॥

पद्मप्रभजिनेन्द्रके सात गणोंकी संख्या—

दोष्णि सहस्सा ति-सया, पुष्कधरा सिक्खया दुबे लक्खा ।
ऊनत्तरि सहस्सा, ओहि-गणा दस-सहस्साणि ॥११२५॥

पुष्क २३०० । ति २६६००० । ओ १०००० ।

चउरक^१-ताडिबाइ^२, तिष्णि सहस्साणि होंति केवलिणो ।
भट्ट - सएहिं जुत्ता, वेगुम्बी सोलस - सहस्सा ॥११२६॥

। के १२००० । वे १६८०० ।

विगुणा पंच-सहस्सा, तिष्णि सयाइ^३ हवंति विउलमदी ।
छाधिष - णउदि - सयाइ^४, वादी पउमप्पहे देबे ॥११२७॥

। वि १०३०० । वा ६६०० ।

अर्थ :—पद्मप्रभजिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वधर दो हजार तीन सौ, शिखर दो लाख उनहत्तर हजार, भवधिज्ञानी दस हजार, केवली चारमे गुणित तीन हजार (चारह हजार), विक्रिया-ऋद्धिके धारक सोलह हजार आठ सौ, विपुलमति पाँच हजारके दुगुणे (दस हजार) तीन सौ और वादी नौ हजार छह सौ थे ॥११२५-११२७॥

मुपाय्वंजिनेन्द्रके सात गणोंकी संख्या—

पुष्कधराः तीसाहिय-दोष्णि-सहस्सा हवंति सिक्खगणा ।
चोदाल सहस्साणि, दो लक्खा णव-सया बीसा ॥११२८॥

। पु २०३० । मि २४४६२० ।

णव य सहस्सा ओही, केवलिणो एक्करस - सहस्साणि ।
तेवणग - सयम्भहिया, वेगुठ्वी दस सहस्साणि ॥११२९॥

। ओ ६००० । के ११००० । वे १५३०० ।

एक्काज्जवि - सयाइ', पण्णासा - संजुवाइ विउलमवी ।

अट्ट सहस्सा छस्सय - सहिया वादी सुपास - जिणे ॥११३०॥

वि ६१५० । वा ८६०० ।

अर्थ :- सुपासर्बजिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वघर दो हजार तीस, शिक्षकगण दो लाख चबालीस हजार नौ सौ बीस, अवधिज्ञानी नौ हजार, केवली प्यारह हजार, विक्रिया-ऋद्धिधारक तिरपेन सौ अधिक दस हजार (पन्द्रह हजार तीन सौ), विपुलमति नौ हजार एकसौ पचास और वादी आठ हजार छहसौ थे ॥११२८-११३०॥

चन्द्रप्रभके सात गणोंकी संख्या—

चत्तारि सहस्साइ, देवे चंदप्पहम्मि पुव्वघरा ।

दो-सकल - दस - सहस्सा, चत्तारि सयाइ सिक्खगणा ॥११३१॥

। पु ४००० । सि २१०४०० ।

वे अट्टरस सहस्सा, छब्ब सया अट्ट सग सहस्साइ' ।

कमसो ओही केवलि - वेउव्वा - विउलमवि - वादी ॥११३२॥

ओ २००० । के १८००० । वे ६०० । वि ८००० । वा ७००० ॥

अर्थ :- चन्द्रप्रभ जिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वघर चार हजार, शिक्षकगण दो लाख दस हजार चारसौ और अवधिज्ञानी, केवली, विक्रियाधारी, विपुलमति तथा वादी क्रमशः दो हजार, अठारह हजार, छहसौ, आठ हजार और सात हजार थे ॥११३१-११३२॥

पुण्डन्तके सात गणोंकी संख्या—

ति-गुणिय-पंच-सयाइं, पुव्वघरा सिक्खयाइ' इगि-लक्खा ।

पणवण्ण - सहस्साइ', अठभहियाइ' परा - सएहि ॥११३३॥

पु १५०० । सि १५५५०० ।

चउसीवि-सया ओही, केवलिरणो सग-सहस्स-पंच-सया ।

एह-सुण्ण-सुण्ण-तिय-इगि-अंक-कमेरं पि वेगुव्वा ॥११३४॥

ओ ८४०० । के ७५०० । वे १३००० ।

सग-संल-सहस्साणि, जुत्ताणि पण-सएहि विउलमदी ।

छाबट्टि सया वादी, देवे सिरिपुष्फदंतम्मि ॥११३५॥

वि ७५०० । वा ६६०० ।

अर्थ :—श्री पुष्पदन्तके सात गणोमेसे पूर्वधर पांचसौके तिगुने (पन्द्रहसौ), शिक्षक एक लाख पचपन हजार पांचसौ, अवधिज्ञानी बाठ हजार चारसौ, केवली सात हजार पांच सौ, विक्रिया-ऋद्धिधारी क्रमशः शून्य, शून्य, शून्य तीन और एक अंक (तेरह हजार) प्रमाण, विपुलमति सात हजार पांचसौ और वादी छह हजार छहसौ थे ॥११३३-११३५॥

शीतलनाथके सात गणोकी सय्या—

एकक - सहस्सं चउ-सय-संजुत्तं सीयलम्मि पुव्वधरा ।

उरासट्टि - सहस्साइं, वेणिण सया सिक्खणा होंति ॥११३६॥

पु १४०० । सि ५६२०० ।

दु-सय-जुद-सग-सहस्सा सत्त-सहस्साणि ओहि-केवलिणो ।

चउरंकर - ताडिदाणि, तिणिण सहस्साणि वेगुव्वी ॥११३७॥

ओ ७२०० । के ७००० । वे १२००० ।

सत्त-सहस्साणि पुढं, जुत्ताणि परा - सदेहि विउलमदी ।

सत्तावण्ण सयाइं, वादी सिरिसीयलेत्तम्मि ॥११३८॥

वि ७५०० । वा ५७०० ।

अर्थ :—श्रीशीतलनाथस्वामीके सात गणोमेसे पूर्वधर एक हजार चारसौ, शिक्षक उनसठ हजार दो सौ, अवधिज्ञानी सात हजार दो सौ, केवली सात हजार, विक्रियाऋद्धिधारी चारसे गुणित तीन (अर्थात् बारह) हजार, विपुलमति सात हजार पांच सौ और वादी पांच हजार सात सौ थे ॥११३६-११३८॥

श्रेयास-जिनेन्द्रके सात गणोका प्रमाण—

एककं चैय सहस्सा, संजुत्ता तिय-सएहि पुव्वधरा ।

अड्ढाल-सहस्साइं, दो-सय-जुत्ताइ सिक्खगणा ॥११३९॥

पु १३०० । सि ४८२०० ।

छ-सहस्ताइं ओही, केबलिणो छस्सहस्स-पंच-सया ।
एक्कारस-भेत्ताणि, ह्वीति सहस्ताणि वेगुब्बी ॥११४०॥

ओ ६००० । के ६५०० । वे ११००० ।

वे-इव-ताडिबाइं, तिण्णि सहस्ताइ तहू य बिउलमबी ।
पण - गुणिद - सहस्ताइं, वादी सेयंस - देवन्मि ॥११४१॥

वि ६००० । वा ५००० ।

अर्थ :—श्रेयासजिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वधर एक हजार तीनसौ, शिखक प्रहतालीस हजार दो सौ, अवधिज्ञानी छह हजार, केवली छह हजार पांचसौ, विक्रिया-ऋद्धिधारी ग्यारह हजार, विपुलमति दोसे गुणित तीन (छह) हजार तथा वादी पांच हजार थे ॥११३९-११४१॥

वासुपूज्यदेवके सात गणोंका प्रमाण—

एक्कं खेव सहस्ता, संजुत्ता दो-सएहि पुव्वधरा ।
उणवाल-सहस्ताणि, दोण्णि सयाणि पि सिक्खगणा ॥११४२॥

पु १२०० । मि ३६००० ।

पंच-सहस्ता चउ-सय-जुत्ता ओही ह्वीति केबलिणो ।
छच्चेव सहस्ताणि, वेगुब्बी दस सहस्ताइं ॥११४३॥

ओ ५४०० । के ६००० । वे १०००० ।

छच्चेव सहस्ताणि, चत्तारि सहस्सया य दु-सय-जुवा' ।
बिउलमबी वादीओ, कमसो सिरि - वासुपुज्ज - जिणे ॥११४४॥

वि ६००० । वा ४२०० ।

अर्थ :—श्री वासुपूज्य जिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वधर एक हजार दो सौ, शिखकगण उनतालीस हजार दो सौ, अवधिज्ञानी पांच हजार चार सौ, केवली छह हजार, विक्रिया-ऋद्धिधारी दस हजार, विपुलमति छह हजार और वादी चार हजार दो सौ थे ॥११४२-११४४॥

विमल-जिनेन्द्रके सात गणोंकी संख्या—

एकक - सएण्णभहियं, एकक - सहस्सं हवंसि पुब्बधरा ।
अट्ठसीस सहस्सा, पण-सय-सहिवा य सिक्ख - गणा ॥११४५॥

। पुव्व ११०० । सि ३८५०० ।

अड्ढाल - सयं ओही, केवलिणो पण - सएण जुत्ताणि ।
पण - संख - सहस्साणि, वेगुब्बो णव सहस्साणि ॥११४६॥

ओ ४८०० । के ५५०० । वि ६००० ।

पंच - सहस्साणि पुढं, जुत्ताणि पण-सएहि विउलमवो ।
तिण्णि सहस्सा छस्सय - सहिवा वादी विमलदेवे ॥११४७॥

वि ५५०० । वा ३६०० ।

अर्थ :—विमलनाथ तीर्थंकरके सात गणोंमेंसे पूर्वधर एक हजार एक सौ, शिक्षकगण अट्ठसीस हजार पाँच सौ, अवधिज्ञानी चार हजार आठसौ, केवली पाँच हजार पाँच सौ, विक्रिया-श्रद्धिके धारी नौ हजार, विपुलमति पाँच हजार पाँच सौ और वादी तीन-हजार छहसौ थे ॥११४५-११४७॥

अनन्तनाथके सात गणोंका प्रमाण—

एककं केव सहस्सा, पुब्बधरा सिक्खणा य पंच-सया ।
उण्ढाल सहस्साणि, ओही तेवाल - सय - संखा ॥११४८॥

पु १००० । सि ३६५०० । ओ ४३०० ।

पंचट्ट-पण - सहस्सा, केवलि-वेगुक्खि-विउलमवि-तिदए ।
तिण्णि सहस्सा वे - सय - जुत्ताणि वादी अणंत - जिणे ॥११४९॥

के ५००० । वे ८००० । वि ५००० । वा ३२०० ।

अर्थ :—अनन्तनाथ जिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वधर एक हजार, शिक्षक उनतालीस हजार पाँच सौ, अवधिज्ञानी चार हजार तीन सौ, केवली पाँच हजार, विक्रिया श्रद्धिधारी आठ हजार, विपुलमति पाँच हजार और वादी तीन हजार दो सौ थे ॥११४८-११४९॥

धर्मनाथके सात गणोंका प्रमाण—

जब पुण्ड्र-सयाह, चाल-सहस्साह, सग-सया-सिक्का ।
छत्तीस - सया ओही, पणदास - सयाणि केवलिनो ॥११५०॥

पु १०० । सि ४०७०० । ओ ३६०० । के ४५०० ।

वेगुम्बि 'सग-सहस्सा, पणदास-सयाणि होंति बिउलमदी ।
अट्टावीस - सयाणि, वादी सिरिचम्म - सामिम्मि ॥११५१॥

वे ७००० । वि ४५०० । वा २८०० ।

अर्थ :—धर्मनाथ स्वामीके सात गणोंमेसे पूर्व्वर नौ सौ, शिक्षक चालीस हजार सात सौ, अवधिज्ञानी छत्तीस सौ, केवली चार हजार पाँच सौ, विक्रिया-ऋद्धिघारी सात हजार, विपुलमति चार हजार पाँच सौ तथा वादी दो हजार आठ सौ थे ॥११५०-११५१॥

शान्तिनाथके सात गणोंका प्रमाण—

अट्ट-सया पुण्ड्ररा, इगिवाल-सहस्स-अड-सया सिक्का ।
तिण्णि सहस्सा ओही, केवलिनो चउ - सहस्साणि ॥११५२॥

पु ८०० । सि ४१८०० । ओ ३००० । के ४००० ।

वेगुम्बि छस्सहस्सा, चत्तारि - सहस्सयाणि बिउलमदा ।
दोण्णि सहस्सा चउ - सय - जुत्ता संतीसरे वादी ॥११५३॥

वे ६००० । वि ४००० । वा २४०० ।

अर्थ :—शान्तिनाथके सात गणोंमेसे पूर्व्वर आठ सौ, शिक्षक इकतालीस हजार आठ सौ, अवधिज्ञानी तीन हजार, केवली चार हजार, विक्रिया-ऋद्धिघारी छह हजार, विपुलमति चार हजार और वादी दो हजार चार सौ थे ॥११५२-११५३॥

कुन्थुनाथके सात गणोके प्रमाण—

सप्त सयार्णि चैव य, पुन्वधरा ह्येति सिक्खगा य तथा ।
तेवाल - सहस्साइ, पण्णासब्भहियमेक्क - सयं ॥११५४॥

। पु ७०० । सि ४३१५० ।

पणुबीस^१-सया ओही, बत्तीस-सयार्णि ह्येति केवल्लिणो ।
एक्क - सयब्भहियार्णि, पंच - सहस्सारिण वेगुब्बी ॥११५५॥

ओ २५०० । के ३२०० । वे ५१०० ।

ति-सहस्सा तिण्णि सया, पण्णब्भहिया ह्येति बिउलमवो ।
दोण्णि सहस्सारिण पुढं, बावो सिरि - कुंथुराहम्मि ॥११५६॥

वि ३३५० । वा २००० ।

अर्थ :- कुन्थुनाथ स्वामीके सात गणोमेमे पूर्वधर सातसौ, शिक्षक तंतालीस हजार एक सौ पचास, अवधिनानी दो हजार पांच सौ, केवली तीन हजार दो सौ, विक्रिया-ऋद्धिधारी पांच हजार एकसौ, विपुलमति तीन हजार तीन सौ पचास तथा वावो दो हजार थे ॥११५४-११५६॥

अर-जिनेन्द्रके सात गणोका प्रमाण—

दस-अहिय छस्सयाइ, पुन्वधरा ह्येति सिक्खगा सवणा ।
पणतीस - सहस्सारिण, अड - सय - जुत्ताणि पणतीसं ॥११५७॥

पु ६१० । सि ३५८३५ ।

अट्ठावीस सयार्णि, ओहीओ तेत्तियाणि केवल्लिणो ।
बत्तारि सहस्सारिण, ति - सयब्भहियाणि वेउब्बी ॥११५८॥

। ओ २८०० । के २८०० । वे ४३०० ।

पणवण्णब्भहियार्णि, दोण्णि सहस्साइ ह्येति बिउलमवो ।
एक्क - सहस्सं छस्सय - संजुत्तं अर - जिणे बावो ॥११५९॥

वि २०५५ । वा १६०० ।

अर्थ :—अरनाथ जिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वधर छहसौ दस, शिक्षक-श्रमण पेंतीस हजार आठ सौ पेंतीस, अवधिज्ञानी दो हजार आठ सौ, इतने ही केवली, विप्रिया-ऋद्धिधारी चार हजार तीन सौ, विपुलमति दो हजार पचपन और वादी एक हजार छह सौ थे ॥११५७-११५९॥

मल्लिजिनेन्द्रके सात गणोंका प्रमाण—

पण्णासम्भहियाणि, पंच - सयाणि ह्वंति पुब्बधरा ।

एककूणतीस - संखा, सिक्खय - समणा सहस्सा य ॥११६०॥

। पु ५५० । सि २६००० ।

बाबीस-सया ओही, तेत्तिय-मेत्ता य होंति केवल्लिणो ।

णव-सय-अम्भहियाइ^१, दोण्णि सहस्साणि बेगुव्वी ॥११६१॥

। ओ २२०० । के २२०० । वे २६०० ।

एक-सहस्सा सग-सय-सहिवं पण्णा य होंति बिउल्लमवी ।

चउसय - जुबं सहस्सं, वादी सिरि - मल्लिणाहम्मि ॥११६२॥

। वि १७५० । वा १४०० ।

अर्थ :—श्रीमल्लिनाथके सात गणोंमेंसे पूर्वधर पाँचसौ पचास, शिक्षक-श्रमण एक कम तीस अर्थात् उनतीस हजार, अवधिज्ञानी दो हजार दो सौ, इतने ही केवली, विप्रिया-ऋद्धिधारी दो हजार नौ सौ, विपुलमति एक हजार सातसौ पचास और वादी एक हजार चार सौ थे ॥११६०-११६२॥

मुनिमुत्रतनाथके सात गणोंकी संख्या—

पंच-सया पुब्बधरा, सिक्खगणा एकबीसवि सहस्सा ।

अड^२- सय - जुबं सहस्सं, ओही तं खेव केवल्लिणो ॥११६३॥

पु ५०० । सि २१००० । ओ १८०० । के १८०० ।

बाबीसं पण्णारस, 'बारस कमसो सयाणि वेउब्बी ।
विउलमवी वादीओ, सुब्बयणाहम्मि जिणणाहे ॥११६४॥

। वे २२०० । वि १५०० । वा १२०० ।

अर्थ :- मुनिसुव्रत-जिनेन्द्रके सात गणोंमेसे पूर्वधर पांचसौ, शिक्षक इक्कीस हजार, अवधि-ज्ञानी एक हजार आठ सौ, केवली भी इतने ही, विक्रिया-ऋद्धिधारी बार्डससौ, विपुलमति पन्द्रहसौ तथा वादी बारह सौ थे ॥११६३-११६४॥

नमिनाथके सात गणोंकी मंख्या—

चत्तारि सया पण्णा, पुव्वधरा सिक्खया सहस्साइं ।
बारस छ-सय-जुवाइं, ओही सोलस-सयाणि णमिणाहे ॥११६५॥

पु ४५० । सि १२६०० । ओ १६०० ।

ताइं चिय केवल्लिणो, पण्णरस-सयाइं होंति वेगुब्बी ।
बारस सयाइ पण्णा, विउलमवी दस - सया वादी ॥११६६॥

के १६०० । वे १५०० । वि १२५० । वा १००० ।

अर्थ :- नमिनाथके सात गणोंमेसे पूर्वधर चारसौ पचास, शिक्षक बारह हजार छह सौ, अवधिज्ञानी सोलह सौ, केवली भी सोलह सौ, विक्रिया-ऋद्धिधारी पन्द्रहसौ, विपुलमति बारह सौ पचास और वादी एक हजार थे ॥११६५-११६६॥

नमिनाथके सात गणोंका प्रमाण—

बीस-कवी पुव्वधरा, एक्करस-सहस्स-अड-सया सिक्खा ।
पण्णरस - सया ओही, तेचिय - मेत्ता य केवल्लिणो ॥११६७॥

पु ४०० । सि ११५०० । ओ १५०० । के १५०० ।

इति-सय-जुदं सहस्सं, वेगुब्बो णव सयाणि बिउलमदी ।
अट्ट सयाइं वादी, तिहुबण - सामिन्मि णेमिन्मि ॥११६८॥

वे ११०० । वि ९०० । वा ८०० ।

अर्थ :- त्रैलोक्य स्वामी श्री नेमिनाथके सात गणोंमेंसे पूर्वधर वीसके वर्ग (चार सौ) प्रमाण, शिक्षक ग्यारह हजार आठ सौ, अबधिज्ञानी पन्द्रहसौ केवली भी इतने ही, विक्रिया-ऋद्धि धारी एक हजार एक सौ, विपुलमति नौ सौ और वादी आठ सौ थे ॥११६७-११६८॥

पार्श्व-जिनेन्द्रके सात गणोंका प्रमाण—

तिग्गि सयाणि पण्णा, पुब्बधरा सिक्खगा सहस्साणि ।
वह णव-सय-जुसाणि, ओहि - मुणी चोहस-सयाणि ॥११६९॥

पु ३५० । मि १०६०० । ओ १४०० ।

दस-घण-केवलणानी, वेगुब्बो तेत्तिथं पि बिउलमदी ।
सत्त - सयाणि पण्णा, पास - जिणे छस्सया वादी ॥११७०॥

के १००० । वे १००० । वि ७५० । वा ६०० ।

अर्थ :- पार्श्व-जिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वधर तीनसौ पचास, शिक्षक दस हजार नौ सौ, अबधिज्ञानी मुनि चौदह सौ, केवली दसके घन (अर्थात् एक हजार) प्रमाण, इतने ही विक्रिया-ऋद्धिधारी, विपुलमति सातसौ पचास और वादी छह सौ थे ॥११६९-११७०॥

वर्धमान जिनके सात गणोंका प्रमाण—

ति-सयाइं पुब्बधरा, णव-णउदि^१-सयाइं होंति सिक्खगणा ।
तेरस - सयाधि ओही, सत्त - सयाइं पि केवल्लिणो ॥११७१॥

पु ३०० । सि ६६०० । ओ १३०० । के ७०० ।

इगि-सय-रहिद-सहस्सं, वेगुब्बी पण-सयाणि विउलमदी ।

चचारि - सया वादी, गण - संखा वडढमाण - जिणे ॥११७२॥

वे ६०० । वि ५०० । वा ४०० ।

अर्थ :—वर्धमान जिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वधर तीन सौ, शिक्षकगण नौ हजार नौ सौ, अविज्ञानी तेरह सौ, केवली सात सौ, विक्रिया-ऋद्धि-धारी सौ कम एक हजार (नौ सौ), विपुल-मति पाँचसौ और वादी चार सौ थे ॥११७१-११७२॥

सर्व तीर्थंकरोंके सातों गणोंमेंसे प्रत्येक बी कुल-सख्या—

अभ-चउ-णव-छक्क-तियं, पुव्वधरा सव्व-तित्थ-कत्ताणं ।

पण-पंच-पण-णभा अभ-णभ-दुग-अंककमेण सिक्खगणा ॥११७३॥

सव्व-पुव्वधराक-कमेण जाणिज्जह ३६६४० ।

सव्व मि २०००५५५ ।

अर्थ :—सर्व तीर्थंकरोंके शून्य, चार, नौ, छह और तीन इतने (३६६४०) अङ्क प्रमाण पूर्वधर तथा पाँच, पाँच, पाँच शून्य, शून्य, शून्य और दो इतने (२०००५५५) अङ्कप्रमाण शिक्षक-गण थे ॥११७३॥

गयणंबर-छस्सत्त-दु-एक्का सव्वे वि ओहि-जाणीओ ।

केवलजाणी सव्वे, गयणंबर - अट्ट - पंच - अट्टेक्का ॥११७४॥

सव्व-ओही १२७६०० । सव्व-के १८५८०० ।

अर्थ :—सर्व अविज्ञानी शून्य, शून्य, छह, सात, दो और एक इतने (१२७६००) अङ्क-प्रमाण; तथा सर्व केवली शून्य, शून्य, आठ, पाँच, आठ और एक इतने (१८५८००) अङ्क-प्रमाण थे ॥११७४॥

आयास-णभ-अवं पण-दु-दु-अंक-कमेण सव्व-वेगुब्बी ।

पंचंबर-अवय-अऊ-पणमेकं चिय सव्व - विउलमदी ॥११७५॥

सव्व-वे २२५६०० । सव्व-वि १५४६०५ ।

अर्थः—सर्वं विक्रिया-श्रद्धि-धारी अङ्क-क्रमसे शून्य, शून्य, नौ, पाँच, दो और दो (२२५६००) अंक-प्रमाण; तथा सर्वं विपुलमति पाँच, शून्य, नौ, चार, पाँच और एक (१५४६०५) अङ्क-प्रमाण थे ॥११७५॥

णभ-णभ-ति-स्य-एककेवकं, अंक-क्रमे ह्येति सव्व-वादि-गणा ।

ससगणा णभ - अंबर - गयणट्ट - चउवक-अड-दोण्णि ॥११७६॥

सव्व-वादिगणा ११६३०० । सव्व-गणा २८४८००० ।

अर्थः—सर्वं वादी अङ्क-क्रमसे शून्य, शून्य, तीन, छह एक और एक (११६३००) अङ्क-प्रमाण थे । इन सातों गणोंकी सम्पूर्ण संख्या शून्य, शून्य, शून्य, आठ, चार, आठ और दो इन (२८४८०००) अङ्कों-प्रमाण होती है ॥११७६॥

नोटः—११०३ से ११७६ अर्थात् ७३ गाथाओंकी मूल-सदृष्टियोंका अर्थ इस तालिकामें निहित है—

(तालिका २८ अगले पृष्ठ पर देखिये)

तालिका : २८

सालों वर्यों का पृथक्-पृथक् एवं एकजित (अधिगतों का) प्रमाण गा० ११०३-११७६

क्र०	पूर्वघर	शिलक	अवधिज्ञानी	केवली	विक्रिया०	विपुलमति	वादी	ऋपिगण
१	४७५०+	४१५०+	६०००+	२००००+	२०६००+	१२७५०+	१२७५०=	८४०००
२	३७५०	२१६००	६४००	२००००	२०४००	१२४५०	१०४००=	१०००००
३	२१५०	१२६३००	६६००	१५०००	१६८००	१२१५०	१२०००=	२०००००
४	२५००	२३००५०	६८००	१६०००	१६०००	२१६५०	१०००=	३०००००
५	२४००	२५४३५०	११०००	१३०००	१८४००	१०४००	१०४५०=	३२००००
६	२३००	२६६०००	१००००	१२०००	१६८००	१०३००	६६००=	३३००००
७	२०३०	२४४६२०	६०००	११०००	१५३००	६७५०	८६००=	३०००००
८	४०००	२१०४००	२०००	१८०००	६००	८०००	७०००=	२५००००
९	१५००	१५५५००	८४००	७५००	१३०००	७५००	६६००=	२०००००
१०	१४००	५६२००	७२००	७०००	१२०००	७५००	५७००-	१०००००
११	१३००	४८२००	६०००	६५००	११०००	६०००	५०००=	८४०००
१२	१२००	३६२००	५४००	६०००	१००००	६०००	४२००=	७२०००
१३	११००	३८५००	४८००	५५००	९०००	५५००	३६००=	६८०००
१४	१०००	३६५००	४३००	५०००	८०००	५०००	३२००=	६६०००
१५	९००	४०७००	३६००	४५००	७०००	४५००	२८००=	६४०००
१६	८००	४१०००	३०००	४०००	६०००	४०००	२४००=	६२०००
१७	७००	४३१५०	२५००	३२००	५१००	३३५०	२०००=	६००००
१८	६१०	३५८३५	२८००	२८००	४३००	२०५५	१६००=	५००००
१९	५५०	२६०००	२२००	२२००	२९००	१७५०	१४००=	४००००
२०	५००	२१०००	१८००	१८००	२२००	१५००	१२००=	३००००
२१	४५०	१२६००	१६००	१६००	१५००	१२५०	१०००=	२००००
२२	४००	११८००	१५००	१५००	११००	९००	८००=	१८०००
२३	३५०	१०६००	१४००	१०००	१०००	७५०	६००=	१६०००
२४	३००	९६००	१३००	७००	९००	५००	४००=	१४०००
	३६६४०	२०००५५५	१२७६००	१८५८००	२२५६००	१५४९०५	११६३००=	२८४८०००

ऋषभादि तीर्थकरोंकी आर्थिकावोंका प्रमाण—

पण्णास-सहस्साणि, लक्ख्वाणि तिण्णि उसह - जाहस्स ।
अजियस्स तिण्णि लक्खा, बीस - सहस्साणि बिरदीओ ॥११७७॥

३५०००० । ३२००००

अर्थ :—ऋषभजिनेन्द्रके तीर्थमें तीन लाख पचास हजार (३५००००) और अजितनाथ के तीर्थमें तीन लाख बीस हजार (३२००००) आर्थिकाएँ थीं ॥११७७॥

तीस - सहस्सबभहिया, तिय-लक्खा संभवस्स तित्थम्मि ।
बिरदीओ तिण्णि लक्खा, तीस-सहस्साणि छ-सय तुरियम्मि ॥११७८॥

३३०००० । ३३०६००

अर्थ :—सम्भवनाथके तीर्थमें तीन लाख तीस हजार (३३००००) एवं चतुर्थ अभिनन्दननाथके तीर्थमें तीन लाख तीस हजार छह सौ (३३०६००) आर्थिकाएँ थीं ॥११७८॥

तीस-सहस्सबभहिया, सुमइ-जिणिवस्स तिण्णि लक्खाइं ।
बिरदीओ चउ-लक्खा, बीस-सहस्साणि पउमपह-जाहे ॥११७९॥

३३०००० । ४२०००० ।

अर्थ :—सुमतिजिनेन्द्रके तीर्थमें तीन लाख तीस हजार (३३००००) और पद्मप्रभके तीर्थमें चार लाख बीस हजार (४२००००) आर्थिकाएँ थीं ॥११७९॥

तीस - सहस्सा तिण्णि य, लक्खा तित्थे सुपासदेवस्स ।
चंबपहे^१ तिय - लक्खा, सोदि - सहस्साणि बिरदीओ ॥११८०॥

३३०००० । ३८०००० ।

अर्थ :—सुपासर्वजिनेन्द्रके तीर्थमें तीन लाख तीस हजार (३३००००) और चन्द्रप्रभके तीर्थमें तीन लाख अस्सी हजार (३८००००) आर्थिकाएँ थीं ॥११८०॥

ताइं चिय पत्तेकं, सुविहि-जिजेसम्मि सीयल-जिणिदे^१ ।

तीस - सहस्सबभहियं, लक्खं सेयंसदेवम्मि ॥११८१॥

३०००० । ३०००० । १३०००० ।

अर्थ :- सुविधि और शीतल जिनेन्द्रमेंसे प्रत्येकके तीर्थमें उतनी ही (तीन लाख अस्सी हजार) तथा श्रेयाम जिनेन्द्रके तीर्थमें एक लाख तीस हजार (१३००००) आर्यिकाएँ थी ॥११८१॥

विरवीउ^२ वासुपुज्जे, इगि-लक्खं होंति छस्सहस्साणि ।

इगि-लक्खं ति - सहस्सा, विरवीओ विमल - देवस्स ॥११८२॥

१०६००० । १०३००० ।

अर्थ :- वासुपुज्य स्वामीके तीर्थमें एक लाख छह हजार (१०६०००) और विमलदेवके तीर्थमें एक लाख तीन हजार (१०३०००) आर्यिकाएँ थी ॥११८२॥

अट्ट-सहस्सबभहियं, अणंत-सामिस्स होंति इगि-लक्खं ।

बासट्टि^३ - सहस्साणि, चत्तारि सयाणि घम्मणाहस्स ॥११८३॥

१०८००० । ६२४०० ।

अर्थ :- अनन्तनाथ स्वामीके तीर्थमें एक लाख आठ हजार (१०८०००) और घर्मनाथके तीर्थमें बामठ हजार चार सौ (६२४००) आर्यिकाएँ थी ॥११८३॥

सट्टि-सहस्सा ति-सयबभहिया संती-सतित्थ-विरवीओ ।

सट्टि - सहस्सा ति - सया, पण्णासा कुंथुदेवस्स ॥११८४॥

६०३०० । ६०३५० ।

अर्थ :- शान्तिनाथके तीर्थमें साठ हजार तीन सौ (६०३००) और कुन्थुजिनेन्द्रके तीर्थमें साठ हजार तीन सौ पचास (६०३५०) आर्यिकाएँ थी ॥११८४॥

अर-जिण-वरिद-तित्थे, सट्टि-सहस्साणि होंति विरवीओ ।

पणबण - सहस्साणि, भल्लि - जिजेसस्य तित्थम्मि ॥११८५॥

६०००० । ५५००० ।

अर्थ :—अरजितेन्द्रके तीर्थमें साठ हजार (६००००) और मल्लि जिनेन्द्रके तीर्थमें पचपन हजार (५५०००) आर्यिकाएँ थीं ॥११८५॥

पष्णास - सहस्त्राणि, विरबीओ सुध्वबस्स तित्थम्मि ।

पंच - सहस्सबभहिया, चाल - सहस्सा णमि - जिणस्स ॥११८६॥

५०००० । ४५००० ।

अर्थ :—मुनिसुव्रतके तीर्थमें पचास हजार (५००००) और नमि जिनेन्द्रके तीर्थमें पाँच हजार अधिक चालीस (पैंतालीस) हजार (४५०००) आर्यिकाएँ थीं ॥११८६॥

विगुणिय-बीस-सहस्सा, णेमिस्स कमेण पास-वीराणं ।

अडतीसं छत्तीसं, होंति सहस्साणि विरबीओ ॥११८७॥

४०००० । ३८००० । ३६००० ।

अर्थ :—नेमिनायके तीर्थमें द्विगुण बीस (चालीस) हजार (४००००) और पार्वनाथ एवं वीर जिनेशके तीर्थमें क्रमशः अडतीस हजार (३८०००) एवं छत्तीस हजार (३६०००) आर्यिकाएँ थीं ॥११८७॥

आर्यिकाओकी कुल सख्या—

णभ-पण-बु-छ-पंचंबर - पंचंक - कमेण तित्थ - कसाणं ।

सब्बाणं विरबीओ, चंडुज्जल - णिक्कलंक' - सीलाओ ॥११८८॥

। ५०५६२५० ।

अर्थ :—सर्व तीर्थकरोंके तीर्थमें चन्द्र सदृश उज्ज्वल एवं निष्कलङ्क शीलसे समस्त आर्यिकाएँ क्रमशः शून्य, पाँच, दो, छह, पाँच, शून्य और पाँच (५०५६२५०) अक प्रमाण थीं ॥११८८॥

प्रमुख आर्यिकाओंके नाम—

बन्धुपकुञ्ज^१- नामा, धम्मसिरी मेरुसेण - अयणता ।
 तह रतिसेणा^२मीणा, वरणा घोसा य धरणा य ॥११८६॥
 चारण - वरसेणाओ, पम्मा^३ - सम्बस्ति-सुम्बहाओ वि ।
 हरिसेण - भावियाओ, कुंथू - मधुसेण - पुष्पदन्ताओ ॥११९०॥
 मग्गिणि-जक्खि-सुलोया, चंदण-नामाओ उसह-पहुदीणं ।
 एवा पढम - गणीओ, एक्केक्का सम्बविरदीओ ॥११९१॥

अर्थ :—१ ब्राह्मी, २ प्रकुञ्जा (कुञ्जा), ३ धर्मश्री (धर्मार्थी), ४ मेरुवेणा, ५ अनन्ता (अनन्तमती), ६ रतिवेणा, ७ मीना (मीनार्थी), ८ वरणा, ९ घोषा (घोषार्थी), १० धरणा, ११ चारणा (धारणा), १२ वरसेना (सेना), १३ पम्मा, १४ सर्वश्री, १५ सुव्रता, १६ हरिसेणा, १७ भाविता, १८ कुन्धुसेना (यक्षिता), १९ मधुसेना (बन्धुसेना), २० पुष्पदन्ता (पूर्वदत्ता), २१ मार्गिणी (मंगिनी), २२ यक्षिणी (राजमती), २३ सुलोका (सुलोचना) एवं २४ चन्दना नामक एक-एक आर्यिका क्रमशः ऋषभादिकके तीर्थमें रहने वाली आर्यिकाओंके समूहमें प्रमुख थी ॥११८६-११९१॥

श्रावकोकी सख्या—

लक्खाणि तिण्णि सावय - संखा उसहावि-अट्ट-तित्थेसु ।
 पत्तेक्कं दो लक्खा, सुविह्विप्पहुदीसु^४ अट्ट - तित्थेसु ॥११९२॥

। ८ । ३००००० । २००००० ।

एक्केकं^५ चिय लक्खं, कुंथु-जिण्णिदादि-अट्ट-तित्थेसु ।
 सम्भाण सावयाणं, मिल्हिदे अड्ढाल - लक्खाणि ॥११९३॥

८ । १००००० । ४८०००००^६ ।

१ द. व. क. ज. य. उ. कुम्भ । २ व. क. ज. य. उ. रामा । ३. द. व. क. ज. य. उ. पम्मा-
 सत्तससुद्धाओ वि । ४. द. क. ज. य. उ. सुविह्विप्पहुदीसु । ५. व. क. ज. उ. एक्कक । ६. व. उ.
 ८४००००० ।

अर्थ :—श्रावकोंकी संख्या ऋषभादिक आठ तीर्थंकरोंमेंसे प्रत्येकके तीर्थमें तीन-तीन लाख और सुविधिनाथ प्रभृति आठ तीर्थंकरोंमेंसे प्रत्येकके तीर्थमें दो-दो लाख थी। कुन्धुनाथादि आठ तीर्थंकरोंमेंसे प्रत्येकके तीर्थमें श्रावकोंकी संख्या एक-एक लाख कही गई है। सर्व श्रावकोंकी संख्याको मिला देनेपर समस्त प्रमाण भ्रष्टतालीस लाख होता है ॥११६२-११६३॥

श्राविकाओंकी संख्या—

पण - चउ - तिय - लक्खाईं, 'पण्णबिदाट्टु - तित्थेसु' ।

पुह पुह सावगि - संखा, सव्वा छण्णउडि - लक्खाईं ॥११६४॥

। ५००००० । ४००००० । ३००००० । ६६००००० ।

अर्थ :—आठ-आठ तीर्थंकरोंमेंसे प्रत्येकके तीर्थमें श्राविकाओंकी पृथक्-पृथक् संख्या क्रमशः पाँच लाख, चार लाख और तीन लाख तथा (श्राविकाओं की) सम्पूर्ण संख्या छद्धानबै लाख कही गई है ॥११६४॥

प्रत्येक तीर्थमें देव-देवियों तथा अन्य मनुष्यों एवं तिर्यञ्चकोकी संख्या—

देवी - देव - समूहा, संखातीवा ह्वंति णर - तिरिया ।

संखेज्जा 'एक्केवके, तित्थे विहरंति भत्ति - जुत्ता^१ ॥११६५॥

अर्थ :—प्रत्येक तीर्थंकरके तीर्थमें असंख्यात देव-देवियोंके समूह एवं संख्यात मनुष्य और तिर्यञ्च जीव भक्तिसे समुक्त होते हुए विहार किया करते हैं ॥११६५॥

ऋषभादि तीर्थंकरोंके मुक्त होनेकी तिथि काल, नक्षत्र और मन्त्र-मुक्त

जीवोंकी संख्याका निर्देश—

माघस्स किण्ह-चोद्धसि-पुब्बण्हे णियय-जम्म-णक्खत्ते ।

अट्टावयम्मि उसहो, अनुबेण समं गओ मोक्खं^२ ॥११६६॥

१००००

अर्थ :—ऋषभदेव माघ-कृष्णा चतुर्दशीके पूर्वाह्णमें अपने जन्म (उत्तराषाढा) नक्षत्रके गृह्णे कैलाशपर्वतमें दस हजार मुनिराजोंके साथ मोक्षको प्राप्त हुए ॥११६६॥

१. द. ब. क. ज. य. उ. पण्णदिरा । २. एक्केवको । ३. ब. उ. जुत्तो, द. ज. जुदो, य. क. जुदा । ४. द. ब. क. ज. उ. जोमि । य. जम्मि ।

वेत्तस्स सुद्ध-पंचमि-पुब्बण्हे भरणि - णाम - णक्कत्ते ।
सम्मेदे अबियजिणो, मुत्ति पत्तो सहस्स - समं ॥११६७॥

१०००

अर्थ :—अजित जिनेन्द्र चैत्र-शुक्ला पंचमीके पूर्वाह्णमे भरणी नक्षत्रके रहते सम्मेदशिखररो एक हजार मुनियोके साथ मुत्तिको प्राप्त हुए ॥११६७॥

वेत्तस्स सुक्क - छट्ठी - अवरण्हे जम्म - भम्मि सम्मेदे ।
संपत्तो अपवग्गं, संभवसामी सहस्स - जुदो^१ ॥११६८॥

१००० ।

अर्थ :—सम्भवनाथ स्वामी चैत्र-शुक्ला षष्ठीके अपराह्णमे जम्म (ज्येष्ठा) नक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे एक हजार मुनियोके साथ मोक्षको प्राप्त हुए है ॥११६८॥

वडसाह-सुक्क-सत्तमि, पुब्बण्हे जम्म - भम्मि सम्मेदे ।
दस-सय - महस्सि - सहिबो, णंदणदेवो^२ गदो मोक्खं ॥११६९॥

। १००० ।

अर्थ :—अभिनन्दन देव वंशाख-शुक्ला सप्तमीके पूर्वाह्णमें अपने जम्म (पुनर्वसु) नक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे एक हजार महर्षियोंके साथ मोक्षको प्राप्त हुए ॥११६९॥

वेत्तस्स सुक्क - दसमी - पुब्बण्हे जम्म - भम्मि सम्मेदे ।
दस - सय - रिसि - संजुत्तो^३, सुमई णिव्वाणमावण्णो ॥१२००॥

१०००

अर्थ :—सुमतिजिनेन्द्र चैत्र-शुक्ला दसमीके पूर्वाह्णमे अपने जम्म (मघा) नक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे एक हजार ऋषियोंके साथ निर्वाणको प्राप्त हुए ॥१२००॥

१. द. व. क. ज. उ. मुत्ति पत्ता । २. द. व. क. उ. जुदा । ३. द. व. क. ज. उ. देवा ।

फग्गुण-किण्ह-चउत्थी-अवरण्हे जम्म - भम्मि सम्मेदे ।

चउवीसाहिय - तिय - सय - सहिदो पउमप्पहो देवो ॥१२०१॥

३२४

अर्थ :—पद्मप्रभदेव फाल्गुन-कृष्णा चतुर्थीके अपराह्णमे अपने जन्म (चित्रा) नक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे तीनसौ चौबीस मुनियोंके साथ मुक्तिको प्राप्त हुए है ॥१२०१॥

फग्गुण - बहुलच्छट्ठी - पुव्वण्हे पव्ववम्मि सम्मेदे ।

अणुराहाए पण - सय - जुत्तो^१ मुत्तो सुपास - जिणो ॥१२०२॥

। ५०० ।

अर्थ :—सुपाशर्वजिनेन्द्र फाल्गुन-कृष्णा षष्ठीके पूर्वाह्णमे अनुराधा नक्षत्रके रहते सम्मेद-पर्वतसे पाँचसौ मुनियों सहित मुक्तिको प्राप्त हुए है ॥१२०२॥

सिद-सत्तामि-पुव्वण्हे, भट्टपदे मुणि सहस्स - ^१संजुत्तो ।

जेट्ठेसु^१ सम्मेदे, चवप्पह - जिणवरो सिद्धो ॥१२०३॥

१००० ।

अर्थ —चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्र भाद्रपद-शुक्ला सप्तमीके पूर्वाह्णमे ज्येष्ठा नक्षत्रके रहते एक हजार मुनियों सहित सम्मेदशिखरसे मुक्त हुए है ॥१२०३॥

अस्सज्जुद-सुक्क-अट्टमि-अवरण्हे जम्म - भम्मि सम्मेदे ।

मुरिणवर-सहस्स-सहिदो, सिद्धि - गवो पुक्कवंत - जिणो ॥१२०४॥

१००० ।

अर्थ :—पुष्पदन्त जिनेन्द्र आश्विन-शुक्ला अष्टमीके अपराह्णमे अपने जन्म (मूल) नक्षत्र के रहते सम्मेदशिखरसे एक हजार मुनियोंके साथ सिद्धिको प्राप्त हुए है ॥१२०४॥

कत्तिय - सुक्के पंचमि - पुव्वण्हे जम्म-भम्मि सम्मेदे ।

णिब्बाणं संपत्तो, सीयलदेवो सहस्स - जुवो ॥१२०५॥

१००० ।

अर्थ :—शीतलनाथ जिनेन्द्र कार्तिक-शुक्ला पंचमीके पूर्वाह्णमें अपने जन्म (पूर्वाषाढा) नक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे एक हजार मुनियोंके साथ निर्वाणको प्राप्त हुए हैं ॥१२०५॥

सावणय-पुण्णमाए^१, पुढ्वण्हे मुणि - सहस्स - संजुत्तो ।

सम्मेदे सेयंतो, सिद्धि पत्तो धणिट्ठासुं ॥१२०६॥

। १००० ।

अर्थ :—भगवान् श्रेयाननाथ श्रावण (शुक्ला) पूर्णिमाके पूर्वाह्णमें धनिष्ठा नक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे एक हजार मुनियोंके साथ सिद्धिको प्राप्त हुए हैं ॥१२०६॥

फग्गुण - बहुले पंवमि - अवरण्हे अस्सिणीसु चंपाए ।

रुवाहिय-छ-सय-जुवो^२ सिद्धि - गढो वासुपुज्ज-जिणो ॥१२०७॥

। ६०१ ।

अर्थ :—वासुपूज्य जिनेन्द्र फाल्गुन-कृष्णा पंचमीके दिन अषाढामें अश्विनी नक्षत्रके रहते छहसौ एक मुनियोंके साथ चम्पापुरसे सिद्धिको प्राप्त हुए हैं ॥१२०७॥

सुक्कट्टमी - पदोसे, आसाढे जम्म - भम्मि सम्मेदे ।

छस्सय - मुणि - संजुत्तो, मुणि पत्तो विमलसामी ॥१२०८॥

। ६०० ।

अर्थ :—विमलनाथ स्वामी आषाढ-शुक्ला अष्टमी को प्रदोष काल (दिन और रात्रिके सन्धि काल) में अपने जन्म (पूर्वभाद्रपद) नक्षत्रके रहते छहसौ मुनियोंके साथ सम्मेदशिखरसे मुक्त हुए ॥१२०८॥

चेत्तस्स किण्ह-पच्छिम-दिणप्पदोसम्मि जम्म-णक्खत्ते ।

सम्मेवम्मि अणंतो, सत्त - सहस्सेहि संपत्तो ॥१२०९॥

। ७००० ।

अर्थ :—अनन्तनाथ स्वामी चैत्रमासके कृष्णपक्ष सम्बन्धी पश्चिम दिन (अमावस्या) को प्रदोष-कालमें अपने जन्म (रेवती) नक्षत्रमे सम्मेदशिखरमे सात हजार मुनियोके साथ मोक्षको प्राप्त हुए हैं ॥१२०६॥

जेट्टुस किण्ह - चोहसि - पज्जुसे जम्म - भम्मि सम्मेदे ।

सिद्धो धम्म - जिणो, रुवाहिय - अड - सएहि जुवो ॥१२१०॥

। ५०१ ।

अर्थ :—धर्मनाथ जिनेन्द्र ज्येष्ठ-कृष्णा चतुर्दशीकां प्रत्युष (रात्रिके अन्तिम भाग-प्रभात) कालमे अपने जन्म (पुष्य) नक्षत्रके रहते आठ सौ एक मुनियोके साथ सम्मेदशिखरसे सिद्ध हुए हैं ॥१२१०॥

जेट्टुस किण्ह^१-चोहसि-पदोस-समयम्मि जम्म-णक्खत्ते ।

सम्मेदे संति - जिणो, णव-सय-मुणि-संजुवो^२ सिद्धो ॥१२११॥

। ६०० ।

अर्थ :—शान्तनाथ जिनेन्द्र ज्येष्ठ-कृष्णा-चतुर्दशीको प्रदोषकालमे अपने जन्म (भरणी) नक्षत्रमे नौसौ मुनियोके साथ सम्मेदशिखरसे सिद्ध हुए ॥१२११॥

वइसाह-सुवक-पाडिब-पदोस-समयम्मि जम्म - णक्खत्ते ।

सम्मेदे कुंथु - जिणो, सहस्स - सहिवो गवो सिद्धि ॥१२१२॥

। १००० ।

अर्थ :—कुन्थु जिनेन्द्र वंशाख-शुक्ला प्रतिपदाको प्रदोष-कालमे अपने जन्म (कृतिका) नक्षत्रके रहते एक हजार मुनियोके साथ सम्मेदशिखरसे सिद्धिको प्राप्त हुए हैं ॥१२१२॥

चेत्तस्स बहुल-वरिमे, विणम्मि^३ णिय जम्मि-भम्मि पज्जुसे ।

सम्मेदे अर - देओ, सहस्स - सहिवो गवो मोक्खं ॥१२१३॥

। १००० ।

अर्थ :—अरनाथ भगवान्ने चैत्र-कृष्णा अमावस्याको प्रत्यूष-कालमें अपने जन्म (रोहणी) नक्षत्रके रहते एक हजार मुनियोंके साथ सम्मेदशिखरसे मोक्ष प्राप्त किया है ॥१२१३॥

पंचमि-पदोस-समए, फग्गुण-बहुलम्मि भरणि-णक्खत्ते ।
सम्मदे मल्लिजिणो, पंच - सय' - समं गदो मोक्खं ॥१२१४॥

५००

अर्थ :—मल्लिनाथ तीर्थकर फाल्गुन-कृष्णा पंचमीको प्रदोष समयमें भरणी नक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे पाँचसौ मुनियोंके साथ मोक्षको प्राप्त हुए हैं ॥१२१४॥

फग्गुण-किण्हे बारसि-पदोस-समयम्मि जम्म-णक्खत्ते ।
सम्मदम्मि विमुक्को, सुव्वद - देवो सहस्स जुत्तो ॥१२१५॥

। १००० ।

अर्थ :—मुनिसुव्रतजिनेन्द्र फाल्गुन-कृष्णा बारसको प्रदोष समयमें अपने जन्म (श्रवण) नक्षत्रके रहते एक हजार मुनियोंके साथ सम्मेदशिखरसे सिद्धिको प्राप्त हुए हैं ॥१२१५॥

वइसाह-किण्ह-चोद्वसि, पज्जूसे जम्म - भम्मि सम्मेदे ।
णिस्सेयसं पवण्णो, समं सहस्सेण णमि - सामी ॥१२१६॥

। १००० ।

अर्थ :—नमिनाथ स्वामी वंशाख-कृष्णा चतुर्दशीके प्रत्यूषकालमें अपने जन्म (अश्विनी) नक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे एक हजार मुनियोंके साथ निःश्रेयस-पदको प्राप्त हुए हैं ॥१२१६॥

बहुलट्टमी - पदोसे, आसाडे जम्म - भम्मि उज्जंते ।
छत्तीसाहिय - पण - सय - सहिदो णेमीस्सरो सिद्धो ॥१२१७॥

। ५३६ ।

अर्थ :—नेमिनाथ जिनेन्द्र आषाढ़-कृष्णा अष्टमीको प्रदोष-कालमें अपने जन्म (वित्रा) नक्षत्रके रहते पाँच सौ छत्तीस मुनिराजोंके साथ ऊर्जयन्तगिरिसे सिद्ध हुए हैं ॥१२१७॥

सिद्ध-सप्तमी-पदोसे, सावण-मासस्मि जन्म - णक्खत्ते ।
सम्भेदे पासजिणो, छत्तीस - जुदो गदो मोषल्लं ॥१२१८॥

। ३६ ।

अर्थ :—पार्श्वनाथ जिनेन्द्र श्रावण मासमे शुक्लपक्षकी सप्तमीके प्रदोष-कालमे अपने जन्म (विशाखा) नक्षत्रके रहते छत्तीस मुनियो सहित सम्मेदशिखरसे मोक्षको प्राप्त हुए हैं ॥१२१८॥

कत्तिय - किण्हे चोद्वसि, पज्जुसे सावि-णाम-णक्खत्ते ।
पावाए णयरीए, एक्को बीरेसरो सिद्धो ॥१२१९॥

१

अर्थ :—बीर जिनेश्वर कातिक कृष्णा चतुर्दशीके प्रत्युष-कालमे स्वाति नामक नक्षत्रके रहते पावानगरीसे भकेले ही सिद्ध हुए हैं ॥१२१९॥

[तालिका : २६ अगले पृष्ठ ३५८-३५९ पर देखिये]

ऋषभादिजिनेन्द्रोका योग-निवृत्ति काल—

उसहो चोद्वसि दिवसे, दु - दिणं बीरेसरस्स सेसाण ।
मासेण य विणिबित्ते, जोगावो मुत्ति - संपण्णो ॥१२२०॥

अर्थ :—ऋषभजिनेन्द्रने चौदह दिन पूर्व, बीर जिनेन्द्रने दो दिन पूर्व और शेष तीर्थकरोंने एक मास पूर्व योगसे निवृत्त होनेपर मोक्ष प्राप्त किया है ॥१२२०॥

तीर्थकरोके मुक्त होनेके आसन—

उसहो य वासुपुज्जो, णमी पल्लं क - 'बद्धया सिद्धा ।
काउस्सग्गेण जिणा, सेसा मुत्ति समावण्णा ॥१२२१॥

अर्थ :—ऋषभनाथ, वासुपूज्य एवं नेमिनाथ पत्यङ्क-बद्ध-आसनसे तथा शेष जिनेन्द्र कायोत्सर्ग मुद्रासे मोक्षको प्राप्त हुए हैं ॥१२२१॥

मुक्तिफल याचना—

बसन्ततिलकम्—

घोरदु-कम्म-णियरे वलिद्वूरा लद्ध-

गिस्सेयसा जिणवरा जगबंद - जिउजा ।

सिद्धि विसंतु तुरिदं सिरिबालचंद-

'सिद्ध'तियप्पहुवि-भव्व-जएणाण सव्वे ॥१२२२॥

अर्थ :—जिन्होंने घोर अष्ट-कर्मोंके समूहको नष्ट करके नि श्रेयसपदको प्राप्त कर लिया है और जो जगत्के वन्दनीय हैं ऐसे वे सर्व जिनेन्द्र शीघ्र ही, श्री बालचन्द्र सैद्धान्तिक आदि भव्यजनोंको मुक्ति प्रदान करे ॥१२२२॥

ऋषभादिजिनेन्द्रोंके तीर्थमे अनुबद्ध केवलियोंकी सख्या—

दसमंते चउसीदी, कमसो अणुबद्ध - केवली होंति ।

बाह्णरि चउवालं, सेयंसे वासुपूजे य ॥१२२३॥

५४ । से ७२ । वा ४४ ।

अर्थ :—आदिनाथसे शीतलनाथ पर्यन्त (प्रत्येक के) चौरामी तथा श्रेयंसनाथ और वासुपूज्यके क्रमशः बहत्तर एवं चवालीस अनुबद्ध केवली हुए हैं ॥१२२३॥

विमल-जिणे चालीसं, एवसु तदो चउ-विबज्जिवा कमसो ।

तिष्णिण क्खिय पास-जिणे तिष्णिण क्खिय बद्धमाणम्मि ॥१२२४॥

। ४० । ३६ । ३२ । २५ । २४ । २० । १६ । १२ । ५ । ४ । ३ । ३ ।

अर्थ :—विमल जिनेन्द्रके चालीस, इसके पश्चात् नौ तीर्थकरोंके क्रमशः उत्तरोत्तर चार-चार हीन, पार्श्वनाथके तीन और वर्धमान स्वामीके भी तीन ही अनुबद्ध केवली हुए हैं ॥१२२४॥

आर्यिकाओ आदि की संख्या एवं तीर्थकरों के निर्वाण-प्राप्ति निर्देश गाथा ११७७.१२१९

आर्यिकाओ	प्रमुख	श्रावको	श्राविकाओ	निर्वाण प्राप्ति
----------	--------	---------	-----------	------------------

सह-मुक्त

पर्वत

मघा

चित्रा

अनु०

ज्येष्ठा

मूल

पूषा

प्रकारान्तरसे—

आ सलाममेवक-सयं, उवरि-तिय एउदि एउदि चउसीवी ।

सेसेसु पुव्व - संखा, हवन्ति अणुबद्ध - केवली अहवा ॥१२२५॥

पत्तयं १०० । १०० । १०० । १०० । १०० । १०० । १०० । १०० । १०० । १०० ।
८४ । ४० । ३६ । ३२ । २८ । २४ । २० । १६ । १२ । ८ । ४ । ३ । ३ ।

अर्थ :—अथवा सातवें सुपाश्वनाथ पर्यन्त एकसौ, आगे तीनके नव्वे, पुनः नव्वे, चौरासी एवं शेष तीर्थकरोंके पूर्वोक्त सख्या प्रमाण ही अनुबद्ध केवली हुए हैं ॥१२२५॥

ऋषभादि तीर्थकरोंके शिष्योंमेंसे अनुत्तर विमानोमे जाने वालोंकी संख्या—

उसह-तियाणं सिस्सा, बीस - सहस्सा अणुत्तरेसु गवा' ।

कमसो पंच - जिणेसुं, तत्तो बारस - सहस्साणि ॥१२२६॥

२०००० । २०००० । २०००० । १२००० । १२००० । १२०००० । १२०००० । १२०००० ।

तत्तो पंच - जिणेसुं, एक्कार - सहस्सयाणि पत्तेक्कं ।

पंचसु सामिसु तत्तो, एक्केक्के दस - सहस्साणि ॥१२२७॥

११००० । ११००० । ११००० । ११००० । ११००० । १००००० । १०००००
। १००००० । १००००० । १००००० ।

अट्टासीदि - सयाणि, कमेण सेसेसु जिणव्दिदेसुं ।

गयण-णभ-अट्ट-सग-सग-दो-अंक्र-कमेण सव्व-परिमाणं ॥१२२८॥

८८०० । ८८०० । ८८०० । ८८०० । ८८०० । ८८०० ॥ समेलिदा २७७८०० ॥

। अणुत्तर गद ।

अर्थ :—ऋषभादिक तीन जिनन्द्रोंके क्रमश बीस-बीस हजार, आगे पांच तीर्थकरोंके बारह-बारह हजार, आगे पांच जिनन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके ग्यारह-ग्यारह हजार, फिर पांच जिनन्द्रोंमेंसे एक-एकके दस-दस हजार तथा शेष छह जिनन्द्रोंके क्रमश अठासी-अठासी सौ शिष्य अनुत्तर विमानोमे

गये हैं । इन विमानों में जाने वाले सम्पूर्ण शिष्योंका प्रमाण बङ्क-क्रमसे शून्य, शून्य, आठ, सात, सात और दो (२७७८००) सख्याके बराबर है ॥१२२६-१२२८॥

। अनुत्तर विमानोमे जाने वालांका कथन समाप्त हुआ ।

ऋषभादिकोके मुक्ति-प्राप्त यतिगणोंका प्रमाण—

सट्टि-सहस्सा णव-सय-सहिया सिद्धि गदा जवीण गणा ।

उसहस्स अजिय-पहुणो, एक-सया सत्तहत्तरि - सहस्सा ॥१२२९॥

। ६०६०० । ७७१०० ।

अर्थ --ऋषभजिनेन्द्रके साठ हजार नौ सौ और अजितप्रभुके मनत्तर हजार एकसौ यतिगण सिद्धिको प्राप्त हुए है ॥१२२९॥

सत्तरि-सहस्स-इगि-सय-सजुत्ता संभवस्स इगि - लक्ख ।

दो लक्खा एक-सयं, सीवि-सहस्साणि गंवण-जिणस्स ॥१२३०॥

। १७०१०० । २८०१०० ।

अर्थ : गम्भवनायके एक लाख सत्तर हजार एक सौ और अभिनन्दन जिनेन्द्रके दो लाख ग्रस्मो हजार एक सौ यतिगण सिद्ध हुए है ॥१२३०॥

लक्खाणि तिण्णि सोलस-सएहि जुत्ताणि मुमइ-सामिस्स ।

चोदस-सहस्स-सहिदा, पउमप्यह-जिणवरस्स 'तिय-लक्खा ॥१२३१॥

। ३०१६०० । ३१४००० ।

अर्थ :—मृमतिनाथ स्वामीके तीन लाख सोलह सौ और पद्मप्रभ जिनेन्द्रके तीन लाख चौदह हजार मुनि सिद्ध हुए ॥१२३१॥

पंचासीवि - सहस्सा, दो लक्खा छस्सया सुपासस्स ।

अउत्तोस - सहस्स - जुदा, दो लक्खा चंदपह - पहुणो ॥१२३२॥

। २८५६०० । २३४००० ।

अर्थ :—सुपाष्व-जिनेन्द्रके दो लाख पचासी हजार छह सौ और चन्द्रप्रभुके दो लाख चौतीस हजार यति मुक्त हुए ॥१२३२॥

उणसीवि - सहस्साणि, इगि - लक्षं छस्सयाणि सुविहिस्स ।

सीवि - सहस्सा^१ छस्सय, संजुत्ता^२ सीयलस्स देवस्स ॥१२३३॥

। १७६६०० । ८०६०० ।

अर्थ :—सुविधिनाथके एक लाख जन्यासी हजार छह सौ और वीतलदेवके अस्सी हजार छह सौ ऋषि मुक्तिको प्राप्त हुए ॥१२३३॥

पण्णट्ठि-सहस्साणि, सेयंस - जिणस्स छस्सयाणि पि ।

चउवण्ण - सहस्साइं, छच्च सया वासुपुज्जस्स ॥१२३४॥

। ६५६०० । ५४६०० ।

अर्थ :—श्रेयांस जिनेन्द्रके पैंसठ हजार छहसौ और वासुपूज्यके चौवन हजार छहसौ यति मोक्षको प्राप्त हुए ॥१२३४॥

एक्कावण्ण-सहस्सा, तिण्णि सयाणि पि विमल-णाहस्स ।

तेस्सिय - मेत्त - सहस्सा, तिय - सय - हीणा अणंतस्स ॥१२३५॥

। ५१३०० । ५१००० ।

अर्थ :—विमल जिनेन्द्रके इक्यावन हजार तीन सौ और अनन्तनाथके तीन सौ कम इतने ही अर्थात् इक्यावन हजार यति सिद्धपदको प्राप्त हुए ॥१२३५॥

उणवण्ण - सहस्साणि, सत्त - सएहिं जुवाणि धम्मस्स ।

अडवाल - सहस्साइं, चत्तारि सदाणि संतिस्स ॥१२३६॥

। ४६७०० । ४८४०० ।

अर्थ :—धर्मनाथ जिनेन्द्रके उनचास हजार सात सौ और शान्तिनाथके अड़तालीस हजार चार सौ ऋषि सिद्धपदको प्राप्त हुए ॥१२३६॥

छावाल - सहस्साणि, अट्ट - सदाणि च कुंथु-णाहस्स ।

सत्तत्तीस - सहस्सा, दो-सय-जुत्ता अर - जिणिवस्स ॥१२३७॥

। ४६५०० । ३७२०० ।

अर्थ — कुन्थुनाथके छघालीस हजार आठ सौ और अर-नाथ जिनेन्द्रके सैंतीस हजार दो सौ यति मुक्त हुए ॥१२३७॥

अट्टाबोस - सहस्सा, अट्ट - सदाणि पि मल्लिणाहस्स ।

उणवोस - सहस्साणि, दोणिण सया सुव्वय - जिणस्स ॥१२३८॥

। २५५०० । १६२०० ।

अर्थ — मल्लिनाथके अट्टाईस हजार आठ सौ और मुनिमुवत जिनेन्द्रके उन्नोम हजार दो सौ यति सिद्ध हुए ॥१२३८॥

णव य सहस्सा छस्सय-संजुत्ता णमि-जिरास्स सिस्स-गणा ।

णेमिस्स अड - सहस्सा, बासट्टि - सयाणि पासस्स ॥१२३९॥

। ६६०० । ५००० । ६२०० ।

अर्थ :— नमिनाथ जिनेन्द्रके नौ हजार छह सौ, नेमिनाथके आठ हजार और पार्श्वनाथके बासठ सौ शिष्यगण मोक्ष गये हैं ॥१२३९॥

चउडाल - सया दोरेसरस्स सव्वाण मिलिह-परिमाणं ।

चउडोसवि-लक्खाणि, चउसट्टि-सहस्स-चउ-सयाणि स्सि ॥१२४०॥

४४०० । २४६४४०० ।

अर्थ :— वीर जिनेश्वरके चवालीससौ शिष्यगण मुक्तिको प्राप्त हुए । इन सर्व शिष्योका सम्मिलित प्रमाण चौबीस लाख चौंसठ हजार चार सौ होता है ॥१२४०॥

ऋषभादिकोके मुक्ति प्राप्त शिष्यगणोका मुक्तिकाल—

उसहादि - सोलसाणं, केवलणाणप्पसूदि - विहसम्मि ।

पढमं चिय सिस्स - गणा, जिस्सेयस - संपदं पत्ता ॥१२४१॥

कुंधु - अउवके कमसो, इगि-डु-ति-छम्मास-समय-पेरंतं ।

णमि - पणुवि - जिणिवेसुं, इगि-डु-ति-छम्मास-संखाए ॥१२४२॥

मा १ । २ । ३ । ६ । वास १ । २ । ३ । ६ ।

अर्थ :—ऋषभादि सोलह तीर्थंकरोंको केवलज्ञान होनेके दिनसे ही (उनके) शिष्यगण मोक्ष-सम्पदाको प्राप्त हो गये थे । कुन्धुनाथ, अरनाथ, मल्लिनाथ और मुनिसुव्रतनाथ तीर्थंकरोंको केवलज्ञान होनेके क्रमशः एक माह, दो माह, तीन माह और छह माहके समयमें ही तथा नमिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ एव वीर जिनेन्द्रको केवलज्ञान होने के क्रमशः एक वर्ष, दो वर्ष, तीन वर्ष एवं ६ वर्षके मध्यमें ही उन-उनके शिष्यगण क्रमशः मुक्ति-पदको प्राप्त हो चुके थे ॥१२४१-१२४२॥

विशेषार्थ :—ऋषभादिकोंके शिष्योंकी मुक्ति परम्बराका प्रारम्भ—

ऋषभादि सोलह तीर्थंकरोंके शिष्यगण केवलज्ञान उत्पन्न होनेके दिनसे ही मोक्ष-सम्पदाको प्राप्त करने लगे । कुन्धुनाथ, अरनाथ, मल्लिनाथ और मुनिसुव्रतनाथ तीर्थंकरोंके शिष्यगण क्रमशः केवलज्ञान होनेके एक माह, दो माह, तीन माह और छह माहके उपरान्त तथा नमिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और वीर जिनेन्द्रके शिष्य क्रमशः केवलज्ञान होनेके एक वर्ष, दो वर्ष, तीन वर्ष एवं छह वर्षके पश्चात् मुक्ति पदको प्राप्त होने लगे ।

(तालिका ३० पृष्ठ ३६५ पर देखिये)

ऋषभादिकोंके सौधर्मादिकों को प्राप्त हुए शिष्योंकी संख्या—

सोहम्माविय - उअरिम - गेबज्जा जाव उवगदा सग्गं ।

उसहावीरं सिस्सा, ताण पमाणं पक्खेनो ॥१२४३॥

अर्थ :—ऋषभादिक जिनेन्द्रोंके जो मुनि (शिष्य) सौधर्मसे लेकर ऊर्ध्वश्रेणिक पर्यन्त स्वर्गको प्राप्त हुए हैं, उनके प्रमाणांका प्रकल्पण करता हूँ ॥१२४३॥

तालिका : ३०

योग निवृत्तिकाल, आसन एवं अनुबद्ध केवली आदिको का प्रमाण गा० १२२०-१२४२

क्र सख्या	योग निवृत्ति काल	मुक्त होने के आसन	अनुबद्ध केवलियो का प्रमाण	प्रकारान्त से अनुकेवलियो का प्रमाण	अनुत्तर वि० उत्पन्न होने वालो का प्रमाण	मुक्तिप्राप्त यतिगणों की सख्या	शिष्यो की मुक्तिप्राप्ति का प्रारम्भ गा० काल
	गा० १२२०	गा० १२२१	१२२३-११२४	गा० १२२५	१२२६-१२२८	१२२९-१२४०	१२४१-१२४२
१	१४ दिन पूर्व	पत्यकासन	८४	१००	२०००००	६०९००	प्रथम दिन से
२	१ मास "	कायोत्सर्ग	८४	१००	२०००००	७७७१००	" " "
३	१ " "	"	८४	१००	२०००००	१७०११००	" " "
४	१ " "	"	८४	१००	१२०००	२८०११००	" " "
५	१ " "	"	८४	१००	१२०००	३०१६०००	" " "
६	१ " "	"	८४	१००	१२०००	३१४००००	" " "
७	१ " "	"	८४	१००	१२०००	२८५६०००	" " "
८	१ " "	"	८४	९०	१२०००	२३४००००	" " "
९	१ " "	"	८४	९०	११०००	१७९६०००	" " "
१०	१ " "	"	८४	९०	११०००	८०६०००	" " "
११	१ " "	"	७२	९०	११०००	६५६०००	" " "
१२	१ " "	पत्यकासन	४४	८४	११०००	५४६०००	" " "
१३	१ " "	कायोत्सर्ग	४०	४०	११०००	५१३०००	" " "
१४	१ " "	"	३६	३६	१००००	५१००००	" " "
१५	१ " "	"	३२	३२	१००००	४९७०००	" " "
१६	१ " "	"	२८	२८	१००००	४८४०००	" " "
१७	१ " "	"	२४	२४	१००००	४६८०००	१ मास बाद
१८	१ " "	"	२०	२०	१००००	३७२०००	२ मास बाद
१९	१ " "	"	१६	१६	८८००	७८८०००	३ मास बाद
२०	१ " "	"	१२	१२	८८००	१९२००	६ मास बाद
२१	१ " "	"	८	८	८८००	९६०००	१ वर्ष बाद
२२	१ " "	पत्यकासन	४	४	८८००	८०००	२ वर्ष बाद
२३	१ " "	कायोत्सर्ग	३	३	८८००	६२०००	३ वर्ष बाद
२४	२ दिन पूर्व	"	३	३	८८००	४४०००	६ वर्ष बाद

इगि-सय तिण्णि-सहस्सा, णव-सय-अब्भहिय-दो-सहस्साणि ।
णव-सय-णवय-सहस्सा, णव-सय-संजुत्त-सग-सहस्साणि ॥१२४४॥

। ३१०० । २६०० । ६६०० । ७६०० ।

चउ-सय-छ-सहस्साणि, चाल-सया दो सहस्स चारि सया ।
चाल-सया पत्तेवकं, चारि-सदेण^१ हि य णव अड सहस्सा ॥१२४५॥

६४०० । ४००० । २४०० । ४००० । ६४०० । ८४०० ।

चउ-सय-सत्त-सहस्सा, चउ-सय-अदिरित्त-छस्सहस्साणि ।
सग-सय-सखा-समहिय - पंच - सहस्सा पण - सहस्सा ॥१२४६॥

। ७४०० । ६४०० । ५७०० । ५००० ।

तिय-सय-चउस्सहस्सा, छस्सय-संजुत्त-तिय-सहस्साणि ।
दो-सय-जुद-ति-सहस्सा, अट्ट-सय-अब्भहिय-दो-सहस्साणि ॥१२४७॥

४३०० । ३६०० । ३२०० । २८०० ।

चउ-सद-जुद-दु-सहस्सा, दु सहस्सा च्चव सोलस-सयाणि ।
बारस - सया सहस्सं, अट्ट - सयाणि जहा कमसो ॥१२४८॥

२४०० । २००० । १६०० । १२०० । १००० । ८०० ।

अर्थ :-तीन हजार एकसौ, नौसौ अधिक दो हजार (२९००), नौ हजार नौ सौ, सात हजार नौ सौ, छह हजार चार सौ चार हजार, दो हजार चार सौ, चार हजार, चारसौके साथ नौ हजार और चारसौ के साथ आठ हजार (९४००, ८४००), सात हजार चारसौ, चारसौ अधिक छह हजार, सातसौ संख्यासे अधिक पांच हजार, पांच हजार, चार हजार तीन सौ, छहसौ सहित तीन हजार, दो सौ सहित तीन हजार, आठ सौ अधिक दो हजार, चारसौ युक्त दो हजार, दो हजार, सोलहसौ, बारहसौ, एक हजार और आठ सौ, इस प्रकार क्रमशः ऋषभादिक चौबीस तीर्थकरोंके ये शिष्य मुनि सौधर्मादिकको प्राप्त हुए ॥१२४३-१२४८॥

भाव-श्रमणोकी सख्या—

लखलं पंच-सहस्सा, अट्ट-सयाणि' वि मिलिद-परिमाणं ।

विणय-सुद-णियम - संजम - भरिवाणं भाव - समणाणं ॥१२४६॥

। १०५८०० ।

अर्थ :—विनय, श्रुत, नियम एव संयमसे परिपूर्ण इन सब भाव मुनियोंका सम्मिलित प्रमाण एक लाख, पांच हजार आठ सौ होता है ॥१२४६॥

विशेषार्थ :—प्रत्येक तीर्थकरके ऋषियोंकी जो संख्या गा० ११०३-११०८ में बताई गई है वह सात गणोमें विभक्त है । जिसकी तालिका गाथा सख्या ११७६ के बाद अंकित है ।

ऋषियोंकी यह सख्या सौधर्म से ऊर्ध्वप्रवेयक, अनुत्तर और मोक्ष गमनकी अपेक्षा तीन भागोमें विभक्त है । इनमें मोक्ष जाने वाले और अनुत्तर विमानोमें उत्पन्न होने वाले तो भाव-ऋषि (श्रमण) थे ही किन्तु सौधर्मसे ऊर्ध्वप्रवेयक तक जाने वाले ऋषि भी भाव श्रमण ही थे । यह सूचित करनेके लिए ही गाथा सख्या १२४६ में भावश्रमणोका प्रमाण पुथक् दर्शाया गया है ।

(तालिका ३१ पृष्ठ ३६८ पर देखिये)

तालिका : ३१ ऋषभादि तीर्णकरों के स्वर्ग और मोक्ष-प्राप्त शिष्यों की संख्या

क्र०	नाम	सौधर्मसे ऊर्ध्वर्षी० गा. १२४४-१२४८	अनुसरोत्पन्न गा. १२२६-१२२८	मोक्ष-प्राप्त गा. १२२६-१२४०	कुल योग गा. ११०३-११०८
१	ऋषभनाथ	३१०० +	२०००० +	६०६०० =	८४०००
२	अजितनाथ	२६००	२००००	७७१०० =	१०००००
३	सम्भवनाथ	६६००	२००००	१७०१०० =	२०००००
४	अभिनन्दनजी	७६००	१२०००	२८०१०० =	३०००००
५	सुमतिनाथ	६४००	१२०००	३०१६०० =	३२००००
६	पद्मप्रभु	४०००	१२०००	३१४००० =	३३००००
७	सुपाश्वनाथ	२४००	१२०००	२८५६०० =	३०००००
८	चन्द्रप्रभु	४०००	१२०००	२३४००० =	२५००००
९	पुष्पदन्त	६४००	११०००	१७६६०० =	२०००००
१०	शीतलनाथ	८४००	११०००	८०६०० =	१०००००
११	श्रेयासनाथ	७४००	११०००	६५६०० =	८४०००
१२	वासुपुत्र्य	६४००	११०००	५४६०० =	७२०००
१३	विमलनाथ	५७००	११०००	५१३०० =	६८०००
१४	अनन्तनाथ	५०००	१००००	५१००० =	६६०००
१५	धर्मनाथ	४३००	१००००	४६७०० =	६४०००
१६	शान्तिनाथ	३६००	१००००	४८४०० =	६२०००
१७	कुन्थुनाथ	३२००	१००००	४६८०० =	६००००
१८	अरनाथ	२८००	१००००	३७२०० =	५००००
१९	मल्लिनाथ	२४००	८८००	२८८०० =	४००००
२०	मुनिमुव्रत	२०००	८८००	१६२०० =	३००००
२१	नमिनाथ	१६००	८८००	६६०० =	२००००
२२	नेमिनाथ	१२००	८८००	८००० =	१८०००
२३	पाश्वनाथ	१०००	८८००	६२०० =	१६०००
२४	वीरनाथ	८०० +	८८०० +	४४०० =	१४०००
	योग	१०५८०० +	२७७८०० +	२४६४४० =	२८४८०००

ऋषभनाथ और वीर जिनेन्द्रका सिद्धि-काल—

तिय-बासा^१ अड-मासा, पक्खं तह तदिय-काल-अवसेसे ।

सिद्धो उसह - जिणियो, वीरो तुरियस्स तेत्तिए सेसे ॥१२५०॥

। वा ३ । मा ८ । प १ । वा ३ । मा ८ । प १ ।

अर्थ :—ऋषभजिनेन्द्र तृतीयकालमें और वीर जिनेन्द्र चतुर्थकालमें तीन वर्ष, आठ मास और एक पक्ष अवशिष्ट रहनेपर सिद्धि पदको प्राप्त हुए ॥१२५०॥

विशेषार्थ :— गाथा संख्या ११६६ में ऋषभजिनेन्द्र को मोक्ष-तिथि माघ कृष्णा चतुर्दशी बताई गई है और यहाँ गा० १२५० में कहा गया है कि तृतीयकालके ३ वर्ष ८½ माह शेष रहने पर ऋषभदेव मोक्ष गये । युगका प्रारम्भ श्रावण कृष्णा प्रतिपदासे होता है और माघ कृ० चतुर्दशीसे श्रावण कृ० प्रतिपदा तक ५½ माह ही होते हैं । जो गा० १२५० की प्ररूपणाके वाचक हैं । यदि ऋषभनाथकी निर्वाण तिथि कान्तिक कृष्णा अमावस्या होती तो गा० १२५० का कथन यथार्थ बँठ सकता है । यह विषय विचारणीय है ।

ऋषभादि-तीर्थकरोके मुक्त होनेका अन्तर काल—

सिद्धि गदम्मि उसहे, सायर - कोडोण पण्ण - लक्खेसु^१ ।

बोलीणेषु^२ अजियो, णिस्सेयस - संपयं^३ पत्तो ॥१२५१॥

। मा ५० ल को ।

अर्थ :—ऋषभजिनेन्द्रके मुक्त हो जानेके पचाम लाख करोड सागर वाद अजितनाथ तीर्थकरने नि.श्रेयस-सम्पदाको प्राप्त किया ॥१२५१॥

उवहीसु तीस^३ दस-राव-संखेसु^४ कोडि-लक्ख-पह्वेसु^५ ।

तत्तो कमेण संभव - णंदण - सुमई गदा सिद्धि ॥१२५२॥

। सा ३० ल को । मा १० ल को । मा ६ ल को ।

अर्थ :—इसके आगे तीस लाख करोड, दस लाख करोड और नौ लाख करोड सागरोंके व्यतीत हो जानेपर क्रमशः सम्भव, अभिनन्दन और सुमतिनाथ मोक्ष गये ॥१२५२॥

१ द. व. क ज. य उ बासो । २ द. व. क ज उ. पत्ता । ३ द व क य उ तीसु ।

४ द व क व. य. उ पह्वेसु ।

उबहि-उबमाच जउदी, जवसु सहस्सेसु कोडि-पहवेसु ।
ततो गवेसु कमसो, सिद्धा पउमप्पह^१ - सुवासा ॥१२५३॥

सा ६०००० को । सा ६००० को ।

अर्थ :- इसके पश्चात् नब्बे हजार करोड़ और नौ हजार करोड़ सागरोंके व्यतीत हो जाने पर क्रमशः पद्मप्रभ एवं सुपाश्वनाथ तीर्थंकर सिद्ध हुए ॥१२५३॥

जव-सय-जउदि-गवेसु^२, कोडि - हवेसु^३ समुह - उबमाणे ।
जावेसु^४ तदो सिद्धा, चंदप्पह - सुधिहि - सीयलया^५ ॥१२५४॥

सा ६०० को । सा ६० को । सा ६ को ।

अर्थ :- इसके पश्चात् एक करोड़से गुणित नौसी अर्थात् नौसी करोड़ सागर, नब्बे करोड़ सागर और नौ करोड़ सागर व्यतीत हो जानेपर क्रमशः चन्द्रप्रभ, सुविधिनाथ और शीतलनाथ जिनेन्द्र सिद्ध हुए ॥१२५४॥

छम्बोस-सहस्साहिय-छ^६-सट्ठि-लभ्भेहि वत्स सायर-सएण ।
ऊणम्मि कोडि - सायर - काले सिद्धो य सेयंसो ॥१२५५॥

सा १ को रिया । सा १०० घण ६६२६००० व ।

अर्थ :- छपासठ लाख छम्बीस हजार (६६२६००० वर्ष) और सौ सागर कम एक करोड़ सागर प्रमाण कालके चले जानेपर भगवान् श्रेयासनाथ सिद्ध हुए ॥१२५५॥

चउवण्ण-तीस-जव-जउ - सायर - उवमेसु तह अबीवेसु ।
सिद्धो य वासुपुज्जो, कमेण विमलो अणंत - धम्मा^७ य ॥१२५६॥

। ५४ । ३० । ६ । ४ ।

अर्थ :- पश्चात् चौवन, तीस, नौ और चार सागरोंमेंके व्यतीत हो जाने पर क्रमशः वासुपुज्य, विमलनाथ, अनन्तनाथ और धर्मनाथ तीर्थंकर सिद्ध हुए ॥१२५६॥

१. द. ब. क. ज. य. उ. पहवेसु । २. द. ब. क. ज. य. उ. पउमप्पहा सुपामा य । ३. द. ब. क. ज. य. उ. जावेसु । ४. द. ब. क. ज. उ. मुहवसी । ५. ब. उ. छासट्ठि, क. वासट्ठि । ६. ब. क. ज. य. उ. छम्बो व ।

तिय-सागरोपमेसुं, ति-चरण-पल्लोरिखेसु संति-जिणो ।
पलिबोवमस्स अद्धे, तत्तो सिद्धि गवो कुंभू ॥१२५७॥

। सा ३ रिएण प ३ । कुं प ३ ।

अर्थ :- इसके पश्चात् पीन पत्य कम तीन सागरोपमोके व्यतीत हो जानेपर शान्तिनाथ जिनेन्द्र एवं फिर अर्धपत्य बौत जानेपर कुन्धु जिनेन्द्र मुक्तिको प्राप्त हुए ॥१२५७॥

पलिबोवमस्स पाबे, इगि-कोडि-सहस्स-वस्स-परिहीणे ।
अरवेवो मल्लिजिणो, कोडि - सहस्सम्मि वासाणं ॥१२५८॥

अ प ३ रिएण वस्स १००० को । मल्लि वस्स १००० को ।

अर्थ :- पश्चात् एक हजार करोड़ वर्ष कम पाव पत्योपम व्यतीत हो जाने पर अरनाथ और एक हजार करोड़ वर्षोंके बाद मल्लिनाथ मोक्ष गए ॥१२५८॥

अउवण्ण - छक्क - पंचसु, लक्खेसुं ववगवेसु वासाणं ।
कमसो सिद्धि पत्ता', सुव्वय-णम्मि-णेमिजिण-णाहा' ॥१२५९॥

। वास ५४ ल । व ६ ल । व ५ ल ।

अर्थ :- इसके पश्चात् चीवन लाख, छह लाख और पाँच लाख वर्षोंके व्यतीत हो जाने पर क्रमशः मुनिसुव्रतनाथ, नमिनाथ और नेमिनाथ जिनेन्द्र मुक्तिको प्राप्त हुए ॥१२५९॥

तेसीदि - सहस्सेसुं, पण्णाघिय - सग - सएसु जावेसुं ।
तत्तो पासो सिद्धो, पण्णभहियम्मि दो - सए बीरो ॥१२६०॥

व ८३७५० । व २५० ।

। भोक्खंतरं गदं ।

अर्थ :- इसके पश्चात् तेरासी हजार सातसी पचास वर्ष व्यतीत हो जानेपर पार्श्वनाथ और दो सौ पचास वर्ष व्यतीत हो जानेपर बीर जिनेन्द्र मोक्ष गये ॥१२६०॥

। मोक्षके अन्तराल कालका कथन समाप्त हुआ ।

ऋषभादिक-जिनेन्द्रोंका तीर्थप्रवर्तन काल—

पुष्पगङ्गभ्रमिहियाणि, सायर-उबमाण - कोडि - लक्ख्वाणि ।

पण्णास तित्थबट्टण - कालो उसहस्स रिहिट्ठो ॥१२६१॥

सा ५० ल को । पुष्पग १ ।

अर्थ :—भगवान् ऋषभदेवका तीर्थप्रवर्तन-काल एक पूर्वाङ्ग अधिक पचास लाख करोड़ सागर-प्रमाण कहा गया है ॥१२६१॥

पुष्पग-तय-जुदाइं, समुद्द - उबमाण कोडि - लक्ख्वाणि ।

तीसं चिय सो कालो, अजिय - जिणिदस्स णाबन्वो ॥१२६२॥

सा ३० ल को । पुष्पग ३ ।

अर्थ :—अजितनाथ जिनेन्द्रका तीर्थ-प्रवर्तनकाल तीन पूर्वाङ्ग सहित तीस लाख करोड़ सागरोपम-प्रमाण जानना चाहिए ॥१२६२॥

चउ-पुष्पग-जुदाइं, समुद्द - उबमाण कोडि - लक्ख्वाणि ।

दस - मेत्ताइं भणिदो, संभव - सामिस्स सो कालो ॥१२६३॥

सा १० ल को । पुष्पग ४ ।

अर्थ :—सम्भवनाथ स्वामीका वह काल चार पूर्वाङ्ग सहित दस लाख करोड़ सागरोपम-प्रमाण कहा गया है ॥१२६३॥

चउ-पुष्पग - जुदाइं, वारिधि-उबमाण-कोडि-लक्ख्वाणि ।

णव - मेत्ताणि कहिदो, णंदण - सामिस्स सो समओ ॥१२६४॥

सा ९ ल को । पुष्पग ४ ।

अर्थ :—अभिनन्दन स्वामीका वह काल चार पूर्वाङ्ग सहित नौ लाख करोड़ सागरोपम-प्रमाण कहा गया है ॥१२६४॥

चउ - पुव्वंगम्भहिया, पयोहि-उवमाण-जउदि-नेचाएणं ।

कोडि-सहस्सा हि पुढं, सो समओ सुमइ - सामिस्स ॥१२६५॥

सा ६००० को । पुव्वंग ४ ।

अर्थ :—सुमतिनाथ स्वामीका वह काल चार पूर्वाङ्ग सहित नब्बे हजार करोड़ सागरोपम-प्रमाण कहा गया है ॥१२६५॥

चउ-पुव्वंगम्भहिया, नीरहि-उवमा सहस्स-एव-कोडी ।

तित्थ - पयट्टण - कालो, पउमप्पह - जिणवरिदस्स ॥१२६६॥

सा ६००० को । पुव्वंग ४ ।

अर्थ :—पद्यप्रभ जिनेन्द्रका तीर्थप्रवर्तनकाल चार पूर्वाङ्ग अधिक नौ हजार करोड़ सागरोपम प्रमाण है ॥१२६६॥

चउ-पुव्वंग-जुवाओ, णव-सय-कोडीओ जलहि-उवमाणं ।

धम्म - पयट्टण - कालप्पमाणमेवं सुपासस्स ॥१२६७॥

सा ६०० को । पुव्वंग ४ ।

अर्थ :—सुपाश्वनाथ तीर्थकरके धर्मप्रवर्तनकालका प्रमाण चार पूर्वाङ्ग सहित नौ गौ करोड़ सागरोपम प्रमाण है ॥१२६७॥

चउ-पुव्वंग-जुवाओ, रयणायर-उवम-जउदि-कोडीओ ।

णित्सेय - पय - पयट्टण - कालो चंदप्पह - जिणस्स ॥१२६८॥

सा ६० को । पुव्वंग ४ ।

अर्थ :—चन्द्रप्रभ जिनेन्द्रका निःश्रेयस-पद-प्रवर्तनकाल चार पूर्वाङ्ग सहित नब्बे करोड़ सागरोपम-प्रमाण है ॥१२६८॥

अउचीस-पुव्वंगगाहिय - पल्ल - चउत्थभाग - हीसाओ ।

मयरायर - उवमाणं, णव - कोडीओ समहिआओ ॥१२६९॥

सा=९ को=रिए प ३ पुव्वंग २८ ।

अद्विरेगस्स पमार्णं, पुब्बाणं लक्खमेक्क - परिमाणं ।
 मोक्खस्सेणि' - पयट्ठण - कालो सिरिपुष्पबंतस्स ॥१२७०॥

। घण पुब्ब १ ल ।

अर्थ :—श्रीपुष्पदन्त जिनेन्द्रका मोक्षमार्ग-प्रवर्तनकाल अट्टाईस पूर्वाङ्ग अधिक पत्यके चतुर्थभागसे हीन नौ करोड़ सागरोपमसे अधिक है । इस अधिक कालका प्रमाण एक लाख पूर्व है ॥१२६९-१२७०॥

पलिबोवमद्ध-समहिय-तोयहि-उवमाण एक-सय-हीणा ।
 रयणायरुवम - कोद्धी, सीयलवेवस्स अद्विरिस्ता ॥१२७१॥

सा १ को रिया सा १०० । प ३ ।

अद्विरेगस्स पमाणं, पण्णवीस - सहस्स होंति पुब्बाणि ।
 छब्बीस सहस्साहिय-वच्छर-छावट्ठि-लक्ख - परिहीणा ॥१२७२॥

घण पुब्बाणि २५००० । रिया व ६६२६००० ।

अर्थ :—शीतलनाथ जिनेन्द्रका तीर्थ-प्रवर्तनकाल अर्ध-पर्योपम और एक सौ सागर कम एक करोड़ सागरोपम प्रमाण कालसे अतिरिक्त है । इस अतिरिक्त कालका प्रमाण छ्पासठ लाख छब्बीस हजार वर्ष कम पच्चीस हजार पूर्व है ॥१२७१-१२७२॥

इगिवीस-लक्ख-वच्छर-विरहिद-पल्लस्स ति-चरणेणुणा ।
 चउवण्ण-उवहि-उवमा, सेयंस-जिणस्स तित्थ - कत्तित्तं ॥१२७३॥

सा ५४ वा २१ ल । रिया प ३ ।

अर्थ :—श्रेयास जिनेन्द्रका तीर्थ-कर्तृत्वकाल इक्कीस लाख वर्ष कम एक पत्यके तीन चतुर्थांशसे रहित जीवन सागरोपम-प्रमाण है ॥१२७३॥

चउवण्ण-लक्ख-वच्छर-ऊणिय-पल्लेण विरहिवा होंति ।
 तीस महण्णव - उवमा, सो कालो वासुपुज्जस्स ॥१२७४॥

। सा ३० व ५४ ल । रिया प १ ।

अर्थ :—वासुपूज्यदेवका वह काल चीवन लाख वर्ष कम एक पत्यसे रहित तीस सागरोपम प्रमाण है ॥१२७४॥

पणरस-लक्ष-वच्छर-विरहिव-पल्लस्स ति - चरणेणूजा ।

णव - वारिहि - उवमाणा, सो कालो विमलणाहस्स ॥१२७५॥

। सा ६ व १५ ल । रिण प ३ ।

अर्थ :—विमलनाथ तीर्थकरका वह काल पन्द्रह लाख वर्ष कम पत्यके तीन चतुर्थांशसे हीन नौ सागरोपम-प्रमाण है ॥१२७५॥

पण्णास - सहस्साहिय - सग- लक्षेणूज-पल्ल-दल-मेत्ते ।

विरहिव - चउरो सायर - उवमाणि अणंत - सामिस्स ॥१२७६॥

। सा ४ व ७५०००० रिण प ३ ।

अर्थ :—अनन्तनाथ स्वामीका तीर्थ-प्रवर्तनकाल सात लाख पचास हजार वर्ष कम अर्ध-पत्यसे रहित चार सागरोपम-प्रमाण है ॥१२७६॥

पण्णास-सहस्साहिय - दु-लक्ष - वासूण-पल्ल-परिहीणा ।

तिण्ण महणव-उवमा, धम्मे 'धम्मोवदेसणा - कालो ॥१२७७॥

सा ३ व २५०००० रिण प १ ।

अर्थ :—धर्मनाथ स्वामीके धर्मोपदेशका काल दो लाख पचास हजार वर्ष कम एक पत्यसे हीन तीन सागरोपम-प्रमाण है ॥१२७७॥

वारस - सयाणि पण्णाहियाणि संबच्छराणि पल्लद्धं ।

मोक्खोवदेस - कालो, संति - जिणंबस्स जिहिट्ठं ॥१२७८॥

प ३ व १२५० ।

अर्थ :—शान्तिनाथ जिनेन्द्रका मोक्षोपदेशकाल अर्धपत्य और बारहसौ पचास वर्ष-प्रमाण कहा गया है ॥१२७८॥

णभ-पण-दुग-सग-छक्क-ट्टाणे णव-संख-वास - परिहीणा ।

पल्लस्स चउठभाओ, सो कालो कुंभुणाहस्स ॥१२७६॥

प ३ रिण व ६६६६६६७२५० ।

अर्थ :—कुन्धुनाथ स्वामीका वह काल शून्य, पाँच, दो, सात और छह स्थानोमे नो, इन अङ्कोसे निर्मित संख्या प्रमाण (६६६६६६७२५०) वर्षोसे हीन पत्यके चतुर्थ भाग प्रमाण है ॥१२७६॥

कोडि-सहस्सा एव-सय-तेत्तीस-सहस्स-वस्स-परिहीणा ।

जिठ्ठाण-पय-पयट्टण - काल - पमाणं अर - जिणस्स ॥१२८०॥

। ६६६६६६६६१०० ।

अर्थ :—अरनाथ जिनेन्द्रके निर्वाण-पद-प्रवर्तनकालका प्रमाण तेतीस हजार नौसी वर्ष कम एक हजार करोड वर्ष है ॥१२८०॥

पणवण्ण-लक्ख-वस्सा, बावण्ण-सहस्स-छस्सय-विहीणा ।

अपवण्ण-मग्ग^१-पयड्डण - कालो सिरिमल्लि - सामिस्स ॥१२८१॥

वा ५४४७४०० ।

अर्थ :—श्रीमल्लिनाथ स्वामीका मोक्षमार्ग-प्रवर्तन-काल बावन हजार छहसौ वर्षोसे रहित पचपन लाख वर्ष प्रमाण है ॥१२८१॥

पंच-सहस्स-जुवार्णि, छ च्चिय संवच्छराणि लक्खाणि ।

णिस्सेय - पय - पयट्टण - कालो सुवय - जिणवस्स ॥१२८२॥

। वा ६०५००० ।

अर्थ :—मुनिसुवतजिनेन्द्रका निःश्रेयस-पद-प्रवर्तनकाल छह लाख पाँच हजार वर्ष प्रमाण है ॥१२८२॥

अडसय-एक्क-सहस्स-अभहिया संवच्छराण पण - लक्खा ।

तिट्थावतार - वट्टण - काल - पमाणं णमि - जिणवस्स ॥१२८३॥

। व ५०१६०० ।

अर्थ :—नमिनाथ जिनेन्द्रका तीर्थावतार-वर्तन-काल पाँच लाख एक हजार आठसौ वर्ष प्रमाण है ॥१२८३॥

चउरासोबि-सहस्सा, तिण्णि सया होंति विगुण-आलीसा ।

वर-धम्म-पय - पयवृण - कालो सिरिणेमि - णाहस्स ॥१२८४॥

व ८४३८० ।

अर्थ :—श्री नेमिनाथ जिनेशके धर्मपथ-प्रवर्तनका उत्कृष्ट काल चौरासी हजार तीनसौ और चालीसके दुगुने (८०) वर्ष प्रमाण है ॥१२८४॥

दोण्णि सया अडहत्तरि-जुत्ता वासाण पाससाहस्स ।

इगिबीस - सहस्साणि, दुदाल वीरस्स सो कालो ॥१२८५॥

वा २७८ । वास २१०४२ ।

अर्थ :—पादवंनाथस्वामीका वह तीर्थकाल दोसौ अठतर वर्ष और वीर भगवान्‌का इक्कीस हजार बयालीस वर्ष प्रमाण है ॥१२८५॥

तोडको'—

तित्थ - पयवृण - काल - पमाणं,

वारुण - कम्म - विणास^१ - ट्ठाणं ।

जे णिसुणति पडंति थुणंते,

ते अपवग्ग - सुहाइ लहंते ॥१२८६॥

अर्थ :—जो तीक्ष्ण-कर्मोका नाश करनेवाले इस तीर्थप्रवर्तनकालके प्रमाणको सुनते हैं, पढ़ते हैं और स्तुति करते हैं, वे मोक्षसुखको प्राप्त करते हैं ॥१२८६॥

(तालिका : ३२ अगले पृष्ठ पर देखिए ।)

तालिका . ३२

मुक्तान्तर एवं तीर्थप्रवर्तनकाल

क्र०	तीर्थकरो का निर्वाण अन्तरकाल	तीर्थप्रवर्तनकाल
१	ऋषभदेव की मुक्ति के	५० लाख कोटि सागर + १ पूर्वांग
२	५० लाख कोटि सागर बाद	३० लाख कोटि सागर + ३ पूर्वांग
३	३० लाख कोटि सागर	१० लाख कोटि सागर + ४ पूर्वांग
४	१० लाख कोटि सागर	९ लाख कोटि सागर + ४ पूर्वांग
५	९ लाख कोटि सागर	९०,००० कोटि सागर + ४ पूर्वांग
६	९०,००० कोटि सागर	९००० कोटि सागर + ४ पूर्वांग
७	९००० कोटि सागर	९०० कोटि सागर + ४ पूर्वांग
८	९०० कोटि सागर	९० कोटि सागर + ४ पूर्वांग
९	९० कोटि सागर	९ कोटी सागर-(१/४ प + २८ पूर्वांग) + १ ला पूर्वांग
१०	९ कोटि सागर	१ को सा -{(१०० सा + १/२ पत्य) + (२५००० पूर्व-६६२६००० वर्ष)}
११	३३७३९०० सागर	(५४ सा + २१ ला० वर्ष) - ३/४ पत्य
१२	५४ सागर	(३० सा० + ५४ ला० वर्ष) - १ पत्य
१३	३० सागर	(९ सा० + १५ ला० वर्ष) - ३/४ पत्य
१४	९ सागर	(४ सा० + ७५०००० वर्ष) - १/२ पत्य
१५	४ सागर	(३ सा० + २५०००० वर्ष) - १ पत्य
१६	३ सागर- ३/४ पत्य	१/२ पत्य + १२५० वर्ष
१७	१/२ पत्य	१/४ पत्य-९९९९९७२५० वर्ष
१८	१/४ पत्य-१००००००००० वर्ष	९९९९९६६१०० वर्ष
१९	१००००००००० वर्ष	५४४७४०० वर्ष
२०	५४००००० वर्ष	६०५००० वर्ष
२१	६००००० वर्ष	५०१८०० वर्ष
२२	५००००० वर्ष	८४३८० वर्ष
२३	८३७५० वर्ष	२७८ वर्ष
२४	२५० वर्ष बाद	२१०४२

दुषमसुषमा कालका प्रवेश—

उसह-जिणे णिव्वाणे, वास - तए अट्ट - मास मासद्धे ।
बोलोणम्मि पविट्ठो, दुस्समसुसमो तुरिम - कालो ॥१२८७॥

वा ३, मा ८, दि १५ ।

अर्थ :- ऋषभजिनेन्द्रके मोक्ष-गमन पश्चात् तीन वर्ष, आठ मास आठ पन्द्रह दिन व्यतीत होनेपर दुषमसुषमा नामक चतुर्थकाल प्रविष्ट हुआ ॥१२८७॥

आयु आदिका प्रमाण—

तरस य पढम - पएसे, कोडि पुव्वाणि आउ-उक्कम्सो ।
अडदाला पुट्ठ्ठो, पण - सय - पण्णबोस - दंडया उदयो ॥१२८८॥

पु १ को । पु ४८ । उ द ५२५ ।

अर्थ :- उस चतुर्थकालके प्रथम प्रवेशमे उत्कृष्ट आयु एक पूर्वकोटि, पृष्ठ भागकी हृदयया अडनालीस और शरीरकी ऊंचाई पांचमौ पन्चीम धनुष-प्रमाण थी ॥१२८८॥

धर्म-तीर्थकी व्युत्पत्ति—

उच्छण्णो सो धम्मो, सुविहि - प्पमुहेसु 'सत्त-तिथेसु' ।
सेसेसु सोलसेसु, शिरंतरं धम्म - संताणं ॥१२८९॥

अर्थ :- सुविधिनाथको आदि लेकर (धर्मनाथ पर्यन्त) सात तीर्थोमे उस धर्मकी व्युत्पत्ति हुई थी और शेष सोलह तीर्थोमे धर्मकी परम्परा निरन्तर रही है ॥१२८९॥

पल्लस्स पादमद्धं, ति-चरण-पल्लं लु ति - चरणं अद्धं ।
पल्लस्स पाद - मेत्तं, बोच्छेदो धम्म - तिथेस्स ॥१२९०॥

प ३ । प ३ । प ३ । प १ । प ३ । प ३ । प ३ ।

अर्थ :- सात तीर्थोमे क्रमशः पाव पत्य, अर्धपत्य, पौनपत्य, (एक) पत्य, पौन पत्य, अर्धपत्य और पाव पत्यप्रमाण धर्मतीर्थका विच्छेद रहा था ॥१२९०॥

हुंढावसप्पिणस्स य, दोसेण वेत्ति' सोत्ति विच्छेदे' ।

दिव्खाहिमुहाभावे, अत्थमिदो धम्म - वर - दीओ ॥१२६१॥

अर्थ :—हुण्डावसर्पिणी कालके दोषसे, वक्ताओं और श्रोताओंका विच्छेद होनेके कारण तथा दीक्षाके अभिमुख होने वालोंके अभावमें धर्म रूपी उत्तम दीपक अस्तमित हो गया था ॥१२६१॥

भक्तिमें आसक्त भरतादिक चक्रवर्तियोंका निर्देश—

, भरहो , सगरो , मघवो, , सणक्कुमारो य संति, कुंथु, , अरो ।

कमसो सुभोम, , पउमो', , हरि-जयसेणा, , य , , बम्हवत्तो य ॥१२६२॥

एवे बारस चक्की, पच्चक्ख - परोक्ख - बंधणासत्ता ।

णिग्गर - भत्ति - समग्गा, सव्वाणं तित्थ - कत्ताणं ॥१२६३॥

अर्थ :—भरत, सगर, मघवा, सनत्कुमार, शान्ति कुन्धु, अर, सुभोम, पप, हरिवेश, जयसेन और ब्रह्मदत्त, क्रमशः ये बारह चक्रवर्ती सर्व तीर्थङ्करोकी प्रत्यक्ष एवं परोक्ष वन्दनामें आसक्त तथा अत्यन्त गाढ-भक्तिसे परिपूर्ण रहे हैं ॥१२६२-१२६३॥

तीर्थङ्करोसे चक्रवर्तियोंकी प्रत्यक्षता एवं परोक्षता—

रिसहेसरस्स भरहो, सगरो अजिएसरस्स पच्चक्खं ।

मघवा सणक्कुमारो, दो चक्की धम्म-संति-विच्चासे ॥१२६४॥

अह संति-कुंथु-अरजिण, तित्थयरा ते च चक्क-वट्टित्से ।

एक्को सुभोम - चक्की, अर - मल्ली - अंतरालम्मि ॥१२६५॥

अह पउम - चक्कवट्टी, मल्ली-भुणिसुव्वयाण विच्चासे ।

सुव्वय - णमोण मग्गे, हरिसेणो णाम चक्कहरो ॥१२६६॥

जयसेण - चक्कवट्टी, णमि-णेमि-जिणाणमंतरालम्मि ।

तह बम्हवत्त - णामो, चक्कवई णेमि-पास-विच्चासे ॥१२६७॥

अर्थ :—भरत चक्रवर्ती ऋषभेश्वरके समक्ष, सगर चक्रवर्ती अजितेश्वरके समक्ष तथा मघवा और सनत्कुमार ये दो चक्रवर्ती धर्मनाथ एवं शान्तिनाथके अन्तरालमें हुए हैं । शान्तिनाथ,

कुन्बुनाथ और अरनाथ, ये तीनों चक्रवर्ती तीर्थंकर भी थे। सुभौम चक्रवर्ती अरनाथ और मल्लिनाथ भगवानके अन्तरालमें, पद्म चक्रवर्ती मल्लि और मुनिसुव्रतके अन्तरालमें, हरिगेण नामक चक्रधर मुनिसुव्रत और नमिनाथके मध्यकालमें, जयसेन चक्रवर्ती नमिनाथ और नेमिनाथ जिनके अन्तरालमें तथा ब्रह्मदत्त नामक चक्रवर्ती नेमिनाथ और पाश्वनाथ तीर्थंकरके अन्तरालमें हुए हैं ॥१२६४-१२६७॥

तीर्थंकर एक चक्रवर्तियोंके प्रत्यक्ष एक परोक्षताको प्रदर्शित करनेवाली महदृष्टिका स्वरूप—

चोत्तीसाणं कोट्टा, कादच्चा तिरिय - रूव - पतीए ।
उड्ढेरणं वे कोट्टा, कादूणं पढम - कोट्टेसुं ॥१२६८॥
पणरसेसु जिणिदा, णिरंतरं दोसु सुणया तत्तो ।
तिणि जिणा दो सुण्णा, इगि जिण दो सुण्ण एकक जिणो ॥१२६९॥
दो सुण्णा एकक जिणो, इगि सुण्णो इगि जिणो य इगि सुण्णो ।
दोणि जिणा इदि कोट्टा, णिहिट्टा तित्थ - कत्ताणं ॥१३००॥
दो कोट्टेसु चक्की, सुणं तेरससु चक्किणो छक्के ।
सुण तिय चक्कि सुणं, चक्की दो सुण्ण चक्कि सुण्णो य ॥१३०१॥
चक्की दो सुण्णाइं, छक्खंड - वईण चक्कवट्टीणं ।
एदे कोट्टा कमसो, सविट्टी एकक - दो अंका ॥१३०२॥

१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
२	२	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

०	०	१	१	१	०	०	१	०	०	१	०	०	
२	२	२	२	२	२	०	०	०	०	२	०	२	०

१	०	१	०	१	१
०	२	०	२	०	०

१. द. व. क. ज. य. उ. सुण्णा । २. द. व. क. ज. य. उ. जिणा । ३. द. व. क. ज. य. उ. सुण्णो । ४. द. व. क. ज. य. उ. इगि । ५. द. कत्ताण । ६. द. व. क. ज. य. उ. सुण्णा । ७. द. व. प्रथोः पावस्तन-कोप्टेसु संबं २ स्थाने १ इति पाठः ।

ग्रथं :—तिरछी पत्तिके रूपमे चौतीस कोठे और ऊर्ध्वरूपसे दो कोठे बनाकर इनमेंसे ऊपरके प्रथम पन्द्रह कोठोंमें निरन्तर तीर्थंकर इसके आगे दो कोठोंमें शून्य, तीन कोठोंमें तीर्थंकर, दोमें शून्य, एकमे तीर्थंकर, दोमें शून्य, एकमे तीर्थंकर, दोमे शून्य, एकमें तीर्थंकर, एक शून्य, एक तीर्थंकर, एक शून्य और दो तीर्थंकर, इस प्रकार ये तीर्थंकरोके कोठे निर्दिष्ट किये गये हैं । इनसे नीचेके कोठोमेसे दो में चक्रवर्ती, तेरहमें शून्य, छहमे चक्रवर्ती, फिर तीन शून्य, चक्रवर्ती, शून्य, चक्रवर्ती, दो शून्य, चक्रवर्ती, शून्य, चक्रवर्ती और फिर दो शून्य, क्रमशः ये छह खण्डोके अधिपति चक्रवर्तियोके कोठे हैं । जिनमे सदृष्टिके लिए क्रमशः एक और दो के अङ्क ग्रहण किये गये हैं तथा शून्य अन्तराल का सूचक है ॥१२६८-१३०२॥

(सदृष्टि मूलमे देखिए)

भरतादिक चक्रवर्तियोके शरीरकी ऊँचाई—

पंच सया पण्णाहिय - चउस्सया दोसु-हरिद-पणसीवी ।

दु - बिहिता चउसीवी, चालं पणतीस तीसं च ॥१३०३॥

दड ५०० । ४५० । $\frac{८५}{२}$ । $\frac{८५}{२}$ । ४० । ३५ । ३० ।

अट्टावीस दुवीसं, वीसं पण्णरस सत्त इय कमसो ।

दंडा चक्कहराणं, भरह - प्पमुहाण उस्सेहो ॥१३०४॥

२८ । २२ । २० । १५ । ७ ।

ग्रथं :—भरतादिक चक्रवर्तियोकी ऊँचाई क्रमशः पाँचसौ, पचास अधिक चारसौ (४५०), दोसे भाजित पचासी (४२३), दोसे भाजित चौरासी (४२), चालीस, पैंतीस, तीस, अट्टाईस, चाईस, बीस, पन्द्रह और सात धनुष प्रमाण थी ॥१३०३-१३०४॥

चक्रवर्तियोकी आयु आदिका प्रमाण कहने की प्रतिज्ञा—

आऊ कुमार-मंडलि-अरिजय-रज्जाण 'संजम-ठिवीए ।

चक्कीण काल - माणं, वोच्छामि जहाणुपुब्बीए ॥१३०५॥

अर्थ :—अब मैं (श्री यतिवृषभाचार्य) अनुक्रमसे चक्रवर्तियोंकी आयु, कुमारकाल, मण्डलीककाल, दिग्विजय काल, राज्य काल और संयमकालका प्रमाण कहता हूँ ॥१३०५॥

चक्रवर्तियोंकी आयु—

चउत्तरभहिया सीदी, बाहत्तरि पुञ्जयाणि लक्खारिण ।

पंच तिय एक वच्छर-लक्खारणं पंच-णउदि षुलसीदो ॥१३०६॥

सट्ठो तीसं दस तिय, बास-सहस्साणि सत्त य सयाणि ।

कमसो भरहादीणं, चक्कीणं आउ - परिमाणं ॥१३०७॥

आउ पुव्व ८४ ल । पुव्व ७२ ल । वरिस ५ ल । ३ ल । १ ल । ६५००० । ८५००० ।

६०००० । ३०००० । १०००० । ३००० । ७०० ।

॥ आऊ परिमाण गद ॥

अर्थ .—भरनादिक चक्रवर्तियोंकी आयुका प्रमाण क्रमशः चौरासीलाख पूर्व, बहुत्तर लाख पूर्व, पाँच लाख वर्ष, तीन लाख वर्ष, एक लाख वर्ष, पचानबैं हजार, चौरासी हजार, साठ हजार, तीस हजार, दस हजार, तीन हजार और सानसौ वर्ष है ॥१३०६-१३०७॥

। आयु प्रमाण कालका कथन पूर्ण हुआ ।

कुमार-कालका प्रमाण—

सत्तत्तरि - लक्खारिण, पण्णास - सहस्सयाणि पुञ्जाणं ।

पणुवीस - सहस्साइं, बासाणं ताइ - विगुणाइं ॥१३०८॥

पुव्व ७७ ल । पु ५०००० । वस्स २५००० । ५०००० ।

पणुवीस - सहस्साइं, तेवीस - सहस्स-सत्त - सय-पण्णा ।

इगिवीस - सहस्साणि, पंच - सहस्साणि पंच - सया ॥१३०९॥

२५००० । २३७५० । २१००० । ५००० । ५०० ।

पणुवीसाहिय-ति-सया, ति-सयाइं अट्टवीस इय कमसो ।

भरहादिसु - चक्कीणं, कुमार - कालस्स परिमाणं ॥१३१०॥

३२५ । ३०० । २८ ।

। कुमार-काल गद ।

अर्थ :—भरतादिक चक्रवर्तियोंका कुमार-काल क्रमशः सत्तर लाख पूर्व, पचास हजार पूर्व, पच्चीस हजार वर्ष, पचास हजार वर्ष, पच्चीस हजार वर्ष, तेईस हजार सात सौ पचास वर्ष, इक्कीस हजार वर्ष, पाँच हजार वर्ष, पाँचसौ वर्ष, तीन सौ पच्चीस वर्ष, तीनसौ वर्ष और अट्ठाईस वर्ष प्रमाण था ॥१३०८-१३१०॥

। कुमार-कालका कथन समाप्त हुआ ।

मण्डलीक-कालका प्रमाण—

एककं वास - सहस्त्रं, पण्णास - सहस्त्रयाणि पुढ्वाणि ।

पण्णवीस - सहस्त्राणि, पण्णास - सहस्त्राणि वासाणं ॥१३११॥

व १००० । पु ५०००० । व २५००० । ५०००० ।

पण्णवीस - सहस्त्राणि, तेवीस-सहस्त्र-सत्त-सय-पण्णा ।

इगिवीस - सहस्त्राणि, पंच - सहस्त्राणि पंच - सया ॥१३१२॥

२५००० । २३७५० । २१००० । ५००० । ५००

पण्णवीसाहिय-ति-सया, ति-सया छप्पण्ण इय-कमेण पुढं ।

मंडलि - काल - पमाणं, भरह - प्पमुहाण चक्कीणं ॥१३१३॥

३२५ । ३०० । ५६ ।

। मंडलिक-कालं गद ।

अर्थ :—भरतादिक चक्रवर्तियोंके मण्डलीक कालका पृथक्-पृथक् प्रमाण क्रमशः एक हजार वर्ष, पचास हजार पूर्व, पच्चीस हजार वर्ष, पचास हजार वर्ष, पच्चीस हजार वर्ष, तेईस हजार सातसौ पचास वर्ष, इक्कीस हजार वर्ष, पाँच हजार वर्ष, पाँचसौ वर्ष, तीनसौ पच्चीस वर्ष, तीन सौ वर्ष और ५६ वर्ष है ॥१३११-१३१३॥

। मण्डलीक-काल समाप्त हुआ ।

चक्ररत्नकी उपलब्धि एव दिग्विजय प्रस्थान—

अह भरह-प्पमुहाणं, आयुध-सालासु भुवण - बिम्हयरा ।

गद - जम्मंतर - कय - तव - बलेण उप्पज्जडे चक्कं ॥१३१४॥

अर्थ :—पूर्वजन्ममें किये गये तपके बलसे भरतादि चक्रवर्तियोंकी आयुषशालाओंमें लोकको आश्चर्य उत्पन्न करनेवाला चक्ररत्न उत्पन्न होता है ॥१३१५॥

चक्रकुप्पति - पहिस्ता, पूजं काङ्गुण जिणवरीदाणं ।

पच्छा बिजय - पयारणं, ते पुब्ब - विसाए कुब्बंति ॥१३१५॥

अर्थ :—चक्रकी उत्पत्तिसे अतिशय हर्षको प्राप्त हुए वे चक्रवर्ती जिनेन्द्रोंकी पूजा करके पश्चात् विजयके निमित्त पूर्व-दिशामें प्रयाण करते हैं ॥१३१५॥

सुरसिद्धूए तीरं, धरिऊणं जंति पुब्ब - विब्भाए ।

मरुवेव - णाम - मण्णे, णो कालादो जावमुबजलहिं ॥१३१६॥

अर्थ :—वे (चक्रवर्ती) गङ्गानदीके तटका सहारा लेकर पूर्वदिशामे जाकर और वहाँ मरुदेव नामक देवको साधकर (वगम करके) कुछ कालमे उपसमुद्र-पर्यन्त जाते हैं ॥१३१६॥

गंगा सम्बन्धी दिग्बनमे पडाव—

अप्पबिसिऊण गंगा - उववण - वेवीए तोरणद्वारे ।

उत्तर - मुहेए पबिसिय, चउरंग - बलेण संजुवा ॥१३१७॥

गंतुं पुब्बाहिमुहं, दीओबवणस्स वेवियादारे ।

सोवाणे चडिऊण, गंगा - दारम्मि' गच्छंति ॥१३१८॥

अर्थ — उसके आगे गङ्गानदी सम्बन्धी उपवन-वेदीमे प्रवेश न करके चतुरङ्गबलसे सयुक्त होते हुए वे चक्रवर्ती उत्तरद्वारसे तोरणद्वारमे प्रवेश करके पूर्वकी ओर जानेके लिए जम्बूद्वीप-सम्बन्धी उपवनवेदिकाके द्वारवाली सीढियों पर चढ़कर गङ्गाद्वारमे होकर जाते हैं ॥१३१७-१३१८॥

गंतुणं लीलाए, तण्णिम्मग - रम्म - विब्ब - वण-मण्णे ।

पुब्बावार - आयामे, चउरंग - बलाणि अच्छंति ॥१३१९॥

अर्थ :—इसप्रकार लीलामात्रसे जाकर पूर्वसे पश्चिम पर्यन्त लम्बे नदी-सम्बन्धी रमणीय एव दिग्बनमें चतुरङ्गसेना सहित ठहर जाते हैं ॥१३१९॥

जलस्तम्भिनी विद्याकी सिद्धि एवम् समुद्र प्रवेश—

मंतीषं उचरोहे, जलथंभं साहयंति चक्कहरा ।

बल-वर - तुरंग - धरिदे^१, अजितञ्जय - णामधेय - रहे ॥१३२०॥

आरुहिकुर्णं गंगा - वारेणं पविसिन्धुण लवणुवहि^२ ।

वारस - ओयण - मैत्तं, सव्ये गच्छंति णो परवो ॥१३२१॥

अर्थ :—वहीपर चक्रवर्ती मन्त्रियोंके आग्रहसे जलस्तम्भ (जलस्तम्भिनी) विद्या सिद्ध करते हैं । पुनः इस उत्तम षोडशसे धारण किए गये अजितञ्जय नामक रथ पर चढ़कर और गङ्गा-द्वारसे प्रवेशकर वे सब लवणसमुद्रके तटानुसार बारह योजन प्रमाण जाते हैं, आगे नहीं ॥१३२०-१३२१॥

मागधदेवको वस करना—

मागहवेवस्स तवो, ओलगसालाए रयण-वर-कलसं ।

विधंति सणामंकिद - बाणेण अमोघ - णामेण ॥१३२२॥

अर्थ :—फिर वहाँसे अपने नामसे अङ्कित अमोघ नामक बाण-द्वारा मागधदेवकी ओलग-सालाके रत्नमय उत्तम कलशको भेदते हैं ॥१३२२॥

सोवूण सर - णिणावं, ^३मागहवेवो वि कोहमुब्बहइ ।

ताहे^४ तस्स य मंती, वारते महुर - सद्देण ॥१३२३॥

अर्थ :—बाणके शब्दको सुनकर मागधदेव भी क्रोध धारण करता है किन्तु उस समय उसके मन्त्री उसे मधुर-शब्दों द्वारा (ऐसा करनेसे) रोकते हैं ॥१३२३॥

रयणमय - पडलिहाए, कंड^५ घेत्तूण कुंडलादि च ।

बत्ता मागहवेवो^६, पणमइ चक्कीण पयमूले ॥१३२४॥

अर्थ :—तब वह मागधदेव रत्नमय पटलिका (पिटारी) में उस बाण और कुण्डलादिकको लेकर चक्रवर्तीको देता है और उनके चरणोंमें प्रणाम करता है ॥१३२४॥

१. क. ब. य. उ. धरिदं । २. द. ज. य. भवणुवहि, क. अचववहि । उ. अणुववहि । ३. द. व. क. ज. य. उ. मागधवेवा । ४. द. ब. क. ज. य. उ. तावे । ५. द. ब. क. उ. कट् । ६. द. ब. क. ज. य. उ. मागधवेवा ।

ते तस्स अभय - वयणं, वाङ्मण य भागहेण सह सट्ठे ।

पबिसिय 'खंधावारं, बिजय - पयाणाणि कुब्बन्ति ॥१३२५॥

अर्थ :—वे उसे अभय-वचन देकर और (उसी) मागधदेवके साथ वे सब कटकमें प्रवेश-कर विजयके लिए प्रस्थान करते हैं ॥१३२५॥

वरतनु एव प्रभासदेवको वश करना—

तत्तो उबवण - मज्जे, बीवस्स पदक्खिणेण ते अंति ।

जंबूबीवस्स पुढं, दक्खिणा - वर - बइजयंत - दारंतं ॥१३२६॥

अर्थ :—फिर वे वहसि उपवनके बीचमें होकर द्वीपके प्रदक्षिणरूपसे जम्बूद्वीपके वैजयन्त-नामक उत्तम दक्षिणद्वारके समीप तक जाते हैं ॥१३२६॥

दारम्मि बइजयंते, पबिसिय 'लवणं'बुहिम्मि चक्कहरा ।

पुब्बं व कुणंति बसं, वरतणु णामंकिय - सरेणं ॥१३२७॥

अर्थ :—वे चक्रवर्ती वैजयन्त द्वारसे लवण समुद्रमें प्रवेश कर पूर्वके सदृश ही अपने नामांकित बाणसे वरतनु नामक देवको वशमें करते हैं ॥१३२७॥

तत्तो आगंतूणं, खंधावारम्मि पबिसिऊणं च ।

दीबीववण - प्पहेणं, गच्छंते सिधु - वण - वेदि ॥१३२८॥

अर्थ :—पुनः वहसि आकर और कटकमें प्रवेश कर द्वीपोपवनके मार्गसे सिन्धु नदी सम्बन्धी वन-वेदिका की ओर जाते हैं ॥१३२८॥

तीए 'तोरण-दारं, पबिसिय पुब्बं व लवण-जलरासि ।

सिधु - णदीए दारं, पबिसिय साहंति ते पभाससुरं ॥१३२९॥

अर्थ :—उसके तोरण-द्वारमें प्रवेशकर और सिन्धु नदीके द्वारसे लवण समुद्र की जलराशिमें भीतर आकर वे चक्रवर्ती प्रभासदेवको सिद्ध करते हैं ॥१३२९॥

वैताडध देव एवं विद्याधरों पर विजय—

तसौ पुष्पाहिमुहा, दीवोववणस्स हार - सोबाणं ।

चड्डिदूणं वण - मज्झे, चलंति उवजलहि - सीमंतं ॥१३३०॥

अर्थ :—वहाँसे पूर्वाभिमुख होकर द्वीपोपवनके द्वारकी सीढियोंपर चढ़कर वनके मध्यमेंसे उपसमुद्रकी सीमा तक जाते हैं ॥१३३०॥

तप्पण्णिधि-वेदि-दार, पंचंग-बलाणि ताणि जिस्सरिया ।

सरि - तीरेण चलंते, वेयड्डगिरिस्स जाव वण - वेदि ॥१३३१॥

अर्थ :—समुद्रके समीपकी वेदीके द्वारसे वे पचाङ्ग बल निकलकर विजयार्धगिरिकी वन-वेदिका तक नदीके किनारे-किनारे जाते हैं ॥१३३१॥

तसौ तव्वण - वेदि, चड्डिदूणं जंति पुष्प - दिग्भाए ।

तगिरि-मज्झिम-कूड-प्पण्णिधिम्मि वेदि-वार-परियंतं ॥१३३२॥

अर्थ :—फिर इसके आगे उस वन-वेदीका आश्रय करके पूर्व-दिशामे उस पर्वतके मध्यम-कूटके समीप वेदी-द्वार-पर्यन्त जाते हैं ॥१३३२॥

तद्दारेणं पविसिय, वण - मज्झे जंति उत्तराहिमुहा ।

रजवाचल - तड - वेदि, पाबिय तीए वि खेट्ठंति ॥१३३३॥

अर्थ :—पश्चात् उस वेदी-द्वारसे प्रविष्ट होकर वनके मध्यमेंसे उत्तरकी ओर गमन करते हैं और विजयार्धके तटकी वेदी पाकर वहीं पर ठहर जाते हैं ॥१३३३॥

ताहे' तगिरि - मज्झिम - कूडे वेयड्ड - वेंतरो णाम ।

आगंतुग - भय - वियलो, पण्णिय चक्कीण पइसरइ ॥१३३४॥

अर्थ :—उस समय विजयार्धगिरिके मध्यम कूटपर रहने वाला वैताडध नामक व्यन्तरदेव आगन्तुक भयसे विकल होता हुआ प्रणाम करके चक्रवर्तियोंकी सेवा करता है ॥१३३४॥

तगिरि-दक्खिण-भागे, संठिय-पण्णास-अयर-स्ययर-गणा ।

साहिय आगच्छंते, पुब्बिल्लय तोरण - द्वारा ॥१३३५॥

अर्थ :—उस पर्वतके दक्षिणभागमें स्थित पचास नगरोंके विद्याधर-समूहोंको सिद्ध करके पूर्वोक्त तोरण-द्वारसे वापिस आते हैं ॥१३३५॥

कृतमालकी वश करना—

ततो तम्बुज - वेदि, चडिदूषणं एदि पञ्चिमाहिमुहा ।

सिंधुबुज-वेदि-पासे, पबिसंते तगिरिस्स दिव्व - वणं ॥१३३६॥

अर्थ :—इसके प्रागे उस वन-वेदीका आश्रय करके पश्चिमकी ओर जाते हैं और सिन्धुवन-वेदीके पासमें उस पर्वतके दिव्य वनमे प्रवेश करते हैं ॥१३३६॥

ताहे तगिरि - वासी, कदमालो नाम बेंतरो देवो ।

आगंतूषं वेयडगिरि - दार - कवाड - फेडणोबायं ॥१३३७॥

अर्थ :—तब उस पर्वत पर रहनेवाला कृतमाल नामक व्यन्तरदेव आ-करके विजयाध-पर्वतके द्वार-कपाट खोलनेका उपाय [बतलाता है] ॥१३३७॥

निमित्तगुफा द्वार उद्घाटन—

तस्सुववेस - वसेणं, सेणवई तुरग - रयण - मारुहिय ।

गहिऊण बंड - रयणं, गिस्सरदि^१ सडंग - बल - जुत्तो ॥१३३८॥

अर्थ :—उसके उपदेशसे सेनापति तुरग रत्नपर चढ़कर और दण्ड-रत्नको ग्रहणकर पङ्क्त-बल सहित निकलता है ॥१३३८॥

सिंधु-बुज-वेदि-बारं, पबिसिय गिरि-वेदि-तोरणद्वारे ।

गच्छिय तिमिसगुहाए, सोबाणे चडदि^२ बल - जुत्तो ॥१३३९॥

अर्थ :—वह सिन्धुवन-वेदीके द्वारमे प्रवेशकर पर्वतीय वेदीके तोरणद्वारमे होकर संन्य-सहित तिमिसगुफाकी सीढियोंपर चढ़ता है ॥१३३९॥

अबराहिसुहे गच्छिय, सोबाण - सएहि बबिलण-मुहेण ।

उत्तारिय^३ सयल-बलं, बबचदि सरि - वणस्स मज्जेण ॥१३४०॥

अर्थ :—सौ सीड़ियोसे पश्चिमकी ओर जाकर, फिर दक्षिणकी ओरसे सब सैन्यको उतारकर वह सेनापति नदीवनके मध्यमें होकर जाता है ॥१३४०॥

तत्तो सेणाहिबई, करयल - धरिवेण बंड - रवणेण ।

पहणवि कवाड - जुगलं, आणाए चक्कवट्टीणं ॥१३४१॥

अर्थ :—तदनन्तर सेनाधिपति चक्रवर्तीकी आज्ञासे हस्ततलमे धारण किये हुए दण्डरत्नसे दोनों कपाटोपर प्रहार करता है ॥१३४१॥

उग्घडिय - कवाड - जुगलबंभंतर-पसरत्त-उण्ह-भीदीए ।

बारस - जोयण - मेत्तं, तुरंग - रयणेण लंघंति ॥१३४२॥

अर्थ :—(पश्चात् वह सेनापति) कपाट-युगलको उदघाटितकर भीतर फैली हुई उण्णताके भयसे तुरङ्ग (घोडा) रत्न द्वारा वारह योजन-प्रमाण क्षेत्रको लाघता है । १३४२॥

म्लेच्छ-खण्डपर विजय—

गंतूण दक्खिणमुहो, सग-^१पढवासिद-बलम्मि पविसेदि ।

पच्छा पच्छिमवयणो, सेणावई गिरिवणं एवि ॥१३४३॥

अर्थ :—वह (सेनापति) दक्षिणकी ओर जाकर अपने प्रतिवासित सैन्यमें (पडावमें) प्रवेश करता है । पश्चात् वह सेनापति पश्चिमाभिमुख होकर पर्वतीय-वनको जाता है ॥१३४३॥

दक्खिणमुहेण तत्तो, गिरि - वण - वेदीए तोरणहारे ।

णित्सरिय मेच्छखंडं, साहेदि^२ य बाहिणी जुत्तो ॥१३४४॥

अर्थ :—पश्चात् दक्षिणमुख होकर पर्वतीय वन-वेदीके तोरणद्वारमेंसे निकलकर सैन्यसे समुक्त होता हुआ वह म्लेच्छखण्डको सिद्ध करता है ॥१३४४॥

सव्वे छम्मासेहि, मेच्छ - णरिवा बसम्मि कान्णुणं ।

एवि^३ तु पुण्व - पहेणं, वेयड्डपुहाए वार - परिचंतं ॥१३४५॥

१. व. पढवासिद, द. क. व. य. उ. पढवासिदं । २. व. क. उ. साहावि पवाहिसं, द. व. य. सातोवि पवाहिसं । ३. व. व. क. व. व. एवे ।

अर्थ :—छह महिनोमें सब म्लेच्छ राजाओंको बधमे करके मेनापति पूर्व-मार्ग द्वारा वेताढघ-गुफाके द्वार-पर्यन्त जाता है ॥१३४५॥

कावूण बार-रबसं, देव - बलं मेच्छराय - पडियरिओ ।

पबिसिय संभावारं, पणमिय चक्कीण पय - कमले ॥१३४६॥

अर्थ :—वहाँ पर देव-सेनाको द्वारका रक्षक (नियुक्त) कर म्लेच्छ-राजाओसे परिचारित वह सेनापति अपने पडावमे प्रविष्ट होकर चक्रवर्तीके चरण-कमलोंमें नमस्कार करता है ॥१३४६॥

तिमित्त्रगुफाके लिए प्रस्थान, उसमें प्रवेश एव उसके उत्तर-द्वारसे निष्काशन—

इय दक्खिणम्मि भरहे, खंड - दुअं साहिवूण लीलाए ।

पबिसंति हु चक्कहरा, सिधुणईए वणं विउलं ॥१३४७॥

अर्थ :—इसप्रकार दक्षिणभरतमे दो खण्डोंको अनायाम ही सिद्ध करके चक्रवर्ती सिन्धु-नदीके विशाल वनमे प्रवेश करते हैं ॥१३४७॥

गिरि-तड-वेदी-दारे, पबिसिय गिरि-दार-रयण-सोबाणे ।

आरुहिवूरणं वच्चबिं, सयल - बलं तण्णईअ दो - तीरे ॥१३४८॥

अर्थ :—पुनः गिरितट-सम्बन्धी वेदीके द्वारमे प्रवेश करके श्रीर गिरिद्वारकी रत्नमय सीढियों पर चढ़कर सम्पूर्ण सेना उस नदीके दोनों किनारों परसे जाती है ॥१३४८॥

दो - तीर - बीहि - रं, दो-दो-ओयण-पमाणमेक्केक्कं ।

तेसुं महंघयारे, एण सबकदे तं बलं गंतुं ॥१३४९॥

अर्थ :—दोनों तीरोंकी वीथियोंमेसे प्रत्येकका विस्तार दो-दो योजन-प्रमाण है । उनमें घोर अन्धकार होनेसे चक्रवर्तीकी वह सेना आगे बढ़नेमें समर्थ नहीं होती है ॥१३४९॥

उबवेसेण सुराजं, काकिणि - रयणेण तुरिदमासिहियं ।

सत्तहरं - रवि - बिबार्णि, सेल-गुहा-उभय-भित्तीसुं ॥१३५०॥

१. द. व. क. ज. व. उ. पलम्भि । २. द. व. क. ज. य. उ. चक्कीय । ३. द. व. क. ज. व. उ. तण्णई । ४. द. व. य. उ. पमाणमेक्केक्कं । ५. द. व. तम्बलं घयधित्तीसु । ६. द. व. क. ज. व. उ. सत्तहर ।

अर्थ :—तब देवोंके उपदेशसे (विजयार्थ) पर्वतीय गुफाकी दोनों दीवारों पर काकिली-रत्नसे शीघ्र ही चन्द्र और सूर्य-मण्डलोंके आलेख-चित्र बनाए गये ॥१३५०॥

एषकेषक - जोयणंतर - लिह्निदाणं ताण विति उज्जोवे ।

वज्जेदि सङ्ग - बलं, उम्मगग - णिमग्ग - परियंतं ॥१३५१॥

अर्थ :—एक-एक योजनके अन्तरालसे लिखित अर्थात् अंकित उन बिम्बोंके प्रकाश देनेपर षडङ्ग-बल (सेना) उन्मग्न-निमग्न नदियों तक जाता है ॥१३५१॥

ताण सरियाण गहिरं, जलप्पबाहं सुदूर - वित्तिवणं ।

उत्तरिदुं पि एण सक्कइ, सयल - बलं चक्कवट्ठीणं ॥१३५२॥

अर्थ :—उन नदियोंके दूर तक विस्तीर्ण और गहरे जलप्रवाहको (पार) उतरनेमें चक्रवर्तीकी सारी सेना समर्थ नहीं होती ॥१३५२॥

सूर-उबबेस-बलेणं, बड्ढइ - रयणेण रयद - संकमणे ।

आरुहदि सङ्ग - बलं, तागो सरियाओ उत्तरदि ॥१३५३॥

अर्थ :—तब देवके उपदेशसे बडई-रत्न द्वारा पुलकी रचना करने पर षडङ्ग-बल (सेना) पुल पर चढता है और उन नदियोंको पार करता है ॥१३५३॥

सेल - गुहाए उत्तर - दारेणं णित्सरेदि बल - सहियो ।

जइ - पुठव - वेदि - दारे, गंतुं गिरिणंदणस्स मज्झम्मि ॥१३५४॥

अर्थ :—इसप्रकार आगे गमन करते हुए नदीके पूर्व-वेदीद्वारसे पर्वत-वनके मध्यमें पहुँचनेके लिए चक्रवर्ती सैन्य-सहित विजयार्थकी गुफाके उत्तर द्वारसे निकलता है ॥१३५४॥

म्लेच्छ-सण्डोंपर विजय प्राप्त करते हुए सिन्धुदेवीको वश करना—

तत्थ य पसत्थ-सोहे, जाणातरु - संढ - मंडले' विउले ।

वित्तहरे चक्कहरा, संघावारं णिवेसंति ॥१३५५॥

अर्थ :—वहाँ चक्रवर्ती प्रशस्त शोभाको प्राप्त, विस्तृत एवं नाना वृक्षोंके समूहसे मण्डित वनमें सेनाको ठहराने हैं ॥१३५५॥

आणाए चक्कीणं, सेण्णई अवरभाग - मेच्छ - महि ।

साहिय छम्मासेहि, खंघावारं समत्तियइ ॥१३५६॥

अर्थ :—पुनः चक्रवर्तीकी घ्राज्ञासे सेनापति पश्चिम भागके म्लेच्छ खण्डको वशमें कर छह मासमें पढ़ावमें सम्मिलित हो जाता है ॥१३५६॥

णियगच्छंते चक्की, गिरि - वण - वेवीए बार - मग्गेण ।

मउभम्मि मेच्छखंड - प्पसाहगट्टं बलेण जुदा ॥१३५७॥

अर्थ :—पश्चात् मध्यम म्लेच्छखण्डको सिद्ध करनेके लिए चक्रवर्ती सेना सहित पर्वतीय वन-वेदीके द्वार-मार्गमें निकलते हैं ॥१३५७॥

मेच्छ - महि - पइट्टेहि', तेहि सह मेच्छ-णरखई सब्बे ।

कुलदेवदा - बलेणं, जुउभं कुव्वंति घोरयरं ॥१३५८॥

अर्थ :—उस समय म्लेच्छ-महीकी ओर प्रस्थित हुए उनके साथ सब म्लेच्छ राजा अपने कुलदेवताओंके बलसे प्रचण्ड युद्ध करते हैं ॥१३५८॥

जेत्तूण मेच्छराए, तत्तो सिधूए तीर - मग्गेण ।

गंतूण उत्तरमुहा, सिधूवेवीं कुणंति वसं ॥१३५९॥

अर्थ :—अनन्तर चक्रवर्ती म्लेच्छ राजाओंको जीतकर सिन्धुनदीके तटवर्ती मार्गसे उत्तरकी ओर जाकर सिन्धुदेवीको वशमें करने हैं ॥१३५९॥

हिमवान् देवको वश करना—

पुब्बाहिमुहा तत्तो, हिमवंत - वणस्स वेवि - मग्गेण ।

हिमवंत - कूड - पणिही - परियंतं जाव गंतूणं ॥१३६०॥

णिय-णामंकिव-इसुणा, चक्कहरा बिधिवूण साहंति ।

हिमवंत-कूड - सठिय - वेंतर - हिमवंत - णाम - सुरं ॥१३६१॥

अर्थ :—इसके पश्चात् पूर्वाभिमुख होते हुए हिमवान् पर्वत-सम्बन्धी वनके बेदी-मार्गसे हिमवान् कूटके समीप तक जाकर वे चक्रवर्ती अपने नामसे अंकित बाणके द्वारा बेधकर हिमवान् कूट-पर स्थित हिमवान् नामक अन्तर देवको सिद्ध करते हैं ॥१३६०-१३६१॥

वृषभगिरिपर प्रशस्ति लिखकर गङ्गादेवीको वश करना—

अह दक्षिण - भाएणं, बसहगिरि जाव ताव वच्चंति ।

तग्गिरि - तोरणद्वारं, पविसंते णिययणाम - लिहरण्णं ॥१३६२॥

अर्थ :—अनन्तर चक्रवर्ती दक्षिणभागसे वृषभगिरि-पर्यन्त जाकर अपना नाम लिखनेके लिए उस पर्वतके तोरणद्वारमें प्रवेश करते हैं ॥१३६२॥

बहु - विजय - पसत्थीहि, गय-चक्कीणं गिरंतं भरिवं ।

बसह - गिरिवे सव्वे, पवाहिणेणं विलोक्कंति ॥१३६३॥

अर्थ :—वहाँ जाकर वे गत चक्रवर्तियोंकी बहुतसी (अनेकों) विजय-प्रशस्तियोंसे निरन्तर भरे हुए वृषभगिरिको प्रदक्षिणा देते हुए देखते हैं ॥१३६३॥

णिय-णाम-लिहण्णं^१, तिस - मेत्तं पव्वए^२ अपावता ।

गलिव - विजयाभिमाणा, चक्की चिताए वेट्ठंति ॥१३६४॥

अर्थ :—अपना नाम लिखनेके लिए पर्वत पर तिल-मात्र भो स्थान न पाकर चक्रवर्ती विजयाभिमानसे रहित होकर चिन्तायुक्त खड़े रह जाते हैं ॥१३६४॥

मंतीणं अमराणं, उबरोध - वसेण पुव्व - चक्कीणं ।

णामाणि एकक - ठाणे, णिण्णासिय दंड - रयणेण ॥१३६५॥

लिहिव्वणं णिय - णामं, तत्तो गंतूण उत्तर - मुहेण ।

पाविय गंगा - कूडं, गंगादेवीं कुणंति वसं ॥१३६६॥

अर्थ :—तब मन्त्रियों और देवताओंके आग्रहवश एक स्थानपर पूर्व चक्रवर्तियोंके नाम दण्डरत्नसे नष्ट करके और अपना नाम लिखकर वहाँसे उत्तरकी ओर जाते हुए गङ्गाकूटको पाकर गङ्गादेवीको वशमें करते हैं ॥१३६५-१३६६॥

१. द. ब. क. घ उ पुढोवति । २. द. ब. क. ज. य. ड. लिहण्णाराण । ३. द. ब. क. ज. य. उ

खण्डप्रपातगुफाका उदधाटन एवं उत्तरभरतपर विजय—

अह बक्षिण - भाएणं, गंगा - सरियाए तीर - मगोण ।

गंतुरां चेद्वृते, वेयड्ड - वणम्मि चक्कहरा ॥१३६७॥

अर्थ :—इसके पश्चात् वे चक्रधर-गङ्गानदीके तटवर्ती मार्गसे दक्षिणकी ओर जाकर विजयार्थ-पर्वतके वनमें ठहर जाते हैं ॥१३६७॥

आणाए चक्कीरां, खंधगुहाए कबाड - जुगलं पि ।

उगघाडिय सेणवई, पुव्वं पिव मेच्छखंडं पि ॥१३६८॥

साहिय तत्तो पबिसिय, खंधाबारं पसण्ण - भत्त - मणा ।

चक्कीण चरण - कमले, पणमिय चेद्वेदि सेणवई ॥१३६९॥

अर्थ :—पुनः चक्रवर्तीकी आज्ञासे सेनापति खण्डप्रपातगुफाके दोनों कपाट खोलकर और पूर्व म्लेच्छ खण्डको भी बशमें करके वहाँसे कटकमे प्रवेश करता है तथा प्रसन्नमन एवं भक्तिमान होकर चक्रवर्तीके चरण-कमलोंमें प्रणाम करके ठहर जाना है ॥१३६८-१३६९॥

वेयड्ड - उत्तर - विसा-संठिय-णयरान खयरराया' य ।

चक्कीरा चलण - कमले, पणमंति कुणंति दासत्तं ॥१३७०॥

अर्थ :—विजयार्थकी उत्तरदिशामे स्थित नगरोके विद्याधर राजा भी चक्रवर्तीके चरण-कमलोंमें नमस्कार करते हैं और उनका दासत्व स्वीकार कर लेते हैं ॥१३७०॥

इय उत्तरम्मि भरहे, भूचर - खचरादि साहिय समगं ।

वच्चंति बलेण जुदा, गंगाए जाव वण - वेदि ॥१३७१॥

अर्थ :—इसप्रकार चक्रवर्ती उत्तर भरतमे सम्पूर्ण भूमिगोचरी (राजाओ) और विद्याधरोंको बशमे करके सैन्य सहित गङ्गाकी वन वेदी तक जाते हैं ॥१३७१॥

खण्डप्रपातगुफाके दक्षिणद्वारसे निष्काशन—

तव्वेदीए दारे, तीए उववण - खिदीसु लीलाए ।

पबिसिय बलं समगं, णिक्कामदि दक्षिण - मुहेण ॥१३७२॥

अर्थ :—उस वेदीके द्वारसे उसकी उपवन-भूमियोंमें लीला-भात्रसे प्रवेश करके समस्त सैन्य दक्षिणमुखसे निकलता है ॥१३७२॥

गिरि-तड-वेदी-द्वारं, गच्छिष्य गृह-द्वार-रण-सोबाण ।

आरुह्य सङ्ग - बलं, वचचि नह - उभय - तीरेसु ॥१३७३॥

अर्थ :—तत्पश्चात् पर्वतकी तट-वेदीके द्वार तक जाकर और फिर गुफाद्वारके रत्न-सोपानों पर चढ़कर वह षडङ्ग-बल (सेना) नदीके दोनों तीरों परसे जाता है ॥१३७३॥

तग्गिरि-द्वारं पविसिय, दो - तीरेसुं णईए उभय-तडे ।

वचचि दो - दो ज्ञोयण-मेसे 'रु'वत्त - तीर - बोहीणं ॥१३७४॥

अर्थ :—उस पर्वतके द्वारमेंसे प्रवेश कर वह सैन्य नदीके दोनो ओर दो तीरोंपर दो-दो भोजन विस्तारवाली तट-बोधियों परसे जाता है ॥१३७४॥

पुब्बं व गुहा - मज्जे, गंतूणं वक्खिणेण दारेण ।

णिक्कलिय सङ्ग - बलं, 'गंगा - वत्ता - मज्जमायावि ॥१३७५॥

अर्थ :—पूर्वके सदृश ही (खण्डप्रपात) गुफाके बीचमेंसे जाकर और दक्षिण-द्वारसे निकलकर वह षडङ्ग-बल गङ्गावनके मध्यमें आ पहुँचता है ॥१३७५॥

अन्तिम भ्लेच्छ खण्ड पर विजय एवं नगर प्रवेश—

णह-वण-वेदी-द्वारे, गंतूणं गिरि - वणत्त मज्जम्मि ।

चेहुते चक्कहरा, खंधावारेण परियरिया ॥१३७६॥

अर्थ :—इसके पश्चात् सैन्यसे परिवारित चक्रवर्ती नदीकी वन-वेदीके द्वारमेंसे जाकर पर्वत-सम्बन्धी वनके मध्यमें ठहर जाते हैं ॥१३७६॥

अण्णाए चक्कीणं, सेणवई पुब्ब - मेच्छखंडं पि ।

छम्मासेहि साहिय, खंधावारं समल्लियवि ॥१३७७॥

अर्थ :-पुन सेनापति चक्रवर्तीकी आज्ञासे छह मासमें पूर्व म्तेच्छखण्डको भी वश में करके स्कन्धावारमें आ मिलता है ।। १३७७ ।।

तगिरि-वणवेदीए, तोरण - दारेण दक्खिण - मुहेण ।

णिककलिय चक्कवट्ठी, णिय - णिय - णयरेसु पविसत्ति ।। १३७८ ।।

अर्थ :-अनन्तर चक्रवर्ती उस पर्वत की वन-वेदीके दक्षिणमुख तोरण-द्वार से निकलकर अपने-अपने नगरो मे प्रवेश करते है ।। १३६८ ।।

चक्रवर्तियोका दिग्विजय काल-

सट्ठि तीस दस, दस वास - सहस्सा सणक्कुमारत ।

अड छच्चउ पणति - सया, कमेण तत्तो य पउमत ।। १३७९ ।।

६०००० । ३०००० । १०००० । १०००० । ८०० । ६०० । ४०० । ५०० । ३००

पण्णभहिय च सय, सयमेक्क सोलस पि पत्तेय ।

हरिसेण - प्पमुहाण, परिमाणं विजय - कालस्स ।। १३८० ।।

१५० । १०० । १६ ।

। एव चक्कहराण दिजय-कालो^१ समत्तो ।

अर्थ :- (भरत चक्रवर्तीसे) सनत्कुमार पर्यन्त विजय-कालका प्रमाण क्रमशः साठ हजार वर्ष, तीस हजार वर्ष, दस हजार वर्ष, दस हजार वर्ष तथा पद्म चक्रवर्ती पर्यन्त क्रमशः आठ सौ वर्ष, छह सौ वर्ष, चार सौ वर्ष, पाँच सौ वर्ष और तीन सौ वर्ष है। पुन हरिषेणादिक चक्रवर्तियोमेसे प्रत्येक का क्रमशः एक सौ पचास वर्ष एक सौ वर्ष और सोलह वर्ष ही है ।। १३७९-१३८० ।।

। इस प्रकार चक्रघरो के विजयकालका वर्णन समाप्त हुआ ।

चक्रवर्तियो के वैभव का निर्देश-

अह णिय-णिय-णयरेसु, चक्कीण रमंतयाण लीलाए ।

विभवस्सर य लव-मेत्तं, वोच्छोमि जहाणुपुव्वीए ।। १३८१ ।।

अर्थ :—धब अपने-अपने नगरोंमें लीलासे रमण करते हुए उन चक्रवर्तियोंके वैभवका यहाँ अनुक्रमसे किंचित् मात्र कथन करता हूँ ॥१३८१॥

आविम-संहृदण-शुद्धा, सख्ये तवणिज्ज-अण्य-वर-वेहा ।

सयस - सुलक्षण - भरिया', 'समचउरस्संग-संठाणा ॥१३८२॥

अर्थ :—सर्व चक्रवर्ती आदिके वज्रवृषभनाराच संहनन सहित, सुवर्ण सदृश वर्ण वाले, उत्तम शरीरके धारक, सम्पूर्ण सुलक्षणोंसे समन्वित और समचतुरस्ररूप शरीर-संस्थानसे संयुक्त होते हैं ॥१३८२॥

सम्भाओ मण - हराओ, अहिण्ण-सावण्य-रूव-रेहाओ ।

छण्णउदि - सहस्साहं, पत्तेकं होंति जुववीओ ॥१३८३॥

६६०००

अर्थ :—प्रत्येक चक्रवर्तीके, मनको हरण करने वाली और अभिनव सावण्य-रूप रेखा-वाली कुल छयानवें हजार युवतियाँ (स्त्रियाँ) होती हैं ॥१३८३॥

तामुं अज्जाखंडे, बत्तीस - सहस्स - राजकण्णाओ ।

खेवरराज - सुवाओ, तेत्तिय - मेत्ताओ मेच्छ-धूवाओ ॥१३८४॥

। ३२००० । ३२००० । ३२००० ।

अर्थ :—उनमेसे बत्तीस हजार राजकन्याएँ आर्यखण्डकी इतनी (३२०००) ही सुताएँ विद्याधर राजाओकी और इतनी (३२०००) ही म्लेच्छ-कन्याएँ होती हैं ॥१३८४॥

एक्केक्क - जुवइ - रयणं, एक्केक्काणं हवेवि चक्कीणं ।

भुंजंति हु तेहि समं, संकप्प - वसंगवं सोक्खं ॥१३८५॥

अर्थ :— प्रत्येक चक्रवर्तीके एक-एक युवति-ग्न होता है । वे उमके माथ मकल्पिन (इच्छित) सुखोंको भोगते हैं ॥१३८५॥

संखेज्ज - सहस्साइं, पुत्ता पुत्तीओ होंति चक्कीणं ।

गणबद्धदेव - गामा, बत्तीस - सहस्स ताण तणुरक्खा ॥१३८६॥

गण ३२०००

अर्थ :- प्रत्येक चक्रवर्तीके सख्याय हजार पुत्र-पुत्रियां होती है और अतीस हजार गणबद्ध नामक देव उनके अङ्गरक्षक होने हैं ॥१३८६॥

तणुवेज्ज^१-महाणसिया, कमसो ति-सयाइ सट्ठि-जुत्ताइं ।

चोहस-वर-रयणाइं, जीवाजीवण्य - भेद - वु - विहाइं ॥१३८७॥

। ३६० । ३६० । १४ ।

अर्थ :- प्रत्येक चक्रवर्तीके चिकित्सक (वैद्य) तीनसौ माठ, महानमिक (रसोद्भये) तीनसौ साठ और उत्तमरत्न चौदह होते हैं । ये रत्न जीव और अजीवके भेदसे दो प्रकारके होते हैं ॥१३८७॥

ते तुरय-हृत्थि-बद्धइइ, गिहवइ - सेणाबइ ति रयणाइं ।

जुवइ-पुरोहिद-रयणा, सत्तं जीवाणि ताण अभिहाणा ॥१३८८॥

पवणंजय-विजयगिरी, भद्रमुहो तह य कामउट्ठी य ।

होंति अउज्झु सुभद्दा, बुद्धिसमुद्दो चि पचयें ॥१३८९॥

अर्थ :- उनमेसे अश्व, हाथी, बर्द्ध, गृहपति, सेनापति, युवती और पुरोहित ये सात जीव-रत्न हैं । इनके नाम क्रमशः पवनञ्जय, विजयगिरि, भद्रमुख, कामवृष्टि, अयोध्य, सुभद्रा और बुद्धि-समुद्र हैं ॥१३८८-१३८९॥

तुरग-इभ-इत्थि-रयणा, विजयइद्धगिरिम्मि होंति चत्तारि ।

अवत्सेस - जीव - रयणा, णिय-णिय-णयरेसु कम्मंति ॥१३९०॥

अर्थ :- इन सात रत्नोंमेंसे तुरग, हाथी और स्त्री ये तीन रत्न विजयार्ध पर्वतपर तथा अवशिष्ट चार जीव-रत्न अपने-अपने नगरमें उत्पन्न होते हैं ॥१३९०॥

छ्वासासि-बंड-चक्का, काकिणि-चिन्तामणि सि रयणाइं ।

चम्म - रयणं च सत्ताम, इय सिज्जीवाणि रयणाणि ॥१३६१॥

अर्थ :—छत्र, अस्ति, दण्ड, चक्र, काकिणी, चिन्तामणि और चर्म, ये सात रत्न निर्जोव होते हैं ॥१३६१॥

आदिम-रयण-चउक्कं, आयुह-सालाम जायदे' तसो ।

तिण्णि वि रयणाइ पुढं, सिरिग्गिहे ताण ञाम इम्मे ॥१३६२॥

अर्थ :—इनमेंसे आदिके चार रत्न आयुधशालामें और शेष तीन रत्न श्रीछहमें उत्पन्न होते हैं. उन सातों रत्नोंके नाम इसप्रकार हैं ॥१३६२॥

सूरप्पह - भूदमुहो, पच्चंडवेगा सुद्धरिसणो तुरिमो ।

चिन्ताजणणी चूडामणि मज्झमओ सि पत्तोक्कं ॥१३६३॥

अर्थ :—सूर्यप्रभ (छत्र), भूतमुख (अस्ति), प्रचण्डवेग (दण्ड), सुदशन (चक्र), चिन्ताजननी (काकिणी दीपिका), चूडामणि (चिन्तामणि) और मज्झमय (चर्मरत्न) ये क्रमशः (नाम) कहे गये है ॥१३६३॥

जह जह जोगगट्टाणे, उप्पण्णा चोद्दसाइ रयणाइं ।

इदि केई आयरिया, णियम - सरुक्खं ण मण्णंति ॥१३६४॥

[पाठान्तरम्]

अर्थ :—ये चौदह रत्न यथायोग्य स्थानमें उत्पन्न होते हैं । इसप्रकार कोई-कोई आचार्य इनके नियम रूपको नही भी मानते हैं ॥१३६४॥

(पाठान्तर)

चक्कीण चामराणि, जक्खा बत्तीस चिक्खिबंति तथा ।

आउट्टा कोडीओ, पत्तोक्कं बंधु - कुल - भाणं ॥१३६५॥

। ३२ । ३५०००००० ।

अर्थ :—चक्रवर्तियोंके चामरोंको बत्तीस यज्ञ दुराया करते हैं। तथा प्रत्येक (यक्ष) के बन्धुकुलका प्रमाण साठे तीन करोड़ होता है ॥१३६५॥

काल-महकाल-पंडू, भागव-संखा य पउम - णइसप्पा ।

पिगल - जाणारयणा, णव - णिहिणो सिरिपुरे जावा ॥ १३६६॥

अर्थ :—काल, महाकाल, पाण्डु, मानव, शङ्ख, पद्म, नैसर्प, पिङ्गल और नानारत्न, ये नौ निधियाँ श्रीपुरमे उत्पन्न हुआ करती हैं ॥१३६६॥

काल-प्पमुहा णाणा - रयणंता ते णई - मुहे णिहिणो ।

उप्पज्जादि इदि केई, पुव्वाइरिया परूवेति ॥१३६७॥

[पाठान्तरम्]

अर्थ :—कालनिधिको आदि लेकर नानारत्न-पर्यन्त वे निधियाँ नदी मुखमें उत्पन्न होती हैं, इसप्रकार भी कितने ही पूर्वाचार्य निरूपण करने हैं ॥१३६७॥

(पाठान्तर)

उडु-जोग्ग-बव्व-भायरा-धण्णाउह-त्तर-वत्थ - हम्मणि ।

आभरण-रयण-णियरा, णव - णिहिणो वेत्ति^१ पत्तोयं ॥१३६८॥

अर्थ :—इन नौ निधियोमेंसे प्रत्येक निधि क्रमशः ऋतुके योग्य द्रव्य, भाजन, धान्य, आयुध, वादित्त, वस्त्र, हर्म्य, आभरण और रत्नसमूहको दिया करती है ॥१३६८॥

दक्खिण-मुह-आवत्ता, चउवीस हवन्ति धवल-वर-संखा ।

एक्के - वकोडी लक्खो, हलानि पुठवी वि^१ छक्खंडा ॥१३६९॥

। स २४ । हल को १ ल । ६ ।

अर्थ :—चक्रवर्तियोंके (अधिकारमें) बीबीस दक्षिणमुखावर्त धवल एवं उत्तम शङ्ख, एक लाख करोड़ (१०००००००००००) हल और छह खण्डरूप पृथिवी होती है ॥१३६९॥

भेरी पडहा रम्मा, बारम पुह - पुह हवंति चक्कीणं ।

बारस जोयण - मेत्ते, देसे सुव्वत्ता - वर - सद्दा' ॥१४००॥

। भे-१० । प=१२ ।

अर्थ :—चक्रवर्तियोंके रमणीय भेरी और पट्ट पृथक्-पृथक् बारह-बारह होते हैं, जिनका उत्तम शब्द देशमे बारह योजन प्रमाण सुना जाता है ॥१४००॥

कोडि - तियं गो-संखा, थालीओ एक्क-कोडि-मेत्ताओ ।

चुलसीदी लक्खाइं, पत्तेक्कं भद्द - वारण - रहाणि' ॥१४०१॥

को ३ । को १ । ८४ ल । ८४ ल ।

अर्थ :—उनकी गौओकी सख्या तीन करोड, थालियाँ एक करोड तथा भद्र-हाथी एवं रथोंमेंसे प्रत्येक चौरासी-चौरासी लाख प्रमाण होते हैं ॥१४०१॥

अट्टारस कोडीओ, तुरया चुलसीदि-कोडि-वर-वीरा ।

स्यरा बद्द - कोडीओ, अडसीदि-सहस्स-मेच्छ-णरणाहा ॥१४०२॥

को १८ । को ८४ । ० । ८८००० ।

अर्थ :—उनके अट्टारह करोड घोड़े, चौरासी करोड उत्तम वीर, कई करोड विद्याधर और षठासी हजार म्लेच्छ राजा होते हैं ॥१४०२॥

सब्बाण मउडबद्धा, बत्तीस सहस्सयाणि पत्तेक्कं ।

तेत्तिय - मेत्ता णट्टयसाला संगीव - सालाओ ॥१४०३॥

३२००० । ३२००० । ३२००० ।

अर्थ :—सब चक्रवर्तियोंमेंसे प्रत्येकके बत्तीस हजार मुकुटबद्ध राजा, इतनी (३२०००) ही नाट्यशालाएँ और इतनी (३२०००) ही सङ्गीत-शालाएँ भी होती हैं ॥१४०३॥

होति पद्दाआणीया, दु-गुणिय-उडवीस-कोडि-परिमाण ।

बत्तीस - सहस्साराण, देसा चक्कीण पत्तेयं ॥१४०४॥

को ४८ । ३२००० ।

अर्थ :—प्रत्येक चक्रवर्तिके पदानीक (पदाति) अड़तालीस करोड़ और देश बत्तीस हजार होते हैं ॥१४०५॥

छण्णउदि - कोडि गामा, णयराइं पंचहत्तरि - सहस्सा ।

अड - ह्व - दु - सहस्साणि, खेडा सव्वारा पत्तेकं ॥१४०५॥

को ६६ । ७५००० । १६००० ।

अर्थ :—सर्व चक्रवर्तियोंमेंसे प्रत्येकके छघानवं करोड़ ग्राम, पचहत्तर हजार नगर और आठसे गुणित दो (सोलह) हजार खेडे (खेट) होते हैं ॥१४०५॥

चउवीस - सहस्साणि, कब्बड - णामा मडंब-णामा य ।

चत्तारि सहस्साइं, अडवाल - सहस्स - पट्टणाइं पि ॥१४०६॥

अर्थ :—कवंट चौबीस हजार, मटब चार हजार और पट्टन अड़तालीस हजार होते हैं ॥१४०६॥

णव - णउदि - सहस्साइं, संखा दोणामुहाण चक्कीसु ।

संवाहणाणि चउदस - सहस्स - भेत्ता य पत्तेकं ॥१४०७॥

अर्थ :—प्रत्येक चक्रवर्तिके निन्यानवे हजार द्रोणमुख और चौदह हजार-प्रमाण संवाहन हुवा करते हैं ॥१४०७॥

छप्पणंतर बीवा, कुक्खि-णिवासा हवंति सत्ता - सया ।

अडवीस - सहस्साइं, दुग्गाडधीयाणि सव्वेसु ॥१४०८॥

५६ । ७०० । २८००० ।

अर्थ :—सर्व चक्रवर्तियोंके छप्पन अन्तर्द्वीप, सात सौ कुक्खि निवास और अट्टाईस हजार दुर्ग एवं वन आदि होते हैं ॥१४०८॥

दिव्यपुरं रयज-निहि, 'चमु-भायज-भोयणाइ सयनं च ।

आसन - बाहण - णड्डण, वसंग - भोगा इमे ताणं ॥१४०६॥

अर्थ :- उन चक्रवर्तियोंके १ दिव्यपुर, २ रत्न, ३ निधि, ४ सैन्य, ५ भाजन, ६ भोजन, ७ शय्या, ८ आसन, ९ वाहन और १० नाट्य, ये दशाङ्ग भोग होते हैं ॥१४०६॥

तालिका : ३३

चक्रवर्तियोंकी नव-निधियोंका परिचय

क्र.	नाम	उत्पत्तिस्थान	प्रकारान्तरसे उत्पत्ति स्थान	क्या प्रदान करती हैं ?
१	काल	श्रीपुर	नदीमुख	ऋतुके अनुसार द्रव्य (फल, पुष्प आदि) ।
२	महाकाल	"	"	भाजन (वर्तन एवं घातुएँ) ।
३	पाण्डु	"	"	धान्य (अनाज एवं षट्‌रस) ।
४	मानव	"	"	प्रायुध (अनेक शस्त्र) ।
५	शङ्ख	"	"	वादित्र (बाजे) ।
६	पद्म	"	"	वस्त्र (कपड़े)
७	नैसर्ग	"	"	हर्म्य (महल एवं प्रासाद आदि) ।
८	पिङ्गल	"	"	ग्राभरण (गहने) ।
९	नानारत्न	"	"	रत्नसमूह (अनेक प्रकारके रत्न) ।

चक्रवर्तियोंके चौबह रत्नोंका परिचय

क्र०	नाम	क्या है	सजा गाथा १३८६ एवं १३६३	जीव या अजीव	उत्पत्ति स्थान	कार्य
१	अश्व	घोडा	पवनञ्जय	जीव	विजयार्धपर	गुफा द्वारा खुल जानेपर तुरगरत्न द्वारा बारह यो. क्षेत्रको लाघना ।
२	गज	हाथी	विजयगिरि	"	"	सवारी करना ।
३	गृहपति	भण्डारी	भद्रमुख	"	स्व नगरमे	भण्डार आदि की सम्हाल करना ।
४	स्थपति	बठई	कामवृष्टि	"	" "	उन्मग्ना-निमग्ना नदियोपर पुल बनाना ।
५	सेनापति	सेनाध्यक्ष	अयोध्य	"	" "	गुफाओके द्वार खोलना एव सेना संचालन ।
६	पुरोहित	धर्मप्रेरक	बुद्धिसमुद्र	"	" "	धार्मिक अनुष्ठान कराना ।
७	युवती	पटरानी	सुभद्रा	"	विजयार्धपर	उपभोगका साधन ।
८	चक्र	आयुध	सुदर्शन	अजीव	आयुधशाला	छह खण्ड विजयका प्रेरक साधन ।
९	छत्र	छतरी	सूर्यप्रभ	"	"	वर्षासे कटककी रक्षा करना ।
१०	असि	आयुध	भूतमुख	"	"	शत्रुसंहार ।
११	दण्ड	अस्त्र	प्रचण्डवेग	"	"	गुफाओंके कपाट खोलना एव वृषभाचल पर प्रशस्ति लिखना ।
१२	काकिरी	"	चिन्तावननी	"	श्री गृह	दोनों गुफाओमे प्रकाश करना ।
१३	चिन्तामणि	रत्न	चूडामणि	"	"	मनोवाञ्छित कार्य सिद्धि करना ।
१४	चर्मरत्न	तम्बू	मज्झमय	"	"	नगादि नदियोंके जलसे कटककी रक्षा करना ।

तालिका : ३५

वक्रवर्तिका वैभवका सामान्य परिचय-गा० १३८१ से १४०६ तक

क्र०	वैभव नाम	विशेषता एवं प्रमाण	क्र०	वैभव नाम	विशेषता एवं प्रमाण
१	शरीर-संहनन	वज्रवृषभनाराचसंहनन	२४	वीर (योद्धा)	८४ करोड़
२	शरीर-वर्ण	स्वर्ण-सदृश	२५	विद्याधर	अनेक करोड़
३	शरीराकार	समचतुरम्ब-संस्थान	२६	म्लेच्छराजा	८८०००
४	रानियाँ	६६०००	२७	मुकुटबद्धराजा	३२०००
५	पटरानी	१	२८	नाट्यशालाएँ	३२०००
६	पुत्र-पुत्रियाँ	सख्यात हजार	२९	सगीतशालाएँ	३२०००
७	गणबद्ध नामक अंगरक्षक देव	३२०००	३०	पदातिक	४८ करोड़
८	बंद्य	३६०	३१	देश	३२०००
९	रसोइया	३६०	३२	ग्राम	६६ करोड़
१०	उत्तम रत्न	१४	३३	नगर	७५०००
११	चामर ढोरनेवाले यक्ष	३२	३४	खेडे	१६०००
१२	प्रत्येकके बन्धु-कुल	३५००००००	३५	कर्वट	२४०००
१३	निधियाँ	६	३६	मटब	४०००
१४	शस्त्र	२४	३७	पट्टन	४८०००
१५	हल	एक लाख करोड़	३८	द्रोणमुख	६६०००
१६	पृथिवी	छह खण्ड	३९	सवाहन	१४०००
१७	भेरी	१२	४०	अन्तर्द्वीप	५६
१८	पटह	१२	४१	कुक्षिनिवास	७००
१९	गायें	३ करोड़	४२	दुर्ग एवं वनादि	२८०००
२०	यालियाँ	१ करोड़	४३	दिव्य भोग	१० प्रकार
२१	भद्रहाथी	८४ लाख			
२२	रथ	८४ लाख			
२३	घोडे	१८ करोड़			

ग्राम नगरादिकोके लक्षण—

बड़ - परिवेढो^१ गामो, जयरं चउगोडरेहि रमणिलज्जं ।

गिरि-सरिकव-परिवेढं^२, खेढं गिरि-वेढियं^३ च कब्बडयं ॥१४१०॥

अर्थ :- वृत्तिसे वेष्टित ग्राम, चार गोपुरोंसे रमणीय नगर, पर्वत एवं नदीसे घिरा हुआ खेत और पर्वतसे वेष्टित कर्वट कहलाता है ॥१४१०॥

पण-सय - पमाण - गाम - प्पहाणमूवं मडंब-णामं खू ।

बर - रयणाणं जोणी, पट्टण - णामं विण्हिट्टं ॥१४११॥

अर्थ :- जो पांचसो ग्रामोमे प्रधानभूत होता है उसका नाम मटंब और जो उत्तम रत्नोंकी योनि (खान) होता है, उसका नाम पट्टन कहा गया है ॥१४११॥

दोणामुहाहिहाणं, सरिवड - वेलाए वेढियं जाण ।

संवाहणं ति बहु - विहरण्ण - महासेल - सिहरत्थं ॥१४१२॥

[। एधं विभवो समत्तो ।]

अर्थ — समुद्रकी वेलासे वेष्टित द्रोणमुख और बहुत प्रकारके अरण्योसे युक्त महापर्वतके शिखर पर स्थित सवाहन जानना चाहिए ॥१४१२॥

। इसप्रकार विभवका वर्णन समाप्त हुआ ।

चक्रवर्तियोंके राज्य-कालका प्रमाण—

भरहे छ-लक्ख-पुब्बा, इगिसट्टि-सहस्स-वास-परिहीणा ।

तीस - सहस्सुणाणि, सत्तरि लक्खाणि पुब्ब सगरम्मि ॥१४१३॥

। पु ६ ल । रिण वरिम ६१००० । मगर पुव्व ७० ल । रिण ३०००० ।

अर्थ :- भरत चक्रवर्तीके [राज्य-कालका प्रमाण] एकसठ हजार वर्ष कम छह लाख पूर्व और सगर चक्रवर्तीके राज्य-कालका प्रमाण तीस हजार वर्ष कम सत्तर लाख पूर्व प्रमाण है ॥१४१३॥

१. द. ब. क. ज. य. उ. परिवेदो । २. द. ब. क. ज. य. उ. परिवेद । ३. द. ब. ज. उ. वेदेदं, क. वेदिद, य. वेदद । ४. द. ब. क. ज. य. उ. वेदिय ।

णउवि-सहस्स-जुवार्णि, सव्वसार्णि तिणिण मघव-णामम्मि ।

णउवि - सहस्सा वासं, सणवकुमारम्मि चक्कहरे ॥१४१४॥

३६०००० । ६००००० ।

अर्थः—मघवा नामक चक्रवर्तीका राज्यकाल तीन लाख नब्बे हजार वर्ष और सनत्कुमार चक्रवर्तीका राज्यकाल नब्बे हजार वर्ष प्रमाण है ॥१४१४॥

चउबीस - सहस्साणि, वासाणि दो - सयाणि संतिम्मि ।

तेबीस - सहस्साइं, इणि - सय - पण्णाहियाइ कुंभुम्मि ॥१४१५॥

२४२०० । २३१५० ।

अर्थः—शान्तिनाथ चक्रवर्तीका राज्यकालका प्रमाण चौबीस हजार दोसौ वर्ष और कुन्धुनाथके राज्यकालका प्रमाण तेईस हजार एक सौ पचास वर्ष है ॥१४१५॥

बीस - सहस्सा वस्सा, छस्सय-जुत्ता अरम्मि चक्कहरे ।

उणवण्णा - सहस्साइं, पण - सय - जुत्ता सुभउमम्मि ॥१४१६॥

। २०६०० । ४६५०० ।

अर्थः—अरनाथ चक्रघरका राज्यकाल बीस हजार छहसौ वर्ष और मुभीम चक्रवर्तीका राज्यकाल उनचास हजार पाँचसौ वर्ष प्रमाण है ॥१४१६॥

अट्टरस - सहस्साणि, सत्त - सएहि समं तथा पउमो ।

अट्ट - सहस्सा अट्ट - सय, पण्णव्वहिया य हरिसेणे ॥१४१७॥

। १८७०० । ८८५० ।

अर्थः—पद्य चक्रवर्तीका राज्यकालका प्रमाण अठारह हजार सातसौ वर्ष और हरिवेण चक्रवर्तीका राज्यकालका प्रमाण आठसौ पचास अधिक आठ हजार वर्ष है ॥१४१७॥

उणबीस - सया वस्सा, जयसेणे बम्हवत्त - णामम्मि ।

चक्कहरे छ - सयाणि, परिमाणं रउजकालस्स ॥१४१८॥

१६०० । ६०० ।

। एवं रउजकालो समचो ।

अर्थ :—जयसेन चक्रवर्तिके राज्यकालका प्रमाण उन्नीसवीं वर्ष श्रीर ब्रह्मदेव नामक चक्रधरके राज्यकालका प्रमाण छहसी वर्ष है ॥१४१८॥

। इसप्रकार राज्यकालका कथन समाप्त हुआ ।

चक्रवर्तियोंका समय-काल—

एककेक-सकल-पुठवा, पण्णास - सहस्स वच्छरा लक्षं ।

पण्णवीस - सहस्साणि, तेवीस-सहस्स-सत्त-सय-पण्णा ॥१४१९॥

पुव्व १ ल । पु १ ल । वस्स ५०००० । व १ ल । २५००० । २३७५० ।

इगिवीस - सहस्साइं, तत्तो सुण्णं च वस सहस्साइं ।

पण्णाहिय-तिण्णि-सया, चत्तारि सयाणि सुण्णं च ॥१४२०॥

। २१००० । सु । १०००० । ३५० । ४०० । सु ।

कमसो भरहादीणं, रज्ज - विरत्ताण चक्कवट्ठीणं ।

णिठ्ठाण - लाह - कारण^१-संजम - कालस्स परिमाणं ॥१४२१॥

अर्थ :—राज्यसे विरक्त भरतादिक चक्रवर्तियोंके निर्वाण-लाभके कारणभूत समय-कालका प्रमाण क्रमशः एक लाख पूर्व, एक लाख पूर्व, पचास हजार वर्ष, एक लाख वर्ष, पन्चोस हजार वर्ष, तेईस हजार सातसौ पचास वर्ष, इक्कीस हजार वर्ष, फिर शून्य, दस हजार वर्ष, तीनसौ पचास वर्ष, चारसौ वर्ष श्रीर शून्य है ॥१४१९-१४२१॥

भरतादिक चक्रवर्तियोंकी पर्यायान्तर प्राप्ति—

जट्टेव गया मोक्खं, बम्ह - सुभउमा^२ य सत्तमं पुड्ढिं ।

मघब्बो सणक्कुमारो, सणक्कुमारं गओ कप्पं ॥१४२२॥

। एवं चक्कहराणं परूवणा समत्ता ।

चक्रवर्तियों का परिचय									
क्र	चक्रवर्तियों के नाम गाथा	शरीर का उल्लेघ गाथा	आयु गाथा	कुमार काल गाथा	मण्डलीक काल गाथा	दिविजय काल गाथा	राज्य काल गाथा	सयम काल गाथा	पर्यायान्तर गति गाथा
१	भरत १२९२-१२९३	५०० धनुष १३०३-१३०४	८४००००० पूर्व १३०६-१३०७	७७००००० पूर्व १३०८-१३१०	१००० वर्ष १३११-१३१३	६०००० वर्ष १३१९-१३८०	६००००० पूर्व १४१३-१४१८	१००००० पूर्व १४१९-१४२१	मोक्ष १४२२
२	सगर	४५० धनुष	७२००००० पूर्व	५०००० पूर्व	५०००० पूर्व	३०००० पूर्व	६१००००० पूर्व ३०००० वर्ष	१००००० पूर्व	मोक्ष
३	मथवा	४२ $\frac{१}{२}$ धनुष	५००००० वर्ष	२५००० वर्ष	२५००० वर्ष	१०००० वर्ष	३९०००० वर्ष	५०००० वर्ष	सानत्कुमार स्वर्ग
४	सानत्कुमार	४२ धनुष	३००००० वर्ष	५०००० वर्ष	५०००० वर्ष	१०००० वर्ष	९०००० वर्ष	१००००० वर्ष	सानत्कुमार
५	शान्ति	४० धनुष	१००००० वर्ष	२५००० वर्ष	२५००० वर्ष	८०० वर्ष	२४२०० वर्ष	२५००० वर्ष	स्वर्ग
६	कुन्तु	३५ धनुष	९५००० वर्ष	२३७५० वर्ष	२३७५० वर्ष	६०० वर्ष	२३१५० वर्ष	२३७५० वर्ष	मोक्ष
७	अर	३० धनुष	८४००० वर्ष	२१००० वर्ष	२१००० वर्ष	४०० वर्ष	२०६०० वर्ष	२१००० वर्ष	मोक्ष
८	सुभौम	२८ धनुष	६०००० वर्ष	५००० वर्ष	५००० वर्ष	५०० वर्ष	४९५०० वर्ष	०	सप्तम नरक
९	पदम	२२ धनुष	३०००० वर्ष	५०० वर्ष	५०० वर्ष	३०० वर्ष	१८७०० वर्ष	१०००० वर्ष	मोक्ष
१०	हरिषेण	२० धनुष	१०००० वर्ष	३२५ वर्ष	३२५ वर्ष	१५० वर्ष	८८५० वर्ष	३५० वर्ष	मोक्ष
११	जयसेन	१५ धनुष	३००० वर्ष	३०० वर्ष	३०० वर्ष	१०० वर्ष	१९०० वर्ष	४०० वर्ष	मोक्ष
१२	ब्रह्मदत्त	७ धनुष	७०० वर्ष	२८ वर्ष	५६ वर्ष	१६ वर्ष	६०० वर्ष	०	सप्तम नरक

अर्थ :—इन बारह चक्रवर्तियोमेसे आठ चक्रवर्ती मोक्षको, ब्रह्मदत्त और मुभोम सातवी पृथिवीको तथा मधवा एव सनत्कुमार चक्रवर्ती सनत्कुमार नामक तीमरे कल्पको प्राप्त हुए हैं ॥१४२२॥

॥ इमप्रकार चक्रवर्तियोंकी प्ररूपगणा समाप्त हुई ॥

बलदेव, नारायण एव प्रतिनारायणोके नाम—

विजओ अचलो धम्मो, 'सुप्पहणामो सुबंसणो णंदी ।

णंदिमित्तो य रामो, 'पउमो णव होंति बलदेवा ॥१४२३॥

। ६ ।

अर्थ :—विजय, अचल, धर्म, सुप्रभ, सुदर्शन, नन्दी, नन्दिमित्र, राम और पद्म ये नौ बलदेव हुए हैं ॥१४२३॥

होंति तिविट्ठु-डुविट्ठा, सयंभु-पुरिसुत्तमा य पुरिससिहो ।

पुरिसवर - पुंडरीओ^१, दत्तो नारायणो किण्हो ॥१४२४॥

। ६ ।

अर्थ :—त्रिपृष्ठ, द्विपृष्ठ, स्वयम्भू, पुरुषोत्तम, पुरुषसिंह, पुरुषपुण्डरीक, पुरुष-दत्त, नारायण (लक्ष्मण) और कृष्ण ये नौ नारायण हुए हैं ॥१४२४॥

अस्सग्गीवो तारग - मेरग - मधुकीटभा^२ णिसुंभो य ।

बलि - पहरणो य रावण - जरसंघा^३ णव य पडिसत्तू ॥१४२५॥

। ६ ।

अर्थ :—अश्वघोव, तारक, मेरक, मधुकैटभ, निशुम्भ, बलि, प्रहरण, रावण और जरासंघ ये नौ प्रतिबाहू (प्रतिनारायण) हुए हैं ॥१४२५॥

१. ब. उ. सुहृत्पणामो । २. द. ब. क. ज. य. उ. पउमो एवे एव बलदेवा य विण्णेवा । ३. द. ब. क. ब. य. उ. पुंडरीया । ४. ब. क. उ. मधुकीटगा । ५. द. ब. क. ज. य. उ. जरसिधू ।

बलदेव-वासुदेव-प्यडिसत्तूणं जाणावण्टुं संविट्ठी—

पांच जिणिदे बंदति, केसबा पांच आणुपुम्बोए ।

सेयंससामि - पडुदि, तिबिट्ट - पमुहा य पत्तेक्कं ॥१४२६॥

बलदेव, वासुदेव एव प्रतिगन्त्रोको जाननेके लिए सदृष्टि—

अर्थ :—त्रिपुष्ट आदिक पांच नारायणोमेसे प्रत्येक नारायण क्रमशः श्रेयासस्वामी आदिक पांच तीर्थंकरोंकी वन्दना करते हैं (प्रारम्भके पांच नारायण क्रमशः श्रेयासनाथ आदि पांच तीर्थंकरोंके कालमें ही हुए हैं) ॥१४२६॥

अर - मल्लि - अंतराले, णादब्बो पुंडरीय-णामो^१ सो ।

मल्लि - मुणिसुब्बयाणं, विच्चाले दत्त - णामो^२ सो ॥१४२७॥

अर्थ :—अर और मल्लिनाथ तीर्थंकरके अन्तरालमें बह पुण्डरीक तथा मल्लि और मुनि-सुव्रतके अन्तरालमें दत्त नामक नारायण जानना चाहिए ॥१४२७॥

सुब्बय - णमि - सामीणं, मज्जे णारायणो समुप्पण्णो ।

णेमि - समयम्मि किण्णो, एदे णव वासुदेवा य ॥१४२८॥

अर्थ :—मुनिसुव्रतनाथ और नमिनाथ स्वामीके मध्यकालमें नारायण (लक्ष्मण) तथा नेमिनाथ स्वामीके समयमें कृष्ण नामक नारायण उत्पन्न हुए थे । ये नौ वासुदेव भी कहलाते हैं ॥१४२८॥

दस सुण्ण पांच केसव, छस्सुण्णा केसि सुण्ण केसीओ ।

तिय-सुण्णमेक्क-केसी, दो सुण्णं एक्क केसि तिय सुण्णं ॥१४२९॥

[सदृष्टि अगले पृष्ठ पर देखिये]

१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	०
२	२	०	०	०	०	०	०	०	०	३	३	३	३	३	२
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	३	३	३	३	०

०	१	१	१	०	०	१	०	०	१	०	०	१	०	१	१
२	२	२	२	२	०	३	३	३	०	२	०	३	३	३	३
०	०	०	०	०	३	३	३	३	०	०	३	३	३	३	३

०	१	१
२	०	०
०	०	०

अर्थ — क्रमशः दस शून्य, पाँच नारायण, छह शून्य, नारायण, शून्य, नारायण, तीन शून्य, एक नारायण, दो शून्य, एक नारायण और अन्तमे तीन शून्य है। (इस प्रकार नौ नारायणोंकी सट्टिका क्रम जानना चाहिए। सट्टिमे अंक १ तीर्थंकर का, अंक २ चक्रवर्तीका, अंक ३ नारायण का और शून्य अन्तरालका सूचक है) ॥१४२९॥

नारायणादि तीनोंके शरीरका उत्सेध—

सोबी सत्तरि सट्टी, पण्णा पण्णदाल ऊणतीसाणि ।

बावीस - सोल - दस-वणु, केस्सीतिदयम्मि उच्छेहो ॥१४३०॥

८० । ७० । ६० । ५० । ४५ । २६ । २२ । १६ । १० ।

। इदि उत्सेहो ।

अर्थ :— केशवत्रितय-नारायण, प्रतिनारायण एव बलदेवोंके शरीरकी ऊँचाई क्रमशः अस्सी, सत्तर, साठ, पचास, पैंतालीस, उनतीस, बाईस, सोलह और दस धनुष प्रमाण थी ॥१४३०॥

। इसप्रकार उत्सेधका कथन ममाप्त हुआ ।

नारायणादि तीनोंकी आयु-

सगसीदी सत्तरि सग - सट्टी सत्तत्तीस सत्त - दसा

वस्सा लक्खाण - हदा, आऊ विजयादि - पंचण्हं ॥१४३१॥

। ८७ ल। ७७ ल। ६७ ल। ३७ ल। १७ ल।

सगसट्टी सगतीसं, सत्तरस, - सहस्स बारस - सयाणि।

कमसो आउ - पमाण, णंदि - प्पमुहा - चउक्कम्मि ॥१४३२॥

। ६७००० । ३७००० । १७००० । १२०० ।

अर्थ :-विजयादिक पाँच बलदेवोकी आयु क्रमश सतासी-लाख वर्ष, सत्तर लाख वर्ष, सडसठ लाख वर्ष, सैंतीस लाख वर्ष और सत्तरह लाख वर्ष प्रमाण थी तथा नन्दि-प्रमुख चार बलदेवोकी आयु क्रमश. सडसठ हजार वर्ष, सैंतीस हजार वर्ष, सत्तरह हजार वर्ष और बारह सौ वर्ष-प्रमाद्य थी ॥१४३२॥

चुलसीदी बाहत्तरि, सट्टी तीस दसं च लक्खाणि।

पणसट्टि - सहस्साणि, तिविट्ठ - छक्के कमे आऊ ॥१४३३॥

८४ ल। ७२ ल। ६० ल। ३० ल। १० ल। ६५०००।

बत्तीस - बारसेक्कं, सहस्समाऊणि दत्त - पहुदीण।

पडिसत्तु-आउ-माणं, गिय-गिय-णारायणउ-समां ॥१४३४॥

३२०००। १२०००। १०००।

अर्थ :-त्रिपृष्ठादिक छह नारायणोकी आयु क्रमश चौरासी लाख वर्ष, बहत्तर लाख वर्ष साठ लाख वर्ष, तीस लाख वर्ष, दस लाख वर्ष और पैसठ हजार वर्ष प्रमाण थी तथा दत्त-प्रभृति शेष तीन नाराणोकी आयु क्रमश. बत्तीस हजार वर्ष बारह हजार वर्ष और एक हजार वर्ष प्रमाण थी। प्रतिशत्रुओकी आयु का प्रमाण अपने-अपने नारायणोकी आयुके सदृश है ॥१४३४॥

प्रतिनारायणो की पर्यायान्तर-प्राप्ति-

एदे णव पडिसत्तु, णवाण हत्थेहि वामुदेवाणं

गिय - चक्केहि रणेसुं, समाहदा जंति गिरय - खिदि ॥१४३५॥

अर्थ :—ये नौ प्रतिशत्रु युद्धमे क्रमशः नौ वासुदेवोके हाथोंसे अपने ही चक्रोंके द्वारा मृत्युको प्राप्त होकर नरकभूमिमें जाते हैं ॥१४३५॥

नारायणोका कुमार काल, मण्डलीक काल, विजयकाल और राज्यकाल—

पणुबोस - सहस्साइं, वासा कोमार - मंडलिचाइं ।

पठम - हरिस्स कमेणं, वास - सहस्सं विजय - कालो ॥१४३६॥

। २५००० । २५००० । १००० ।

अर्थ :—प्रथम (त्रिपुष्ठ) नारायणका-कुमारकाल पच्चीस हजार वर्ष, मण्डलीक-काल पच्चीस हजार वर्ष और विजयकाल एक हजार वर्ष प्रमाण हे ॥१४३६॥

तेसीदि लक्खाणि, उणवण्ण - सहस्स - संजुदाइं पि ।

वरिसाणि रज्जकालो, णिट्ठो पठम - किण्हस्स ॥१४३७॥

। ८३४६००० ।

अर्थ :—प्रथम नारायणका राज्य-काल तेरामी लाख उनचास हजार वर्ष प्रमाण निर्दिष्ट किया गया है ॥१४३७॥

कोमार-मंडलितो, ते च्चिय बिदिए जवो वि वास-सदं ।

इगिहत्तरि - लक्खाइं, उणवण्ण-सहस्स-णव-सया रज्जं ॥१४३८॥

। २५००० । २५००० । १०० । ७१४६६०० ।

अर्थ :—द्वितीय नारायणका कुमार और मण्डलीक-काल उतना ही (प्रथम नारायणके सदृश पच्चीस-पच्चीस हजार वर्ष, जयकाल सौ वर्ष) और राज्यकाल इकत्तर लाख उनचास हजार नौ सौ वर्ष प्रमाण कहा गया है ॥१४३८॥

बिदियादो^१ अद्धाइं, सयंभुकोमार - मंडलित्ताणि ।

विजओ णउदो रज्जं, तिय-काल-बिहीण-सट्ठि-लक्खाइं ॥१४३९॥

। १२५०० । १२५०० । ६० । ५६७४६१० ।

अर्थ :-स्वयम्भूनारायणका कुमारकाल और मण्डलीक-काल द्वितीय नारायणसे आधा (बारह हजार पाँचसौ वर्ष), विजयकाल नव्वैवर्ष और राज्यकाल इन तीनों (कुमारकाल १२५०० + मण्डलीक काल १२५०० + विजय काल ९० = २५०९० वर्ष) कालो से रहित साठ लाख (६०००००० - २५०९० = ५९७४९१०) वर्ष कहा गया है ॥ १४३९ ॥

तुरिमस्स सत्त तेरस, सयाणि कोमार-मंडलित्ताणि ।

विजओ सादी रज्ज, तिय-काल-विहीण-तीस-लक्खाइ ॥ १४४० ॥

। ७००। १३००। ८०। २९९७९२०।

अर्थ :-चतुर्थ नारायणका कुमार काल और मण्डलीककाल क्रमशः सात-सौ वर्ष और तेरहसौ वर्ष, विजयकाल अस्सी वर्ष तथा राज्यकाल इन तीनों (कुमारकाल ७०० + मण्डलीककाल १३०० + विजयकाल ८० = २०८०) कालोसे रहित तीस लाख (३०००००० - २०८० = २९९७९२०) वर्ष प्रमाण कहा गया है ॥ १४४० ॥

कोमारो तिणिसया, बारस-सय-पण्ण मडलीयत्त ।

पंचम विजयो सत्तरि, रज्जं तिय-काल-हीण-दह-लक्खा ॥ १४४१ ॥

। ३००। १२५०। ७०। ९९८३८०।

अर्थ :-पाँचवें नारायणका कुमारकाल तीनसौ वर्ष, मण्डलीक-काल बारहसौ पचास वर्ष, विजय-काल सत्तर वर्ष और राज्य-काल इन तीनों (कुमार काल ३०० + मण्डलीककाल १२५० + विजयकाल ७० = १६२०) कालों से रहित दस लाख (१०००००० - १६२० = ९९८३८०) वर्ष प्रमाण कहा गया है ॥ १४४१ ॥

कोमार - मडलित्ते, कमसो छट्ठे सपण्ण-दोण्णि-सया ।

विजयो सट्ठी रज्जं, चउसट्ठि-सहस्स-चउसया तालं ॥ १४४२ ॥

। २५०। २५०। ६०। ६४४४०।

अर्थ :-छठे पुण्डरीक नारायणका कुमारकाल और मण्डलीककाल क्रमशः दो सौ पचास वर्ष, विजयकाल साठ वर्ष और राज्यकाल चौंसठ हजार चारसौ चालीस वर्ष प्रमाण है ॥ १४४२ ॥

कोमारो बोग्णि सया, वासा पण्णास मंडलीयत्तं ।
दत्ते विजयो पण्णा, इगितीस-सहस्स-सय-सया रज्जं ॥१४४३॥

। २०० । ५० । ५० । ३१७०० ।

अर्थ :—दत्त नारायणका कुमारकाल दोसी वर्ष, मण्डलीककाल पचास वर्ष, विजयकाल पचास वर्ष और राज्यकाल इकतीस हजार सातसौ वर्ष प्रमाण कहा गया है ॥१४४३॥

अट्टमए इगि - ति - सया, कमेण कोमार-मंडलीयत्तं ।
विजयं चालं रज्जं, एक्करस-सहस्स-यण-सया सट्ठो ॥१४४४॥

। १०० । ३०० । ४० । ११५६० ।

अर्थ :—आठवें नारायणका कुमार और मण्डलीककाल क्रमशः एकमी और तीनसी वर्ष, विजय-काल चालीस वर्ष और राज्यकाल ग्यारह हजार पांचसी साठ वर्ष प्रमाण है ॥१४४४॥

सोलस छप्पण कमे, वासा कोमार - मंडलीयत्तं ।
किहस्स अट्ट विजओ, वीसाहिय - णव - सया - रज्जं ॥१४४५॥

१६ । ५६ । ८ । ६२० ।

अर्थ :—कृष्ण नारायणका कुमार-काल और मण्डलीककाल क्रमशः सोलह और छप्पन वर्ष, विजयकाल आठ वर्ष तथा राज्यकाल नौसी बीस वर्ष प्रमाण है ॥१४४५॥

नारायण एव बलदेवोके रत्नोका निर्देश—

सत्ता-कोवंड-गदा, चक्क - किवाणणि संख - वंडाणि ।
इय सत्त महारयणा, सोहते अट्टचक्कीणं ॥१४४६॥

। ७ ।

अर्थ :—शक्ति, धनुष, गदा, चक्र, कृपाण, शङ्ख एवं दण्ड ये सात महारत्न अर्ध-चक्रवर्तियों के पास शोभायमान रहते हैं ॥१४४६॥

मुसलाइ संगलाइं, गदाइ रयणाबलीओ चत्तारि ।
रयणाइं राजते, बलदेवाणं जवाणं पि ॥१४४७॥

। ४ ।

अर्थ :—मुसल, लांगल (हल), गदा और रत्नावली (हार), ये चार रत्न सभी (ती) बलदेवोके यहाँ शोभायमान रहते हैं ॥१४४७॥

बलदेव आदि तीनोंकी पर्यायान्तर-प्राप्ति—

अणिदाण - गदा सब्बे, बलदेवा केसवा णिदाण-गदा ।
उद्धंगामी सब्बे, बलदेवा केसवा अघोगामी ॥१४४८॥

अर्थ :—सब बलदेव निदान रहित और सब नारायण निदान सहित होते हैं । इसीप्रकार सब बलदेव ऊर्ध्वगामी (स्वर्ग और मोक्षगामी) तथा सब नारायण अधोगामी (नरक जाने वाले) होते हैं ॥१४४८॥

णिस्सेयसमट्ट गया, 'हलिणो चरिमो दु बम्हकप्प-नादो ।
तत्तो कालेण मदो, सिज्झदि किण्हस्स तित्थम्मि ॥१४४९॥

अर्थ :—आठ बलदेव मोक्ष और अन्तिम बलदेव ब्रह्मस्वर्गको प्राप्त हुए हैं । अन्तिम बलदेव स्वर्गसं च्युत होकर कृष्णके तीर्थमें (कृष्ण इसी भरतक्षेत्रमें आगामी चौबीसीके सोलहवें तीर्थकर होंगे) सिद्धपदको प्राप्त होगा ॥१४४९॥

पढम - हरी सत्तमए, पंच ब्छट्टम्मि पंचमी एक्को ।
एक्को तुरिमे चरिमो, तविए णिरए तहेव पडिसत्तू ॥१४५०॥

अर्थ :—प्रथम नारायण सातवें नरकमें, पाँच नारायण छठे नरकमें, एक पाँचवें नरकमें, एक (लक्ष्मण) चौथे नरकमें और अन्तिम नारायण (कृष्ण) तीसरे नरकमें गया है । इसीप्रकार प्रतिशत्रुओं की भी गति जाननी चाहिए ॥१४५०॥

(तानिका ३७ अगले पृष्ठ ४१९ पर देखिये)

तालिका : ३७					
बलभद्रोंका परिचय					
क्र०	नाम	उत्सेघ	आयु	रत्न	पर्यायन्तर प्रति
१	विजय	८० धनुष	८७ लाख वर्ष	मूसल, हल, गदा और रत्नावली हार सब बलदेवोंके पास रहते हैं।	मोक्ष
२	अचल	७० धनुष	७७ लाख वर्ष		मोक्ष
३	धर्म	६० धनुष	६७ लाख वर्ष		मोक्ष
४	सुप्रभ	५० धनुष	३७ लाख वर्ष		मोक्ष
५	सुदर्शन	४५ धनुष	१७ लाख वर्ष		मोक्ष
६	नन्दी	२९ धनुष	६७००० वर्ष		मोक्ष
७	नन्दिमित्र	२२ धनुष	३७००० वर्ष		मोक्ष
८	राम	१६ धनुष	१७००० वर्ष		मोक्ष
९	पद्म	१० धनुष	१२०० वर्ष		पाँचवाँ ब्रह्मस्वर्ग



नारायणोंका परिचय									
क्र०	नाम	उत्तेश	आयु	कुमारकाल	मण्डलीककाल	विजयकाल	राज्यकाल	रत्न	पर्यायान्तर प्राप्ति
१	त्रिपुष्ठ	८० धनुष	८४ लाख वर्ष	२५००० वर्ष	२५००० वर्ष	१००० वर्ष	८३४९००० वर्ष	सातवों नरक	
२	द्विपुष्ठ	७० धनुष	७२ लाख वर्ष	२५००० वर्ष	२५००० वर्ष	१०० वर्ष	७१४९९०० वर्ष	छठा नरक	
३	स्वयम्भू	६० धनुष	६० लाख वर्ष	१२५०० वर्ष	१२५०० वर्ष	९० वर्ष	५९७४९१० वर्ष	छठा नरक	
४	पुरुषोत्तम	५० धनुष	३० लाख वर्ष	७००० वर्ष	१३००० वर्ष	८० वर्ष	२९९७९२० वर्ष	छठा नरक	
५	पुरुषसिंह	४५ धनुष	१० लाख वर्ष	३०० वर्ष	१२५०० वर्ष	७० वर्ष	९९८३८० वर्ष	छठा नरक	
६	पुरुष पुण्डरीक	२९ धनुष	६५००० वर्ष	२५० वर्ष	२५० वर्ष	६० वर्ष	६४४४४० वर्ष	छठा नरक	
७	पुरुषदत्त	२२ धनुष	३२००० वर्ष	२०० वर्ष	५० वर्ष	५० वर्ष	३१७०० वर्ष	पौचवों नरक	
८	नारायण (लक्ष्मण)	१६ धनुष	१२००० वर्ष	१०० वर्ष	३०० वर्ष	४० वर्ष	११५६० वर्ष	चौथा नरक	
९	कृष्ण	१० धनुष	१००० वर्ष	१६ वर्ष	५६ वर्ष	८ वर्ष	९२० वर्ष	तीसरा नरक	

रुद्रोके नाम एव उनके तीर्थ निर्देश—

भीमावलि - जिवसत्, रुद्रो बइसाणलो य सुपइद्रो ।
 अचलो य पुंडरीओ, अजितंधर - अजियणाभी य ॥१४५१॥
 पीठो सञ्चइपुत्तो, अंगधरा तित्थकत्ति - समएसु ।
 रिसहम्मि पढम-रुद्रो, जिदसत्तु होदि अजियसामिम्मि ॥१४५२॥
 सुबिहि - पमुहेसु रुद्रा, सत्तसु सत्त - एकमेण संजावा ।
 संति-जिंरिणवे दसमो, सञ्चइपुत्तो य बीर - तित्थम्मि ॥१४५३॥

अर्थ :—भीमावलि, जितशत्रु, रुद्र, वैश्वानर (विश्वानल), सुप्रतिष्ठ, अचल, पुण्डरीक, अजितन्धर, अजितनाभि, पीठ और सात्यकिपुत्र ये ग्यारह रुद्र अङ्गधर होते हुए, तीर्थकर्ताओंके काल में हुए हैं । इनमेंसे प्रथम रुद्र ऋषभदेवके कालमें और जितशत्रु अजितनाथ स्वामीके कालमें हुआ है । इसके आगे सात रुद्र क्रमशः सुविधिनाथको आदि लेकर सात तीर्थकरोके समयमें हुए हैं । दसवाँ रुद्र शान्तिनाथ तीर्थकरके समयमें और सात्यकि पुत्र बीर जिनेन्द्रके तीर्थमें हुआ है ॥१४५१-१४५३॥

रुद्रोके नरक जानेका कारण—

सञ्जे दसमे पुञ्जे, रुद्रा भड्डा तबाउ विसयत्थं^१ ।
 सम्मत्त - रयण - रहिदा, बुड्ढा घोरेसु णिरएसु ॥१४५४॥

अर्थ :—सब रुद्र दसवे पूर्वका अध्ययन करते समय विषयोके निमित्त तपसे भ्रष्ट होकर सम्यक्त्वरूपी रत्नसे रहित होते हुए घोर नरकोमें डूब गये ॥१४५४॥

रुद्रांका तीर्थ निर्देश—

दो रुद्र सुण्ण छक्का, सग रुद्रा तह य बोण्ण सुण्णाइं ।
 रुद्रो पण्णरसाइं, सुण्णं रुद्रं च चरिमम्मि ॥१४५५॥

(गहृष्टि अगले पृष्ठ ४२२ पर देखिये)

१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	०	०	१	१	१	०	०	१	०	०	१	०	१	०	१	१	१	
२	२	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	२	२	२	२	२	२	०	०	२	०	२	०	२	०	२	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	३	३	३	३	३	०	०	०	०	३	३	३	३	३	०	३	०	३	०	३	०	०
४	४	०	०	०	०	०	४	४	४	४	४	४	०	०	४	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४

अर्थ :—क्रमसः दो रुद्र, छह शून्य, सात रुद्र, दो शून्य, रुद्र, पन्द्रह शून्य और अन्तिम कोठेमें एक रुद्र है । (इसप्रकार रुद्रोंकी सङ्ख्या है सङ्घट्टिमे अंक १ तीर्थकर, अंक २ चक्रवर्तीका, अंक ३ नारायण का, अंक ४ रुद्र का और शून्य अंतरालका सूचक है ।) ॥१४५५॥

नोट :—वर्तमान चौबीसीके तीर्थकालीन प्रसिद्ध पुरुषों [गा० १२६८ से १३०२, १४२६ और १४५५ की मूल सङ्घट्टियो] का विवरण इस तालिका ३६ में निहित है—

(तालिका ३६ पृष्ठ ४२४-४२५ पर देखिये)

रुद्रोंके शरीरका उल्लेख—

पंच-सया पष्णाहिय-चउस्सया इगि - सयं च ञउदी य ।

सीदी सत्तरि सट्टी, पष्णासा अट्टवीसं पि ॥१४५६॥

चउवीस - च्चिय बंडा, भीमावलि-पहुवि-बह-बसकस्स ।

उच्छेहो णिद्धिदो, सग हत्था सच्चइसुअस्स ॥१४५७॥

५०० । ४५० । १०० । ६० । ५० । ७० । ६० । ५० । २८ । २४ । ह ७ ।

अर्थ :—भीमावलि आदि दस रुद्रोके शरीरकी ऊँचाई क्रमशः पाँचसी, चारमी पचास, एकसौ, नब्बे, अस्मी, सत्तर, साठ, पचाम, अट्ठाईस और चौबीस धनुष तथा सात्यकिसुतकी ऊँचाई सात हाथ प्रमाण कही गई है ॥१४५६-१४५७॥

रुद्रोकी आयुका प्रमाण—

तेसीदी इगिहत्तरि, दोण्णि एककं च पुव्व - लक्खाणि ।

चुलसीदि सट्ठि पण्णा, चालिस - वत्साणि लक्खाणि ॥१४५८॥

बीस दस चेव लक्खा, वासा एककूण - सत्तरी कमसो ।

एक्कारस - रुद्दाणं, पमाणमाउत्स णिट्ठि ॥१४५९॥

पु ८३ ल । पु ७१ ल । पु २ ल । पु १ ल । व ८४ ल । व ६० ल । व ५० ल ।

४० ल । व २० ल । व १० ल । ६६ ।

अर्थ :—तेरामी लाख पूर्व, इकहत्तर लाख पूर्व, दो लाख पूर्व, एक लाख पूर्व, चौरामी लाख वर्ष, साठ लाख वर्ष, पचास लाख वर्ष, चालीस लाख वर्ष, बीस लाख वर्ष, दस लाख वर्ष और एक कम सत्तर वर्ष, यह क्रमशः ग्यारह रुद्रोकी आयुका प्रमाण निर्दिष्ट किया गया है ॥१४५८-१४५९॥

रुद्रोके कुमार-काल, मयमकाल और मयमभङ्ग कालका निर्देश—

सचाबीसा लक्खा, छावट्ठि - सहस्सयाणि छच्च सया ।

छावट्ठी पुव्वणि, कुमार - कालो पहिल्लस ॥१४६०॥

। पु २७६६६६६ ।

अर्थ :—प्रथम (भीमावलि) रुद्रका कुमारकाल सत्ताईस लाख छयासठ हजार छहसौ छयासठ पूर्व-प्रमाण है ॥१४६०॥

सचाबीसं लक्खा, छावट्ठि - सहस्सयाणि छच्च सया ।

अव्वसट्ठी पुव्वणि, भीमावलि - संज्जे कालो ॥१४६१॥

। पुव्व २७६६६६६ ।

१. द. ज. य. चालीस वासाणि, व. उ. चालीस वत्साणि, क. चालीस वासादि । २. व. उ.

भीमावलि ।

वर्तमान चौबीसीके प्रसिद्ध पुरुष

क्र०	तीर्थकार	व्यक्तित्वी	वलदेव	नारायण	प्रतिनारायण	रुद्र
१	१ ऋषभ	१ भरत	०	०	०	१ भीमावलि
२	२ अजित	२ सगर	०	०	०	२ जितशत्रु
३	३ सम्भव	०	०	०	०	०
४	४ अभिमानन्द	०	०	०	०	०
५	५ सुमति	०	०	०	०	०
६	६ पद्मप्रभ	०	०	०	०	०
७	७ सुषार्व	०	०	०	०	०
८	८ बान्द्रप्रभ	०	०	०	०	०
९	९ पुष्यदन्त	०	०	०	०	०
१०	१० नीतिल	०	०	०	०	३ रुद्र ४ वैदेवानर
११	११ श्यास	०	१ विजय	१ त्रिपुष्ट	१ अश्वप्रीव	५ सुप्रतिष्ठ
१२	१२ बासुपुत्र्य	०	२ अचल	२ द्विपुष्ट	२ तारक	६ भक्षल
१३	१३ विमल	०	३ धर्म	३ स्वयम्भू	३ मेरक	७ पुण्डरीक
१४	१४ भानस	०	४ सुप्रभ	४ पुष्पोत्तम	४ मधुकूटभ	८ अजितम्बर
१५	१५ धर्म	०	५ सुवर्ण	५ पुष्पातिष्ठ	५ निगुम्भ	९ अजितनाभि

अर्थ :- भीमावलि रुद्रका संयमकाल सत्ताईस लाख छपासठ हजार छहसौ अड़सठ पूर्व-प्रमाण है ॥१४६१॥

सत्ताबीस लबला, छाबट्टि-सहस्स-छस्स-अठमहिया ।

छाबट्टी पुब्बाणि, भीमावलि - भंग - तव - कालो ॥१४६२॥

पुब्ब २७६६६६६

अर्थ :- भीमावलि रुद्रका भङ्ग-तप काल सत्ताईस लाख छपासठ हजार छहसौ छपासठ पूर्व-प्रमाण है ॥१४६२॥

तेबीस पुब्ब - लबला, छाबट्टि-सहस्स-छसय-छाबट्टी ।

जिवसत्तु - कोमारो, तेल्लिय - भेतो य भंग-तव-कालो ॥१४६३॥

। पुब्ब २३६६६६६ । २३६६६६६ ।

अर्थ :- जितशत्रु रुद्रका तेईस लाख छपासठ हजार छहसौ छपासठ पूर्व प्रमाण कुमार-काल और इतना ही भङ्ग-तप काल है ॥१४६३॥

तेबीस पुब्ब - लबला, छाबट्टि-सहस्स-छसय-अडसट्टी ।

संजम - काल - पमाणं, एवं जिवसत्तु - रुहस्स ॥१४६४॥

। पु २३६६६६६६ ।

अर्थ :- जितशत्रु रुद्रके संयमकालका प्रमाण तेईस लाख छपासठ हजार छहसौ अड़सठ पूर्व है ॥१४६४॥

छाबट्टी - सहस्साइं, छाबट्टमहिय - छस्सयाइं पि ।

पुब्बाणं कोमारो, बिणट्टु - कालो य रुहस्स ॥१४६५॥

। पु ६६६६६६ । ६६६६६६ ।

अर्थ :- तृतीय रुद्र नामक रुद्रका कुमारकाल और विनष्ट-सयम काल छपासठ हजार छहसौ छपासठ पूर्व प्रमाण है ॥१४६५॥

छाबट्टि - सहस्साइं, पुब्बाणं छस्सयाणि अडसट्टी ।

संजम - काल - पमाणं, तइल्लज - रुहस्स णिड्डिं ॥१४६६॥

। पु ६६६६६६ ।

अर्थ :- तृतीय रुद्रके समय कालका प्रमाण छघासठ हजार छहसो अड़सठ पूर्व कहा गया है ॥१४६६॥

तेत्तीस - सहस्साणि, पुब्बाणि तिय - सयाणि तेत्तीसं ।

वइसाणरस्स कहिदो, कोमारो भंग - तव - कालो ॥१४६७॥

। पु ३३३३३ । ३३३३३ ।

अर्थ :- वैश्वानर (विश्वानल) का कुमार काल और भङ्ग-तप-काल तैतीस हजार तीनसो तैतीस पूर्व-प्रमाण कहा गया है ॥१४६७॥

तेत्तीस-सहस्साणि, पुब्बाणि तिय - सयाणि चउत्तीसं ।

संयम - समय - पमाणं, वइसाणल - णामघेयस्स ॥१४६८॥

। पु ३३३३४ ।^२

अर्थ :- वैश्वानर (विश्वानल) नामक रुद्रके समय-समयका प्रमाण तैतीस हजार तीनसो चौतीस पूर्व कहा गया है ॥१४६८॥

अट्टावीसं लक्खा, वासाणं सुप्पइट्ठ - कोमारो ।

तेत्थिय - मेथो संजम - कालो - तव - भट्ठ - समयस्स ॥१४६९॥

२८००००० । २८००००० । २८००००० ।

अर्थ :- सुप्रतिष्ठका कुमारकाल अट्टाईस लाख वर्ष है, संयमकाल भी इतना (२८ लाख वर्ष) ही है और तप-भ्रष्ट काल भी इतना (२८ लाख वर्ष) ही कहा गया है ॥१४६९॥

वासाओ बीस-लक्खा, कुमार-कालो य अचल-णामस्स ।

तेत्थिय - मेथो^३ संजम - कालो तव - भट्ठ - कालो य ॥१४७०॥

। २०००००० । २०००००० । २०००००० ।

अर्थ :- अचल नामक रुद्रका कुमारकाल बीस लाख वर्ष, इतना (२० लाख वर्ष) ही संयमकाल और तप-भ्रष्ट-काल भी इतना ही है ॥१४७०॥

वासा सोलस - लक्खा, छाबट्ठि-सहस्स-छ-सय-छाबट्ठो ।

कोमार - भंग - कालो, पत्तोयं पुंडरीयस्स ॥१४७१॥

। १६६६६६६ । १६६६६६६ ।

अर्थ :—पुण्डरीक रुद्रका कुमारकाल और भङ्ग-संयमकाल प्रत्येक सोलह लाख छ्पासठ हजार छहसौ छ्पासठ वर्ष-प्रमाण है ॥१४७१॥

वासा सोलस - लबखा, छाबट्टि-सहस्स-छ-सय-अडसट्टी ।

जिणदिव्ख - गमण - काल - प्पमाणयं पुंडरीयस्स ॥१४७२॥

। १२६६६५५ ।

अर्थ :—पुण्डरीक रुद्रके जिनदीक्षा गमन अर्थात् मयम कालका प्रमाण सोलह लाख छ्पासठ हजार छहसौ अडसठ वर्ष कहा गया है ॥१४७२॥

तेरस - लबखा वासा, तेत्तीस-सहस्स-ति-सय-तेत्तीसा ।

अजियंधर - कोमारो, जिणदिव्खा - भग - कालो य ॥१४७३॥

। १३३३३३३ । १३३३३३३ ।

अर्थ :—अजितन्धर रुद्रका कुमार और जिनदीक्षा-भङ्गकाल प्रत्येक तेरह लाख तैतीस हजार तीनसौ तैतीस वर्ष-प्रमाण कहा गया है ॥१४७३॥

वासा तेरस - लबखा, तेत्तीस-सहस्स-ति-सय-चोत्तीसा ।

अजियंधरस्स एसो, जिणदिव - विक्खग्गहण - कालो ॥१४७४॥

। १३३३३३४ ।

अर्थ :—तेरह लाख तैतीस हजार तीनसौ चौतीस वर्ष, यह अजितन्धर रुद्रका जिनदीक्षा ग्रहण काल है ॥१४७४॥

वासाणं लबखा छह, छासट्टि-सहस्स-छ-सय-छाबट्टी ।

कोमार - भंग - कालो, पत्तेयं अजिय - णाभिस्स ॥१४७५॥

। ६६६६६६ । ६६६६६६ ।

अर्थ :—अजितनामिका कुमार काल और भङ्ग-संयमकाल प्रत्येक छह लाख छ्पासठ हजार छहसौ छ्पासठ वर्ष प्रमाण है ॥१४७५॥

छत्तलबखा वासाणं, छाबट्टि-सहस्स-छ - सय - अडसट्टी ।

जिणरूव - धरिय - कालो, परिमाणो अजियणाभिस्स ॥१४७६॥

। ६६६६६५ ।

अर्थ :—अजितनाभिका जिनदीक्षा धारणकाल छह लाख छधासठ हजार छहसौ अड़सठ वर्ष प्रमाण है ॥१४७६॥

वरिसाणि तिग्णि लक्खा, तेत्तीस-सहस्स-ति-सय-तेत्तीसा ।

कोमार - भट्ट - समय, कमसो पीढाल - रहस्स ॥१४७७॥

। ३३३३३३ । ३३३३३३ ।

अर्थ :—पीढाल (पीठ) रुद्रका कुमार काल और तप-अष्ट काल क्रमशः तीन लाख तैतीस हजार तीनसौ तैतीम वर्ष प्रमाण है ॥१४७७॥

तिय-लक्खाणि वासा, तेत्तीस-सहस्स-ति-सय-चोत्तीसा ।

संजम - काल - पमारणं, णिद्धिं वसम - रहस्स ॥१४७८॥

। ३३३३३४ ।

अर्थ :—दसत्रे (पीठ) रुद्रके समय-कालका प्रमाण तीन लाख तैतीम हजार तीनसौ चौतीस वर्ष निर्दिष्ट किया गया है ॥१४७८॥

सग - वासं कोमारो, संजम - कालो हवेदि चोत्तीसं ।

अडवीस भंग - कालो, एयारसमस्स रहस्स ॥१४७९॥

। ७ । ३४ । २८ ।

अर्थ :—ग्यारहवे (मात्यकिपुत्र) रुद्रका कुमार-काल मात वर्ष, समय काल चौतीम वर्ष और संयम-भङ्ग-काल अट्ठाईस वर्ष प्रमाण है ॥१४७९॥

रुद्रोकी पर्यायान्तर प्राप्ति - -

दो रुद्रा सत्तमए, पंच य छट्ठम्मि पंचमे एक्को ।

दोण्णि चउत्थे पडिवा, एक्करसो तबिय - णिरयम्मि ॥१४८०॥

। रुद्रा-गदा ।

अर्थ :—इन ग्यारह रुद्रोमेसे दो रुद्र सातवे नरकमे, पाँच छठमें, एक पाँचवेमे, दो चौथेमें और अन्तिम (ग्यारहवाँ) रुद्र तीसरे नरकमे गया है ॥१४८०॥

। इसप्रकार रुद्रोका कथन समाप्त हुआ ।

४३०]

तिलोयपण्णती [तालिका . ४०, गाथा : १४८१-१४८२

तालिका : ४०

रुद्रोंका परिचय-गाथा १४५६-१४८०

क्र०	नाम	उत्सव	आयु	कुमारकाल	सयम-काल	सयम भ्रष्टकाल	पर्यायान्तर प्राप्ति
१	भीमावलि	५०० धनुष	८३ लाख पूर्व	२७६६६६६ पूर्व	२७६६६६८ पूर्व	२७६६६६६ पूर्व	सातवाँ नरक
२	जितशत्रु	४५० धनुष	७१ लाख पूर्व	२३६६६६६ पूर्व	२३६६६६८ पूर्व	२३६६६६६ पूर्व	सातवाँ नरक
३	रुद्र	१०० धनुष	२ लाख पूर्व	६६६६६ पूर्व	६६६६८ पूर्व	६६६६६ पूर्व	छठा नरक
४	वैश्वानल	९० धनुष	१ लाख पूर्व	३३३३३ पूर्व	३३३३४ पूर्व	३३३३३ पूर्व	छठा नरक
५	सुप्रतिष्ठ	८० धनुष	८४ लाख वर्ष	२८ लाख वर्ष	२८ लाख वर्ष	२८ लाख वर्ष	छठा नरक
६	अचल	७० धनुष	६० लाख वर्ष	२० लाख वर्ष	२० लाख वर्ष	२० लाख वर्ष	छठा नरक
७	पुण्डरीक	६० धनुष	५० लाख वर्ष	१६६६६६६ वर्ष	१६६६६६८ वर्ष	१६६६६६६ वर्ष	छठा नरक
८	अभितन्धर	५० धनुष	४० लाख वर्ष	१३३३३३३ वर्ष	१३३३३३४ वर्ष	१३३३३३३ वर्ष	पाँचवाँ नरक
९	अजितनाभि	२८ धनुष	२० लाख वर्ष	६६६६६६ वर्ष	६६६६६८ वर्ष	६६६६६६ वर्ष	चौथा नरक
१०	पीठाल पीठ	२४ धनुष	१० लाख वर्ष	३३३३३३ वर्ष	३३३३३४ वर्ष	३३३३३३ वर्ष	चौथा नरक
११	सात्पकिपुत्र	७ हाथ	६९ वर्ष	७ वर्ष	३४ वर्ष	२८ वर्ष	तीसरा नरक

नारदोका निर्देश-

भीम-महभीम-रुद्रा, महरुद्रो दोगिण काल - महकाला ।

दुम्मुह - गिरयमुहाघ्रेमुह - णामा णव य णारदा ।। १४८१ ।।

अर्थ :-भीम, महाभीम, रुद्र, महारुद्र, काल, महाकाल, दुर्मुख, नरकमुख और अधोगुख ये नौ

नारद हुए हैं ।। १४८१ ।।

रुद्रा इव अहरुद्रा, पाव - णिहाणा हवन्ति सब्बे दे ।

कलह - महाजुज्ज - पिया, अधोगया वासुदेव व्व ।। १४८२ ।।

अर्थ :— चद्रोंके सहस्र अतिरिक्त ये सब नारद पापके निधान होते हैं कलह-प्रिय-एवं युद्ध-प्रिय होनेसे वासुदेवोंके समान ही ये भी नरकको प्राप्त हुए हैं ॥१४८२॥

उत्सेह - आउ - तित्थयरदेव - पञ्चकल-भाव-पहुबीसुं ।

एवाण णारबाणं, उबएसो अम्ह उच्छिण्णो ॥१४८३॥

। णारदा गवा ।

अर्थ :— इन नारदोंकी ऊँचाई, आयु और तीर्थकर देवोंके (प्रति) प्रत्यक्ष-भावादिकके विषयमें हमारे लिए उपदेश नष्ट हो चुका है ॥१४८३॥

। नारदोंका कथन समाप्त हुआ ।

कामदेवोंका निर्देश--

कालेसु जिणवराणं, चउवीसाणं हवन्ति चउवीसा ।

ते बाहुबलि - प्पमुहा, कंठप्पा णिरुवमायारा ॥१४८४॥

। कामदेवं गदं ।

अर्थ :— चौबीस तीर्थकरोंके कालमें अनुपम आकृतिके धारक वे बाहुबलि-प्रमुख चौबीस कामदेव होते हैं ॥१४८४॥

॥ कामदेवोंका कथन समाप्त हुआ ॥

१६० महापुरुषोंका मोक्षपद निर्देश--

तित्थयरारो तग्गुरओ, चक्की-बल - केसि - रुह-णारदा ।

अंगज - कुलयर - पुरिसा, भव्वा सिज्जन्ति णियमेण ॥१४८५॥

अर्थ :— तीर्थकर (२४), उनके गुरुजन (माता-पिता २४ + २४), चक्रवर्ती (१२), बलदेव (६), नारायण (६), रुद्र (११), नारद (६), कामदेव (२४) और कुलकर (१४) ये सब (१६०) भव्य पुरुष नियमसे सिद्ध होते हैं ॥१४८५॥

दुषमा कालका प्रवेश एवं उसमें आयु आदिका प्रमाण—

णिग्वाणे बीर - जिणे, वास - तिये अट्ट-भास-पक्खेसुं ।

गइवेसुं पंचमओ, दुस्सम - कालो समत्तियवि ॥१४८६॥

अर्थ :—बीर जिनेन्द्रका निर्वाण होनेके पश्चात् तीन वर्ष, आठ मास और एक पक्ष स्थित हो जाने पर दुःखमाकाल प्रवेश करता है ॥१४८६॥

तप्पहम-पथेसम्मि य, बीसाहिय-इणिसयं पि परमाळ ।

सग - हत्थो उस्सेहो, चराण चउबीस पुट्ट्ठी ॥१४८७॥

भा १२० । ७ । २४ ।

अर्थ :—इस दुःखमाकालके प्रथम प्रवेशमें मनुष्योंकी उत्कृष्ट आयु एक सौ बीस वर्ष, ऊँचाई सात हाथ और पृष्ठ भागकी हड्डियाँ चौबीस होती हैं ॥१४८७॥

गीतमादि अनुबद्ध केवलियोका निर्देश—

जादो सिद्धो बीरो, तद्धिसे गोवमो परम - जाणी ।

जादो तस्सि सिद्धे, सुधम्मसामी तदो जादो ॥१४८८॥

तम्मि कव-कम्म-जासे, जंबूसामि सि केवली जादो ।

तत्थ वि सिद्धि - पवण्णे, केवलियो णत्थि अणुबद्धा ॥१४८९॥

अर्थ :—जिस दिन भगवान् महावीर सिद्ध हुए उसी दिन गीतम-गणधर केवलज्ञानको प्राप्त हुए। पुनः गीतमके सिद्ध होने पर सुधर्मस्वामी केवली हुए। सुधर्मस्वामीके कर्मनाश करने (मुक्त होने) पर जम्बूस्वामी केवली हुए। जम्बूस्वामीके सिद्ध होनेके पश्चात् फिर कोई अनुबद्ध केवली नहीं हुआ ॥१४८८-१४८९॥

गीतमादि अनुबद्ध केवलियोका धर्म-प्रवर्तनकाल—

वासड्डो वासार्णि, गोवम - पट्टबीण णाणचंत्तराणं ।

धम्म - पयट्टण - काले, परिमाणं पिड - ह्वेणं ॥१४९०॥

। व ६२ ।

अर्थ :—गीतमादिक (गीतम गणधर, सुधर्मस्वामी और जम्बूस्वामी) केवलियोंके धर्म-प्रवर्तन-कालका प्रमाण पिण्डरूपसे वासठ वर्ष प्रमाण है ॥१४९०॥

अन्तिम केवली, चारण ऋद्धिधारी, प्रजाप्रमण और अवधिज्ञानी आदिका निरूपण—

कुंडलगिरिम्म चरिमो, केवलजाणीसु सिरिधरो सिद्धो ।

चारणरिसीसु चरिमो, सुपासचंबाभिहाणो य ॥१४९१॥

अर्थ :- केवलज्ञानियोंमें अन्तिम केवलों श्रीधर कुण्डलगिरिसे सिद्ध हुए और चारण-
ऋषियोंमें सुपादर्वचन्द्र नामक ऋषि अन्तिम हुए ॥१४६१॥

पण्य-समणोसु चरिमो, बहरजसो णाम ओहि-जाणोसु ।

चरिमो सिरि - जामो सुब-बिणय-सुतोलावि-संपण्यो ॥१४६२॥

अर्थ :- प्रज्ञाश्रमणोंमें वज्रयश अन्तिम हुए और अवधिज्ञानियोंमें श्रुत, विनय एवं
सुशीलादिसे सम्पन्न श्री नामक ऋषि अन्तमें हुए हैं ॥१४६२॥

मउड-धरेसु चरिमो, जिणदिवसं धरदि चंवगुत्तो य ।

तथो मउडधरा बु - प्यज्जजं णेव गेण्हंति ॥१४६३॥

अर्थ :- मुकुटधरोंमें अन्तिम जिनदीक्षा चन्द्रगुप्तने धारण की । इसके पश्चात् किसी
मुकुटधारीने प्रव्रज्या ग्रहण नहीं की ॥१४६३॥

चौदहपूर्व-धारियोंके नाम एवं उनके कालका प्रमाण—

रांडो य रांडिमित्तो, बिबियो अबराजिदो तइज्जो ब ।

गोवद्धणो चउत्थो, पंचमणो भट्ठाहु त्ति ॥१४६४॥

पंच इमे पुरिसवरा, चौहसपुग्घी जगम्मि विक्खादा ।

ते वारस - अंगधरा, तित्थे सिरिवड्ढमाणस्स ॥१४६५॥

अर्थ :- प्रथम नन्दी, द्वितीय नन्दिमित्र, तृतीय अपरराजित, चतुर्थ गोवर्धन और पञ्चम
भद्रबाहु, इसप्रकार ये पांच पुरुषोत्तम जगमे 'चौदह पूर्वी' इस नामसे विख्यात हुए । वारह अगोंके
धारक ये पाँचों श्रुतकेवली श्रीवर्धमान स्वामीके तीर्थमें हुए हैं ॥१४६४-१४६५॥

पंचाणं मिलिदाणं, काल - पमाणं हवेदि वास-सवं ।

वीदम्मि य पंचमए, भरहे सुद्धकेवली णत्थि ॥१४६६॥

। १०० ।

। चौहसपुग्घी गदा ।

१. द. ब. क. ज. य. उ. णाणस्स । २. इ. षण्दि । ३. द. ब. क. ज. य. उ. दो । ४. द. ब.
उ. अबराजिदं तइ जाइ, क. अबराजिद तइ जाया, य. अबराजिद तइज्जाया । ५. द. ब. क. ज. य.
उ. वीरम्मि ।

अर्थ :—इन पाँचों श्रुतकेवलियोंका सम्पूर्ण काल मिला देनेपर ती बर्ष होता है । पाँचवें श्रुतकेबलीके पश्चात् भरतक्षेत्रमें फिर कोई श्रुतकेबली नहीं हुआ ॥१४६६॥

। चौदह पूर्वधारियोंका कथन समाप्त हुआ ।

दसपूर्वधारी एवं उनका काल—

पदभो विसाहृषामो, पोट्टित्तो खचिभो जभो ख्यागो ।

सिद्धत्थो चिद्विसेणो, विज्जओ बुद्धित्त - गंगदेवा य ॥१४६७॥

एक्करसो य सुघम्मो, दसपुब्बधरा इमे सुविक्खावा ।

पारंपरिओवगदो', तेसीदि सयं च ताण वासाणि ॥१४६८॥

। १८३ ।

अर्थ :— (प्रथम) विशाख, प्रोष्ठिल, क्षत्रिय, जय, नाग, सिद्धार्थ, धृतिवेषण, विजय, बुद्धिल, गङ्गदेव और सुघर्म, ये ग्यारह आचार्य दस पूर्वधारी विख्यात हुए हैं । परम्परासे प्राप्त इन सबका काल एकसौ तेरासो वर्ष प्रमाण है ॥१४६७-१४६८॥

सब्बेसु वि काल - बसा, तेसु अबीवेसु भरह - खेत्तम्मि ।

वियसंत-भव्व-कमला', ण संति दसपुट्ठि - विवसयर ॥१४६९॥

। दसपुब्बी गवा ।

अर्थ :—कालके वश उन सब श्रुतकेवलियोंके अतीत हो जाने पर भरतक्षेत्रमें भव्यरूपी कमलोंको विकसित करने वाले दस पूर्वधररूप सूर्य फिर नहीं (उदित) रहे ॥१४६९॥

। दसपूर्वियोंका कथन समाप्त हुआ ।

ग्यारह-अङ्गधारी एव उनका काल—

अक्खत्तो जयपालो, पंडुय^३- धुवसेण - कंस- आइरिया ।

एक्कारसंगधारी, पंच इमे वीर - तित्थम्मि ॥१५००॥

अर्थ :—नक्षत्र, जयपाल, पाण्डु, ध्रुवसेन और कंस, ये पाँच आचार्य वीर जिनेन्द्रके तीर्थमें ग्यारह अङ्गके धारी हुए हैं ॥१५००॥

१. ब. क. ज. य. उ. पारंपरिओवगमदो । २. ब. उ. कमलाणि । ३. व. पट्टमधुत्थेण, ब. उ. पट्ट-सधुत्थेण, क. ज. य. पट्ट मधुवसेण ।

दोणि सया बीस-जुदा, बासाणं ताण पिड - परिमाणं ।

तेसु अदीदे नत्थि हु, भरहे एक्कारसंगधरा ॥१५०१॥

। २२० ।

। एक्कारसंगं गवं ।

अर्थ :—इनके कालका प्रमाण पिण्डरूपसे दो सौ बीस वर्ष है । इनके स्वर्गस्थ होनेपर फिर भरतक्षेत्रमें कोई ग्यारह अंगोका धारक भी नहीं रहा ॥१५०१॥

। ग्यारह अंगोंके धारकोंका कथन समाप्त हुआ ।

आचाराङ्गधारी एवं उनका काल —

पढमो सुभद्दसामो, जसभद्दो तह य होदि जसबाह ।

तुरिमो य 'लोह - णामो, एदे आयार - अंगधरा ॥१५०२॥

अर्थ :—प्रथम सुभद्र फिर यशोभद्र, यशोबाहु और चतुर्थ लोहार्य, ये चार आचार्य आचाराङ्गके धारक हुए हैं ॥१५०२॥

तेसेक्करसंगणं^१, चौदस - पुण्वाणमेक्कवेसधरा ।

एक्कसयं अट्टारस - वास - जुदं ताण परिमाणं ॥१५०३॥

। ११८ ।

। आचारंगं गवं ।

अर्थ :—उक्त चारो आचार्य आचाराङ्गके अतिरिक्त शेष ग्यारह अङ्गों और चौदह पूर्वोंके एकदेशके धारक थे । इनके कालका प्रमाण एकसौ अठारह वर्ष है ॥१५०३॥

। आचाराङ्ग-प्रारियोका वर्णन समाप्त हुआ ।

गीतम गणधरसे लोहार्य पर्यन्तका सम्मिलित काल प्रमाण—

तेसु अदीबेसु तवा, आचारधरा ण होत्ति भरहम्मि ।

गोबन्ध - जुणि - पद्दुदीणं, बासाणं छस्तयाणि तेसीदी ॥१५०४॥

। १८३ ।

अर्थ :—इनके स्वर्गस्थ होनेपर भरतदोत्रमें फिर कोई आचाराङ्ग-ज्ञानके धारक नहीं हुए हैं। गौतम मुनिको आदि लेकर (आचार्य लोहार्य पर्यन्तके) सम्पूर्ण कालका प्रमाण छह सौ तेरसौ वर्ष होता है ॥१५०४॥

श्रुततीर्थके नष्ट होनेका समय—

बीस-सहस्रं ति - सदा, सत्तारह बच्छराणि सुद-तित्थं ।

धम्म - पयट्ठण - हेतू, वोच्छिस्सदि काल - बोसेण ॥१५०५॥

। २०३१७ ।

अर्थ :—काल दोषसे धर्मप्रवर्तनके कारणभूत श्रुततीर्थका बीस हजार तीनसौ सत्तरह वर्षों बाद व्युच्छेद हो जावेगा ॥१५०५॥

विशेषार्थ :—दुःपमा नामक पचमकाल २१००० वर्षका है, जिसमे ६८३ वर्ष पर्यन्त आचाराङ्गादि श्रुतकी धारा क्रमशः क्षीण होती हुई प्रवाहित होती रही। पश्चात् (२१०००—६८३=) २०३१७ वर्ष पर्यन्त श्रुततीर्थका प्रवाह हीयमान रूपसे प्रवाहित होता रहेगा, तत्पश्चात् धर्मप्रवर्तन करने वाले इस श्रुततीर्थका सर्वथा व्युच्छेद हो जावेगा।

नातुर्वर्ण्यं सघका अस्तित्व काल—

तेत्थिय - मेत्ते काले, जम्मिस्सदि चाउवण्ण - संघावो ।

अविणीवो दुम्भेघो^१, असूयको तह य पाएणं ॥१५०६॥

सत्त-भय-अड-मदो^२हि, संजुत्तो^३ सत्त - गारव^३- तएहिं ।

कलह - पियो^४ रागिट्ठो, कूरो कोहाल्लुओ^५ लोओ^६ ॥१५०७॥

। सुवित्तिस्व-कहणं समत्तं ।

अर्थ :—इतने मात्र समय पर्यन्त चातुर्वर्ण्यं सङ्घ जन्म लेता रहेगा। किन्तु लोक प्रायः अविनीत, दुबुद्धि, असूयक (ईर्ष्यालु), सात भयों, आठ मदों, तीन शल्यो एव तीन गारवों सहित, कलहप्रिय, रागिष्ठ, क्रूर एवं क्रोधी होगा ॥१५०६-१५०७॥

। श्रुततीर्थका कथन समाप्त हुआ ।

१. द. ब. क. ज. य. उ. दुम्भेघा । २. द. ब. क. ज. य. उ. संजुत्ता । ३. द. गारवदे एहिं, ब. क. ज. उ. गारववरे एहिं । ४. ब. उ. रामट्ठो । ५. द. ब. क. उ. कोहाल्लुओ, ज. य. कोहाविघो । ६. ब. ब. क. ज. य. उ. लोहो ।

शक राजाकी उत्पत्तिका समय—

बीर-जिणे^१ सिद्धि-गढे, षड-सय-इगिसद्धि-वास-परिभाणे^२ ।

कालम्मि अदिक्कंते^३, उप्पण्णो एत्थ सक - राम्रो ॥१५०८॥

। ४६१ ।

अर्थ :—बीर जिनेन्द्रके मुक्ति प्राप्त होनेके चारमो इकसठ वर्ष प्रमाण कालके व्यतीत होनेपर यहाँ शक राजा उत्पन्न हुआ ॥१५०८॥

अहवा बीरे सिद्धे, सहस्स - णवकम्मि सग-सयवभहिए ।

पणसीदिम्मि यतीदे, पणभासे सक - णिओ^४ अहवा ॥१५०९॥

९७८५ मास ५

पाठान्तरम् ।

अर्थ :—अथवा, बीरभगवान्के सिद्ध होनेके नौ हजार सातसो पचामो वर्ष और पाँच मास व्यतीत हो जानेपर शक नृप उत्पन्न हुआ ॥१५०९॥

पाठान्तर ।

चोहस-सहस्स-सग-सय-त्ते णववी-वास - काल - विच्छेदे ।

बीरेसर^५ - सिद्धीबो, उप्पण्णो सग - णिओ अहवा ॥१५१०॥

। १४७९३ ।

पाठान्तरम् ।

अर्थ :—अथवा, बीर भगवान्की मुक्तिके चौदह हजार सातसो तेरानवें वर्ष व्यतीत हो जानेपर शक नृप उत्पन्न हुआ ॥१५१०॥

पाठान्तर ।

जिण्वाणे बीरजिणे, छुवास - सवेसु पंच - बरिसेसु^६ ।

पण - मासेसु गवेसु^७, संजाबो सग - णिओ अहवा ॥१५११॥

। ६०५ मा ५ ।

पाठान्तरम् ।

१ द. व. क. ज. उ. जिणं । २. द. व. उ. परिमासो । ३ द. ज. अदिक्कंती । ४. द. व. क. व. उ. सकनिवजादा । ५. द. क. व. बीरेसरस्त ।

अर्थ :—अथवा, वीर भगवान्के निर्वाण जानेके छहसी पाँच वर्ष और पाँच मास ब्यतीत हो जानेपर शक नृप उत्पन्न हुआ ॥१५११॥

पाठान्तर ।

भ्रायुकी क्षय-वृद्धि एवं शक नृपके समयकी उत्कृष्ट-आयु निकालनेका विधान—

बीसुत्तर - बास - सबे, बीसदि बासाणि सोहिऊण तवो ।

इगिबीस - सहस्सेहि, भजिबे आऊण खय - बड्ढो ॥१५१२॥

$$\left| \begin{array}{c} १ \\ २१० \end{array} \right|'$$

अर्थ :—एकसी बीस वर्षोंमेंसे बीस वर्ष घटा देनेपर जो शेष रहे, उसमें इक्कीस हजारका भाग देनेपर भ्रायुकी क्षय-वृद्धिका प्रमाण आता है ॥१५१२॥

गथा :—(१२० — २०) ÷ २१००० वर्ष = ३३ वर्ष हानि-वृद्धिका प्रमाण । अर्थात् भ्रायुका प्रतिदिन की हानि-वृद्धि का प्रमाण ६ मिनट ५२ सेकेण्ड है ।

सक-जिव-वास-जुवाणं, अउ-सब-इगिसट्ठि-वास-यहुदीणं ।

बस-जुब-वो-सय-भजिबे, सट्ठं सोहेज्ज विगुण - सट्ठीए ॥१५१३॥

तस्सिं अं अक्सेसं, तच्छेव पयट्टुमाण - जेट्ठाऊ ।

पाठंतरेसु^३ एसा, जुत्ती सव्वेसु पत्तेक्कं ॥१५१४॥

अर्थ :—शक नृपके वर्षों सहित चारसी इकसठ आदि वर्षोंकी दोसी दससे भाजित करे, जो सब्ब प्राप्त हो उसे एकसी बीसमेंसे कम करने पर जो अवशिष्ट रहे उतना उसके समयमें प्रवर्तमान उत्कृष्ट भ्रायुका प्रमाण था । यह युक्ति एतत् सम्बन्धी पाठान्तरोंमेंसे प्रत्येकके समयमें भी जानना चाहिए ॥१५१३-१५१४॥

विशेषार्थ :—प्रकारान्तरोंसे शक नृप वीर-निर्वाणके ४६१ वर्ष, या ६७८५^३ वर्ष, या १४७९३ वर्ष या ६०५^३ वर्ष पश्चात् उत्पन्न हुआ और उस (शकों) का राज्य २४२ वर्ष पर्यन्त रहा अतः प्रत्येक शक राज्यके अन्तमें उत्कृष्ट भ्रायुका प्रमाण इसप्रकार जानना चाहिए—

$$(१) १२० — \{ (४६१ + २४२) \div २१० \} = ११६३^३ वर्ष इस शक राज्यके अन्तमें उत्कृष्टायु ।$$

१. द. २१०, व. क. व. य. उ. २१००० । २. द. व. उ. तिस्रज्जं । ३. द. व. क. व. य. :

- (२) १२० — { (६७८५६२ + २४२) ÷ २१० } = ७२३६३ वर्ष उल्कृष्टायु ।
 (३) १२० — { (१४७६३ + २४२) ÷ २१० } = ४८३३ वर्ष उल्कृष्टायु ।
 (४) १२० — { (६०५६३ + २४२) ÷ २१० } = ११५३३ वर्ष उल्कृष्टायु ।

शकराजाकी उत्पत्ति एवं उसके वंशका राज्यकाल—

गिण्वाण - गवे बीरे, चउ-सय-इगिसट्टि-बास-विष्णवे ।

जावो य सग - णरिदो, रउजं बंसस्स^१ 'हु-सय-बाबाला ॥१५१५॥

। ४६१ । २४२ ।

अर्थ :- वीर जिनेन्द्रके निर्वाणके चारसौ इकसठ वर्ष बीत जाने पर शक तरेन्द्र उत्पन्न हुआ । इस वंशके राज्यकालका प्रमाण दोसौ बयालीस वर्ष है ॥१५१५॥

गुप्तोका और चतुर्मुखका राज्यकाल—

दोण्णि सया पणवण्णा, गुत्ताणं^३ चउमुहस्स बाबालं ।

सव्वं होदि सहस्सं, केई एणं पक्खेति ॥१५१६॥

। २५५ । ४२ ।

अर्थ :- गुप्तोके राज्यकालका प्रमाण दो सौ पचपन वर्ष और चतुर्मुखके राज्यका प्रमाण बयालीस वर्ष है, इन सबको मिलाने पर (४६१ + २४२ + २५५ + ४२ =) १००० (एक हजार) वर्ष होते हैं, कितने ही आचार्य ऐसा भी निरूपण करते हैं ॥१५१६॥

पालक नामक अवन्तिसुतका राज्याभिषेक—

अबकाले^५ वीरजिणो, जिस्सेयस - संपयं समावण्णो ।

तवकाले अभिसित्तो, पालय - णामो अबंतिसुवो ॥१५१७॥

अर्थ :- जिस कालमें वीर जिनेन्द्रने निःश्रेयस-सम्पदाको प्राप्त किया था, उसी समय पालक नामक अवन्तिसुतका राज्याभिषेक हुआ ॥१५१७॥

पालक, विजय एवं मुरण्डवशी तथा पुष्यमित्रका राज्यकाल—

पालक-रउजं सट्ठीं, इगि-सय-यणवण्ण विजय-वंसभवा ।

आलं मुहंड^६ - बंसा, तीसं बस्साणि पुत्तमित्तम्मि ॥१५१८॥

६० । १५५ । ४० । ३० ।

१. व. व. क. व. य. उ. वस्सस्स । २. व. हुय । ३. व. जुत्ताणं । ४. व. व. व. य. उ. वं कारे, क. वं काले । ५. व. बुषय, व. य. पुषय ।

अर्थ :- (अबन्ति पुत्र) पालकका राज्य साठ वर्ष, विजय वंशियोका एकसौ पचपन वर्ष, मुरुण्ड-वंशियोंका चालीस वर्ष और पुष्यमित्रका राज्य तीस वर्ष पर्यन्त रहा।। १५१८।।

वसुमित्र-अग्निमित्र, गन्धर्व, नरवाहन, भृत्यवंश और गुप्तवंशियो का राज्यकाल-

वसुमित्र - अग्निमित्रो, सड़ी गधन्वया वि सयमेक्क।

नरवाहणो य चालं, ततो भृत्यद्वणा जादा।। १५१९।।

६०। १००। ४०।

अर्थ :- इसके पश्चात् वसुमित्र-अग्निमित्र साठ वर्ष, गन्धर्व सौ वर्ष और नरवाहन चालीस वर्ष पर्यन्त राज्य करते रहे। पश्चात् भृत्यवंशकी उत्पत्ति हुई।। १५१९।।

भृत्यद्वणाण कालो, दोण्णि सयाइं हवन्ति बादाला।

ततो गुत्ता ताण, रज्जे दोण्णि य सयाणि१ इगितोसा।। १५२०।।

। २४२। २३१।

अर्थ :- इन भृत्य (कुषाण) वंशियोका काल दो सौ बयालीस वर्ष है, इसके पश्चात् फिर गुप्तवंशी हुए जिनके राज्यकालका प्रमाण दोसौ इकतीस वर्ष पर्यन्त रहा है।। १५२०।।

कल्कीकी आयु एव उसका राज्यकाल-

ततो कक्की जादो, इदपुरे तस्स चउमुहो - णामो।

सत्तरि वरिसा आऊ, बिगुणिय - इगिवीस-रज्ज २ च।। १५२१।।

। ७०। ४२।

अर्थ :- फिर इसके पश्चात् इन्द्रपुर में कल्की उत्पन्न हुआ। इसका नाम चतुर्मुख, आयु सत्तर वर्ष एवं राज्यकाल बयालीस वर्ष प्रमाण रहा।। १५२१।।

विशेषार्थ : (१) पालक का राज्यकाल ६० वर्ष, (२) विजय वंश का १५५ वर्ष, (३) मुरुण्ड वंश का ४० वर्ष, (४) पुष्यमित्र का ३० वर्ष, (५) वसुमित्र + अग्निमित्र का ६० वर्ष, (६) गन्धर्व का १०० वर्ष, (७) नरवाहन का ४० वर्ष, (८) भृत्य कुषाण वंश का २४२ वर्ष, (९) गुप्तवंश का २३१ वर्ष और चतुर्मुख का ४२ इस प्रकार-

६० + १५५ + ४० + ३० + ६० + १०० + ४० + १४२ + २३१ + ४२ = १००० वर्ष

कल्की का पट्टबन्ध-

आयारंग - धरदो, पणहत्तरि - जुत्त दु-सय - वासेसुं।

बोलीणेषु बद्धो, पट्टो कक्किस्स णर - वइणो।। १५२२।।

अर्थ :—आचारारङ्गघरोंके पश्चात् दोसी पञ्चत्तर वर्षोंके ब्यतीत हो जाने पर नरपतिको पट्ट बाँधा गया था ॥१५२२॥

। ६८३ + २७५ + ४२ = १००० वर्ष ।

दिग्गम्बर मुनिराजों पर शुल्क (टेक्स) एव उन्हें अवधिज्ञान—

अह साहिऊण कक्की, णिय - जोग्गे^१ जणपदे पयसोण ।

सुक्कं जावदि सुद्धो, पिडग्गं^२ जाव समणाओ ॥१५२३॥

अर्थ :—तदनन्तर वह कल्की प्रयत्न-पूर्वक अपने योग्य जनपदोंको सिद्ध करके लोभको प्राप्त होता हुआ मुनिराजोंके आहारमेसे भी अग्र-पिण्ड (प्रथम भाग) को शुल्क (कर) स्वरूप मागने लगा ॥१५२३॥

दावूणं पिडग्गं, समणा कावूण अंतरायं पि ।

गच्छति ओहिणाणं, उप्पज्जवि तेषु एवकस्सि^३ ॥१५२४॥

अर्थ :—तब श्रमण (मुनि) अग्रपिण्ड देकर श्रीर अन्तराय करके [निराहार] चले जाते हैं । उस समय उनमेसे किसी एक श्रमण को अवधिज्ञान उत्पन्न होता है ॥१५२४॥

कल्कीकी मृत्यु एव उसके पुत्रको राज्य पद—

अह को वि असुरदेवो^४, ओहीवो मुण्णि-गणाण उवसग्गं ।

णावूणं तं कक्कि, मारेदि हु धम्मदोहि ति ॥१५२५॥

अर्थ :—इसके पश्चात् कोई अमुरदेव अवधिज्ञानसे मुनिगणोंके उपसर्गको जानकर एवं उस कल्कीको धर्म-द्रोही मानकर मार डालता है ॥१५२५॥

कक्कि-सुवो^५ अजिदंजय-आओ रक्ख ति एमदि तच्छरणे ।

तं रक्खदि असुरदेओ, धम्मो रज्जं करेज्ज ति ॥१५२६॥

अर्थ :—तब अजितञ्जय नामक उस कल्कीका पुत्र 'रक्षा करो' इस प्रकार कहकर उस देवके चरणोंमे नमस्कार करता है और वह देव 'धर्म पूर्वक राज्य करो' इस प्रकार कहकर उसकी रक्षा करता है ॥१५२६॥

१. व. क. ज. य. उ. जोगो । २. व. व. क. ज. उ. जातदि । ३. व. व. क. ज. व. उ. पिक्कं ।

४. व. व. क. ज. य. उ. एकंवि । ५. व. व. क. ख. उ. असुरदेवा । ६. व. व. क. ज. य. उ. अधिधम्मसामो ।

धर्म प्रवृत्तिमें हानि—

तप्तो थोबे वासे^१, समद्वम्मो पयट्टुवि अणानं ।

कमसो विवसे विवसे, काल - महप्पेण हाएवे ॥१५२७॥

अर्थ :—इसके पश्चात् कुछ वर्षों तक लोगोंमें समीचीन धर्मकी प्रवृत्ति रहती है । फिर क्रमशः कालके माहात्म्यसे वह प्रतिदिन हीन होता जाती है ॥१५२७॥

कल्की एवं उपकल्कियोंका समय एवं प्रमाण—

एवं वस्स - सहस्से, पुह - पुह कक्की हवेदि एक्केक्को ।

पंच - सय - वच्छरेसु^२, एक्केक्को तह य उच्चकक्की ॥१५२८॥

अर्थ :—इसप्रकार एक-एक हजार वर्षोंके पश्चात् पृथक्-पृथक् एक-एक कल्की तथा पाँच-पाँचसौ वर्षोंके पश्चात् एक-एक उपकल्की होता है ॥१५२८॥

पञ्चम कालके दुष्प्रभावोंका संक्षिप्त निर्देश प्रत्येक कल्कीके समय साधुको भ्रवधिज्ञान एवं चातुर्वर्ण्य संघका प्रमाण—

कंठिक पडि एक्केक्के, वुस्सम - साहुस्स ओहिणानं पि ।

संघा य चाहुवण्णा, थोबा जावति तक्काले ॥१५२९॥

अर्थ :—प्रत्येक कल्कीके प्रति दुःखमाकालवर्ती एक-एक साधुको भ्रवधिज्ञान होता है और उसके समयमें चातुर्वर्ण्य संघ भी अल्प हो जाते हैं ॥१५२९॥

नाना प्रकारके उपसर्ग—

वुसमम्मी ओसहिओ, जायते नीरसाओ सव्वाओ ।

बहु - वाओ चोर-राउल अरि - मारी घोर - उच्चगगा ॥१५३०॥

अर्थ :—दुःखम काल (के प्रारम्भ) में सभी शीघ्रियों (वनस्पतियाँ) नीरस हो जाती हैं तथा चोर, राजकुल, सन्, मारी आदि अनेक प्रकारके घोर उपसर्ग होने लगते हैं ॥१५३०॥

दुःख प्राप्तिका कारण—

इन्द्रवजा—

सीलेज सउजेण बलेज बोहुप्पसीए तेएण कुलक्कमेरं ।

इच्छेवमादीहि गुणेहि मुक्का, सेवति विच्छं व सुहं सहेति ॥१५३१॥

अर्थ :—इस कालमे मनुष्य कुल क्रमागत शील, सत्य, बल, तेज तथा यथार्थ ज्ञान आदि गुणोंसे हीन पुरुषोंकी सेवा करते हैं अतः सुख प्राप्त नहीं करते ॥१५३१॥

उच्चकुलको भी दूषित करना—

मिच्छस्त-मोहे विसमन्नि तसो, मायाए भीवीए णरा य णारी ।

मज्जाद-लज्जादि ण ते गणंते, गोत्ताइ तुंगाइ बिडूसयंते ॥१५३२॥

अर्थ :—इस विषय कालमे मिथ्यात्व और मोहमें प्रस्त नर-नारी माया एवं भयके कारण मर्यादा और लज्जा को भी नहीं गिनते हैं और इसी कारणसे वे अपने उच्चगोत्र को भी दूषित करते हैं ॥१५३२॥

असहिष्णुताकी मूर्ति—

रागेण दंभेण मदोदयेण, संजुस्त - चिंता विषयेण होणा ।

कोहेण लोहेण किलिस्समाणा, कीवाणवा होंति असूय-काया ॥१५३३॥

अर्थ :—इस कालमे विनयसे हीन एव चिन्तासे युक्त मनुष्य राग, दम्भ, मद, क्रोध एवं लोभसे क्लेशित होते हुए निर्दयता एव ईर्ष्या की ही मूर्ति होते हैं ॥१५३३॥

चारित्र्यका परित्याग—

संगेण णाणाविह - संकिलेणुं, बेगेण घोरेण परिग्गहेणं ।

अच्चंत-मोहेण व मज्जमाणा, चरित्त-मुञ्जंति मदेण केई ॥१५३४॥

अर्थ :—परिग्रहकी तोत्र आसक्तिसे तथा अत्यन्त मोहसे एव मदके वेगसे अनेक प्रकारके संकल्पोंमें डूबते हुए कितने ही जीव चारित्र्यको छोड़ देते हैं ॥१५३४॥

उत्प्रेथ एव आयु आदिकी हीनता—

उच्छेहमाऊ-बल-वीरियादि, सव्वं पि हाएदि कमेण ताणं ।

पायेण जीवंति विवेक-हीणा, सेयं णसेयं ण विचारयंति ॥१५३५॥

अर्थ :—इस दुष्यमाकालमे मनुष्योंका उत्प्रेथ, आयु, बल एव वीर्य आदि सभी क्रमशः हीन-हीन होते जाते हैं तथा विवेकहीन प्राणी श्रेय-अश्रेयका विचार नहीं करते हैं और पापसे ही जीते हैं । अर्थात् पापाचरण करते हुए ही जीवन यापन करते हैं ॥१५३५॥

कुल हीन राजा—

अणाण-जुत्ता कुल-हीण-राजा, पालंति भूमि परदार-रत्ता ।

सव्वेण वन्नेण विमुञ्चमाणा, कालस्स दोसेण य दुस्समस्स ॥१५३६॥

अर्थ :—दुःखमा कालके दोषसे सभी धर्मोंका परित्याग करते हुए अज्ञान युक्त, परदारारसक्त और कुल-हीन राजा प्रजाका पालन करते हैं ॥१५३६॥

देवादिकोंके आनेका निषेध—

असौ चारण - मुनिगो, देवा बिन्धाहरा य जायति ।

संजम - गुणाहियारणं, मणुयाण बिराम दोषेण ॥१५३७॥

अर्थ :—इस दुःखमाकालमें संयम-गुणसे विशिष्ट मनुष्योंके बिराम दोष (उनके अभाव) के कारण चारणान्कद्विधारी मुनि, देव और विद्याधर भी नहीं आते हैं ॥१५३७॥

जनपदमें उत्पन्न होने वाली बाधाएँ—

अइबिद्धि - अणाबिद्धि, तक्खर-परचक्क-सलभ-पहुवीहि ।

सठ्वाण जणपदानं, बाधा उत्पज्जदे बिसमा ॥१५३८॥

अर्थ :—(इस दुःखमा-कालमें) अतिवृष्टि, अनावृष्टि, चोर, परचक्र (शत्रु) एवं (खेतमें हानि पहुँचाने वाले) कीड़ों आदिसे सभी जनपदोंके लिए विषम बाधा उत्पन्न होती जाती है ॥१५३८॥

पापी-प्रभृति मनुष्योंकी बहलता—

चंडाल-सबर-पाणा, पुंसिब-भाहल-चिलाद' - पहुवीओ ।

दीसंति णरा बहवा, पुब्ब - णिबद्धेहि पावेहि ॥१५३९॥

दीणाभाहा कूरा, पाणाविह - बाहि - वेयसा - जत्ता ।

सप्पर - करंक - हत्था, देसंतर - गमेण संत्ता ॥१५४०॥

अर्थ :—उस समय पूर्वमें बांधे हुए पापोंके उदयसे चण्डाल, शबर, श्वपच, पुलिन्द, लाहल (म्लेच्छ विशेष) और किरात आदि; दीन, अनाथ, क्रूर और नाना प्रकारकी व्याधि एवं वेदनासे युक्त; हाथोंमें सप्पर तथा भिक्षापात्र लिए हुए और देशान्तर-गमनसे सन्तप्त बहुतेसे मनुष्य दिखते हैं ॥१५३९-१५४०॥

अन्तिम कल्की एवं अन्तिम चतुर्विधसंघका निर्देश—

एवं बुस्सम - काले, हीयंते धम्म - आउ - उदयादी ।

अंते बिसम - सहाओ, उत्पज्जवि एकवीससो कक्की ॥१५४१॥

अर्थ १—इसप्रकार बुधमा-कालमें धर्म, आयु धीर ऊँचाई आदि कम होती जाती है. पश्चात् (कालके) अन्तमें विषम स्वभाववाला (जलमन्थन नामक) इन्कीसर्वा कल्की उत्पन्न होता है ॥१५४१॥

वीरंगजाभिषाणो,^१ तबकाले मुणिवरो भजे एक्को ।

सम्बसिरी तह बिरवी, साबय-जुग-मग्गिलोत्ति^२-पंगुसिरी ॥१५४२॥

अर्थ—उस कल्कीके समयमें वीराङ्गज नामक एक मुनि, सर्वश्री नामकी आर्यिका तथा अग्निज और पंगुश्री नामक श्रावक युगल (श्रावक-श्राविका) होते हैं ॥१५४२॥

कल्की राजा एवं मन्त्री की वार्ता—

आणाए कविकणिओ, रिणय-जोग्गे साहिऊण जणपदए ।

सो कोइ णत्थि मणुओ, जो मम एण वसत्ति^३ मत्तिवरे ॥१५४३॥

अर्थ—वह कल्की आज्ञासे अपने योग्य जनपदोंको सिद्ध (जीत) कर कहता है कि हे मन्त्रिवर ! ऐसा कोई पुरुष तो नहीं है जो मेरे वशमें (आधीन) न हो ? ॥१५४३॥

अह विष्णविति मंती, सामिय^४ एक्को मुणी वसो णत्थि ।

तत्तो भणेवि कवकी, कहह रिसी^५ केरिसायारो ॥१५४४॥

सच्चिवा^६ चर्चति सामिय, सयल-अहिंसाववाण आघारो ।

संती विमोक्क - संगो, तणुद्दाण - कारणेण मुणी ॥१५४५॥

पर - घर^७ - दुवारएसुं, मज्झण्हे काय-वरिसणं किञ्चा ।

पासुयमसणं^८ भुज्जदि, पाणिपुडे दिग्ग^९ - परिहीणं ॥१५४६॥

अर्थ—तब मन्त्री निवेदन करते हैं कि हे स्वामिन् ! एक मुनि आपके वशमें नहीं है । तब कल्की कहता है कि कहो उस ऋषिका कैसा स्वरूप है ? तब सचिव (मन्त्री) कहते हैं कि हे स्वामिन् ! सकल-अहिंसाव्रतोंका आधारभूत वह मुनि परिग्रहसे रहित होता हुआ शरीरकी स्थिति (आहारके) निमित्त दूसरोंके घर-द्वारों पर शरीरको दिखाकर मध्याह्न-कालमें अपने हस्तपुटमें विष्ण-रहित प्रासुक आहार ग्रहण करता है ॥१५४४-१५४६॥

१. द. व. ज. उ. भिषाणा । २. द. व. मग्गिलोत्ति. क. ज. य. उ. मग्गिलोत्ति । ३. द. मत्तिपुरो, व. क. ज. य. उ. मत्तिपुरे । ४. द. व. क. ज. य. सामय । ५. द. व. ज. य. केविघाणो, व. क. उ. केविलीघाणो । ६. द. व. क. ज. य. उ. सच्चिवा । ७. द. व. क. ज. य. उ. तणुद्दाण । ८. द. व. क. ज. य. उ. पर । ९. द. व. य. मसणं हि, व. क. उ. मसणं हि । १०. द. व. क. ज. य. उ. विष्णु ।

कल्की द्वारा मुनिराजसे शुल्क ग्रहण, उन्हे अवधिज्ञानकी प्राप्ति एवं
सघको कालावसानका संकेत—

सोदूषण मंति - वयणं, भणोदि कक्को अहिंसवदधारी ।
कहि^१ सो वच्चवि पावो, अण्पं जो^२ हणदि सव्वभंगीहि ॥१५४७॥
तं तस्स अग्ग - पिडं, सुक्कं^३ गेण्हेह अण्प - घाविस्स ।
अह जाचिवन्निह पिडे, वादूणं मुणिवरो तुरिदं ॥१५४८॥
कादूणमंतरायं, गच्छदि पावेदि ओहिणाणं पि ।
हक्कारिय अगिगलयं, पंगुसिरो - विरदि - सव्वसिरो^४ ॥१५४९॥
भासइ पसण्ण-हिवओ, दुस्सम - कालस्स जादमवसाणं ।
तुम्हन्हे^५ ति - दिणमाऊ, एसो अवसाण - कक्को हु ॥१५५०॥

अर्थ :—इस प्रकार मन्त्रीके वचन सुनकर वह कल्की कहता है कि—सब प्रकारसे जो अपनी आत्माका घात करता है ऐसा वह अहिंसाव्रतधारी पापी कहा जाता है ? सो कहो और उस आत्म-घाती मुनिका प्रथम पिण्ड शुल्क रूपमें ग्रहण करो । तत्पश्चात् (कल्कीकी आज्ञानुसार) प्रथम पिण्ड (ग्रास) मागे जानेपर मुनीन्द्र तुरन्त ग्राम देकर एव अन्तराय करके वापिस चले जाते हैं तथा अवधि-ज्ञान भी प्राप्त कर लेते हैं । उस समय वे मुनीन्द्र अग्नि ल श्रावक, पशुश्री श्राविका और सर्वश्री आर्थिकाको बुलाकर प्रसन्नचित्त होते हुए कहते हैं कि अब दुःषमाकालका अन्त आचुका है, हमारी और तुम्हारी आयु मात्र तीन दिनकी अवशेष है और यह अन्तिम कल्की है ॥१५४७-१५५०॥

अन्तिम चतुर्विध सघका मन्याग ग्रहण एव समाधिग्रग—

ताहे चत्तारि जणा, चउविह - आहार - संग - पहुदीणं ।
जावज्जीवं छंडिय, सण्णामं करति^१ भत्तीए ॥१५५१॥

अर्थ :—तब वे चारों (मुनि, आर्थिका, श्रावक, श्राविका) जन चारों प्रकारके आहार और परिश्रमादिको जीवन भर के लिए छोड़कर संन्यास ग्रहण करने लगे हैं ॥१५५१॥

१. द. ज. य. क. सो वच्चवि, व. क. उ. क. सो वच्चवि । २. द. व. क. ज. उ. जायणदि ।

३. द. व. क. ज. य. उ. गेण्हेव । ४. द. व. क. ज. य. उ. मव्वसिरोहि । ५. द. व. तुम्हन्निह । ६. द. व. क. ज. य. उ. करतीए ।

धर्म-व्यवस्थाका विनाश—

कसिय - बहुलस्संते, साबीसुं विणयरम्मि उग्गमिण्ण ।

किय - सम्भासा' सव्वे, पाबंति समाहिमरणाइं ॥१५५२॥

अर्थ :—वे सब कार्तिक मासके कृष्णपक्षके अन्तमें (अमावस्याके दिन) सूर्यके स्वाति नक्षत्रके ऊपर उदित रहते संन्यास पूर्वक समाधिमरण प्राप्त करते हैं ॥१५५२॥

पर्यायान्तर-प्राप्ति—

उबहिउबमाउ^३ जुत्तो, सोहम्मि सुणिबरो^३ तवो जावो ।

तम्मि य ते तिण्णि जणा, साहिय-पल्लिवोवमाउ-जुवा^३ ॥१५५३॥

अर्थ :—समाधिमरणके पश्चात् बीराङ्गद मुनिराज एक सागरोपम आयुसे युक्त होते हुए सौधर्मस्वर्गमें उत्पन्न होते हैं और वे तीनों जन भी एक पत्थोपमसे कुछ अधिक आयु लेकर वही पर (सौधर्म स्वर्गमें) उत्पन्न होते हैं ॥१५५३॥

राज्य (राजा) एवं समाज (अग्नि) व्यवस्थाका विनाश—

तद्विबसे मउअण्णे, कय - कोहो को वि असुर-वर-देवो ।

मारैदि कक्किरायं, अग्गी श्वासेदि विणयरत्थमये ॥१५५४॥

अर्थ :—उसी दिन मध्याह्नमे असुरकुमार जातिका कोई क्रुद्ध हुआ उत्तम देव उस कल्की राजाको मारता है और सूर्यास्त समयमें अग्नि नष्ट हो जाती है ॥१५५४॥

सर्व कल्की एवं उपकल्कियोंकी पर्यायान्तर प्राप्ति—

एवमिणिबोस कक्की, उबकक्की तेत्तिया य धम्माम्ण ।

जम्मंति धम्म - बोहा, जलणिहि - उबमाण-आउ-जुवा ॥१५५५॥

अर्थ :—इस प्रकार इक्कीस कल्की और इतने ही उपकल्की धर्मका बिद्रोह करने के कारण एक सागरोपम आयुसे युक्त होकर धर्मा पृथिवी (पहले मरक) में जन्म लेते हैं ॥१५५५॥

अतिदुःषमा कालका प्रवेश और उसके उत्सेध आदिका प्रमाण—

वास-ताए अड - भासे, पक्के गलिदन्मि बबिसदे ततो ।

सो अविबुस्सम - नामो, छट्टो कालो महाबिसमो ॥१५५६॥

। वा ३, मा ८, दि १५ ।

अर्थ :—इसके पश्चात् तीन वर्ष, आठ मास और एक पक्षके बीत जाने पर महाविषम वह अतिदुःषमा नामक छठा काल प्रविष्ट होता है ॥१५५६॥

तस्स पहम - प्पवेसे 'ति-हृत्थ - वेहो अहुट्ट - हृत्थो य ।

तह बारह पुट्टट्टी, परमाऊ बीस वासाणि ॥१५५७॥

। ३।३।१२।२०।

अर्थ :—उसके प्रथम प्रवेशमें शरीरकी ऊँचाई तीन हाथ अथवा साठे तीन हाथ, पृष्ठभागकी हड्डियाँ बारह और उत्कृष्ट आयु बीस वर्ष प्रमाण होती है ॥१५५७॥

इस कालके मनुष्योंका आहार एवं उनका स्वरूप चित्रण—

मूलप्फल - मच्छादी, सम्भाणं माणुसाण आहारो ।

ताहे^१ वासा वच्छा, गेह - प्पहुदी णरा ण बीसंति ॥१५५८॥

ततो जग्गा सम्भे, भवण - बिहीणा वण्णेषु हिंसता ।

सम्भय - धूम - वण्णा^२, गो घम्म - परायणा कूरा ॥१५५९॥

बहिरा अंधा फाणा, मूका वारिह - कूड - परिपुण्णा ।

बीणा वाणर - क्खा, अइमेच्छा^३ हुंसंठाणा ॥१५६०॥

कुज्जा वामण-तणुणो^४, णराबिह-वाहि-वेयणा-बियला^५ ।

बहु - कोह - लोह - मोहा, पडराहारा सहाव-पाविट्टा ॥१५६१॥

संबद्ध-सज्ज-बंधव-घण-पुत्त-कलस - मित्त - परिहीणा ।

फुडिबंग - फुडिब - केसा, जूवा - लिक्खाहि संखण्णा ॥१५६२॥

१. द. व. य. दुहत्थवेदधो, व. उ. तिहत्थवेदधो । २. द. व. य. वावे, क. व. उ. वादे । ३. द. व. क. व. य. उ. वण्णो । ४. द. व. क. व. य. उ. अइमेच्छा । ५. द. व. क. व. य. उ. तणुणा । ६. व. क. उ. विटसा ।

अर्थ :—उस कालमें सभी मनुष्योंका आहार मूल, फल और मत्स्यादि होते हैं। उस समयके मनुष्योंको वस्त्र, वृक्ष और मकान आदि दिखाई नहीं देते, इसलिए सब मनुष्य नङ्गे और मकानोंसे रहित होते हुए वनोंमें घूमते हैं। वे मनुष्य सर्वाङ्ग धूम्रवर्ण (काले रंगके), गोघर्मपरायण (पशुओंसे सट्टा आचरण करने वाले), क्रूर, बहरे, अन्धे, काण्ठे, गूँगे, दरिद्रता एवं कुटिलतासे परिपूर्ण, दीन बन्दर-सदृश रूपवाले, अतिम्लेच्छ, ढुण्डकसंस्थान युक्त, कुबडे, बौने शरीरवाले, नानाप्रकारकी व्याधियो एवं वेदनाओंसे विकल, बहुत क्रोध, लोभ तथा मोहसे युक्त, खूब खानेवाले, स्वभावसे ही पापिष्ठ; सम्बन्धी, स्वजन, बान्धव, धन, पुत्र, कलत्र और मित्रोंसे विहीन; जूँ एव लोख आदिसे आच्छन्न दुर्गन्ध युक्त शरीर एव दूषित केशोंवाले होते हैं ॥१५५८-१५६२॥

गति-आगति—

णारय-तिरिय-गदीबो, आगद - जीवा ढु एत्थ जम्मन्ति ।

भरिदूण य अइघोरे, गिरए तिरियम्मि जायंते ॥१५६३॥

अर्थ :—इस कालमें नरक और तिर्यञ्च गतिसे आये हुए जीव ही यहाँ जन्म लेते हैं तथा यहाँसे मरकर वे अत्यन्त घोर नरक एवं तिर्यञ्च गतिमें उत्पन्न होते हैं ॥१५६३॥

उच्छेह-आउ-विरिया, दिवसे दिवसम्मि ताण हीयंते ।

दुक्खाण ताण कहिदुं, को सक्कइ एक्क जीहाए ॥१५६४॥

अर्थ :—उन जीवोंकी ऊंचाई, आयु और वीर्य (शक्ति) दिन-प्रतिदिन हीन होते जाते हैं। उनके दुःखोंको एक जिह्वासे कहनेमें भला कौन समर्थ हो सकता है ? (अर्थात् कोई नहीं) ॥१५६४॥

प्रलय-प्रवृत्तिका समय—

उणबण्ण-दिवस-विरहिद-इगिबोस-सहस्स-वस्स-विच्छेहे' ।

जंतु - भयंकर - कालो, पलयो त्ति पयडुडे घोरो' ॥१५६५॥

अर्थ :—उनचास दिन कम इक्कीस हजार वर्षोंके भीत जानेपर जन्तुओं (प्राणियों) को भयोत्पादक घोर प्रलयकाल प्रवृत्त होता है ॥१५६५॥

संवर्तक वायुका प्रभाव एव उसकी प्रक्रिया—

साहे गसव - गभीरो, पसरदि पवणो रउह-संबट्टो' ।

तरु-गिरि-सिल-पट्टुबोणं, कुणेदि खुण्णाइ सत्त - विन्हे ॥१५६६॥

अर्थ :—उस समय महागम्भीर एवं भोषण संवर्तक वायु चलती है, जो सात दिन तक वृक्ष, पर्वत और शिला आदिको चूर्ण कर देती है ॥१५६६॥

तद-गिरि-भंगेहि णरा, तिरिया य स्र्हीति गुरुव-बुबलाइं ।

इच्छति 'सरण - ठाणं, बिलबंति बहुप्ययारेणं ॥१५६७॥

अर्थ :—वृक्षों और पर्वतोंके टूटनेसे मनुष्य एवं तिर्यंच महादुःख प्राप्त करते हैं तथा शरणा-योग्य स्थानकी अभिलाषा करते हुए बहुत प्रकारसे विलाप करते हैं ॥१५६७॥

गंगा - सिन्धु - बबोणं, वेयड्ड - वणंतरम्मि पबिसंति ।

पुह - पुह संखेज्जाइं, बाहसरि सयस - बुयलाइं ॥१५६८॥

अर्थ :—इस समय पृथक्-पृथक् संख्यात एवं सम्पूर्ण बहतर युगल गङ्गा-सिन्धु नदियोंकी वेदी और बिजयार्ध-वनके मध्य प्रवेश करते हैं ॥१५६८॥

देवा विज्जाहरया, कारुष्ण - परा णराण तिरियाणं ।

संखेज्ज - जीव - रासि, खिबंति तेसुं पएसेसुं ॥१५६९॥

अर्थ :—देव और विद्याधर दयाद्रं होकर मनुष्य और तिर्यंचोंमेंसे संख्यात जीव-राक्षिको उन प्रदेशोंमें ले जाकर रखते हैं ॥१५६९॥

उनचास दिन पर्यन्त कुवृष्टि—

ताहे गभीर - गञ्जी, 'मेघा मु'चंति तुहिण-सार-जसं ।

विस - सलिलं पत्तेक्कं, पत्तेक्कं सत्त दिवसाणि ॥१५७०॥

अर्थ :—उस समय गम्भीर गर्जना सहित मेघ क्षीतल एवं क्षार जल तथा विष-जलमेंसे प्रत्येकको सात-सात दिन पर्यन्त बरसाते हैं ॥१५७०॥

धूमो धूमो बज्जं, जलंत - जाला कला व 'दुप्येच्छे ।

वरिसंति जलव - जिबहा, एक्केक्कं सत्त दिवसाणि ॥१५७१॥

अर्थ :—इसके अतिरिक्त मेघोंके वे समूह धूम, धूल, बज्र एवं जलते हुए दुष्प्रेक्ष्य ज्वाला समूह, इनमेंसे प्रत्येकको सात-सात दिन पर्यन्त बरसाते हैं ॥१५७१॥

कुबुद्धियोंके पश्चात् आर्यखण्डका स्वरूप—

एवं कनेष भरहे, अञ्जा - खंडम्मि जोवर्षं एषकं ।

चिवाए उबारि ठिवा, दण्णह वडिड - गवा भूमो ॥१५७२॥

अर्थ :—इसप्रकार क्रमशः भरतक्षेत्रके मध्य आर्यखण्डमें चित्रा-पृथिवीके उमर स्थित वृद्धिज्जत एक योजनकी भूमि जलकर गह हो जाती है ॥१५७२॥

अञ्ज-महम्मि-अलेणं, अञ्जा - खंडस्स वडिडया' भूमो ।

पुब्बिस्स - खंघ - ण्वं, भोत्तुणं आवि लोयंतं ॥१५७३॥

अर्थ :—वज्र और महा-जमिनेके बलसे आर्यखण्डकी बड़ी हुई भूमि अपने पूर्ववर्ती स्कन्ध स्वरूपको छोड़कर लोकान्त पर्यन्त पहुँच जाती है ॥१५७३॥

ताहे' अञ्जा - खंडं, इप्पत्तल-तुल्लिद-कंति-सम-पुट्टं ।

गय - घूलि - पंक - कलुत्तं, होवि समं सेस - भूमोहि ॥१५७४॥

अर्थ :—उस समय आर्यखण्ड शेष भूमियोंके समान दर्पणतलके सदृश कान्तिसे युक्त, पुष्ट और धूलि एवं कीचड़ आविकी कलुषतासे रहित हो जाता है ॥१५७४॥

उपस्थित मनुष्योंका उत्सेध आदि—

तस्सुबस्सिद - जराणं, ^१हत्थं उदधो य सोलसं वस्सा ।

अह्वा पण्णरसाळ, विरियावी तदण्णुवा य ॥१५७५॥

अर्थ :—(उस समय) वहाँ उपस्थित मनुष्योंकी ऊँचाई एक हाथ, धातु सोलह वर्ष बचवा पन्द्रह वर्ष प्रमाण तथा शक्ति आदि भी तदनुसार ही होती हैं ॥१५७५॥

उत्सर्पिणी कालका प्रवेश और उसके भेद—

तसो पबिसिदि रम्मो, कालो उत्सर्पिणि चि विषयावो ।

पडमो अइत्तुस्सममो, इइण्णवो तुस्समात्तमा ॥१५७६॥

तुस्समसुत्तमो तविमो, अउत्तमो तुस्समत्तुस्समो^२ चामा ।

पंचममो तह सुत्तमो, अउत्तमो तुस्समत्तुत्तमो छट्ठो ॥१५७७॥

१. द. व. वट्टिका, क. व. व. उ. वट्टिका । २. द. व. क. व. उ. तह । ३. व. क. उ. हत्तु ।

वर्ष :—इसके पश्चात् उत्सर्पिणी (इस) नामसे विख्यात रमणीय काल प्रवेश करता है। इसके छह भेदोंमेंसे प्रथम अतिदुषमा, द्वितीय दुषमा, तृतीय दुषमसुषमा, चतुर्थ सुषमदुषमा, पाँचवाँ सुषमा और छठा जनोंको प्रिय सुषमसुषमा है ॥१५७६-१५७७॥

उत्सर्पिणी कालका कालमान -

एदाण कालमाणं, अवसर्पिणि - काल - माण-सारिच्छं ।

उच्छेह - आउ - पट्टवी, दिवसे दिवसम्मि वड्ढंते ॥१५७८॥

अद्दुस्समकाल वास २१००० । दु वास २१००० ।

दुसमसुसम सा १ को को रिण वास ४२००० ।

सुसमदुसम सा २ को को । सु सा ३ को को ।

सु सु सा ४ को को ।

वर्ष :—इनका काल प्रमाण अवसर्पिणी कालके प्रमाण सदृश ही होता है। उत्सर्पिणी कालमें (शरीरकी) ऊँचाई और आयु आदिक दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जाती हैं ॥१५७८॥

चिरोबाण :—अवसर्पिणीकाल सदृश उत्सर्पिणीकालके अतिदुःषमाकालका प्रमाण २१००० वर्ष, दुःषमाकालका २१००० वर्ष, दुःषमासुषमा कालका प्रमाण ४२००० वर्ष कम एक कोड़ाकोड़ी सागर, सुषमादुःषमाका दो कोड़ाकोड़ी सागर, सुषमाकालका तीन कोड़ाकोड़ी सागर और सुषमासुषमाकालका प्रमाण चार कोड़ाकोड़ी सागर है ।

सुवृष्टि निर्देश—

पुक्कर-मेघा सल्लिं, वरिसंति विष्णाणि सच सुह-जण्णं ।

वज्जन्निस्साए वड्ढा, ज्जमी सबला वि सीयलो होदि ॥१५७९॥

वर्ष :—उत्सर्पिणी कालके प्रारम्भमें पुक्कर-मेघ सात दिन पर्यन्त सुखोत्पादक जल बरसाते हैं, जिससे वज्जान्निसे जमी हुई सम्पूर्ण पृथिवी क्षीतल हो जाती है ॥१५७९॥

वरिसंति क्षीर-मेघा, क्षीर - जसं तेलियाणि विवसाणि ।

क्षीर - जसेहि भरिवा, सज्जाया होदि सा ज्जमी ॥१५८०॥

वर्ष :—क्षीर-मेघ उतने (सात) ही दिन पर्यन्त क्षीरजलकी वर्षा करते हैं। इसप्रकार क्षीरजलसे भरी हुई यह पृथिवी उत्तम कान्ति युक्त हो जाती है ॥१५८०॥

तसो अमिद-पयोवा, अमिदं वरिसंति सस दिवसाणि ।

अमिदेषु^१ सिसाए, महिए जावंति^२ वल्लि - गुम्मादी ॥१५८१॥

अर्थ :—इसके पश्चात् सात दिन पर्यन्त अमृतमेघ अमृतकी वर्षा करते हैं। इसप्रकार अमृतसे अभिषिक्त भूमि पर लता एवं गुल्म आदि उगने लगते हैं ॥१५८१॥

ताहे रस - जलवाहा, दिव्य-रसं पवरिसंति सस-दिवसे ।

दिव्यरसेरणाउष्सा, रसवंता^३ होंति ते सञ्जे ॥१५८२॥

अर्थ :—उस समय रस-मेघ सात दिन पर्यन्त दिव्य-रसकी वर्षा करते हैं। इस दिव्य-रससे परिपूर्ण वे सन (लता-गुल्म आदि) रसवाले हो जाते हैं ॥१५८२॥

सृष्टि रचनाका प्रारम्भ—

विबिह-रसोसहि-भरिदा, भूमि सुस्वाद-परिणदा होदि ।

तसो सौयल-गंभं, जावित्ता^४ जिस्सरंति णर - तिरिया ॥१५८३॥

अर्थ :—विबिध रसपूर्ण औषधियोंसे भरी हुई भूमि सुस्वाद रूप परिणत हो जाती है। पश्चात् शीतल गन्धको ग्रहणकर वे मनुष्य और तिर्यञ्च गुफाओंसे बाहर निकल आते हैं ॥१५८३॥

उस कालका रहन-सहन एवं आहार—

फल-भूल-बल-प्यहुदि, छुहिदा^५ खादंति मत्त - पहुदीणं ।

जग्गा गो - घम्मपरा, णर - तिरिया वव - पएसेसु^६ ॥१५८४॥

अर्थ :—उस समय स्त्री, मनुष्य और तिर्यञ्च नग्न रहकर पशुओं जंसा आचरण करते दृष्ट सुधित होकर वन-प्रदेशोंमें मत्त (घनुरे) आदि वृक्षोंके फल, मूल एवं पत्ते आदि खाते हैं ॥१५८४॥

आयु आदिकका प्रमाण एवं उनकी वृद्धि—

तक्काल-पढम - भागे, आऊ पञ्जरस सोलस समा वा ।

उञ्जेहो इगि - हत्थं, वड्ढंते आउ - पहुदीणि ॥१५८५॥

अर्थ :—उस कालके प्रथम भागमें आयु पन्द्रह अथवा सोलह-वर्ष और ऊँचाई एक हाथ प्रमाण होती है। इसके आगे आयु आदि बढ़ती ही जाती है ॥१५८५॥

१. व. य. अमिदोणं । २. व उ. वलि । ३. द. व. क. ज. य. उ. खावित्ति । ४. द. व. क. व.

आळ तेजो बुद्धी, बाहुबलं तह य देह - उच्छेद्दो ।

वैत्ति - बिबि - प्यद्बुद्धीजो, काल - सहायेन बद्धंति ॥१५८६॥

अर्थ :- प्रायु, तेज, बुद्धि, बाहु (बुजा) बल, देहकी ऊँचाई जमा एवं वृत्ति (वयं) आदिक सब काल-स्वभावसे उत्तरोत्तर बढ़ते जाते हैं ॥१५८६॥

अतिदुषमा कालक्री परिसमाप्ति—

एवं बोलीजेसुं, इगिबीस - सहस्स - संस - वासेसुं ।

पूरेवि भरहसेत्ते, कालो अबिदुस्समो जाम ॥१५८७॥

। अबिदुस्सम-कालं समत्तं ।

अर्थ :- इसप्रकार इनकीस हजार संख्या-प्रमाण वर्ष व्यतीत हो जानेपर भरतक्षेत्रमें अति-दुःखमा नामक काल पूर्ण होता है ॥१५८७॥

। अतिदुषमाकाल समाप्त हुवा ।

दुःखमाकालका प्रवेश और आहार—

ताहे दुस्सम-कालो, पबिसवि तत्तिस्स च मणुव-तिरियासुं ।

आहारो पुब्बं^१ चिय, बीस - सहस्सार्वाहि जाव ॥१५८८॥

। २०००० ।

अर्थ :- तब दुःखमा कालका प्रवेश होता है । इस कालमें मनुष्य-तियञ्चोंका आहार बीस हजार वर्ष पर्यन्त पहलेके ही सदृश रहता है ॥१५८८॥

आयु आदिका प्रमाण—

तस्स य षडम - पवेत्ते, बीसं वासाणि होदि परमाळ^२ ।

उदओ य तिण्णि हत्था, आउठ^३- हत्था चर्बंति परे ॥१५८९॥

। २० । ३ । ३ ।

अर्थ :- इस कालके प्रथम प्रवेशमें उत्कृष्ट आयु बीस वर्ष और ऊँचाई तीन हाथ प्रमाण होती है । दूसरे प्राचार्य ऊँचाई साठे तीन हाथ प्रमाण कहते हैं ॥१५८९॥

१. द. व. ज. य. उ. पुण्ड्रिचव, क. पुण्ड्रिचिय । २. ब. व. परमाओ । ३. द. व. क. ज. व. उ.

आउठहुत्था ।

कुलकरोँकी उत्पत्तिका निर्देश—

बास - सहस्ते सेसे, उप्पसी कुलकराण भरहम्मि ।

अह चोहसाण ताणं, कमेण णामाणि बोच्छामि ॥१५६०॥

अर्थ :—इस कालके एक हजार वर्ष अक्षय्ये रहने पर भरत क्षेत्रमें चौदह कुलकरोँ की उत्पत्ति होने लगती है । अब (मैं) उन कुलकरोँके नाम क्रमणः कहता हूँ ॥१५६०॥

चौदह कुलकरोँके नाम एव उनका उत्प्रेष—

कणघ्नो कणयप्पह-कणयराय-कणयद्धजा कणयपुंखो ।

^१णलिनो णलिनप्पह-णलिनराय^२-णलिनद्धजा णलिनपुंखो ॥१५६१॥

पउमपह - पउमराजा, पउमद्धज-पउमपुंख-णामा य ।

आदिम - कुलकर - उदघ्नो, चउ-हत्थो अंतिमस्स सत्थेव ॥१५६२॥

। ४ । ७ ।

अर्थ :—कनक. कनकप्रभ, कनकराज, कनकध्वज, कनकपुख (कनकपुङ्ख), नलिन, नलिनप्रभ, नलिनराज, नलिनध्वज, नलिनपुख (नलिनपुङ्ख), पद्मप्रभ, पद्मराज, पद्मध्वज और पद्मपुंख (पद्मपुङ्ख), क्रमशः ये उन चौदह कुलकरोँके नाम हैं । इनमेंमे प्रथम कुलकरके शरीर की ऊँचाई चार हाथ और अंतिम कुलकरकी ऊँचाई सात हाथ प्रमाण होती है ॥१५६१-१५६२॥

सेसाणं उस्सेहे^३, संपदि अम्हाण णत्थि उव्वेसो ।

कुलकर - पहुवी णामा, एदाणं होंति गुणणामा ॥१५६३॥

अर्थ :—शेष कुलकरोँकी ऊँचाईके विषयमें हमारे पास इस समय उपदेश नहीं है । उनके जो कुलकर आदि नाम हैं, वे गुण (सार्यक) नाम हैं ॥१५६३॥

कुलकरोँका उपदेण—

ताहे बहुबिह-ओसहि-जुवाए^४ पुढवोए पाबको णत्थि ।

तह कुलकरा णराणं^५, उव्वेसं वेत्ति^६ विणय - जुसाणं ॥१५६४॥

१. द. व. क. ज. य. उ. बोलीणो । २. द. व. क. ज. उ. णलिनप्पह णराय । ३. द. व. क. ज. य. उ. उस्सेहो । ४. द. व. क. ज. य. उ. जुवाय । ५. द. व. क. ज. उ. णराण । ६. द. दित्ति, ज. वेत्ति ।

अर्थ :—उस समय विविध प्रकारकी औषधियोंके रहते हुए भी पृथिवी पर अग्नि नहीं रहती, तब कुलकर विनयसे युक्त मनुष्योंको उपदेश देते हैं ॥१५६४॥

मथिदूण कृणह अग्निं, पचेह अण्णाणि भुंजह जहिच्छं ।

करह विवाहं बंधव - पधुदिदारेण सोषसेणं ॥१५६५॥

अर्थ :—मथकर आग उत्पन्न करो और अन्न (भोजन) पकाओ । विवाह करो और बान्धवादिक्के निमित्तसे इच्छानुसार सुखोंका उपभोग करो ॥१५६५॥

अइमेच्छा ते पुरिसा, जे सिक्खार्वति कुलकरा इत्थं ।

एवरि विवाह - विहीओ, बडुंते पउमपुंसाओ ॥१५६६॥

। दुस्समकालो^१ समघो ।

अर्थ :—जिन्हे कुलकर इसप्रकारकी शिक्षा देते हैं, वे पुरुष अत्यन्त म्लेच्छ होते हैं । विशेष यह है कि पद्मपुङ्ख कुलकरके समयसे विवाह-विधियाँ प्रचलित हो जाती हैं ॥१५६६॥

। इसप्रकार दुःषमाकालका वर्णन समाप्त हुआ ।

दुःषमसुषम कालका प्रवेश, उत्सेध आदिका प्रमाण एव मनुष्योका स्वरूप—

तत्तो दुस्समसुसमो, कालो पविसेदि तस्स पढमम्मि ।

सग - हत्था उस्सेहो, वोसग्भहियं सयं आऊ ॥१५६७॥

। ७ । १२० ।

अर्थ :—इसके पश्चात् दुःषमसुषमाकालका प्रवेश होता है । इसके प्रारम्भमें ऊँचाई सात हाथ और आयु एकसौ बीस वर्ष प्रमाण होती है ॥१५६७॥

पुट्टट्ठो चउवीसं, मणुवा तह पंच - वण्ण - वेह - जुवा ।

मऊजाय - विणय - लऊजा, संतुट्ठा होदि संपण्णा ॥१५६८॥

। २४ ।

अर्थ :—इस समय पृष्ठभागकी हड्डियाँ चौबीस होती हैं तथा मनुष्य पांच वर्णवाने शरीरसे युक्त; मर्यादा, विनय एवं लज्जा महित, सन्तुष्ट और सम्पन्न होते हैं ॥१५६८॥

१. द. ब. क. ज. य. उ. करण । २. द. ब. क. काला सम्मत्ता, ज. य. काल सम्मत्ता । ३. द. ब.

क. ज. य. उ. सत्तुच्छा ।

विदेह-सदस वृत्तिका निर्देश—

तक्काले तित्थयरा, चउवीस हर्षति ताण पठम-जिणो^१ ।

अतिल्ल - कुलकर - सुबो, विदेहवत्ती तबो होवि ॥१५६६॥

अर्थ :—इस कालमें भी तीर्थंकर चौबीस होते हैं । उनमेंसे प्रथम तीर्थंकर अन्तिम कुलकर का पुत्र होता है । उस समयसे यहाँ विदेहक्षेत्र सदृश वृत्ति होने लगती है ॥१५६६॥

चौबीस तीर्थंकरोंके नाम निर्देश—

महपउमो सुरदेवो, सुपास - नामो सयंपहो तह य ।

सव्वपहो देवसुदो, कुलसुव - उदका य पोट्टिलओ ॥१६००॥

। ६ ।

जयकिचो मुणिसुव्वय-अरय-अपाया य णिक्कसायाओ ।

विउलो णिम्मल - नामा, अ चित्तगुत्तो समाहिगुत्तो य ॥१६०१॥

। ६ ।

उणवीसमो सयंभू, अणिअट्टी जयो य विमल-णामो य ।

तह देवपाल - नामा, अणंतविरिओ अ होवि चउवीसो ॥१६०२॥

। ६ ।

अर्थ :—१ महापद्य, २ सुरदेव, ३ सुपाश्व, ४ स्वयंप्रभ, ५ सर्वप्रभ (सर्वात्मभूत), ६ देव-सुत, ७ कुलसुत, ८ उदक (उदङ्क), ९ प्रोष्ठिल, १० जयकीर्ति, ११ मुनिसुव्रत, १२ अर, १३ अपाप, १४ निष्कवाय, १५ विपुल, १६ निर्मल, १७ चित्रगुप्त, १८ समाधिगुप्त, १९ स्वयम्भू, २० अन्निवृत्ति (अन्निवर्तक), २१ जय, २२ विमल, २३ देवपाल और २४ अनन्तवीर्य ये चौबीस तीर्थंकर होते हैं ॥१६००-१६०२॥

इन तीर्थंकरोंको ऊँचाई, आयु और तीर्थंकर प्रकृति बध्दके भव सम्बन्धी नाम—

आविम-जिण-उदयाऊ, सग - हत्था सोलसुत्तरं च सर्वं ।

अरिमस्स पुव्वकोडो, आऊ पण-सय - धणूणि उस्सेहो ॥१६०३॥

। ७ । ११६ । पु को १ । ५०० ।

अर्थ :—इनमेंसे प्रथम तीर्थकरके शरीरकी ऊँचाई सात हाथ और आयु एकसौ सोलह वर्ष तथा अन्तिम तीर्थकरकी आयु एक पूर्वकोटि और ऊँचाई पाँचसौ धनुष प्रमाण होती है ॥१६०३॥

उच्छ्वेहाऊ - पट्टबिसु, सेसाणं जत्थि अम्ह उवएसो ।

एवे तित्थयर - जिणा, तविय-अवे तिभुवणस्स खोहकरं ॥१६०४॥

तित्थयर - णामकम्मं, बंधते ताण ते इमे णामा ।

सेणिग - सुपास - णामा, उदंक - पोट्टिल्ल - कदसूया ॥१६०५॥

। ५ ।

^१सत्थिय-पाविल-संखा, य णंद-सुणंदा ससंक - सेवगया ।

^२पेमगतोरण-रेवद-किण्हा सिरी-भगलि-विगलि-णामा य ॥१६०६॥

। १४ ।

दोबायण - माणवका, णारद - णामा सुरुवदत्तो य ।

सच्चइ - पुत्तो चरिमो, णरिद - वंसम्मि ते जादा ॥१६०७॥

। ५ ।

अर्थ :—शेष तीर्थकरोंकी ऊँचाई और आयु इत्यादिके विषयमें हमारे पास उपदेश नहीं है । ये तीर्थकर जिनेन्द्र तृतीय भवमें तीनो लोकोको आश्चर्य उत्पन्न करनेवाले तीर्थकर नामकर्मको बाधते हैं । उनके उस समयके वे नाम ये हैं—

१ श्रेणिक, २ सुपाश्वं, ३ उदङ्क, ४ प्रांष्ठिल, ५ कृतसूर्य (कटपू), ६ क्षत्रिय, ७ पाविल (भ्रेष्टी), ८ शाङ्क, ९ नन्द, १० सुनन्द, ११ यशाङ्क, १२ सेवक, १३ प्रेमक, १४ अतोरण, १५ रैवत, १६ कृष्ण, १७ सीरी (बलराम), १८ भगलि, १९ विगलि, २० द्वीपायन, २१ माणवक, २२ नारद, २३ सुरूपदत्त और अन्तिम २४ सात्यकिपुत्र । ये सब राजवशमें उत्पन्न हुए थे ॥१६०४-१६०७॥

भविष्यन् कालीन चक्रवर्तियोके नाम—

तित्थयरारणं काले, चवकहरा होंति ताण णामाहं ।

भरहो अ विग्घबंतो, मुत्तदंतो य गूढबंतो य ॥१६०८॥

१. व. क. उ. उदंक । २. द. उ. सत्थिय, व. सत्थिय । ३. द. व. क. उ. पेमगरो खाम वदकिण्हा, व. पेमगरो खाम वदकिण्हा । य. पेमगरो खाम वदकिण्हा ।

सिरिसेणो सिरिभूदो, सिरिकंतो पउमणाभ-महपउमा ।

तह चित्तवाहणो विमलवाहणो रिडुसेण - णामा य ॥१६०६॥

अर्थ :—(उपर्युक्त) तीर्थकरोके समयमे जो चक्रवर्ती होते हैं, उनके नाम ये हैं—भरत, दीर्घदन्त, मुक्तदन्त, गूढदन्त, श्रीषेण, श्रीभूति, श्रीकान्त, पद्मनाभ, महापद्म, चित्रवाहन, विमलवाहन और अरिष्टसेन ॥१६०५-१६०६॥

भविष्यत् कालीन बलदेव, नारायण और प्रनिनारायणोके नाम—

चंदो^१ य महाचंदो, चंदधरो चंदसिह^२ वरचंदा ।

हरिचंदो सिरिचंदो, सुपुष्णचंदो सुचंदो य ॥१६१०॥

पुण्वभवे अण्णदाणा, एदे जायंति पुष्ण - पाकोह ।

अणुजा कमसो णंदो, तह णदि - मित्त - सेणा य ॥१६११॥

तुरिमो य णंबिभूदो, बल-महबल-अदिबला^३ तिबिट्ठो य ।

णवमो दिविट्ठ - णामो, ताणं जायंति णवम पडिसत्तू ॥१६१२॥

सिरि^४-हरि-णीलंकंठा, अस्सकंठा - सुकंठ - सिखिकंठा ।

अस्सग्गोव - हयग्गोव, मउरगोवा य पडिसत्तू ॥१६१३॥

अर्थ :—१ चन्द्र, २ महाचन्द्र ३ चन्द्रधर (चक्रधर), ४ चन्द्रसिंह, ५ वरचन्द्र, ६ हरिचन्द्र, ७ श्रीचन्द्र, ८ पूर्णचन्द्र और ९ सुचन्द्र (शुभचन्द्र) ये नव बलदेव पुण्यके उदयसे होते हैं क्योंकि ये पूर्वभ्रममें निदानबंध नहीं करते । १ नन्दी, २ नन्दिमित्र, ३ नन्दिषेण, ४ नन्दिभूति, ५ बल, ६ महाबल, ७ अतिबल, ८ त्रिपृष्ठ और ९ द्विपृष्ठ, ये नव नारायण क्रमशः उन बलदेवोंके अनुज होते हैं । इन नौ नारायणोंके प्रतिशब्द क्रमशः १ श्रीकण्ठ, २ हरिकण्ठ, ३ नीलकण्ठ, ४ अश्वकण्ठ, ५ सुकण्ठ, ६ सिखिकण्ठ, ७ अश्वघ्रीव, ८ हयघ्रीव और ९ मयूरघ्रीव हैं ॥१६१०-१६१३॥

१. द. ब. क. ज. य. द. चंदा । २. द. ब. क. ज. य. उ. चंदो य । ३. द. ब. क. ज. य. उ. महबलादिबलो तिबिण्णाह । ४. द. ब. णीलंकंठाय-सकंठासुकंठ, क. सिरिहरिहरिणीलक कंठाय सकंठाय सुकंठा, ज. सिरिहरिहरिणीलक कंठाय सकण्य सुकंठ, य. सिरिहरिहरि णीलक कंठाय सुकंठ, उ. सिरिहरिहरि णीलकं कंठाय सकंठा सुकंठा । ५. द. ब. क. ज. य. उ. महुरम्बीवा ।

तालिका : ४१

भावी शलाका-

कुलकर		तोर्थकर		पूर्वले तीसरे भवके	
क्र.	नाम गा० १५६१-६२	क्र.	नाम गा० १६००-१६०२	क्र.	नाम गा० १६०५-१६०७
१	कनक	१	महापद्य	१	थो शिणक
२	कनकप्रभ	२	मुरदेव	२	सुपाश्वं
३	कनकराज	३	सुपाश्वं	३	उदङ्क
४	कनकध्वज	४	स्वयंप्रभ	४	प्रोष्ठिल
५	कनक पुंख (पुं गव)	५	सर्वप्रभ (सर्वात्मिसूत)	५	कृतसूर्य (कटप्रू)
६	नलिन	६	देवसुत	६	क्षत्रिय
७	नलिनप्रभ	७	कुलसुत	७	पाविल (थो ह्यो)
८	नलिनराज	८	उदक (उदङ्क)	८	शङ्ख
९	नलिनध्वज	९	प्रोष्ठिल	९	नन्द
१०	नलिनपुंख (पुं गव)	१०	जयकीर्ति	१०	सुनन्द
११	पद्यप्रभ	११	मुनिसुन्नत	११	शशाङ्क
१२	पद्यराज	१२	अर	१२	सेवक
१३	पद्यध्वज	१३	अपाप	१३	प्रेमक
१४	पद्यपुंख (पुं गव)	१४	निष्कषाय	१४	अतोरण
		१५	विपुल	१५	रेवत
		१६	निर्मल	१६	कृष्ण
		१७	चित्रगुप्त	१७	सीरी (बलराम)
		१८	समाधिगुप्त	१८	भगलि
		१९	स्वयम्भू	१९	विगलि
		२०	अनिवृत्ति (अनिवर्तक)	२०	द्वीपायन
		२१	जय	२१	माणवक
		२२	विमल	२२	नारद
		२३	देवपाल	२३	सुरूपदत्त
		२४	अनन्तवीर्य	२४	सात्यकिपुत्र

पुरुष—

चक्रवर्ती				प्रति ना०			
क्र.	नाम गा. १६०८-१६०९	क्र.	नाम गा. १६१०	क्र.	नाम गा. १६११-१२	क्र.	नाम गा १६१३
१	भरत	१	चन्द्र	१	नन्दी	१	श्रीकण्ठ
२	दीर्घदन्त	२	महाचन्द्र	२	नन्दिमित्र	२	हरिकण्ठ
३	मुक्तदन्त	३	चन्द्रघर (चक्रघर)	३	नन्दिपंखा	३	नीलकण्ठ
४	गुहदन्त	४	चन्द्रसिंह	४	नन्दिभूति	४	अश्वकण्ठ
५	श्रीपंखा	५	वरचन्द्र	५	बल	५	मुकण्ठ
६	श्रीभूति	६	हरिचन्द्र	६	महाबल	६	शिखिकण्ठ
७	श्रीकान्त	७	श्रीचन्द्र	७	अतिबल	७	अश्वग्रीव
८	पद्मनाभ	८	पूर्णचन्द्र	८	त्रिपृष्ठ	८	हयग्रीव
९	महापद्म	९	मुचन्द्र (शुभचन्द्र)	९	द्विपृष्ठ	९	मयूरग्रीव
१०	चित्रवाहन						
११	विमलवाहन						
१२	अरिष्टसेन						

शलाका गुरुयोनी उत्पत्तिका समय --

एवे तेसट्टि - णरा, सलाग - पुरिसा तइज्ज-कालम्मि ।

उप्पज्जंति हु कमसो, एक्कोवहि - उवम-कोडकोडीओ ॥१६१४॥

सा १ को को ।

अर्थ —ये तिरैसठ (२४ तीर्थ^० + १२ चक्र^० + ६ + ६ + ६) शलाका पुरुष एक कोडाकोड़ी सागर-प्रमाण इस तृतीयकालमे क्रमशः उत्पन्न होते है ॥१६१४॥

इस कालके अन्तमे आयु आदिका प्रमाण—

एक्को णवरि विसेसो, बावाल-सहस्स-वास-परिहोणो^१ ।

तच्चरिमम्मि णराणं, आऊ इगि-पुव्वकोडि-परिमाणं ॥१६१५॥

पणवीसब्भहियारिण^२, पंच सयारिण घणूणि उच्छेहो ।

चउसट्टो पुट्टट्टी, णर - णारी देव - अच्चर - सरिच्छा ॥१६१६॥

। दुस्समसुसमो समत्तो ।

अर्थ —यहाँ विशेषता यह है कि यह काल एक कोडाकोड़ी सागरोपम कालमेसे बयालीस हजार वर्ष होन होता है । इस कालके अन्तमे मनुष्योकी आयु एक पूर्वकोटि प्रमाण ऊंचाई पांचसी पच्चीस घनुष और पृष्ठ भागकी हड्डियाँ नीसठ होती हैं । इस समय नर-नारी देवो एव अप्सराओंके सृष्ट होते हैं ॥१६१५-१६१६॥

। दुःषमसुषमा कालका वर्णन समाप्त हुआ ।

चतुर्थकालका प्रवेश और प्रवेश कालमे आयु आदिका प्रमाण—

तत्तो पविंसदि तुरिमो, णामेणं सुसमदुस्समो कालो ।

तप्पडमम्मि णराणं, आऊ वासाण पुव्वकोडीओ ॥१६१७॥

ताहे तारणं उदया, पणवीसब्भहिय पंचसय चावा ।

कमसो आऊ - उदया, काल - बलेणं^३ पवड्डंति ॥१६१८॥

अर्थ —इसके पश्चात् सुषमदुःपमा नामक चतुर्थकाल प्रविष्ट होता है । इसके प्रारम्भमें मनुष्योकी आयु एक पूर्वकोटि प्रमाण और ऊंचाई पांचसी पच्चीस घनुष प्रमाण होती है । पश्चात् कालके प्रभावसे आयु और ऊंचाई प्रत्येक उत्तरोत्तर क्रमशः बढ़ती ही जाती हैं ॥१६१७-१६१८॥

१. द. व. क ज. य उ. परिहीणा। २. द. व. क ज. य. उ. हियाण। ३. व. पवदते, क. ज.

पवट्टंते, य. उ. पवड्डंते ।

जघन्य भोगभूमिका प्रवेश एवं मनुष्योकी आयु आदिका प्रमाण—

ताहे एसा^१ वसुहा, बणिज्जइ अबर - भोगभूमि ति ।
तच्चरिमम्मि णराणं, एक्कं पल्लं हवे आऊ ॥१६१६॥

अर्थ :—उस समय यह पृथिवी जघन्य भोगभूमि कही जाती है । इस कालके अन्तमें मनुष्योंकी आयु एक पल्ल प्रमाण होती है ॥१६१६॥

उदएण एक्क - कोस, सव्व - णरा ते पियंगु-बण्ण-जुदा ।
तत्तो पविसदि कालो, पंचमओ सुसम - णामेणं ॥१६२०॥

अर्थ :—उस समय वे सब मनुष्य एक कोस ऊँचे और प्रियंगु जैसे वर्णसे युक्त होते हैं । उसके पश्चात् पाँचवाँ मृगमा नामक काल प्रविष्ट होता है ॥१६२०॥

मृगमा नामक मध्यमभोगभूमिके मनुष्योंकी आयु आदि—

तस्स पढम-पवेसे, आउ - प्पहुदीणि होंति पुच्च^२ वा ।
काल - सहावेण तथा, बड्ढंते मणुव - तिरियाणं ॥१६२१॥

अर्थ :—उस कालके प्रथम प्रवेशमें मनुष्य-तिर्यञ्चोंकी आयु आदि पूर्वके ही समान होती है, परन्तु काल-स्वभावमें वह उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है ॥१६२१॥

ताहे एसा खोणी, मज्झिम - भोगावणिसि विक्खादा ।
तच्चरिमम्मि णराणं, आऊ दो - पल्ल परिमाणं ॥१६२२॥

अर्थ :—उस समय यह पृथिवी मध्यम-भोगभूमिके नामसे प्रसिद्ध हो जाती है । इस काल के अन्तमें मनुष्योंकी आयु दो पल्ल प्रमाण होती है ॥१६२२॥

दो कोसा उच्छेहो, णारि - णरा पुण्णमिदु-सरिस-मुहा ।
बह्विणय - सीलवंता, विगुणिय - चउसट्ठि - पुहुट्ठी ॥१६२३॥

। सुसमो समस्तो^३ ।

१. द. घ. क. ज. य. उ. तावे हेमा । २. द. ब. क. ज. य. उ. पुच्चं । ३. द. ब. उ. सुसमपुस्तम

अर्थ :—(उस समयके) नर-नारी दो कोस ऊँचे, पूर्ण चन्द्रसदृश मुखवाले, बहुत विनय एवं शीलसे सम्पन्न और पृष्ठभागकी एकसी अट्टाईस हड्डियो सहित होते हैं ॥१६२३॥

। सुषमाकालका कथन समाप्त हुआ ।

सुषमासुषमाकालका प्रवेश एव उसका स्वरूप—

सुषमसुसमाभिधाणो, ताहे पविसेदि छट्ठमो कालो ।

तत्स पढमे पएसे, आऊ - पहुदोणि पुच्चं व ॥१६२४॥

अर्थ :—तदनन्तर सुषमसुषमा नामक छठा काल प्रविष्ट होता है । उसके प्रथम प्रवेशमें आयु आदिके प्रमाण पूर्वके सङ्ग ही होते हैं ॥१६२४॥

काल-सहाव-बलेणं, बड्ढते ताड मणुव - तिरियाणं ।

ताहे एस धरिस्ती, उत्तमभोगावणि ति सुपसिद्धो ॥१६२५॥

अर्थ :—काल स्वभावके प्रभावसे मनुष्य और तिर्यचोंकी आयु आदिक क्रमश वृद्धिजन्य होती जाती है । उस समय यह पृथिवी उत्तम-भोगभूमिके नामसे सुप्रसिद्ध हो जाती है ॥१६२५॥

तच्चरिमम्मि णराणं, आऊ पल्लस्य - प्यमाणं च ।

उदएण तिष्णि कोसा, उदय - दिग्गिदुज्जल - सरीरा ॥१६२६॥

अर्थ :—उस कालके अन्तमें मनुष्योकी आयु तीन पल्प-प्रमाण और ऊँचाई तीन कोस होती है तथा मनुष्य उदित होते हुए सूर्य सहस्र उज्ज्वल शरीर वाले होते हैं ॥१६२६॥

वे - सद - छप्पणाइं, पहुदो होंति ताण मणुवाणं ।

बहु - परिवार - विगुब्बण - समस्य - सत्तीहि संजुत्ता ॥१६२७॥

अर्थ :—उन मनुष्योके पृष्ठ-भागकी हड्डियां दोसी छप्पन होती हैं, तथा वे मनुष्य बहुत परिवारकी विक्रिया करनेमें समर्थ ऐसी शक्तियोंसे सहित होते हैं ॥१६२७॥

पुनः अवसर्पिणीका प्रवेश—

ताहे पविसदि नियमा, कमेण अबसर्पिणि ति सो कालो ।

एवं अञ्जा - खंडे, परियट्ठते दु - काल - चवकाणि ॥१६२८॥

अर्थ :—इसके पश्चात् पुनः नियमसे वह अवसर्पिणीकाल प्रवेश करता है । इसप्रकार आर्यसङ्घमें उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी रूपी कालचक्र प्रवर्तित होता रहता है ॥१६२८॥

नोट—कालचक्रको दर्शाने वाला चित्र गायः ३२३ के बाद अंकित है ।

पाँच म्लेच्छखण्ड और विद्याधर श्रेणियोंमें प्रवर्तमान कालका नियम—

पण-भेच्छ-खयरसेडिसु, अबसप्पुत्सप्पिणीए तुरिमम्मि ।

तब्बियाए हाणि - चयं, कमसो पढमाद् चरिमो त्ति ॥१६२६॥

अर्थ :—पाँच म्लेच्छ खण्डों और विद्याधर-श्रेणियोंमें अबसर्पिणी एवं उत्सर्पिणीकालमें क्रमशः चतुर्थ और तृतीय कालके प्रारम्भसे अन्त-पर्यन्त हानि एव वृद्धि होती रहती है । (अर्थात् इन स्थानोंमें अबसर्पिणीकालमें चतुर्थकालके प्रारम्भसे अन्त-पर्यन्त हानि और उत्सर्पिणीमें तृतीय कालके प्रारम्भसे अन्त तक वृद्धि होती रहती है । यहाँ अन्य कालोंकी प्रवृत्ति नहीं होती) ॥१६२६॥

उत्सर्पिणीके अतिदुपमा आदि तीन कालोंमें जीवों की संख्यावृद्धिका क्रम—

उत्सर्पिणीए अज्जाखंडे अविदुस्समस्स पढम - खणे ।

होति हु एए - तिरियाणि, जीवा सव्वाणि थोवाणि ॥१६३०॥

अर्थ —आर्यखण्डमें उत्सर्पिणीकालके अतिदुपमाकालके प्रथम क्षणमें मनुष्यों और तिर्यञ्चोंमें सब जीव अल्प होते हैं ॥१६३०॥

तत्तो कमसो बहवा, मणुवा तेरिच्छ-सयल-वियलक्खा ।

उप्पज्जति हु जाव य, दुस्समसुसमस्स चरिमो त्ति ॥१६३१॥

अर्थ :—इसके पश्चात् पुनः क्रमशः दुःपमसुपमाकालके अन्त पर्यन्त बहुतेके मनुष्य तथा सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय तिर्यञ्च जीव उत्पन्न होते हैं ॥१६३१॥

एक समयमें विकलेन्द्रियोंका नाम एव कल्पवृक्षोंकी उत्पत्ति—

णासंति एक-समए, वियलक्खा-अंगि-^१णिवह-कुल-मेया ।

तुरिमस्स पढम - समए, कप्पतरुणं पि उप्पत्ती ॥१६३२॥

अर्थ :—तत्पश्चात् एक समयमें विकलेन्द्रिय प्राणियोंके समूह एव कुलभेद नष्ट हो जाते हैं तथा चतुर्थकालके प्रथम समयमें कल्पवृक्षोंकी भी उत्पत्ति हो जाती है ॥१६३२॥

पबिसंति मणुव-तिरिया, जेतिय-मेत्ता जहण्ण-भोगख्खिदिं ।

तेत्थिय - मेवा होति हु, छक्कले भरह - एरवदे ॥१६३३॥

अर्थ :—जितने मनुष्य और तिर्यञ्च (चतुर्थकाल स्वरूप) जघन्य भोगभूमिमें प्रवेश करते हैं उतने ही जीव छह कालोंके भीतर भरत ऐरावत क्षेत्रोंमें होते हैं ॥१६३३॥

विशेषार्थ :—अवसर्पिणीके अतिदुःषमाकालके अन्तिम ४६ दिनोंमें अशुभ वर्षा होती है । उस समय विद्याधर और देव, मनुष्य एव तिर्यञ्चोके कुछ युगलोंको विजयार्थ और गंगा-सिन्धुकी बेदी स्थित गुफाओंमें रख देते हैं (गा० १५६६) । उत्सर्पिणीके अतिदुःषमा कालके प्रारम्भमें सुवृष्टि होनेके बाद वे जीव वहाँसे बाहर निकलते हैं (गा० १५८३), जो सख्यामें अति-अल्प होते हैं, इसी कारण उस समय भरत-ऐरावत क्षेत्रोंके आर्यखण्डोंमें मनुष्यों और तिर्यञ्चोकी संख्या अति-अल्प होती है (गा० १६३०) । उसके बाद अतिदुःषमा, दुःषमा और दुःषमसुषमा अर्थात् पहले, दूसरे और तीसरे कालके अन्त-पर्यन्त मनुष्यों तथा सकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवोंका यह प्रमाण बढ़ता जाता है । अर्थात् दुःषमसुषमाके अन्त तक इनकी उत्पत्ति होती रहती है (गा० १६३१) । इसके पश्चात् सुषमदुःषमा नामक चतुर्थ कालके प्रथम समयमें ही विकलेन्द्रिय प्राणियोंका विनाश हो जाता है और कल्पवृक्षाँकी उत्पत्ति हो जाती है (गा० १६३२) क्योंकि उस समय कर्मभूमिका तिरोभाव और भोगभूमिका प्रादुर्भाव हो जाता है ।

भरत-ऐरावत क्षेत्रोंके आर्यखण्डोंमें चतुर्थकाल स्वरूप इस जघन्य भोगभूमिमें जितनी संख्या प्रमाण मनुष्य और तिर्यञ्च प्रवेश करते हैं, उतने ही जीव उत्सर्पिणी सम्बन्धी १ सुषमदुःषमा, २ सुषमा और ३ सुषमसुषमा तथा अवसर्पिणी सम्बन्धी ४ सुषमसुषमा, ५ सुषमा और ६ सुषमदुःषमा इन छह कालोंमें रहते हैं (गा० १६३३) । इन छह कालोंमें अर्थात् १८ कोड़ाकोड़ी सागर पर्यन्त इन जीवोंकी संख्यामें हानि-वृद्धि नहीं होती है कारण कि उस समय मनुष्य और तिर्यञ्च युगल रूपमें ही जन्म लेते हैं और युगलरूपमें ही मरते हैं ।

विकलेन्द्रिय जीवोंकी उत्पत्ति एवं वृद्धि—

अवसर्पिणीए दुस्समसुसम - पवेसस्त पढम नमयम्मि ।

विर्षालदिय - उप्पत्ती, वड्ढी जीवाण थोव - कालम्मि ॥१६३४॥

अर्थ :—अवसर्पिणी कालमें दुःषमसुषमा (चतुर्थ) कालके प्रारम्भिक प्रथम समयमें ही विकलेन्द्रिय जीवोंकी उत्पत्ति तथा थोड़े ही समयके भीतर उनकी वृद्धि होने लगती है ॥१६३४॥

विशेषार्थ :—भोगभूमि सम्बन्धी उपर्युक्त तीन-तीन अर्थात् छह काल व्यतीत हो जानेके बाद दुःषमसुषमा (चतुर्थ) कालके प्रारम्भिक समयमें ही विकलेन्द्रिय जीवोंकी उत्पत्ति हो जाती है ।

कमसो बढंति हुतिय-काले मज्जुव-तिरियाखमवि' संखा ।

तसो उत्सप्पिणिए, तविए बडुंति पुब्बं वा ॥१६३५॥

अर्थ :- इस प्रकार तीन कालोंमें मनुष्य और तिर्यक् जीवोंकी संख्या क्रमशः बढ़ती ही रहती है । फिर इसके पश्चात् उत्सर्पिणीके तीन अर्थात् अतिदुःषमा, दुःषमा और दुःषमसुषमा कालोंमें भी पहलेके सदृश ही वे जीव वर्तमान रहते हैं ॥१६३५॥

अवसर्पिणी-उत्सर्पिणीकालोंका प्रमाण—

अवसर्पिणि-उत्सर्पिणि-काल-च्चिय रहट-घटियणाएणं ।

होति अणंताणंता, भरहेरावद - खिविम्मि पुढं ॥१६३६॥

अर्थ :- भरत और ऐरावत क्षेत्रमें रँहट-घटिका-न्यायसे अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी काल अनन्तानन्त होते हैं । (अर्थात् जैसे रँहटकी घड़ियाँ चक्रवत् घूमती हुई बार-बार ऊपर एवं नीचे आती-जाती हैं, उसीप्रकार अवसर्पिणीके बाद उत्सर्पिणी और उत्सर्पिणीके बाद अवसर्पिणी इस क्रमसे सदा इन कालोंका परिवर्तन होता ही रहता है) ॥१६३६॥

हुण्डावसर्पिणी कालका निर्देश एव उसके चिह्न—

अवसर्पिणि-उत्सर्पिणि-काल-सलाया गदे असंख्खणि ।

हुण्डावसर्पिणी ३सा, एक्का जाएदि तस्स चिण्हमिमं ॥१६३७॥

अर्थ :- असंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी कालकी शलाकाएँ बीत जानेपर प्रसिद्ध एक हुण्डावसर्पिणी आती है; उसके चिह्न ये हैं ॥१६३७॥

३तस्सि पि सुसमबुस्सम-कालस्स ४ठिविम्मि थोव-अवसेसे ।

जिवडदि पाउस-पहुवो, विर्यालिदिय - जीव - उप्पत्ती ॥१६३८॥

अर्थ :- इस हुण्डावसर्पिणी कालमें सुषमदुःषम (तृतीय) कालकी स्थितिमें कुछ कालके अवशिष्ट रहने पर भी वर्षा आदिक पडने लगती है और विकलेन्द्रिय जीवोंकी उत्पत्ति होने लगती है ॥१६३८॥

कप्पतरूण विरामो, वावारो होदि कम्मभुमीए ।

तवकाले जायंते, पढम - जिण्यो पढम - चक्की य ॥१६३९॥

१. द. ज. तिरियपवि, ब. क उ. तिरियमवि । २. द. ब. क. ज. य. उ. तो । ३. द. ब. क. ज. य. उ. तस्सं । ४. द. ब. क. ज. य. उ. विदिम्मि ।

अर्थ :—इसी कालमें कल्पवृक्षोंका अन्त और कर्मभूमिका व्यापार प्रारम्भ हो जाता है तथा प्रथम तीर्थंकर और प्रथम चक्रवर्ती भी उत्पन्न हो जाते हैं ॥१६३६॥

चक्रिस्तस्य विजय-अंगो, सिल्वुद्-गमनं च षोड-जीवाणं ।

चक्रकथराउ' विभाजं, हुवेदि वंसस्त उप्यस्यी ॥१६४०॥

अर्थ :—चक्रवर्तीका विजय-भङ्ग और (तृतीय कालमें ही) षोडसे जीवोंका मोक्ष गमन होता है, तथा चक्रवर्ती द्वारा द्विजोंके वंश (ब्राह्मण वंश) की उत्पत्ति भी होती है ॥१६४०॥

दुस्तमसुसमे काले, अट्टावण्णा सलाय - पुरिसा य ।

अवभावि - सोलसते, ससु तित्येसु घम्म - वोच्छेवो ॥१६४१॥

अर्थ :—दुःषमासुषमा कालमें अट्टावन ही शलाका पुरुष होते हैं और नोवसे सोलहवें तीर्थंकर पर्यन्त सात तीर्थोंमें घर्मकी व्युच्छिति होती है ॥१६४१॥

विशेषार्थ :—प्रत्येक उत्सर्पिणी अवसर्पिणी कालमें ६३ जीव तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव, नारायण और प्रतिनारायण पदको धारण करनेवाले शलाका पुरुष होते हैं ।

⊛ वर्तमान हुण्डावसर्पिणी कालके चतुर्थकालमें शलाका पुरुषोंकी संख्या ५८ है । भगवान् आदिनाथ तीसरे कालमें ही मोक्ष चले गए थे और शान्तिनाथ, कुन्धुनाथ तथा अरनाथके जीव एक ही समयमें तीर्थंकर भी थे और चक्रवर्ती भी थे तथा प्रथम नारायण त्रिपृष्ठका जीव ही अन्तिम तीर्थंकर महावीर हुआ । इसप्रकार शलाका जीवोंकी संख्या ५८ हुई ।

⊛ वर्तमान हुण्डावसर्पिणीकालमें तीन तीर्थंकर एक ही समयमें दो पदधारी हुए तथा भगवान् महावीरका जीव नारायण और तीर्थंकर इन दो पदोका धारक हुआ । इसप्रकार इस कालमें चार जीव दो पदोंके धारक होनेसे शलाका जीवोंकी संख्या ५९ हुई ।

⊛ यदि आदिनाथ भगवान्के तीसरे कालमें मोक्ष-गमनकी विवक्षा न की जाय और भगवान् महावीरके पूर्वभव (त्रिपृष्ठ नारायण) की विवक्षा भी न की जाय तो इस हुण्डावसर्पिणी-कालमें केवल तीन तीर्थंकर दो पदधारी होनेसे शलाका पुरुषोंकी संख्या ६० हुई ।

एककरस होंति व्हा, कलह-पिया नारदा य षव-संसा ।

सत्तम - तेषोसंतिम - तित्थयराणं च उवसग्गो ॥१६४२॥

अर्थ :—स्यारह रुद्र और कलह-प्रिय नौ नारद होते हैं तथा सातवें, तेईसवें और अन्तिम तीर्थंकर पर उपसर्ग भी होता है ॥१६४२॥

तदिय - चतु - पंचमेसुं, कालेसुं वरम-वम्भ-वासयरा ।

विविह - कुदेव - कुलिणी, वीसति 'बुद्ध - पाविट्टा ॥१६४३॥

चंडाल-सबर-पाथा, पुसिब-आहल-चिलाव' -पुव्वि-कुसा ।

दुस्समकासे कक्की, उक्कक्की होंति बावासा ॥१६४४॥

अर्थ :- तृतीय, चतुर्थ एवं पंचम कालमें उत्तम धर्मको नष्ट करने वाले विविध प्रकारके दुष्ट, पापिष्ठ, कुदेव और कुलिङ्गी भी दिखने लगते हैं, चाण्डाल, सबर, पाथु (स्वपथ), पुसिन्द, साहल और किरात आदि जातियाँ उत्पन्न होती हैं, तथा दुःखमा कालमें बयालीस कल्की एवं उक्क-कल्की होते हैं ॥१६४३-१६४४॥

अइयुट्टि - अथाबुट्टी, भूवड्डी वज्ज-अग्गि-पञ्जुहा य ।

इह पाणाविह - दोसा, विचित्त - नेवा हवति पुदं ॥१६४५॥

। एवं काल-विभागो समस्तो ।

॥ एवं भरहसेस-परुक्कणं^३ समस्तं ॥

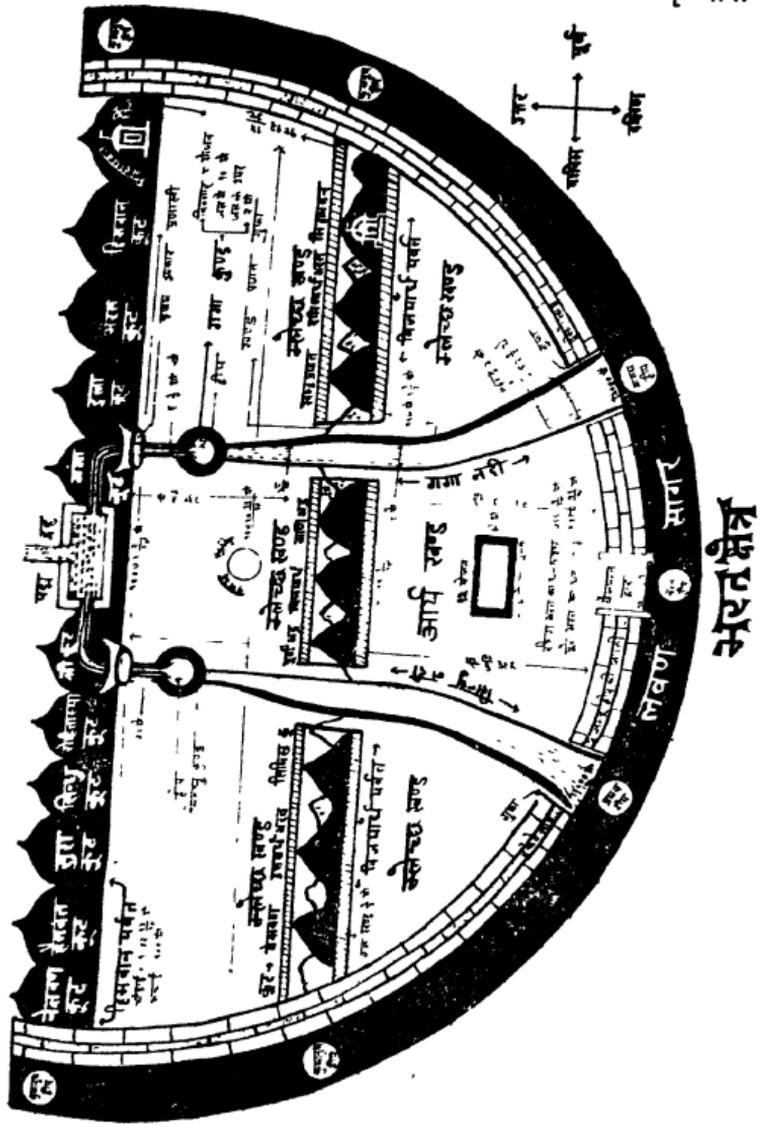
अर्थ :- अतिवृद्धि, अनवृद्धि, भ्रूवृद्धि और वज्जाग्नि आदिका गिरना, इत्यादि विचित्र भेदों सहित नानाप्रकारके दोष इस दुष्टावसर्पिणी-कालमें हुआ करते हैं ॥१६४५॥

। इसप्रकार काल विभागका कथन समाप्त हुआ ।

[भरतक्षेत्र का चित्र पृष्ठ ४७० पर देखिये]

। इसप्रकार भरतक्षेत्रका प्ररूपण समाप्त हुआ ।

१. द. व. क. च. व. उ. कट्ट। २. व. क. उ. चिलास, द. व. व. चिलास। ३. द. व. क.।



हिमवान् पर्वतका उत्सेध, अवगाह एव विस्तार—

सबमुच्छेदं हिमबं, खुल्लो पणुवीस - जोयणुव्वेहो^१ ।

विकल्लंभेण सहस्सं, बावण्णा बारसेहि^२ भर्गेहिं ॥१६४६॥

। १०० । २५ । १०५२३३ ।

अर्थ :—क्षुद्र हिमवान् पर्वतकी ऊँचाई सो योजन, अवगाह पच्छीम योजन और विस्तार एक हजार बावन योजन तथा एक योजनके उत्तरीम भागोंमेंसे बारह-भाग अधिक है ॥१६४६॥

हिमवान् पर्वतकी उत्तर-जीवाका प्रमाण—

तस्स य उत्तरजीवा, चउवीस-सहस्स-जव-सयाइं पि ।

बत्तीसं एकक - कला, सव्व - समासेण णिट्ठिटा ॥१६४७॥

। २४६३२,१ ।

अर्थ :— उस हिमवान् पर्वतकी उत्तरजीवा सब मिलाकर चौबीस हजार नीमी बत्तीस योजन और योजनके उत्तरीम भागोंमेंसे एक भाग-प्रमाण है ॥१६४७॥

हिमवान्के उत्तरमें धनुष पृष्ठका प्रमाण—

खुल्ल - हिमबंत - सेसे, उत्तरभागम्मि होवि धणुपट्टं^३ ।

पणुवीस-सहस्साइं, बोण्णि-सया तीस^३ चउ-कल्लम्भहिया ॥१६४८॥

। २५२३०,५ ।

अर्थ :—क्षुद्र हिमवान् पर्वतका धनुषपृष्ठ उत्तरभागमें पच्छीस हजार दोसी तीस योजन और एक योजनके उत्तरीम-भागोंमेंसे चार भाग अधिक है ॥१६४८॥

हिमवान् पर्वतकी चूलिकाका प्रमाण—

तस्स य चूलिय-माणं, पंच - सहस्साणि जोयणाणि पि ।

तीसाहिय-बोण्णि-सया, सत्त - कला अट्ठ - अबिरित्ता ॥१६४९॥

। ५२३०३,८ ।

अर्थ :—उस पर्वतकी चूलिकाका प्रमाण पाँच हजार दोसी तीस योजन और एक योजनके उत्तरीम भागोंमेंसे साढ़े सात भाग अधिक है ॥१६४९॥

१. द. ब. क. ज. उ. जोयणोव्वेहो । य. जायणोव्वेहो । २. द. ब. क. ज. व. उ. भागो व ।

हिमवान् पर्वतकी पार्श्वभुजाका प्रमाण—

पंच-सहस्सा ति - सया, पण्णासा जोयणाणि अट्ठ-जुवा ।

पण्णारस य कलाओ, पस्सभुजा खुल्ल - हिमबंते ॥१६५०॥

। ५३५०३८ ।

अर्थ :-—सुद्ध हिमवान् पर्वतकी पार्श्वभुजाका प्रमाण पाँच हजार तीन सौ पचास योजन और एक योजनके उन्नीस भागोंमेंसे साठे पन्द्रह-भाग अधिक है ॥१६५०॥

पर्वतकी तट-वेदियाँ एव उनका प्रमाण—

हिमबंत-सरिस-दीहा, 'तड-वेदी बोण्णि होंति 'मूमितले ।

वे कोसा उत्तुंगा, पंच-घणुस्सद-पमाण-वित्थिण्णा ॥१६५१॥

। को २ । द ५०० ।

अर्थ :-—भूमितलपर हिमवान् पर्वतके सदृश लम्बी उसको दो तट-वेदियाँ हैं । ये वेदियाँ दो कोस ऊँची और पाँचसौ घनुष प्रमाण विस्तार वाली हैं ॥१६५१॥

पर्वतके पार्श्वभागोंमें वनखण्ड एवं वेदी—

जोयण-वल्ल-विक्खंभो, उभए पासेसु होवि घण - संडो ।

बहु-तोरण-दार-जुवा, वेदी पुण्विल्ल-वेदिएहि समा^३ ॥१६५२॥

। वण जो १ ।

अर्थ :-—पर्वतके दोनों पार्श्वभागोंमें अर्ध योजन-प्रमाण विस्तारसे युक्त वन-खण्ड हैं तथा पूर्वोक्त वेदियोंके समान बहुत तोरण-द्वारोंसे सयुक्त एक वेदी है ॥१६५२॥

खुल्ल-हिमबंत-सिहरे, समंतदो पउम - वेविया विक्खा ।

वण - वणवेदी - सळ्वं, पुळ्वं पिव एत्थ वत्तळ्वं ॥१६५३॥

अर्थ :-—सुद्ध हिमवान् पर्वतके शिखर पर चारों ओर पयरागमणिमय दिव्य वेदिका है । वन और वनवेदी आदि सबका कण्ठ, पूर्वके सदृश यहाँ पर भी करना चाहिए ॥१६५३॥

हिमवान् पर्वतस्थ वूटोके नाम—

सिद्ध-हिमबन्त-कूडा, भरह-इला-गंगकूड - सिरिणामा' ।

रोहीवासा सिधू, सुर - हेमबवं च वेसमणं ॥१६५४॥

। ११ ।

अर्थ :—हिमवान् पर्वतके ऊपर सिद्ध, हिमवान्, भरत, इला, गङ्गा, श्री, रोहिताम्या, सिन्धु, सुरा, हेमवत और वैश्रवण ये ग्यारह कूट हैं ॥१६५४॥

कूटोका विस्तार आदि—

उदयं भू-मुह-वासं, मज्झं पणुबीस तत्तियं बलिदं ।

मुह - भूमि - जुदस्सद्धं, पत्तेक्कं जोयणाणि कूडाणं ॥१६५५॥

। २५ । २५ । ३५ । १८३ ।

अर्थ :—इनमेंसे प्रत्येक कूटकी ऊँचाई पच्चीस योजन, भू-विरतार भी पच्चीस योजन, मुख विस्तार साढ़े बारह योजन और मध्यविस्तार भूमि एव मुखका अर्ध ($\frac{३५}{२} + \frac{३५}{२} = ३५$ अर्थात् १८३ यो०) भाग प्रमाण है ॥१६५५॥

प्रथम कूट पर अवस्थित जिन-भवनका निरूपण—

एक्कारस पुब्बाबी, सम - बट्टा वेदिएहि रमणिज्जा ।

बेंतर - पासाह - जुवा, पुब्बे कूडम्मि जिए - भवणं ॥१६५६॥

अर्थ :—पूर्वादि दिशाओंमें क्रमशः स्थित ये ग्यारह कूट समान गोल हैं, वेदियोंसे रमणीय हैं और अन्तर देवोंके भवनोंसे संयुक्त हैं । इनमेंसे पूर्व कूटपर जिन-भवन है ॥१६५६॥

आयामो पण्णासं, बित्थारो तहलं च जोयणया ।

पणहत्तरि-वल-मुबभो, ति-हार-जुबस्स जिए-जिकेवस्स ॥१६५७॥

। ५० । २५ । ३५ । ३ ।

अर्थ :—तीन द्वारों वाले इस जिन-भवनकी लम्बाई पचास योजन, विस्तार पच्चीस योजन और ऊँचाई साढ़े सैंतीस योजन है ॥१६५७॥

पुब्ब - मुह - हार - उदओ, जोयणया अट्ट तहलं वं ।

वं - समं तु पबेसं, ताणद्धं बल्लिणुत्तर - जुवारे ॥१६५८॥

। ८ । ४ । ४ । ४ । २ । २ ।

अर्थ :—(उपयुक्त तीन द्वारोंमेंसे) पूर्वमुख द्वारकी ऊंचाई आठ योजन, विस्तार चार योजन और विस्तारके सदृश प्रवेश भी चार योजन प्रमाण है। शेष दक्षिण और उत्तर द्वारकी लम्बाई आदि पूर्व-द्वारसे आधी है ॥१६५८॥

अट्टे व य दोहत्तं, दीहृच्चउभाग - तत्थ - विस्थारं ।

चाउ - जोयण - उच्छेहो, 'वेवच्छंदो जिण - णिवासे ॥१६५९॥

अर्थ :—जिन भवनमें आठ योजन लम्बा, लम्बाईके चतुर्थ भाग (दो योजन) प्रमाण चौड़ा और चार योजन ऊंचा देवच्छन्द है ॥१६५९॥

सिहासणादि-सहिया, चामर-कर-णाग-जक्ख-मिहुण-जुवा ।

पुरु - जिण - तुंगा - पडिमा, अट्ठत्तर-सय-पमाणाओ ॥१६६०॥

सिरिदेवी सुददेवी, सव्वाण - सणक्कुमार - जक्खणां ।

रूवाणि अट्ट - भंगल - देवच्छंदम्मि चेट्ठंति ॥१६६१॥

अर्थ :—सिहासनादि सहित, हाथमें चमर लिए हुए नाग-यक्ष-युगलसे संयुक्त, वृषभ जिनेन्द्र सदृश उत्तुङ्ग, एकसी आठ संख्या प्रमाण जिन प्रतिमाएँ तथा श्रीदेवी, श्रुतदेवी, सर्वाल्लुदेव और सनत्कुमार यक्षोंकी मूर्तियाँ एवं आठ मङ्गलद्रव्य देवच्छन्दकपर स्थित हैं ॥१६६०-१६६१॥

संबंत - कुसुम - दामा, पारावय-भोर-कंठसिंह-वण्णा ।

मरगय - पवाल - वण्णा, विदाण - सिवहा चिरायंति ॥१६६२॥

अर्थ :—वहाँपर लटकती हुई पुष्पमालाओं सहित कबूतर एवं मयूरके कण्ठ तथा मरकत और मूंगा सदृश वर्ण वाले चंदोबोंके समूह शोभायमान हैं ॥१६६२॥

भंभा^१-भुवंग-महल-जयघंटा-कंसताल - तिबलि - जुवा ।

पटुपटह - संख - काहल - सुरडुंडुहि - सह - गंभीरा ॥१६६३॥

जिणपुर - बुवार - पुरबो, परोक्कं ववणमंडवा विच्चा ।

पणवीस - जोयणाई, वासो बिउणाइ आयाओ ॥१६६४॥

। २५ । ५० ।

अर्थ :—प्रत्येक जिनपुर-द्वारके आगे भम्भा (भेरी), मृदङ्ग, मईल, जयघण्टा, कान्त्यताल और तिबलीसे संयुक्त तथा पटुपटह, शङ्ख, काहल और देवतुन्दुभि आदि बाजोंके शब्दोंसे गम्भीर ऐसे

दिव्य मुख-मण्डप हैं। इन मण्डपोंका विस्तार पच्चीस योजन और लम्बाई पचास योजन प्रमाण है ॥१६६३-१६६४॥

अट्ट च्चिय जोयणया, अदिरित्ता होदि ताण उच्छेहो ।

अभिसेय-गोद-अबलोयणाण वर - मंडवा य तप्पुरदो ॥१६६५॥

अर्थ :—इन मण्डपोंकी ऊंचाई आठ योजनसे अधिक है। इनके आगे अभिगंक, गीत और अबलोकनके उत्तम मण्डप हैं ॥१६६५॥

अउगोउराणि सालत्तादयं वीहीसु माणबंभा य ।

णव-यूहा तह 'वण-धय-चित्ताक्खोणीओ जिण-णिवासेसु ॥१६६६॥

अर्थ :—जिन भवनोमे चार गोपुर, तीन प्राकार, वीथियोमे मानस्तम्भ, नी स्तूप, वनभूमि, ध्वज-भूमि और चैत्यभूमि होती हैं ॥१६६६॥

सव्वे गोउर - दारा, रमणिउजा पंच-वण्ण-रयणमया ।

बोउल - तोरण - जुत्ता, णाणाबिह - मत्तवारणया ॥१६६७॥

अर्थ :—पांच वर्णके रत्नोसे निर्मित सब गोपुरद्वार, पुतली-युक्त तोरणों सहित और नाना-प्रकारके मत्तवारणों (टोडियो) से रमणीय है ॥१६६७॥

बहु-सालभंजियाहि, सुर-कोकिल-वरिहिणावि-पक्खीहि ।

महुर - रवेहि सहिवा, णक्खंताणेय - धय^२ - बडायाहि ॥१६६८॥

अर्थ :—(ये गोपुरद्वार) बहुतसी सालभंजिकाओं (पुतलियों) एवं मधुच शब्द करने-वाले सुरकोकिल और मयूर आदि पक्षियों सहित तथा नाचती हुई अनेक छवजा-पताकाओं सहित हैं ॥१६६८॥

एला-समाल-सबली-सबंग-कंकोल - 'कवल्लि - पट्टवीहि ।

णाणातर - रयणोहि, उउजाण - वणा विराजंति ॥१६६९॥

अर्थ :—वहाँके उद्यानवन इलायची, तमाल, लवली, लोंग, कंकोल (क्षीतल चीनीका वृक्ष) और केला आदि नाना उत्तम वृक्षोंसे शोभायमान हैं ॥१६६९॥

कल्हार-कमल-कंदल-नीलुप्पल-कुमुद-कुसुम - संछण्णा ।

जिण-उज्जाण-वणेसुं, पोक्सरणो - वावि - वर-कूवा ॥१६७०॥

अर्थ :—जिनगृहके उद्यान-बनोमे कल्हार, कमल-कन्दल, नीलकमल और कुमुदके फूलोंसे व्याप्त पुष्करिणी, वापी और उत्तम कूप हैं ॥१६७०॥

णंदादीम्र ति-मेहल, ति-पीढ-पुब्बाणि घम्म-चक्काणि ।

चउ-वरण-मज्झ - गयाणि, चेदिय - हक्खाणि सोहंति ॥१६७१॥

अर्थ :—चारों बनोके मध्यमे तीन मेखला-युक्त नन्दादिक वापिकाएँ, तीन पीठों वाले घर्मचक्र और चैत्यवृक्ष शोभायमान हैं ॥१६७१॥

शेष कूटोंपर स्थित व्यन्तर-नगरिका निरूपण—

सेसेसुं कूडेसुं, खेंतर - देवाण होंति पासादा ।

चउ-तोरण-वेदि-जुवा, णाणाविह - रयण - जिम्मविदा ॥१६७२॥

अर्थ :—शेष कूटोंपर चार तोरण-वेदियो सहित और नानाप्रकारके रत्नोंसे निर्मित व्यन्तर देवोंके भवन हैं ॥१६७२॥

हेमवद - भरह - हिमवंत - वेसवण - णामधेय-कूडेसुं ।

णिय - कूड - णाम - देवा, सेसे णिय-कूड-णाम-देवीओ ॥१६७३॥

अर्थ :—हेमवत, भरत, हिमवान् और वैश्रवण नामक कूटोंपर अपने-अपने कूटोंके नाम धारक देव तथा शेष कूटोंपर अपने-अपने कूटोंके नामकी देवियाँ रहती हैं ॥१६७३॥

बहु - परिवारेहि जुवा, चेहुंते तेसु देव - देवीओ ।

दस-घणु-उज्जेह-तणू, सोहंमिदस्स ते य परिवारा ॥१६७४॥

अर्थ :—इन कूटों पर बहुत परिवार सहित और दस-घणु प्रमाण ऊँचे शरीरसे युक्त जो देव-देवियाँ स्थित हैं, वे सोषमंडपके परिवार स्वरूप हैं ॥१६७४॥

ताणं वर - पासादा, सकोस - इगितीस जोयणा-दंदा ।

दो - कोस - सट्ठि - जोयण - उदंया सोहंति रयणमया ॥१६७५॥

अर्थ :—इन व्यन्तर देव-देवियोंके रत्नमय भवन विस्तारमें इकतीस योजन एक कोस और ऊँचाईमें बासठ योजन दो कोस प्रमाण होते हुए शोभायमान हैं ॥१६७५॥

पायार-बलहि-गोउर-धबलामल - वेदियाहि परियरिया ।

देवाण होंति अयरा, बसप्पमाणेसु कूड - सिहरेसुं ॥१६७६॥

अर्थ :—दस कूटोके शिखरों पर प्राकार, बलभी (छज्जा) गोपुर और धवल-निर्मल वेदिकाओंसे व्याप्त देवोके नगर हैं ॥१६७६॥

धुब्धंत-धय-वडाया, गोउर - दारेहि सोहिदा बिउला ।

वर-वज्ज-कवाड-जुदा, उववण-पोक्खरणि-वावि-रमणिज्जा ॥१६७७॥

अर्थ :—देवोंके ये नगर उड़ती हुई ध्वजा-पताकाओं सहित गोपुरद्वारोंसे शोभित, विशाल, उत्तम वज्रमय कपाटोंसे युक्त और उपवन, पुष्करिणी एवं वापिकाओंसे रमणीय है ॥१६७७॥

कमलोदर-वण्ण-णिहा, तुसार-ससिकिरण-हार-संकासा ।

दियसिय-चंपय-वण्णा, णोलुप्पल-रत्त-कमल-वण्णा य ॥१६७८॥

अर्थ :—(इन नगरोंमेंसे कितने ही नगर) कमलोदर सदृश, (कितने ही) तुपार, चन्द्र-किरण एवं हार सदृश, (कितने ही) विकसित चम्पक और (कितने ही) नील तथा रक्त-कमल सदृश वर्णवाले हैं ॥१६७८॥

वज्जिदरणील - मरगय - कक्केयण - पउमराय-संपुण्णा ।

जिण - भवर्णेहि सणाहा, को सक्कइ वण्णिटुं सयलं ॥१६७९॥

अर्थ :—वे नगर वज्रमणि (हीरा), इन्द्रनीलमणि, मरकतमणि, कर्कटन और पद्मगम मणियोंसे परिपूर्ण है तथा जिन-भवनों सहित है । इनका सम्पूर्ण वर्णन करनेमें कौन समर्थ हो सकता है ? ॥१६७९॥

हिमवान् पर्वतस्थ पद्मद्रहका वर्णन—

हिमवंतयस्स मज्जे, पुव्वावरमायदो य पउमदहो ।

पण-सय - जोयण - रुंदो, तद्दुगुणायाम - सोहिल्लो ॥१६८०॥

| ५०० | १००० |

अर्थ :—हिमवान् पर्वतके मध्यमें पूर्व-पश्चिम लम्बायमान, पाँचसौ योजन विस्तृत और एक हजार योजन प्रमाण लम्बाईसे शोभायमान पद्म नामक द्रव्य है ॥१६८०॥

दस-जोयणाणि गहिरो, चउ-तोरण-वेदि-बंढण-बणोह ।

सोबाणोह सहिदो, सुह - संचर - रयण - रचिदोह ॥१६८१॥

अर्थ :—यह पद्मद्रव्य दस योजन गहरा तथा चार तोरणों, वेदियों, नन्दनवनों और अच्छी तरहसे गमन करने योग्य, उत्तम रत्नोंसे विरचित सोपानों सहित है ॥१६८१॥

वेसवण - णाम - कूडो, ईसाणे होवि 'पंकय - बहस्स ।

सिरिणिचय-णाम-कूडो, सिहि-दिस-भागम्हि णिट्ठो ॥१६८२॥

अर्थ :—इस पद्मद्रव्यके ईशानकोणमें वंशवण नामक कूट और आग्नेयमें श्रीनिचय नामक कूट कहा गया है ॥१६८२॥

सुल्ल-हिमबंत-कूडो, णड्ढरिदि-भागम्मि तस्स णिट्ठो ।

पच्छिम - उत्तर - भागे, कूडो एरावदो णाम ॥१६८३॥

अर्थ :—उसके नैऋत्य भागमें क्षुद्रहिमवान् कूट और पश्चिमोत्तर भागमें ऐरावत नामक कूट कहा गया है ॥१६८३॥

सिरिसंचय - कूडो तह, भाए पउम - द्हस्स उत्तरए ।

एवेह कूडोह, हिमबंतो पंच - सिहरि - णाम - बुवो ॥१६८४॥

अर्थ :—पद्मद्रव्यके उत्तरभागमें श्रीसञ्चय नामक कूट स्थित है । इन पाँच कूटोंसे हिमवान् पर्वत 'पंचशिखरी' नामवाला है ॥१६८४॥

उववण-वेदी-जुत्ता, बेंतर - जयरोहि होंति रमणिज्जा ।

सब्बे कूडा एवे, णाणाविह - रयण - णिम्मविदा ॥१६८५॥

अर्थ :—नाना प्रकारके रत्नोंसे निर्मित ये सब कूट उपवन-वेदियों सहित, ध्वन्तरोंके नगरोंसे रमणीय हैं ॥१६८५॥

उत्तरदिसा-बिभागे, जलम्मि पउम - द्हस्स जिण-कूडो ।

सिरिणिचयं वेहलियं, अंकमयं अंबरीय - रुचमं च ॥१६८६॥

सिहरी-उप्यल-कूडा, पदाहिणा ह्रीति तस्स सलिलम्मि ।

तड' - वण - वेवीहि जुवा, वेंतर - णयरेहि^१ सोहिस्सा ॥१६८७॥

अर्थ :—पद्मद्रहके जलमे उत्तरदिशाकी ओरसे प्रदक्षिणरूपमें जिनकूट, श्रीनिचय, वेडूर्य, अङ्कमय, अम्बरीक, रुचक, शिखरी और उत्पलकूट, ये कूट उसके जलमें तट-वेदियों और वन-वेदियों सहित व्यन्तर-नगरोसे शोभायमान हैं ॥१६८६-१६८७॥

उदयं भू - मुहवासं, मज्झं पणवीस तत्तियं दल्लिदं ।

मुह - भूमि - जुबस्सद्धं, पत्तेबकं जोयणाणि कूडाणं ॥१६८८॥

। २५ । २५ । ३५ । ३५ ।

अर्थ :—उन कूटोंमेंसे प्रत्येक कूटकी ऊँचाई पच्चीस योजन, भूविस्तार भी पच्चीस योजन, मुख-विस्तार साठे बारह योजन और मध्य विस्तार भूमि एवं मुसके जोडका अर्धभाग [{ (२५ + १२) ÷ २ = } १९ अर्थात् १८ ३/४ योजन] प्रमाण है ॥१६८८॥

पद्मद्रहमे स्थित कमलका निरूपण—

दह - मज्झे अरविदय - णालं बादाल - कोसमुम्बिद्धं ।

इगि - कोसं बाहल्लं, तस्स मुणालं ति रजदमयं ॥१६८९॥

। को ४२ । वा को १ ।

अर्थ :—सरोवरके मध्यमे बयालीस कोस ऊँचा और एक कोस मोटा कमल-नाल है । इसका मृणाल रजतमय और तीन कोस विस्तृत है ॥१६८९॥

कंबो^१ अरिष्ट-रयणं, णालो वेदलिय-रयण-णिम्मविदो ।

तस्सुबंरिं वर - धियसिय - पउमं चउ - कोसमुम्बिद्धं ॥१६९०॥

। को ४ ।

अर्थ :—उस कमलका कन्द अरिष्टरत्नसे और नाल वेडूर्यमण्डिसे निर्मित है । इसके ऊपर चार कोस ऊँचा एक किंचित् विकसित पद्म है ॥१६९०॥

चउ-कोस-हंइ-मज्झं, अंते वो-कोस-महव चउ - कोसा ।

पत्तेबकं इगिकोसं, उस्सेहायाम - कण्णिया तस्स ॥१६९१॥

। को ४ । को २ । को ४ । को १ ।

अर्थ १—उसके मध्यमें चार कोस और अन्तमें दो अथवा चार कोस विस्तार है। उसकी कर्णिकाकी ऊँचाई एक कोस और उसका आयाम भी एक कोस प्रमाण है ॥१६६१॥

अहवा दो-दो कोसा, एक्कार - सहस्स - पत्त - संजुत्ता ।

तक्कण्णिकाय^१ उव्वरि, वेहलिय - कवाड - संजुत्ता ॥१६६२॥

। को २ । को २ । प ११००० ।

कूडागार^२-महारिह-भवणो वर-फलिह-रयण-णिम्मिबिओ ।

आयाम-वास-तुंगा, कोसं कोसद्ध - ति - चरणा कमसो ॥१६६३॥

। को १ । ३ । ३ ।

अर्थ २—अथवा, कर्णिकाकी ऊँचाई दो कोस और लम्बाई दो कोस प्रमाण है। यह कमल कर्णिका ग्यारह हजार पत्तोंसे संयुक्त है। इस कर्णिकाके ऊपर वैदूर्यमणिमय कपाटोंसे संयुक्त और उत्तम स्फटिकमणिसे निर्मित कूटागारोंमें श्रेष्ठ भवन है। इस भवनकी लम्बाई एक कोस, विस्तार अर्धकोस और ऊँचाई एक कोसके चार भागोंमेंसे तीन भाग (३ कोस) प्रमाण है ॥१६६२-१६६३॥

कमलमें स्थित श्रीदेवीका निरूपण—

तम्मि^३ ठिया सिरिदेवी, भवणे पलिदोबमप्पमाणाऊ ।

वस^४ चाव्वणि तुंगा, सोहम्मिदस्स सा - देवी ॥१६६४॥

अर्थ ३—इस भवनमें स्थित श्री नामक देवी पत्योपम प्रमाण आयुकी धारक और दस धनुष ऊँची है। वह सोषमंन्द्रको देवी (आज्ञाकारिणी) है ॥१६६४॥

सिरिदेवीए होंति हु, देवा सामाणिया^५ य तणुरक्खा ।

परिसत्तिवयाणीया, पइण्ण - अभियोग - किव्विसिया ॥१६६५॥

अर्थ ४—श्रीदेवीके सामानिक तनुरक्षक तीनों प्रकारके पारिपद, अनीक, प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विषिक जातिके देव होते हैं ॥१६६५॥

ते सामाणिय - देवा, विवहुज्जल-भूसणेहि कयसोहा ।

सुपसत्थ - विउल - काया, चउस्सहस्सा - पमाणा य ॥१६६६॥

। ४००० ।

१ द. व. क. ज. उ. तक्कण्णिकाया । २ द. व. क. ज. य. उ. कूडागारामहारिह । ३ द. व. क. ज. य. उ. तसिरिया । ४ द. व. जस हेवणि । ५ द. सामाणिय तणुरक्खा । ६ द. व. विहुज्जल । य. उ. विहिहुज्जल । ७ द. व. चउस्सद वि या पमाणाया, क. चउस्सदस्सयपमाणा य. ज. य. उ. चउस्साद चिया पमाणाया ।

अर्थ :—अनेक प्रकारके उज्ज्वल आधुपस्थोसे शोभायमान तथा सुप्रकृत एवं विद्याल
कायवाले वे सामानिक देव चार हजार प्रमाण हैं ॥१६६६॥

ईसाण^१-सोम-मारुत-बिसाखदि-भागेसु पञ्चम-उवरिम्मि ।

सामानियाण भवणा, होंति सहस्साणि चत्वारि ॥१६६७॥

। ४००० ।

अर्थ :—ईशान, सोम (उत्तर) और वायव्य दिशाओंके भागोंमें पक्षोंके ऊपर उन
सामानिक देवोंके चार हजार भवन हैं ॥१६६७॥

सिरिदेवी - तनुरकक्षा, बेवा सोलस - सहस्सया तारुं ।

पुठ्वादिस् पत्तोषकं, चत्वारि - सहस्स - भवणाणि ॥१६६८॥

। १६००० ।

अर्थ :—श्रीदेवीके तनुरक्षक देव सोलह हजार हैं । पूर्वादिक दिशाओंमेंसे प्रत्येक दिशामें
इनके चार-चार हजार भवन हैं ॥१६६८॥

अम्भंतर - परिसाए^२, ^३आइच्चो णाम सुर-वरो होदि ।

बत्तीस - सहस्साणं, देवानं अहिबई धीरो ॥१६६९॥

अर्थ :—अभ्यन्तर पण्डितम बत्तीस हजार देवोंका अधिपति आदित्य नामक धर्मशास्त्री
उत्तम देव है ॥१६६९॥

पउमदह - पउमोवरि, अग्गि - विसाए हवंति भवणाइं ।

बत्तीस - सहस्साइं, ताणं वर - रयण - रइवाइं ॥१७००॥

। ३२००० ।

अर्थ :—पद्मद्रुहके कमलोंके ऊपर आग्नेय दिशामें उन देवोंके उत्तम रत्नोंसे रचित बत्तीस
हजार भवन हैं ॥१७००॥

पउमम्मि चंद-णामो, मच्चिम्म - परिसाए अहिबई देवो ।

चालीस - सहस्साणं^४, सुराणं बहू - सत्व - हत्थाणं ॥१७०१॥

। ४०००० ।

१. व. दहस, द. क. ज. व. उ. रहस। २. ज. व. परिणस। ३. व. क. ज. व. उ. अइण्ण।
४. द. व. क. ज. उ. सहस्साइं। ५. द. ज. बहुत्थाणं, क. उ. बहुत्थाण सत्थाणं ।

अर्थ :—पद्मद्रुह पर मध्यम परिषद्में बहुश्लाघनीय हाथों वाले चालीस हजार देवोंका अधिपति चन्द्र नामक देव है ॥१७०१॥

चालीस सहस्राणि, पासादा ताण विव्व-मणि-घडिदा ।

वक्खिसस्स - विसाए जलगय - विद्य - सत्त-सरोज-गग्गेषु ॥१७०२॥

। ४०००० ।

अर्थ :—दिव्य-मणियों (रत्नों) से घटे गये अर्थात् बनाए गए उन (देवों) के चालीस हजार प्रासाद हैं, जो सात जलगत कमलोंके मध्य दक्षिण दिशामें स्थित हैं ॥१७०२॥

अडदाल-सहस्राणं^१, सुराण सामी समुग्गय - पयाओ ।

बाहिर - परिसाए जडु^२, एगामो सेवेदि सिरिदेवि^३ ॥१७०३॥

। ४५००० ।

अर्थ :—बाह्य परिषद्के अडतालीस हजार देवोंका स्वामी प्रतापशाली जतु नामक देव श्रीदेवी की सेवा करता है ॥१७०३॥

एइरिदविसाअ ताणं, अडदाल - सहस्स - संख-पासादा ।

पउमद्दह - मज्झम्मि य, सुतुंग-तोरण-दुवार-रत्तणिज्जा ॥१७०४॥

। ४५००० ।

अर्थ :—नैऋत्य-दिशामे उन देवोंके उत्तम तोरणद्वारोमे रमणीय अडतालीस हजार भवन पद्मद्रुहके मध्यमे स्थित हैं ॥१७०४॥

कुञ्जर - तुरय - महारह^४ - गोवड्ढ-गंधव्व-गट्ट-वासाणं ।

सत्त अणीया सत्तहि, कच्छ्राहि तत्थ संजुत्ता ॥१७०५॥

अर्थ :—कुञ्जर, तुरङ्ग, महारथ, वेल, गन्धर्व, नर्तक और दाम इनकी सात सेनाएँ हैं । इनमेंसे प्रत्येक सेना सात-सात कक्षाओ सहित है ॥१७०५॥

पडमाणीय - पमाणं, सरिसं सामाणियाण सेसेसुं ।

विगुणा - विगुणा संखा, छस्सु अणीएसु पत्तयं ॥१७०६॥

१. द. व. क. ज. य. उ. सहस्राणि । २. व. जहदुसाणो, द. क. ज. य. उ. जहदुसायो ।

३. द. क. ज. य. उ. देवो । ४. द. व. क. ज. य. उ. गुरारह ।

अर्थ :—प्रथम अनीकका प्रमाण सामानिक देवोके सदृश है । शेष छह सेनाग्रोमेसे प्रत्येक सेनाका प्रमाण उत्तरोत्तर दूना-दूना है ॥१७०६॥

कुंजर-पट्टदि-तण्हिं, देवा विकरंति विमल-सच्चि-जुवा ।
माया - लोह - बिहीणा, णिच्चं सेवति सिरिदेविं ॥१७०७॥

अर्थ :—निर्मल शक्तिसे संयुक्त देव, हाथी आदिके शरीरोकी विक्रिया करते हैं और माया एव लोभसे रहित होकर नित्य ही श्रोदेवीकी सेवा करते है ॥१७०७॥

सत्ताणीयाण घरा^३, पउमहह - पच्छिम^३ - प्पएसम्मि ।
कमल-कुसुमाण उर्बारी, सत्त च्चिय कणय - णिम्मविवा ॥१७०८॥

अर्थ :—सात अनीक देवोंके सात घर पद्मद्रहके पश्चिम-प्रदेशमे कमल-कुसुमोंके ऊपर स्वर्णसे निर्मित है ॥१७०८॥

अट्टुत्तर - सय - भेत्तं, पडिहारा मंतिणो य दूवा यं ।
बहुविह-वर-परिवारा, उत्तम - रुवाइं विणय-जुत्ताइं ॥१७०९॥

अर्थ :—उत्तम रूप एव विनयसे संयुक्त और बहुत प्रकारके उत्तमोत्तम परिवार सहित ऐसे एकसौ आठ प्रतीहार, मन्त्री एव दूत हैं ॥१७०९॥

अट्टुत्तर - सय - संखा, पासावा ताण पउम - गग्भेसु ।
बिस-बिदिस-बिभाग-ठिदा^४, बहु-मउभे अहिय-रमणिज्जा ॥१७१०॥

अर्थ :—उनके अतिशय रमणीय एक सौ आठ भवन द्रहके मध्यमे कमलो पर दिशा और विदिशाके विभागोंमे स्थित हैं ॥१७१०॥

होति पइण्णय-पहुदी, ताणं भवणं^५ वि पउम-पुक्केसु^६ ।
उच्छिण्णो^७ काल - वसा, तेसु^६ परिमाण - उवएसो ॥१७११॥

अर्थ :—पद्म पुष्पों पर स्थित जो प्रकीर्णक आदिक देव हैं उनके भवनोंके प्रमाणका उपदेश कालवश नष्ट हो गया है ॥१७११॥

१. द. क. ज. य. उ. देवी। २. ब. ब. क. ज. य. उ. सुरा। ३. द. ब. पच्छिमपएवति।

४. द. क. ज. य. उ. रिवा। ५. द. क. ज. य. उ. चउणावि, व. चउणा वि। ६. द. ब. क. ज. य. उ. पुब्बेसु।

७. द. उच्छिण्णो।

कमला अकिट्टिमा ते, पुढवि-मया सुंदरा य इगिलक्खा ।

चालीस - सहस्साणि, एकक - सयं सोलसेहि जुढं ॥१७१२॥

। १४०११६ ।

अर्थ :- वे मत्र अकृत्रिम, पृथिवीमय मन्दर कमल एक लाख चालीस हजार एकसौ सोलह हैं ॥१७१२॥

एवं महा - पुराणं, परिमाणं ताण होदि कमलेसुं ।

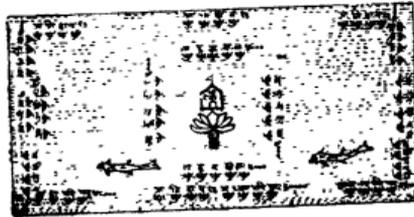
खुल्लय - पुर - सखाणं, को सक्कइ काडुमखिलारणं ॥१७१३॥

अर्थ :- इस प्रकार कमलोंके ऊपर स्थित उन महानगरोंका प्रमाण (एक लाख चालीस हजार एकसौ सोलह) है । (इनके अतिरिक्त) क्षुद्र (लघु) पुरोंकी पूर्ण-रूपेण गणना करनेमें कौन समर्थ हो सकता है ॥१७१३॥

पउम - वहे पुव्वमुहा, उत्तम - गेहा हवति सव्वे वि ।

ताणाभिमुहा^१ सेसा, खुल्लय - गेहा जहाजोगं ॥१७१४॥

अर्थ :- पद्मद्रुमें (वे १४०११६) सर्व हो उत्तम यह पूर्वाभिमुख हैं और शेष क्षुद्र-ग्रह ऽषायोग्य उनके सम्मुख स्थित हैं ॥१७१४॥



कमल पुष्पस्थित भवनोमे जिनमन्दिर—

कमल - कुसुमेसु तेसुं, पासादा जेतिया समुद्दिट्ठा ।

तैत्तिय-भेत्ता होंति ट्ठ, जिण - गेहा विविह - रयणमया ॥१७१५॥

अर्थ :—उन कमल-पुष्पोपर जितने भवन कहे गये हैं, वहाँ विविध प्रकारके रत्नोंसे निर्मित जिनगृह भी उतने ही होते हैं ॥१७१५॥

भिगार - कलस - इप्पण - बुब्बुव-घंटा-धयावि-संपुष्पा ।

जिणवर - पासादा^१ ते, णाणाविह - तोरण - दुबारा ॥१७१६॥

अर्थ :—वे जितेन्द्र-प्रासाद नाना-प्रकारके तोरण-द्वारों सहित और भारी, कलश, दर्पण बुद्बुद, घण्टा एवं ध्वजा-आदिकसे परिपूर्ण है ॥१७१६॥

वर-चामर - भामंडल - छत्तत्तय-कुसुम-वरिस-पहुदीहि ।

संजुत्ताओ तेसुं, जिणवर - पडिमाओ राजते ॥१७१७॥

अर्थ :—उन जिन-भवनोंमें उत्तम चमर, भामण्डल, तीन छत्र और पुष्पवृष्टि आदिसे संयुक्त जितेन्द्र-प्रतिमाएँ शोभायमान हैं ॥१७१७॥

रोहितास्या नदीका निर्देश—

पउम^२ - द्हाडु उत्तर - भाणेणं रोहिदास-णाम-णदी ।

उग्गच्छइ छावत्तरि, जोयण - दु - सयाइ अविरत्ता ॥१७१८॥

। २७६, १ ।

अर्थ :—पश्चद्रहके उत्तर-भागसे रोहितास्या नामक उत्तम नदी निकलकर दो सौ छिहत्तर योजनसे कुछ अधिक दूर तक (पर्वतके ऊपर) जाती है ॥१७१८॥

रंदावगाढ - तोरण - अंतर - कूड - प्पणालिया-ठाणा ।

घारा^३ - रंदा कुंडहीवाचल - कूड^४ - रंदा - पहुदीओ ॥१७१९॥

तत्त्व य तोरण - दारे, तोरण - थंभा अ तीए सरिदाए ।

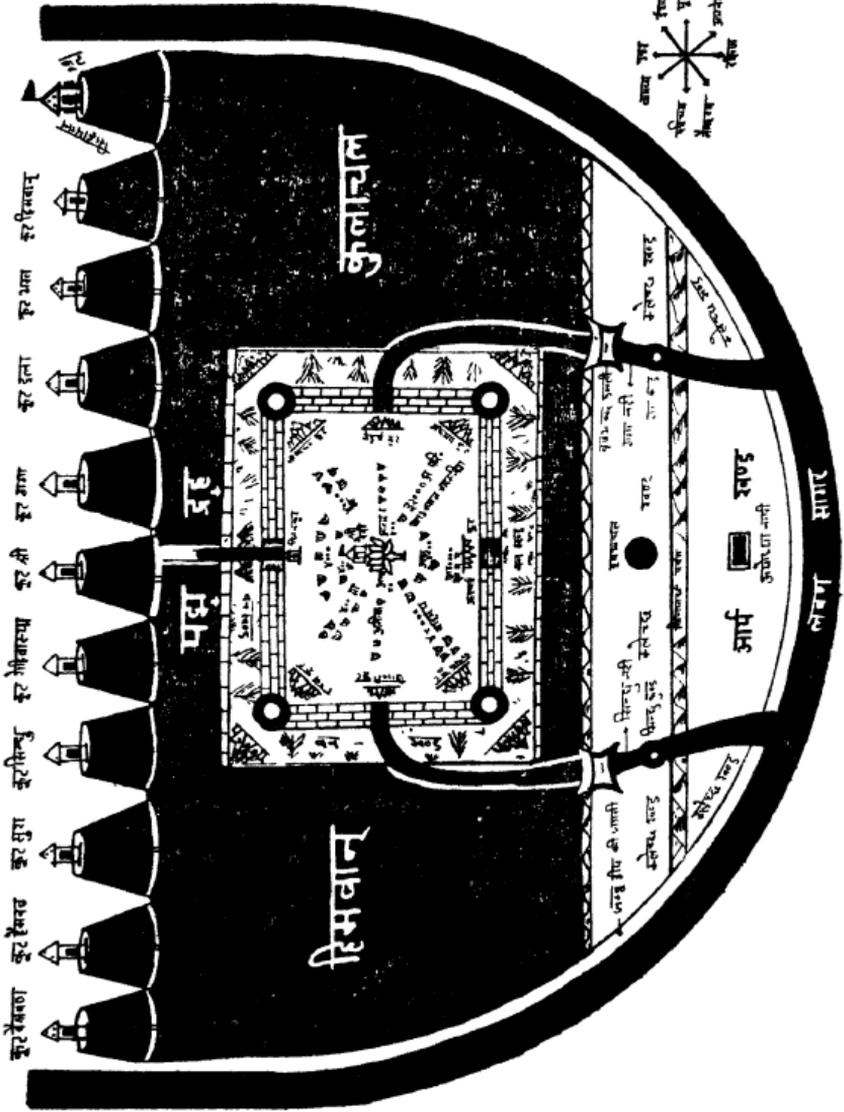
गंग - णईए सरिसा, णवरि वासाविएहि ते बिगुणा ॥१७२०॥

। हिमवंतं गयं ।

अर्थ :—इस नदीका विस्तार, गहराई, तोरणोंका अन्तर, कूट प्रणालिका-स्थान, घाराका विस्तार, कुण्ड, द्वीप, प्रचल और कूटका विस्तार आदि तथा वहाँ पर तोरणद्वारमें तोरण-स्तम्भ आदि सबका वर्णन गङ्गा नदीके सदृश ही जानना चाहिए । विशेष यह है कि यहाँ पर इन सबका विस्तार गङ्गा-नदीकी अपेक्षा दूना-दूना है ॥१७१९-१७२०॥

॥ हिमवान् पर्वतका कथन समाप्त हुआ ॥

१. व. व. क. ज. य. उ. पासादे । २. घ. व. क. ज. उ. पउम द्हाउत्तर । ३. व. व. क. ज. य. उ. घाराका कूड । ४. घ. व. क. उ. कुंड, ज. य. कुंड ।



हेमवत क्षेत्रका निरूपण—

हेमवदस्स य षंदा, चाल-सहस्सा य ऊणवीस - हिदा ।

तस्स य उचर - बाणो', भरह - सलागादु सत्त - गुणो ॥१७२१॥

| ४०००० |
| १६ |

अर्थ :- हेमवत क्षेत्रका विस्तार उन्नीसमे भाजित चालीम हजार योजन और उमका उत्तर-बाण भरतक्षेत्रकी शलाकामे मात गुणा है अर्थात् ३६८४६६ योजन है ॥१७२१॥

सत्तत्तीस - सहस्सा, छच्च सया सत्तरी य चउ-अहिया ।

किच्चूण - सोलस - कला हेमवदे उचरे जीवा ॥१७२२॥

| ३७६७४११ |

अर्थ :- हेमवतक्षेत्रक उत्तर-भागमे जीवा सेनीस हजार छहसी चौहत्तर योजन और कुल कम सोलह कला प्रमाण है अर्थात् ३७६७४११ योजन है ॥१७२२॥

अट्टतीस^१ - सहस्सा, सत्त - सया जोयणाणि चालीसं ।

वसय - कला णिद्धिं, हेमवदस्सुत्तरं^३ चावं ॥१७२३॥

| ३८७४०११ |

अर्थ :- हेमवत क्षेत्रका उत्तर-धनुष अट्टतीस हजार सातसी चालीस योजन और दस-कला मात्र निर्दिष्ट किया गया है अर्थात् ३८७४०११ योजन है ॥१७२३॥

इगिहत्तरि - जुसाइं, तेसट्ठि - सयाइं जोयणां प्पि ।

सच - कला बल - अहिया, हेमवदा जूलिया द्दसा ॥१७२४॥

| यो ६३७१ | क ३२ |

अर्थ :- हेमवत क्षेत्रकी चूलिकाका प्रमाण तिरैसठसी इकहत्तर योजन और साढ़े सात कला (६३७१३२ योजन) ही निर्दिष्ट किया गया है ॥१७२४॥

१. द. क. ज. हीणो । २. द. व. अट्टतीस । ३. द. व. क. व. द सुत्तरा चावा ।

पत्स - भुजा तत्स हवे, छन्व सहस्ताइ जोयणाणं पि ।

सत्स - सया पचवण्णमहिंया तिण्णि च्चिय कलाओ ॥१७२५॥

। ६७५५ । क २३ ।

अर्थ :—उसकी पार्श्व-भुजा छह हजार सातसौ पचपन योजन और तीन कला (६७५५.३६ योजन) प्रमाणा है ॥१७२५॥

अवसेस - वण्णआओ, सरिसाओ सुसमदुस्समेणं पि ।

अवरि 'अवट्टिद - रुवं, परिहीसं हासि - वड्ढोह ॥१७२६॥

अर्थ :—इस क्षेत्रका शेष वर्णन सुषमदुःषमा कालके सट्ठ है । विशेषता केवल यह है कि वह क्षेत्र हानि-वृद्धिसे रहित होता हुआ एक सट्ठ (अवस्थित) रहता है ॥१७२६॥

हैमवत क्षेत्रस्व शब्दवान् नाभिगिरिका प्ररूपण—

तप्पेस्ते बहुमच्छे, चेट्टवि सट्ठावदि सि नाभिगिरी ।

जोयस्स - सहस्स - उदओ, तेत्तिय-वासो सरिस - वट्टो ॥१७२७॥

। १००० । १००० ।

अर्थ :—इस क्षेत्रके बहुमध्यभागमें एक हजार योजन ऊंचा और इतने (१००० यो०) ही विस्तार-वाला, सट्ठ-मोल श्रद्धावान् (शब्दवान्) नामक नाभिगिरि स्थित है ॥१७२७॥

सव्वत्थ तत्स परिही, इयित्थोस - सयाइ तह य वासट्टी ।

सो पत्स-सरिस-ठाओ, कसयमओ 'वट्ट - विजयड्ढो ॥१७२८॥

अर्थ :—उस सम्पूर्ण पर्वतकी परिधि इकतीससौ बासठ योजन प्रमाणा है तथा वह एक विजयार्थ पत्थके सट्ठ आकारवाला है और कनकमय है ॥१७२८॥

एक - सहस्सं पच-सयमेक-सहस्सं च सग-सया पण्णा ।

उदओ मुहं - नू - अत्थिअम - बिस्वारा तत्स अवसस्स ॥१७२९॥

। १००० । ५०० । १००० । ७५० ।

पाठान्तरम्

अर्थ :—उस धवल पर्वतकी ऊँचाई, मुख-विस्नार, भ्रूविस्तार और मध्यविस्नार क्रमशः एक हजार, पाँचसौ, एक हजार और सातसौ पचास योजन प्रमाण है ॥१७२६॥

मूलोत्तरि - भाएसुं, सो सेलो वेदि - उववणेहि - जुदो ।

वेदी - बग्णण रुंदा, हिमवंत - जग ध्व णादव्वा ॥१७३०॥

अर्थ :—वह पर्वत मूल और उपरिम भागोंमें वेदियो एवं उपवनी सहित है । वेदी और वनोंका विस्तार हिमवान् पर्वतके सदृश ही जानना चाहिए ॥१७३०॥

बहु-तोरणदार-जुदा, तव्वण - वेदी विच्चि - रयणमई ।

चरियट्टालिय - विउला, 'णच्चंताणेय-धय-वडाला वा ॥१७३१॥

अर्थ :—उस पर्वतकी वन-वेदी बहुत तोरणद्वारोंसे संयुक्त, विचित्र रत्नमयी, मार्गों एवं अट्टालिकाओंसे प्रचुर तथा नाचती हुई अनेक ध्वजा-पताकाओंसे युक्त है ॥१७३१॥

तग्गिरि-उवरिमभागे, बहु-मच्छे होदि विव्व-जिण-भवणं ।

चउ - तोरण - वेदि - जुदं, पडिमाहि सुं'दराहि संजुरं ॥१७३२॥

अर्थ :—उस पर्वतके ऊपर बहु-मध्यभागमें चार तोरणों एवं वेदियोंसे युक्त तथा मुन्दर प्रतिमाओं सहित दिव्य जिनभवन हैं ॥१७३२॥

उच्छेह - प्पहुदीसुं, संपहि अम्हाण णत्थि उवदेसो ।

तस्स य चउद्दिसासुं, पासादा होंति रयणमया ॥१७३३॥

अर्थ :—इस जिनभवनकी ऊँचाई आदिके विषयमें इसमय हमारे पास उपदेश नहीं है । जिन-भवनके चारो ओर रत्नमय प्रासाद हैं ॥१७३३॥

सत्तट्ट - प्पहुदीहि, भूमोहि भूसिदा विचित्ताहि ।

धुवंत - धय - वडाया, णाणाविह - रयणकय-सोहा ॥१७३४॥

अर्थ :—ये प्रासाद सात-आठ आदि विचित्र भूमियोंसे विभूषित, फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे संयुक्त और नाना-प्रकारके रत्नोंसे शोभायमान हैं ॥१७३४॥

बहु-परिचारेहि जुबो', साली - नामेण बेंतरो' देवो ।

बस - धनु - तुंगो चेदुवि, पल्समिवाऊ महादेवो' ॥१७३५॥

अर्थ :- वहाँपर दस-धनुप ऊँचा, एक पत्न्य-प्रमाण आयुवाला और महान् तेजस्वी 'साली' नामक व्यन्तरदेव बहुत परिवारसे युक्त होकर रहता है ॥१७३५॥

हेमवतक्षेत्रमे प्रवाहित रोहितास्या नदीका वर्णन—

पउम'- द्वाहाओ उत्तर - भागेसु रोहिदास एगाम णदी ।

दो - कोसेहि अपाविय, णाभिगिरि पच्छिमे बलइ ॥१७३६॥

अर्थ :- रोहितास्या नामक नदी पद्मद्रहके उत्तरभागमे निकलकर (शब्दवान्) नाभिगिरि पहुँचनेसे दो कोस पूर्व ही पश्चिमकी ओर मुड़ जाती है ॥१७३६॥

द्वे कोसेहि अपाविय, 'वेयड्डं बलय - पच्छिमाहिमुहा ।

उत्तर-मुहेण तत्तो, कुडिल - सरूवेण एत्ति' सा सरिया ॥१७३७॥

गिरि-बहु-मज्झ-पदेसं, गिय-मज्झ - पदेसयं च काट्ठणं ।

पच्छिम - मुहेण गच्छइ, परिवार - णदीहि परिपरिया ॥१७३८॥

अर्थ :- यह नदी दो कोससे पर्वतको न पाकर अर्थात् दो कोस पूर्व ही रहकर पश्चिमाभिमुख हो जाती है । इसके पश्चात् फिर उत्तराभिमुख होकर कुटिल-रूपसे आगे जाती है और पर्वतके बहुमध्य प्रदेशको अपना मध्यप्रदेश करके परिवार-नदियोसे युक्त होती हुई पश्चिमकी ओर चली जाती है ॥१७३७-१७३८॥

अट्ठावीस - सहस्सा, परिवार - णदीण होदि परिमाणं ।

दीवस्स य जगदि-बिलं, पविसिय पविसेदि लवण-वारिणिहि ॥१७३९॥

। २५००० ।

। हेमवदो गदो ।

अर्थ :- इसकी परिवार नदियोका प्रमाण अट्ठाईस हजार है । इसप्रकार यह नदी जम्बू-द्वीपकी जगतीके बिलमे होकर लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥१७३९॥

। हेमवत क्षेत्रका वर्णन समाप्त हुआ ।

१. द. व. जुवा । २. द. व. ज. बेंतरा । ३. द. महादेवो । ४. व. पउमदहाउत्तर । ५. द. व. धवय द बलय, ज. य. अन्नयद चलय । ६. द. य. तत्ति तरिया, व. क. छ. तत्ति स तरिया ।

महाहिमवान् कुलाचलका निरूपण—

भरहावणि - रंवावो, अड-गुण-रं दो य दुसब उच्छेहो ।

होदि महाहिमबंतो, हिमबंत - वियं 'वणेहि कयसोहा ॥१७४०॥

| ८ ५०००० | उ २०० |

अर्थ :—महाहिमवान् पर्वतका विस्तार भरतक्षेत्रसे आठ गुणा (४२१०३१ यो०) है और ऊँचाई दोसी (२००) योजन प्रमाण है । वह हिमवन्तके समान ही वनोंसे शोभायमान है ॥१७४०॥

पणसय^१-सहस्साणि, उणवीस-हिदाणि^३ जोयणाणि पि ।

भरहाउ उत्तरंतं, तगिरि - बाणस्त परिमाणं ॥१७४१॥

| १५०००० |

अर्थ —भरतक्षेत्रसे उत्तर तक इस पर्वतके बाणका प्रमाण उन्नीससे भाजित एकसौ पचास हजार (७५६४३१) योजन है ॥१७४१॥

तेवण - सहस्साणि, णव य सया एकतीस - संजुत्ता ।

छ-च्छिय कलाओ जीवा, उत्तर - भागम्मि तगिरिणो ॥१७४२॥

| ५३६३१,१ |

अर्थ : - उस पर्वतके उत्तर-भागमे जीवाका प्रमाण तिरपन हजार नौसौ इकतीस योजन और छह कला (५३६३१,१ योजन) है ॥१७४२॥

सत्तावण - सहस्ता, दु-सया तेणउदि दस कलाओ य ।

तत्य महाहिमबंते, जीवाए होदि घणुपुट्टं ॥१७४३॥

| ५७२६३११ |

अर्थ :—महाहिमवान् पर्वतकी जीवाका घनुपुट्ट सत्तावन हजार दोमी तेरानवे योजन और दस कला मात्र (५७२६३११ यो०) है ॥१७४३॥

१. द. ब. क. ज. य. स्मणेहि । २. द. ब. क. ज. य. पणसरस । ३. द. ब. ज. वदासि,

अथ य सहस्ता दु-सया, छाहत्तरि जयणाणि भंगा य ।

अदतीस^१ - हिदुणवीसा, महाहिमवंतम्मि पस्सभुजा ॥१७४४॥

। १२७६३३ ।

अर्थ :- महाहिमवान् पर्वतकी पार्श्वभुजा नो हजार दो सो छिहत्तर योजन और अदतीससे भाजित उन्नीस कला प्रमाण (६२७६३३ यो०) है ॥१७४४॥

जोयण अट्ट - सहस्ता, एककसयं अट्टवीस - संजुरां ।

पंच - कलाओ 'एवं, तग्गिरिणो चूलिया - माणो ॥१७४५॥

। ८१२८,५ ।

अर्थ :- उस पर्वतकी चूलिकाका प्रमाण आठ हजार एकसो अट्टाईस योजन और पांच कला (८१२८,५ योजन) है ॥१७४५॥

महाहिमवंते दोसुं, पासेसुं उववणाणि रम्मणि ।

गिरि - सम - दीहत्ताणि, वासादीणं च हिमवगिरि ॥१७४६॥

अर्थ :- महाहिमवान् पर्वतके दोनो पार्श्वभागोंमें रमणीय उपवन हैं । इनकी लम्बाई इसी पर्वतकी लम्बाईके बराबर और विस्तारादिक हिमवान् पर्वतके सदृश है ॥१७४६॥

सिद्ध^३ - महाहिमवंता, हेमववो रोहितो य हरि-गामो ।

हरिकंतो हरिवरिसो, बेरुलिओ अड इमे कूडा ॥१७४७॥

अर्थ :- इस पर्वतके ऊपर सिद्ध, महाहिमवान्, हेमवत, रोहित, हरि, हरिकान्त, हरिवर्ष और वेङ्कर्य इस प्रकार ये आठ कूट हैं ॥१७४७॥

हिमवंत-पव्ववस्स य, कूडादो उदय - वास - पडुदोणि ।

एवाणं कूडाणं, दुगुण - सरूवाणि सव्वाणि ॥१७४८॥

अर्थ :- हिमवान् पर्वतके कूटोसे इन कूटोको ऊँचाई और विस्तार आदि सब दुगुने-दुगुने हैं ॥१७४८॥

जं णामा ते कूडा, तं णामा वेतरा सुरा होंति ।

अणुवम - रुव - सरीरा, बहुविह - परिवार - संजुत्ता ॥१७४९॥

अर्थ :—जिन नामोंके वे कूट हैं, उन्हीं नामवाले ब्यन्तरदेव उन कूटोंपर रहते हैं। ये देव धनुषम रूप युक्त शरीरके धारक और बहुत प्रकारके परिवारसे संयुक्त हैं ॥१७५६॥

महापद्मद्रह, कमल एवं ह्रीदेवी आदिका निरूपण—

पउम-दूहाउ दुगुणो, 'बासायामेहि गहिर - भावेणं ।

होवि महाहिमवंते^१, महपउमो गाम दिव्व - बहो ॥१७५०॥

। वा १००० । आ २००० । गा २० ।

अर्थ :—महाहिमवान् पवंत पर स्थित महापद्म नामक द्रह पद्मद्रहकी अपेक्षा दुगुने विस्तार, लम्बाई एवं गहराई वाला है। अर्थात् १००० योजन विस्तार, २००० योजन आयाम और २० योजन गहराई वाला है ॥१७५०॥

तद्दह - पउमस्सोवरि, पासादे चेट्टेदे य हिरिदेवी ।

बहुपरिवारेहि जुदा, सिरियादेवि व्व वण्णाय-गुणोघा ॥१७५१॥

अर्थ :—उस तालाबमें कमलके ऊपर स्थित प्रासादमें बहुतसे परिवारसे संयुक्त तथा श्रीदेवीके सदृश वरिणत गुण-समूहसे परिपूर्ण ह्री देवी रहती है ॥१७५१॥

गवरि बिसेसो एसो, दुगुणा परिवार-पउम-परिसंखा ।

जेत्तिय - भेत्ता - पउमा^३, जिणभवणा तेत्तिया^४ रम्मा ॥१७५२॥

अर्थ :—यहाँ विशेषता केवल यह है कि ह्री देवीके परिवार और पद्मकी सख्या श्रीदेवीकी अपेक्षा दूनी है। इस तालाबमें जितने पद्म है, उतने ही रमणीय जिन-भवन भी हैं ॥१७५२॥

द्रह सम्बन्धी कूटोका निर्वेश—

ईसाण - विसा - भागे, बेसमणो गाम सुंदरो कूडो ।

बक्खिण-विसा-विभागे, कूडो सिरिणिच्चय गामो य ॥१७५३॥

गइरिदि-भागे कूडो, महहिमवंतो विच्चित्त-रयणमओ ।

पच्छिम - उत्तरभागे, कूडो एरावदो गाम ॥१७५४॥

सिरिसंचओ^५ ति कूडो, उत्तर - भागे दहस्स चेट्टेदि ।

एवेहि कूडेहि, महहिमवंतो य पंचसिहरो त्ति ॥१७५५॥

१. द. ब. क. ज. य. यामोहि । २. द. ब. क. ज. य. महाहिमवतो । ३. द. ब. पवेसा, ज. य. पवेसा । ४. द. ब. क. ज. य. तत्ति भू । ५. द. ब. क. सवद । ज. य. सचद ।

अर्थ :—इस तालाबके ईशानदिशा-भागमें सुन्दर वैश्ववण नामक कूट, दक्षिणदिशाभागमें श्रीनिचय नामक कूट, नैऋत्यदिशामें विचित्र रत्नोसे निर्मित महाहिमवान् कूट, पश्चिमोत्तर भागमें ऐरावत नामक कूट और उत्तरभागमें श्रीसंचय नामक कूट स्थित है। इन कूटोंसे महाहिमवान् पर्वत 'पंच-शिखर' कहलाता है ॥१७५३-१७५५॥

एषे सव्वे कूडा, वेंतर - णयरेहि' परम - रमणिज्जा ।

उववण-वेदी-जुत्ता, उत्तर - पासे जलम्मि जिण - कूडो ॥१७५६॥

अर्थ :—ये सब कूट व्यन्तर नगरोसे परम-रमणीय और उपवन-वेदियोंसे संयुक्त हैं। तालाबके उत्तरपार्श्वभागमें जलमें जिनेन्द्र कूट है ॥१७५६॥

तिरिणिचयं वेरुलियं, अंकमयं अंबरीय - रुजगाहं ।

उप्पल - सिहरी कूडा, सलिलम्मि पदाहिणा होंति ॥१७५७॥

अर्थ :—श्रीनिचय, वंडूर्य, अङ्कमय, अम्बरीक, रुचक, उत्पल और शिखरी, ये कूट (महापद्मके) जलमें प्रदक्षिणरूपसे स्थित हैं ॥१७५७॥

रोहित महानदी—

तद्दह-दक्षिण-द्वारे, रोहि-णदी सिणस्सरेदि विउल-जला ।

दक्षिण-मुहेण बच्चदि, पण-हद-इगिबोस-ति-सयमदिरित्तं ॥१७५८॥

। १६०५,५ ।

अर्थ :—प्रचुर-जल-सयुक्त रोहित नदी इस तालाबके दक्षिणद्वारसे निकलती है और पर्वत पर पांचसे गुणित तीनसी इक्कीस योजनसे अधिक ($३२१ \times ५ + \frac{५}{२} = १६०५\frac{५}{२}$ योजन) दक्षिण की ओर जाती है ॥१७५८॥

रोहीए वंबादो, सारिच्छो होदि रोहिदासाए ।

जाहि - प्पदाहिणेणं, हेमवदे जादि पुव्वमुहा ॥१७५९॥

अर्थ :—रोहित नदीका विस्तार आदि रोहितास्याके सदृश है। यह नदी हैमवत क्षेत्रमें नाभिगिरिकी प्रदक्षिणा करतो हुई पूर्वाभिमुख होकर आगे जाती है ॥१७५९॥

तस्मिन्निदि-बहु-मञ्जुषेणं, 'गच्छिय दीवस्स जगवि-बिल-वारे ।

पविसेदि लवण-जलाहि, अडबीस-सहस्स-वाहिणी-सहिवा ॥१७६०॥

। २८००० ।

। 'महत्सिमवंतो गदो ।

अर्थ :— इस प्रकार यह नदी उस त्रैमवत क्षेत्रके बहुमध्यभागमें द्वीपकी वेदीके बिलद्वारमें जाकर अट्टाईस हजार नदियों सहित लवण समुद्रमें प्रवेश करती है ॥१७६०॥

। महात्सिमवान् पर्वतका वर्णन समाप्त हुआ ।

हरिक्षेत्रका निरूपण—

भरहावणीय बाणे^१, इगितीस - हदम्मि होदि जं लद्धं ।

हरिबरिसस्स य बाणं, तं उवहि - तडादु^२ णावब्बं ॥१७६१॥

। ३१०००० ।
१६

अर्थ :— भरतक्षेत्रके बाणको इकतीससे गुणा करने पर जो गुणनफल ($310000 \times 31 = 9610000$) प्राप्त हो उतना समुद्रके तटसे हरिवर्ष क्षेत्रका बाण ($163153\frac{1}{2}$ यो) जानना चाहिए ॥१७६१॥

एवकं^३ जोयण - लवणं, सट्ठि-सहस्साणि भागहारो य ।

उणबीसेहि एसो, हरिबरिस - खिबीए विस्थारो ॥१७६२॥

। १६०००० ।
१६

अर्थ :— हरिवर्ष क्षेत्रका विस्तार उन्नीससे भाजित एक लाख साठ हजार ($64213\frac{1}{2}$) योजन प्रमाण है ॥१७६२॥

तेहत्तरी - सहस्सा, एवकोत्तर-णव-सयाणि जोयणया ।

सत्तारस य कलाओ, हरिबरिसस्सुत्तरे जीवा ॥१७६३॥

। ७३६०१ । १९ ।

१. द. व. मञ्जुष्य । २. द. व. क. ज. य. महत्सिमवंत । ३. द. व. क. ज. य. बाणो । ४. द. व. तडादो, क. ज. य. तदादो । ५. द. व. एक्कि ।

अर्थ :—हरिवर्ष क्षेत्रकी उत्तर जीवा तिहत्तर हजार नौसी एक योजन और सत्तरह कला (१३६०१३ $\frac{१}{२}$ यो०) प्रमाण है ॥१७६३॥

चुलसीदि-सहस्सार्णि, तह सोलह - जोयणाणि चउरंसा ।
एवस्सि जीवाए, धणुपुट्टं होवि हरिबरिसे ॥१७६४॥

। ८४०१६३ $\frac{१}{२}$ ।

अर्थ :—हरिवर्षक्षेत्रमे एस जीवाका धनुपुठ चौरासी हजार सोलह योजन और चार भाग (८४०१६३ $\frac{१}{२}$ यो०) प्रमाण है ॥१७६४॥

जोयण-णव-णउदि-सया, पणसोदो होंति अट्ठीस-हिवा ।
एक्करस - कला - अहिया, हरिबरिसे चूलियामाणं ॥१७६५॥

। ६६८५ $\frac{१}{२}$ ।

अर्थ :—हरिवर्ष क्षेत्रकी चूलिकाका प्रमाण नौ हजार नौ सौ पचासी योजन और अट्ठीस से भाजित ग्यारह कलाओसे अधिक (६६८५ $\frac{१}{२}$ यो०) है ॥१७६५॥

तेरस सहस्सयार्णि, तिण्णि सया जोयणाइ इगिसट्ठी ।
अडतीस-हरिय-तेरस-कलाओ हरिबरिस - पस्स - भुजा ॥१७६६॥

। १३३६१ । $\frac{१}{२}$ ।

अर्थ :—हरिवर्ष क्षेत्रकी पाइवंभुजा तेरह हजार तीन सौ डकसठ योजन और अड़तीससे भाजित तेरह कला (१३३६१ $\frac{१}{२}$ यो०) प्रमाण है ॥१७६६॥

अवसेस - वण्णणाओ, सुसमस्स व होंति तस्स खेत्तास्स ।
णवरि अण्वद्धिद - रुवं, परिहीणं हाणि - वड्ढीहिं ॥१७६७॥

अर्थ :—उस क्षेत्रका अवशेष वर्णन सुषमाकालके सदृश है । विशेष यह है कि वह क्षेत्र हानि-वृद्धिसे रहित होता हुआ संस्थित रूप अर्थात् एकसा ही रहता है ॥१७६७॥

तक्खेस्से बहुमण्णे, चेट्टुवि विजयावदिसि णाभिगिरो ।
सव्व - दिव्व - वण्णण - खुत्ता इह किर चारणा देवा ॥१७६८॥

अर्थ :—इस क्षेत्रके बहुमध्यभागमे विजयवान् नामक नाभिगिरि स्थित है । यहाँ सर्व दिव्य वर्णनसे युक्त चारणदेव रहते हैं ॥१७६८॥

हरिकान्ता नदीका निरूपण—

महापउम - दहाड नदी, उत्तरभागेण तोरणद्वारे ।

णिस्सरिद्वणं वच्चदि, पव्वद - उवरिम्मि हरिकंता ॥१७६९॥

अर्थ :—हरिकान्तानदी महापउम-द्रहके उत्तरभाग मन्वन्वी तोरणद्वारमे निकलकर पर्वतके ऊपरमे जाती है ॥१७६९॥

सा गिरि-उवर्रि गच्छइ, एवक-सहस्सं पणुत्तरा छ-सया ।

जोयणया पंच कला, पणालिए पडदि कूडम्मि ॥१७७०॥

: १६०५,२ ।

अर्थ :—वह नदी एक हजार द्रहसो पांच योजन और पांच कला (१६०५,२ यो०) प्रमाण पर्वतके ऊपर जाकर नानीके द्वारा कुण्डमे गिरती है ॥१७७०॥

वे - कोसेहिमपाबिय, नाभि - गिरिदं पदाहिणं कादुं ।

पच्छिम - भुहेण वच्चदि, रोहीदो बिगुण - बासादी ॥१७७१॥

अर्थ :—पश्चात् वह (नदी) नाभिगिरिसे दो कोस दूर (इधर) ही रहकर अर्थात् उसे न पाकर, उसकी (अर्थ) प्रदक्षिणा करके रोहित्-नदीकी अपेक्षा दुगुने विस्तारदि सहित होती हुई पश्चिमकी ओर जाती है ॥१७७१॥

छप्यण - सहस्सेहि, परिवार - तरंगिणीहि परियरिया ।

दीवत्स य जगदि-बिलं, पविसिय पवित्सेइ लवणणिहि ॥१७७२॥

: ५६००० ।

। हरिबरिसो गवो ।

अर्थ :—इसप्रकार वह नदी छप्यन हजार परिवार नदियों सहित द्वीपके जगती-द्वारमें (बिलमें) प्रवेश कर अनन्तर लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥१७७२॥

। हरिवर्ष-क्षेत्रका वर्णन समाप्त हुआ ।

निषघपर्वतका निरूपण—

सोत्स-सहस्स-अड-सय-बादात्ता दो कला णिसह - हंवं ।

उणवीस - हिदा य इसू, ^१तीस - सहस्साणि छल्लक्खं ॥१७७३॥

। १६८४२,३ । ६३०००० ।

अर्थ :—निषघपर्वतका विस्तार सोलह हजार आठसौ ब्यालीस योजन और दो कला (१६८४२^३ योजन) तथा बाण उन्नीससे भाजित छह लाख तीस हजार (३३१५७^३) योजन प्रमाण है ॥१७७३॥

अहवा गिरि-वरिसाणं, बिगुणिय-वासम्मि भरह-इसु-माणे ।

अवणीदे जं सेसं, णिय - णिय - बाणाण तं माणं^२ ॥१७७४॥

अर्थ :—अथवा, पर्वत और क्षेत्रके दूने विस्तारमेंसे भरतक्षेत्र सम्बन्धी बाण-प्रमाणके कम कर देनेपर जितना शेष रहे उतना अपने-अपने बाणोंका प्रमाण होता है ॥१७७४॥

$३३१५७३ \times २ = ६६३१४६ = ३३१५७३ = ३३१५७३$ निषघका बाण ।

उउ-अउवि-सहस्साणि, जोयण छप्पण-अहिय-एक्क-सया ।

दोण्णि कलाओ अहिया, ^३णिसह - गिरिस्सुचरे जीवा ॥१७७५॥

। ६४१५६,३ ।

अर्थ :—निषघपर्वतकी उत्तरजीवाका प्रमाण चौरानवें हजार एकसौ छप्पन योजन और दो कला अधिक है ॥१७७५॥

एक्कं जोयण-सक्खं, अउवीस-सहस्स-ति-सय-छादात्ता ।

अव - भावा अविरिचा, णिसहे जीवाए षण्णुट्ठं ॥१७७६॥

। १२४३४६,३ ।

अर्थ :—निषघपर्वतकी जीवाके षण्णुट्ठका प्रमाण एक लाख चौबीस हजार तीनसौ छ्यालीस योजन और नौषाय-अधिक (१२४३४६^३ यो) है ॥१७७६॥

सत्तावीसम्भहियं, एक्क - सयं इस - सहस्स जोयणया ।

दोण्णि कलाओ णिसहे, णिहिट्ठं खुत्तिया माणं ॥१७७७॥

: जो १०१२७,३ ।

अर्थ :—निषधपर्वतकी चूलिकाका प्रमाण दस हजार एक सौ सत्ताईस योजन और दो कला (१०१२७;२ यो०) कहा गया है ॥१७७७॥

जोयण बीस - सहस्सं, एक - सयं पंच-समहिया सट्टी ।

अड्ढाइज्ज - कलाओ, पस्स - भुजा णिसह - सेलस्स ॥१७७८॥

। २०१६५३८ ।

अर्थ :—निषध पर्वतकी पार्श्वभुजा बीस हजार एक सौ पंसठ योजन और डाई कला (२०१६५३८ यो०) प्रमाण है ॥१७७८॥

उपवन-खण्डोका वर्णन—

तग्गिरि-दो-पासेसुं, उववण - संडाणि होंति रमणिज्जा ।

बहुविह - वर - रुक्खाणि, सुक-कोकिल-मोर-जुत्ताणि ॥१७७९॥

अर्थ :—इस पर्वतके दोनो पार्श्वभागोंमें बहुत प्रकारके उत्तम वृक्षो और तोता, कोयल एवं मयूर पक्षियोंसे युक्त रमणीय उपवन खण्ड है ॥१७७९॥

उपवण - संडा सव्वे, पव्वद - दीहत्ता-सरिस-दीहत्ता ।

वर - वावी - कूव - जुदा, पुव्वं चिय वण्णणा सव्वा ॥१७८०॥

अर्थ :—वे सब उपवन-खण्ड पर्वतकी लम्बाई सदृश लम्बे और उत्तम वापियों एवं कूपोंसे संयुक्त हैं । इनका सब वर्णन पूर्वके ही सदृश है ॥१७८०॥

निषधपर्वतस्य कूट—

कूटो 'सिद्धो णिसहो, हरिवस्सो तह विवेह-हरि-विजया ।

सीतोदपरविदेहा, 'रुजगो य हवेदि णिसह - उवरिम्मि ॥१७८१॥

अर्थ :—निषधपर्वतके ऊपर सिद्ध, निषध, हरिवर्ष, विदेह, हरि, विजय, सीतोदा, अपर-विदेह और रुक्क, ये नौ कूट स्थित हैं ॥१७८१॥

ताणं उदय - प्पहुवी, सव्वे ह्मिबंत - सेल - कूडावो ।

चड-मुणिया जवरि इमे, कूडोवरि 'जिणपुरा सरिसा ॥१७८२॥

अर्थ :—इन कूटोकी ऊँचाई आदि सब हिमवान्-पर्वतके कूटोंसे चौगुनी है। विशेषता केवल यह है कि कूटोंपर स्थित ये जिनपुर हिमवान्-पर्वत सम्बन्धी जिनपुरोंके सदृश है ॥१७८२॥

जं षामा ते कूडा, तं षामा वेंतरा सुरा तेषु ।

बहु - परिवारेहि जुदा, पल्लाऊ वस - धणुत्तुंगा ॥१७८३॥

अर्थ :—ये कूट जिस नामवाले है, उसी नामवाले व्यन्तरदेव उन कूटोंपर निवास करते हैं। बहुत परिवारोंसे युक्त ये देव एक पत्न्य प्रमाण आयु वाले और दम धनुष ऊँचे हैं ॥१७८३॥

पउमह्हाउ चउ - गुण-रुं द-प्यहुदी हवेदि दिव्व - दहो ।

तिगिच्छी' विक्खादो, बहु - मउंके णिसह - सेलस्स ॥१७८४॥

वा २००० । आ ४००० । गा ४० । प सखा ५६०४६४ ।

३ उ ४ । वा ४ । उ ४० । उ १ । या १ । आ ४ को । वा २ को । उ ३ को ।

अर्थ :—निषधपर्वतके बहुमध्यभागमें पद्म-द्रव्यकी अपेक्षा चौगुने विस्तारादि महिन और तिगिच्छ-नाममें प्रसिद्ध एक दिव्य तालाव है ॥१७८४॥

तालावका व्यास २००० योजन, आयाम ४००० यो० और अवगाह ४० योजन प्रमाण है। सम्पूर्ण कमलोंका प्रमाण ५६०४६४ ह। कमलका उत्सेध ४ योजन और व्यास भी ४ यो० है। कमल-नाल की ऊँचाई ४२ योजन है। (जलमग्न ४० योजन और जलके ऊपर २ यो० है।) कमल-कर्णिका का उत्सेध १ योजन और व्यास १ योजन है। कमल-कर्णिका पर स्थित प्रत्येक भवन की लम्बाई ४ कोस, चौड़ाई २ कोस और ऊँचाई ३ कोस है।

धृतिदेवी निर्देग—

तहह - पउमस्सोवरि, ^३पासादे चेट्टेदे य धिदिदेवी ।

बहु - परिवारेहि जुदा, णिरुवम - लाबण्ण - संपुण्णा ॥१७८५॥

अर्थ :—उम द्रव्य सम्बन्धी कमलके ऊपर स्थित भवनमें बहुत परिवारसे संयुक्त और धनुषम लावण्यसे परिपूर्ण धृतिदेवी निवास करती है ॥१७८५॥

इगि - पल्ल - पमाणाऊ, षाणाबिह-रयण-भूसिय-सरैरा ।

अइरम्मा वेंतरिया, सोहम्मिबस्स सा देवी ॥१७८६॥

१. द. तीगिच्छे, व. तिगिच्छे । २. द. व. वा २, अबु वा २, उ ३, प ४, मणिक ४ । ३. द. व.

अर्थ :—एक पत्न्य आयुको धारक और नाना प्रकारके रत्नोंसे विभूषित शरीर-वाली अतिरमणीय वह व्यन्तरिणी सौधमेंद्रकी देवकुमारी (आज्ञाकारिणी) है ॥१७८६॥

द्रहमे जिनभवन एव कूट—

जेत्तिय - मेत्ता तस्सि, पउम-गिहा तेत्तिया जिण्णिबपुरा ।

भव्वाणाणंदयरा^१, सुर - किण्णर - मिहण - संकिण्णा ॥१७८७॥

अर्थ :—उस तालाबमें जितने पद्मगृह हैं, भव्यजनोंको आनन्दित करने वाले किन्नर देवोंके युगलोसे सकीर्ण जिनेन्द्रपुर भी उतने ही हैं ॥१७८७॥

ईसाण - दिसा - भागे, वेसमणो णाम मणहरो कूडो ।

दक्खिण - दिसा - विभागे, कूडो सिरिण्णचय-णामो य ॥१७८८॥

णइरदि-दिसा-विभागे, णिसहो णामेण सुंदरो कूडो ।

अइरावदो^२ सि कूडो, तिगिच्छि - पच्छिमुत्तर^३-विभागे ॥१७८९॥

उत्तर-दिसा-विभागे, कूडो सिरिसंचवो त्ति णामेण ।

एवेह कूडेहि, णिसहगिरी पंच - सिहरि त्ति ॥१७९०॥

अर्थ :—तिगिच्छ तालाबकी ईशानदिशामें वैश्रवण नामक मनोहर कूट है, दक्षिणदिशा-भागमें श्रीनिचय नामक कूट, नैऋत्य दिशामें निषध नामक सुन्दर कूट, पश्चिमोत्तर कोणमें गेगवत कूट और उत्तर दिशा भागमें श्रीसञ्चय नामक कूट है । इन कूटोंके कारण निषध-पर्वत 'पंचशिखरी' नामसे भी प्रसिद्ध है ॥१७८८-१७९०॥

वर-वेदियाहि जुत्ता, बंतर-णयरेहि परम - रमणिज्जा ।

एदे कूडा उत्तर - पासे सलिलम्मि जिरण - कूडो^४ ॥१७९१॥

अर्थ :—ये कूट उत्तम वेदिकाओं सहित है और व्यन्तर नगरोंसे अतिशय-रमणीय है । इन कूटोंके उत्तर पार्श्वभागमें जलमें जिनेन्द्र कूट हैं ॥१७९१॥

१ द. व. क. ज. य. भवणाणंदयरा । २. द. व. क. ज. य. अइरावदा । ३. व. ज. य. तिगिच्छी-मुत्तर । ४. द. व. क. ज. य. कूडा ।

सिरिण्णच्चयं वेरुलियं, अंकमयं अंबरीय - रुचगाइं ।

सिहुरो उप्पल - कूडो, तिगिच्छ - बहुस्स 'सलिलम्मि ॥१७६२॥

अर्थ :—तिगिच्छ तालाबके जलमे श्रीनिचय, वेडूर्य, अक्कमय, अम्बरीक, रुचक, शिखरी और उत्पल कूट हैं ॥१७६२॥

हरित् नदीका निर्देश—

तिग्गिच्छादो दक्खिण - दारेणं हरि-णदी विणिक्कंता ।

सत्ता-सहस्सं चउ-सय-इगिवीसा इगि-कला य गिरि-उवरि ॥१७६३॥

। ७४२१ । १९ ।

आगच्छिय हरि-कुंउ^३, पडिऊणं हरि-णदी विणिस्सरदि^४ ।

णाहि - प्पवाहिणेणं, हरिवरिसे जावि पुब्बमुहो ॥१७६४॥

अर्थ :—हरित् नदी तिगिच्छ द्रुहके दक्षिणद्वारसे निकलकर सात हजार चारसौ इक्कीस योजन एवं एक कला (७४२१.५ यो०) प्रमाण पर्वतके ऊपर आकर और हरित् कुण्डमे गिरकर बहसि निकलती है तथा हृदय क्षेत्रमे नाभिगिरिकी प्रदक्षिणा-रूपसे पूर्वकी ओर जाती है ॥१७६३-१७६४॥

छप्पण - सहस्सेहि, परिवार - णिमग्गाहि संजुत्ता ।

दीवस्स य जगदि-बिलं, पविसिय पविसेदि लवणणिहि ॥१७६५॥

। ५६००० ।

अर्थ :—वह नदी छप्पन हजार (५६०००) परिवार नदियोंसे सयुक्त होकर द्वीपकी जगतीके बिलमे प्रवेश करती हुई लवणसमुद्रमे प्रवेश करती है ॥१७६५॥

हरिकंता - सारिच्छा, हरि-णामा-वास-गाह^५-पहुदीओ ।

भोगवणीण णदीओ, सर - पहुदी जलयर - बिहीणा ॥१७६६॥

। णिसहो^६ गदो ।

१ द. व. दहमल्लिम्मि । २. व. विविक्कता । ३. द. व. क. ज. य. कूडे । ४. द. व. क. ज. य. विणिस्सरयो । ५. द. व. क. ज. य. पुब्बमुहे । ६. द. क. ज. य. व. गाहि । ७. द. व. णिसह ।

अर्थ :—हरित् नदीका विस्तार एवं गहराई आदि हरिकान्ता नदीके सटख है। भोग-भूमियोंकी नदियाँ एवं तालाब आदिक जनकर जीबैसि रहित होते हैं ॥१७६६॥

। निषध-पर्वतका वर्णन समाप्त हुआ ।

महाविदेह-क्षेत्रका वर्णन—

निसहस्सुत्तर - भागे, दक्खिण - भागम्मि नीलवंतस्स ।

वरिसो महाविदेहो, मंदर - सेलेण पविहत्तो ॥१७६७॥

अर्थ :— निषधपर्वतके उत्तरभागमें और नील-पर्वतके दक्षिण-भागमें मन्दरमेरुमें विभक्त महाविदेह-क्षेत्र है ॥१७६७॥

तेत्तीस-सहस्साहं, छ-सया चउत्तीदिग्गा य चउ - अंसा ।

तो महविदेह - रुंदं, जोयण - लक्खं मरुत्तगद - जीवा ॥१७६८॥

। ३३६८४ । ५, । १००००० ।

अर्थ :— उस महाविदेह-क्षेत्रका विस्तार तेत्तीस हजार छह सौ चौरासी योजन और चार भाग (३३६८४.५ यो०) प्रमाण, तथा मध्यगत जीवा एक लाख योजन प्रमाण है ॥१७६८॥

भरहस्स इसु-पमाणे^१, पंचाणउदीहि ताडि दम्मि पुढं ।

रयणायर - तीरावो^२, विदेह - अद्दो त्ति सो वाणो ॥१७६९॥

अर्थ :— भरतक्षेत्रके बाणको पंचानवेसे गुणा करने पर जो (भरतका बाण $१०००० \times ६५ = ६५०००० = ५००००$ योजन) गुणनफल प्राप्त हो उतना समुद्रके तीरसे वर्ष विदेह-क्षेत्रके बाणका प्रमाण है ॥१७६९॥

अट्टावण्ण - सहस्सा, इगि - लक्खा तेरसुत्तरं च सयं ।

सग - कोसाणं अद्दं, महाविदेहस्स घणुपुट्टं ॥१८००॥

। १५८१३ । ३ ।

अर्थ :— महाविदेहका घनुपुट्ट एक लाख अट्टावन हजार एकसौ तेरह योजन और साढ़े तीन कोस (१५८१३ यो० ३३ कोस) प्रमाण है ॥१८००॥

जोयण 'उचतीस - सया, इयिबीसं अट्टुरस तथा भागा ।

एवं महाविदेहे, चिद्विद्वं चूलिया - मासं ॥१८०१॥

। २९२११६ ।

अर्थ :—महाविदेह क्षेत्रकी चूलिकाका प्रमाण उनतीससौ इक्कीस योजन तथा अठारह भाग (२६२१३६ यो०) है ॥१८०१॥

सोलस-सहस्सयाणि, अट्ट - सया जोयणाणि तेसीबी ।

अद्वाहिय - अट्ट - कला, महाविदेहस्स पस्स - भुजा ॥१८०२॥

। १६८८३३८ ।

अर्थ :—महाविदेहकी पार्श्व-भुजा सोलह हजार आठसौ तेरासी योजन और साठे आठ कला (१६८८३३८ यो०) प्रमाण है ॥१८०२॥

[तालिका ४२ पृष्ठ ५०५ पर देखिये]

तालिका : ४२

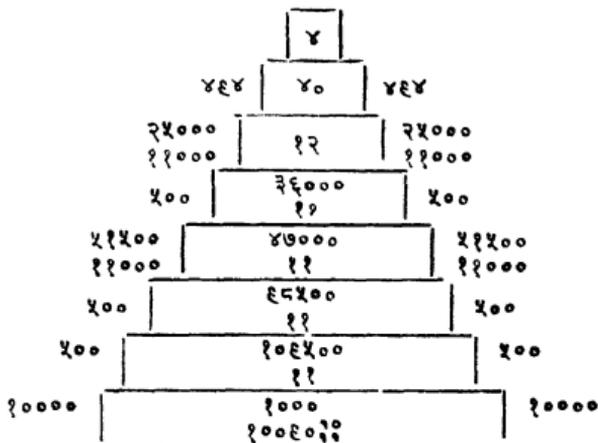
पर्वत एवं क्षेत्रोंके विस्तार, बाण, जीवा, धनुष आदिका प्रमाण

क्र	पर्वत और क्षेत्रों के नाम	योगन		उत्सेध	विस्तार	बाण	उत्तर जीवा	धनुष	चूलिका	पार्श्वभुजा
		योगन	योगन							
१	हिमवान्	२५	१०५२ १/२	योगन	१५७८ १/२	योगन	२४६३२ १/२	२५२३० १/२	योगन	५३५० ३/४
२	हैमवतक्षेत्र	X	२१०५ १/२	X	३६८४ ५/८	X	३७६७४ १/२	३८७६० १/२	६२७१ ३/४	६७५५ १/२
३	महाहिमवान्	५०	४२१० १/२	योगन	७८६४ १/२	योगन	५३६३१ १/२	५७२६३ १/२	८१२८ १/२	६२७६ ३/४
४	हरिक्षेत्र	X	८४२१ १/२	X	१६३१५ १/२	X	७३६०१ १/२	८४०१६ १/२	६६८५ १/२	१३३६१ ३/४
५	निषध	१००	१६८४२ १/२	योगन	३३१५७ १/२	योगन	६४१५६ १/२	१२४३४६ १/२	१०१२७ १/२	२०१६५ ३/४
६	दक्षिणविदेह	X	१६८४२ १/२	X	५००००	X	१०००००	१५८११२ ३/४	२६२१ १/२	१६८८३ ३/४
७	उत्तरविदेह	X	१६८४२ १/२	X	५००००	X	१०००००	१५८११२ ३/४	२६२१ १/२	१६८८३ ३/४

मन्दर महाभेरुका निरूपण—

बरिसे महाविदेहे, बहुमञ्जे मंडरो महासेलो ।

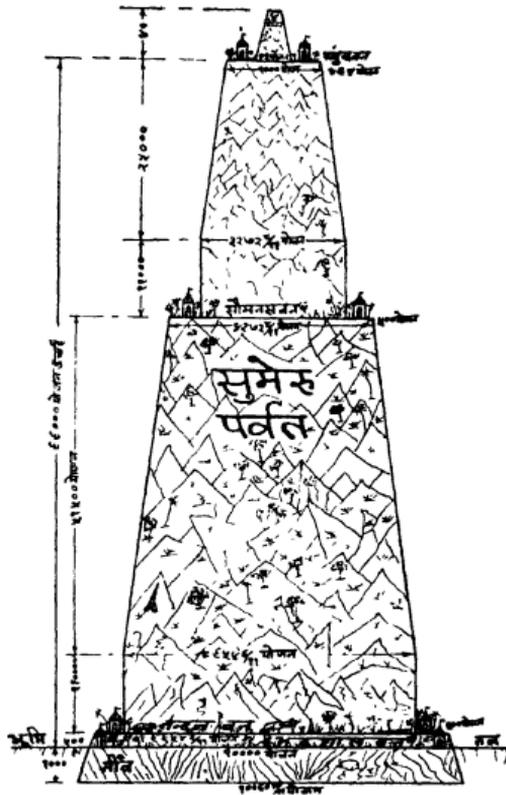
जम्माभिसेय - पीढो, सव्वाणं तित्थ - कस्ताणं ॥१८०३॥



अर्थ :—महाविदेहक्षेत्रके बहु-मध्यभागमे सब तीर्थकरोंके जन्माभिसेकका आसनरूप मन्दर (सुदर्शन) नामक महापर्वत है ॥१८०३॥

नोट—गाथा १८०३ की मूल संदृष्टिका भाव 'सुमेरु' के चित्रसे स्पष्ट हो रहा है ।

(सुमेरु पर्वत का चित्र अगले पृष्ठ पर देखिये)



जोयण-सहस्स-गाढो, राव-रावदि-सहस्स-मेत्त-उच्छेहो ।

बहुबिह-वण-संड-जुवो ञाणावर - रयण - रमणिज्जो ॥१८०४॥

। १००० । ११००० ।

अर्थ :- यह महापर्वत एक हजार (१०००) योजन गहरा (नीच), निम्नानवे (११०००) हजार योजन ऊँचा, बहुत प्रकारके वन-खण्डोंसे युक्त और अनेक उत्तम रत्नोंसे रमणीय है ॥१८०४॥

दस य सहस्सा णउवी, जोयणया दस-कलेक्करस-भागा ।

पायाल - तसे दंबं, समबट्ट - तणुस्स मेहस्स ॥१८०५॥

। १००६० । ११ ।

अर्थ :—इस समान गोल शरीरवाले मेह-पर्वतका विस्तार पाताल-तलमें दस हजार नब्बे योजन और एक योजनके ग्यारह भागोमेसे दस भाग (१००६०.३१ यो०) प्रमाण है ॥१८०५॥

कम - हाणीए उव्वारि, धरणी - पट्टम्मि दस-सहस्साणि ।

जोयण - सहस्समेक्कं, वित्थारो सिहर - भूमीए ॥१८०६॥

। १०००० । १००० ।

अर्थ :—फिर क्रमशः हानिरूप होनेसे उसका विस्तार पृथिवीके ऊपर दस हजार (१००००) योजन और शिखर-भूमि पर एक हजार (१०००) योजन प्रमाण है ॥१८०६॥

सरसमय-जलद-^१सिग्गद-विणयर - बिंबं व सोहए मेरू ।

विविह-वर-रयण-मंडिय - वसुमइ - मउडो व्व उत्तुंगो ॥१८०७॥

अर्थ :—वह उन्नत मेरुपर्वत शरत्कालीन वादलोमेसे निकलते हुए सूर्यमण्डलके सदृश और विविध उत्तम रत्नोंसे मण्डित पृथिवीके मुकुट सदृश शोभायमान होता है ॥१८०७॥

जम्माभित्तेय-सुर-रइव^२-दु^३दुही^३-भेरि-तूर - सिग्गोसो ।

जिण-महिम-जणिद-विक्कम-सर्दिद - संबोह - रमणिज्जो ॥१८०८॥

अर्थ :—वह मेरु पर्वत जन्माभिषेकके समय देवोसे रचे गये दुदुभि, भेरी एवं तूर्यके निर्घोष सहित और जिन-माहात्म्यसे उत्पन्न हुए पराक्रमवाले सुरेन्द्र-समूहोसे रमणीय होता है ॥१८०८॥

ससि-हार-हंस-धवलुच्छलंत^४-खीरंजु-रासि - सलिलोघो ।

सुर - किण्णर - मिहुष्णाणं, णाणाविह - कीडणोहि खुदो ॥१८०९॥

अर्थ :—चन्द्रमा, हार एवं हंस सदृश धवल तथा उच्छलते हुए क्षीरसागरके जल-समूहसे युक्त वह मेरु पर्वत किन्नर-जातिके देव-युगलोंकी नाना प्रकारकी क्रीडाओंसे सुशोभित होता है ॥१८०९॥

१. द. व. क. ज. य. सिग्गह। २. व. क. य. रइ। ३. द. क. य. दु^३दुहिभेरीतूरणादिसिग्गोसो।
ज. तूरणादिसिग्गोसो। ४. द. क. ज. य. धवलुच्छंदखीरं। ५. द. व. क. सलिलाघो।

घण्टार^१-कम्म-महासिल-संचूरण-जिणर्बारिद-भवणोघो ।

बिबिह-तव-कुसुम-पल्लव-फल-सिगवह-सुगंध - भू - भागो ॥१८१०॥

अर्थ :—अतिसघन कर्मरूपा महाशिलाओको चूर्ण करनेवाले जिनेन्द्र-भवनसमूहसे युक्त वह मेरुपर्वत अनेक प्रकारके वृक्ष-फूल-पल्लव और फलोके समूहसे पृथिवी-मण्डलको सुगन्धित करने वाला है ॥१८१०॥

मेरु पर्वतके विस्तारमे हीनाधिकता—

भूमीबो पंच - सया, कम - हाणीए तदुवरि गंतूणं ।

तट्टाणे संकुलिबो, पंच - सया सो गिरी जुगबं ॥१८११॥

अर्थ :—वह मेरुपर्वत क्रमशः हानिरूप होता हुआ पृथिवीसे पांचसौ योजन ऊपर जाकर उस स्थानमे युगपत् पांचसौ योजन प्रमाण संकुचित हो गया है ॥१८११॥

सम-बिल्धारो उव्वारि, एक्करस-सहस्स-जोयण - पमाणं ।

तत्तो कम - हाणीए, इगिबण्ण-सहस्स-पण-सया गंतुं ॥१८१२॥

। ११००० । ५१५०० ।

जुगबं ससंतबो सो, संकुलिबो जोयणाणि पंच - सया ।

सम - हंबं उव्वारि - तत्ते^३, एक्करस - सहस्स-परिमाणं ॥१८१३॥

। ५०० । ११००० ।

अर्थ :—पश्चात् इससे ऊपर ग्यारह हजार (११०००) योजन पर्यन्त समान विस्तार है । वहांसे पुनः क्रमशः हानि-रूप होकर इक्यावन हजार पांच-सौ (५१५००) योजन प्रमाण ऊपर जाने पर वह पर्वत सब ओरसे युगपत् पांच-सौ योजन फिर संकुचित हो गया है । इसके आगे ऊपर ग्यारह हजार (११०००) योजन पर्यन्त उसका विस्तार समान है ॥१८१२-१८१३॥

उद्धं कम - हाणीए, पणबीस - सहस्स - जोयणा गंतुं ।

जुगबं संकुलिबो सो, चत्तारि सयाइ चड - णउवी ॥१८१४॥

। २५००० । ४६४ ।

अर्थ :—फिर ऊपर क्रमशः हानिरूप होकर पच्चीस हजार (२५०००) योजन जानेपर वह पर्वत युगपत् चारसौ बीरानबं योजन प्रमाण संकुचित हो गया है ॥१८१४॥

एवं जोयण - लक्ष्मं, उच्छेहो सयल - पव्वद - पहुस्स ।

जिलयस्स सुर - वराणं, अणाइ - गिहणस्स मेहस्स ॥१८१५॥

अर्थ :—इसप्रकार सम्पूर्ण पर्वतोंके प्रभु तुल्य और उत्तम देवोंके आलय-स्वरूप उस अनादि-निघन मेरु-पर्वतको ऊँचाई एक लाख योजन प्रमाण है ॥१८१५॥

१००० + ५०० + ११००० + ५१५०० + ११००० + २५००० = १००००० योजन ऊँचाई ।

मुह-भूमि-सेसमद्धिय, ^१वग्ग - कदं उदय - वग्ग-सजुत्तं ।

ज तस्स ^२वग्ग - मूलं, ^३पव्ववरायस्स तस्स पस्सभुजा ॥१८१६॥

अर्थ :—भूमिमेंसे मुख घटाकर तथा उसका आधा कर (उस अर्ध-भागका) वर्ग करना चाहिए और इसमें (पर्वतकी) ऊँचाईका वर्ग मिला देनेपर उसका जो वर्गमूल हो वही पर्वतराजको पार्श्वभुजाका प्रमाण है ॥१८१६॥

यथा—

$$\sqrt{\left(\frac{१०००० - १०००}{२}\right)^2 + (६६०००)^2} = \sqrt{२०२५०००० + ६६०१०००००}$$

= ६६१०२ योजन मेरु पर्वतकी पार्श्वभुजाका प्रमाण ।

णव-णउदि-सहस्साणि, एक्क-सयं दोषिण जोयणाणि तथा ।

सविसेसाइं^४ एसा, मंवर - सेलस्स पस्स - भुजा ॥१८१७॥

। ६६१०२ ।

अर्थ :—मन्दर पर्वतकी पार्श्वभुजाका प्रमाण निन्यानवें हजार एक सौ दो योजन (६६१०२ $\frac{११}{१६}$ योजन या ६६१०२ $\frac{३}{४}$ योजन) से कुछ अधिक है ॥१८१७॥

चालीस - जोयणाइं, मेरुगिरिवस्स चूलिया - माणं ।

वारह तम्भू - वासं, चत्तारि ह्वेवि मुह - वासं ॥१८१८॥

। ४० । १२ । ४ ।

अर्थ :—मेरु पर्वतकी चूलिकाका प्रमाण चालीस योजन, भू-विस्तार वारह योजन और मुख विस्तार चार योजन है ॥१८१८॥

१ द. ज. य. मग्गवं । २. द. ज. य. मग्गमूल । ३. द व. क. ज. य. ठ. पव्वहत्थसमस्स ।

४. द. व क ठ सविसेसाइं, ज. य सविसोसयं ।

मुह-भूमिण बिसेसे, उच्छेह - हिदम्मि भू - मुहार्हितो ।

हाणि - चयं जिद्धि, तस्स पमाणं हु 'पंचंसो ॥१८१६॥

। ५ ।

अर्थ :- भूमिमेंसे मुखका प्रमाण घटाकर उत्सेघका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो वह भूमिकी अपेक्षा हानि और मुखकी अपेक्षा वृद्धिका प्रमाण कहा गया है। वह हानि वृद्धिका प्रमाण यहाँ योजनका पाँचवा भाग ($\frac{1}{5}$ यो०) है ॥१८१६॥

(भू० वि० १२ यो० - ४ यो० मुख वि० - ४० यो० उत्सेघ) = (१२ - ४) ÷ ४ = २ = ५ हानि—वृद्धिका प्रमाण ।

जत्थिच्छसि विक्खंभं, चूलिय-सिहराउ समवदिष्णाणं ।

तं पंचेहि विहत्तं, चउ - जुत्तं तत्थ तव्वासं ॥१८२०॥

अर्थ :- चूलिकाके शिखरसे नीचे उतरते हुए जितने योजनपर विष्कम्भ जाननेकी इच्छा हो उतने योजनोंको पाँचसे विभक्त करनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसमें चार अङ्क और जोड़ देनेपर वहाँका विस्तार निकलता है ॥१८२०॥

उदाहरण :- चूलिका-शिखरसे नीचे २० योजन पर विष्कम्भका प्रमाण जानना हो तो— $२० ÷ ५ + ४ = ८$ योजन विष्कम्भ होगा ।

तं मूले सगतीसं, मउभ्भे पणुबीस जोयणाणं पि ।

उड्ढे बारस अहिया, परिही वेरुलिय - मइयाए ॥१८२१॥

। ३७ । २५ । १२ ।

अर्थ :- बेंडूर्यमणिमय उस शिखरकी परिधि मूलमें सतीस योजन, मध्यमें पचबीस योजन और ऊपर बारह योजनसे अधिक है ॥१८२१॥

जत्थिच्छसि विक्खंभं, मंडर - सिहराउ समवदिष्णाणं ।

तं एक्कारस-भजिदं, सहस्स - सहिदं च तत्थ वित्थारं ॥१८२२॥

अर्थ :- सुमेरुपर्वतके शिखरसे नीचे उतरते हुए जितने योजनपर उसका विष्कम्भ जाननेकी इच्छा हो उतने योजनोंमें अ्यारहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसमें एक हजार योजन और मिला देनेपर वहाँका विस्तार आ जाता है ॥१८२२॥

बबाहरण—चूलिकाके शिखरसे नीचे ३३००० योजनोपर विष्कम्भका प्रमाण—
 $३३००० \div ११ + १००० = ४०००$ योजन ।

जस्ति इच्छसि वासं, उर्वारि मूलाउ तेलिय - पदेसं ।

एक्कारसेहि भजिदं, भू - वासे सोहिदम्मि तव्वासं ॥१८२३॥

अर्थ :—मूलसे ऊपर जिस स्थानपर मेरुका विस्तार जाननेकी इच्छा हो, उतने प्रदेशमें ग्यारहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे भूमिके विस्तारमेंसे घटा देनेपर शेष वहाँका विस्तार होता है ॥१८२३॥

एक्कारसे पदेसे, एक - पदेसा दु 'मूलदो हाणी ।

एवं पाद - करंगुल - कोस - प्पहुदोहि एगदब्बं ॥१८२४॥

अर्थ :—मेरुके विस्तारमें मूलसे ऊपर ग्यारह प्रदेशोंपर एक प्रदेशकी हानि हुई है । इसी प्रकार पाद, हस्त, अंगुल और कोस आदिककी ऊँचाई पर भी स्वयं जानना चाहिए ॥१८२४॥

मेरुकी छह परिधियाँ एवं उनका प्रमाण—

हरिवालमई^१ परिही, बेरुलिय-मणी य रयण-वज्जमई ।

उद्धम्मि य पउममई, तत्तो उवरिम्मि पउमरायमई ॥१८२५॥

अर्थ :—इस पर्वतकी परिधि नीचेसे क्रमशः हरितालमयी, वैडूर्यमणिमयी, रत्न (सर्वरत्न) मयी, वज्रमयी, इसके ऊपर पद्ममयी और इससे भी ऊपर पद्मरागमयी है ॥१८२५॥

सोलस - सहस्सयाणि, पंच - सया ज्ञोयणाणि पत्तोक्कं ।

ताएणं छप्परिहीणं, मंदर - सेलस्स परिमाणं ॥१८२६॥

। १६५०० ।

अर्थ :—मन्दर-पर्वतकी इन छह परिधियोंमेंसे प्रत्येक परिधिका प्रमाण सोलह हजार पाँचसौ योजन है ॥१८२६॥

सातवी परिधिमें ग्यारह वन—

सत्तामया^३ तप्परिही, ञाणाविह-तरु-गजेहि परियरिया^४ ।

एक्कारस - भेय - जुदा, बाहिरदो भजमि तम्भेदे^५ ॥१८२७॥

१. द. व. क. ज. य. ठ. मूलदा । २. द. व. हरिदाममही । ३. द. व. क. ज. य. ठ. सत्तामया ।

४. द. व. य. परियाय । ५. द. व. क. ज. य. ठ. तम्भेदो ।

अर्थ :—उस पर्वतकी सातवीं परिधि नाना प्रकारके वृक्ष-समूहोंसे व्याप्त है और बाहरसे ग्यारह प्रकारकी है। मैं उन भेदोंको कहता हूँ ॥१८२७॥

पामेज भद्रसालं, मणुसुत्तर - देव - स्वाम - रमणाई ।

भूदारमणं पंचम - भेदाई' भद्रसाल - वणे ॥१८२८॥

अर्थ :—भद्रसालवनमें नामसे भद्रसाल, मानुसुत्तर, देवरमण, नागरमण और भूतरमण ये पाँच वन हैं ॥१८२८॥

पंदण - पहुदीएसुं, पंदणमुवणंदणं' च सोमणसं ।

उवसोमणसं पंडू, उवपंडू - वणाणि दो - ह्यो दु ॥१८२९॥

अर्थ :—नन्दनादिक वनोंमें नन्दन और उपनन्दन, सोमनस और उपसोमनस तथा पाण्डुक और उपपाण्डुक इसप्रकार दो-दो वन हैं ॥१८२९॥

मेरुके मूलभागादिककी वज्रादि-रूपता—

सो मूले वज्रमग्नो, एक - सहस्सं च जोयण-पमाणो ।

मज्जे वर - रयणमओ, इगिसट्ठि - सहस्स - परिमाणो ॥१८३०॥

। १००० । ६१००० ।

उवरिम्मि कंजणमग्नो, अडतीस-सहस्स-जोयणार्णं पि ।

मंदर - सेलस्स - सिरे^३, पंडु - वणं णाम रमणिज्जं ॥१८३१॥

। ३८००० ।

अर्थ :—वह सुमेरुपर्वत मूलमे एक हजार (१०००) योजन प्रमाण वज्रमय, मध्यमें इकसठ हजार (६१०००) योजन प्रमाण उत्तम रत्नमय और ऊपर अडतीस हजार (३८०००) योजन - प्रमाण स्वर्णमय है। इस मन्दर - पर्वतके शीर्ष पर रमणीय पाण्डु नामक वन है ॥१८३०-१८३१॥

मेरु सम्बन्धी चार वन—

सोमणसं णाम वणं साणुपदेसेसु खंदरां तह य ।

तस्य चउत्थं जेट्ठि, भूमिए भद्रसाल - वणं ॥१८३२॥

अर्थ :—सौमनस तथा नन्दनवन मेरु-पर्वतके सानुप्रदेशोंमें और चौथा भद्रशासनवन भूमि पर स्थित है ॥१८३२॥

मेरु-शिखरका विस्तार एवं परिधि—

अथैष - सहस्रमेककं, मेरुगिरिबस्स सिहुर - बित्थारं ।

एककत्तीस - सयार्णि, बासट्ठी समहिया य तप्परिही ॥१८३३॥

। १००० । ३१६२ ।

अर्थ — मेरु महापर्वतके शिखरका विस्तार एक हजार (१०००) योजन और उसकी परिधि तीन हजार एकसौ बासठ योजनसे कुछ अधिक (३१६२ ३/४ योजन) प्रमाण है ॥१८३३॥

मेरुशिखरस्थ पाण्डुक वनका वर्णन—

पंडु - वणे अइरम्मा, समंतबो होबि विव्व - तड - वेदी ।

वरिअट्टालय^१-बिउला, षाणाविह-धय-वडेहि^२ संजुत्ता ॥१८३४॥

अर्थ :—पाण्डुवनमें चारों ओर मार्ग एवं अट्टालिकाओंसे विशाल और नाना प्रकारकी ध्वजा-पताकाओंसे संयुक्त अतिरमणीय दिव्य तट-वेदी है ॥१८३४॥

तीए तोरणदारे, जमल - कवाडा हवन्ति वज्जमया ।

विविह-वर-रयण-सच्चिदा, अकट्टिमा णिसवमायारा ॥१८३५॥

अर्थ :—उस वेदीके तोरण-द्वारपर नाना प्रकारके उत्तम रत्नोंसे जटित, अनुपम आकार-वाले वज्रमयी अकृत्रिम युगल-रूपट (किवाड़) हैं ॥१८३५॥

धुव्वंत - धय - वडाया, रयणमया गोउराण पासादा ।

सुर-किण्णर-मिहुण-जुवा, वरिहिण^३-पहुदीहि विविह वण-संडा ॥१८३६॥

अर्थ :—(पाण्डुक वनमें) फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे युक्त गोपुरोंके रत्नमय प्रासाद सुर-किण्णर युगलोंसे युक्त हैं तथा मयूरादि पक्षियों सहित अनेक वन-सज्ज हैं ॥१८३६॥

उच्छेहो वे कोसा, वेदीए पण - सयार्णि वंडाणं ।

बित्थारो भुवणत्तय - विम्हय - संभाव^४ - जजणीए ॥१८३७॥

। को २ । दं ५०० ।

१. द. व. क. ज. य. वरिअट्टालय । २. द. वडेहि । ३. व. परिहण, क. व. ठ. परिहिण ।

४. क. सुत्ताव, उ. व. ठ. सत्ताव ।

अर्थ :—भुवनत्रयको विस्मित और लुब्ध करने वाली इस वेदीकी ऊँचाई दो कोस और विस्तार पाँचसौ (५००) धनुष प्रमाण है ॥१८३७॥

तीए^१ मङ्गिमभागे, पंडू णामेण दिव्व - वण - संडो ।

सेलस्स चूलियाए, समंतदो दिण्ण - परिवेढो ॥१८३८॥

अर्थ :—उस वेदीके मध्यभागमे पर्वतकी चूलिकाको चारो ओरसे घेरा डाले हुए पाण्डु नामक दिव्य वन-खण्ड है ॥१८३८॥

कप्पूर-रुक्ख-पउरा, तमाल-हिंताल-ताल-कयलि-जुवा ।

लवलो^२ - लवंग - ललिदा-दाडिम-पणसेहि^३ संछण्णा ॥१८३९॥

सयवत्ति - मल्लि - साला - चंपय-णारंग-माहुलिंगेहि ।

पुण्णाय - णाय - कुज्जय - असोय-पहुदीहि रमणिज्जा ॥१८४०॥

कोइल-कललय-भरिदा, मोराणं विविह-कीडणेहि^४ जुवा ।

सुक^५-रव - सदा - इण्णा, खेचर-सुर-मिहुण-कीडयरा ॥१८४१॥

अर्थ :—(ये पाण्डु नामक वनखण्ड) प्रचुर कर्पूर वृक्षोंसे संयुक्त, तमाल, हिंताल, ताल और कदली वृक्षोंसे युक्त, लवलो एव लवङ्गसे मुशोभित, दाडिम तथा पनसवृक्षोंसे आच्छादित, सप्तपत्री (सप्तच्छद), मल्लि, शाल, चम्पक, नारङ्ग, मातुलिङ्ग, पुन्नाग, नाग, कुब्जक और अशोक आदि वृक्षोंसे रमणीय, कोयलोके कलकल शब्दसे भरे हुए, मयूरोंकी विविध क्रीडाओंसे युक्त, तोतोके शब्दोंसे शब्दायमान और विद्याधर एव देवयुगलोंकी क्रीडाके स्थल है ॥१८३९-१८४१॥

पाण्डुक शिलाका वर्णन—

पंडु^६-वणवभंतरए, ईसाण - विसाए होदि^७ पंडुसिला ।

तड^८-वण - वेदी - जुत्ता, अद्धेदु^९ - सरिच्छ - संठाणा ॥१८४२॥

अर्थ :—पाण्डुवनके भीतर (वनखण्डकी) ईशान दिशामें तट-वनवेदीसे संयुक्त और अर्ध-चन्द्र सदृश आकारवाली पाण्डुकशिला है ॥१८४२॥

१ क ज घ. तीसए । २. द. व क. ज ग ठ. खवली । ३. द. ब. ज. घ. पलसेहि, क. ठ. फलसेहि । ४. द. ज ग ठ. संवण्णो, 'क. संवण्णो । ५. क. ज. घ. उ. जुवो । ६. द. ब. क. ठ. सुरकरिवर-सदृशण्णो । ७. ब. ब. उ. पट्टवण, क. पट्टवण होदि पडसिला, ज. घ. पट्टवण भरतरएवाहेण पडसिला । ८. द. ब. उ. होदे । ९. क ज घ. उ. तद ।

पुष्पावरेसु जोयण - सद - दीहा दक्षिणुत्तरंसेसु^१ ।

पण्णासा बहुमज्जे, कम - हाणी तीए उभय - पासेसु ॥१८४३॥

अर्थ :—(यह पाण्डुक शिला) पूर्व-पश्चिममें सी योजन लम्बी और दक्षिणोत्तर दिशा गत बहु-मध्यभागमें पचास योजन विस्तार सहित है । (अर्धचन्द्राकार होनेसे) यह अपने मध्य भागसे दोनों पाश्वर्की ओर क्रमशः हानि को प्राप्त हुई है ॥१८४३॥

जोयण - अट्टुच्छेहो^२, सबत्थं होदि^३ कणयमइया सा ।

सम-वट्टा उवरिम्मि य, वण - वेदी - पहुदि - संजुत्ता ॥१८४४॥

अर्थ :—सर्वत्र स्तंभमयी वह पाण्डुक शिला आठ योजन ऊँची, ऊपर समवृत्ताकार और वन-वेदी आदिसे समुक्त है ॥१८४४॥

चउ-जोयण-उच्छेहं, पण - सय - दीहं तदद - वित्थारं ।

सग्गायणि - आइरिया, एवं भासंति पंडुसिलं ॥१८४५॥

। ४ । ५०० । २५० ।

पाठान्तरम् ।

अर्थ :—यह पाण्डुकशिला चार योजन ऊँची, पाँचसौ (५००) योजन लम्बी और इससे अर्ध (२५०) योजन प्रमाण विस्तार युक्त है । इसप्रकार सग्गायणी आचार्य निरूपण करते हैं ॥१८४५॥

पाठान्तर ।

तीए 'बहुमज्जे-वेसे, "तुं गं सीहासण विविह - सोहं ।

सरसमय - तरणि - मंडल - संकास - फुरंत-किरणोधं ॥१८४६॥

अर्थ :—पाण्डुक शिलाके बहुमध्य स्थानमें शरत्कालीन सूर्य-मण्डलके समान फैलती हुई किरणोंके समूहसे अद्भुत शोभायमान मिहामन है ॥१८४६॥

सिहासणस्स दोसुं, पासेसुं दिट्ठ - रयण - रइवाइं ।

भदासणाइ णिग्भर - फुरंत - वर - किरण-णिवहाणि ॥१८४७॥

१. द. व अट्टुच्छेहो, क. अट्टु उच्छेहो । २. द. व उ होहि । ३. द. तीर । ४. ब. ज. क उ. हुमज्जे । ५. द. ब. क. ज. उ. तुं ग ।

अर्थ :—सिंहासनके दोनों पार्श्व-भागोंमें अत्यन्त प्रकाशमान उत्तम किरण-समूहसे संयुक्त एवं दिव्य रत्नोंसे रचे गये भद्रासन विद्यमान हैं ॥१८५७॥

पुह पुह पीठ-तयस्स घ, उच्छेहा पण - सयाणि कोवंडा ।

तेत्तिय - भेत्तो मूलो, बासो सिहरे अ तस्सद्धं ॥१८५८॥

। ५०० । ५०० । २५० ।

अर्थ :—तीनों पीठोंकी पृथक्-पृथक् ऊंचाई पाँच सौ धनुष है । मूल विस्तार भी इतने ही (५००) धनुष है तथा शिखर पर पीठोंका विस्तार इससे आधा (२५० धनुष) है ॥१८५८॥

धवलदादवच - जुत्ता, ते पीठा पायपीठ - सोहिल्ला ।

मंगल - दव्वेहि जुदा, चामर - घटा - पयारेहि ॥१८५९॥

अर्थ :— पादपीठोंसे शोभायमान वे पीठ धवल-रत्न एवं चामर घटा आदि अनेक प्रकारके मङ्गल-द्रव्योंसे संयुक्त है ॥१८५९॥

सद्वे पुव्वाहिमुहा, पीठ - वरा तिहुवणस्स विम्हरा ।

एक्क-मुह - एक्क - जीहो, को सक्कइ वण्णिदुं ताणि ॥१८६०॥

अर्थ :—पूर्वाभिमुख स्थित वे सब उत्तम पीठ तीनों लोकोंको विस्मित करनेवाले हैं । इन पीठोंका वर्णन करनेमें एक मुख और एक जिह्वावाला कौन समर्थ हो सकता है ? ॥१८६०॥

शाल-तीर्थकरका जन्माभिपेक—

भरहक्खेत्ते जादं, तित्थयर - कुमारकं गहेद्वुणं ।

सक्कपहुदी इदा, णंति विभूदीए विविहाए ॥१८६१॥

अर्थ :—सौधर्मादिक इन्द्र भरतक्षेत्रमें उत्पन्न हुए तीर्थकर कुमारको ग्रहणकर विविध प्रकारकी विभूतिके साथ (मेरु पर्वतपर) ले जाते हैं ॥१८६१॥

मेरु - प्पदाहिणेणं, गच्छिय पंडु - सिलाए उवरिम्मि ।

मज्झिय - सिंहासणए, वइसाविय भत्ति - राएण ॥१८६२॥

अर्थ :— (वे इन्द्र) मेरु की प्रदक्षिणा करते हुए पाण्डुक शिलापर जाकर बीचके सिंहासन पर भक्तिराग पूर्वक (उन्हे) बैठते हैं ॥१८६२॥

दक्षिण - पीठे सबको, ईसाणिवो वि उत्तरा - पीठे ।

वइसिय अभिसेयाइं, कुब्बंति महाबिसोहीए ॥१८५३॥

अर्थ :- सोधमॅन्द्र दक्षिण पीठ पर और ईशानेन्द्र उत्तम पीठ पर बैठकर महतो विभुद्धिसे अभिषेक करते हैं ॥१८५३॥

पंडुकंबल णामा, रजदमई सिहि-विसा-भुहम्मि सिला ।

उत्तर - दक्षिण - दोहा, पुब्बावर - भाय - वित्थिण्णा ॥१८५४॥

अर्थ :- आग्नेय-दिशामे उत्तर-दक्षिण दीर्घ (लम्बी) और पूर्व-पश्चिम भागमे विस्तीर्ण (चौड़ी) रजतमयी पाण्डुकम्बला नामक शिला स्थित है ॥१८५४॥

उच्छेह - वास - पहुदी, पंडुसिलाए जहा तथा तोए ।

अवर - विदेह - जिण्णाण, अभिसेयं तत्थ कुब्बंति ॥१८५५॥

अर्थ :- ऊँचाई एवं विस्तारादिक जिस प्रकार पाण्डुकशिलाका है उसीप्रकार उस (पाण्डुकम्बला) शिलाका भी है । इस शिलाके ऊपर इन्द्र अवर (पश्चिम) विदेहके तीर्थकरोका अभिषेक करते हैं ॥१८५५॥

णहिरिदि-विसा-विभागे, रत्तसिला णाम होदि कणयमई ।

पुब्बावरेसु दीहं, वित्थारो दक्षिणुत्तरे तोए ॥१८५६॥

अर्थ :- नैऋत्य-दिशाभागमे रत्तशिला नामक स्वर्णमयी शिला है, जो पूर्व-पश्चिम दीर्घ और उत्तर-दक्षिण विस्तृत है ॥१८५६॥

पंडुसिला - सारिच्छा, तोए वित्थार - उदय - पहुदीओ ।

एरावदय - जिण्णाणं, अभिसेयं तत्थ कुब्बंति ॥१८५७॥

अर्थ :- इसका विस्तार एवं ऊँचाई आदि पाण्डुकशिलाके सदृश है । यहाँ पर इन्द्र एरावत क्षेत्रमे उत्पन्न हुए तीर्थकरोका अभिषेक करते हैं ॥१८५७॥

पवण - विसाए होवि हु, रहिरमई रत्तकम्बला णाम ।

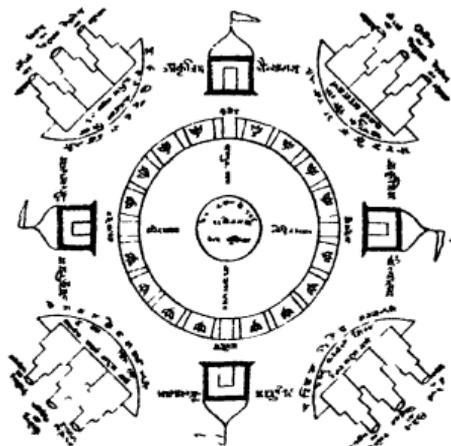
उत्तर - दक्षिण-दोहा, पुब्बावर - भाग - वित्थिण्णा ॥१८५८॥

अर्थ :- वायव्य दिशामें उत्तर-दक्षिण दीर्घ और पूर्व-पश्चिम भागमें विस्तीर्ण रत्तकम्बला नामक हृदिरमयी (लालमणिमयी) शिला है ॥१८५८॥

पंडुसिलाग्र समाणा, वित्थारुच्छेह - पट्टुबिया तीए ।

पुव्व - विदेह - जिणारणं, अभिसेयं तत्थ कुव्वति ॥१८५६॥

अर्थ :—इसका विस्तार और ऊँचाई आदिक पाण्डुक-सिनाके महत्त्व है। यहाँ पर दृष्ट पूर्वविदेहमें उत्पन्न हुए तीर्थकरोंका अभिषेक करते हैं ॥१८५६॥



पाण्डुकवनस्थ प्रासादो आदिका वर्णन—

पुव्व-दिसाए चूलिय - पासे पंडुग - वणम्मि पासादो ।

लोहित - नामो वट्टो, वास - कुबो' तीस-^२कोसाखि ॥१८६०॥

। ३० ।

अर्थ :—पाण्डुक-वनमें चूलिकाके पास पूर्व-दिशामें तीस कोस प्रमाण विस्तारवाना लोहित नामक वृत्ताकार प्रासाद है ॥१८६०॥

पुण्णास^३-कोस-उदमो, तप्परिही जउवि-कोस-परिमाणा ।

विबिह - वर - रयज-खचिवो, खाखाविह-धुव-गंधदुहो ॥१८६१॥

अर्थ :—विविध उत्तम रत्नोसे खचित शौर नाना प्रकारके धूपोंके गन्धसे व्याप्त यह पूर्व-मुख प्रासाद पचास कोस ऊँचा है तथा उसकी परिधि नब्बे (१०) कोस प्रमाण है ॥१८६१॥

सयन्वाणि आसन्वाणि, अमलाणि क्षीरवाणि 'मउवाणि ।

शर - पास - संजुवाणि, पउरानि तत्थ चेट्ठंति ॥१८६२॥

अर्थ :—(उस प्रासादमें) उत्तम पार्श्वभागोसे युक्त, स्वच्छ, रज-विहीन एवं मृदुल ज्य्यायें तथा आसन प्रचुर परिमाणमें हैं ॥१८६२॥

तम्मंदिर-बहुमण्णे, कीडज-सेलो^१ विचिच-रयणमओ ।

सबकस्स लोयपालो, सोमो कीडेवि पुब्ब - विस-भाहो ॥१८६३॥

अर्थ :—उस भवनके बहुमध्य-भागमें अद्भुत रत्नमय एक क्रीड़ा-शैल है । इस पर्वतपर पूर्व-दिशाका स्वामी सौधर्म-इन्द्रका सोम नामक लोकपाल क्रीड़ा करता है ॥१८६३॥

आउट्ट - कोटिभाहि^२, कप्पज-इत्थीहि परिउवो सोमो ।

अद्विय - पण - पत्साऊ, रमवि सयंपह - विमाण-यहू ॥१८६४॥

। ३५०००००० । पत्त ३ ।

अर्थ :—अड़ाई पत्यप्रमाण आयुवाला, स्वयम्भ्र विमानका स्वामी, सोम नामक लोकपाल साढ़े तीन करोड़ प्रमाण कल्पवासिनी स्त्रियोंसे परिवृत होता हुआ यहाँ रमण करता है ॥१८६४॥

छत्सवक्खा छासट्ठी, सहस्सया छत्सयाइ छासट्ठी ।

सोमस्स विमाखाइं, सयंपहे होंति परिवारा ॥१८६५॥

। ६६६६६६ ।

अर्थ :—स्वयम्भ्र विमानमें सोम लोकपालके विमानोंका परिवार छह लाख, छायासठ हजार छहसौ छायासठ संख्या प्रमाण है ॥१८६५॥

वाहण-वत्थानरणा, कुसुमा गंधा विमाण - सयन्वाइं ।

सोमस्स समग्गाइं, हवन्ति^३ अविरत्त - अण्वाणि ॥१८६६॥

१ व. मउवाणि, क. पउवाणि, व. य. पउवाणि। २. व. व. क. व. व. उ. वेवा। ३. व. कोटिभाहि, व. क. व. उ. कोटिवाहि। ४. व. उ. हति अविरत्त, क. व. व. हवन्ति अविरत्त।

अर्थ :—सोम लोकपालके वाहन, वस्त्र, आभरण, कुसुम, गन्धचूर्ण, विमान और शयनादिक सब अत्यन्त (गहरे) रक्तवर्णके होते हैं ॥१८६६॥

पंडुग-वज्रस्त मञ्जे, चूलिय-पासम्मि इविस्सज-विभागे ।

अंजण - जामो भवणो, बासप्पहुवीहि पुब्बं व ॥१८६७॥

अर्थ :—पाण्डुकवनके मध्यमें चूलिकाके पास दक्षिण दिशाकी ओर अञ्जन नामक भवन है । इसका विस्तारादिक पूर्वोक्त भवनके ही सदृश है ॥१८६७॥

जम-जाम-लोयपालो^१, अंजण - भवणस्त जेट्ठे मञ्जे ।

किष्णंबर-पट्टवि-जुवो^२, अरिट्ठ - जामे पट्ट विमाणम्मि ॥१८६८॥

अर्थ :—अञ्जन भवनके मध्यमें अरिष्ट नामक विमानका प्रभु यम नामक लोकपाल काले रंगकी वस्त्रादिक सामग्री सहित रहता है ॥१८६८॥

छत्तलक्खा छासट्टो, सहस्सया छत्तयाइ छासट्टो ।

तत्थारिट्ठ - विमाणे, हौंति विमाणणि परिवारा ॥१८६९॥

। ६६६६६६ ।

अर्थ :—वहाँ अरिष्ट विमानके परिवार-विमान छह लाख छयासठ हजार छहमी छयासठ हैं ॥१८६९॥

आउट्टु-कोडि-संसा, कप्पज - इत्थीओ गिरुवमायारा ।

हौंति जमस्स पियाओ, अट्ठिय-पण - पत्त - आउत्स^३ ॥१८७०॥

३५०००००० । ५ ३ ।

अर्थ :—साढ़े तीन करोड़ (३५००००००) सख्या प्रमाण अनुपम आकृतिवाली कल्प-वासिनी देवियां यम नामक लोकपालकी प्रियायें हैं । इस लोकपालकी आयु अर्धत पांच (अढ़ाई) पत्य-प्रमाण होती है ॥१८७०॥

पंडुग-वज्रस्त मञ्जे, चूलिय - पासम्मि पच्छिम-विसाए ।

हारिदो पासोवो वास - व्यह्वोहि पुब्बं वा ॥१८७१॥

१. द. व. क. ज. य. उ. लोयपाला । २. द. व. क. ज. य. उ. जुवा । ३. द. व. क. ज. य. उ.

अर्थ :—पाण्डुकवनके मध्यमे चूलिकाके पास पश्चिम-दिशामे पूर्वोक्त भवनके सदृश व्यासादि सहित हारिद्र नामक प्रासाद है ॥१८७१॥

वरुणो त्ति लोयपालो, पासादे तत्थ चेदुठदे णिच्चं ।

किंचूण - ति - पल्लाऊ, जलपह-णामे पहु बिमाणम्मि ॥१८७२॥

अर्थ :—उस प्रासादमे सदैव कुछ कम तीन पत्न्य प्रमाण आयुका धारक जलप्रभ नामक विमानका प्रभु वरुण नामक लोकपाल रहता है ॥१८७२॥

छल्लक्खा छावट्टी, सहस्सया छस्सयाणि छासट्टी ।

परिवार - बिमाणाइ, होंति जलप्पह - बिमाणस्स ॥१८७३॥

। ६६६६६६ ।

अर्थ :—जलप्रभ विमानके परिवार-विमान छह लाख छघासठ हजार छहसी छघासठ सख्या प्रमाण है ॥१८७३॥

वाहण-वत्थ-विभूसण-कुसुम-प्पहुदीणि हेम - वण्णाणि ।

वरुणस्स होंति कप्पज - पियाउ आउट्ट - कोडीओ ॥१८७४॥

। ३५०००००० ।

अर्थ :—वरुण लोकपालके वाहन, वस्त्र, भूषण और कुसुमादिक सभी पदार्थ स्वर्ण (सुनहले) वर्णवाले होते हैं। इसके साठे तीन करोड़ (३५००००००) कल्पवासिनी प्रियाये होती है ॥१८७४॥

तव्वण - मज्जे चूलिय - पासम्मि य उत्तरे बिमायम्मि ।

पंडुग - णामो णिलओ, वास - प्पहुदीहि पुव्वं वा ॥१८७५॥

अर्थ :—उस पाण्डुक वनके मध्यमें चूलिकाके पास उत्तर-विभागमें पूर्वोक्त भवनके सदृश विस्तारादिवाला पाण्डुक नामक प्रासाद है ॥१८७५॥

तस्सि कुबेर - णामा, पासाद - वरम्मि चेदुठे देवो ।

किंचूण - ति - पल्लाऊ, सामी वण्णुप्पहे बिमाणम्मि ॥१८७६॥

अर्थ :—उस उत्तम प्रासादमें कुछ कम तीन पत्न्यप्रमाण आयुका धारक एवं वल्गुप्रभ विमानका प्रभु कुबेर नामक देव रहता है ॥१८७६॥

छल्लकला छाबट्टी, सहस्सया छस्सयाइ छासट्टी ।

परिवार - बिमाणाइं, वग्गुपहे वर - विमाणम्मि ॥१८७७॥

। ६६६६६६ ।

अर्थ :- वत्तुप्रभ नामक उत्तम विमानके परिवार-विमान छह लाख छयासठ हजार छह सौ छयासठ संख्या प्रमाण हैं ॥१८७७॥

वाहण-वत्थ-प्पहुवी, धवला' उत्तर - विसाहि-णाहस्स ।

कप्पज - वर - इत्थीओ, पियाओ आउट्टु - कोडीओ ॥१८७८॥

। ३५०००००० ।

अर्थ :- उत्तर-दिशाके स्वामी उस कुबेरके वाहन-वस्त्रादिक धवल होते हैं और माटे तीन करोड़ (३५००००००) कल्पज उत्तम स्त्रियां उसकी प्रियायें होती हैं ॥१८७८॥

पाण्डुक वनस्थ जिनेन्द्र-प्रासाद वर्णन—

तव्वण - मज्झे चूलिय - पुव्व-दिसाए जिणिव-पासादो ।

उत्तर - वक्खिण - दीहो, कोस - सयं पंचहत्तरी उवओ ॥१८७९॥

। कोस १०० । ७५ ।

अर्थ :- उस वनके मध्यमे चूलिकासे पूर्वकी ओर सौ कोस-प्रमाण उत्तर-दक्षिण-दीर्घ और पचहत्तर कोस-प्रमाण ऊंचा जिनेन्द्र-प्रासाद है ॥१८७९॥

पुव्वावर - भागेसुं, कोसा पण्णास तत्थ वित्थारो ।

कोसद्ध' अवगाढो, अकट्टिमो णिहण - परिहीणो ॥१८८०॥

। को ५० । गा ३ ।

अर्थ :- पचासकोस विस्तृत और अर्धकोस भ्रवगाह वाले ये अकृत्रिम एवं भविनाशी (भ्रनादिनिघ्न) जिनेन्द्र-प्रासाद पूर्व-पश्चिम-भागोंमें हैं ॥१८८०॥

एसो पुव्वाहिमुहो, चउ - जोयण जेट्टु-वार-उज्जेहो ।

दो जोयण तव्वासो, वास - सभाणो पवेसो य ॥१८८१॥

। ४ । २ । २ ।

अर्थ :—यह जिन-भवन पूर्वाभिमुख है । इसके ज्येष्ठ द्वारकी ऊँचाई चार योजन, विस्तार दो योजन और प्रवेश भी विस्तारके सदृश ही दो योजन प्रमाण है ॥१८८१॥

उत्तर-दक्षिण-भागे, खूल्लय-द्वाराणि दोष्णि चेट्ति ।

तद्दल - परिमाणानि, वर - तोरण - थंभ - जुत्तानि ॥१८८२॥

। २ । १ । १ ।

अर्थ :—उत्तर-दक्षिण-भागमें दो क्षुद्र (लघु) द्वार स्थित हैं, जो ज्येष्ठ द्वारकी अपेक्षा अर्धभाग-प्रमाण ऊँचाई आदि सहित और उत्तम तोरण-स्तम्भोंसे युक्त हैं ॥१८८२॥

संखेंदु-कुं व-धवलो, मणि-किरण-कल प्पणासिय-तमोघो ।

जिणवर-पासाव-वरो, तिहुवण - तिलओ त्ति गामेणं ॥१८८३॥

अर्थ :—शङ्ख, चन्द्रमा एवं कुन्दपुष्पके सदृश धवल और मणियोंके किरण-कलापसे अन्धकार समूहको नष्ट करनेवाला यह उत्तम जिनेन्द्र-प्रासाद 'त्रिभुवन-तिलक' नामसे विख्यात है ॥१८८३॥

दार-सरिच्छुस्सेहा, बज्ज-कबाडा विचिच - वित्थिण्णा ।

जमला तेसु समुज्जल, मरगय - कक्केयणादि जुदा ॥१८८४॥

अर्थ :—इन द्वारोमें द्वारोके सदृश ऊँचाई वाले, विचित्र एवं विस्तीर्ण सर्व युगल वक्त्र-कपाट अति-उज्ज्वल मरकत तथा कर्कतनादि मणियोंसे सयुक्त हैं ॥१८८४॥

विम्हयकर - रुवाहि^१, णाणाविह-सालभजियाहि जुदा ।

पण - वण्ण - रयण - रइवा, थंभा^२ तस्स विराजंति ॥१८८५॥

अर्थ :—उस जिनेन्द्रप्रासादमें विस्मय-जनक रूपवाली नानाप्रकारकी शालभजिकाओंसे युक्त और पाँच वर्णके रत्नोंसे रचे गये स्तम्भ विराजमान हैं ॥१८८५॥

भित्तीओ विविहाओ, णिम्मल-वर-फलिह^३-रयण-रइवाओ ।

चित्तेहि^४ विचित्तेहि, विम्हय - जणजेहि जुत्ताओ ॥१८८६॥

अर्थ :—निर्मल एवं उत्तम स्फटिक-रत्नोंसे रची गई विविध प्रकारकी भित्तियाँ विचित्र और विस्मय जनक चित्रोंसे युक्त हैं ॥१८८६॥

१. द. व. क. ज. उ. रुवादि, य. रुवाये । २. द. तरिखें, व. क. व. य. उ. तरिखे । ३. क. व. उ. पविह, य. पविह । ४. द. व. ज. उ. चेतोहि ।

बंधाण मज्झ - भूमि, समंतदो पंच - वण - रयणमई ।

तणु - मण - णयणाणवण - संजणणी णिम्मला विरजा ॥१८८७॥

अर्थ :- खम्भाकी मध्यभूमि चारो ओर पांच वर्रांके रत्नोसे निमित्त, शरीर मन एवं नेत्रांको आनन्ददायक, निमल और धूलिसे रहित है ॥१८८७॥

बहुबिह - विदाणएहि, मुत्ताहल - दाम - चामर जुदेहि ।

वर - रयण - भूसणोहि, संजुत्तो सो जिणंद - पासादो ॥१८८८॥

अर्थ — वह जिनेन्द्र-प्रासाद मोतियोंकी मालाओं तथा चामरोंमें युक्त है एवं उत्तम रत्नोसे विभूषित बहुत प्रकारके वितानोंमें संयुक्त है ॥१८८८॥

गर्भ-गृहमें स्थित देवच्छन्दका वर्णन—

बसहीए 'गम्भगिहे, देवच्छंदो दु - जोयणुच्छेहो ।

इगि - जोयण - वित्थारो, चउ - जोयण-दीह-संजुत्तो ॥१८८९॥

। जो २ । १ । ४ ।

अर्थ :- वसतिकामे गर्भगृहके भीतर दो योजन ऊंचा, एक योजन विस्तारवाला और चार योजन प्रमाण लम्बाईमें संयुक्त देवच्छन्द है ॥१८८९॥

सोलस - कोसुच्छेहं, समचउरस्सं तदद्ध - वित्थारं ।

लोयविणिच्छय - कला, देवच्छंदं परूवेइ' ॥१८९०॥

। को १६ । ८ ।

पाठान्तरम् ।

अर्थ :- लोकविनिश्चयके कर्ता देवच्छन्दको समचतुष्कोण, सोलह कोस ऊंचा और इमसे आधे (८ कोस) विस्तारसे संयुक्त बतलाते हैं ॥१८९०॥

पाठान्तर ।

लंबंत - कुसुम - दामो, पारावय-मोर-कंठ-वण्ण-णिहो ।

मरगय - पवाल - वण्णो, कक्केयण - इंदणीलसओ ॥१८९१॥

चोसट्ट - कमल - मालो, चामर-घंटा-पयार-रमणिज्जो ।

गोसीर - मलय - चंवण - कालागरु - धूव - गंधडुठो ॥१८९२॥

भिगार-कलस-वप्यण-णाणाविह-धय-वडेहि^१ सोहिल्लो ।

देवच्छंदो रम्मो, जलंत - वर - रयण - दोव - जुवो ॥१८६३॥

अर्थ :—लटकती हुई पुष्पमालाओं सहित, कबूतर एवं भोरके कण्ठगत वर्ण सहण, मरकत एवं प्रवाल जैसे वर्णसे संयुक्त, कर्कतन एवं इन्द्रनील मणियोंसे निर्मित, चौंसठ कमल-मालाओंसे शोभायमान, नानाप्रकारके चँबर एवं घण्टाओंसे रमणीय, गोक्षीर, मलयचन्दन एवं कालागरु धूपके गन्धसे व्याप्त, भारी, कलश, दर्पण तथा नाना प्रकारकी ध्वजा-पताकाओंसे सुशोभित श्रीर देदीप्यमान उत्तम रत्नदीपकोसे युक्त रमणीय देवच्छन्द है ॥१८६१-१८६३॥

सिहासन, जिनेन्द्र-प्रतिमाओंका माप, प्रमाण एवं स्वरूप—

अट्टुत्तर - सय-संखा, जिणवर-पासाव-मच्छ-भागम्मि ।

सिहासणाणि तुंगा^२, सपायपीढा य फलिहमया ॥१८६४॥

अर्थ :—जिनेन्द्र-प्रासादोके मध्यभागमें पाद-पीठो सहित स्फटिक-मणिमय एकसौ आठ उन्नत सिहासन हैं ॥१८६४॥

सिहासणाण^३ उव्वारि, जिण-पडिमाओ अणाइ-णिह्णाओ ।

अट्टुत्तर - सय - संखा, पण - सय - चावाणि तुंगाओ ॥१८६५॥

अर्थ :—सिहासनोके ऊपर पाँचसौ धनुष - प्रमाण ऊँची एकसौ आठ अनादि-निघन जिण-प्रतिमाएँ विराजमान हैं ॥१८६५॥

भिण्णिद - नीलमणिमय - कुंतल-भूवगविण्ण-सोहाओ ।

फलिहिव^४ - रणील - णिम्मिद-धवलसिद-णेस-जुयलाओ ॥१८६६॥

वज्जमय - दंतपंती - पहाओ पल्लव-सरिच्छ-अधराओ ।

हीरमय - वर - णहाओ, पउमारुण - पाणि-चरणाओ ॥१८६७॥

अट्टुभहिय - सहस्स - प्पमाण-बंजरण-समूह-सहिदाओ ।

बत्तीस - सक्खणोहि, जुत्ताओ जिणोस - पडिमाओ ॥१८६८॥

अर्थ :—ये जिनेन्द्र-प्रतिमाएँ विभिन्न इन्द्रनीलमणिमय कुन्तल तथा भ्रुकुटियोंके अग्रभागसे शोभाको प्रदान करने वाली, स्फटिकमणि एवं इन्द्रनीलमणिले निर्मित धवल और कृष्ण नेत्र-युगल

१. द. व. क. ज. य. उ. ठ. वलेहि । २. द. व. क. ज. य. उ. ठ. तुंगा । ३. द. क. ज. य. उ. ठ. पण्हि । ४. द. व. क. ज. य. उ. ठ. विहासणाणि । ५. द. क. ज. य. पलिहिवणी, ठ. उ. पलिहिवणी ।

सहित, वज्रमय दन्तपंक्तिकी प्रभासे संयुक्त, पल्लव सदृश अश्वरोघ्रसे सुशोभित, हीरे सदृश उत्तम नखोंसे विभूषित, कमल सदृश लाल हाथ-पैरोसे विशिष्ट एक हजार आठ व्यञ्जन-समूहों और बत्तीस लक्षणोंसे युक्त है ॥१८१६-१८६८॥

जीहा-सहस्स - जुग-जुद-धरणिद-सहस्स-कोडि-कोडीप्रो ।

ताथं ण वण्णणेषु, सक्काप्रो माणुसाण का सत्ती ॥१८६६॥

अर्थ :—जब सहस्र युगलोंसे युक्त धरणेन्द्रों की सहस्रों, कोड़ाकोड़ी जिह्वाएँ भी उन प्रतिमाओंका वर्णन करनेमें समर्थ नहीं हो सकतीं, तब मनुष्योंकी तो शक्ति ही क्या है ॥१८६६॥

पत्तेक्कं सव्वाणं, चउसट्ठी देव - मिट्ठण - पडिमाप्रो ।

वर - चामर - हत्थाप्रो, सोहंति जिणिद - पडिमाणं ॥१९००॥

अर्थ :—सब जिनेन्द्र-प्रतिमाओंमेंसे प्रत्येक प्रतिमाके समीप, हाथमें उत्तम चँवरोकी लिए हुए चौंसठ देवयुगलोंकी प्रतिमाएँ शोभायमान हैं ॥१९००॥

छत्तत्तयादि - जुत्ता, पडियंकासण - समण्णिदा णिक्कं ।

समचउरस्सायारा, जयंतु जिणणाह - पडिमाप्रो ॥१९०१॥

अर्थ :—तीन छत्रादि सहित, पत्यङ्कासन समन्वित और समचतुरस्र आकारवाली वे जिननाथ प्रतिमाएँ नित्य जयवन्त हैं ॥१९०१॥

खेयर - सुररार्येह, भत्तीए णमिय - चरण-जुगलाओ ।

बहुविह - विभूसिवाओ, जिण - पडिमाओ णमस्सामि ॥१९०२॥

अर्थ :—जिनके चरण-युगलोंकी विशाधर एव देवेन्द्र भी भक्तिसे नमस्कार करते हैं, बहुत प्रकारसे विभूषित उन जिन-प्रतिमाओंकी मैं नमस्कार करता हूँ ॥१९०२॥

ते सव्वे उवयरणा, घंटा - पहुदोप्रो तह थ विव्वाणि ।

मंगल - दव्वाणि पुडं, जिणिद - पासेसु रेहंति ॥१९०३॥

अर्थ :—घण्टा आदि वे सब उपकरण तथा दिव्य मङ्गल-द्रव्य पृथक्-पृथक् जिनेन्द्र-प्रतिमा के पासमें सुशोभित होते हैं ॥१९०३॥

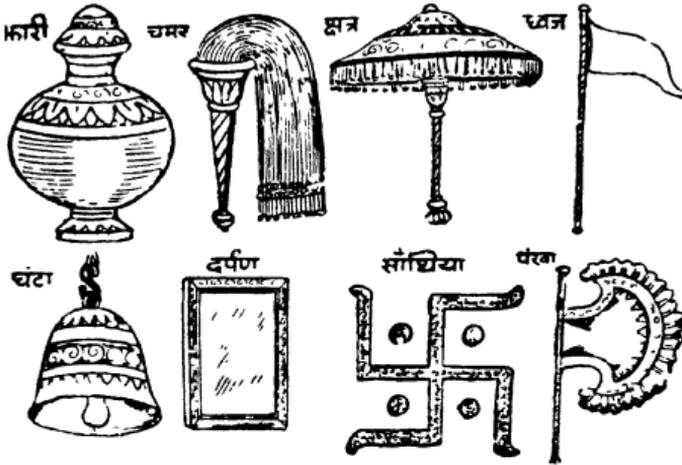
अष्ट-मङ्गल द्रव्य—

भिगार-कलस-दप्पण-चामर-धय-वियण-छत्त - सुपइट्टा ।

अट्ठत्तर - सय - संखा, पत्तेक्कं मंगला तेसुं ॥१९०४॥

श्रवणं :—भुङ्गार, कलश, दर्पण, चँबर, ध्वजा, बीजना, छत्र और सुप्रतिष्ठ (ठोना) ये आठ मङ्गल द्रव्य हैं । इनमेंसे वहाँ प्रत्येक एकसौ आठ-एकसौ आठ होते हैं ॥१६०५॥

अष्ट मंगल द्रव्य



यक्षादिसे युक्त जिनेन्द्रप्रतिमाएं--

सिरिसुव-देवीण तहा^१, सव्वाण्ह-सणवकुमार-जक्खणं ।

रूवाणि पचक्कं, पडिमा - वर - रयण - रइवाणि^३ ॥१६०५॥

श्रवणं :—प्रत्येक प्रतिमा उत्तम रत्नादिकोंसे रचित है तथा श्रीदेवी, श्रुतदेवी तथा सर्वाल्ल एव सनत्कुमार यक्षोंकी मूर्तियोंसे युक्त है ॥१६०५॥

देवच्छन्द एवं ज्येष्ठद्वार आदिकी शोभा सामग्री—

देवच्छंदस्स पुरो, णाणाबिह - रयण - कुसुम-मालाओ ।

फुरिदक्किरण^५ - कलाओ, लंबंताओ^६ बिरायत्ते ॥१६०६॥

१. द. व. क. ज. य. ठ. उ. सहा । २. द. व. क. ज. उ. य. ठ. सव्वाण्ह । ३. क. ज. व. उ. रयणगो, क. रयवाणि । ४. द. ज. य. पुरिदक्किरणबलीओ, क. पुरिदक्किरणकलाओ, उ. ठ. पुरिदक्किरण कलाओ । ५. द. व. क. ज. य. ठ. उ. श्रमताओ ।

अर्थ :—देवच्छन्दके सम्मुख नाना प्रकारके रत्नों और पुष्पोंकी मालायें प्रकाशमान किरण-समूह सहित लटकती हुई विराजमान हैं ॥१६०६॥

बत्तीस-सहस्राणि, कंचण-रजदेहि^१ णिम्विदा विउला ।

सोहंति पुष्प-कलसा, खच्चिदा वर - रयण - गियरेहि ॥१६०७॥

। ३२००० ।

अर्थ :—स्वर्ण एव चांदीसे निर्मित और उत्तम रत्नसमूहसे खचित बत्तीस हजार (३२०००) प्रमाण विशाल एव पवित्र कलश सुशोभित हैं ॥१६०७॥

चउवीस-सहस्राणि, धूव-घडा कणय-रजद^३-णिम्विदा ।

कप्पूरागुरु - चंदण - पहुदि - समुद्धंत - धूव - गंधड्डा ॥१६०८॥

। २४००० ।

अर्थ :—कपूर, अगुरु और चन्दनादिकसे उत्पन्न हुई धूपकी गन्धमे व्याप्त और स्वर्ण एवं चांदीसे निर्मित चौबीस हजार (२४०००) धूप-घट हैं ॥१६०८॥

भिगार-रयण-टप्पण-बुब्बुद^३-वर-चमर-चक्क-कय-सोहं^५ ।

घंटा - पडाया^५ - पउरं, जिणिव - भवणं^५ णिरुबमाणं ॥१६०९॥

अर्थ :—भारी, रत्नदर्पण, बुदबुद, उत्तम चमर और चक्रसे शोभायमान तथा प्रचुर घंटा और पताकाओंसे युक्त वह जिनेन्द्र भवन अनुपम है ॥१६०९॥

जिण - पासावस्स पुरो, जेट्टा - दारस्स दोमु पासेसुं^५ ।

पुह चत्तारि - सहस्सा, लंबंते^५ रयण - मालाजो ॥१६१०॥

। ४०००० ।

अर्थ —जिन-प्रासादके सम्मुख ज्येष्ठ द्वारके दोनों पादर्यभागोंमें पृथक्-पृथक् चार हजार (४००००) रत्नमालाएँ लटकती हैं ॥१६१०॥

१. द. ज. य. रउदेहि, ब. क. ठ. उ. रइदेहि । २. द. रजवि । ३. द. वयुद । ४. द. क. ज. ठ. य. सोहो । ५. द. व. क. ज. य. उ. ठ. पिदाय । ६. द. व. क. ज. य. उ. ठ. निरुबमाणो । ७. द. ब. क. ज. य. उ. ठ. अन्नते ।

ताणं पि अंतरेसुं, अकट्टिमाओ 'फुरंत - किरणाओ ।

बारस - सहस्स - संखा, लंबंते^१ कणय - मालाओ ॥१६११॥

। १२००० ।

अर्थ :- इनके भी बीचमे प्रकाशमान किरणो सहित बारह-हजार अकृत्रिम स्वर्णमालाएँ लटकती हैं ॥१६११॥

अट्टट्ट - सहस्साणि, धूव - घडा दार - अग्गमूमीसुं ।

अट्टट्ट - सहस्साओ, ताण पुरे कणय - मालाओ ॥१६१२॥

। धू ८००० । ८००० । मा ८००० । ८००० ।

अर्थ :- द्वारकी अग्र-भूमियोमे आठ-आठ हजार धूप-घट और उन धूप-घटोंके आगे बाठ-बाठ हजार स्वर्ण-मालाएँ हैं ॥१६१२॥

पुह खुल्लय - दारेसुं, ताणद्धं होंति रयण-मालाओ ।

कंचण - मालाओ तह, धूव - घडा कणय - मालाओ ॥१६१३॥

अर्थ :- लघु-द्वारोमे पृथक्-पृथक् इससे आधो रत्नमालाएँ, कञ्चन-मालाएँ, धूप-घट तथा स्वर्ण-मालाएँ हैं ॥१६१३॥

चउवीस-सहस्साणि, जिणपुर-पुट्टोए कणय - मालाओ ।

ताणं च अंतरेसुं, अट्ट - सहस्साणि रयण - मालाओ ॥१६१४॥

अर्थ :- जिनपुरके पृष्ठ भागमें चौबीस हजार कनक (स्वर्ण) मालाएँ और इनके बीचमें आठ हजार रत्नमालाएँ हैं ॥१६१४॥

मूस-मण्डपका वर्णन—

मुहु-मंडओ^१ य रम्मो, जिणवर-भवणस्स अग्ग-भागम्मि ।

सोलस - कोसुच्छेहो, सयं च पण्णास - दीह - वासाणि ॥१६१५॥

१. द. क. न. व. उ. ठ. पुरंद । २. द. न. क. ज. य. उ. ठ. घण्वति । ३. द. ब. क. ज. य. ठ. उ.

कोसद्धो अरवगाढो^१, णाणा-वर^२-रयण-णियर-णिम्मविदो ।

घुव्वंत - धय - बडाओ, कि बहुणा सो गिरवमाणो ॥१६१६॥

अर्थ :—जिनेन्द्र भवनके अग्रभागमें सोलह कोम ऊंचा, सी कोस लम्बा और पचास कोम-प्रमाण विस्तार युक्त रमणीय मुखमण्डप है, जो आधा कोस अरवगाहसे युक्त, नाना प्रकारके उत्तम रत्न-समूहसे निमित और फहराती हुई ध्वजा-पताकाओ सहित है । बहुत वर्णनसे क्या, वह मण्डप निरूपम है ॥१६१५-१६१६॥

अवलोकनादिमण्डप एवं सभापुरादिका प्रमाण—

मुह-मंडवस्स पुरदो, अबलीयण - मंडओ परम-रम्मो ।

अहिया सोलस-कोसा, उवओ रुंदो^३ सयं - सयं दोहं^४ ॥१६१७॥

अर्थ :—मुख-मण्डपके आगे सोलह कोमसे अधिक ऊंचा, सी कोस विस्तृत और सी कोस लम्बा परम-रमणीय अवलोकन-मण्डप है ॥१६१७॥

णिय - जोगुच्छेह - जुबो, तप्पुरदो चेट्टवे अहिट्ठाणो^५ ।

कोसासीदो वासो, तेत्तिय - मेत्तस्स दोहत्तं ॥१६१८॥

। ५० ।

अर्थ :—उसके आगे अपने योग्य ऊंचाईसे युक्त अधिष्ठान स्थित है । इसका विस्तार अस्सी कोस है और लम्बाई भी इतनी (५० कोस) ही है ॥१६१८॥

तत्तस बहु - मउभ - देसे, सभापुरं दिव्य-रयण-वर-रइदं ।

अहिया सोलस उवओ, कोसा चउसट्ठि दोह - वासाणि ॥१६१९॥

। १६ । ६४ । ६४ ।

अर्थ :—उसके बहुमध्यभागमें उत्तम दिव्य रत्नोसे रचा गया सभापुर है, जिसकी ऊंचाई सोलह कोससे अधिक और लम्बाई एव विस्तार चौंसठ कोस प्रमाण है ॥१६१९॥

पीठका वर्णन—

सीहासण-भट्टासण-वेसासण-पहुवि - विविह - पीठाणि ।

वर - रयण - णिम्मिदाणि, सभापुरे परम - रम्मणि ॥१६२०॥

१. द. ब. क. ज. य. उ. ठ. अगाढो । २. ज. य. विह । ३. द. ब. क. ज. य. उ. ठ. रुंदा ।
४. ब. उ. दोहि । ५. द. ब. क. ज. य. उ. ठ. अविट्ठाणो ।

अर्थ :—सभापुरमे उत्तम रत्नोसे निमित्त परम-रमणीय सिंहासन, भद्रासन और बेत्रासन-
आदि नाना प्रकारके पीठ है ॥१६२०॥

होदि सभापुर - पुरदो, पीठो चालीस-कोस-उच्छेहो ।

णाणाबिह - रयणमन्नो, उच्छण्णो तस्स वास-उबएसो ॥१६२१॥

। ४० कां ।

अर्थ :—सभापुरके आगे नाना प्रकारके रत्नोसे निमित्त चालीस (४०) कोस ऊँचा एक
पीठ है । इसके विस्तारका उपदेश नष्ट हो गया है ॥१६२१॥

पीठस्स चउ - दिसासुं, बारस वेदोन्नो होंति भूमियसे ।

वर - गोउरान्नो तेचिय - भेत्तान्नो पीठ - उड्डम्मि ॥१६२२॥

अर्थ :—पीठके चारो ओर उत्तम गोपुरोसे युक्त बारह वेदियाँ पृथिवीतलपर और इतनी
ही (वेदियाँ) पीठके ऊपर है ॥१६२२॥

स्तूपोका वर्णन—

पीठोवरि बहुमज्जे, समवट्ठो चेट्टुदे रयण - थूहो ।

बिस्थारुच्छेहेहिं, कमसो कोसाणि चउसट्ठो ॥१६२३॥

। को ६४ । ६४ ।

अर्थ :—पीठके ऊपर बहुमध्य-भागमे एक समवृत्त रत्नस्तूप स्थित है, जो क्रमशः चौसठ
(६४) कोस विस्तृत और चौसठ (६४) कोस ही ऊँचा है ॥१६२३॥

छत्ता-छत्ताबि-सहिन्नो, कणयमन्नो पज्जलंत-मणि-किरणो ।

थूहो अणाइ - गिहणो, जिण-सिद्ध-पडिम-पडिपुण्णो ॥१६२४॥

अर्थ :—छत्रके ऊपर छत्रसे सयुक्त, देदीप्यमान मणि-किरणोसे विभूषित और जिन
अरिहन्त) एव सिद्ध प्रतिमाओमे परिपूर्ण अनादिनिघ्न स्वर्णमय स्तूप है ॥१६२४॥

तस्स य पुरदो पुरदो, अड-थूहा^१ तस्सरिच्छ - वासादो ।

ताणं अगो दिव्वं, पीठं चेट्टुदि कणयमयं ॥१६२५॥

अर्थ :—इसके आगे-आगे सदृश विस्तारार्थि सहित आठ स्तूप हैं । इन स्तूपोके आगे
वर्णमय दिव्य आठ पीठ स्थित है ॥१६२५॥

त रुंदायामेहि^१, दोष्णि सया जोयणारिण पणणासा ।

पीढस्स^२ उदयमाणे, उवएसो अग्ग् उच्छुण्णो ॥१६२६॥

। २५० । २५० । ० ।

अर्थः—इस पीठका विस्तार एक लम्बाई दो सौ पचास (२५०) योजन है । इसकी ऊँचाईके प्रमाणका उपदेश हमारे लिए नष्ट हो गया है ॥१६२६॥

पीढस्स चउ - दिसासुं, बारस-वेदीओ होंति भूमियले ।

वर - गोउरओ तेत्ति य - मेत्तिओ पीढ - उड्डम्मि ॥१६२७॥

अर्थः—पीठके चारो ओर उत्तम गोपुरोसे युक्त बारह वेदियां भूमितलपर ओर दृतनी ही (वेदियां) पीठके ऊपर है ॥१६२७॥

चैत्यवृक्षका वर्णन—

पीढस्सुवरिम^३ - भागे, सोलस-^४गम्बूदिमेत्त - उच्छेहो ।

सिद्धंतो णामेणं, चेत्त - दुमो दिव्व - वर - तेओ ॥१६२८॥

। को १६ ।

अर्थः—पीठके उपरिम भागपर सोलह कोस प्रमाण ऊँचा दिव्य उत्तम तेजको धारण करने वाला सिद्धार्थ नामक चैत्यवृक्ष है ॥१६२८॥

खंधुच्छेहो^५ कोसो, चत्तारो बहुलमेवक - ^६गम्बूवी ।

बारस - कोसा साहा - दीहत्तं चैय विरुच्चालं ॥१६२९॥

। को ४ । १ । १२ । १२ ।

अर्थः—चैत्यवृक्षके स्कन्धकी ऊँचाई चार कोस, बाह्य एक कोस और शाखाओंकी लम्बाई बारह कोस तथा उनका परस्पर अन्तराल भी बारह कोस प्रमाण है ॥१६२९॥

इगि - लक्खं चालीसं, सहस्सया इगि-सयं च बीस-जुवं ।

तस्स परिवार - रुक्खा, पीढोवरि तप्पमाण - धरा^७ ॥१६३०॥

। १५० । १२० ।

१. द. क. ज. य. ठ. रुंदा आमेहि, उ. रुंदा आमेहि । २. द. ब. क. ज. य. उ. ठ. उदयमाणो ।
३. द. ब. क. ज. य. उ. ठ. पीढोवरिम । ४. द. ब. क. ज. य. उ. ठ. गम्मादि । ५. द. क. ज.
य. उ. ठ. खंधुच्छेहो । ६. द. ब. क. ज. य. उ. गम्मादी । ७. द. ब. क. ज. य. उ. ठ. धरो ।

अर्थ :—पीठके ऊपर टमी प्रमाणको धारण करने वाले एक लाख चालीस हजार एकसौ बीस (१४०१२०) इसके परिवार-वृक्ष हैं ॥१६३०॥

विविह-वर-रयण-साहा^१, मरगय-पत्ता य पउमराय-फला ।

चामीयर - रजदमया - कुसुम - जुवा सयल - कालं ते ॥१६३१॥

अर्थ —वे (वृक्ष) विविध प्रकारके उत्तम रत्नोसे निमित्त शाखाओ, मरकतमणिमय-पत्तों, पथरागमणिमय फलों और स्वर्ण एव चांदीसे निमित्त पुष्पोसे सदैव समुक्त रहते हैं ॥१६३१॥

सव्वे अणाइ-णिहणा, पुढविमया विव्व-चेरा-वर-रक्खा ।

जोवुप्पत्ति - लयाणं, कारण - भूवा सई हवन्ति ॥१६३२॥

अर्थ :—वे सब उत्तम दिव्य चैत्यवृक्ष अनादि-निघन और पृथिवीरूप होते हुए जीवोंको उत्पत्ति और विनाशके स्वयं कारण होते हैं ॥१६३२॥

रक्खाण चउ-दिसामुं, पलोक्कं विविह-रयण-रइवाओ ।

जिया - सिद्धपण्डिमाओ, जयंतु चचारि चचारि ॥१६३३॥

अर्थ :—(इन वृक्षोमे) प्रत्येक वृक्षकी चारो दिशाओमें विविध प्रकारके रत्नोसे रचित जिन (अरिहन्तों) और सिद्धोंकी चार-चार प्रतिमाएँ (विराजमान हैं) । (ये प्रतिमाएँ) जयवन्त हों ॥१६३३॥

चेरा - तरुणं पुरवो, विव्वं पीढं हवेदि कणयमयं ।

उच्छेह - दीह - वासा, तस्स य उच्छण्ण - उवएसो ॥१६३४॥

अर्थ :—चैत्यवृक्षोके सामने स्वर्णमय दिव्य पीठ है । इसकी ऊँचाई, लम्बाई और विस्तारादिकका उपदेश नष्ट हो गया है ॥१६३४॥

पीढस्स चउ - दिसामुं, बारस वेवी य होंति भूमियसे ।

अरियट्टालय - गोउर - दुबार - तोरण - बिबिसाओ ॥१६३५॥

अर्थ :—पीठके चारों ओर भूमितलपर मार्गों, अट्टालिकाओं, गोपुरदारों और तोरणोंसे युक्त) अद्भुत बारह वेदियाँ हैं ॥१६३५॥

चउ-जोयण-उच्छेहा, उर्वारि पीढस्स कणय-वर-संभा ।

बिबिह-मणि-रयस - सच्चिवा, चामर-चंटा-पथार-जुवा ॥१६३६॥

अर्थ :—पीठके ऊपर विविध प्रकारके मणियों एवं रत्नोंसे खचित और अनेक प्रकारके चमरों एवं घण्टाओंसे युक्त चार योजन ऊँचे स्वर्णमय नम्बे हैं ॥१६३६॥

सज्जेशुं थंभेसुं, महाघया विविह - वण्ण - रमणिकजा ।

जामेण महिदघया, छत्ताय - सिहर - सोहिल्ला ॥१६३७॥

अर्थ :—सब खम्भोके ऊपर अनेक प्रकारके वर्णोंसे रमणीय और शिखररूप तीन छत्रोंसे सुशोभित महेंद्र नामकी महाध्वजाएँ हैं ॥१६३७॥

पुरदो' महाघयाणं, मयर - प्पमुहेहि मुक्क-सलिलाओ ।

चत्तारो वावीओ, कमलुप्पल - कुमुद - छण्णाओ ॥१६३८॥

अर्थ :—महाध्वजाओंके सम्मुख मगर आदि जन-जन्तुओंसे रहित, जन-युक्त और कमल, उत्पल एवं कुमुदोंसे व्याप्त चार वापिकाएँ हैं ॥१६३८॥

पण्णास - कोस - वासा, पत्तेयं होति दुग्ग - दिग्घंता ।

दस कोसा अवगाढा, वावीओ वेदियादि - जुत्ताओ ॥१६३९॥

। को ५० । १०० । गा १० ।

अर्थ :—वेदिकादि महित प्रत्येक वापिका पचास कोस विस्तृत, सौ (१००) कोम लम्बी और दस कोस गहरी है ॥१६३९॥

जिनेन्द्र भवन, क्रीड़ा भवन एवं प्रामादोका वर्णन—

वावीणं बहुमउभ्भे, चेट्टुदि एक्को जिणिद - प्रासादो ।

विष्फुरिद-रयण - किरणो, कि बहुसो सो निस्समाओ ॥१६४०॥

अर्थ :—वापियोंके बहुमध्यभागमें प्रकाशमान रत्नकिरणोंवाला एक जिनेन्द्र-प्रासाद स्थित है । बहुत कथनमें क्या ? वह जिनेन्द्र-प्रासाद निरुपम है ॥१६४०॥

ततो दहाउ पुरदो, पुब्बुत्तर - दक्खिणेषु भागेषु ।

प्रासादा रयणमया, देवाणं कीडणा होति ॥१६४१॥

अर्थ :—पश्चात् वापिकाओंके आगे पूर्व, उत्तर और दक्षिण भागोंमें देवोंके रत्नमय क्रीड़ा-भवन हैं ॥१६४१॥

पण्णास-कोस - उदया, कमसो पण्णवीस रुंद - दीहत्ता ।

धूप - घटोह्णि जुत्ता, ते णिलया विविह - वण्ण - घरा ॥१६४२॥

। को ५० । २५ । २५ ।

अर्थ :—विविध वर्णोंको धारण करने वाले वे भवन पचास कोस ऊँचे हैं, पच्चीस कोस विस्तृत हैं और पच्चीस ही कोस लम्बे हैं तथा धूप-घटोसे सयुक्त हैं ॥१६४२॥

वर - वेदियाहि रम्मा, वर-कंचण-तोरणोहि परियरिया ।

वर - वज्ज - णील - मरगय-णिम्मिद-भित्तीहि सोह्ति ॥१६४३॥

अर्थ :—उत्तम वेदिकाओसे रमणीय और उत्तम स्वर्णमय तोरणोंसे युक्त वे भवन उत्कृष्ट वज्र, नीलमणि और मरकत मणियोंसे निर्मित भित्तियोंसे शोभायमान हैं ॥१६४३॥

ताण भवणान पुरदो, तेत्तिय-मारणेण दोण्णिण पासादा ।

धुब्बंत - धय - वडाया, फुरंत - वर - रयण-किरणोहा ॥१६४४॥

। ५० । २५ । २५ ।

अर्थ :—उन भवनोके आगे इतने ही (५० कोस ऊँचे, २५ कोस चौड़े और २५ कोस लम्बे) प्रमाणसे सयुक्त, फहराती हुई ध्वजा-पताकाओ सहित और प्रकाशमान उत्तम रत्नोंके किरण-समूहसे सुशोभित दो प्रासाद हैं ॥१६४४॥

तत्तो विचित्त-रुवा, पासादा दिब्ब-रयण णिम्मिदिदा ।

कोस-सय-मेत्त-उदया, कमेण पण्णास-दीह-वित्थिण्णा ॥१६४५॥

। को १०० । ५० । ५० ।

अर्थ :—उसके आगे दिव्य रत्नोंसे निर्मित सौ कोस ऊँचे और क्रमशः पचास कोस लम्बे एवं पचास कोस चौड़े अद्भुत सुन्दर प्रासाद हैं ॥१६४५॥

जे जेट्ठ-वार-पुरदो, विव्वमहा'- मंडवाविया कहिदा ।

ते सुल्लय - वारेसुं, ह्वंति अट्ट - प्पमाणोह्णि ॥१६४६॥

अर्थ :—ज्येष्ठ द्वारके आगे जो दिव्य मुख-मण्डपादिक कहे जा चुके हैं, उनसे अर्ध प्रमाण वाले (मुख-मण्डपादिक) लघु-द्वारोंमें भी हैं ॥१६४६॥

१. व. ब. मुहुरंदवाविकहिदा ये, व. मुहुरंदवाविकहिदा ये, क. ट. उ. मुहुरंदवाविकहिदा से, य. मुहुरंदवाहि कहिदा से ।

तत्तो पुरवो वेदी, एवाणि वेदिवृण^१ सन्वाणि ।

चेद्वेदि चरियट्टालय - गोउर - दारेहि कणयमई ॥१६४७॥

अर्थ :—इसके आगे मार्गों, अट्टालिकाओं और गोपुर-द्वारों सहित स्वर्णमयी वेदी इन सबको वेष्टित करके स्थित है ॥१६४७॥

तीए पुरवो वरिया, तुंगेहि कणय - रयण - धंभेहि ।

चेद्वंति घड-दिसासुं, दस-स्पयारा धया णिखवमाणा ॥१६४८॥

अर्थ :—इस वेदीके आगे चारों दिशाओंमें स्वर्ण एवं रत्नमय उन्नत खम्भो सहित दस प्रकारकी श्रेष्ठ अनुपम ध्वजाएँ स्थित हैं ॥१६४८॥

हरि-करि-वसह-खगाहिव-सिहि-ससि-रवि-हंस-कमल-वक्क-धया ।

अट्टुत्तर - सय - संखा, पत्तक्कं तेत्तिया खुल्ला ॥१६४९॥

अर्थ :—सिंह, हाथी, बंल, गरुड़, मोर, चन्द्र, सूर्य, हंस, कमल और चक्र, इन चिह्नोंसे युक्त ध्वजाओंमेंसे प्रत्येक एकसौ आठ-एकसौ आठ हैं और इतनी ही लघु-ध्वजाएँ भी हैं ॥१६४९॥

चामीयर - वर - वेदी, एवाणि वेदिवृण^१ चेद्वेदि ।

विष्फुरिद-रयण - किरणा, चउ-गोउर-दार-रमणिज्जा ॥१६५०॥

अर्थ :—प्रकाशमान रत्नकिरणोंमें सयुक्त और चार गोपुरद्वारोंसे रमणीय स्वर्णमय उत्तम वेदी इनको वेष्टित करके स्थित है ॥१६५०॥

वे कोसाणि तुंगा, बित्थारेणं धणूणि पंच - मया ।

विष्फुरिद-धय-बडाया^२, फलिहमयाणेय - वर - भित्ती ॥१६५१॥

। को २ । द ५०० ।

अर्थ :—दो कोस ऊँची, पाँचसौ धनुष चौड़ी, फहराती हुई ध्वजा-पनाकाओं मण्डित यह वेदी स्फटिक मणिमय अनेक उत्तम भित्तियोंसे सयुक्त है ॥१६५१॥

१. द. व. क. ठ. उ. वेदिवृण, य ज. वेदिवृण । २. द. व. क. ठ. उ. वेदिवृण, ज. य. वेदिवृण ।

३. द. व. क. ज. य. उ. ठ. तुंगो । ४. द. ज. य. धय बहाया, क. धय बहाया, व. ठ. उ. धय बदेहा ।

कल्पवृक्ष, मानस्तम्भ एव जिन-भवन आदिका वर्णन—

तीए पुरबो बसबिह - कल्पतरु ते समंतदो होंति ।

जिण - भवणेषु तिहुवण - बिम्हय - जणणेहि रुवेहि ॥१६५२॥

अर्थ :—इसके प्रागे जिन-भवनोमे चारों ओर तीनों लोकोको आश्चर्य उत्पन्न करनेवाले स्वरूपसे संयुक्त वे दस प्रकारके कल्पवृक्ष है ॥१६५२॥

गोमेदयमय - खंधा, कंचणमय-कुसुम-णियर-रमणिञ्जा ।

मरगयमय-पत्ता - धरा, बिद्धुम-बेरुलिय-पउमराय-फला ॥१६५३॥

सब्बे अणाइणिहणा, अकट्टिमा कप्प-पादव -पयारा ।

मूलेसु चउ - विसासु, चत्तारि जिणिद - पडिमाओ ॥१६५४॥

अर्थ :—सभी कल्पवृक्ष गोमेदमणिमय स्कन्धसे युक्त, स्वर्णमय कुसुम-समूहसे रमणीय, मरकतमणिमय पत्तोंको धारण करनेवाले, मूंगा, नीलमणि एवं पद्मरागमणिमय फलोंसे संयुक्त, अकृत्रिम और अनादि-निघन है। इनके मूलमे चारों ओर चार-चार जिनेन्द्र प्रतिमाएँ हैं ॥१६५३-१६५४॥

तफलिह - वोहि-मण्णे, वेइलियमयाणि माणधंभाणि ।

वोहि पडि पत्तोयं, विचिता - रुवाणि रेहंति ॥१६५५॥

अर्थ :—उन स्फटिकमणिमय वीथियोंके मध्यमेंसे प्रत्येक वीथीके प्रति अद्भुत रूपवाले वैडूर्यमणिमय मानस्तम्भ सुशोभित है ॥१६५५॥

चामर-घंटा-किकिणि-केतण - पट्टवोहि उवरि संजुत्ता ।

सोहंति माणधंभा, चउ - वेदी - दार - तोरणेहि जुदा ॥१६५६॥

अर्थ :—चार वेदीद्वारा और तोरणोंसे युक्त ये मानस्तम्भ ऊपर चँवर, घंटा, किकिणी और ध्वजा इत्यादिसे संयुक्त होते हुए शोभायमान होते हैं ॥१६५६॥

ताणं मूले उवरि, जिणिद - पडिमाओ चउदिसं तेसु ।

वर-रयण - णिम्मिदाओ, जयंतु जय-धुणिद-चरिदाओ ॥१६५७॥

अर्थ :—इन मानस्तम्भोंके नीचे और ऊपर चारों दिशाओंमें विराजमान, उत्तम रत्नोंसे निर्मित और जगमे कीर्तित चरित्रसे संयुक्त जिनेन्द्र-प्रतिमाएँ जयवन्त हों ॥१६५७॥

कल्पमहि परिवेडिय, साला वर-रयण-णियर-जिम्मविदा ।

चेट्टुदि चरियडुसय - नाणाबिह - धय - बडाओ वा ॥१९५८॥

अर्थ :—मार्गो एव अट्टालिकाओसे युक्त, नाना प्रकारकी ध्वजा-पताकाओंके आटोपसे सुशोभित और श्रेष्ठ रत्नसमूहसे निर्मित कोट इस कल्पमहीको वेष्टित करके स्थित है ॥१९५८॥

चूलिय-दक्षिण-भागे, पच्छिम-भायम्मि उत्तर-विभागे ।

एक्केवकं जिण - भवणं, पुब्बम्हि व वण्णणेहि जुदं ॥१९५९॥

अर्थ :—चूलिकाके दक्षिण, पश्चिम और उत्तर-भागमें भी पूर्व-दिशावर्ती जिनभवनके सदृश वर्णनोंसे संयुक्त एक-एक जिन-भवन है ॥१९५९॥

एवं संखेवेणं, पंडुग - वण - वण्णणाओ भणिदाओ ।

वित्थार - वण्णणेसुं, सक्को वि ण सक्कवे तस्स ॥१९६०॥

अर्थ :—इसप्रकार यहाँ सक्षेपसे पाण्डुक वनका वर्णन किया है । उसका विस्तारसे वर्णन करनेके लिए तो इन्द्र भी समर्थ नहीं हो सकता है ॥१९६०॥

सौमनस-वनका निरूपण—

पंडुग - वणस्स हेट्ठे, छत्तीस - सहस्स - जोयणा गंतुं ।

सौमणसं णाम वणं, मेरुं परिवेडिडूण चेट्ठे ॥१९६१॥

। ३६००० ।

अर्थ :—पाण्डुकवनके नीचे छत्तीस हजार (३६०००) योजन जाकर सौमनस नामक वन मेरुको वेष्टित करके स्थित है ॥१९६१॥

पण-सय-जोयण - रुंदं, चामीयर-वेडियाहि परियरियं ।

चउ - गोउर - संजुत्तं, खुल्लय - दारेहि रमणिज्जं ॥१९६२॥

अर्थ :—यह सौमनस वन पाँचसी योजन-प्रमाण विस्तार सहित, स्वर्णमय वेदिकाओंसे वेष्टित, चार गोपुरोंसे संयुक्त और लघु-द्वारोंसे रमणीय है ॥१९६२॥

चत्तारि सहस्सणि, बाहत्तारि - जुत्त - दु-सय-जोयजया ।

एक्करत्त - 'हिबद्ध - कला, विक्खंभो बाहिरो तत्स ॥१९६३॥

। ४२७२ । १, १ ।

अर्थ :—उसका बाह्य-विस्तार चार हजार दोसो बहत्तर योजन और ग्यारहसे भाजित आठ कला (४२७२ $\frac{१}{२}$ योजन) प्रमाण है ॥१९६३॥

तेरत्त - सहस्स - जुत्ता, पंच सया जोयजानि एक्करत्तं ।

एक्करत्तहि^१ हिब - छंसा, सोमणसे परिरय - पमाणं ॥१९६४॥

। १३५११ । १, १ ।

अर्थ :—सोमनस-वनकी परिधिका प्रमाण तेरह हजार पांचसो ग्यारह योजन और ग्यारहसे भाजित छह अश (१३५११ $\frac{१}{२}$ योजन) प्रमाण है ॥१९६४॥

सोमणत्तं करिकेत्तर - तमाल-हिताल-कदलि-बकुलेहि^२ ।

लवली - लवंग - चंपय - पणत्त - प्पट्टदीहि संछण्णं ॥१९६५॥

सुक-कोकिल-महुर-रत्तं, मोरादि - बिहंगमेहि रमणिज्जं ।

खेयर - सुर - मिहृणोहि, संकिण्ण बिबिह - वाबि - जुत्तं ॥१९६६॥

अर्थ :—यह सोमनस वन नागकेशर, तमाल, हिताल, कदली, बकुल, लवली, लवङ्ग, चम्पक और कटहल आदि वृक्षोंसे व्याप्त है; तोतो एव कोयलोके मधुर शब्दोंमें मुखरित है, मोर आदि पक्षियोंसे रमणीय है, विद्याधर युगलो एव देवयुगलोसे सकीर्ण है और अनेक वापियोंसे युक्त है ॥१९६५-१९६६॥

तम्मि वणे पुव्वादिमु, मंदर - पासे पुराद्द चत्तारि ।

वज्जं^३ वज्ज - पहक्खत्त, सुवण्ण - णामं सुवण्ण - प्हं ॥१९६७॥

अर्थ :—इस वनमें मन्दर (सुमेरु) के पास पूर्वदिक् दिशाओमें (क्रमशः) वज्ज, वज्ज-प्रभ, स्वर्ण और स्वर्णप्रभ नामक चार पुर हैं ॥१९६७॥

१. ब. हिद अट्ट। २. द क ज. व. एक्करत्तहिदी छत्सा, व. उ. ठ. एक्करत्तहि छंसा। ३. द. क. ज. य. ठ. बकुलाहि। ४. द. वज्ज वज्जपह्वत्त जमहक्खत्त सुव्वाण्णत्ताम। ज. य. वज्ज वज्जपह्वत्त सुवण्णत्ताम। क. उ. वज्ज वज्जपह्वत्त जहसुव्वाण्णत्ताम। व. उ. वज्जपह्वत्तं। ठ. वज्ज पह्वत्तं त्ताम।

पंडु - बरग - पुराहितो, एवाणि वास-पहुवि-दुगुणारिणि ।

बर - रयण - बिरइबाई, कालागर - धूब - सुरहीणि ॥१९६६॥

अर्थ :—ये पुर पाण्डुकवनके पुरोकी अपेक्षा दुगुने विस्तारादि सहित, उत्तम रत्नांसे बिरचित और कालागर-धूपकी सुगन्धसे व्याप्त हैं ॥१९६६॥

तेच्छेय लोयपाला, तेत्तिय - मेत्ताहि सुंबरीहि जुवा ।

एवाणं मज्झेसुं, विविह - विणोवेण कीडंति ॥१९६६॥

अर्थ :—इन पुरोके मध्यमे वे ही (पूर्वोक्त) लोकपाल उतनी हो सुन्दरियोसे युक्त होकर नाना विनोद पूर्वक क्रीडा करते हैं ॥१९६६॥

उप्पलगुम्मा णलिणा, उप्पल-णामा य उप्पलज्जलया ।

तव्वण - अग्गि - दिसाए, पोक्खरणीओ हवंति चचारि ॥१९७०॥

अर्थ :—उस वनकी आग्नेय-दिशामे उत्पलगुम्मा, ननिना, उप्पला और उप्पलोज्जला नामकी चार वापिकार्ये हैं ॥१९७०॥

पणवीसद्धिय - रुंदा, रुंदावो दुगुण - जोयणायामा ।

पण - जोयणावगाढा, पत्तेक्कं ताओ सोहंति ॥१९७१॥

। २५ । २५ । ५ ।

अर्थ :—उनमेंमे प्रत्येक वापिका पन्चीमके आधे (१२३) योजन प्रमाण विस्तार सहित, विस्तारकी अपेक्षा दुगुनी लम्बाई (२५ यो०) और पाँच योजन प्रमाण गहराईसे संयुक्त होनी हुई शोभायमान होनी है ॥१९७१॥

जलयर-चत्त-जलोहा, बर - वेदी-तोरणेहि परियरिया ।

कहम - रहिदा ताओ, हीणाओ हाणि - बड्डीहि ॥१९७२॥

अर्थ :—वे पुष्करिणियाँ जलचर जीवोंसे रहित जलसमूहको धारण करनेवाली हैं, उत्तम वेदी एवं तोरणोंसे वेष्टित हैं, कीचड़से रहित हैं और हानि-वृद्धिसे हीन हैं ॥१९७२॥

पोक्खरणीणं मञ्जे, सक्कस्स ह्वे विहार - पासादो ।

पण - घण - कोसुत्तुं गो^१ तह्ल - दंढो णिलवमाणो ॥१६७३॥

। १२५ । १२५ ।

अर्थ :- पुष्करिणियोंके बीचमें एकसौ पञ्चीस (१२५) कोस ऊँचा और इससे आधे (६२½ कोस) विस्तारवाला सौधमंडन्द्रका अनुपम विहार-प्रासाद है ॥१६७३॥

एक्कं कोसं गाढो, सो णिलओ बिबिह-केहु-रमणिज्जो ।

तस्सायाम - पमाणे^२, उवएसो णत्थि अम्हाणं ॥१६७४॥

अर्थ :- वह प्रासाद एक कोस गहरा और विविध प्रकारकी ध्वजाओसे रमणीय है उसकी लम्बाईके प्रमाणका उपदेश हमारे पास नहीं है ॥१६७४॥

सौधमंडन्द्रका सिंहासन और उनके परिवार देवोंके ग्रासन—

सोहासणमइरम्मं, सोहम्मिबस्स भवण मज्झम्मि ।

तस्स य चउसु विसासुं, चउपीढा लोयपालाणं ॥१६७५॥

अर्थ :- उस भवनके मध्यमें सौधमंडन्द्रका अतिरमणीय सिंहासन है और इसके चारों ओर लोकपालोंके चार सिंहासन हैं ॥१६७५॥

सोहम्मिदासणदो^३, दबिखण-भायम्मि कणय-णिम्मिबिद ।

सिंहासणं विरायदि, मणि - गण - खचिदं पडिदस्स ॥१६७६॥

अर्थ :- सौधमंडन्द्रके आसनके दक्षिण-भागमें स्वर्णसे निर्मित और मणि-समूहसे खचित प्रतीन्द्रका सिंहासन विराजमान है ॥१६७६॥

सिंहासणस्स पुरदो, अट्टाणं होति अग्ग - महिसीणं ।

बत्तीस - सहस्साणि, वियाण पवराइ पीढाई ॥१६७७॥

। ५ । ३२००० ।

अर्थ :- सिंहासनके आगे आठ अग्रमहिषियोंके (आठ) सिंहासन होते हैं । इसके अतिरिक्त बत्तीस हजार प्रवर पीठ जानना चाहिए ॥१६७७॥

१. द ब क ज य उ. ठ. कोसुत्तुं गा तद्वहदा । २. द ब. क. ज. य. उ. ठ. पमाण ।

३. द ज य सोहम्मिदमणदा ।

पवणीसाण - विसासुं, पासे सिहासणस्स च्चुलसीदी ।

लक्ख्खाणि वर - पीढा, ह्वंति सामाणिय - सुराणं ॥१६७८॥

। ८४००००० ।

अर्थ :—सिहासनके पास वायव्य और ईशान दिशामे सामानिक देवोंके चौरासी लाख (८४०००००) उत्तम आसन हैं ॥१६७८॥

तस्सग्गि-विसा-भागे, बारस - लक्ख्खाणि पढम-परिसाए ।

पीढाणि ह्वंति कंचण - रइदाणि रयण - खच्चिदाणि ॥१६७९॥

। १२००००० ।

अर्थ :—उस सिहासनकी आग्नेय दिशामे स्वर्ण निर्मित और रत्न-खचित बारह लाख (१२०००००) आसन प्रथम (अर्थात्तर) पारिषद देवोंके हैं ॥१६७९॥

वक्खिण-विसा-विभागे, मज्झिम-परिसामराण पीढाणि ।

रम्माइं रायते, चोदूस - लक्ख - प्पमाणाणि ॥१६८०॥

। १४००००० ।

अर्थ :—दक्षिणदिशा-भागमे मध्यम पारिषद देवोंके स्वर्ण एवं रत्नमय चौदह लाख (१४०००००) प्रमाण आसन हैं ॥१६८०॥

णइरिदि-विसा-विभागे, बाहिर - परिसामराण पीढाणि ।

कंचण - रयण - मयाणि, सोलस - लक्ख्खाणि खेट्ठंति ॥१६८१॥

। १६००००० ।

अर्थ :—नैऋत्य दिशा-विभागमें बाह्य पारिषद देवोंके स्वर्ण एवं रत्नमय सोलह लाख (१६०००००) प्रमाण आसन स्थित हैं ॥१६८१॥

तत्थ य विसा - विभागे, तेत्तीस-सुराण ह्वंति तेत्तीसा ।

वर - पीढाणि णिरंतर-फुरंत-मणि-किरण-रिययराणि ॥१६८२॥

। ३३ ।

अर्थ :—उसी (नैऋत्य) दिशा-विभागमें त्र्यायस्त्रिंशद्देवोंके निरन्तर प्रकाशमान मणि-किरण-समूहसे सहित तैत्तीस उत्तम आसन हैं ॥१६८२॥

सिंहासनस्स पच्छिम - भागे चेट्ठंति सत्त पीढारिणि ।
छक्कं महत्तराणं, महत्तरोए हवे एक्कं ॥१६८३॥

। ७ ।

अर्थ :—सिंहासनके पश्चिमभागमें महत्तरोके छह और महत्तरोका एक, इसप्रकार सात आसन स्थित हैं ॥१६८३॥

सिंहासनस्स चउसु वि - दिसासु चेट्ठंति अंग-रक्ख्खानं ।
चउरासीदि - सहस्सा, पीढारिणि विचित्त - रुढारिणि ॥१६८४॥

। ८४००० ।

अर्थ :—सिंहासनके चारो ओर अङ्गरक्षक देवोंके अद्भुत सौन्दर्यवाले चौरामी हजार (८४०००) आसन स्थित हैं ॥१६८४॥

सिंहासनम्मि तस्सि, पुब्बमुहे बइसिदूण सोहम्मो ।
विविह - विणोदेण जुवो, पेच्छइ सेबागदे देवे ॥१६८५॥

अर्थ :—सौधर्मइन्द्र उस पूर्वाभिमुख सिंहासन पर बैठकर विविध प्रकारके विनोदसे युक्त होता हुआ सेवार्थ आये हुए देवोंकी ओर देखता है ॥१६८५॥

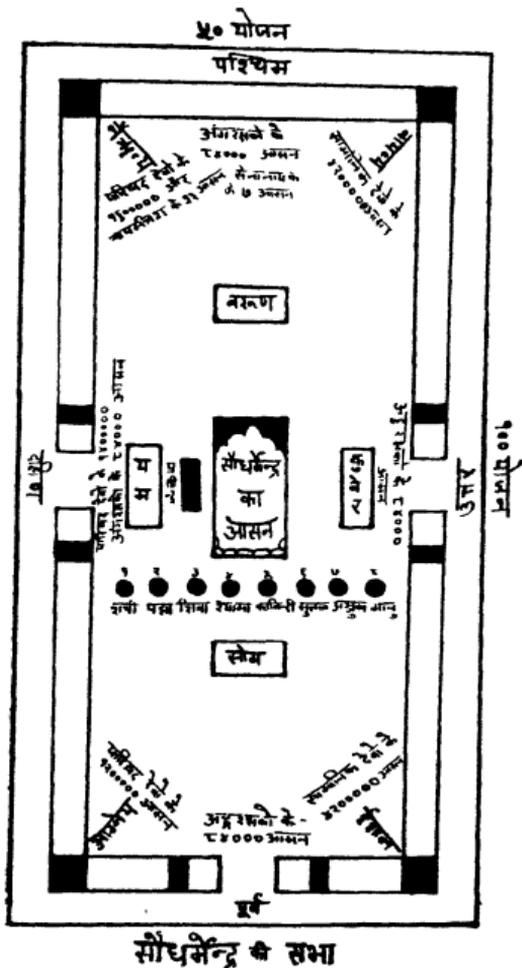
भिगा^१ भिगणिहक्खा, कज्जलपपा कज्जलपपाहा तत्थ ।
णइरिदि - दिसा - विभागे, पुब्ब - पमाणाओ वावीओ ॥१६८६॥

अर्थ :—(सोमनस वनके भीतर) नैऋत्य दिशामें भृङ्गा, भृङ्गनिभा, कज्जला और कज्जलप्रभा ये चार वापिकाएँ पूर्व वापिकाओके सट्टण प्रमाणादि सहित हैं ॥१६८६॥

चउ-वावी - मज्झ - पुरे^२, सोहम्मो भत्ति - उवगदे देवे ।
पेच्छइ अत्था-णिरदे^३, चामर - छत्तादि - परियरिओ ॥१६८७॥

अर्थ :—इन चार वापिकाओंके मध्यमें स्थित पुर (भवन) में चँवर छत्रादिसे वेष्टित सौधर्मइन्द्र भक्तिसे समीप आये हुए एव आदरमें निरत देवोंको देखता है ॥१६८७॥

१. द. व. क. य. उ. ठ. देवइ, ज. गदो देवइ । २. द. व. य. भिगारिभिगणिहक्खा । ३. द. व. क. य. उ. ठ. पुरो । ४. द. व. क. ज. य. उ. ठ. एरिदा ।



ईशानेन्द्रके प्रासाद आदि—

सिरिभद्रा सिरिकंता, सिरिमहिदा मरु-विसाए सिरिणिलया ।

पुनस्सरणीओ होंति ह्र, तेषु^१ मञ्जुम्मि^२ पासादो ॥१६८८॥

अर्थ :—वायव्य दिशामें श्रीभद्रा, श्रीकान्ता, श्रीमहिता और श्रीनिलया, ये चार पुष्करिणियाँ हैं । उनके मध्यमे एक प्रासाद है ॥१६८८॥

तस्सि पासाद - वरे, ईसाणियो सुहाणि भुजेदि ।

बहु - छत्र - चमर - जुत्तो, विविह-विणोदेहि कीडंतो ॥१६८९॥

अर्थ :—उस उत्कृष्ट भवनमें बहुत छत्रो एव चंवरोंसे युक्त ईशानेन्द्र विविध विनोद पूर्वक क्रीड़ा करता हुआ मुत्तोंको भोगता है ॥१६८९॥

णलिणा य णलिनगुम्मा^३, कुमुदा कुमुदप्पह चि वाओओ ।

ईसाण - विसा - भागे, तेषु^४ मञ्जुम्मि^५ पासादो ॥१६९०॥

अर्थ :—ईशान-दिशा-भागमें नलिना, नलिनगुल्मा, कुमुदा और कुमुदप्रभा, ये चार वापियाँ हैं । उनके मध्यमें एक प्रासाद है ॥१६९०॥

तस्सि पासाद - वरे, ईसाणियो सुहेण कीडेदि ।

णाणा - विणोद - सत्तो, रञ्जालंकार सोहिल्लो ॥१६९१॥

अर्थ :—इस उत्तम भवनमें नानाप्रकारके आनन्दसे युक्त सुन्दर आभूषणोंसे सुशोभित ईशानेन्द्र सुखसे क्रीड़ा करता है ॥१६९१॥

सोमणसवर्भंतरए, चउसु विसासु^६ हवति चसारो ।

जिण - पासादा पंडुग - जिण-भवन-सरिण्ण-वण्णया ॥१६९२॥

पंडुग-भवणाहि तो, वास - प्पहुडीणि ताणि दुगणाणि ।

पुव्वं व सयल - वण्णाण - वित्थारो तेषु जावव्वो ॥१६९३॥

अर्थ :—सोमणस वनके भीतर पूर्वदिक् चारो दिशाओमे चार जिन-मन्दिर हैं । इनका सम्पूर्ण वर्णन पाण्डुक वन स्थित जिन-भवनोंके सदृश जानना चाहिए । इतनी ही विशेषता है कि पाण्डुकवन स्थित भवनसे इनका व्यास आदि दुगुना है । शेष सम्पूर्ण वर्णनका विस्तार पूर्ववत् ही जानना चाहिए ॥१६९२-१६९३॥

पत्तेक्कं जिणमंदिर - सालाणं बाहिरम्मि चेट्ठंति ।

दो पासेसुं दो - दो, कूडा णामा वि ताण इमे ॥१६६४॥

णंदण-णामा मंदर-णिसह-हिमा रजद-रजग-णामा य ।

सायरचित्तो वज्जो, पुब्बादि - कमेण अड' - कूडा ॥१६६५॥

अर्थ :—प्रत्येक जिनमन्दिर मम्बन्धो कोटके बाहर दोनो पार्श्वभागोम जो दो-दो कूट स्थित हैं उनके नाम नन्दन मन्दर, निषघ, हिमवान् रजत, रुचक, सागरचित्र और वज्र है । ये आठ कूट पूर्वादि-क्रममे कहे गये हैं ॥१६६४-१६६५॥

पणवोसब्भहिय-सयं, वासो^१ सिहरम्मि दुगुणिदो^२ मूले ।

मूल - समो उच्छेहो, पत्तेक्कं ताण कूडाणं ॥१६६६॥

। १२५ । २५० । २५० ।

अर्थ उन कूटोमेसे प्रत्येकका विस्तार जिखरपर एकसो पन्चोम (१२५) योजन और मूलमें इससे दुगुना (२५० योजन) है । मूल विस्तारके मट्टण ही ऊँचाई भी दोसो पचाग (२५०) योजन प्रमाण है ॥१६६६॥

कूडाणं मूलोवरि - भागेसुं वेदियाओ दिव्वाओ ।

वर - रयण - विरइदाओ, पुब्बं पिय वण्णण-जुदाओ ॥१६६७॥

अर्थ :—कूटोके मूलमे एव उपरिम भागोमे उत्तम रत्नोसे रचित और पूर्वके सट्टण वर्णन सहित दिव्य वेदियां हैं ॥१६६७॥

कूडाण उवरि - भागे, चउ-वेदी-तोरणेहि रमणिज्जा ।

णाणाबिह - पासादा, चेट्ठंते णिरुवमायारा ॥१६६८॥

अर्थ :—कूटोके उपरिम भागमें चार वेदी-तोरणोंसे रमणीय अनुपम आकार वाले नाना प्रकारके प्रासाद स्थित हैं ॥१६६८॥

पण्णरस-सया वंडा, उवओ रुवं पि कोस-चउ-भागो ।

तद्दुगुणं दीहत्तं, पुह - पुह सम्भाण भवणाणं ॥१६६९॥

१. क. ज. उ. ठ. अक्खदा । २. द. व. क. ज. य. उ. ठ. वासा । ३. द. व. क. ज. व. उ. ठ.

। १५०० । को ३ । २ ।

अर्थ :—सब भवनोकी ऊँचाई पृथक्-पृथक् पन्द्रहसौ (१५००) धनुष है, विस्तार एक कोसका चतुर्थभाग (३ कोस) है और दीर्घता इससे दुगुनी (३ कोस) प्रमाण है ॥१६६६॥

वासो पण-घण-कोसा, तद्दुगुणो भविराण उच्छेहो ।

लोयविणिच्छय - कत्ता, एवं माणे णिरूवेदि ॥२०००॥

। १२५ । २५० ।

(पाठान्तरम्)

अर्थ :—मन्दिरका विस्तार पाँचके घन (१२५ कोम) प्रमाण और ऊँचाई इससे दुगुनी (२५० कोस) है । लोकविनिश्चयके कर्ता इनके प्रमाणका निरूपण इस प्रकार करते हैं ॥२०००॥

(पाठान्तर)

कुँडेसुं देवीओ, कण्ण - कुमारीओ दिव्व - रुवाओ ।

मेघंकर - मेघवदी, सुमेघया मेघमालिणी तुरिमा ॥२००१॥

तोयंधरा विचिन्ता, पुष्पयमाला^३ अणिदिदा चरिमा ।

पुब्बादिसु कूडेसुं, कमेण चेट्टंति एवाओ ॥२००२॥

अर्थ :—पूर्वादिक कूटोपर क्रमशः मेघझूरा, मेघवती, सुमेघा, मेघमालिनी, तोयन्धरा, विचित्रा, पुष्पमाला और अनन्दिता, इसप्रकार दिव्य रूपवालो ये (आठ) कन्याकुमारी देवियाँ स्थित हैं ॥२००१-२००२॥

बलभद्रकूटका विवेचन—

बलभद्र - गाम - कूडो, ईसाण - विसाए तव्वणे होदि ।

जोयण - सय - मुत्तुंगो, मूलम्मि ब तैत्तिओ वासो ॥२००३॥

। १०० । १०० ।

अर्थ :—सौमनस-वनके भीतर ईशान दिशामें एकसौ योजन-प्रमाण ऊँचा और मूलमें इतने ही (१०० यो०) विस्तारवाला बलभद्र नामक कूट है ॥२००३॥

पण्णास - जोयणाइं, सिहरे कूडस्स होदि वित्थारो ।

मुह - भूमो - मिलिदद्ध^१, मज्झिम - वित्थार^१-परिमाणं ॥२००४॥

। जो ५० । ७५ ।

अर्थ — उस कूटका विस्तार शिखर पर पचास (५०) योजन और मध्यमें, मुख एवं भूमिके ($१०० + ५० = १५०$) सम्मिलित विस्तार प्रमाणसे आधा ($१५० \div २ = ७५$ यो०) है ॥२००४॥

एस बलभद् - कूडो, सहस्स-जोयण - पमाण - उच्छेहो ।

तेत्तिय - हंदि - पमाणो, दिणयर - बिंबं च समवट्टो ॥२००५॥

। १००० । १००० ।

(पाठान्तरम्)

अर्थ — यह बलभद्रकूट हजार (१०००) योजन-प्रमाण ऊँचा और इतने (१००० योजन) ही विस्तार-प्रमाण सहित सूर्यमण्डलके सदृश समवृत्त (गोल) है ॥२००५॥

(पाठान्तर)

सोमणसस्स य वासं, णिस्सेसं हंभिद्वण सो सेलो^२ ।

पंच - सय - जोयणाइं, तत्तो हंभेदि आयासं ॥२००६॥

(पाठान्तरम्)

अर्थ — वह शैल मौमनस-वनके सम्पूर्ण विस्तारको रोककर पुनः पाँचसौ योजन-प्रमाण आकाशको रोकता है ॥२००६॥

(पाठान्तर)

दस - विद भू - वासो, पंच-सया जोयणाणि मुह-वासो ।

एवं लोयबिणिच्छय - सग्गायणिएसु दीसेइ ॥२००७॥

। १००० । ५०० ।

(पाठान्तरम्)

अर्थ — उसका भूविस्तार दसके धनरूप (१००० योजन) और मुख-विस्तार पाँचसौ (५००) योजन प्रमाण है । इसप्रकार लोकविनिश्चय एवं सगायणीमे दर्शाया गया है ॥२००७॥

(पाठान्तर)

मूलोच्चरि सो कूडो, चउवेदी - तोरणेहि संजुत्तो ।

उच्चरिम - भागे तस्स य, पासावा विविह - रयणमया ॥२००८॥

अर्थ :- वह कूट मूलमें एवं ऊपर चार वेदी-तोरणोंसे संयुक्त है । उसके उपरिम भागपर नानाप्रकारके रत्नमय प्रासाद हैं ॥२००८॥

मंदिर - सेलाहिचई^१, बलभद्दो एगाम चेतरो देवो ।

अच्छदि^२ तेसु पुरेसुं, बहु - परिवारेहि संजुत्तो ॥२००९॥

अर्थ :- उन पुरोमे बहुत परिवारसे सयुक्त मन्दिर और शैलका अधिपति बलभद्र नामक व्यन्तर देव रहता है ॥२००९॥

सौमनस-वनका विस्तार आदि—

तिणिण सहस्सा दु-सया, बाहचरि जोयणाणि अट्ट-कला ।

एक्करस - हिवा चासो^३, सोमणसम्भंतरे होवि ॥२०१०॥

। ३२७२ । १, १ ।

अर्थ :- सौमनसवनके अभ्यन्तर भागमे तीन हजार दोसी वहसर योजन और ग्यारहसे भाजित आठ कला प्रमाण (३२७२.२५ योजन) विस्तार है ॥२०१०॥

दस य सहस्सा ति-सया, उणवण्णा जोयणाणि वे-अंसा ।

एक्करस^४ - हिवा परिही, सोमणसम्भंतरे भागे ॥२०११॥

। १०३४६ । ३, १ ।

अर्थ :- सौमनस-वनके अभ्यन्तर भागमें परिधिका प्रमाण दस हजार तीनसौ उनंचास योजन और ग्यारहसे भाजित दो भाग (१०३४६.२५ योजन) प्रमाण है ॥२०११॥

एवं संखेवेणं, सोमणसं वर - वरां मए भणिदं ।

वित्थार वण्णणामुं, तस्स ण सक्केवि सक्को^५ वि ॥२०१२॥

अर्थ :- इसप्रकार सौमनस नामक उत्तम वनका वर्णन मैंने संक्षेपमें किया है । उसका विस्तार पूर्वक वर्णन करनेमें तो इन्द्र भी समर्थ नहीं है ॥२०१२॥

१ द. ब. क. ज. य. उ. ठ. ईवहि । २. द. ब. क. ज. य. उ. ठ. अच्छदि । ३. द. ब. क. ज. य. उ. ठ. चासा । ४. द. ब. क. ज. य. उ. ठ. एक्कारसहिद । ५. द. क. उ. व. सक्काओ, ब. ज. ठ. सक्काऊ ।

नन्दन-वनका निर्देश—

पाँच - सएहि जुत्ता, बासट्टि - सहस्स - जोयणा गंतुं ।
सोमणसादो हेट्ठे, होवि वणं णवणं णाम ॥२०१३॥

। ६२५०० ।

अर्थ :—सोमनस वनसे बासठ हजार पाँचसौ (६२५००) योजन प्रमाण नीचे जाकर नन्दन नामक वन है ॥२०१३॥

पण-सय-जोयण-रुंढं, चाभीयर - वेदियाहि परियरियं' ।
चउ - तोरण - दार - जुढं, सुत्सय-दारेहि णवणं रम्मं ॥२०१४॥

। ५०० ।

अर्थ :—वह रमणीक नन्दन वन पाँचसौ (५००) योजन विस्तृत है; स्वर्णमय वेदिकाओंमें वेष्टित है तथा लघु-द्वारोंके साथ चार तोरणद्वारोंमें संयुक्त है ॥२०१४॥

एण थ सहस्सा णव-सय-चउवण्णा जोयणाणि छुडभागा ।
एकरसेहिं हिदा एं, णवण-बाहिरए होवि विक्खम्भो ॥२०१५॥

। ६६५४ । १, १ ।

अर्थ :—नन्दन वनके बाह्य भागमें नौ हजार नौसौ चौवन योजन और ग्यारहसे भाजित छह भाग (६६५४ १/१ योजन) प्रमाण विस्तार है ॥२०१५॥

एकत्तीस - सहस्सा, चउस्सया जोयणाणि उण्णासीवी ।
णवणवणस्स परिणी, बाहिर - भागम्मि अदिरिचा ॥२०१६॥

। ३१५७६ ।

अर्थ :—नन्दन वनके बाह्य भागमें परिधिका प्रमाण इकतीस हजार चारसौ उन्नासी (३१५७६) योजनसे अधिक है ॥२०१६॥

अद्दु - सहस्सा ञव-सय-अउवण्णा जौयणाणि छन्नाया ।
एक्करस^१ - हिवा वासो, णंदणवण - वरहिबो होवि ॥२०१७॥

। ८६१४। १,१ ।

अर्थ :- नन्दनवनमे रहित मेरुका विस्तार आठ हजार नौसौ चौवन योजन और स्यारहसे भाजिन छह भाग (८६१४६१ योजन) प्रमाण है ॥२०१७॥

अट्टाबोस-सहस्सा, ति-सया सोलस-जुवा य अद्दु - कला ।
एक्करस^२ - हिवा परिहो, णंदणवण-वरहिवा अहिया ॥२०१८॥

। २८३१६। १,१ ।

अर्थ :- नन्दन वनसे रहित मेरुकी परिधि अट्टाईस हजार तीनसौ सोलह योजन और स्यारहसे भाजित आठ कला अधिक (२८३१६६६ योजन) है ॥२०१८॥

नन्दनवनस्थ भवन—

आणवस - चारणवसा, गिलया मंघव्व-चित्त-गामा य ।
णंदण - वणम्मि मंदर - पासे चचारि पुब्बावी ॥२०१९॥

अर्थ :- नन्दनवनके भीतर सुमेरुके पास क्रमशः पूर्वादिक दिशाओंमें मानास, चारणास, मन्धर्व और चित्र नामक चार भवन भी हैं ॥२०१९॥

जिक्खंभायामोह, णंदण - भवणाणि होति दुग्गुणाणि ।
सोमणस - पुराहितो, पुब्बं पिय वण्णज - जुवाणि ॥२०२०॥

अर्थ :- पूर्वोक्त वर्णनसे संयुक्त ये नन्दन-भवन विस्तार एवं लम्बाईमें सोमणस-वनके भवनसे दुगुने हैं ॥२०२०॥

सक्कस्स लोयपाला', सोम - प्पहुवी वसंति एवेसु' ।

तेत्तिव - वेवीहि पुवा, बहुविह कीडाउ कुणामाला' ॥२०२१॥

अर्थ :—इन भवनोंमें उतनी ही देवियोंसे संयुक्त होकर विविध प्रकारकी क्रीडाओंको करनेवाले सौधर्म इन्द्रके सोमादिक लोकपाल निवास करते हैं ॥२०२१॥

नन्दन-वनस्थ बलभद्र कूट—

बलभद्र-णाम-कूडो, ईसान - दिसाए णंदण - वणम्मि ।

तस्सुच्छेह - प्पहुवी, सरिसा सोमणस - कूडेणं ॥२०२२॥

अर्थ :—नन्दनवनके भीतर ईशान-दिशामे बलभद्र नामक कूट है। उस कूटकी ऊंचाई आदि सोमनस-सम्बन्धी (बलभद्र) कूटके सदृश ही है ॥२०२२॥

जिणमंदिर - कूडाणं, वाची - पासाद - देवदाएणं च ।

णामाहं विष्णासो, सोहम्मोसाण - दिस - विभागो य ॥२०२३॥

इय-पहुवि रांदण-वणे, सोमणस-वणं व ह्योदि णिस्सेसं ।

णवरि विसेसो एक्को, वास - प्पमुहाणि दुगुणाणि ॥२०२४॥

अर्थ :—नन्दनवनमे जिनमंदिर, कूट, वापी, प्रासाद एवं देवताओंके नाम, विन्यास और सौधर्म एवं ईशानेन्द्रकी दिशाओंका विभाग इत्यादिक सब सोमनस-वनके ही सदृश है। विशेषता केवल यह है कि उनके विस्तार आदिके प्रमाण दुगुने-दुगुने हैं ॥२०२३-२०२४॥

एवं संसेवेणं, णंदण - णामं वरां मए भणिदं ।

एक्क-मुह - एक्क - जीहो, को सक्कइ बित्थरं भणिदुं ॥२०२५॥

अर्थ :—इसप्रकार संक्षेपसे मैंने नन्दन नामक वनका वर्णन किया है। एक मुख और एक ही जिह्वावाला कौनमा मनुष्य उसका विस्तारसे वर्णन करनेमे ममर्थ है ? (अर्थात् कोई नहीं) ॥२०२५॥

भद्रशाल-वनका वर्णन -

रांदण - वणाउ हेट्टे, पंच - सया जोयसाणि गंतूणं ।

अट्टासीवि - वियप्पं, खेट्टुवि सिरिभहसात्त - वणं ॥२०२६॥

। ५०० ।

अर्थ :—नन्दनवनसे पाँचसी (५००) योजन प्रमाण नीचे जाकर अठ्ठासी बिकल्पों सहित श्रीभद्रशालवन स्थित है ॥२०२६॥

विशेषार्थ :—सुमेरु सम्बन्धी भद्रशालवनकी पूर्व-पश्चिम चौड़ाई २२००० योजन है, इसको ८८ से विभक्त करने पर दक्षिणोत्तर चौड़ाई प्राप्त होती है। शायद इसीलिए गाथामें भद्रशाल-वनको अठ्ठासी विकल्पोंसे युक्त कहा गया है।

वाचीस - सहस्त्राणि, कमसो पुष्पावरेसु वित्थारो ।

तह बक्षिण्युत्तरेसु, दु - सया पष्णास तम्मि वणे ॥२०२७॥

। २२००० । २२००० । २५० । २५० ।

अर्थ :—उस वनका विस्तार पूर्वमें (२२००० यो०) पश्चिममें बाईस हजार (२२०००) योजन तथा दक्षिण (२५० यो०) और उत्तरमें दोसौ पचास (२५०) योजन प्रमाण है ॥२०२७॥

मेरु-महोदर-पासे, पुष्व - बिसे बक्षिण्यवर - उत्तरए ।

एक्केवकं जिणभवणं, होदि घरं भद्रसाल - वणे ॥२०२८॥

अर्थ :—भद्रशाल-वनमें मेरुपर्वतके पाद्वर्गमें पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशामें एक-एक जिन-भवन है ॥२०२८॥

पंडु-वण-पुराहितो, चउगुण - वासस्स उदय - पहुदीओ ।

जिणवर - पासादाणं, पुष्वं पिब वण्णं सव्वं ॥२०२९॥

अर्थ :—इन जिनभवनोंका विस्तार एवं ऊँचाई आदि पाण्डुक-वनके जिन-भवनोंकी अपेक्षा चौगुना है। शेष सम्पूर्ण वर्णन पूर्वके ही सदृश है ॥२०२९॥

तम्मि वणे वर-तोरण-सोहिद-वर-दार-णिबह-रमणिज्जा ।

अड्डालयादि - सहिया, समंतदो कणयमय - वेदी ॥२०३०॥

अर्थ :—उस वनके चारों ओर उत्तम तोरणोंसे शोभित, श्रेष्ठ द्वार-समूहसे रमणीय एवं अट्टालिकादि सहित स्वर्णमय वेदी है ॥२०३०॥

वेदीए उच्छेहो, जोयजमेवकं, समंतदो होदि ।

कोर्बडाण - सहस्सं, वित्थारो भद्रसालम्मि ॥२०३१॥

। जो १ । दंड १००० ।

अर्थ :—भद्रशालवनमें चारो ओर वेदीकी ऊँचाई एक योजन और विस्तार एक हजार (१०००) धनुष प्रमाण है ॥२०३१॥

सिरिखंड-प्रगरु-केसर-असोय-कम्पूर-तिलय - कदलीहि ।
अद्भुत - मालईआ - हालिह - पहुदीहि संख्यणं ॥२०३२॥

पोक्खरणी-रमणिज्जं, सर-वर-पासाद-णिबह'-सोहित्तं ।

कूडेहि जिनपुरोहि, बिराजदे भद्दसाल - वणं ॥२०३३॥

अर्थ :—श्रीखण्ड, अग्रह, केसर, अशोक, कर्पूर, तिलक, कदली, अतिमुक्त, मालती और हारिद्र आदि वृक्षोंसे व्याप्त; पुष्करिणियोंसे रमणीय तथा उत्तम सरोवर एवं भवनोंके समूहसे शोभायमान यह भद्रशालवन कूटो और जिनपुरोसे गोभायमान है ॥२०३२-२०३३॥

मोर - सुक - कोकिलाणं, सारस-हंसाण महुर-सद्दब्धं ।

विबिह - फल - कुसुम-भरिदं, सुरम्मिदं भद्दसाल-वणं ॥२०३४॥

अर्थ :—यह सुरम्य भद्रशालवन मोर, सुक, कोयल, सारस और हंस आदिके मधुर शब्दोंसे व्याप्त है तथा विविध प्रकारके फल-फूलोंसे परिपूर्ण है ॥२०३४॥

वावीस - सहस्साणि, अट्टासीदी - हिवाणि वासनेककेके ।

पुववावर - भागेसुं, वणम्मि सिरिभद्दसालस्स ॥२०३५॥

अर्थ :—पूर्व-पश्चिम भागोंमेंसे प्रत्येक भागमें श्रीभद्रशालवनका विस्तार जठासीसे विभाज्य बाईस हजार (२२०००) योजन प्रमाण है ॥२०३५॥

दोण्णि सया वण्णसाता, अट्टासीदी - विहलया रुंदा ।

वक्खिण - उत्तर - भागे, एककेके वणस्स भद्दसालम्मि ॥२०३६॥

अर्थ :—दक्षिण-उत्तर भागोंमेंसे प्रत्येक भागमें भद्रशालवनका विस्तार जठासीसे विभक्त (बाईस हजार योजन अर्थात्) दोसी पचास (२५०) योजन प्रमाण है ॥२०३६॥

गजदन्त-पर्वतोंका वर्णन—

बारण-वंत-सरिक्खा, सेला चत्तारि मेह - विविसासुं ।

वक्खार चि पत्तिट्ठी, अणाइ - णिहणा महारम्मो ॥२०३७॥

अर्थ :—मेरुपर्वतकी विदिशाओंमें हाथीदातके (घ्राकार) सदृश, अनादिनिघन श्रीरं महारमणीय 'वक्षार' (गजदन्त) नामसे प्रसिद्ध चार पर्वत हैं ॥२०३७॥

शीलहृ - गिसहृ - पव्वद - भंदर-सेलाण होंति संलग्गा ।

बंध - सरूबायामा, ते चत्तारो महासेला ॥२०३८॥

अर्थ :—तिरछेरूपसे घ्रायत वे चारो महाशील नील, निपथ्र और मन्दरशीलसे सलग्न हैं ॥२०३८॥

उत्तर-दक्षिण-भागे, भंदर - सेलस्स मज्झ - देसम्मि ।

एक्केण पदेसेणं, एक्केक्कं तेण लग्गति ॥२०३९॥

अर्थ :—उनमेसे प्रत्येक पर्वत उत्तर-दक्षिण-भागमें मन्दर-पर्वतके मध्य देशमें एक-एक प्रदेशसे (उससे) संलग्न है ॥२०३९॥

भंदर-अणल-विसादो, सोमणसो णाम विज्जुपहु-णामो ।

कमसो महागिरी र्णं, गंधमावणो मालवंतो य ॥२०४०॥

अर्थ :—मन्दर-पर्वतको ग्राम्ये दिशासे लेकर क्रमशः सोमनस, विद्युत्प्रभ, गन्धमादन और माल्यवान् नामक चार महापर्वत हैं ॥२०४०॥

ताणं रुप्पय-तवणिय-कणयं वेलुरिय - सरिस-वण्णाणं ।

उववण - वेदि - प्पहुदी, सव्वं पुव्वोविदं होदि ॥२०४१॥

अर्थ —क्रमशः चाँदी, तपनीय, कनक और वैडूर्यमणिके सदृश वर्णवाले उन पर्वतोंकी उपवन-वेदी आदिक सब पूर्वोक्त ही हैं ॥२०४१॥

पंच - सय - जोयणाणि, बित्थारो ताण दंत - सेलाणं ।

सव्वत्थ होदि सुंदर - कप्पतरुप्पण्ण - सोहारणं ॥२०४२॥

अर्थ :—सुन्दर कल्पवृक्षोंसे उत्पन्न हुई शोभासे संयुक्त उन दन्तशीलोंका विस्तार सबत्र पाँचती योजन प्रमाण है ॥२०४२॥

शील-गिसहृदि-पासे, चचारि सयाणि जोयणा होदि ।

ततो पवैस - बड्डी, परोक्कं मेव - सेलंतं ॥२०४३॥

पासम्मि मेरु-गिरिणो, पंच-सया जोयणाणि उच्छेहो ।

गिरुवम - रुव - धराणं, तारणं वषखार - सेलाणं ॥२०४४॥

अर्थ :—नील और निषध-पर्वतके पासमें इन (गजदन्तो) को ऊँचाई चारसौ योजन-प्रमाण है । इसके आगे मेरु-पर्वत पर्यन्त प्रत्येक (गजदन्त) की प्रदेश-वृद्धि होती गई है । इसप्रकार प्रदेश-वृद्धिके होनेपर अनुपम रूपको धारण करनेवाले उन वक्षार-पर्वतोंकी ऊँचाई मेरुपर्वतके समीप पाँचसौ योजन-प्रमाण हो गई है ॥ २०४३-२०४४॥

गजदन्तोंको जीवा एव बाण आदिका प्रमाण—

दुगुणम्मि भद्दसाले, मेरु - गिरिवस्स खिवसु' विवखंभं ।

दो-सेल-मग्ग-जीवा, तेवण्ण-सहस्स - जोयणा होति ॥२०४५॥

। ५३००० ।

अर्थ :—[वक्षार (गजदन्त) के विस्तारसे रहित] भद्रशालवनके विस्तारको दुगुना करके उसमें मेरु-पर्वतके विस्तारको मिला देनेपर दोनो पर्वतोंके मध्यमें जीवाका प्रमाण तिरपेन हजार (५३०००) योजन आता है ॥२०४५॥ (२२००० — ५००) × २ + १०००० = ५३००० ।

अद्विय विवेह-रुवं, पंच - सहस्साणि तत्थ अवणिज्जं ।

दो - वषखार - गिरीणं, जीवा - बाणस्स परिमाणं ॥२०४६॥

अर्थ :—विदेहके विस्तारको आधाकर उससे पाँच हजार कम कर देनेपर दो वक्षार-पर्वतोंकी जीवाके बाणका प्रमाण प्राप्त होता है ॥२०४६॥

यथा— $\frac{१४९९९९}{२} - २ - ५००० = ३३९९९९$ ।

पणवीस - सहस्सेहि, अग्गहिया जोयणाणि दो लक्खा ।

उणवीसेहि विहत्ता, बाणस्स पमाण - मुद्दिट्ठं ॥२०४७॥

। २२५००० ।
१६

अर्थ :—उपर्युक्त बाणका प्रमाण उन्नीससे आजित दो लाख पच्चीस हजार (३३९९९९ या ११८४२ $\frac{१}{४}$) योजन कहा गया है ॥२०४७॥

जोयन - सट्टि - सहस्सा, चत्तारि सया य भट्टरस-जुत्ता ।

उणवीस-हरिब-बारस - कलाओ वक्खार - घणु - पुट्टु ॥२०४८॥

$$\left| \begin{array}{l} ६०४१८ \\ १२ \\ १६ \end{array} \right|$$

अर्थ :—वक्षार (गजदन्तों) पर्वतोका घनुपुष्ठ साठ हजार चारसौ अठारह योजन और उन्नीससे भाजित बारह कला (६०४१८ $\frac{१२}{१६}$ योजन) प्रमाण है ॥२०४८॥

जोयन-तीस-सहस्सा, 'णव-उत्तर वो सया य छ्खभागा ।

उणवीसेहि विहत्ता, ताणं सरिसायदाणं वीहत्तं ॥२०४९॥

$$\left| \begin{array}{l} ३०२०६ \\ १६ \end{array} \right|$$

अर्थ :—उन सदृश आयत वक्षार-पर्वतोकी लम्बाई तीस हजार दोसौ नौ योजन और उन्नीससे विभक्त छह भाग (३०२०६ $\frac{९}{१६}$ यो०) प्रमाण है ॥२०४९॥

जीबाए जं वग्गं, चउगुण - बाण - प्यमाण - पबिहत्तं ।

इसु - संजुत्तं ताणं, अम्भंतर - वट्ट - विक्खंभो ॥२०५०॥

एककर्त्तरि सहस्सा, इगि-सय-तेवाल - जोयणा य कला ।

णव-गुणिवुणवीस - हिवा, सग - तीसा वट्ट - विक्खंभे ॥२०५१॥

$$\left| \begin{array}{l} ७११४३ \\ १७१ \end{array} \right|$$

अर्थ :—जीवाके वर्गमें चौगुणे बाणका भाग देकर लम्बराशिमें बाणके प्रमाणको मिला देनेपर उनके अन्तर्वृत्त क्षेत्रका विष्कम्भ निकलता है । यह वृत्त-विष्कम्भ इकहत्तर हजार एकसौ सैंतालीस योजन और नौसे गुणित उन्नीस (१७१) से भाजित सैंतीस कला (७११४३ $\frac{३७}{१७१}$ यो०) प्रमाण है ॥२०५०-२०५१॥

$$\text{यथा—} ५३०००^२ \div (३३७९७०५५) + २१२७०० = ७११४३\frac{३७}{१७१} \text{ योजन ।}$$

१. व. व. खड्गता, क. व. य. ठ. खड्गतरा । २. व. व. क. व. य. उ. ठ. बुविजायवाण ।

३. व. क. व. य. ठ. विक्खंभा ।

नील-णिसहृद्दि - पासे, पष्णासकभहिय-बु-सय-जोयणया ।

तत्तो पदेस - बड्ढी, पत्तेकं मेरु - सेलंतं ॥२०५२॥

। २५० ।

ताणं च मेरु-पासे, पंच - सया जोयणाणि वित्थारो ।

लोयविणिच्छय - कत्ता, एवं जियमा सिरूवेदि ॥२०५३॥

। ५०० ।

(पाठान्तरम्)

अर्थ :—नील और निपष पर्वतके पास इन (गजदन्त) पर्वतोंका विस्तार दोसो पचास (२५०) योजन प्रमाण है । इसके आगे मेरु पर्वत पर्यन्त प्रत्येकमे प्रदेशवृद्धि होनेसे मेरुके पास उनका विस्तार पाँचसो योजन-प्रमाण हो गया है । लोकविनिश्चयके कर्ता नियमसे इसप्रकार निरूपण करते हैं ॥२०५२-२०५३॥

(पाठान्तर)

सिरिभद्रसाल - वेदी, वक्खार - गिरीण अन्तर-पमाणं ।

पंच - सय - जोयणाणि, सग्गायणियम्मि णिट्ठं ॥२०५४॥

। ५०० ।

(पाठान्तरम्)

अर्थ :—श्रीभद्रशाल वेदी और वक्खार-गिरियोंका अन्तर पाँचसो (५००) योजन प्रमाण सग्गायणीमें कहा गया है ॥२०५४॥

(पाठान्तर)

गजदन्तोंकी नींव एवं उनके कूटोंका निरूपण—

गयवंताणं गाडा, स्थिय-णिय-उडय-व्यमाण-चउ-भागा ।

सोमणस - गिरिबोवरि, चेहुंते सत्त कूडाणि ॥२०५५॥

सिद्धो सोमणसवत्तो, देवकुरु मंगलो विमल - जामो ।

कांचण - वसिद्ध - कूडा, जित्तहंता मंबर - प्युव्ही ॥२०५६॥

अर्थ :—गजदन्तोंकी गहराई अपनी-अपनी ऊँचाईके चतुर्थांश प्रमाण है। सीमनस गजदन्तके ऊपर सिद्ध, सीमनस, देवकुव, मङ्गल, विमल, काञ्चन और वशिष्ठ, ये सात कूट मेखसे लेकर निषध पर्वत पर्यन्त स्थित हैं ॥२०५५-२०५६॥

सोमणस-सेल-उबए', चउ - भजिबे होंति कूड-उबयाणि ।

बित्थारायामेसुं, कूडाणं णरिथ उबएसो ॥२०५७॥

अर्थ :—सोमनस गजदन्तकी ऊँचाईमें चारका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतनी इन कूटोंकी ऊँचाई है। इन कूटोंके विस्तार और लम्बाईके विषयमें उपदेश नहीं है ॥२०५७॥

भूमिए मुहं 'बिसोहिय, उबय-हिबं भू-मुहाउ-सय-बड्डी ।

मुह-सय पण-घण भूमो, उबओ इगि'हीण-कूड-परिसंखा ॥२०५८॥

। १०० । १२५ । ६ ।

अर्थ :—भूमिमेंसे मुख कम करके उदयका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना भूमिकी अपेक्षा हानि और मुखकी अपेक्षा वृद्धिका प्रमाण होता है। यहाँ मुखका प्रमाण सौ (१००) योजन, भूमिका पाँचके घन (१२५) योजन और उदय एक कम कूट-संख्या (७ - १=६) प्रमाण है ॥२०५८॥

सय-बड्डीण पमाणं, पणुबीसं जोयणाणि छम्भजिबं ।

भूमि - मुहेसुं हीणाहियम्मि कूडाण उच्छेहो ॥२०५९॥

| २५ |
| ६ |

अर्थ :—वह क्षय-वृद्धिका प्रमाण छहसे भाजित पच्चीस योजन है। इसको भूमिमेंसे कम करने और मुखमें जोड़ने पर कूटोंकी ऊँचाईका प्रमाण प्राप्त होता है ॥२०५९॥

अहवा इच्छा-गुणिवा-सय-बड्डी सिदि-बिसुद्ध-मुह-सुत्ता ।

कूडाण होइ उबओ, तेसुं पडमस्स पण - बिदं ॥२०६०॥

। १२५ ।

अर्थ :—अथवा, इच्छा राक्षसे गुणित अय-वृद्धिको भूमिमेंसे कम करने और मुष्यमें मिला देने पर कूटकी ऊँचाई प्राप्त हो जाती है। इनमेंसे प्रथम कूटकी ऊँचाई पाँचके घन (१२५ योजन) प्रमाण है ॥२०६०॥

विदियस्स बीस - जुत्तं, सयमेवकं^१ छुव्विहत्स-पंच-कला ।

सोलस-सहिवं च सयं, दोण्णि कला तिय-ह्विहा तइहत्स ॥२०६१॥

। १२०।३। । ११६।३।

अर्थ :—द्वितीय कूटकी ऊँचाई एकसौ बीस योजन और छहसे विभक्त पाँच कला (१२० $\frac{१}{२}$ योजन) प्रमाण तथा तृतीय कूटकी ऊँचाई एकसौ सोलह योजन और तीससे भाजित दो कला (११६ $\frac{३}{४}$ यो०) प्रमाण है ॥२०६१॥

बारस-अवमहिय-सयं, जोजनमद्धं च तुरिम - कूडस्स ।

जोयण-ति-भाग-जुत्तं, पंचम - कूडस्स अट्ट - सहिव-सयं ॥२०६२॥

। ११२।३। । १०८।३।

अर्थ :—चतुर्थ कूटकी ऊँचाई एकसौ साढ़े बारह (११२ $\frac{३}{४}$) योजन और पाँचवें कूट की ऊँचाई एकसौ आठ (१०८ $\frac{३}{४}$) योजन तथा एक योजनके तीसरे भागसे अधिक है ॥२०६२॥

चउ-जुल-जोयण-सयं, छुव्विहत्सा इगि-कला य छुट्टस्स ।

एवक - सय - जोयणाई, सत्तम - कूडस्स उच्छेहो ॥२०६३॥

। १०४।३। १००।

अर्थ :—छठे कूटकी ऊँचाई एकसौ चार योजन और छहसे भाजित एक कला (१०४ $\frac{३}{४}$ यो०) प्रमाण तथा सातवें कूटकी ऊँचाई एकसौ (१००) योजन प्रमाण है ॥२०६३॥

सोमजस-आम-गिरिणो, आयाजे सग-हिवम्मि जं सद्धं ।

कूडाणमंतरारलं, तं धिय जाएवि पत्तेवकं ॥२०६४॥

अर्थ :—सोमनस नामक पर्वतकी सम्बाईमें सातका भाग देनेपर जो सव्य जाने उतना प्रत्येक कूटके अन्तरालका प्रमाण होता है ॥२०६४॥

चत्वारि सहस्राङ्गं, तिष्णि सया जोयस्सुणि पण्णरसा ।
तेतोसहिय - सएणं, भाजिद - बासोदि - कल - संखा ॥२०६५॥

। ४३१५ । ५५३ ।

अर्थ :—यह अन्तराल चार हजार तीनसौ पन्द्रह योजन और एकसौ तेतीससे भाजित बयामो कला (४३१५.५५३ योजन) प्रमाण है ॥२०६५॥

आदिम - कूडोवारीमे, जिण-भवनं तस्स वास-उच्छेहो ।
दोहं च वण्णणाओ, पंडुग - वण - जिणपुर - सरिच्छा ॥२०६६॥

अर्थ :—प्रथम कूटके ऊपर एक जिन-भवन है । उसके विस्तार, ऊँचाई और लम्बाई आदिका वर्णन पाण्डुकवन-सम्बन्धी जिनपुरके सहश है ॥२०६६॥

सेसेसुं कूडेसुं, वंतर - देवाण होंति पासावा ।
वेदी-तोरण-जुत्ता, कणयमया रयण - वर - खचिदा ॥२०६७॥

अर्थ :—शेष कूटोपर वेदी एव तोरण सहित एव उत्तम रत्नोसे खचित ऐसे ध्वन्तर देवोंके स्नर्गमय प्रासाद हैं ॥२०६७॥

कंचण-कूडे गिावसइ, सुवच्छ-देवि' ति एक्क - पल्लाऊ ।
सिरिबच्छ - मित्तदेवी, कूडवरे विमल - एगाम्मि ॥२०६८॥

अर्थ :—काञ्चनकूट पर एक पत्यप्रमाण आयुसे युक्त सुवत्मादेवी (सुमित्रा देवी) और विमलनामक श्रेष्ठ कूटपर श्रीवत्समित्रा देवी निवाम करती है ॥२०६८॥

अवसेसेसुं चउसुं, कूडेसुं वाण - वंतरा देवा^१ ।
विद्य-कूड-सरिस - एगामा, विविह - विणोवेहि कोडंति ॥२०६९॥

अर्थ :—शेष चार कूटोपर अपने-अपने कूट सहश नामबाले व्यन्तरदेव विविध प्रकारके विनोद पूर्वक क्रीडा करते हैं ॥२०६९॥

विद्युत्प्रभगजदन्नांके कूटोका वर्णन -

विज्जुप्पहस्स उबारि, एव कूडा होंति रिणकनमायारा ।
सिद्धो विज्जुप्पहक्खो, देवकुरु-पउम-सवण-सत्थिकया ॥२०७०॥

सयउज्जल-सीतोदा, हरि ति गामेहि भुवण-बिबलावा ।

एवाणं उच्छेहो, गिय - सेलुच्छेह - चउ - भागो ॥२०७१॥

अर्थ :- विद्युत्प्रभ पर्वतके ऊपर सिद्ध, विद्युत्प्रभ, देवकुठ, पद्य, तपन, स्वस्तिक, शतोज्ज्वल (शानज्वाल), सीतोदा और हरि, इन नामोंमे त्रैलोक्यमे विख्यात तथा अनुपम आकार-वाले नौ कूट हैं । इन कूटोंकी ऊँचाई अपने पर्वतकी ऊँचाईके चतुर्थ भाग प्रमाण है ॥२०७०-२०७१॥

बीहत्ते वित्यारे^१, उवएसो तारा संपइ पणट्टो ।

आदिम - कूडुच्छेहो^२, पणवीस-जुदं च जोयगाण सयं ॥२०७२॥

एककं चिय होदि सयं, अंतिम - कूडस्स उदय-परिमाणं ।

उभय - विससे^३ अड-हिव-पंचकदी हाणि - वड्ढीओ ॥२०७३॥

अर्थ :- उन कूटोंकी लम्बाई एव विस्तार-विषयक उपदेश इस नमय नष्ट हो चुका है । इनमेंसे प्रथम कूटकी ऊँचाई एकसौ पच्चीस (१२५) योजन है और अन्तिम कूटकी ऊँचाईका प्रमाण एकसौ (१००) योजन है । प्रथम कूटकी ऊँचाईमेंसे अन्तिम कूटकी ऊँचाई घटाकर शेष पाँचके वर्ग (१२५ --- १०० = २५) में आठका भाग देनेसे हानि-वृद्धिका प्रमाण (३^१ या ३२ यो०) निकलता है ॥२०७२-२०७३॥

इच्छाए गुणिदाओ^४, हाणि-वड्ढीओ खिदि-विसुद्धाओ ।

मुह - जुत्ताओ कमसो, कूडाणं होदि उच्छेहो ॥२०७४॥

अर्थ :- इच्छासे गुणित हानि-वृद्धिके प्रमाणको भूमिमेंसे कम करने अथवा मुखमें जोड़ देने पर क्रमशः कूटोंकी ऊँचाई प्राप्त होती है ॥२०७४॥

पणवीसवभहिय - सयं, पमाणमुदओ पहिल्लए सेसे ।

उत्पण्णुत्पण्णसुं, पणुवीसं समबणउज्ज अट्ट - हिदं ॥२०७५॥

१ १२५ । १२१ । १ । ११५ । २ । ११२ । १ । १०९ । ३ । १०६ । ३ ।

१०३ । १ । १०० ।

१. द. ब. क. ठ उ. वि वियादे, ज वियादे । २. द. ब. व. पडाणिवहो, ब. व. ठ. उ. गूडाणुदपो ।

३. द. ब. व. अदहिट, ब. क. ठ. उ. अट्टहिट । ४. द. गुणिदादिय-वड्ढीओ खिदि-महाविसुद्धाओ । ठ. क. व. गुणिदादिय वड्ढीओ खिदि-महाविसुद्धाओ । घ. गुणिदादिय वड्ढीओ खिदि-महाविसुद्धाओ । ङ. गुणिदादिय वड्ढीओ खिदि-महाविसुद्धाओ ।

अर्थ :—प्रथम कूटकी ऊँचाई एकसौ पच्चीस (१२५) योजन प्रमाण है। शेष कूटोंकी ऊँचाई जाननेके लिए उत्तरोत्तर उत्पन्न प्रमाणमेसे आठसे भाजित पच्चीस (३३) योजन कम करते जाना चाहिए ॥२०७५॥

यथा—प्र० कूटकी १२५ यो०, द्वि० १२१½ यो०, तृ० ११८¾ यो०, च० ११५½ यो०, पं० ११२½ यो०, ष० १०९¾ यो०, स० १०६¾ यो०, अ० १०३½ यो० और नवम कूट की १०० योजन ऊँचाई है।

विज्जुपह-गाम-गिरिणो, आयामे णव-ह्रिवम्मि जं लद्धं ।

कूडाणमंतरालं, तं चिय जाएदि पत्तेक्कं ॥२०७६॥

अर्थ :—विज्जुप्रभ नामक पर्वतकी लम्बाईमे नौ (९) का भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना प्रत्येक कूटके अन्तरालका प्रमाण होता है ॥२०७६॥

तिणिण सहस्सा ति-सया, छप्पणा जोयणा कलाणं पि ।

एक्कत्तरि^१ - अहियसए, अबहिद - एक्कोत्तर - सयाइं ॥२०७७॥

$$\left| \begin{array}{l} ३३५६ \\ १०१ \\ १७१ \end{array} \right|$$

अर्थ :—यह अन्तराल-प्रमाण तीन हजार तीन सौ छप्पन योजन और एकसौ द्वाहत्तरमे भाजित एकसौ एक कला (३३५६½ यो०) प्रमाण है ॥२०७७॥

जिण - भवण - प्पहुवीणं, सोमणसे पव्वयं व एवस्सि ।

एववि बिसेसो एसो, देवीणं अण्ण - णामाणि ॥२०७८॥

अर्थ :—इस पर्वतपर जिन-भवनादिक सोमनस-पर्वतके ही सट्टा हैं। विशेष केवल यह कि यहाँ देवियोंके नाम अन्य हैं ॥२०७८॥

सोत्तिक - कूडे चेट्टदि, बेंतरदेवी बल ति णामेणं ।

कूडम्मि तपण - णामे, देवी वर - वारिसेण वि ॥२०७९॥

अर्थ :—स्वस्तिक कूटपर बला नामक व्यन्तरदेवी एवं तपनकूटपर वारिषेणा नामक उत्तम वी रहती है ॥२०७९॥

मंवर-गिरिदो गच्छिय, जोयलमद्धं गिरिम्मि विञ्जुयहे ।

चेट्टेदि गुहा^१ रम्मा, पब्बद - वासो व आयामा ॥२०८०॥

अर्थ :—मन्दर पर्वतसे आधा योजन जाकर त्रिचुत्प्रथमपर्वतमे पर्वतके विस्तार सदृश एक लम्बी रमणीय गुफा है ॥२०८०॥

तोए वो - पासेसु^२, दारा णिय-जोग-उदय-वित्थारा^३ ।

होंति अकिट्टिम - रुवा, णाणावर-रण - रमणिञ्जा ॥२०८१॥

अर्थ :—इसके दोनों पार्श्वभागोमे अपने योग्य ऊँचाई एव विस्तार महित तथा अनेक उत्तम रत्नोसे रमणीय अकृत्रिमरूप द्वार हैं ॥२०८१॥

गन्धमादन पर्वतके कूटो आदिका वर्णन -

कूडाणि गन्धमादन - गिरिस्स उवरिम्मि सत्त चेट्टंति ।

सिद्धक्खल - गन्धमादन - देवकुरू - गन्धवास - लोहिदया ॥२०८२॥

फलिहाणंदा^३ ताणं, सत्ताणि इमाणि होंति णामाणि ।

एद्धानं उदयादो, सोमणस - णगं व णादव्वा ॥२०८३॥

अर्थ :—गन्धमादनपर्वतके ऊपर सात कूट स्थित है । सिद्ध, गन्धमादन, देवकुरू, गन्धव्यास (गन्धमालिनी ?) लोहित, स्फटिक और आनन्द ये उन सात कूटोके नाम हैं । इन कूटोंकी ऊँचाई प्रादिक सोमनस पर्वतके सदृश ही जाननी चाहिए ॥२०८२-२०८३॥

रावरि विसंसो एसो, लोहिद - कूडे वत्तेदि भोगवती ।

भोगंकरा^५ य देवी, कूडे फलिहाभिघारम्मि ॥२०८४॥

अर्थ :—विशेष यह है कि लोहित कटपर भोगवती एव स्फटिक नामक कूटपर भोगङ्कुरा-देवी निवास करती है ॥२०८४॥

माल्यवान् पर्वतके कूटो आदिका वर्णन -

राव कूडा चेट्टंते, उवरिम्मि गिरिस्स मालवंतस्स ।

सिद्धक्खल - माल्युवरकुरू^६ - कच्छा सागरं^६ हि रजदक्खला ॥२०८५॥

१. द. व. क. ज. य. उ. ठ. गुणारम्भे । २. द. व. क. ज. य. उ. ठ. वित्थारो । ३. द. क. ज. य. उ. ठ. पत्तिहाणदा राण । ४. द. व. क. ज. य. उ. ठ. भोगकहि । ५. द. व. क. ज. य. उ. ठ. मतर ६. द. व. क. ज. य. उ. ठ. सागरमि ।

तह पुष्पभद्र - सीता, हरिसह - नामा इमान कूडाणं ।

विस्तारोवय - पट्टवी, बिज्जुप्पह - कूड - सारिच्छा ॥२०८६॥

अर्थ :—माल्यवान् पर्वतके ऊपर नी कूट स्थित हैं । सिद्ध, माल्यवान्, उत्तरकुद, कच्छ, सागर, रजत, पूर्णमद्र, सीता और हरिसह, ये इन कूटोके नाम हैं । इनका विस्तार एवं ऊँचाई आदिक विद्युत्प्रभ पर्वतके कूटोंके सदृश ही जानना चाहिए ॥२०८५-२०८६॥

एषको णवरि विसैसो, सागर-कूडेसु भोगवदि - नामा ।

गिावसेदि रजद - कूडे, णामेणं भोगमालिणी देवी ॥२०८७॥

अर्थ :—विशेषता केवल यह है कि सागर कूटपर भोगवती एवं रजतकूट पर भोगमालिनी नामक देवी निवास करती है ॥२०८७॥

मंदर-गिरिबो गच्छिय, जोयणमद्धं गिरिम्मि एवस्सि ।

सोहेदि 'गुहा पव्वय - वित्थार - सरिच्छ - बीहत्ता ॥२०८८॥

अर्थ :—मन्दर पर्वतसे आधा योजन आगे जाकर इस पर्वतके ऊपर पर्वतीय विस्तारके सदृश लम्बी गुफा कही जाती है ॥२०८८॥

तीए दो - पासेसुं, दारा णिय-जोग्ग-उदय-वित्थारा ।

फुरिद-वर-रयण-किरणा, अकिट्टिमा ते णिरुबमाणा ॥२०८९॥

अर्थ :—उसके दोनो पार्श्वभागोंमें अपने योग्य उदय एवं विस्तार सहित तथा प्रकाशमान उत्तम रत्नकिरणोंसे सयुक्त वे अकृत्रिम एवं अनुपम द्वार हैं ॥२०८९॥

[चित्र अगले पृष्ठ पर देखिये]

शोयण सप्त - सहस्त्रे, चउस्सदे एकवीस धविरिपं ।

बिसहस्सोवरि वण्णवि, सीबोवा उत्तर - मुहेण ॥२०६१॥

। ७४२१ । १ ।

अर्थ :- यह सीतोदा नदी उत्तरमुख होकर सात हबार चारसी इक्कीस योजनसे कुछ अधिक (७४२१.१५ योजन) निषघपर्वतके ऊपर जाती है ॥२०६१॥

आगंतूण तदो सा, पडिसीबोव - नाम - कुंडम्मि ।

पडिवूणं गिम्मच्छवि, तस्सुत्तर - तोरण - दुवारे ॥२०६२॥

गिम्मच्छिय सा गच्छवि, उत्तर-मग्गेण जाव मेह-गिरि ।

दो - कोसेहिमवाणिय, निवत्तदे पच्छिम - मुहेण ॥२०६३॥

अर्थ :- पश्चात् वह नदी पर्वत परसे आकर और प्रतिसीतोद नामक कुण्डमें गिरकर उसके उत्तर-तोरणद्वारसे निकलती हुई उत्तर-भागसे मेह-पर्वत पर्यन्त जाती है । पुनः दो कोससे मेह पर्वतको न प्राप्तकर अर्थात् दो कोस दूरसे ही पश्चिमकी ओर मुड़ जाती है ॥२०६२-२०६३॥

विण्णुप्पहस्स गिरिणो, गूहाए उत्तर - मुहेण पबिसेवि ।

वण्णेवि^१ भद्दसासे^२, वंकस - क्वेण तेत्ति - अंतरिवा ॥२०६४॥

अर्थ :- अनन्तर वह नदी उतने (दो कोस) प्रमाण अन्तर सहित कुटिलरूपसे विण्णुप्रम-पर्वतकी गुफाके उत्तरमुखमें प्रवेशकर भद्रमाल वनमें जाती है ॥२०६४॥

मेह-वहु-मग्ग-भागं, गिय-मग्ग-प्यणिच्चियं पि^३ कावूणं ।

पच्छिम - मुहेण गच्छवि, विदेह - विजयस्य बहु-मग्गे ॥२०६५॥

अर्थ :- मेहके बहुमध्य भागको अपना मध्य-प्रणधि करके वह नदी पश्चिम मुखसे विदेहक्षेत्रके बहुमध्यमें होकर जाती है ॥२०६५॥

देवमुह - खेत - जादा, वदी सहस्सा ह्वंति खुलसीवी ।

सीतोवा - पडितीरं, पबिसंति सहस्स वावासं ॥२०६६॥

। ८४००० ।

१. व. क. व. ड. ठ. पबिसेवि । २. व. सहसामे, व. व. भद्दसालो । ३. व. व. क. व. व. ड.

अर्थ :—देवकुरु-क्षेत्रमें उत्पन्न हुई चौरासी हजार (८४०००) नदियाँ हैं। इनमेंसे बयालीस हजार नदियाँ सीतोदाके दोनों तीरोंमेंसे प्रत्येक तीरमें प्रवेश करती है ॥२०६६॥

अबर-विदेह-समुद्र-नदी समग्गा हर्षति चउ - लक्ष्मा ।

अडवालं च सहस्सा, अडतोसा पविसंति सीदोदं ॥२०६७॥

। ४४८०३८ ।

अर्थ :—अपर विदेहक्षेत्रमें उत्पन्न हुई कुल नदियाँ चार लाख अडतालीस हजार अडतीस (४४८०३८) हैं, जो सीतोदामें प्रवेश करती हैं ॥२०६७॥

अंबुदीवस्स तदो, जगदो - बिल - दारएण संचरियं ।

पविसइ लवणंबुणिहि, परिवार - णईहि जुत्ता सा ॥२०६८॥

अर्थ :—पश्चात् जम्बूद्वीपकी जगतीके बिल-द्वारमेंसे जाकर वह नदी परिवार-नदियोंसे युक्त होती हुई लवण-समुद्रमें प्रवेश करती है ॥२०६८॥

इंदावगाड - पट्टदी, हरिकंतादो हर्षति दो - गुणिदा ।

तोए बे - तड - वेदी - उववण - संडाहि - रम्माए ॥२०६९॥

अर्थ :—दो तट-वेदियों और उपवन-क्षण्डोंसे रमणीय उस सीतोदा नदीका विस्तार एवं महाराई आदि हरिकान्ता नदीसे दूना है ॥२०६९॥

यमक पर्वतोंका वर्णन—

जोयण - सहस्समेष्कं, जिसह - गिरिदस्स उत्तरे गुंतुं ।

चेटठंति जमग - सेला, सीदोदा - उभय - पुलिणेषुं ॥२१००॥

अर्थ :—निषध-पर्वतके उत्तरमें एक हजार योजन जाकर सीतोदा-नदीके दोनों किनारों पर यमक शील स्थित हैं ॥२१००॥

शामेण जमग - कूडो, पुब्बन्मि तडे जवीए चेट्टेदि ।

अबरे मेघं कूडो, फुरंत - बर - रयण - फिरणोहो ॥२१०१॥

अर्थ :—प्रकाशमान उत्तम रत्नोंके किरण-समूह सहित यमक कूट सीतोदा नदीके पूर्व तट पर है और मेघकूट पश्चिम तटपर है ॥२१०१॥

दोण्हं पि अंतरालं, पंच - सया जोयणाणि सेलाणं ।

दोण्णि सहस्सा जोयण - तुंगा मूले सहस्स - वित्थारो ॥२१०२॥

। ५०० । २००० । १००० ।

अर्थ :—इन दोनो पर्वतोका अन्तराल पाचसो (५००) योजन प्रमाण है । प्रत्येक पर्वतकी ऊंचाई दो हजार (२०००) योजन तथा मूल विस्तार एक हजार (१०००) योजन प्रमाण है ॥२१०२॥

सत्त - सया पण्णासा, पत्तेवकं ताण मज्झ - वित्थारो ।

पंच - सय - जोयणाणि, सिहर - तले रुंद - परिमाणं ॥२१०३॥

। ७५० । ५०० ।

अर्थ — उनमेसे प्रत्येक पर्वतका मध्य-विस्तार सातसो पचास (७५०) योजन है और शिखरतलमे विस्तारका प्रमाण पांचसो (५००) योजन है ॥२१०३॥

एदाणं परिहीओ, वित्थारे ति - गुणिदम्मि अदिरित्तो ।

अवगाढो जमगणं, णिय - णिय - उच्छेह - चउभागो ॥२१०४॥

अर्थ :—इन (पर्वतो) की परिधियाँ तिगुने विस्तारसे अधिक है । यमक-पर्वतोकी गहराई अपनी-अपनी ऊंचाईके चतुर्थभाग प्रमाण है ॥२१०४॥

यमक पर्वतोपर स्थित प्रासाद—

जमगोवरि बहु - मज्झे, पत्तेवकं हौति 'विठ्व-पासादा ।

पण - घण - कोसायामा, सद्धुगुणुच्छेह - संपण्णा ॥२१०५॥

। १२५ । २५० ।

अर्थ :—प्रत्येक यमक-पर्वतके ऊपर बहुमध्यभागमे एकसो पच्चीस (१२५) कोस लम्बा और इससे दूनी (२५० कोस) ऊंचाईसे सम्पन्न दिव्य प्रासाद है ॥२१०५॥

उच्छेह-अट्ठ - बासा, सव्वे तवणिज्ज-रजव-रयणमया ।

धुव्वंत - धय - वढाय्या, वर - तोरणवार - रमणिज्जा ॥२१०६॥

। १२५ ।

अर्थ :—स्वर्ण, चाँदी एव रत्नोसे निर्मित, फहराती हुई ध्वजा-पताकाओमें सयुक्त और उत्तम तोरण-द्वारोसे रमणीय ये सब प्रासाद अपनी-अपनी ऊँचाईके अर्धभाग (१२५ कोस) प्रमाण विस्तारवाने है ॥२१०६॥

जमम - गिरोणं उवरि, अवरि वि ह्वंति दिव-पासादा ।

उच्छेह - दास - पहुदिमु, उच्छिण्णो ताण उवएसो ॥२१०७॥

अर्थ - यमक-पर्वतोके ऊपर आर भी (अन्य) दिव्य प्रामाद हैं । उनकी ऊँचाई एव विस्तारादिका उपदेश नष्ट हो गया है ॥२१०७॥

उववण - संडेह जुदा, पोक्खरणी-कूव-वावि-आरम्मा ।

फुरिद - वर - रयण - दीवा, ते पासादा विरायंते ॥२१०८॥

अर्थ :—उपवन-खण्डों सहित, पुष्करिणी, वप एव वापिकाओसे रमणीय और प्रकाशमान उत्तम रत्नदीपकोमें सयुक्त वे प्रासाद शोभायमान है ॥२१०८॥

पव्वद - सरिच्छ - णामा, बंतरदेवा वसंति एदेसुं ।

दस - कोदंडत्तुंगा, पत्तेक्कं एकक - पल्लाऊ ॥२१०९॥

अर्थ :—इन प्रामादोंमें पर्वतोके सदृश नामवाले व्यन्तरदेव निवास करते हैं । इनमेंसे प्रत्येक देव दस धनुष ऊँचा और एक पल्यप्रमाण आयुवाला है ॥२१०९॥

सामाणिय-तणुरक्खा, सत्ताणीयाणि परिस - तदियं च ।

किन्बिसि-अभियोगा तह, पडुण्णया ताण होंति पत्तेक्कं ॥२११०॥

अर्थ :—उनमेंसे प्रत्येकके सामानिक, तनुरक्ष, सप्तानीक, तीनों पारिषद, किल्बिषिक, आभियोग्य और प्रकीर्णक देव होते हैं ॥२११०॥

सामाणिय - पहुदीणं, पासादा कणय-रजव-रयणमया ।

तद्देवीणं भवणा, सोहंति ह्व निहवमायारा ॥२१११॥

अर्थ :—स्वर्ण, चाँदी एवं रत्नोसे निर्मित सामानिक आदि देवोंके प्रासाद और उनकी देवियोंके धनुषम आकारवाले भवन शोभायमान हैं ॥२१११॥

जिनभवन एवं द्रहोंका वर्णन—

जमगं मेघसुराणं, 'भवणोहितो विसाए 'पुब्बाए ।
एक्केक्कं जिणगेहा, पंडुग - जिणगेह - सारिच्छा ॥२११२॥

अर्थ :—यमक और मेघ देवोंके भवनोंसे पूर्वदिशामें पाण्डुक-वनके जिनमन्दिर सदृश एक-एक जिन भवन है ॥२११२॥

पंडुग-जिण - गेहाणं, मुहुमंडव-पहुवि-वण्णराणा सग्घा ।
जा पुब्बास्सि भणिदा, सा जिण - भवणाण एदाणं ॥२११३॥

अर्थ :—पाण्डुकवनमें स्थित जिन भवनोंके मुखमण्डप आदिका जो सम्पूर्ण वर्णन पूर्वमें किया है, वही वर्णन इन जिन-भवनोंका भी है ॥२११३॥

जमगं मेघ - गिरीदो, पंच - सया जोयणाणि गंतूणं ।
पंच - दहा^३ परोक्कं, सहस्स - वल - जोयणंतरिदा ॥२११४॥

। ५०० ।

अर्थ :—यमक और मेघगिरिसे पांचसौ योजन प्रागे जाकर पांच द्रह हैं, जिनमें प्रत्येकके बीच अर्धसहस्र (५००) योजनका अन्तराल है ॥२११४॥

उत्तर - दक्खिण - दीहा, सहस्समेक्कं हवन्ति परोक्कं ।
पंच - सय - जोयणाइं, 'हंदा दस - जोयणवगाढा ॥२११५॥

। १००० । ५०० । १० ।

अर्थ :—प्रत्येक द्रह एक हजार प्रमाण उत्तर-दक्षिण लम्बा, पांचसौ योजन चौड़ा और दस योजन गहरा है ॥२११५॥

जिसह-कुरु-सूर-सुलसा, बिज्जू - षामेहि होंति ते पंच ।
पंचाणं बहुमज्जे, सीदोदा सा गवा^४ सरिया ॥२११६॥

१. द. भवणेहिते । २. द. क. ज. य. उ. ठ. पुब्बाय । ३. द. पंचवहो, क. ज. य. उ. ठ. पंचवहो ।
४. द. व. क. ज. य. उ. ठ. वंदा । ५. द. व. क. ज. य. उ. ठ. रवा ।

अर्थ :—निपथ, कुरु (देवकुरु), सूर, सुलस और विद्युत्, ये उन पाँच द्रहोके नाम हैं । इन पाँचों द्रहोके बहुमध्य-भागमेंसे सीतोदा नदी गई है ॥२११६॥

ह्रीति बहाणं मज्झे, अंबुज - कुसुमाण दिव्व - भवणेसुं ।

णिय - णिय - दह-णामाणं^१, णागकुमाराण देवीओ^२ ॥२११७॥

अर्थ - द्रहोके मध्यमें कमल-पुष्पोके दिव्य भवनोमे अपने-अपने द्रहके नामवाले नागकुमार देव एवं देवियोंके निवास हैं ॥२११७॥

अवसेस-वण्णणाओ, जाओ^३ पउम - दहम्मि भणिदाओ ।

ताओ च्चिय एबेसुं, णादक्काओ वर - दहेसुं ॥२११८॥

अर्थ :—अवशेष वर्णनाएँ जो पथद्रहके विषयमें कही गई हैं, वे ही इन उत्तम द्रहोके विषयमे भी जाननी चाहिए ॥२११८॥

काचन शंलोका वर्णन—

एक्केक्कस्स दहस्स य, पुव्व-दिसाए य अवर - दिव्वभागे ।

दह-दह कंचण-सेला, जोयण - सय - भेत्त - उच्छेहा^४ ॥२११९॥

। १०० ।

अर्थ :—प्रत्येक द्रहके पूर्व एवं पश्चिम दिग्-भागमे सौ-सौ योजन ऊँचे दम-दम शंल (कनक पर्वत) है ॥२११९॥

रुदं मूलम्मि सदं, पणत्तरि जोयणाणि मज्झम्मि ।

पण्णासा सिहर - तत्ते, पत्तोक्कं कणय^५ - सेलाणं ॥२१२०॥

। १०० । ७५ । ५० ।

अर्थ :—प्रत्येक कनक-पर्वतका विस्तार मूलमें सौ (१००) योजन, मध्यमे पचहत्तर (७५) योजन और शिखरतलमें पचास (५०) योजन प्रमाण है ॥२१२०॥

१. द. ब. क. ज. म. णामाओ, उ. ठ. णामाउ । २. ब. णासा, द. क. ज. म. उ. ठ. णामा ।
३. द. ब. उ. जादी पवद्धम्मि । ४. द. ब. क. ज. उ. ठ. उच्छेहो । ५. द. क. ज. म. कणय, ब. उ. ठ. कणय ।

पणबीस - जोयणाइं, अबपाठा ते फुरंत-मणि-किरणा ।

ति-गुणद-णिय-बिखारा, अदिरिता ताण परिहीओ ॥२१२१॥

। २५ ।

अर्थ :—प्रकाशमान मणि-किरणों सहित वे पर्वत पच्चीस योजन गहरे हैं। इनकी परिधियोंका प्रमाण अपने-अपने विस्तारसे कुछ अधिक तिगुना है ॥२१२१॥

चउ-तोरण-वेदीहि, मूले उवरिम्मि उववण - वर्णेहि ।

पोक्खरणीहि रम्मा, कणयगिरी मणहरा सव्वे ॥२१२२॥

अर्थ :—ये सब मनोहर कनकगिरि मूलमे एव ऊपर चार तोरण-वेदियों, वन-उपवनो और पुष्करिणियोंमे रमणीक हैं ॥२१२२॥

कणय-गिरीणं^१ उवरि, पासादा कणय-रजद-रयणमया ।

णच्चंत - घय - बडाया, कालागर - धूव - गंधड्ढा ॥२१२३॥

अर्थ :—कनकगिरियो पर स्वर्ण-चांदी एवं रत्नोसे निर्मित नाचती हुई ध्वजा-पताकाओं सहित और कालागर धूपकी गन्धसे व्याप्त प्रासाद हैं ॥२१२३॥

जमगं मेघगिरी ठव, कंचण - सेलाण वण्णणं सेसं ।

णवरि बिसेसो कंचण - जाम^२ - बेंतराण वासेदे ॥२१२४॥

अर्थ :—काञ्चन शैलोका शेष वर्णन यमक और मेघगिरिके सदृश है। विशेषता केवल इतनी है कि ये पर्वत काञ्चन नामक व्यन्तर देवोके निवास हैं ॥२१२४॥

दिव्य-वेदी—

दु-सहस्स-जोयणाणि, बाणउदो दो कलाउ पविहत्ता ।

उणवीसेहि गच्छिय, ^३विज्जु - दहादो य उत्तरे भागे ॥२१२५॥

। २०६२ । क १६ ।

१. द. ज. य. कणयमबीण, व. क. ठ. कणयमईण। २. द. ब. णामाबेंतरं पि, क. व. य. णामा बितरं पि, ठ. उ. णामा बेंतरं मि। ३. द. ब. क. ज. य. उ. ठ. उज्जुदहादो।

चेद्वेदि बिम्ब-वेदी, जोयण-कोसठ - उदय - वित्थारा ।

पुब्बावर - भागेसुं, संलग्गा गयवंत - सेलाणं ॥२१२६॥

। जो १ । को ३ ।

अर्थ :- विष्णु तद्रहसे उत्तरकी ओर दो हजार बानर्बं योजन और उन्नीससे विभक्त दो कला (२०९२ $\frac{३}{४}$ योजन) प्रमाण जाकर एक योजन ऊँची, आधा (३) कोस चौड़ी और पूर्व-पश्चिम भागमें गजदन्त-पर्वतोसे जुड़ी हुई दिव्य वेदी स्थित है ॥२१२५-२१२६॥

चरियट्टालय - बिउला', बह्व-तोरण-दार-संजुदा रम्मा ।

दारोवरिम - तलेसुं, सा जिण - भवणेहि संपुष्णा ॥२१२७॥

अर्थ :- वह वेदी विपुल मार्गों एव अट्टालयो सहित, बहुत तोरण-द्वारोंमें समुक्त और द्वारोंके उपरिम-भागोंमें स्थित जिन-भवनोंमें परिपूर्ण है ॥२१२७॥

दिग्गजेन्द्र पर्वनोका वर्णन--

पुब्बावर - भागेसुं, सीदोद - णयीए भट्टसाल - वणे ।

सत्थिक - अंजण - सेला, णामेणं दिग्गइदित्ति ॥२१२८॥

अर्थ :- भद्रशालवनके भीतर सीतोदा नदीके पूर्व-पश्चिम भागमें स्वस्तिक और अञ्जन नामक दिग्गजेन्द्र पर्वत है ॥२१२८॥

जोयण - सयमुत्तुंगा, तेत्तिय-परिमाण-मूल-वित्थारा ।

उच्छेह - तुरिम - गाढा, पण्णासा सिहर - विक्खंभो ॥२१२९॥

। १०० । १०० । २५ । ५० ।

अर्थ :- ये पर्वत एक सौ (१००) योजन ऊँचे, मूलमें इतने (१०० यो०) ही प्रमाण विस्तारसे युक्त और ऊँचाईके चतुर्थ भाग (२५ यो०) प्रमाण नीव तथा पचास (५०) योजन प्रमाण शिखर-विस्तार सहित है ॥२१२९॥

पुष्पं पिव वण - संडा, मूले उवरिम्मि दिग्गजाब्धिं पि ।

वर - वेदी - वार - जुवा, समंततो सुंदरा ह्यंति ॥२१३०॥

अर्थ :—इन दिग्गज-पर्वतों के ऊपर एवं मूलमें पूर्व वर्णन के ही सदृश उत्तम वन-वेदी-द्वारोंसे संयुक्त शीर चारों शीर से सुन्दर वन-खण्ड हैं ॥२१३०॥

एवाणं परिहोओ, वासेणं ति - गुणिदेण भ्रह्मियाओ ।

ताण उवरिम्मि दिग्वा, पासादा कणय - रयणमया ॥२१३१॥

अर्थ :—इनकी परिधियाँ तिगुणे विस्तारसे कुछ अधिक हैं । उन पर्वतों के ऊपर स्वर्ण शीर रत्नमय दिव्य प्रमाद हैं ॥२१३१॥

पण-घण-कोसायामा, तद्दल - वासा ह्वंति पत्तेक्कं ।

सव्वे सरिसुच्छेहा, वासेण दिग्ग्ढ - गुणिदेण ॥२१३२॥

। १२५ । १३५ । ३५५ ।

अर्थ :—इन सबमें प्रत्येक प्रासाद पाँचके घन (१२५ कोस) प्रमाण लम्बा, इससे आधे (६२३ कोस) प्रमाण चौड़ा और डेढ़-गुणा (६३३ कोस) ऊँचा है ॥२१३२॥

एवेसुं भवणेषुं, कीडेवि जमो ति वाहणो देवो ।

सक्कत्स विक्कुब्बंतो, एरावद - हत्थि - रूवेणं ॥२१३३॥

अर्थ :—इन भवनोमे सोधर्मं दन्द्रका यम नामक वाहन देव क्रीडा किया करता है । यह देव ऐरावत हाथीके रूपसे विक्रिया करता है ॥२१३३॥

जिनेन्द्र-प्रासाद—

तत्तो सीतोदाए, पच्छिम - तीरे जिण्णिद - पासादो^१ ।

मंदर - दक्षिण - भागे, तिहुवण - चूडामणी णामो ॥२१३४॥

अर्थ :—इसके प्रागे मन्दर-पर्वतके दक्षिण भागमें सीतोदा नदीके पश्चिम किनारे पर त्रिभुवन चूडामणि नामक जिनेन्द्र-प्रासाद है ॥२१३४॥

उच्छेह - वास - पट्टिदि, पंडुग-जिणणाह^१ - मंदिराहिंतो ।

मुहमंडवाहिठाण^१ - प्यहुदीओ चउ - गुणो तस्स ॥२१३५॥

अर्थ :—उस जिनेन्द्रप्रासादकी ऊंचाई एवं विस्तार आदि तथा मुखमण्डप एवं अग्निष्ठान आदिक पाण्डुकवनके जिनेन्द्रमन्दिरोंसे चौगुणे विस्तारवाले हैं ॥२१३५॥

मदर - पच्छिमभागे, सीदोद - णदीए उत्तरे तीरे ।

चेट्टुदि जिणिद^३ - भवणं, पुळ्वं पिव वण्णणेहि जुवं ॥२१३६॥

अर्थ :—मन्दर-पर्वतके पश्चिम-भागमें सीतोदा नदीके उत्तर किनारेपर पूर्व कथित वर्णनोंसे युक्त जिनेन्द्र-भवन स्थित है ॥२१३६॥

शीलोका वर्णन —

सीदोद-वाहिणीए, दक्खिण - तीरम्मि भद्दसाल - वणे ।

चेट्टुदि कुमुद - सेलं, उत्तर - तीरे पलासगिरो ॥२१३७॥

अर्थ :—भद्रशालवनमें सीतोदा नदीके दक्षिण किनारे पर कुमुद-शैल श्रीर उत्तर किनारे-पर पलाश-गिरि स्थित है ॥२१३७॥

एदाओ वण्णणाओ, सयलाओ दिग्गइंद - सरिसाओ ।

णवरि विसेसो तेसुं, वरुणसुरो उच्चरिबस्स ॥२१३८॥

अर्थ :—ये सम्पूर्ण वर्णनाएँ दिग्गजेन्द्र-पर्वतोंके सदृश हैं । विशेष केवल यह है कि यहाँ उत्तरेन्द्रके वरुण नामक लोकपालका निवास है ॥२१३८॥

भद्रशालकी वेदी एवं उमका प्रमाण -

तत्तो पच्छिम - भागे, कणयमया भद्दसाल-वण-वेदी ।

णील - णिसहावलाणं, उववण वेदीए^५ संलग्गा ॥२१३९॥

अर्थ :—इसके आगे पश्चिम भागमें नील एव निषध पर्वतकी उपवन वेदीसे संलग्न स्वर्ण-मय भद्रशाल-वन-वेदी है ॥२१३९॥

१. द. ब. क. ज. य. ठ. उ. जिरायाम । २. क. ज. उ. मुहमडलमदिवासं पट्टिदि । ३. मुहमडल-मदिवासं पट्टिदि । ४. मुहमंडवाहिवासं पट्टिदि । ५. द. जिणदि । ६. ब. वेदीओ ।

तेचीस - सहस्साईं, जोयणया छस्सयाइ चुलसीवी ।

उणवीस - हिवाओ चउ - कलाओ वेवीए वीहत्तं ॥२१४०॥

। ३३६८४ । १,५ ।

अर्थ :—वेदीकी लम्बाई तैतीस हजार छह सौ चौरासी योजन और उन्नीससे भाजित चार कला (३३६८४,५ योजन) प्रमाण है ॥२१४०॥

सीता नदीका वर्णन—

उवरिम्मि नील-गिरिणो, दिव्व-वहो केसरि त्ति विक्खादो ।

तस्स य वक्खिण - दारे, णिग्गच्छइ वरणई सीवा ॥२१४१॥

अर्थ :—नील पर्वतके ऊपर केसरी नामसे प्रसिद्ध दिव्य द्रव्य है । उसके दक्षिण-द्वारसे सीता नामक उत्तम नदी निकलती है ॥२१४१॥

सीवोदये सरिच्छा, पडिऊणं सीद - कुंड' - उवरिम्मि ।

तहक्खिण - दारेणं, णिक्कामदि वक्खिण - मुहेणं ॥२१४२॥

अर्थ :—सीतोदाके सहस्र ही सीतानदी सीता कुण्डमे गिरकर दक्षिण-मुख होती हुई उसके दक्षिण द्वारसे निकलती है ॥२१४२॥

णिक्कमिदूणं वच्चदि, वक्खिण-भागेण जाव मेरुगिरि ।

दो-कोसेहिमपाविय, पुव्वमुही वलदि तत्ति - अंतरिदा ॥२१४३॥

अर्थ :—वह नदी कुण्डसे निकलकर मेरु पर्वत तक दक्षिणकी ओरसे जाती हुई दो कोसे उस मेरु-पर्वतको न पाकर उतने मात्र (२ कोम) अन्तर सहित पूर्वकी ओर मुड़ जाती है ॥२१४३॥

सेलम्मि^१ मालवंते, गुहाए वक्खिण - मुहाए पविसेदि ।

णिस्सरिदूणं गच्छदि, ^३कुडिला मेरुस्स मज्झंतं ॥२१४४॥

अर्थ :—वह सीता नदी माल्यवत पर्वतकी दक्षिणमुखवाली गुफामे प्रवेश करती है । पश्चात् उस गुफामेसे निकलकर कुटिलरूपमे मेरु-पर्वतके मध्यभाग तक जाती है ॥२१४४॥

१. द. व. क. ज. य. ङ. ठ. सीदकूड । २. द. व. क. ज. य. उ. ठ. सीनम्मि । ३. व. क. ज. उ.

तगिरि-मज्झ-पदेसं, णिय-मज्झ-पदेस-पणिघियं काटुं^१ ।

पुव्व - मुहेणं गच्छइ, पुव्व - विदेहस्स बहुमज्झे ॥२१४५॥

अर्थ :—उस पर्वतके मध्यभागको अपना मध्यप्रदेश-प्रणधि करके वह सीतानदी पूर्व विदेहके ठीक मध्यमेसे पूर्वकी ओर जाती है ॥२१४५॥

जंबूदीवस्स तदो, जगदी - बिल - दारएण संचरियं ।

परिवार - णदीहि जुश, पविसदि लवणएणवं सीदा ॥२१४६॥

अर्थ :—अनन्तर जम्बूद्वीपकी जगतीके बिल-द्वारमेंसे निकलकर वह सीता नदी परिवार-नदियोसे युक्त होती हुई लवणामुद्रमे प्रवेश करती है ॥२१४६॥

इंदावगाढ - पहुदि, तड वेदी - उववणादिकं सव्वं ।

सीदोदा - सारिच्छं, सीद - णदीए वि णादव्वं ॥२१४७॥

अर्थ :—सीता नदीका विस्तार एव गहराई आदि तथा उसके तट एव वेदी और उपवनादिक सब सीतोदाके गृहण ही जानने चाहिए । २१४७॥

यमकगिरि एव द्रह्मीका वर्णन—

णीलाचल - दक्खिणदो, एवकं गंतूण जोयण - सहस्सं ।

सीदादो - पासेसुं, चेट्टुंते दोष्णि जमकगिरी ॥२१४८॥

। १००० ।

अर्थ :—नील पर्वतके दक्षिणमे एक हजार योजन जाकर सीताके दोनो पार्श्वभागोंमें दो यमकगिरि स्थित हैं ॥२१४८॥

पुव्वस्सिं चित्तणगो, पच्छिम-भाए विचिच - कूडो^२ य ।

जमगं भेघगिरिंदा सव्वं चिय वण्णणं ताणं ॥२१४९॥

अर्थ :—सीतानदीके पूर्वभागमे चित्रनग और पश्चिम भागमें विचित्रकूट है । इनका सब वर्णन यमक गिरीन्द्र और भेघगिरीन्द्रके सट्टण ही समझना चाहिए ॥२१४९॥

१ द. व. क. ज. य. उ. ठ. कूडो । २. द. व. क. ज. य. उ. ठ. चित्तणगो । ३. द. व. क. ज. य.

जमगगिरिर्बाहितो, पंच - सया जोयणाणि गंतूणं ।

पंच दहा पत्तेक्कं, सहस्स - दल - जोयणंतरिदा ॥२१५०॥

। ५०० ।

अर्थ :—यमक-पर्वतोके आगे पांचसौ (५००) योजन जाकर पांच द्रह है, जिनमेंसे प्रत्येक द्रह अर्धसहस्र (५००) योजन प्रमाण दूरी पर है ॥२१५०॥

णील - कुरु^१ - चंद - एरावदा य एगामेहि मालबंतो य ।

ते दिव्व^२ - दहा णिसह-द्दहादि - वर - वण्णणेहि जुदा ॥२१५१॥

अर्थ :—नील, कुरु (उत्तर कुरु), चन्द्र, ऐरावत और माल्यवन्त, ये उन दिव्य द्रहोके नाम हैं । ये दिव्य द्रह निषध-द्रहादिकके उत्तम वर्णनोसे युक्त हैं ॥२१५१॥

दु - सहस्सा बाणउदी-जोयण-बोभाग-ऊणवोस-हिदा ।

चरिम-दहादो दक्खिण-भाग^३ गंतूण ह्योदि वर - वेदी ॥२१५२॥

। २०६२५^३ ।

अर्थ :—अन्तिम द्रहसे दो हजार बानबै योजन और उन्नीससे भाजित दो भाग (२०६२^३ योजन) प्रमाण जाकर दक्षिण भागमे उत्तम वेदी है ॥२१५२॥

पुब्बावर - भाएसुं, सा गयवंताचलाण संलग्गा ।

इगि जोयणमुत्तुंगा, जोयण - अट्टंस^४ - वित्थारा ॥२१५३॥

। जो १ । दं १०००^५ ।

अर्थ :—पूर्व-पश्चिम-भागोंमे गजदन्त-पर्वतोसे सलग्न वह वेदी एक योजन ऊंची और एक योजनके आठवें भाग (१००० दण्ड) प्रमाण विस्तार सहित है ॥२१५३॥

चरियट्टालय^६-पउरा, सा वेदी विविह-धय-वडोहि जुदा ।

दारोवरिम - ठिर्वेहि, जिण्णिब - भवणेहि रमणिज्जा ॥२१५४॥

१. द. ब. क. ज. य. उ. ठ. कुरुद्दहएरावदा । २. ब. क. ज. य. उ. ठ. ते दिव्व । ३. द. ब. क. ज. य. उ. ठ. बाणा । ४. द. ब. क. उ. ठ. अट्टंस । ५. क. ब. ठ. उ., दं ५००० । ६. ब. चरियट्टालय । ७. द. ज. य. दारोवरिमरिवेहि, क. दारोवरिमतवेहि, ब. उ. दारोपरमतवेहि ।

अर्थ :—प्रचुर मार्गों एव अट्टालिकाओ सहित श्रीर नाना प्रकारकी ध्वजा-पताकाओंसे संयुक्त वह वेदी द्वारोंके उपरिमभागमे स्थित जितेन्द्र-भवनोसे रमणीय है ॥२१५५॥

वर-भट्टसाल - मञ्जे, सीता-जु-तडेसु दिग्गइंद - गिरी ।

रोचणवतंस^१ - कूडे, सत्थिय - गिरि - वण्णणेहि जुदा ॥२१५५॥

अर्थ :—उत्तम भद्रशालके मध्यमे सीतानदीके दोनों किनारो पर स्वस्तिक [एव अञ्जन] गिरिके समान वर्णनोसे युक्त रोचन एव अ्रवतसकूट नामक दिग्गजेन्द्रगिरि हैं ॥२१५५॥

णवरि विसेसो एक्को, ईसाणिदस्स^२ वाहणो देवो ।

णामेणं वड्डसमणो, तेसु^३ लीलाए चेहुदि ॥२१५६॥

अर्थ :—विशेषता केवल (एक) यही है कि उन भवनोमे ईशानेन्द्रका वैश्रवण नामक वाहनदेव लीला पूर्वक निवास करता है ॥२१५६॥

जिन-भवन निर्देश—

सीदा - तरंगिणीए, पुब्बम्मि तडे जिणिद - पासादो ।

मंदर - उत्तर - पासे, गयदंतढभंतरे होदि ॥२१५७॥

अर्थ :—गजदन्तके अर्धन्तरभागमे सीतानदीके पूर्व तटपर श्रीर मन्दरपर्वतके उत्तर-पार्श्वभागमे जितेन्द्र-प्रासाद स्थित है ॥२१५७॥

सीदाए दक्खिणए, जिण-भवणं भट्टसाल - वण - मञ्जे ।

मंदर - पुच्च - बिसाए, पुब्बोविद - वण्णणा - 'जुत्त'^४ ॥२१५८॥

अर्थ :—भद्रशालवनके मध्यमें सीतानदीकी दक्षिण दिशामें श्रीर मन्दरकी पूर्व दिशामें पूर्वोक्त विवरण युक्त जिनभवन हैं ॥२१५८॥

पश्चोत्तर एवं नीलगिरि—

सीदा - णविए तत्तो, उत्तर - तीरम्मि दक्खिणे तीरे ।

पुब्बोविद-कम-जुत्ता, पउमोत्तर - णीस - दिग्गइंदा य ॥२१५९॥

१. द. व. क. य. उ. रावणवत्स कूडेतट्टिगिरि । २. द. व. क. य. उ. वाहणा । ३. द. व.

अर्थ :—इसके आगे सीतानदीके उत्तर और दक्षिण किनारोंपर पूर्वोक्त क्रमसे युक्त पश्चोत्तर और नील नामक दिग्गजेन्द्र पर्वत स्थित है ॥२१५६॥

णवरि विसेसो एक्को, सोमो णामेण चेट्टुदे तेसुं ।

सोहर्म्मिदस्स तहा, वाहणदेओ जमो णाम ॥२१६०॥

अर्थ :—यहाँ एक विशेषता यह है कि उन पर्वतोंपर सोमर्म्म इन्द्रके सोम और यम नामक वाहनदेव रहते हैं ॥२१६०॥

मतान्तरसे पाँच द्रहोका निर्देश—

मेरुगिरि-पुण्व - दक्षिण - पच्छिमए उत्तरम्मि पत्तोक्कं ।

सीदा - सीदोदाए, पंच दहा केइ इच्छंति ॥२१६१॥

[पाठान्तर]

अर्थ :—कितने ही (आचार्य) मेरुपर्वतके पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर, इनमेंसे प्रत्येक दिशामें सीता तथा सीतोदा नदीके पाँच द्रहोको स्वीकार करते हैं ॥२१६१॥ [पाठान्तर]

काञ्चन शैल—

ताणं उवदेसेण य, एक्केक्क - बहस्स दोसु तीरेसुं ।

पण - पण कञ्चणसेला, पत्तोक्कं होंति णियमेणं ॥२१६२॥

[पाठान्तर]

अर्थ :—उनके उपदेशसे एक-एक द्रहोके दोनों किनारोंमेंसे प्रत्येक किनारेपर नियमसे पाँच-पाँच काञ्चन शैल हैं ॥२१६२॥ (पाठान्तर)

देवकुरु क्षेत्रकी स्थिति एवं लम्बाई आदि—

मंदरगिरिद-दक्षिण - विभागगब - भहूसाल - वेदीवो ।

दक्षिण - भायम्मि पुडं, णिसहस्स य उत्तरे भाणे ॥२१६३॥

विज्जुप्पह - पुण्वस्सि, सोमणसावो य पच्छिमे भाणे ।

पुण्वावर - तीरेसुं, सीदोदे होवि देवकुरु ॥२१६४॥

अर्थ :—मन्दरपर्वतके दक्षिणभागमें स्थित भद्रशालवेदीके दक्षिण निषधके उत्तर, विद्युत्प्रभके पूर्व और सौमनसगजदन्तके पश्चिमभागमें सीतोदाके पूर्व-पश्चिम किनारोंपर देवकुरु (उत्तम भोगभूमि) है ॥२१६३-२१६४॥

णिसह - वणवेदि - पासे, तस्स य पुब्बावरेसु दीहत्तां ।

तेवण्ण - सहस्साणि, जोयण - माणां विणिद्धिं ॥२१६५॥

। ५३००० ।

अर्थ :—निषधपर्वतकी वनवेदीके पाद्वंमें उस (देवकुरु) की पूर्व-पश्चिम लम्बाई तिरपेन हजार (५३०००) योजन प्रमाण बतलाई गई है ॥२१६५॥

अट्ट - सहस्सा चउ-सय-चउतोसा मेरु-दक्खिण-दिसाए ।

सिरिभट्टसाल - वेदिय - पासे तक्खेत्ता - दीहत्तां ॥२१६६॥

। ८४३४ ।

अर्थ :—मेरुकी दक्षिणदिशामें श्री भद्रशालवेदीके पाम उस क्षेत्रकी लम्बाई आठ हजार चारसौ चौतीस (८४३४) योजनप्रमाण है ॥२१६६॥

एवकरस-सहस्साणि, पंच - सया जोयणाणि बाणउदी ।

उणवीस - हिदा दु - कला, तस्सुत्तर-दक्खिणे रुंदो ॥२१६७॥

११५६२ । ३ ।

अर्थ :—उत्तर-दक्षिणमें उसका विस्तार ग्यारह हजार पांचसौ बानबे योजन और उन्नीससे भाजित दो कलाप्रमाण अर्थात् ११५६२ ३/४ योजन प्रमाण है ॥२१६७॥

पणुवीस-सहस्साणि, णव-सय-इगिसीदि-जोवणा रुंदो ।

दो - गयदंत - समीवे, वंक - सरुवेण णिद्धिं ॥२१६८॥

२५६८१ ।

अर्थ :—दोनों गजदन्तोंके समीप उसका विस्तार वक्ररूपसे पच्चीस हजार नौसौ इक्यासी (२५६८१) योजन प्रमाण निर्दिष्ट किया गया है ॥२१६८॥

णिसह-वणवेदि-वारण-दंताचल-पास-कुंड - णिस्सरिदा ।

चउसोदि - सहस्साणि, णदीउ पविसंति^१ सीदोदं ॥२१६६॥

८४००० ।

अर्थ :—निपद्यपर्वतकी वनवेदी और गजदन्त-पर्वतके पार्श्वमे स्थित कुण्डोसे निकली हुई चौरासी हजार (८४०००) नदियां सीतोदा नदीमे प्रवेश करती है ॥२१६६॥

सुसमसुसमम्मि काले, जा भण्णिदा वण्णणा विचित्तयरा ।

सा हाणीए विहीणा, ^२एदांस्स णिसह - सेले य ॥२१७०॥

अर्थ :—सुषमसुपमा-कालके विषयमे जो अद्भुत वर्णन किया गया है, वही वर्णन बिना किसी प्रकारकी कमीके इस निषद्य शैलसे परे देवकुरुके सम्बन्धमें भी समझना चाहिए ॥२१७०॥

शाल्मली वृक्षके स्थल आदिकोका निर्देश—

णिसहस्सुत्तार-पासे, पुव्वाए दिसाए विज्जुपह-गिरिणो ।

सोदोद - वाहिणीए, पच्छिल्ल - दिसाए भागम्मि ॥२१७१॥

मंदर-गिरिद-णइरिदि-भागे खेत्ताम्मि देवकुरु - णामे ।

सम्मलि^३ - रुक्खाण थलं, रजदमयं छेट्टुदे रम्मं ॥२१७२॥

अर्थ :—देवकुरुक्षेत्रके भीतर निषद्यपर्वतके उत्तर-पार्श्वभागमे, विद्युत्प्रभ पर्वतकी पूर्व दिशामें, सीतोदा नदीकी पश्चिमदिशामें और मन्दरगिरिके नैऋत्यभागमे शाल्मलीवृक्षोका रजतमय रमणीय स्थल स्थित है ॥२१७१-२१७२॥

पंच - सय - जोयणाणि, हेट्टतले तस्स होदि वित्थारो ।

पण्णरस - सया परिही, एक्कासीदी जुबा अहिआ ॥२१७३॥

। ५०० । १५८१ ।

अर्थ :—उस स्थलका विस्तार नीचे पांचसौ (५००) योजन है और उसकी परिधि पन्द्रहसौ इक्यासी (१५८१) योजनसे अधिक है ॥२१७३॥

मञ्जिभ्रम-उदय-पमाणं, अट्टं चिय जोयणाणि एवस्स ।

सम्भतेसुं उवप्पो, दो - दो' कोसं पुढं होदि ॥२१७४॥

८ । २ ।

अर्थ :—इस स्थलकी मध्यम ऊँचाईका प्रमाण आठ योजन और सबके अन्तमे पृथक्-पृथक् दो-दो कोस प्रमाण है ॥२१७४॥

सम्मलि-रुक्खाण थलं, तिण्णिण वणा वेड्ढिवूण चेट्टंति ।

विबिह-वर-रुक्ख-छण्णा, देवासुर - मिहूण - संकिण्णा ॥२१७५॥

अर्थ :—विबिध उत्तम वृक्षोंसे युक्त और मुरामुर-युगलोसे मञ्जूर्णं तीन वन शाल्मलीवृक्षोंके स्थलको वेष्टित किए हुए हैं ॥२१७५॥

उवर्णि थलस्स चेट्टुदि, समंतदो वेदिया सुवण्णमई ।

वारोवरिम - तल्लेसुं, जिण्णिव - भवण्णिहि सपुण्णा ॥२१७६॥

अर्थ :—उस स्थलपर चारो ओर द्वारोंके उपरिमभागमे स्थित जिनेन्द्रभवनोंसे परिपूर्ण स्वर्णमय वेदिका स्थित है ॥२१७६॥

अड-जोयण-उत्तुंगो, बारस-चउ-मूल-उड्ढ-वित्थारो ।

समवट्टो रजतमप्पो, पीढो वेदीए मञ्जिभ्रमि ॥२१७७॥

८ । १२ । ४ ।

अर्थ :—इस वेदीके मध्यभागमे आठ योजन ऊँचा, मूलमें बारह योजन तथा ऊपर चार योजनप्रमाण विस्तारवाला समवृत्त (वृत्ताकार) रजतमय पीठ है ॥२१७७॥

शाल्मली वृक्षका वर्णन—

तस्स बहु-मञ्जि-बेसे, सपाव - पीढो य सम्मली-रुक्खो^१ ।

सुप्पह - णामो बहुविह - वर - रयणुज्जोय - सोहिल्लो ॥२१७८॥

अर्थ :—उस पीठके बहुमध्यभागमे पादपीठ-सहित और बहुत प्रकारके उत्कृष्ट रत्नोंके उद्योतसे सुशोभित सुप्रभ नामक शाल्मलीवृक्ष स्थित है ॥२१७८॥

उज्जेह - जोयणेणं, अट्टं चिय जोयणाणि उत्तुंगो ।

तस्सावगाढ - भागो, वज्जमओ ढोष्णिण कोसाणि ॥२१७९॥

८।२।

अर्थ :—वह वृक्ष उत्तम-योजनसे घाट योजन ऊँचा है । उसका वज्जमय भवगाढभाग दो कोस प्रमाण है ॥२१७९॥

सोहेदि तस्स खंधो, फुरंत-वर-किरण-पुस्सरागमओ ।

इगि - कोस - बहल - खुचो, जोयण-जुग-मेत्त-उत्तुंगो ॥२१८०॥

को १।२।

अर्थ :—उम वृक्षका स्कन्ध एक कोस बाह्यसे युक्त, दो योजन ऊँचा, पुष्यरागमय (पुष्पराजमय) और प्रकाशमान उत्तम किरणोंसे शोभायमान है ॥२१८०॥

जेट्टाओ साहाओ, चत्तारि हवंति चउविसा - भागे ।

छज्जोयण - दीहाओ, तेत्तिय - मेत्तंतराउ पत्तोक्कं ॥२१८१॥

६।६।

अर्थ :—इस वृक्षकी चारो दिशाओमें चार महाशाखाएँ हैं । उनमेंसे प्रत्येक शाखा छह योजन लम्बी और इतने ही अन्तराल सहित है ॥२१८१॥

साहासुं पत्ताणि, मरगय - वेरुलिय - णीलइंबाणि ।

बिबिहाइं कक्केयण - चामीयर - विद्वुममयाणि ॥२१८२॥

अर्थ :—शाखाओंमें मरकत, वैडूर्य, इन्द्रनील, कर्कतन, स्वर्ण और मृगसे निर्मित विविध प्रकारके पत्ते हैं ॥२१८२॥

सम्मलितरुणो अंकुर-कुसुम-फलाणि विचित्त-रयणाणि ।

पण - वण्ण - सोहिदाणि, निरुवम - रुवारिण रेहंति ॥२१८३॥

अर्थ :—शाखमन्नीवृक्षके अंकुर, फूल एवं फल पाँच वर्णोंसे शोभित हैं, अनुपम रूपवाले हैं तथा अद्भुत रत्नस्वरूपसे शोभायमान हैं ॥२१८३॥

जीउप्यत्ति-सयाणं, कारण - भूदो अणाइरिणहणो^१ सो ।

सम्मसि - रुक्खो^२ चामर-किंकिरिण-^३घंटादि-कय-सोहो ॥२१८४॥

अर्थ :—(पृथ्वीकायिक) जीवोकी उत्पत्ति एवं नाशका कारण होते हुए भी स्वयं अनादि-निघन रहकर वह शात्मली वृक्ष चामर, किंकिणी और घण्टादिसे सुसोभित है ॥२१८४॥

जिनभवन एवं प्रासाद—

तद्दक्खिण-साहाए, जिंरिण-भवणं विचित्त - रयणमयं ।

चउ-हिव-ति-कोस-उदयं, कोसायामं तदद्ध - वित्थारं ॥२१८५॥

३।को १।३।

अर्थ :—उस वृक्षकी दक्षिण शाखापर चारसे भाजित तीन (३) कोस प्रमाण ऊँचा, एक कोस लम्बा और आधे (३) कोस विस्तारवाला अद्भुत-रत्नमय जिनभवन है ॥२१८५॥

जं पंडुग - जिणभवणे, भणियं णिस्सेस-वण्णं किं पि ।

एवस्सि^४ णादव्व, सुर - दुंडुहि - सह - गहिरयरे^५ ॥२१८६॥

अर्थ :—पाण्डुकवनमे स्थित जिनभवनके विषयमे जो कुछ भी वर्णन किया गया है वही सम्पूर्ण वर्णन देवदुन्दुभियोके शब्दोसे अतिशय गम्भीर इस जिनेन्द्रभवनके विषयमे भी जानना चाहिए ॥२१८६॥

सेसासुं साहासुं, कोसायामा तदद्ध - विक्खंभा^६ ।

पादोण - कोस - तुंगा, हवन्ति एक्केक्क - पासादा ॥२१८७॥

को १।३।३।

अर्थ :—अवशिष्ट शाखाओपर एक कोस लम्बे, आधाकोस चौड़े और तीन कोस ऊँचे एक-एक प्रासाद हैं ॥२१८७॥

चउ-तोरण-वेवि-जुवा, रयणमया विविह-दिव्व-खूव-घडा ।

पजलंत - रयण - शीवा, ते सव्वे धय - वदाइण्णा ॥२१८८॥

१. द. व. गिहणा । २. द. व. रुक्खा । ३. द. व. किंकिणिणारादिकय सोहा । ४. द. व. एवस्सि । ५. द. व. क. गहिरयरो । ६. द. व. क. ज. व. उ. विक्खंभा ।

अर्थ :—वे सब रत्नमय प्रासाद चार तोरण-वेदियों सहित हैं, विविध प्रकारके दिव्य धूप-घटोंसे संयुक्त हैं, जलते हुए रत्नदीपकोमे प्रकाशमान हैं और ध्वजा-पताकाओंसे व्याप्त हैं ॥२१८८॥

सयणासण-पमुहाणि, भवणेसुं णिम्मलाणि विरजाणि ।

पकिदि-मउवाणि तणु - मण - गयणाणवण-सरूवाणि ॥२१८९॥

अर्थ :—इन भवनोंमें घूलिसे रहित, शरीर, मन एवं नयनोंको आनन्ददायक और स्वभावसे मृदुल निर्मल शय्याये एवं आसनादिक स्थित हैं ॥२१८९॥

भवनोंमे निवास करनेवाले देवोंका वर्णन—

चेट्टुदि तेसु पुरेसुं, वेणू णामेण वेंतरो देवो ।

बहुविह - परिवार - जुवो, दुइज्जओ वेणुघारि चि ॥२१९०॥

अर्थ :—उन पुरोंमें बहुत प्रकारके परिवारमें युक्त वेणु एवं वेणुधारी नामके व्यन्तर देव रहते हैं ॥२१९०॥

सम्महंसण - सुद्धा, सम्माइट्टीण वच्छला दोण्णि ।

ते दस - चाउत्तंगा, पत्तोवकं एक्क - पल्लाऊ ॥२१९१॥

अर्थ :—सम्यग्दर्शनसे शुद्ध और सम्यग्दृष्टियोंसे प्रेम करनेवाले उन दोनों देवोंसे प्रत्येक दस धनुष ऊंचा एवं एक पल्य प्रमाण आयुवाला है ॥२१९१॥

वेदियोंका निरूपण—

सम्मलि-दुमस्स बारस, समंतदो होति दिव्व - चेदीओ ।

चउ-गोउर - जुत्ताओ, फुरंत - वर - रयण - सोहाओ ॥२१९२॥

अर्थ :—शाल्मलीवृक्षके चारो ओर चार गोपुरोंसे युक्त और प्रकाशमान उत्तम रत्नोंसे मुशोभित बारह दिव्य वेदियाँ हैं ॥२१९२॥

उस्सेध' - गाउदेणं, वे - गाउदभेत्त - उस्सिवा ताओ ।

पंच - सया चावाणि, रुद्धेणं होति वेदीओ ॥२१९३॥

अर्थ :- वे वेदियाँ उत्सेधकोससे दो कोस प्रमाण ऊँची और पांचसौ धनुष प्रमाण विस्तार वाली हैं ॥२१६३॥

कुलगिरि - सरिया मंबर-कुंड-प्पहुदीण दिव्व-वेदीओ ।

उण्छेह - प्पहुदीहि, सम्मलि - तल - बेदि सरिसाओ ॥२१६४॥

अर्थ :- कुलाचल, सरिता, मन्दर, कुण्ड आदि की (स्थित) दिव्य-वेदियोंका उत्सेधादि शाल्मलीवृक्षकी तल-वेदीके सदृश समझना चाहिए ॥२१६४॥

पढमाए भूमिए, सुप्पह - णामस्स सम्मलि - दुमस्स ।

चेट्टदि उववण - संडो अण्णेण' खु सम्मलि - दुमस्स ॥२१६५॥

अर्थ :- सुप्रभ-नामक शाल्मली वृक्षकी प्रथम-भूमिमें अन्य शाल्मली वृक्षोंसे युक्त उपवन-खण्ड है ॥२१६५॥

तत्तो बिदिया भूमि, उववण - संडेहि विविह-कुमुमेहि ।

पोखररणो - धावोहि, सारस - पहुदीहि रमणिज्जा ॥२१६६॥

अर्थ :- इसके आगे द्वितीय भूमि विविध प्रकारके फूलोंवाले उपवन-खण्डों, पुष्करिणियों, वापियों एवं सारस आदिकों (पक्षियों) से रमणीय है ॥२१६६॥

बिदियं व तदिय-भूमि, णवरि विसेसो विचित्त-रयणमया ।

अट्टत्तर - सय - सम्मलि - रुक्खा तीए समतेणं ॥२१६७॥

अर्थ :- दूसरी भूमिकें सदृश तीसरी भूमि भी है । किन्तु विग्रेपता केवल यह है कि तीसरी भूमिमें चारों ओर विचित्र रत्नोंमें निर्मित एकसौ आठ शाल्मलीवृक्ष हैं ॥२१६७॥

अद्धेण पमाणेहि, ते सब्बे होंति सुप्पहाहितो ।

एवेसुं चेट्ट'ते, वेणुदुगाणं महामण्णा' ॥२१६८॥

अर्थ :- वे सब वृक्ष सुप्रभवृक्षके (प्रमाणमें) आधे प्रमाणवाले हैं । इनके ऊपर वेगु और वेणुधारी (नामके दो) महामान्य देव निवास करते हैं ॥२१६८॥

तदियं ध तुरिम-भूमि, चत्तारो णवरि सम्मली-रुक्खा ।

पुव्व - विसाए तेसुं, चउ - देवीओ य वेणु - जुगलस्स ॥२१६९॥

अर्च :—तीसरी भूमि सदृश ही चौथी भूमि है। विशेषता यह है कि इसकी पूर्ब दिशामें चार शाल्मलीवृक्ष हैं। जिनपर वेणु एवं वेणुधारी देवोंकी चार देवियां रहती हैं ॥२१९६॥

तुरिमं च 'पंचम-मही, जवरि विसेसो ण सम्मत्ती-रक्खा' ।

तस्य ह्वंति विचिता, वावीओ विविह - रुवाओ' ॥२२००॥

अर्थ :—चौथी भूमिके सदृश पांचवी भूमि भी है। विशेषता केवल यह है कि इस भूमिमें शाल्मलीवृक्ष नहीं हैं, परन्तु विविध रूपवाली अद्भुत वापियां हैं ॥२२००॥

छट्टोए वण - संडो, सत्तम - भूमोए चड - विसाभागे ।

सोलस - सहस्स - रुक्खा, वेणु - जुगस्संग - रक्खाणं ॥२२०१॥

८००० । ८००० ।

अर्थ :—छठी भूमिमें वनखण्ड हैं और सातवी भूमिके भीतर चारों दिशाओंमें वेणु एवं वेणुधारी देवोंके अङ्गरक्षक देवोंके सोनह हजार अर्थात् आठ-आठ हजार (८०००-८०००) वृक्ष हैं ॥२२०१॥

सामानिय - देवाणं, चत्तारो होंति सम्मलि - सहस्सा ।

पवणेसाण-विसासुं, उत्तर - भागम्मि खेणु - जुगलस्स ॥२२०२॥

२००० । २००० ।

अर्थ :—[आठवी भूमिमें] वायव्य, ईशान और उत्तरदिशा भागमें वेणु एवं वेणुधारीके सामानिक देवोंके चार हजार अर्थात् एक-एक देवके दो-दो हजार (२०००-२०००) शाल्मली वृक्ष हैं ॥२२०२॥

बत्तीस-सहस्साणि, सम्मलि-रक्खाणि अणल - विडभाए ।

भूमोए जवमीए, अरुभंतर - वेव - परिसाणं ॥२२०३॥

। १६००० । १६००० ।

अर्थ :—नवीं भूमिके भीतर आग्नेय दिशामें अभ्यन्तर पारिषद देवोंके बत्तीस हजार (१६०००, १६०००) शाल्मलीवृक्ष हैं ॥२२०३॥

पुह पुह बीस-सहस्सा, सम्मलि-रुक्खाण बखिण्णे भागे ।

बसम-खिदोए मञ्जिम्म - परिस - सुराणं च वेणु - जुणे ॥२२०४॥

२०००० । २०००० ।

अर्थ :—दसवीं पृथिवीके दक्षिणभागमे वेणु एवं वेणुघारी सम्बन्धी मध्यम पारिषद देवोंके पृथक्-पृथक् बीस-बीस हजार (२००००-२००००) शाल्मलीवृक्ष हैं ॥२२०४॥

पुह चउबीस-सहस्सा, सम्मलि-रुक्खाण णड्ढरिबि-विभागे ।

एक्कारसम - महोए, बाहिर - परिसामराण बोण्णं पि ॥२२०५॥

२४००० । २४००० ।

अर्थ :—द्वारहवी भूमिके नैऋत्य-दिग्दिग्भागमें उक्त दोनो देवोंके बाह्य पारिषद देवोंके पृथक्-पृथक् चौबीस-चौबीस हजार (२४०००-२४०००) शाल्मलीवृक्ष हैं ॥२२०५॥

सत्तेसु य अणिएसुं, अहिवह - देवाण सम्मली - रुक्खा ।

बारसमाए महोए, सत्त - च्चिय पण्णियम - बिसाए ॥२२०६॥

७ । ७ ।

अर्थ :—द्वारहवी भूमिकी पश्चिमदिशामें सात धनीकोंके अधिपति देवोंके सात ही शाल्मली वृक्ष हैं ॥२२०६॥

लक्खं चाल - सहस्सा, बीसुत्तर-सय-जुवा य ते सवे ।

रम्मा अणाइण्हणा, संमिलिवा' सम्मली - रुक्खा ॥२२०७॥

१४०१२० ।

अर्थ :—रमणीय और अनादि-निघन वे शाल्मली वृक्ष सब मिलकर एक लाख चालीस हजार एकसी बीस (१४०१२०) हैं ॥२२०७॥

तोरण - वेदी - जुत्ता, सपाव - पीढा अकिट्ठिमायारा ।

वर-रयण-अच्चिद-साहा, सम्मलि - रुक्खा विरार्यंति ॥२२०८॥

अर्थ :—तोरण-वेदियोसे युक्त, पादपीठों सहित, उत्तम-रत्न-सहित शास्त्राग्रेषु संयुक्त अकृत्रिम आधारवाले वे सब शास्त्रमयी वृक्ष विशेष सुशोभित हैं ॥२२०८॥

वज्रजद - जोल - मरगय - रविकंत-मयंककत-पद्मबोहि ।

णिष्णासि - अंधयारं, सुप्पह - रुक्खस्स भादि ^१थलं ॥२२०९॥

अर्थ :—मुप्रभवृक्षका स्थल वज्र, इन्द्रनील, मरकत, सूर्यकान्त और चन्द्रकान्त आदिक मणिविशेषोंसे अन्धकारको नष्ट करता हुआ सुशोभित होता है ॥२२०९॥

सुप्पह^१-थलस्स विउत्ता, समंतवो तिण्णि होंति वण-संडा ।

विबिह-फल-कुसुम-पल्लव-सोहिल्ल-विचित्त-तथ - छण्णा ॥२२१०॥

अर्थ :—सुप्रभवृक्षके स्थलके चारों ओर विविध प्रकारके फल, फूल और पत्तोंसे सुशोभित नाना प्रकारके वृक्षोंसे व्याप्त विस्तृत तीन वन-खण्ड है ॥२२१०॥

प्रासाद, पुष्करिणी एव कूटोंका वर्णन—

तेसुं पढमम्मि वणे, चत्तारो चउ - दिसासु पासादा ।

चउ-हिद-ति-कोस-उदया, कोसायामा तवद्ध-बिस्वारा ॥२२११॥

३ । १ । ३ ।

अर्थ :—उनमेंसे प्रथम वनके भीतर चारों दिशाओंमें पौन (३) कोस ऊँचे, एक कोस लम्बे और आधा (३) कोस विस्तारवाले चार प्रासाद हैं ॥२२११॥

भवणाणं विदिसासुं, पत्तेकं होंति विव्व - रुवाणं ।

चउ चउ पोक्खरणीओ, दस - जोयण-मेत्त-गाढाओ ॥२२१२॥

अर्थ :—दिव्यरूप वाले इन भवनोंमेंसे प्रत्येककी विदिशाओंमें दस योजन प्रमाण गहरी चार-चार पुष्करिणियाँ हैं ॥२२१२॥

पणवीस - जोयणाई, रुवं पण्णास ताव बोहत्तं ।

विबिह-जल-णिबह^३-मंडिद-कमलुप्पल - कुमुद - संछण्णं ॥२२१३॥

२५ । ५० ।

१. द. व. क. य. उ. तद । २. व. सुप्पहवत्तस्स, व. क. उ. सुप्पहवत्तस्स । ३. व. व. क. य. व.

अर्थ :—जल समूहसे मण्डित, विविध प्रकारके कमल, उत्पल, श्रौर कुमुदोंसे व्याप्त उन पुष्करिणियोंका विस्तार पञ्चीस (२५) योजन एवं लम्बाई पचास योजन प्रमाण है ॥२२१३॥

मणिमय-सोबाणाओ^१, जलचर-जस्ताओ^२ ताओ सोहंति ।

अमर - मिहुनाण कुंकुम - पंकेजं पिजर - जलाओ ॥२२१४॥

अर्थ :—जलचर जीवोंसे रहित वे पुष्करिणियाँ मणिमय सोपानोंसे शोभित हैं और देव-युगलोंके कुंकुम-पङ्कजे पीत जलवाली हैं ॥२२१४॥

पुह पुह पोक्खरणीणं, समंतदो होंति अट्ट कूडाणि ।

एदाण - उदय - पट्टविसु, उदएसो संपइ पणट्ठो ॥२२१५॥

अर्थ :—पुष्करिणियोंके चारों ओर पृथक्-पृथक् घाट कूट हैं । इन कूटोंकी ऊँचाई आदिका उपदेश इस समय नष्ट हो चुका है ॥२२१५॥

वण-पासाद-समाणा, पासादा होंति ताण उवरिम्मि ।

एवेसुं वेट्टुत्ते, परिवारा वेणु - जुगलस्स ॥२२१६॥

अर्थ :—उन कूटोंके ऊपर वन-प्रासादोंके सदृश प्रासाद हैं । इनमें वेणु एवं वेणुधारी देवोंके परिवार रहते हैं ॥२२१६॥

उत्तरकुरुका निदेश—

मंदर-उत्तर-भागे, दक्खिण - भागम्मि णील - सेलस्स ।

सीदाए दो - तडेसु, पच्छिम - भागम्मि मालबंतस्स ॥२२१७॥

पुब्बाए गंधमादण - सेलस्स बिसाए होवि रमण्णिज्जा ।

वामेण उत्तरकुरु, दक्खिणादो भोगभूमि ति ॥२२१८॥

अर्थ :—मन्दरपर्वतके उत्तर, नीलशैलके दक्षिण, मात्स्यवन्तके पश्चिम और गन्धमादन-शैलके पूर्व दिग्दिग्भागमें सीतानदीके दोनों किनारोंपर 'भोगभूमि' के रूपमें विख्यात रमणीय उत्तरकुरु नामक क्षेत्र है ॥२२१७-२२१८॥

देवकुरु - वण्णणाहि, सरिसाओ वण्णणाओ एदस्स ।

णवरि विसेसो सम्मलि-तरु - बरण्णदी तत्थ एण हवति ॥२२१६॥

अर्थ :— इसका सम्पूर्ण वर्णन देवकुरुके वर्णनके ही सदृश है । विशेषता केवल यह है कि यहाँ शात्मलीवृक्षके परिवार (वनस्पति) नहीं है ॥२२१६॥

जम्बूवृक्ष—

मंदर - ईसाणविसाभागे णीलस्स दक्खिणे पासे ।

सोदाए पुठव - तडे, पच्छिम - भागम्मि मालबंतस्स ॥२२२०॥

जंबू - रुक्खस्स 'थलं, कणयमयं होदि पीठ - वर-जुत्तं ।

विविह-वर-रयण-खच्चिवा, जंबू - रुक्खा हवति एवस्सि ॥२२२१॥

अर्थ :— मन्दरपर्वतके ईशानदिशाभागमें, नीलगिरिके दक्षिणपार्श्वभागमें श्रीर माल्यवन्तके पश्चिमभागमें सीतानदीके पूर्व तटपर उत्तम पीठ युक्त जम्बूवृक्षका स्वर्णमय स्थल है । इस स्थल पर विविध प्रकारके उत्कृष्ट रत्नोसे खचित जम्बूवृक्ष हैं ॥२२२०-२२२१॥

सम्मलि-रुक्ख-सरिच्छं, जंबू - रुक्खाण वण्णणं सयलं ।

एणवरि विसेसा वेंतरदेवा चेदुंति अण्णणा ॥२२२२॥

अर्थ :— जम्बूवृक्षोका सम्पूर्ण वर्णन शात्मलीवृक्षोके ही सदृश है । विशेषता केवल इतनी है कि यहाँ अन्य-अन्य व्यन्तरदेव रहते हैं ॥२२२२॥

तेसुं पहाण - रुक्खे, जिण्णद - पासाद - भूसिदे रम्भे ।

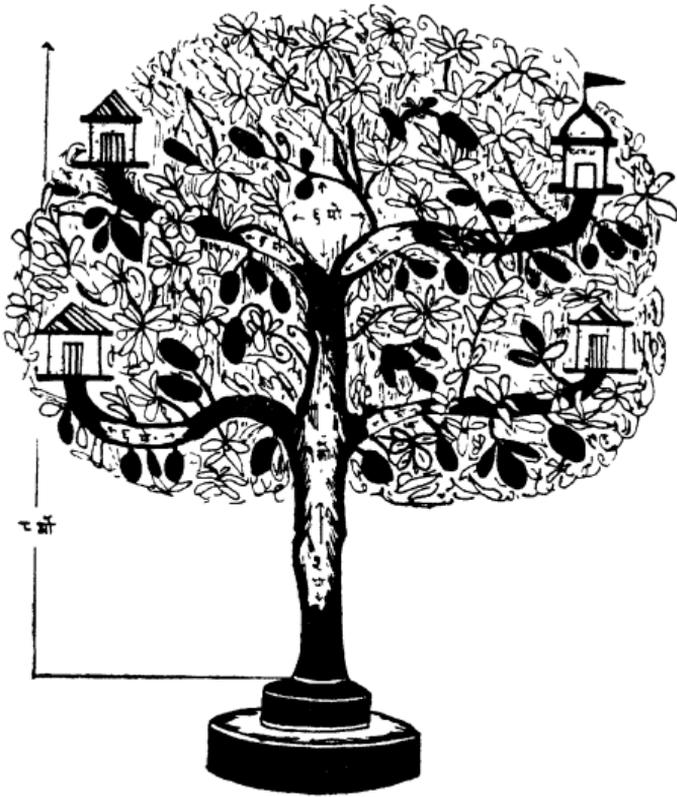
आदर - अणादरक्खा, णिवसंते वेंतरा देवा ॥२२२३॥

अर्थ :— उनमें रमणीय जिनेन्द्रप्रासादसे विभूषित प्रधान जम्बूवृक्षपर आदर एव अनादर नामक व्यन्तरदेव निवास करते हैं ॥२२२३॥

सम्महंसण - सुद्धा, सम्माह्वट्ठीण वच्छला दोण्णि ।

सयलं जंबूदीर्घं, भुंजंते एक्क - छत्तीर्षं ॥२२२४॥

अर्थ :— सम्यग्दर्शनसे शुद्ध श्रीर सम्यग्दृष्टियोंके प्रेमी वे दोनों देव सम्पूर्ण जम्बूद्वीपको एक छत्र सत्ताके सदृश भोगते हैं ॥२२२४॥



पूर्वापर विदेहोमे क्षेत्रोका विभाजन—

पुष्पावर - भागेलुं, मंदर - सेलस्स सोलं - सख्येय^१ ।

विजयार्णि^२ पुष्पावर - विदेह - णामाणि खेहुंति ॥२२३५॥

१६ ।

१ द. ब. क. ज य उ. सख्येय । २. द. ब. य. विजयार्ण ।

अर्थ :—मन्दरपर्वतके पूर्व-पश्चिमभागोंमें पूर्व-अपर-विदेह नामक सोलह क्षेत्र स्थित हैं ॥२२२५॥

सीवाए उभएसुं, पासेसुं अट्ट अट्ट कय - सीमा ।
चउ-चउ-बक्खारेहिं, विजया तिहि-तिहि विभंग-सरियाहिं ॥२२२६॥

अर्थ :—सीतानदीके दोनो पार्श्वभागोंमें चार-चार वक्षार पर्वत और तीन-तीन विभंग-नदियोंसे सीमित आठ-आठ क्षेत्र हैं ॥२२२६॥

पुब्ब - विदेहस्संते, जंबूदीवस्स जगदि - पासम्मि ।
सीवाए दो - तडेसुं, देवारण्णं ठिवं रम्मं ॥२२२७॥

अर्थ :—पूर्व विदेहके अन्तमें जम्बूद्वीपकी जगतीके पार्श्वमें सीतानदीके दोनों किनारोंपर रमणीय देवारण्य स्थित हैं ॥२२२७॥

सीवोवाए दोसुं, पासेसुं अट्ट - अट्ट कय - सीमा ।
चउ-चउ-बक्खारेहिं, विजया तिहि-तिहि विभंग-सरियाहिं ॥२२२८॥

अर्थ :—सीतोदाके दोनों पार्श्वभागोंमें, चार-चार वक्षारपर्वत और तीन-तीन विभंग-नदियोंसे सीमित आठ-आठ क्षेत्र है ॥२२२८॥

अवर - विदेहस्संते, जंबूदीवस्स जगदि - पासम्मि ।
सीवोवाट्टु - तडेसुं, भूवारण्णं पि चेट्टेदि ॥२२२९॥

अर्थ :—अपर विदेहके अन्तमें जम्बूद्वीपकी जगतीके पार्श्वमें सीतोदानदीके दोनों किनारों-पर भूतारण्य भी स्थित हैं ॥२२२९॥

दोसुं पि विदेहेसुं, बक्खारगिरी विभंग - सिधूओ ।
चेट्टंते एक्केक्कं, अंतरिदूष्णं सहावेणं ॥२२३०॥

अर्थ :—दोनों ही विदेहोंमें स्वभावसे एक-एकको व्यवहित करके वक्षारगिरि और विभंग नदियाँ स्थित हैं ॥२२३०॥

सीवाए उत्तर - तडे, पुब्बस्सि भहसास - वेदीवो ।
धीलस्स दक्खिणंते, पढाहिणेषं हवति ते विजया ॥२२३१॥

अर्थ :—वे क्षेत्र सीतानदीके उत्तर किनारेसे भद्रशालवेदीके पूर्व और नीलपर्वतके दक्षिणान्तमे प्रदक्षिणरूपसे स्थित हैं ॥२२३१॥

विदेहस्थ बत्तीस क्षेत्रोंके नाम—

कच्छा सुकच्छा महाकच्छा तुरिमा कच्छकावदी ।
 आवत्ता लंगलावत्ता पोक्खला पोक्खलावदी ॥२२३२॥
 वच्छा सुवच्छा महावच्छा तुरिमा वच्छकावदी ।
 रम्मा सुरम्मगा वि य, रमणिज्जा मंगलावदी ॥२२३३॥
 पम्मा सुपम्मा महापम्मा तुरिमा पम्मकावदी ।
 संखा एलिणा एामा, कुमुदा सरिदा तथा ॥२२३४॥
 वप्पा सुवप्पा महावप्पा तुरिमा, वप्पकावदी ।
 गंधा सुगंध - एामा, य गंधिला गंधमालिणी ॥२२३५॥

अर्थ :—१ कच्छा, २ सुकच्छा, ३ महाकच्छा, ४ कच्छकानती ५ आवर्ता, ६ लागलावर्ता, ७ पुष्कला, ८ पुष्कलावती; १ वत्सा, २ सुवत्सा, ३ महावत्सा, ४ वत्सकावती, ५ रम्पा, ६ सुरम्पका, ७ रमणीया, ८ मंगलावती; १ पम्पा, २ सुपम्पा, ३ महापम्पा, ४ पम्पाकावती, ५ शङ्खा, ६ नलिना, ७ कुमुदा, ८ सरित्; १ वप्रा, २ सुवप्रा, ३ महावप्रा, ४ वप्रकावती, ५ गन्धा, ६ सुगन्धा, ७ गन्धिला और ८ गन्धमालिनी, इस प्रकार क्रमशः ये उन आठ-आठ क्षेत्रोंके नाम हैं ॥२२३२-२२३५॥

पूर्वविदेहस्थ आठ गजदन्तोंके नाम—

णामेण चित्तकूडो, पडमो बिदिओ हवे णलिणकूडो ।
 तदिओ वि पउमकूडो, चउत्थओ एक्क - सेलो य ॥२२३६॥
 पंचमओ वि तिकूडो, छट्ठो वेसमण - कूड - णामो य ।
 सत्तमओ तह अजणसेलो आदंजण' त्ति अट्टमओ ॥२२३७॥
 एदे गयबंतगिरी पुब्बविदेहम्मि अट्टु चेट्टुते ।
 सव्वे पदाहिणेणं, उववण - पोक्खरणि - रमणिज्जा ॥२२३८॥

अर्थः—नामसे प्रथम चित्रकूट, द्वितीय नलिनकूट, तृतीय पद्मकूट, चतुर्थ एकशैल, पाँचवाँ त्रिकूट, छठा वैश्रवणकूट, सातवाँ भ्रञ्जनशैल तथा आठवाँ आत्माञ्जन, इसप्रकार उपवन एवं वापिकाश्रोसे रमणीय ये सब आठ गजदन्तपर्वत पूर्वविदेहमें प्रदक्षिणरूपसे स्थित हैं ॥२२३६-२२३८॥

अपर विदेहस्थ आठ गजदन्त—

सड्ढाबदि'-विजडावदि-आसीविसया सुहाबहो तुरिमो ।

चंदगिरि - सूर - पव्वद - णागगिरी देवमालो त्ति ॥२२३९॥

एदे अवर - विदेहे, चारणबंताचला ठिवा अट्टु ।

सव्वे पदाहिणेणं, उववण - वेदी - पह्दि - जुत्ता ॥२२४०॥

अर्थः—श्रद्धावान्, विजटावान्, आशीविषक, सुखावह, चन्द्रगिरि सूर्यपर्वत नागगिरि एवं देवमाल, इसप्रकार उपवन-वेदी-आदिसे समुक्त ये सब आठ गजदन्तपर्वत प्रदक्षिण रूपसे अपर-विदेहमें स्थित हैं ॥२२३९-२२४०॥

पूर्वापर विदेहस्थ विभंगनदियोंके नाम—

बह - गह - पंकवदीओ, तत्तजला पंखमी य मत्तजला ।

उम्मत्तजला छट्ठी, पुव्वविदेहे विभंगणई ॥२२४१॥

अर्थः—द्रहवती, ग्राहवती, पङ्कवती, तप्तजला, मत्तजला और उन्मत्तजला, ये छह विभंग-नदियाँ पूर्वविदेहमें हैं ॥२२४१॥

खीरोदो सीतोदा, ओसह्वाहिणि - गभीरमालिणिया ।

फेणम्मिमालिणीओ अवर - विदेहे विभंग - सरियाओ ॥२२४२॥

अर्थः—क्षीरोदा, सीतोदा, शीघ्रवाहिनी (स्रोतवाहिनी), गभीरमालिनी, फेणमालिनी और ऊर्मिमालिनी ये छह विभंगनदियाँ अपरविदेहमें स्थित हैं ॥२२४२॥

[चित्र अगले पृष्ठ पर देखिये]

कच्छादि क्षेत्रोंका विस्तार—

बोण्णि सहस्सा दु-सया, बारस-जुत्ता सर्धंस झट्ट - हिवा ।

पुब्बावरेण हं वो 'एककेवके होदि बिजयम्मि ॥२२४३॥

२२१२ । २ ।

अर्थ :-प्रत्येक क्षेत्रका पूर्वापर (पूर्वसे पश्चिम तकका) विस्तार दो हजार दोसौ बारह योजन और घाटसे भाजित सात अश (२२१२है योजन) प्रमाण है ॥२२४३॥

वक्षार पर्वत और विभगा नदियोंका विस्तार—

पंच-सय-जोयणाणि, पुह पुह वक्खार-सेल-विक्खंभो ।

णिय - णिय - कुंडुप्पत्ती, ठाणे कोसाणि पण्णासा ॥२२४४॥

५०० । को ५० ।

बासो विभंग - कल्लोलिणी^१ सघ्वाण होदि पत्तेक्कं ।

सीदा - सीबोद - णई - पवेस - बेसम्मि पंच-सय-कोसा ॥२२४५॥

५०० ।

अर्थ :-वक्षारसैलोंका पृथक्-पृथक् विस्तार पाँचसौ (५००) योजन और सब विभंग-नदियोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार अपने-अपने कुण्डके पास उत्पत्तिस्थानमें पचास (५०) कोस तथा सीता-सीतोदा नदियोंके पास प्रवेश स्थानमें पाँचसौ (५००) कोस प्रमाण है ॥२२४४-२२४५॥

बनोंका विस्तार—

पुब्बावरेण जोयण, उण्णत्तीस - सयाणि तह य बाबीसं ।

हं वो देवारण्णे, भूदारण्णे य परोवकं ॥२२४६॥

२६२२ ।

अर्थ :- देवारण्य और भूतारण्यमेंसे प्रत्येकका पूर्वापर विस्तार दो हजार नौ सौ बाईस (२६२२) योजन प्रमाण है ॥२२४६॥

१. व. ब. क. ज. व. उ एकैवकी । २. द. घ. कत्ती एण्णत्ती, व. क. य. उ. तत्ती एदीण्ण ।

क्षेत्र आदिकोके प्रमाण निकालनेके नियम—

विजय-गयदंत-सरिया, देवारण्याणि भद्रशाल - वणं ।

रिणय-णिणय-फलेहि गुणिदा, कादव्वा मेरु - फल-जुता ॥२२४७॥

एवाणं रचिदूणं, पिडफलं जोयजेक्क - लक्खम्मि ।

सोहिय णियंक्क - भजिवे, जं सब्भइ तस्स सो वासो ॥२२४८॥

अर्थ :—विजय (क्षेत्र), गजदन्त, नदी, देवारण्य और भद्रशाल, इनको अपने-अपने फलोंसे (क्रमशः १६, ८, ६, २, २ से) गुणा करके मेरु फलमें जोड़े, पश्चात् इनको जोड़नेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसको एक लाख योजनमेंसे घटाकर अपने-अपने अकोंका भाग देनेपर जो प्रमाण आवे उतना उस क्षेत्रका विस्तार होता है ॥२२४७-२२४८॥

बिरोधार्थ .—जिस मेरु, क्षेत्र, गजदन्त, विभंगा नदी, देवारण्यवन एवं भद्रशाल आदिका पूर्व-पश्चिम व्यास प्राप्त करना हो उसे छोड़कर अन्य सभीके अपने-अपने व्यासोंको अपने-अपने गुणाकार (क्षेत्र व्यास २२१२ $\frac{१}{२}$ यो० × १६, वक्षार व्यास ५०० यो० × ८, विभंगा व्यास १२५ यो० × ६, देवारण्य २६२२ यो० × २ और भद्रशालका व्यास २२००० यो० × २) से गुणाकर मेरुव्यास १०००० योजन में जोड़े और योगफलको जम्बूद्वीपके व्यासमेंसे घटानेपर जो अवशेष रहे उसे विवक्षित क्षेत्र आदिके प्रमाणसे भाजित करनेपर इष्ट क्षेत्र आदिका व्यास प्राप्त हो जाता है ।

क्षेत्रविस्तार—

चउ-णव-पण-चउ-छक्का सोहिय अंक्कमेण वासादो ।

सेसं सोलस - भजिवं, विजयाणं जाण विक्खंभो ॥२२४९॥

६४५६४ । २२१२ $\frac{१}{२}$ ।

अर्थ :—चार, नौ, पाँच, चार और छह इस अङ्क क्रमसे उत्पन्न हुई (६४५६४) संख्याको जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे कम करके जो शेष रहे उसमें सोलहका भाग देनेपर जो प्राप्त हो उसे क्षेत्रोंके विस्तारका (२२१२ $\frac{१}{२}$ यो०) प्रमाण जानना चाहिए ॥२२४९॥

बिरोधार्थ :—इस गाथामें विदेहस्थ सोलह क्षेत्रोंमेंसे एक क्षेत्रका विस्तार निकालनेकी प्रक्रिया दर्शाई गयी है । यथा—

[(वक्षार व्यास ५०० × ८ स्व संख्या) = ४०००] + [(विभंग व्यास १२५ × ६) = ७५०] + [(दे० व्या० २६२२ × २) = ५८४४] + [(भ० व्या० २२०० × २) = ४४००] + मेरु व्यास १०००० यो० — ६४५६४ यो०) [(जम्बूद्वीपका व्यास १००००० यो० — ६४५६४ यो०) ÷ १६] = २२१२६ योजन प्रत्येक क्षेत्रका व्यास ।

वक्षारविस्तार—

छण्णउदि - सहस्साणि, वासावो जोयणाणि अ्रवणिज्जं ।

सेसं अ्रट्ट - विहरां, वक्षारगिरीण विक्खंभो ॥२२५०॥

६६००० । ५०० ।

अर्थ :—जम्बूद्वीपके विस्तारमेसे छद्यानबं हजार (६६०००) योजन कम करके शेषको आठसे विभक्त करनेपर (५०० योजन) वक्षार पर्वतका विस्तार निकलता है ॥२२५०॥

विशेषार्थ :—[(२२१२६ × १६) + (१२५ × ६) + (२६२२ × २) + (२२०० × २) + १००००] = ६६००० योजन ।

$$= \frac{१००००० - ६६०००}{८} = ५००$$
 योजन विस्तार प्रत्येक वक्षार पर्वतका प्राप्त हुआ ।

विभग-विस्तार—

णवणउदि-सहस्साणि, विक्खंभावो^१ य दु-सय पण्णासा ।

सोहिय विभंग - सरिया - वासो सेसस्स छ्णभागे ॥२२५१॥

६६२५० । १२५ ।

अर्थ :—जम्बूद्वीपके विस्तारमेसे निन्यानबं हजार दोसौ पचास (६६२५० यो०) कम करके शेषके छह भाग करने पर विभंगनदियोंका विस्तार—(१२५ यो०) प्रमाण जाना जाता है ॥२२५१॥

‘.—[(२२१२६ × १६) + (५०० × ८) + (२६२२ × २) + (२२०० × २) + १००००] = ६६२५० योजन ।

$$= \frac{१००००० - ६६२५०}{६} = १२५$$
 योजन व्यास ।

देवारण्य विस्तार—

चउणउवि-सहस्ताणि, सोहिय वासा छपण-एक-सयं ।

सेसस्त अद्धमेसं, देवारण्णाण विक्खंभो ॥२२५२॥

६४१५६ । २६२२ ।

अर्थ :—जम्बूद्वीपके विस्तारमेसे चीरानबे हजार एकसौ छपन (६४१५६ यो०) घटाकर शेषके अर्धभाग प्रमाण देवारण्योंका विस्तार है ॥२२५२॥

विशेषार्थ :—[(२२१२३ × १६ = ३५४०६) + (५०० × ८ = ४०००) + (१२५ × ६ = ७५०) + २२००० × २ = ४४०००) + १००००] = ६४१५६ योजन ।

$$= \frac{१००००० - ६४१५६}{२} = २६२२ \text{ योजन व्यास ।}$$

भद्रशालका विस्तार—

छपण - सहस्ताणि, सोहिय वासाओ ज्ञोयणाणं च ।

सेसं दोहि विहसं, विक्खंभो भद्रशालस्त ॥२२५३॥

५६००० । २२००० ।

अर्थ :—जम्बूद्वीपके विस्तारमेसे छपन हजार (५६०००) योजन कम करके शेषको दोसे विभक्त करने पर जो प्राप्त हो उसे भद्रशालवनके विस्तारका (२२००० यो०) प्रमाण जानना चाहिए ॥२२५३॥

अर्थ :—[(२२१२३ × १६ = ३५४०६) + (५०० × ८ = ४०००) + (१२५ × ६ = ७५०) + (२६२२ × २ = ५२४४) + १००००] = ५६००० योजन

$$= \frac{१००००० - ५६०००}{२} = २२००० \text{ योजन व्यास ।}$$

सुदर्शनमेरुका मूल विस्तार—

विक्खंभादो सोहिय, एउदि - सहस्ताणि ज्ञोयणाणं च ।

अवसेसं जं सद्धं, सो मंबर - मूल - विक्खंभो ॥२२५४॥

६०००० । १०००० ।

अर्थ :—जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे नब्बे हजार (६००००) योजन कम कर देने पर जो शेष रहे उतना मन्दरपर्वतका मूलमे विस्तार समझना चाहिए ॥२२५४॥

विशेषार्थ :—(२२१२३ × १६) + (५०० × ८) + (१२५ × ६) + (२६२२ × २) + (२२००० × २) = ६०००० योजन ।

= १००००० — ६०००० = १००००० योजन सुमेरुका मूल व्यास ।

पूर्वापर विदेहका विस्तार—

खडबण - सहस्तराणि, सोहिय दीवस्स^१ वास-मउम्मि ।

सेसद्धं पुव्वावर - विदेह - माणं तु पत्तेक्कं ॥२२५५॥

५४००० । २३००० ।

अर्थ :—जम्बूद्वीपके विस्तारमेसे चौवन हजार (५४०००) घटाकर शेषको आधा करनेपर पूर्वापर विदेहमेसे प्रत्येकका प्रमाण (२३००० यो०) निकलता है ॥२२५५॥

विशेषार्थ :—भद्रशालका विस्तार (२२००० × २) = ४४००० + १०००० मेरुका मूल विस्तार = ५४००० योजन ।

= $\frac{१००००० - ५४०००}{२} = २३०००$ योजन पूर्व अथवा अपर विदेहका विस्तार ।

क्षेत्र, वक्षार और विभागाकी लम्बाईका प्रमाण—

सीता - हवं सोहिय, विदेह - हं दम्मि सेस - दलमेत्तो ।

आयामो विजयाणं, ववखार - विभंग - सरियाणं ॥२२५६॥

सोलस-सहस्सयाणि, बाणउदी समहिया य पंच - सया ।

दो भागा पत्तेक्कं, विजय - प्यहुदीण दीहत्तं ॥२२५७॥

१६५६२ । क २१ ।

अर्थ :—विदेहके विस्तारमेंसे सीतानदीका विस्तार घटा देनेपर शेषके अर्धभाग प्रमाण क्षेत्र, वक्षार पर्वत और विभगा नदियोंकी लम्बाईका प्रमाण होता है। इन क्षेत्रादिकमेंसे प्रत्येककी लम्बाई सोलह हजार पाँचसौ बानबेँ योजन और एक योजनके उत्तरीम भागोमेमे दो भाग अधिक है ॥२२५६-२२५७॥

विशेषार्थ :—पूर्वापर विदेहक्षेत्रोका पृथक्-पृथक् विस्तार (दक्षिणोत्तर चौड़ाई) ३३६८४ $\frac{१}{२}$ योजन है। इन क्षेत्रोमे सीता-सीतोदा नामकी दो प्रमुख नदियाँ बहती है। द्रहके समीप निगंमस्थान पर इनकी चौड़ाई ५० योजन और समुद्र प्रवेशकी चौड़ाई ५०० योजन है। विदेह विस्तारमेसे नदी विस्तार घटाकर शेषको आधा करनेपर = $\frac{३३६८४ \times \frac{१}{२} - ५००}{२} = १६५६२ \frac{१}{२}$ योजन प्राप्त होते हैं, जो विदेह स्थित ३२ नगर, १६ वक्षारगिरि, १२ विभग नदियाँ और देवारण्य आदि बनोकी लम्बाई है। अर्थात् इन क्षेत्रादिकमेंसे प्रत्येककी लम्बाईका प्रमाण १६५६२ $\frac{१}{२}$ योजन है।

विभग नदीकी परिवार नदियाँ—

अट्टावीस - सहस्ता, एक्केवकाए बिभंग - सिधूए ।

परिवार - वाहिणीओ, विचिस्त - रुबाओ रेहति ॥२२५८॥

२८००० ।

अर्थ :—एक-एक विभगनदीकी विचित्ररूपवाली अट्टाईस हजार (२८०००) परिवार नदियाँ शोभायमान हैं ॥२२५८॥

कच्छा देशका निरूपण—

सीबाय उत्तर - तडे, पुब्बसे भहूसाल - वेदीदो ।

णीलाचल - दक्षिणदो, पच्छिमदो चित्त - कूडत्स ॥२२५९॥

जेट्टेदि कच्छ-णामो, 'विजयो वण-गाम-णयर-सेडेह ।

कब्बड - मडंब - पट्टण - बोणामुह - पट्टुबिएहि कुदो ॥२२६०॥

दुग्गाडबीहि' जुत्तो, अंतरबीदेहि कुषिवासेहि ।

सेसासमत - रम्मो, सो रयणायर - मंडिदो विज्जो ॥२२६१॥

अर्थ :—भद्रशालवेदीके पूर्व, नीलपर्वतके दक्षिण ओर चित्रकूटके पश्चिममें स्थित सीतानदीके उत्तर तटपर कच्छा नामक देश स्थित है । यह रमणीय कच्छादेश, वन, ग्राम, नगर, खेत, कबूट, मटंब, पत्तन एव द्रोणमुखादिसे युक्त, दुर्गाटवियो, अन्तरद्वीपों एवं कुषिवासों सहित समन्ततः रमणीय और रत्नाकरोंसे अलंकृत है ॥२२५६-२२६१॥

गामाणं छण्णउवी - कोडीओ रयण-भवण-भरिदाणं ।

परिदो 'कुक्कुड - संघण - पमाण - विज्जाल-भूमोणं ॥२२६२॥

६६०००००० ।

अर्थ :—उसके चारो ओर रत्नमय भवनोसे परिपूर्ण और कुक्कुटके उड़ने प्रमाण अन्तराल-भूमियोंसे युक्त छपानबै करोड़ (६६००००००) ग्राम हैं ॥२२६२॥

णयरारिण पंचहत्तरि-सहस्स-भेत्तारिण विविहि-भवणारिण ।

खेडारिण सहस्सारिण, सोलस रमणिज्ज - शिलयारिण ॥२२६३॥

७५००० । १६००० ।

अर्थ :—प्रत्येक क्षेत्रमें विविध भवनोसे युक्त पचत्तर हजार (७५०००) नगर और रमणीय आलयोसे विभूषित सोलह हजार (१६०००) खेत होते हैं ॥२२६३॥

चउत्तीस - सहस्सारिण, कच्चडया होंति तह मडंबाराणं ।

चत्तारि सहस्सारिण, अडवास - सहस्स पट्टणया ॥२२६४॥

३४००० । ४००० । ४८००० ।

अर्थ :—इसके अतिरिक्त चौत्तीस हजार (३४०००) कबूट, चार हजार (४०००) मटंब और अड़तालीस हजार (४८०००) पत्तन होते हैं ॥२२६४॥

णवणउडि - सहस्सारिण, हवंति बोणामुहा सुहावासा ।

बोहस - सहस्स - मेत्ता, संबाहणया परम - रम्मा ॥२२६५॥

६६००० । १४००० ।

अर्थ :—सुखके स्थानभूत निन्यानबं हजार (६६०००) द्रोणमुख और चौदह हजार (१४०००) प्रमाण परम-रमणीय संवाहन होते हैं ॥२२६५॥

अट्टावीस - सहस्सा, हवंति दुग्गाडबीओ छप्पण्णं ।

अंतरदीवा सत्त य, सयाणि कुक्खी - रिावासाणं ॥२२६६॥

२८००० । ५६ । ७०० ।

अर्थ :—अट्टाईस हजार (२८०००) दुर्गाटवियाँ, छप्पन (५६) अन्तरद्वीप और सात सौ (७००) कुक्षि-निवास होते हैं ॥२२६६॥

छब्बीस - सहस्सारिण, हवंति रयणायरा विच्चित्तेहि ।

परिपुष्णा रयणेहि, फुरंत - वर - किरण - जालेहि ॥२२६७॥

२६००० ।

अर्थ :—देदीप्यमान उत्तम किरणोंके समूहसे समुक्त तथा विचित्र रत्नोंसे परिपूर्ण छब्बीस हजार (२६०००) रत्नाकर होते हैं ॥२२६७॥

सीवा-तरंगिणी - जल-संभव - खुल्लंबुरासि - तीरम्मि ।

विप्पंत - कणय - रयणा, पट्टण - बोणामुहा होंति ॥२२६८॥

अर्थ :—सीतानदीके जलसे उत्पन्न हुए क्षुद्र-समुद्रके किनारे पर देदीप्यमान सुवर्ण तथा रत्नोवाले पत्तन और द्रोणमुख होते हैं ॥२२६८॥

सीवा - तरंगिणीए, उत्तर - तीरम्मि उवसमुद्धम्मि ।

छप्पण्णंतर - बीवा, समंत - बेबी - पहुदि - जुत्ता ॥२२६९॥

अर्थ :—सीतानदीके उत्तरतटपर उपसमुद्रमें चारों ओर वेदी आदि सहित छप्पन अन्तरद्वीप होते हैं ॥२२६९॥

बाणा-रयण-विणिम्मिद-जिणिण्ढ-पासाद-भूमिदा रम्मा ।

मिच्छत्^१ - भवण - हीणा, गाम - प्पहुबो विरायते ॥२२७०॥

अर्थ : - प्रनायतनोसे रहित वे रमणीय ग्रामादिक नाना प्रकारके रत्नोसे निर्मित जिनेन्द्र-
प्रासादोसे विभूषित हुए शोभायमान होते हैं ॥२२७०॥

कच्छा देश स्थित ग्रामादिकोकी विशेषताएँ—

गोधूम-कलम-तिल-जव-चणक-प्पहुबोहि^२ धण्ण-संपुण्णा ।

दुम्भिकल - मारि - मुक्का, णिच्छुच्छव-तूर-गोव-र वा ॥२२७१॥

अर्थ :—ये ग्रामादिक गेहूँ, चावल, तिल, जौ और चना इत्यादि धान्योंसे परिपूर्ण हैं;
दुम्भिक एव मारी आदि रोगोसे रहित हैं तथा नित्य उत्सवमें बजने वाले तूर्य और गाए जाने वाले
गीतोंके नाद युक्त हैं ॥२२७१॥

कच्छ-विजयम्मि विविहा, वणसंडा मंडिदा विचित्तेहि ।

खखेहि कुमुम - पल्लव - फल - भर - सोहंत-^३साहेहि ॥२२७२॥

अर्थ :—कच्छा-क्षेत्रमें फूल, पत्र एव फलोंके भारसे शोभायमान शालाओं वाले नाना
वृक्षोंसे सुशोभित विविध वन-खण्ड हैं ॥२२७२॥

पोक्खरणी - वाबोहि, विचित्त - सोवाण-रइव-दाराहि ।

सोहेवि कच्छ - विजम्भो, कमलुप्पल - वण - सुगंधाहि ॥२२७३॥

अर्थ :—यह कच्छा-देश विचित्र सोपानोंसे रचित द्वारोंवाली और कमल एवं उत्पल-
वनोंकी सुगन्ध युक्त पुष्करिणियों तथा वापिकाओंसे शोभायमान है ॥२२७३॥

वर्षाका वर्णन—

कच्छम्मि महामेघा, भमरंजण - सामला महाकाया ।

सत्त बरिसंति वासा - गत्तेसु^४ सत्त सत्त दिवसाइ ॥२२७४॥

अर्थ :—कच्छा-देशमें भ्रमर और भ्रञ्जन सट्टकाले सात प्रकारके महाकाय महामेघ
वर्षाकाल (१२० दिनों) में सात-सात दिनके बाद सात-सात दिन तक बरसते हैं ॥२२७४॥

१. द. व. क. व. य. उ. मिच्छभवणालहीणा । २. द. व. क. व. य. उ. वण्ण । ३. द. क. व.

वरिसंति दोण - भेषा, बारस कुंवेडु - सुं बरायारा ।

बीसुत्तरमेवक - सयं, सरिबलणं तत्थ जायति ॥२२७५॥

अर्थ :- कुन्दपुष्प और चन्द्रमा सदृश सुन्दर आकारवाले वारह द्रोगामेवभी बरसते हैं ।
वहाँ एकसौ बीस नदियोंके प्रपात उत्पन्न होते हैं ॥२२७५॥

वंश व्यवस्था—

बहुविह-वियप्य-जुषा, ससिय-वइसाण तह य सुदाणं ।

वंसा ह्वंसति कच्छे, तिण्णि ळ्वय तत्थ ण ह्ण ॥२२७६॥

अर्थ :- कच्छा-देशमें बहुत प्रकारके भेदोंसे युक्त क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र ये तीन ही वंश हैं,
अन्य वंश वहाँ नहीं हैं ॥२२७६॥

काल व्यवस्था—

परचक्रक-भीदि-रहिबो, अण्णाय - पयडुणेहि परिहीणो ।

अह्ववड्ढि - अणावट्ठी - परिचत्तो सव्व - कालेसुं ॥२२७७॥

अर्थ :- यह देश सब कालोमें परचक्रकी भीति तथा अन्याय-प्रवृत्तिसे विहीन रहता है
और अतिवृष्टि-अनावृष्टिसे परित्यक्त है । अर्थात् वहाँ अतिवृष्टि-अनावृष्टिकी बाधा नहीं होती और न
अकाल ही पड़ता है ॥२२७७॥

धर्माभासका अभाव—

अउवुं बरफल - सरिसा, धम्माभासा ण तत्थ 'सुव्वंसि ।

सिख-बह्व-विण्णु-खंडी-रबि-ससि - बुद्धाण ण पुराणि ॥२२७८॥

अर्थ :- उदुम्बर फलोंके सदृश धर्माभास वहाँ सुने नहीं जाते । शिव, ब्रह्मा, विष्णु, चण्डी,
रवि, शशि एवं बुद्धके नगर (स्थान) वहाँ नहीं हैं ॥२२७८॥

पासंड - समय - चत्तो, सम्माइट्ठी - जणोघ - संख्खो ।

णवरि बिसेसो केसि, पयट्टे भाव - मिच्छत्तं ॥२२७९॥

अर्थ :—बहु देश पाषण्ड सम्प्रदायोंसे रहित है और सम्यग्दृष्टि जनोंके समूहसे व्याप्त है। विशेष इसना है कि यहाँ किन्हीं-किन्हीं जीवोंके भाव-मिथ्यात्व विद्यमान रहता है ॥२२७६॥

उपसमुद्रका वर्णन—

मागध-वरतनुवेहि य, पभास - दीर्घेहि कच्छ-विजयस्स ।

सोहेवि उवसमुद्रो, वेदी - चउ - तोरणेहि जुवो ॥२२८०॥

अर्थ :—वेदी और चार तोरणोंसे युक्त कच्छादेशका उपसमुद्र मागध, वरतनु एवं प्रभास द्वीपोंसे क्षोभायमान है ॥२२८०॥

कच्छादेशगत मनुष्योंकी आयु और उत्सेधादि—

अंतोमुहुत्तमवरं, कोडी पुव्वाण होवि उवकस्सं ।

आउस्स य परिमाणं, जराण खारीण कच्छम्मि ॥२२८१॥

पुव्व १०००००० ।

अर्थ :—कच्छादेशमें नर-नारियोंकी आयुका प्रमाण जघन्यरूपसे अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट रूपसे पूर्वकोटि (१००००००) है ॥२२८१॥

उच्छेहो बंडारिण, पंच - सया विविह - वण्णमावण्णं ।

चउसट्ठी पुट्टट्ठी, अंगेसु खराण खारीणं ॥२२८२॥

५०० । ६४ ।

अर्थ :—वहाँपर विविध वणोंसे युक्त नर-नारियोंके शरीरकी ऊँचाई पाँचसौ (५००) धनुष और पृष्ठभागकी हड्डियाँ चौंसठ (६४) होती हैं ॥२२८२॥

कच्छादेशगत विजयार्थका वर्णन—

कच्छस्स य बहुमज्जे, सेसो नामेण दीह - विजयद्दो ।

जोयण - सयद्ध - बासो, सम - दीहो वेस - वासेणं ॥२२८३॥

५० । २२१२ । १ ।

अर्थ :—कच्छादेशके बहुमध्यभागमें पचास (५०) योजन विस्तारवाला और देश-विस्तार समान (२२१२२ योजन) लम्बा 'दीर्घविजयार्ध' नामक पर्वत है ॥२२८३॥

सम्बाओ वण्णणाओ, भणिवा वर-भरहृत्तेच-विजययद्धे ।

एवस्सि णादम्बा, णवरि वित्सेसि णिक्खवेमि ॥२२८४॥

अर्थ :—उत्तम भरतक्षेत्र सम्बन्धी विजयार्धके विषयमें जैसा विवरण कहा गया है, वैसा ही सम्पूर्ण विवरण इस विजयार्धका भी समझना चाहिए । उक्त पर्वतकी अपेक्षा यहाँ जो कुछ विशेषता है उसका निरूपण करता हूँ ॥२२८४॥

विज्जाहराण तस्सि, पत्तेवक दो - तडेसु णयरणि ।

पंचावण्णा होंति हु, कूडाण य अण्ण - णामाणि ॥२२८५॥

अर्थ :—इस पर्वतके दोनों तटोमेमे प्रत्येक तटपर विद्याधरोके पचपन नगर है । यहाँ कूटोंके नाम भरतक्षेत्रके विजयार्धके कूटोमे भिन्न हैं ॥२२८५॥

सिद्धत्थ-कच्छ-खंडा, पुण्णा-विजयद्ध-माणि-तिमिसगुहा ।

कच्छो वेसमणो णव, णामा एदस्स कूडाणं ॥२२८६॥

अर्थ :—सिद्ध, कच्छा, खण्डप्रपात, पूर्णभद्र, विजयार्ध, माणिभद्र, तिमिसगुह, कच्छा और वंश्रवण ये क्रमशः इस विजयार्धके ऊपर स्थित नौ कूटोके नाम हैं ॥२२८६॥

सव्वेसुं कूडेसुं, मणिमय - पासाद - सोहमाणेसुं ।

चेट्टंति अट्टकूडे, ईसाणिदस्स वाहरणा देवा ॥२२८७॥

अर्थ :—मणिमय प्रासादोसे शोभायमान इन सब कूटोमेसे आठ कूटोपर ईशानेन्द्रके वाहन-देव रहते हैं ॥२२८७॥

कच्छादेशमें छह-खण्डोका विभाजन—

णीसाचल - दक्खिणवो, उववण-वेदोए' दक्खिणे पासे ।

कुंडाणि' बोणि वेदो - तोरण - जुसाणि चेट्टंति ॥२२८८॥

अर्थ :—नीलपर्वतसे दक्षिणकी ओर उपवनवेदीके दक्षिण-पार्श्वभागमें वेदी-तोरणयुक्त दो कुण्ड स्थित हैं ॥२२८८॥

ताणं दक्षिण - तोरण - वारेणं शिगदा बुधे सरिया ।

रत्ता - रत्तोबक्सा, पुह पुह गंगाघ्न सारिच्छा ॥२२८९॥

अर्थ :—उन कुण्डोंके दक्षिण तोरणद्वारसे गगानदीके सदृश पृथक्-पृथक् रक्ता और रक्तोदा नामकी दो नदियाँ निकली हैं ॥२२८९॥

रत्ता - रत्तोदाहिं, वेयड्ड - णगेण कच्छ - विजयम्मि ।

सखत्थ समाणाओ, छक्खंडा णिम्मिदा एवे ॥२२९०॥

अर्थ :—रक्ता-रक्तोदा नदियों और विजयार्धपर्वतसे कच्छादेशमें सर्वत्र समान छह खण्ड निर्मित हुए हैं ॥२२९०॥

रक्ता-रक्तोदाकी परिवार नदियाँ—

रत्ता - रचोदाओ, जुदाओ चोहस - सहस्समेत्ताहिं ।

परिवार - वाहिणीहिं, णिच्चं पबिसंति सीदोवं ॥२२९१॥

१४००० ।

अर्थ :—चौदह हजार (१४०००) प्रमाण परिवार-नदियोंसे युक्त ये रक्ता-रक्तोदा नदियाँ नित्य सीतानदीमें प्रवेश करती हैं ॥२२९१॥

कच्छादेशगत आर्यखण्ड—

सीदाए उत्तरवो, विजयड्ड - गिरिस्स दक्षिणे भागे ।

रत्ता - रत्तोवाणं, अज्जाखंडं भवेदि विच्छाले ॥२२९२॥

अर्थ :—सीतानदीके उत्तर ओर विजयार्धगिरिके दक्षिणभागमें रक्ता-रक्तोदाके मध्य आर्यखण्ड है ॥२२९२॥

णाणा - जणबद - णिच्चिवो, भट्टारस-वेस-भास-संजुत्तो ।

कुंजर - तुरगादि - बुदो, णर - णारी - मंडिवो रम्मो ॥२२९३॥

अर्थ :—अनेक जनपदों सहित, अठारह देशभाषाओंसे संयुक्त, हाथी एवं अश्वदिकोंसे युक्त और नर-नारियोंसे मण्डित यह आर्यखण्ड रमणीय है ॥२२६३॥

क्षेमा-नगरी—

क्षेमा - णामा शयरी, अञ्जाखंडस्स होवि मञ्जुम्भि ।
एसा अणान्द-णिहणा, वर - रयणा खच्चिद - रमणिञ्जा ॥२२६४॥

अर्थ :—आर्यखण्डके मध्यमें क्षेमा नामक नगरी है । यह अनादि-निघन है और उत्तम रत्नोंसे खचित रमणीय है ॥२२६४॥

कणयमग्रो पायारो, समंतदो तीए होवि रमणिञ्जो' ।
चरियट्टालय - चारू, विविह - पदाया कल्प - जुदो' ॥२२६५॥

अर्थ :—इसके चारों ओर मागों एवं अट्टालयोंसे सुन्दर और विविध पताकाओंके समूहसे संयुक्त रमणीय सुवर्णमय प्रकार है ॥२२६५॥

कमल - वण - मंडिदाए, संजुत्तो खादियाहि विउत्ताए ।
कुसुम - फल - सोहिदेहि, सोहित्तलं बहुविह - वर्णोहि ॥२२६६॥

अर्थ :—यह प्रकार कमल-वनोसे मण्डित विस्तृत खाईसे संयुक्त है और फूल तथा फलोंसे शोभित बहुत प्रकारके वनोंसे शोभायमान है ॥२२६६॥

तीए पमाण - जोयण, णवमेत्ते वर - पुरीअ वित्थारो ।
वारस - जोयण - मेत्तं, दीहत्तां दक्खिणुत्तर - विसासुं ॥२२६७॥

६ । १२ ।

अर्थ :—उस उत्तम पुरीका विस्तार प्रमाण-योजनसे नी योजन प्रमाण और दक्षिण-उत्तर दिशाओंमें लम्बाई बारह योजन प्रमाण है ॥२२६७॥

एककेचक-विसा-भागे, बणसंडा विविह-कुसुम-फल-पुष्पा ।
सट्टि-बुद'-ति-सय-संखा, पुरीए कीडंत - वर - मिहणा ॥२२६८॥

३६० ।

अर्थ :—उस नगरीके प्रत्येक दिशा-भागमे विविध प्रकारके फल-फूलोसे परिपूर्ण और क्रीड़ा करते हुए उत्तम (स्त्री-पुरुषोंके) युगलो सहित तीन सौ साठ (३६०) संख्या प्रमाण वनसमूह स्थित हैं ॥२२६८॥

एकक - सहस्सं गोउर - वाराणं चककवट्टि - जयरीए ।
वर - रयथ - णिम्मिदानं, खुल्लय - वाराण पंच-सया ॥२२६९॥

१००० । ५०० ।

अर्थ :—चक्रवर्तीकी (उस क्षेमा) नगरीमे उत्कृष्ट रत्नोसे निर्मित एक हजार (१०००) गोपुरद्वार और पांचसौ (५००) लघु द्वार हैं ॥२२६९॥

बारस - सहस्स - मेघा, बीहीओ वर - पुरीए रेहंति ।
एकक - सहस्स - पमाणा, चउ - हड्डा सुहद - संचारा ॥२३००॥

१२००० । १००० ।

अर्थ :—उस उत्कृष्ट पुरीमे सुख पूर्वक गमन करने योग्य बारह हजार (१२०००) प्रमाण बोधियां और एक हजार (१०००) प्रमाण चतुष्पथ हैं ॥२३००॥

फलह-प्पवाल-भरगय-चामीयर-पउमराय - पहुदिमया ।
वर - तोरणोहि रम्मा, पासादा तत्थ बित्थिण्णा ॥२३०१॥

अर्थ :—वहाँपर स्फटिक, प्रवाल, मरकत, सुवर्ण एवं पद्मरागादिसे निर्मित और उत्तम तोरणोंसे रमणीय विस्तीर्ण प्रासाद हैं ॥२३०१॥

पोक्खरणी - बाबीहि, कमलुप्पल-कुमुद-गंध-सरही सा ।
संपुष्पा जयरी णं, णरुचंत - विचित्त - धय - माला ॥२३०२॥

अर्थ :- नृत्य करती हुई विचित्र ध्वजाओंके समूहसे युक्त वह नगरी निश्चय ही कमल, उत्पल और कुमुदोंकी गन्धसे सुगन्धित पुष्करिणियों तथा वापिकाओंसे परिपूर्ण है ॥२३०२॥

पंडुगवण-जिन-मंदिर-रमणिष्ठा तीए होंति जिन-भवणा ।

उच्छेह - वास - पट्टविस, उच्छष्ठा ताण उचएसो ॥२३०३॥

अर्थ :- (उस नगरीके) जिन-भवन पाण्डुकवनके जिन-मन्दिरोंके सदृश रमणीय हैं । उनके उत्प्रेष-विस्तार आदिका उपदेश विच्छिन्न हो गया है ॥२३०३॥

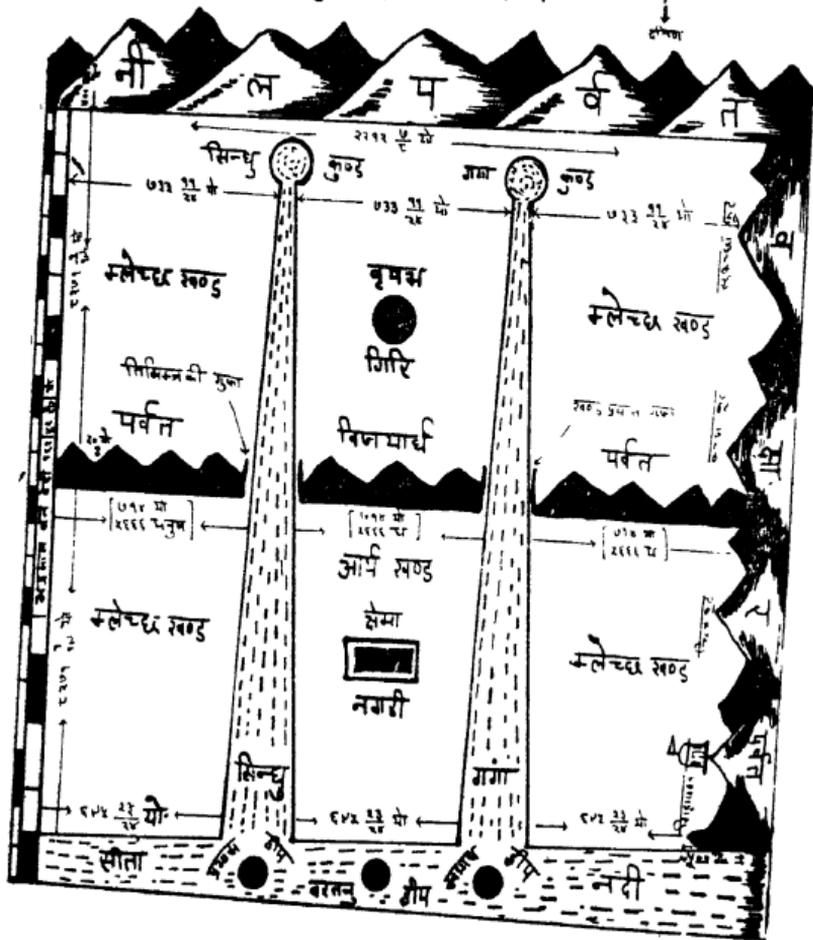
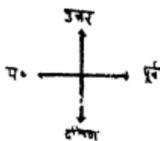
जर - जारी - जिवहेहि, बियकल्लोहि विचित - रुवेहि ।

जर - रयण - भूसणोहि, जिवहेहि सोहिवा जयरी ॥२३०४॥

अर्थ :- वह नगरी अद्भुत सौन्दर्य-सम्पन्न है और उत्तम रत्नाभूषणोंसे भूषित अनेक प्रकारके विचक्षण नर-नारियोंके समूहोंसे सुशोभित है ॥२३०४॥

[चित्र अगले पृष्ठ पर देखिए]

विदेह का कच्चा क्षेत्र



क्षेमा नगरी स्थित चक्रवर्ती—

रायरीए चक्कवट्टी, तीए चेट्टेदि विविह-गुण-खाणी ।

आदिम - संहणण - जुदो, समचउरस्संग - संठाणो' ॥२३०५॥

कुंजर-कर-थोर-^३भुवो, रवि^३-व्व-वर-तेय-पसर-संपुण्णो ।

इंदो विव आणाए, सोहग्गेणं च मयणो^३ व्व ॥२३०६॥

घणदो^३ विव बाणेणं, धीरेणं मंदरो व्व सोहेदि ।

जलहो विव अक्खोभो, पुह-पुह-विक्किरिय-सत्ति-जुदो' ॥२३०७॥

अर्थ :—उस नगरीमे अनेक गुणोकी खानिस्वरूप चक्रवर्ती निवास करता है । वह आदिके वज्रभनाराच-सहनन सहिन, समचतुरस्वरूप शरीर-सस्थानसे सयुक्त, हाथीके गुण्डादण्ड सदृश स्थूल भुजाओसे शोभित, सूर्य सदृश उत्कृष्ट तेजके विस्तारसे परिपूर्ण, आज्ञामे इन्द्र तुल्य, मुभगतामे मानो कामदेव, दानमे कुबेर सदृश, धैर्य गुणमे सुमेरुपर्वतके समान, समुद्रके सदृश अक्षोभ्य और पृथक्-पृथक् विक्रियाशक्तिसे युक्त शोभित होता है ॥२३०५-२३०७॥

पांच-सय - चाव - तुंगो, सो चक्की पुव्व-कोडि-संखाऊ ।

दस - बिह - भोगेहि जुदो, सम्माइट्टी विसाल - मई ॥२३०८॥

अर्थ :—वह चक्रवर्ती पांचसौ धनुष ऊंचा, पूर्वकोटि प्रमाण आयुवाला, दस प्रकारके भोगोसे युक्त, सम्यग्दृष्टि और विशाल (उदार) बुद्धि सम्पन्न होता है ॥२३०८॥

तीर्थकर—

अज्जालंडम्मि ठिवा, तित्थयरा पाडिहेर - संजुत्ता ।

पांच - महाकल्लाणा, चोत्तीसाविसय - संपण्णा ॥२३०९॥

सयल-सुरासुर-महिया, जाणाविह - लक्खणेहि संपुण्णा ।

चक्कहुर - णमिद - चलणा, तिलोक्क - जाहा पत्तीवंतु ॥२३१०॥

१. द. व. क. ज. य. उ. संठाणा । २. द. व. क. ज. य. उ. भुवा । ३. द. व. क. ज. य. उ. रविद-वर संपुण्णा । ४. द. व. ज. य. उ. मयणम्ब, क. मयणं च । ५. द. व. क. ज. य. उ. घणदा विव । ६. द. व. क. ज. य. उ. जुदा ।

अर्थ :—आर्यखण्डमे स्थित, प्रातिहार्योसि सयुक्त, पाँच महाकल्याणक सहित, चौतीस अतिशयोसि सम्पन्न, सम्पूर्ण सुरासुरोसि पूजित, नाना प्रकारके लक्षणोसि परिपूर्ण, चक्रवर्तियोसि नमस्कृत चरणवाले और तीनों लोकोके अधिपति तीर्थकर परमदेव प्रसन्न होवे ॥२३०६-२३१०॥

गणधरदेव एवं चानुर्वर्ण्यं संघ—

अमर-शर-णमिव-चलणा, भव्य-जगान्दवणा पसण्ण-मणा ।

अट्ट - बिह - रिद्धि - जुता, गणहरदेवा ठिवा तस्सि ॥२३११॥

अर्थ :—जिनके चरणोमें देव और मनुष्य नमस्कार करते हैं तथा जो भव्यजनोंको आनन्ददायक हैं और आठ प्रकारकी ऋद्धियोसे युक्त हैं, ऐसे प्रसन्नचित्त गणधरदेव उस आर्यखण्डमें स्थित रहते हैं ॥२३११॥

अणगार-केवलि-मुणो'-वरद्धि-सुवकेवली तदा तस्सि ।

चेट्टुवि चाउव्वण्णो, तस्सि संघो गुण - गणद्धो ॥२३१२॥

अर्थ :—उस आर्यखण्डमे अणगार, केवली, मुनि, परमदिप्राप्त-ऋषि और श्रुतकेवली तथा गुणसमूहसे युक्त चानुर्वर्ण्यं संघ स्थित रहता है ॥२३१२॥

बलदेव, अर्धचक्री एवं राजा आदि—

बलदेव - वासुदेवा, पडिसत्तू तत्थ होंति ते सव्वे ।

अण्णोण्ण - बद्ध - मच्छर - पयट्ट - घोरयर - संगामा ॥२३१३॥

अर्थ :—वहाँपर बलदेव, वासुदेव और प्रतिशशु (प्रतिवासुदेव) होते हैं । ये सब परस्पर बाँधे हुए मत्सरभावसे घोरतर संग्राममें प्रवृत्त रहते हैं ॥२३१३॥

रायाधिराय - बसहा, तत्थ विरायंति ते महाराया ।

छत्त - चमरेहि जुता, अट्ट'-महा - सयल - मंडलिया ॥२३१४॥

। अज्जखंड-पक्खणा समत्ता ।

अर्थ :—वहाँ श्रेष्ठ राजा, अधिराज, महाराज और छत्र-चमरोसे युक्त अर्धमण्डलीक, महा-मण्डलीक एवं सकलमण्डलीक विराजमान रहते हैं ॥२३१५॥

। आर्यखण्डकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

म्लेच्छखण्ड एव उनमें रहने वाले जीव—

णामेण मेच्छखण्डा, अबसेसा होंति पंच खंडा ते ।

बहुविह - भाव - कलंका, जीवा मिच्छागुणा तेसुं ॥२३१५॥

अर्थ :—शेष पाँच खण्ड नामसे म्लेच्छखण्ड है । उनमें स्थित जीव मिध्यागुणोंसे युक्त होते हैं और बहुत प्रकारके भाव-कलङ्कसे (पाप-परिणामों) सहित होते हैं ॥२३१५॥

णाहल - पुलिद - बब्बर-किराय-पहुदीण सिघलादीणं ।

मेच्छाराण कुलेहि जुवा, भणिवा ते मेच्छखण्डा स्ति ॥२३१६॥

अर्थ :—ये म्लेच्छखण्ड नाहल, पुलिद, बवंग, किरात तथा सिहलादिक म्लेच्छोंके कुलोसे युक्त कहे गए हैं ॥२३१६॥

वृषभगिरि—

णीलाचल-दक्षिणवो, 'वक्खगिरिवस्स पुच्च - दिवभागे ।

रत्ता - रत्तोदाणं, मज्झम्मि य मेच्छखण्ड - बहुमज्जे ॥२३१७॥

वक्कहर-माण-मथणो, णाणा-वक्कोराण ज्ञाम - संखणो ।

अत्थि वसह स्ति सेलो, भरहक्खिदि - वसह-सारिच्छो ॥२३१८॥

अर्थ :—नीलाचलके दक्षिण और वक्षार पर्वतके पूर्व-दिग्भागमें रक्ता-रक्तोदाके मध्य म्लेच्छखण्डके बहुमध्यभागमें चक्रधरोंके मानका मर्दन करनेवाला और नाना षक्रवर्तियोंके नामोंसे व्याप्त भरतक्षेत्र सम्बन्धी वृषभगिरिके सदृश वृषभ नामक पर्वत है ॥२३१७-२३१८॥

शेषं क्षेत्रोंका संक्षिप्त वर्णन—

एवं कच्छा - विजयो, वास-सभासेहि 'वण्णवो एत्थ ।

सेसाणं विजयाणं, वण्णराभेवंविहं जाण ॥२३१९॥

अर्थ :—इसप्रकार यहाँ सक्षेपमे कच्छादेशके विस्तारादिका वर्णन किया गया है। शेष क्षेत्रोंका वर्णन भी इसीप्रकार जानना चाहिए ॥२३१६॥

णवरि विसैसो एकको, ताणं णयरीण अण्ण - णामा य ।
 खेमपुरी रिट्ठक्खा, रिट्ठपुरी खग्ग - मंजुसा दोण्णि ॥२३२०॥
 ओसहणयरी तह पुण्डरीकिणी एवमेत्थ णामाणि ।
 सत्ताणं णयरीणं, सुकच्छ - पमुहाण विजयाणं ॥२३२१॥

अर्थ :—यहाँ एक विशेषता यह है कि उन क्षेत्रोंकी नगरियोंके नाम भिन्न हैं—क्षेमपुरी, रिट्ठा, अरिष्ठपुरी, खडगा, मञ्जूपा, औषधनगरी और पुण्डरीकिणी, इसप्रकार ये यहाँ सुकच्छा आदि सात देशोंकी सात नगरियोंके नाम हैं ॥२३२०-२३२१॥

अट्टाणं एकक - समो, वच्छ - प्पमुहाण होदि विजयाणं ।
 णवरि विसैसो सरिया - णयरीणं अण्ण - णामाणि ॥२३२२॥

अर्थ :—वत्सा आदि आठ देशोंमें समानता है। परन्तु विशेष यही है कि यहाँ नदियों और नगरियोंके नाम भिन्न हैं ॥२३२२॥

गंगा-सिन्धू-णामा, पडि - विजयं वाहिणीए चिट्ठंति ।
 भरहक्खेत्त - पवण्णिद - गंगा - सिन्धूहि सरिसाओ ॥२३२३॥

अर्थ :—यहाँ प्रत्येक क्षेत्रमे भरतक्षेत्रमें कही गई गंगा-सिन्धुके सदृश गंगा और सिन्धु नामक नदियाँ स्थित हैं ॥२३२३॥

णयरीओ सुसीम - कं डलाओ अवराजिदा - पहंकरया ।
 अंका पडमवदीया, ताण सुभा रयणसंघया कमसो ॥२३२४॥

अर्थ :—सुसीमा, कुण्डला, अपराजिता, प्रभंकरा, अका, पद्यावती, शुभा और रत्नसंघया ये क्रमशः उन देशोंकी नगरियोंके नाम हैं ॥२३२४॥

अपर (पश्चिम) विदेहका सक्षिप्त वर्णन—

पुब्ब - विदेहं व कमो, अवर - विदेहे वि एस 'बट्ठम्बो ।
 णवरि विसैसो एकको, णयरीणं अण्ण - णामाणि ॥२३२५॥

अर्थ :—पूर्व विदेहेके सदृश ही अपर-विदेहमें भी ऐसा ही क्रम जानना चाहिए। एक विशेषता यह है कि यहाँ भी नगरियोंके नाम भिन्न हैं ॥२३२५॥

अस्तपुरी सिंहपुरी, महापुरी तह य होदि विजयपुरी ।

अरजा 'विरजासोकाउ, बौदसोक ति पउम - पडुदीण ॥२३२६॥

अर्थ :—अश्वपुरी, सिंहपुरी, महापुरी, विजयपुरी, अरजा, विरजा, अशोका और वीतशोका, इसप्रकार ये पञ्चादिक देशोंकी प्रधान नगरियोंके नाम हैं ॥२३२६॥

विजया य वइजयंता, पुरी जयंतावराजिताओ वि ।

चक्कपुरी खगपुरी, अउज्झणामा अवज्झ चि ॥२३२७॥

कमसो वप्पादीणं, विजयाणं अउ - पुरीण षामाणि ।

एक्कतीस - पुरीणं, खेमा - सरिया पसंसाओ ॥२३२८॥

अर्थ :—विजया, वैजयन्ता, जयन्ता, अपराजिता, चक्रपुरी, खड्गपुरी, अयोध्या और अवध्या, इसप्रकार ये क्रमशः वप्रादिक (आठ) देशोंकी आठ नगरियोंके नाम हैं। उक्त एकतीस नगरियोंकी प्रशंसा क्षेमापुरीके सदृश ही जाननी चाहिए ॥२३२७-२३२८॥

इगिगि^५-विजय-मउज्झत्थ-हीहा-विजयडुड - णवसु कूडसुं ।

दक्खिण - पुव्वं बिदिओ, णिय-णिय-विजयक्खमुव्वहइ ॥२३२९॥

उत्तर-पुव्वं दुचरिम - कूडो तं चेय धरइ सेसा य ।

सग - कूडा णामोहि, हवति कउज्झम्मि भणिदेहि ॥२३३०॥

अर्थ :—प्रत्येक देशके मध्यमे स्थित लम्बे विजयार्ध पर्वतके ऊपर जो नौ-नौ कूट है, उनमें से दक्षिण-पूर्वका द्वितीय कूट अपने-अपने देशके नामको और उत्तर-पूर्वका द्विचरम कूट भी उसी देशके नामको धारण करता है। शेष सात कूट कच्छादेशमे कहे गये नामोंसे युक्त हैं ॥२३२९-२३३०॥

रत्ता - रत्तोदाओ, सीडा - सीदोदयाण दक्खिणए ।

भागे तह उत्तरए, गंगा - सिघू व के वि भासति ॥२३३१॥

पाठान्तरम् ।

१. द. ब. क. ज. य. उ विरजासोकोउ । २. द. ब. क. ज. य. उ यउज्झ । ३. द. ब. क. ज. य. उ. अदि । ४. द. ब. इगिगिजयमउज्झत्थ दोहा ।

अर्थ :—कितने ही आचार्य सीता-सीतोदाके दक्षिण भागमें रक्ता-रक्तोदा और उसीप्रकार उत्तर-भागमें गंगा-सिन्धु-नदियोंका भी निरूपण करते हैं ॥२३३१॥

पाठान्तर ।

सीता-सीतोदाके किनारोंपर तीर्थस्थान—

पत्तोक्कं पुष्पावर - विदेह - विजएसु अञ्जखंडम्मि ।

सीदा - सीदोबाणं, दु - तडेसुं जिणिव - पडिमाओ ॥२३३२॥

छेदुंति तिणि तिणि य, पणमिय-चलणा तियंस-णिवहेहि ।

सव्वाओ छण्णउबी, तित्थ - ट्टाणाणि मलिवाओ ॥२३३३॥

अर्थ :—पूर्वापर विदेहक्षेत्रोंमेंसे प्रत्येक क्षेत्रके आर्यखण्डमें सीता-सीतोदाके दोनों किनारों पर देवोंके समूह द्वारा नमस्करणीय चरणोवाली तीन-तीन जिनेन्द्र-प्रतिमाएँ स्थित हैं । ये सर्व तीर्थ-स्थान मिलकर छियानर्ब हैं ॥२३३२-२३३३॥

सोलह वक्षार-पर्वतोका वर्णन—

वक्खारगिरी सोलस, सीदा - सीदोदयाण तीरेसुं ।

पण-सय-जोयण - उदया, कुलगिरि-पासेसु एक-सय-हीणा ॥२३३४॥

५०० । ४०० ।

अर्थ :—सोलह वक्षारपर्वत सीता-सीतोदाके किनारोंपर पाँचसौ (५००) योजन और कुलाचलोंके पार्श्वभागोंमें एकसौ योजन कम अर्थात् चार सौ (४००) योजन ऊँचे हैं ॥२३३४॥

वक्खाराणं दोसुं, पासेसुं होंति दिव्व - वणसंडा ।

पुह पुह गिरि-सम-दीहा, जोयण - वलमेत्ता - वित्थारा ॥२३३५॥

अर्थ :—वक्षार-पर्वतोंके दोनों पार्श्वभागोंमें पृथक्-पृथक् पर्वत समान लम्बे और अर्ध योजन प्रमाण विस्तार वाले दिव्य वनखण्ड हैं ॥२३३५॥

सव्वे वक्खारगिरी, तुरंग - खंधेण होंति सारिच्छा ।

उवरिम्मि ताण कूडा, चत्तारि हवन्ति पत्तोक्कं ॥२३३६॥

अर्थ :—सब वक्षार पर्वत षोडशेके स्कन्ध सदृश आकारके होते हैं । इनमेंसे प्रत्येक पर्वतपर चार कूट हैं ॥२३३६॥

सिद्धो^१ वक्षारुड्ढाधोगद - विजय - नाम - कूडा य ।

ते सखे रयणमया, पब्बय - चउभाग - उच्छेहा^२ ॥२३३७॥

अर्थ :— इनमेसे प्रथम सिद्धकूट, दूसरा वक्षारके सदृश नामवाला और शेष दो कूट वक्षारोके उपरिम और अघस्तन क्षेत्रोके नामोसे युक्त हैं । वे सब रत्नमय कूट अपने पर्वतकी ऊँचाईके चतुर्थभाग प्रमाण ऊँचे हैं ॥२३३७॥

सीता-सीतोदाण, पासै एक्को जिणिद - भवण - जुदो ।

सेसा य तिण्णि कूडा, वेंतर - गयरेहि रमणिज्जा ॥२३३८॥

अर्थ :— सीता-सीतोदाके पार्श्वभागमे एक कूट जिनेन्द्र-भवनसे युक्त है और शेष तीन कूट व्यन्तर-नगरोसे रमणीय हैं ॥२३३८॥

विशेषार्थ :— वक्षार पर्वत १६ हैं और प्रत्येक वक्षार पर चार-चार कूट हैं । इनमेसे सीता-सीतोदा महानदियोकी ओर स्थित प्रथम कूटोपर जिनमन्दिर हैं और शेष तीन-तीन कूटोपर व्यन्तर देवोके नगर हैं । इन ६४ कूटोके नाम इस प्रकार हैं—

[तालिका : ४३ अगले पृष्ठ पर देखिए]

१. द. व. क. ज. व. उ. सिद्धा वक्षारभोगदविषयो राण राण कूडा । २. द. व. क. ज. य.

बारह विभंगा-नदियोंका वर्णन—

रोहीए सम बारस-विभंग-सरियाओ बास - पहुबीहि ।
परिवार - णईओ तह, दोसु बिदेहेसु पत्तोक्कं ॥२३३६॥

२५००० ।

अर्थ :—दोनो विदेहोमे रोहित्के सदृश विस्तारादिवाली बारह विभंग-नदियाँ हैं । इनमेंसे प्रत्येक नदीकी परिवार नदियाँ रोहित्के ही सदृश अट्टाईस हजार (२५०००) प्रमाण हैं ॥२३३६॥

कंचण-सोवाणाओ, सुगंध-बहु-विमल-सलिल भरिदाओ ।
उववण - वेदी - तोरण - जुदाओ णच्चंत - उम्मीओ ॥२३४०॥
तोरण-दारा उवरिम-ठाण-ट्टिद-जिण-णिकेद-णिच्चिदाओ ।
सोहंति णिरुवमाणा, सयलाओ विभंग - सरियाओ ॥२३४१॥

अर्थ :—(सम्पूर्ण विभंग-नदियाँ) सुवर्णमय सोपानों सहित, सुगन्धित निर्मल जलसे परिपूर्ण, उपवन, वेदी एवं तोरणसे संयुक्त, नृत्य करती हुई लहरों सहित, तोरण द्वारोंके उपरिम प्रदेशमे स्थित जिनभवनोंसे युक्त और उपमासे रहित होती हुई शोभायमान होती हैं ॥२३४०-२३४१॥

देवारण्य-वनका निरूपण—

सीताए उत्तरदो, दीओववणस्स वेदि - पच्छिमदो ।
णीलाचल - दक्षिणदो, पुब्बंते पोक्खलावदी - विसए ॥२३४२॥
चेट्टि देवारण्यं, णाणा - तद - संड - मंडिदं रम्मं ।
पोक्खरणी - बाबीहि, कमलुप्पल - परिमलिल्लाहि ॥२३४३॥

अर्थ :—सीतानदीके उत्तर, द्वीपोपवन-सम्बन्धी वेदीके पश्चिम, नीलपर्वतके दक्षिण और पुष्कलावती देशके पूर्वान्तमें नाना वृक्षोंके समूहोंसे मण्डित तथा कमलों एवं उत्पलोंकी सुगन्धसे संयुक्त ऐसी पुष्करिणी और बापिकाओसे रमणीक देवारण्य नामक वन स्थित है ॥२३४२-२३४३॥

तास्स देवारण्ये, पासादा कणय - रयण - रज्जवमया ।
वेदी - तोरण - धय - बड - पहुबीहि मंडिदा विउला ॥२३४४॥

अर्थ :—उस देवारण्यमें सुवर्ण, रत्न एवं चांदीसे निर्मित तथा वेदो, तोरण और ध्वज-पटादिकोंसे मण्डित विद्यालय प्रासाद हैं ॥२३४५॥

उत्पत्ति - मंदिराई^१, अहिंसेयपुरा य मेहुण^२ - गिहाई ।

कीडरण - सासाओ सभा - सासाओ जिण - रिणकेदेसु ॥२३४५॥

अर्थ :—इन प्रासादोंमें उत्पत्तिगृह, अभियेकपुर, मंयुनगृह, क्रीडन-शाला, सभाशाला और जिन-भवन स्थित हैं ॥२३४५॥

चउ - विदिसासुं गेहा, ईसाणिदस्स अंग - रक्खाणं ।

विप्यंत - रयण - दोवा, बहुविह-धुब्बंत - घय - माला ॥२३४६॥

अर्थ :—चारों विदिशाओंमें ईशानेन्द्रके अंगरक्षक देवोंके प्रदीप्त रत्नदीपकोंवाले और बहुत प्रकारको फहराती हुई ध्वजाओंके समूहोंसे सुशोभित गृह हैं ॥२३४६॥

बन्निण-दिसा-विभागे, तिप्परिसाणं^३पुराणि विविहाणि ।

सत्ताणमणीयाणं^४ पासादा पच्छिम - दिसाए ॥२३४७॥

अर्थ :—दक्षिणदिशा-भागमें तीनों पारिषददेवोंके विविध भवन और पश्चिम दिशामें सात अनेक देवोंके प्रासाद हैं ॥२३४७॥

किम्बिस - अभियोगाणं, सम्मोह-सुराण तत्थ विबभागे ।

कंबप्पाण सुराणं, होंत्ति विचित्ताणि भवणाणि ॥२३४८॥

अर्थ :—उसी दिशामें किम्बिस, आभियोग्य, समोहसुर और कन्दर्प देवोंके अद्भुत भवन हैं ॥२३४८॥

एवे सव्वे देवा, तेसुं कीडंति बहु - विणोदेहि ।

रम्भेसु मंदिरेसुं, ईसाणिदस्स परिवारा ॥२३४९॥

अर्थ :—ईशानेन्द्रके परिवार-स्वरूप ये सब देव उन रमणीक भवनोंमें बहुत प्रकारके विनोदोंसे क्रीड़ा करते हैं ॥२३४९॥

१ द. ब. क. ख. घ. ङ. मूंडिदाई । २. द. ब. क. ख. घ. ङ. मिहुणविहाहि । ३. द. ब. क. ख. घ. उ. पुराण विविहाणं । ४. द. ब. क. ख. घ. ङ. सत्ताणं प्राणीयाणं ।

सीदोद्ग दक्षिण-तडे, दीवोववणस्स वेदि - पच्छिमदो ।

णिसहाचल - उत्तरदो, पुब्बाय दिसाए वच्छस्स ॥२३५०॥

देवारणं अणं, चेट्टदि पुब्बस्स सरिस - वण्णणयं ।

णवरि विसेसो देवा, सोहम्मिदस्स परिवारा ॥२३५१॥

अर्थ :—द्वीपोपवन-सम्बन्धी वेदीके पश्चिम, निषधाचलके उत्तर और वत्सादेशकी पूर्व-दिशामें सीता नदीके दक्षिण तटपर पूर्वोक्त देवारण्यके सदृश वर्णनवाला दूसरा देवारण्य भी स्थित है । विशेष केवल इतना है कि इस वनमें सौधर्म-इन्द्रके परिवार देव क्रीडा करते हैं ॥२३५०-२३५१॥

भूतारण्यका निरूपण—

सीदोदा - दु - तडेसु, दीवोववणस्स वेदि - पुब्बाए ।

णोल - णिसहदि-मउभे, अवर-विदेहस्स अवर-विभाए ॥२३५२॥

बहु - तरु - रमणीयाइं, भूदारण्णाइं दोण्णि सोहति ।

देवारण्य - समाणं, सब्ब च्चिय वण्णणं ताए ॥२३५३॥

। एवं विदेह-विजय-वण्णणा समत्ता ।

अर्थ :—द्वीपोपवन-सम्बन्धी वेदीके पूर्व और अपर-विदेहके पश्चिम दिग्भागमें नील-निषध-पर्वतके मध्य सीतोदाके दोनों तटोपर बहुतसे वृक्षोंसे रमणीय भूतारण्य-नामक दो वन शोभित हैं । इनका समस्त वर्णन देवारण्योके ही सदृश है ॥२३५२-२३५३॥

। इसप्रकार विदेह क्षेत्रका कथन समाप्त हुआ ।

नीलगिरिका वर्णन—

णीलगिरो णिसहो पिव, उत्तर - पासम्मि दो-विदेहाणं ।

णवरि विसेसो अणं, कूडाणं देव - देवि - दह - णामा ॥२३५४॥

अर्थ :—दोनों विदेहोके उत्तर पार्श्वभागमें निषधके ही सदृश नीलगिरी भी स्थित है । विशेष इतना है कि इस पर्वतपर स्थित कूटो, देव-देवियों और ब्रह्मोंके नाम अन्य ही हैं ॥२३५४॥

नीलगिरि स्थित कूटोंका वर्णन—

सिद्धकसो नीलकसो, पुण्व - विदेहो त्ति सोढ-कित्तीओ ।

णारी अवर - विदेहो, रम्मक - णामावदंसणो कूडो ॥२३५५॥

अर्थ :—सिद्धाख्य, नीलाख्य, पूर्व-विदेह, सीता, कीर्ति, नारी, अवर-विदेह, रम्मक और अपदर्शन, इसप्रकार इस पर्वतपर ये नौ कूट स्थित हैं ॥२३५५॥

एवेसु पढम - कूडे, जिणिद - भवणं विचित्त-रयणमयं ।

उच्छेह - प्पहुवीह, सोमणसि जिणालय - पमाणं ॥२३५६॥

अर्थ :—इनमेंसे प्रथम कूटपर सोमनसम्प्य जिनालयके प्रमाण सदृश ऊँचाई आदि वाले रत्नमय अद्भुत जिनेन्द्र-भवन स्थित हैं ॥२३५६॥

सेसेसुं कूडेसुं, वेंतर - देवाण होंति णयरीओ ।

णयरीसुं पासादा, विचित्त - रूवा णिरुवमाणा ॥२३५७॥

अर्थ :—शेष कूटोंपर व्यन्तर-देवोंकी नगरियाँ हैं और उन नगरियोंमें विचित्र रूपवाले प्रनुपम प्रासाद हैं ॥२३५७॥

वेंतर - देवा सव्वे णिय - णिय - कूडाभिधाण-संजुत्ता ।

बहु - परिवारा दस - धणु - तुंगा पल्ल - प्पमाणाऊ ॥२३५८॥

अर्थ :—सब व्यन्तरदेव अपने-अपने कूटोंके नाम वाले हैं, बहुत परिवारों सहित हैं, स धनुष ऊँचे हैं और एक पल्ल-प्रमाण आयुवाले हैं ॥२३५८॥

कीर्तिदेवीका वर्णन—

उवरिम्मि नील-गिरिणो, केसरि-णामे दहम्मि दिव्वम्मि ।

चेट्टेदि कमल - भवणे, देवी कित्ति त्ति विक्खावा ॥२३५९॥

अर्थ :—नीलगिरिपर स्थित केसरी नामक दिव्य ब्रह्मके षष्ठमें रहनेवाले कमल-भवनपर कीर्ति नामसे विख्यात देवी स्थित है ॥२३५९॥

धिदि - देवीय समाणो, तीए सोहेदि सव्व - परिवारो ।

दस - चावाणि तुंगा, णिरुवम - लावण - संपुण्णा ॥२३६०॥

अर्थ :—उस देवीका सब परिवार धृतिदेवीके सदृश ही शोभित है। यह देवी दस धनुष ऊँची और अनुपम लावण्यसे परिपूर्ण है ॥२३६०॥

आदिम-संठाण-जुदा, वर-रयण-बिभ्रसणेहि विविहेहि ।

सोहिद - सुंदर - मुत्ती', ईसाणिवस्स सा देवी ॥२३६१॥

। नीलगिरि-वण्णणा समत्ता ।

अर्थ :—आदिम अर्थात् समचतुरत्र संस्थानवाली, विविध प्रकारके उत्तम रत्नोके भूषणोसे सुशोभित सौम्य-मूर्ति वह (कीर्तिदेवी) ईशानेन्द्रकी देवी है ॥२३६१॥

। इसप्रकार नीलगिरिका वर्णन समाप्त हुआ ।

रम्यक क्षेत्रका वर्णन—

रम्मक-विजओ^१ रम्मो, हरि-वरिसो^२ व वर-वण्णणा-जुत्तो ।

रावरि विसोसो एक्को, णाभि - णो अण्ण - णामाणि ॥२३६२॥

अर्थ :—रमणीय रम्यक-विजय (क्षेत्र) भी हरिवर्ष क्षेत्रके सदृश उत्तम वर्णनासे युक्त है। विशेषता केवल यही है कि यहाँ नाभिपर्वतका नाम दूसरा है ॥२३६२॥

रम्मक-भोग-खिदोए, बहु - मज्जे होवि पउम - णामेण ।

णाभिगिरी रमणिज्जो, णिय - णाम - जुबोहि देवेहि ॥२३६३॥

अर्थ :—रम्यक-भोगभूमिके बहु-मध्यभागमे अपने नामवाले देवोने युक्त रमणीय पद्म नामक नाभिगिरि स्थित है ॥२३६३॥

केसरि - दहस्स उत्तर - तोरण-दारेण णिग्गदा दिव्वा ।

णरकंता णाम णदी, सा गच्छिय उत्तर - मुहेण ॥२३६४॥

एरणकंत-कुंड-मज्जे, णिवडिय^४ णिस्सरदि उत्तर-दिसाए ।

तत्तो णाभि - गिरिवं, कादूण पदाहिणं पि पुब्बं व ॥२३६५॥

१. द. ज. सुही, ब. क. य उ. सुही। २. ब. विजट्टी, द. ज. उ. विजवी, क. विजदो। ३. द. ब. क. ज. उ. बि। ४. द. ज. य. शिबलिय।

गंतूषं सा मज्झं, रम्मक - बिजयस्स पच्छिम - मुहेण ।
पवित्सेवि लवण - जलंही, परिवार - णदीहि संजुता ॥२३६६॥

। रम्मक-बिजयस्स परूवणा समत्ता ।

अर्थ :—केसरी द्रहके उत्तर तोरखद्वारसे निकली हुई दिव्य नरकान्ता नामक प्रसिद्ध नदी उत्तरकी ओर गमन करती हुई नरकान्त-कुण्डमें गिरकर उत्तरकी ओरसे निकलती है। पश्चात् वह नदी पहलेके ही सदृश नाभिपर्वतकी प्रदक्षिणा करके रम्यक क्षेत्रके मध्यसे जाती हुई पश्चिम मुख होकर परिवार-नदियोंके साथ लवण समुद्रमें प्रवेश करती है ॥२३६४-२३६६॥

। रम्यकक्षेत्रका वर्णन समाप्त हुआ ।

रुक्मिगिरिका वर्णन—

रम्मक - भोगखिदीए, उत्तर-भागम्मि होवि रुम्मिगिरी ।
महहिमबंत - सरिच्छं, सयलं चिय वण्णणं तस्स ॥२३६७॥

अर्थ :—रम्यक-भोगभूमिके उत्तरभागमें रुक्मि-पर्वत है। उसका सम्पूर्ण-वर्णन महाहिम-वानुके सदृश समझना चाहिए ॥२३६७॥

एखरि य ताणं कूड-इह-सुर-वेवीण अण्ण - णामाणि ।
सिद्धो रुम्मी - रम्मक - णरकंता - बुद्धि - रूप्यो सि ॥२३६८॥
हेरणववो मणिकंचरण - कूडो रुम्मियाण तथा ।
कूडाण इमा णामा, तेसुं जिणमंवरिं पढम - कूडे ॥२३६९॥
सेसेसुं कूडेसुं, वेतर - वेवाण होंति णयरीओ ।
बिक्खादा ते वेवा, णिय - णिय - कूडाण णामेहि ॥२३७०॥

अर्थ :—विशेष इतना है कि यहाँ उन कूट, द्रह, देव और देवियोंके नाम भिन्न हैं। सिद्ध, रुक्मि, रम्यक, नरकान्ता, बुद्धि, रूप्यकूला, हेरण्यवत और मणिकाञ्चन, ये रुक्मिपर्वतपर स्थित उन घाट कूटोंके नाम हैं। इनमेंसे प्रथम कूटपर जिन-मन्दिर और शेष कूटोंपर व्यन्तरदेवोंकी नगरियाँ हैं। वे देव अपने-अपने कूटोंके नामोंसे विख्यात हैं ॥२३६८-२३७०॥

रुम्भि - गिरिबस्सोवरि, बहुमञ्जे होवि पुं डरीय-बहो ।

फुल्लंत - कमल - पउरो, तिगिछ - इहस्स परिमाणो ॥२३७१॥

अर्थ :—रुम्भि-पर्वतपर बहु-मध्यभागमें फूले हुए प्रचुर कमलोंसे युक्त तिगिच्छद्रहके सदृश प्रमाणवाला पुण्डरीक द्रह है ॥२३७१॥

तद्दह - कमल - णिकेदे, देवी णिवसेवि बुद्धि - णामेणं ।

तीए हवेदि अद्धो, परिवारो कित्ति - बेबोबो ॥२३७२॥

अर्थ :—उस द्रह-सम्बन्धी कमल-भवनमें बुद्धि नामक देवी निवास करती है । इसका परिवार कीर्तिदेवीकी अपेक्षा आधा है ॥२३७२॥

णिहवम-लावण्य-तणू, वर-रयण-धिम्मसणेहि रमणिज्जा ।

विविह - विणोदा - कौडवि, ईसाणिवस्स सा देवी ॥२३७३॥

अर्थ :—अनुपम लावण्यमय शरीरसे सयुक्त और उत्तम रत्नोंके भूषणोंसे रमणीक ईशानेन्द्रकी वह देवी विविध विनोद पूर्वक क्रीड़ा करती है ॥२३७३॥

तद्दह - दक्षिण - तोरण - वारेणं णिग्गवा णई णारी ।

एगारी - णामे कुंढे, णिवडवि गंतूण 'बोव - मही ॥२३७४॥

तद्दक्षिण - वारेणं, णिस्सरिवूणं च दक्षिण-मुही सा ।

तसो णाभिगिरिबंधं, कादूण पवाहिणं हरिणई व ॥२३७५॥

रम्मक-भोग्लिदीए, बहु - मञ्जेणं पयावि पुब्ब - मुही ।

पणिसेवि लवण - जलहि, परिवार - तरंगिणोह जुवा ॥२३७६॥

। रुम्भिगिरि-वण्णणा समत्ता ।

अर्थ :—उस द्रहके दक्षिण-तोरणद्वारसे निकली हुई नारी नदी अल्प-विस्तार होकर नारी-नामक कुण्डमें गिरती है । पश्चात् वह (कुण्डके) दक्षिण-द्वारसे निकलकर दक्षिणमुख होती हुई

हरित् नदीके सदृश ही नाभिगिरिकी प्रदक्षिणा करके रम्यक-भोगभूमिके बहुमध्यभागमेंसे पूर्वकी ओर जाती हुई परिवार-नदियोंसे युक्त होकर लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥२३७४-२३७६॥

॥ स्विमपर्वतका वर्णन समाप्त हुआ ॥

हैरण्यवत क्षेत्रका निरूपण—

विजयो हेरण्यवदो, हेमवदो व प्यवण्णजा - जुतो' ।

जवरि विसैसो एक्को, 'नाभीण-खईण अण्ण-जामाणि ॥२३७७॥

अर्थ :—हैरण्यवतक्षेत्र हैमवतक्षेत्रके सदृश वर्णनसे युक्त है । एक विशेषता केवल यही है कि यहाँ नाभिगिरि और नदियोंके नाम भिन्न हैं ॥२३७७॥

तस्स बहु - मज्झ-भागे, विजयड्ढो होवि गंधवंतो त्ति ।

तस्सोवरिम - सिक्केवे, पभास - जामो ठिवो देवो ॥२३७८॥

अर्थ :—उस क्षेत्रके बहुमध्य-भागमें गन्धवान् नामक विजयाय (नाभिगिरि) है । उसपर स्थित भवनमें प्रभास नामक देव रहता है ॥२३७८॥

पुंडरिय - बहुहिंतो, उत्तर - वारेण रुप्पकूल - णई ।

जिस्सरिवूणं जिबडदि, कुडे सा रुप्पकूलम्मि ॥२३७९॥

तस्सुत्तर - वारेणं, जिस्सरिवूणं च उत्तर - मुहो सा ।

जाभिगिरिं कादूणं, पदाहिणं रोहि - सरिय व्व ॥२३८०॥

पच्चिम - भूहेण गच्छिय, परिवार-त्तरंगिरणीहि संजुत्ता ।

दोव - जगदी - बिलेणं, पविसदि कल्सोलिणी - 'णाहं ॥२३८१॥

। हेरण्यवद-विजय-वण्णजा समप्ता ।

अर्थ :—रूपकूलानदी पुण्डरीक द्रुहके उत्तर-द्वारसे निकलकर रूपकूल नामक कुण्डमें गिरती है । तत्पश्चात् वह नदी उस कुण्डके उत्तर-द्वारसे निकलकर उत्तरकी ओर गमन करती हुई

१. द. व. क. ज. य. उ. जुता । २. व. वेसणीण व. क. उ. देवणाणीण । ३. द. व. क. ज. य. उ. कल्सोलिणि एण ।

बोहित् नदीके सदृश नाभिगिरिकी प्रदक्षिणा करके पश्चिमकी ओर जाती है । पुनः परिवार-नदियोंसे संयुक्त होकर वह नदी जम्बूद्वीपकी जगतीके बिलमें होकर त्वणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥२३७९-२३८१॥

। हैरप्यवतक्षेत्रका वर्णन समाप्त हुआ ।

शिखरीगिरिका निरूपण—

तम्बिज-उत्तर-भागे, सिहरी - णामेण चरम - कुलसेतो ।

हिमवंतस्स सरिच्छं, सयलं विय वण्णणं तस्स ॥२३८२॥

अर्थ :— इस क्षेत्रके उत्तर-भागमें शिखरी-नामक अन्तिम कुल-पर्वत स्थित है । इस पर्वतका सम्पूर्ण वर्णन हिमवान् पर्वतके सदृश है ॥२३८२॥

रावरि विसेसो कूड्ढहाण' देवाण देवि - सरियाणं ।

अण्णाइं णामाइं, तस्सि सिद्धो पढम - कूडो ॥२३८३॥

सिहरी हैरण्णवदो, रसदेवी - रत्त - लच्छि-कंचणया ।

रत्तवदी गंधवदी, रेवद - मणिकंचणं कूडं ॥२३८४॥

एक्कारस - कूडाणं, पुह पुह पणुचीस जोयणा उदग्घो ।

तेसुं पढमे कूडे', जिणिद - भवणं परम - रम्मं ॥२३८५॥

सेसेसं कूडेसुं, णिय - णिय - कूडाण णाम - संजुत्ता ।

वैतर - देवा मणिमय - पासादेसुं विरायंति ॥२३८६॥

अर्थ :— विशेष यह है कि यहाँ कूट, द्रह, देव, देवी और नदियोंके नाम भिन्न हैं । उस (शिखरी) पर्वतपर प्रथम सिद्ध कूट, शिखरी, हैरप्यवत, रसदेवी, रत्ता, लक्ष्मी, काञ्चन, रक्तवती, गन्धवती, रवत (ऐरावत) और मणिगाञ्चनकूट, इसप्रकार ये ग्यारह कूट स्थित हैं । इन ग्यारह कूटोंकी ऊँचाई पृथक्-पृथक् पच्चीस योजन प्रमाण है । इनमेंसे प्रथम कूटपर परम-रमणीय जिनेन्द्र-भवन और शेष कूटोंपर स्थित मणिमय प्रासादोंमें अपने-अपने कूटोंके नामोंसे संयुक्त व्यन्तर देव विराजमान हैं ॥२३८३-२३८६॥

महपुं डरीय-गामा, दिव्व - वहो सिंहिरि-सेल-सिहरम्मि ।

पउमद्दह - सारिच्छो, वेदी - पहुवेहिं कय - सोहो ॥२३८७॥

अर्थ :— इस शिखरी-शैलके शिखरपर पद्मद्रहके सदृश वेदी आदिसे शोभायमान महा-पुण्डरीक नामक दिव्य द्रह है ॥२३८७॥

तस्स 'सयवत्त-भवणे, लच्छिय - गामेण णिवसदे देवी ।

सिरिबेवीए सरिसा, ईसाणिदस्स सा देवी ॥२३८८॥

अर्थ :— उस तालाबके कमल-भवनमें श्रीदेवीके सदृश जो लक्ष्मी नामक देवी निवास करती है, वह ईशानेन्द्रकी देवी है ॥२३८८॥

तद्दह-वक्खिण-तोरण-दारेण सुवण्णकूल - णाम - जदी ।

णिस्सरिय दक्खिण-मुही, णिवडेदि सुवण्णकूल-कुंडम्मि ॥२३८९॥

तद्दक्खिण - दारेणं, णिस्सरिद्वणं च दक्खिण-मुही सा ।

णाभिगिरिं काड्डुणं, पदाहिणं रोहि - सरिय व्व ॥२३९०॥

हेरणवदवभंतर - भागे गच्छिय दिसाण पुव्वाए ।

वीव - जगदी - बिलेणं, पविसेदि तरंगिणी - णाहं ॥२३९१॥

। एव सिंहिरिगिरि-वण्णरा समत्ता^१ ।

अर्थ :— उस द्रहके दक्षिण-तोरण-द्वारसे निकलकर सुवर्णकूला नामक नदी दक्षिणमुखी होकर सुवर्णकूल-कुण्डमें गिरती है । तत्पश्चात् उस कुण्डके दक्षिण-द्वारसे निकलकर वह नदी दक्षिण-मुखी होकर रोहित् नदीके सदृश नाभिगिरिकी प्रदक्षिणा करती हुई हैरणवतक्षेत्रके अग्र्यन्तर भागमेंसे पूर्व दिशाकी ओर जाकर जम्बूद्वीप-सम्बन्धी जगतीके बिलमेसे ममुद्रमें प्रवेश करती है ॥२३८९-२३९१॥

। इसप्रकार शिखरीपर्वतका वर्णन समाप्त हुआ ।

ऐरावतक्षेत्रका निरूपण—

सिहरिस्सुत्तर - भागे, जंबूदीवस्स जगदि - दक्खिणदो ।

एरावदो त्ति वरिसो, चेदुदि भरहस्स सारिच्छो ॥२३९२॥

अर्थ :— शिखरीपर्वतके उत्तर और जम्बूद्वीपकी जगतीके दक्षिणभागमें भरतक्षेत्रके सदृश ऐरावतक्षेत्र स्थित है ॥२३६२॥

एगवरि बिसैसो तस्सि', सलाग - पुरिसा हवन्ति जे केई ।

ताणं णाम - प्पहुदिसु, उबवेसो संपइ पणट्ठो ॥२३६३॥

अर्थ :— विशेष यह कि उस क्षेत्रमें जो कोई शलाका-पुरुष होते हैं, उगका नामादि-विषयक उपदेश इस समय नष्ट हो चुका है ॥२३६३॥

अण्णणा 'एदस्सि, णामा विजयड्ढ - कूड-सरियाण'^१ ।

सिद्धो^४ रेवद - खंडो, माणी विजयड्ढ - पुण्णा य ॥२३६४॥

तिमित्तुगुहो रेवद - वेसमणं णामाणि होंति कूडाणं ।

सिहुरि-गिरिदोवरि महपुंडरिय - दहस्स पुव्व - दारेणं ॥२३६५॥

रत्ता^५ एगामेण णदी, णिस्सरिय पडेदि रत्त-कुंडम्मि ।

गंगाणइ - सारिच्छा, पबिसइ लवणंबु - रासिम्मि ॥२३६६॥

अर्थ :— इस क्षेत्रमें विजयार्धपर्वतपर स्थित वृटो और नदियोंके नाम भिन्न हैं। सिद्ध, ऐरावत, खण्डप्रपात, माणिभद्र, विजयार्ध, पूर्णभद्र तिमिस्रगुह, ऐरावत और वैश्रवण ये नौ कूट यहाँ विजयार्ध पर्वतपर हैं। शिखरी पर्वतपर स्थित महापुण्डरीक द्रहके पूर्व द्वारसे निकलकर रक्ता नामक नदी रक्तकुण्डमें गिरती है। पुनः वह गङ्गानदीके सदृश लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥२३६४-२३६६॥

तद्दह - पच्छिम - तोरण - दारेणं णिस्सरेदि रत्तोदा ।

सिधु - णईए सरिसा, शिबडदि रचोव - कुंडम्मि ॥२३६७॥

पच्छिम-मुहेण तत्तो, णिस्सरिद्वूणं अण्येय-सरि-सहिदा ।

दोव - जगदी - बिलेणं, लवण - समुदुम्मि पबिसेदि ॥२३६८॥

अर्थ :— उसी द्रहके पश्चिम तोरण-द्वारसे रक्तोदानदी निकलती है और सिन्धुनदीके सदृश रक्तोदकुण्डमें गिरती है। पश्चात् वह उस कुण्डसे निकलकर पश्चिममुख होती हुई अनेक नदियोंके साथ जम्बूद्वीपकी जगतीके बिलसे लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥२३६७-२३६८॥

१. द. ब. य. उ. तेस्सि। २. द. ब. क. उ. एदेसि। ३. द. ब. क. ज. य. उ. सरिसाणं।

४. द. ब. क. ज. य. उ. सिद्धा। ५. द. ब. क. उ. रत्तो।

गंगा - रोही - हरिया, सीता - भारी-सुवर्ण-कूलाओ ।
रत्न त्ति सत्त सरिया, पुब्बाए विसाए वच्चन्ति ॥२३६६॥

अर्थ :—गङ्गा, रोहित्, हरित्, सीता, नारी, सुवर्णकूला और रत्ना ये सात नदियाँ पूर्व-दिशामें जाती हैं ॥२३६६॥

पच्छिम-विसाए गच्छन्ति, सिधुणई रोहिवास-हरिकन्ता ।
सीतोदा णरकन्ता, रुप्तडा सत्तमी य रत्तोदा ॥२४००॥

। एवं एरावद-क्षेत्रस वण्णणा समत्ता ।

अर्थ :—सिन्धुनदी, रोहितास्या, हरिकान्ता, सीतोदा, नरकान्ता, रूप्यकूला और सातवीं रत्तोदा ये सात नदियाँ पश्चिम-दिशामें जाती हैं ॥२४००॥

॥ इसप्रकार ऐरावतक्षेत्रका वर्णन समाप्त हुआ ॥

अनुपाकार क्षेत्रके क्षेत्रफल निकालनेका विधान—

इसु-पाद-गुणित-जीवा, गुणित्वा दस - पदेण जं वरगं ।
मूल आवायारे, क्षेत्रेत्थं होदि सुहुम - फलं ॥२४०१॥

अर्थ :—बाएके चतुर्थ भागसे गुणित जीवाका जो वर्ग हो उसको दससे गुणाकर प्राप्त गुणनफलका वर्गमूल निकालनेपर धनुषके आकार क्षेत्रका सूक्ष्म क्षेत्रफल जाना जाता है ॥२४०१॥

भरतक्षेत्रका सूक्ष्म क्षेत्रफल—

पंच-ति-ति-एक्क-दुग-णभ-छक्का अक्ककमेण जोयणया ।
एक्क-छ-ति-हरिद-चउ-णव-दुग-भागा भरहक्षेत्र - फलं । २४०२॥

६०२१३३५ । ३३५ ।

अर्थ :—पाँच, तीन, तीन, एक, दो, शून्य और छह, इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और तीनसौ इकसठसे भाजित दोसौ चौरानवे (३३५) भाग प्रमाण भरतक्षेत्रका सूक्ष्म क्षेत्रफल है ॥२४०२॥

विशेषार्थ :—भरतक्षेत्रका बाएण ५२६ $\frac{१}{४}$ अथवा १०००० योजन और जीवा (गा० १६१) १४४७१ $\frac{१}{४}$ = १२५ $\frac{१}{४}$ योजन है । अतएव गाथा २४०१ के नियमानुसार भरतक्षेत्रका सूक्ष्मक्षेत्रफल—

$$\sqrt{\left(\frac{१००००}{१६} \times \frac{१}{४} \times \frac{२७४६५४}{१६}\right)^२ \times १०} = \sqrt{\left(\frac{६८७३८५०००}{३६१}\right)^२ \times १०}$$

$$= \sqrt{\frac{४७२४६८१३८२२४००००००००}{३६१ \times ३६१}}$$

$$= ६०२१२३५३ $\frac{३}{४}$ योजन ।$$

नोट :—वर्गमूल निकालते समय जो अवशेष बचे थे वे छोड़ दिए गए हैं ।

हिमवान् पर्वतका सूक्ष्म-क्षेत्रफल—

णव-छ्त्रचउ-णभ-गयणं, एककं पण-दोणिएण जोयणा भागा ।

पंचावण - एकक- सया, हिमवंत - गिरिम्मि खेत्तफलं ॥२४०३॥

$$२५१००४६६ \left| \begin{array}{l} १५५ \\ ३६१ \end{array} \right|$$

अर्थ :—नौ छह, चार, शून्य, शून्य, एक, पाँच और दो, इस अंक क्रमसे जो संख्या निमित्त हो उतने योजन और तीनसौ इकसठसे भाजित एकसौ पचपन भाग (२५१००४६६ $\frac{३}{४}$ योजन) प्रमाण हिमवान् पर्वतका सूक्ष्मक्षेत्रफल है ॥२४०३॥

हैमवनक्षेत्रका सूक्ष्मक्षेत्रफल—

छ्त्रणव-छ्त्रणभ-एकक, छ्त्र-अट्ट-सत्तं कमेण भागा य ।

दु-रहिद-तिणिएण-सयाइं, हिमवद - खिविम्मि खेत्तफलं ॥२४०४॥

$$७८६१०६६६ \left| \begin{array}{l} २६८ \\ ३६१ \end{array} \right|$$

अर्थ :—छह, नौ, छह, शून्य, एक, छह, आठ और सात, इस अंक क्रमसे जो संख्या निमित्त हो उतने योजन और तीनसौ इकसठसे भाजित दोसौ अट्टानबे भाग (७८६१०६६६ $\frac{३}{४}$ योजन) प्रमाण हैमवन-क्षेत्रका सूक्ष्म क्षेत्रफल है ॥२४०४॥

नोट :—महाहिमवान् पर्वतके सूक्ष्म-क्षेत्रफलको दशनिवासी गाथा कीड़ों द्वारा खाई जा चुकी है ।

हरिवर्षक्षेत्रका सूक्ष्म-क्षेत्रफल—

छक्कं छप्पण-णव-तिय, छ्छ-इगि-छक्कं कमेण भागा य ।
बाहत्तरि-दोण्णि-सया, हरि-वरिस - खिदिम्मि खेत्तफलं ॥२४०५॥

$$६१६६३६५६६ \left| \begin{array}{l} २७२ \\ ३६१ \end{array} \right|$$

अर्थ :—छह, छह, पाँच, नौ, तीन, छह, छह, एक और छह इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और एक योजनके तीन सौ इकसठ भागोमेसे दो सौ बहत्तर भाग (६१६६३६५६६३६६ यो०) प्रमाण हरिवर्षक्षेत्रका सूक्ष्म क्षेत्रफल है ॥२४०५॥

निषधपर्वतका सूक्ष्म-क्षेत्रफल—

तिय-एक्कंवर-णव-दुग-णव-चउ-इगि-पंच-एक्क-अंसा य ।
तिण्णि - सय - बारसाइं, खेत्तफलं णिसह - सेलस्स ॥२४०६॥

$$१५१४६२६०१३ \left| \begin{array}{l} ३१२ \\ ३६१ \end{array} \right|$$

अर्थ :—तीन, एक, शून्य, नौ, दो, नौ, चार, एक, पाँच और एक इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और एक योजनके तीनसौ इकसठ भागोमेसे तीन सौ बारह भाग (१५१४६२६०१३३३३ यो०) प्रमाण निषध-पर्वतका सूक्ष्म-क्षेत्रफल है ॥२४०६॥

विदेहक्षेत्रका सूक्ष्म-क्षेत्रफल—

दु-ख-णव-णव-चउ-तिय-णव-छण्णव-दुग-जोयणेवक पत्तीए ।
भागा तिण्णि सया इगि-छत्तिय-हरिदा विदेह - खेत्तफलं ॥२४०७॥

$$२६६६३४६६०२ \left| \begin{array}{l} ३०० \\ ३६१ \end{array} \right|$$

अर्थ :—दो, शून्य, नौ, नौ, चार, तीन, नौ, छह, नौ और दो इस अंक क्रमको एक पंक्तिमे रखनेसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और तीनसौ इकसठसे भाजित तीनसौ भाग (२६६६३४६६०२३३३ यो०) प्रमाण विदेहका क्षेत्रफल है ॥२४०७॥

नीलान्त ऐरावतक्षेत्रादिका क्षेत्रफल—

भरहादो गिसहंता, जेतियमेत्ता हवंति खेतफलं ।

तं सव्वं वसाव्वं, ऐरावद - पट्टवि - णीलंतं ॥२४०८॥

अर्थ :—भरतक्षेत्रसे लेकर निषधपर्वत तक जितना क्षेत्रफल है, वह सब ऐरावतक्षेत्रसे लेकर नीलपर्वत पर्यन्त भी कहना चाहिए ॥२४०८॥

जम्बूद्वीपका क्षेत्रफल—

अंबर-पण-एकक-चऊ-णव-छप्पण्णा-सुण्ण-णवय सत्तां च ।

अंक - कमे परिमाणं, जंबूदीवस्स खेत्ताफलं ॥२४०९॥

७६०५६६४१५० ।

अर्थ :—शून्य, पांच, एक, चार, नौ, छह, पांच, शून्य, नौ और सात इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो, उतने योजन प्रमाण जम्बूद्वीपका क्षेत्रफल है ॥२४०९॥

वृष्टय्य :—इसी अधिकारकी गाथा ६ के नियमानुसार जम्बूद्वीपका सूक्ष्मक्षेत्रफल गाथा ५६ से ६५ पर्यन्त दर्शाया गया है ।

जम्बूद्वीपस्थ नदियोंकी सख्या—

अट्टावीस - सहस्सा, भरहस्स तरंगिणीओ दुग-सहिवा ।

ते दुगुणा 'दुग - रहिवा, हेमवद - क्खेत्त - सरिया णं ॥२४१०॥

२८००२ । ५६००२ ।

अर्थ :—भरतक्षेत्रकी नदियाँ अट्टाईस हजार दो (२८००२) और हैमवतक्षेत्रकी नदियाँ दो कम इससे दूनी अर्थात् छप्पन हजार दो (५६००२) हैं ॥२४१०॥

हेमवद - वाहिणीणं, दुगुणिय - संखा य दुग-विहीणा य ।

हरिबरिसम्मि पमाणं, तरंगिणीणं च 'णावव्वं ॥२४११॥

११२००२ ।

अर्थ :—हरिवर्षक्षेत्रमें भी नदियोंका प्रमाण हैमवतक्षेत्रकी नदियोसे दो कम दुगुनी संख्या रूप अर्थात् एक लाख बारह हजार दो (११२००२) जानना चाहिए ॥२४११॥

एदाण ति - खेत्ताणं, सरिय्यओ भेलिवूण दुगुण - कदा ।

जार्थति बारसोत्तर, बाणउदि - सहस्स तिय - लक्खा ॥२४१२॥

३६२०१२ ।

अर्थ :—इन तीन क्षेत्रोंकी नदियोंको मिलाकर दूना करनेसे तीन लाख बानबे हजार बारह (३६२०१२) होता है ॥२४१२॥

विशेषार्थ :—भरतक्षेत्रकी २८००२ + ५६००२ हैमवतक्षेत्रकी + ११२००२ नदियां हरिवर्ष की = १६६००६ नदियां हुईं । रम्यक, हैरभ्यवत और ऐरावत क्षेत्रोंमें भी नदियोंका प्रमाण यही है अतः १६६००६ × २ = ३६२०१२ नदियां छह क्षेत्रोंकी हुईं ।

अट्टासट्टि - सहस्सभहियं एक्कं तरंगिणी - लक्खं ।

देवकुहम्मि य खेत्ते, णादव्वं उत्तरकुहम्मि ॥२४१३॥

१६८००० ।

अर्थ :—देवकुह और उत्तरकुहमें इन नदियोंकी संख्या एक लाख अड़सठ हजार (१६८०००) प्रमाण जाननी चाहिए ॥२४१३॥

अट्टत्तरि - संजुत्ता, चोदस - लक्खाणि होंति दिव्वाओ ।

सव्वाओ पुब्बावर - विदेह - विजयाण सरियाओ ॥२४१४॥

१४०००७८ ।

अर्थ :—पूर्व और पश्चिम विदेहक्षेत्रोंकी सब दिव्य नदियां चौदह लाख अठहत्तर (१४०००७८) है ॥२४१४॥

सशरस-सयसहस्सा, बाणउदि-सहस्सया य णउदि-जुवा ।

सव्वाओ बाहिणीओ, जंजूदीवम्मि मिलिवाओ ॥२४१५॥

१७६२०६० ।

तालिका : ४४		जम्बूद्वीपस्य सम्पूर्णा नदियोंकी तालिका		
क्र०	स्थान	६० प्रमुख नदियोंके		परिवार नदियाँ
		नाम	प्रमाण	
१	भरतक्षेत्रमें	गगा-सिन्धु	२	$१४००० \times २ = २८०००$
२.	हैमवतक्षेत्रमें	रोहित-रोहितास्या	२	$२८००० \times २ = ५६०००$
३	हरिक्षेत्रमें	हरित-हरिकान्ता	२	$५६००० \times २ = ११२०००$
४	विदेहक्षेत्रमें			
अ	देवकुरु	सीता	१	८४०००
ब.	उत्तरकुरु	सीतोदा	१	८४०००
स	पूर्व-विदेह	विभंगा नदियाँ	६	$२८००० \times ६ = १६८०००$
द.	पश्चिम-विदेह	विभंगा नदियाँ	६	$२८००० \times ६ = १६८०००$
क.	कच्छादि ८ देशोकी	रक्ता-रक्तोदा	१६	$१४००० \times १६ = २२४०००$
ख	वत्सादि ८ देशोकी	गगा-सिन्धु	१६	$१४००० \times १६ = २२४०००$
ग	पथादि ८ देशोकी	गगा-सिन्धु	१६	$१४००० \times १६ = २२४०००$
घ	वप्रादि ८ देशोकी	रक्ता-रक्तोदा	१६	$१४००० \times १६ = २२४०००$
५.	रम्यक्षेत्रमें	नारी-नरकान्ता	२	$५६००० \times २ = ११२०००$
६	हैरण्यवत क्षेत्रमें	सुवर्णकाला-रूप्यकाला	२	$२८००० \times २ = ५६०००$
७	ऐरावत क्षेत्रमें	रक्ता-रक्तोदा	२	$१४००० \times २ = २८०००$
			६०	परिवार नदियाँ = १७६२०००
				प्रमुख नदियाँ = + ६०
				कुल योग = १७६२०६०

कुण्डोका प्रमाण—

सरियाओ जेतियाओ, चेट्टते तेत्तियाणि कुंडाणि ।

विक्खादाओ ताम्रो, णिय - णिय - कुंडाण' एगामेहि ॥२४१६॥

अर्थ :—जितनी नदियाँ हैं उतने ही कुण्ड भी स्थित है । वे नदियाँ अपने-अपने कुण्डोके नामोंसे विख्यात हैं ॥२४१६॥

विशेषार्थ :— गंगा-सिन्धु आदि चौदह महानदियाँ कुलाचल पर्वतोसे जहाँ नीचे गिरती हैं, वहाँ कुण्ड है । उनकी संख्या १४ है । बारह विभंगा नदियोके उत्पत्ति-कुण्डोकी संख्या १२, बत्तीस विदेह देशोमेसे प्रत्येक देशमे दो-दो नदियाँ कुण्डोसे निकलकर बहती हैं अतः वहाँके कुण्डोका प्रमाण ६४ है, इसप्रकार (१० नदियोके) ये सब (१४ + १२ + ६४ =) ९० कुण्ड होते हैं ।

कुण्डोंके भवनोमे रहनेवाले व्यन्तरदेव—

बंतरदेवा बहुओ, णिय-णिय-कुंडाण णाम-विदिवाओ ।

पल्लाउ-पमाणओ, णिवसंती ताण दिव्व-गिरि-भवणे ॥२४१७॥

अर्थ :—अपने कुण्डोके नामोंसे विदित एक पल्यप्रमाण आयुवाले बहुतसे व्यन्तरदेव उन कुण्डोके दिव्य गिरि-भवनोंमें निवास करते हैं ॥२४१७॥

वेदियोंकी संख्या एव उत्सेधादि—

जेत्तिय कुंडा जेतिय, सरियाओ जेतियाओ वणसंडा ।

जेत्तिय सुर - णयरीओ, जेतिय जिणणाह - भवणाणि ॥२४१८॥

जेत्तिय बिज्जाहर - सेट्टियाओ^३ जेतियाओ पुरियाओ ।

अज्जाखंडे जेतिय, णयरीओ जेतियहि - दहा ॥२४१९॥

वेदीओ तेत्तियाओ, णिय-णिय-जोग्गाओ ताण पत्तोक्कं ।

ओयण - बलमुण्ण्हो, रुंवा चावाणि पंच - सया ॥२४२०॥

जो १ । दड ५०० ।

१. व. ब. क. ज. य. उ. कुण्डाणि । २. द. ब. क. उ. णिवसंताण, व णिवसंति ताण, ज. f
संतीण ताण । ३. द. ब. क. ज. य. उ. सट्टियाओ ताणं च ।

अर्थ :—जितने कुण्ड, जितनी नदियाँ, जितने वन-समूह, जितनी देव-नगरियाँ, जितने जिनेन्द्र-भवन, जितनी विद्याघर श्रेणियाँ, जितने नगर, आर्य खण्डोंकी जितनी नगरियाँ, जितने पर्वत और जितने द्रह हैं, उनमेंसे प्रत्येकके अपने-अपने योग्य उतनी ही वेदियाँ हैं। इन वेदियोंकी ऊँचाई प्राधा योजन और विस्तार पाँचसौ धनुष प्रमाण है ॥२४१८-२४२०॥

णवरि विसेसो एसो, देवारण्यस्स भूवारण्यस्स ।

जोयणमेक्कं उदग्गो, दड - सहस्सं च वित्थारो ॥२४२१॥

अर्थ :—विशेष यह है कि देवारण्य और भूतारण्यकी वेदियोंकी ऊँचाई एक योजन तथा विस्तार एक हजार धनुष प्रमाण है ॥२४२१॥

जिनभवनोकी सख्या—

कुंड - वणसंड - सरिया - सुरणयरी - सेल-तोरणद्वारा ।

विष्जाहर - वर - सेढी - णयरज्जाखंड - णयरीओ ॥२४२२॥

दह - पंचय - पुष्वावर - विदेहे-गामादि-सम्मली-रक्खा ।

जेत्तियमेत्ता जंबू - रक्खाईं तेत्तिया जिण - णिकेवा ॥२४२३॥

अर्थ :—कुण्ड, वनसमूह, नदियाँ, देवनगरियाँ, पर्वत, तोरणद्वार, विद्याघर श्रेणियोंके उत्तम गर, आर्यखण्डोंकी नगरियाँ, द्रह पचक (पाँच-पाँच द्रह), पूर्वापर-विदेहोके ग्रामादिक, शात्मलीवृक्ष और जम्बूवृक्ष जितने हैं उतने ही जिन-भवन भी हैं ॥२४२२-२४२३॥

कुल-शैलादिकोंकी संख्या—

छक्कुल-सेला सव्वे, विजयड्ढा होंति तीस चउ - जुत्ता ।

सोलस बक्खारगिरी, बारणबंता य चत्तारो ॥२४२४॥

६ । ३४ । १६ । ४ ।

अर्थ :—जम्बूद्वीपमें सब कुलपर्वत छह, विजयार्थ चौतीस, बक्खारगिरि सोलह और गजदन्त ती चार हैं ॥२४२४॥

तह अट्ट विग्गइंवा, णाभिगिरिंवा हवंति चत्तारि ।

ओसीस वसह - सेला, कंचण - सेला सयाण दुबे ॥२४२५॥

८ । ४ । ३४ । २०० ।

अर्थ :—दिग्गजेन्द्र पर्वत आठ (८), नाभिगिरीन्द्र चार (४), वृषभशैल चौतीस (३४) तथा काञ्चनशैल दोसी (२००) हैं ॥२४२५॥

एक्को य मेरु कूडा^१, पंच - सया अट्टसट्ठि - अठ्ठभहिया ।

सरा च्चिय महविजया, ओसीस हवंति कम्मभूमिओ ॥२४२६॥

१ । ५६८ । ७ । ३४ ।

अर्थ :—एक मेरु, पांचसी अष्टसठ (५६८) कूट, सात महाक्षेत्र और चौतीस (३४) कर्म-भूमियां हैं ॥२४२६॥

सत्तरि अब्भहिय-सयं, मेच्छखिदी छच्च भोगभूमिओ ।

चत्तारि जमल - सेला, जंबूदीवे समुद्दिट्ठा^२ ॥२४२७॥

एवं जंबूदीव-वण्णाणा समत्ता ॥२॥

अर्थ :—जम्बूद्वीपमे एकसी सत्तर म्लेच्छखण्ड, छह भोग-भूमियां और चार यमक-शैल कहे गए हैं ॥२४२७॥

विशेषार्थ :—जम्बूद्वीपमे सुदर्शन मेरु १, कुलाचल ६, विजयाध ३४, वक्षारगिरि १६ गजदन्त ४, दिग्गजेन्द्र ८, नाभिगिरि ४, वृषभाचल ३४, काञ्चनशैल २०० और यमकगिरि ४ हैं इन सबका योग करनेपर (१ + ६ + ३४ + १६ + ४ + ८ + ४ + ३४ + २०० + ४) = ३११ पर्वत होते हैं ।

कूट ५६८, महाक्षेत्र ७, कर्मभूमियां ३४, म्लेच्छखण्ड १७० और भोगभूमियां ६ हैं ।

इसप्रकार जम्बूद्वीपका वर्णन समाप्त हुआ ॥२॥

—: लवण समुद्र :—

लवणसमुद्रका आकार और विस्तारादि—

अस्थि लवणंबुरासी, जंबूदीवस्स खाड्यायारो ।
समबद्धो सो जोयण - बे - लक्ख - पमाण - वित्थारो ॥२४२८॥

२००००० ।

अर्थ :—लवणसमुद्र जम्बूद्वीपकी खाईके आकार गोल है । इसका विस्तार दो लाख (२०००००) योजन प्रमाण है ॥२४२८॥

णावाए उवरि णावा, अहो-मुही जह ठिवा तह समुद्धो ।
गयणे समंतदो सो, चेट्टेदि ह्नु चक्कबालेण ॥२४२९॥

अर्थ :—एक नावके ऊपर अधोमुखी दूसरी नावके रखनेमें जैसा आकार होता है, उसा-प्रकार वह समुद्र चारों ओर आकाशमें मण्डलाकारसे स्थित है ॥२४२९॥

चित्तोवरिम - तलावो, कूडायारेण उवरि वारिणिही ।
सत्त - सय - जोयणाइं, उदएण णहम्मि चेट्टेदि ॥२४३०॥

७०० ।

अर्थ :—वह समुद्र चित्रा-पृथिवीके उपरिम-तलसे ऊपर बृटके आकारमें आकाशमें सातसो (७००) योजन ऊंचा स्थित है ॥२४३०॥

उद्धे' भवेदि रुंदं, जलणिहिणो जोयणा बस-सहस्सा ।
चित्तावणि - पणिहीए, विक्खंभो दोणिण लक्खारिण ॥२४३१॥

१०००० । २००००० ।

अर्थ :—उस समुद्रका विस्तार ऊपर दस हजार (१००००) योजन और चित्रापृथिवीकी प्रणिधिमें दो लाख (२०००००) योजन प्रमाण है ॥२४३१॥

पत्तेक्कं दु-तडावो, पविसिय पणजउवि-जोयण-सहस्सा' ।

गाढे तम्हि सहस्सा, तलबासो वस - सहस्साणि ॥२४३२॥

६५००० । ६५००० । १०००० ।

अर्थ :—दोनों तटोमेसे प्रत्येक तटसे पंचानव हजार (६५०००, ६५०००) योजन प्रवेश करनेपर उसकी एक हजार योजन गहराईपर तल-विस्तार दस हजार (१००००) योजन प्रमाण है ॥२४३२॥

हानि-वृद्धि एवं भूध्यास और मुख-ध्यासका प्रमाण—

भूमिअ मुहं सोहिय, उवय - हिबं भू-मुहाउ-हाणि-चया ।

मुहमजुवं बे लबद्धा, भूमि जोयण - सहस्समुस्सेहो ॥२४३३॥

१०००० । २००००० । १००० ।

अर्थ :—भूमिमेसे मुखको कम करके ऊंचाईका भाग देनेपर भूमिकी ओरसे हानि और मुखकी ओरसे वृद्धिका प्रमाण प्राता है । यहाँ मुखका प्रमाण अयुत अर्थात् दस हजार (१००००) योजन, भूमि-का प्रमाण दो लाख योजन और जलकी गहराईका प्रमाण एक हजार (१०००) योजन है ॥२४३३॥

विस्तारका प्रमाण ज्ञात करनेकी विधि—

खय-वडढोण पमाणं, एक-सयं जोयणाणि णउवि-जुवं ।

इच्छा-हव-हाणि-चया, खिवि - होणा मुह - जुवा रुवं ॥२४३४॥

१६० ।

अर्थ :—उम अय-वृद्धिका प्रमाण एकसौ नव्वं (१६०) योजन है । इच्छासे गुणित हानि-वृद्धिके प्रमाणको भूमिमेसे कम अथवा मुखमें मिला देनेपर विवक्षित स्थानके विस्तारका प्रमाण जाना जाता है ॥२४३४॥

(२००००० - १००००) ÷ १००० = १६० हानि-वृद्धिका प्रमाण ।

उपरिम जलकी क्षय-वृद्धिका प्रमाण—

उपरिम-जलस्स जोयण, उणवीस-सयाणि सत्त-हुरिवाणि ।

क्षय - बद्धीण पमाणं, गादब्बं लवण - जलहिम्मि ॥२४३५॥

१०० ।

अर्थ :—लवणसमुद्रमें उपरिम (तटोंसे मध्यकी ओर और मध्यसे तटोंकी ओर) जलकी क्षय-वृद्धिका प्रमाण सातसे भाजित उन्नीसवाी योजन है । अर्थात् समतल भूमिसे जलकी हानि-वृद्धिका प्रमाण २७१ $\frac{३}{४}$ योजन है ॥२४३५॥

समुद्रतटसे ६५००० यो० भीतर प्रवेश करने पर वहाँ जलकी गहराई और ऊँचाईका प्रमाण—

प्रत्येकं दु-तडादो, पविसिय पणणउदि-जोयण-सहस्सा ।

गाढा तस्स सहस्सं, एवं सोहेज्ज अंगुलावीणं ॥२४३६॥

६५००० । १००० । १ $\frac{३}{४}$ ।^१

अर्थ :—दोनों तटोंमेंसे प्रत्येक किनारेसे पंचानबे हजार (६५०००) योजन प्रवेश करनेपर उसकी गहराई एक हजार (१०००) योजन प्रमाण है । इसीप्रकार अंगुलादिक शोध लेना चाहिए ॥२४३६॥

विशेषार्थ :—लवणसमुद्रके प्रत्येक तटसे ६५००० योजन प्रवेश करने पर वहाँ जलकी गहराई १००० योजन प्राप्त होती है । तब एक योजन प्रवेश करनेपर कितनी गहराई प्राप्त होगी ? इसप्रकार त्रैराशिक करनेपर ८४ धनुष, १ वितस्ति, १ पाद और २ $\frac{३}{४}$ अंगुल प्राप्त होते हैं । अर्थात् समुद्रमें एक योजन प्रवेश करनेपर वहाँ जलकी गहराई $\frac{१०००}{१००} = १०$ योजन अर्थात् ८४ धनुष, ० रिक्कू, ० हाथ, १ वि०, १ पाद और २ $\frac{३}{४}$ अंगुल प्राप्त होगी ।

दु-तडादो जल-मज्जे, पविसिय पणणउदि-जोयण-सहस्सा ।

सत्त - सयाइ उदलो, एवं सोहेज्ज^२ अंगुलावीणं ॥२४३७॥

६५००० । ७०० । १ $\frac{३}{४}$ ।^२

अर्थ :— दोनों तटोंसे जलके मध्यमें पंचाननै हजार (६५०००) योजन-प्रमाण प्रवेश करनेपर सातसौ योजन ऊँचाई प्राप्त होती है । इसीप्रकार अंगुलादिकोंको शोध लेना चाहिए ॥२४३७॥

विशेषार्थ — दोनों तटोंसे जलके मध्य ६५००० योजन प्रवेश करनेपर वहाँ जलकी ऊँचाई ७०० योजन प्राप्त होती है । तब एक योजन प्रवेश करनेपर कितनी ऊँचाई प्राप्त होगी ? इस प्रकार त्रैशिक करने पर $\frac{700}{65000} = \frac{1}{94}$ योजन अर्थात् ५८ घनुष, १ रिक्कू, १ हाथ, १ वितस्ति, १ पाद, ० अंगुल और $\frac{1}{100}$ जो प्रमाण ऊँचाई प्राप्त होगी ।

लवणसमुद्रमें पातालोंका निरूपण—

लवणोवहि-बहु-मञ्जे, पादाला ते समतदो ह्यंति ।

अट्ठत्तरं सहस्सं, जेट्ठा मञ्जा जहण्णा य' ॥२४३८॥

१००८ ।

अर्थ :—लवणोदधिके बहु-मध्य-भागमें चारों ओर उत्कृष्ट, मध्यम और जवन्य एक हजार आठ (१००८) पाताल है ॥२४३८॥

चत्तारो पायाला, जेट्ठा मञ्जल्लआ वि चत्तारो ।

होदि जहण्ण सहस्सं, ते सब्बे रंजणायारा ॥२४३९॥

४।४।१००० ।

अर्थ :—ज्येष्ठ पाताल चार, मध्यम चार और जवन्य एक हजार (१०००) हैं । ये सब पाताल राज्ञन अर्थात् घडेके आकार सदृश हैं ॥२४३९॥

ज्येष्ठ पातालोंका निरूपण—

उत्तिकट्ठा पायाला, पुब्बादि - दिसासु जलहि-मञ्जम्मि ।

पायाल - कब्बंक्खा^१, वडवामुह - जोवकेसरिणो ॥२४४०॥

अर्थ :—पूर्वादिक दिशाओंमें समुद्रके मध्यमें (१) पाताल, (२) कदम्बक, (३) वडवामुल और (४) यूपकेशरी नामक चार उत्कृष्ट पाताल हैं ॥२४४०॥

पुह पुह दु-तडाहिंतो, पविसिय पणणउदि जोयण-सहस्सा ।

लवणजले चत्तारो, जेट्ठा जेट्ठंति पायाला ॥२४४१॥

६५००० । ६५००० ।

अर्थ :—दोनों किनारोंसे लवणसमुद्रके जलमें पंचानन हजार (६५०००) योजन प्रमाण प्रवेश करनेपर पृथक्-पृथक् ये चार पाताल स्थित हैं ॥२४४१॥

पुह - पुह मूलमि मुहे, बित्थारो जोयणा दस-सहस्रा ।

उदधो वि एक्क - लक्खं, मञ्जिक्कम - रुंदो वि तम्मत्तं ॥२४४२॥

१०००० । १०००० । १ ल । १ न ।

अर्थ :—(इन) पातालोंका पृथक्-पृथक् मूल विस्तार दस-हजार (१००००) योजन, मुख विस्तार दस हजार (१००००) योजन, ऊँचाई एक लाख योजन और मध्यम विस्तार भी एक लाख योजन प्रमाण ही है ॥२४४२॥

जेट्टा ते संलग्गा, सीमंत - बिलस्स उवरिमे भागे ।

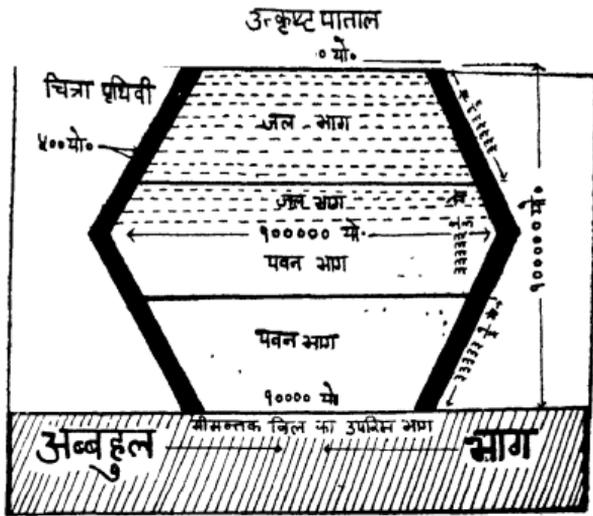
पण - सय - जोयण - बहला, कुड्डा एवाण वज्जमया ॥२४४३॥

५०० ।

अर्थ :—वे ज्येष्ठ पाताल सीमन्त बिलके उपरिम भागसे संलग्न हैं । इनकी वज्जमय भित्तियाँ पाँचसौ (५००) योजन प्रमाण मोटी हैं ॥२४४३॥

विशेषार्थ :—रत्नप्रभा नामकी प्रथम पृथिवी एक लाख अस्सी हजार (१८००००) योजन मोटी है । इसके खर, पक्क और अम्बहुल नाम वाले तीन भाग हैं जो क्रमशः १६०००, ८४००० और ८०००० योजन बाहुल्यवाले हैं । लवणसमुद्रकी मध्यम-परिधिपर जो चार ज्येष्ठ पाताल हैं वे अम्बहुल भागपर स्थित सीमन्तक बिलके उपरिम भागसे संलग्न हैं और इनसे चित्रा पृथिवी पर्यन्तकी ऊँचाई (पंकभाग ८४००० यो० + खरभाग १६००० यो० =) एक लाख योजन है ; इसीलिए ज्येष्ठ पातालोंकी ऊँचाई एक-एक लाख योजन कही गई है । इन पातालोंकी वज्जमय भित्तियाँ ५००-५०० योजन मोटी हैं ।

[चित्र अगले पृष्ठ पर देखिये]



मध्यम-पातालोका निरूपण—

जेट्टाणं विच्छासे, विविशसुं मञ्जिभमा बु पावाला ।

ताणं रुंद - प्पहुदि, उबिकट्टाणं हसंसेण ॥२४४४॥

१००० । १०००० । १००००० । १०००००० । ५० ।

अर्थ :—इन ज्येष्ठ पातालोके बीच विविशाओंमें मध्यम पाताल स्थित हैं और इनका विस्तारादिक उत्कृष्ट पातालोंकी अपेक्षा दसवे भाग प्रमाण है ॥२४४४॥

विशेषार्थ :—मध्यम पातालोका मूल विस्तार १००० योजन, मुख विस्तार १००० योजन, ऊंचाई १०००० योजन, मध्य विस्तार १०००० योजन और इनकी नक्षत्रमय भित्तियोंकी मोटाई ५० योजन प्रमाण है ।

नवनज्जदि-सहस्साणि, पंच-सया जोगणाणि बु - तडेसुं ।

पुह पुह पच्चिसिय सलिले, पायाला मञ्जिभमा ह्वीति ॥२४४५॥

६६५०० ।

अर्थ :—पृथक्-पृथक् दोनों किनारोंसे निन्यानवे हजार पाँच-सो (६६५००) योजन प्रमाण जलमें प्रवेश करनेपर मध्यम पाताल है ॥२४४५॥

जघन्य पातालोका निरूपण—

जेट्टाराण - मञ्जिभ्रमाणं, विञ्चालेसुं जहण्ण - पायाला ।

पुह पुह पण-घण-माण, मञ्जिभ्रम-दस-भाग-हंदादी ॥२४४६॥

१०० । १०० । १००० । १००० । ५ ।

अर्थ :—उत्कृष्ट और मध्यम पातालोंके बीच-बीचमे जघन्य पाताल स्थित हैं । प्रत्येक अन्तरालमें इनका पृथक्-पृथक् प्रमाण १२५-१२५ है । इनका विस्तारादिक मध्यम पातालोकी अपेक्षा दसवे भाग प्रमाण है ॥२४४६॥

विशेषार्थ :—उत्कृष्ट पाताल ४ है और मध्यम पाताल भी ४ हैं । इनके बीच-बीचमे ८ अन्तराल हैं । प्रत्येक अन्तरालमे १२५-१२५ जघन्य ($१२५ \times ८ = १०००$) पाताल स्थित हैं । इनका मूल विस्तार १०० योजन, मुख विस्तार १०० योजन, ऊँचाई १००० योजन, मध्य विस्तार १००० योजन और मोटाई ५ योजन प्रमाण है ।

णवणउदि-सहस्साणि, णव-सय-पण्णास-जोयणाणि तथा ।

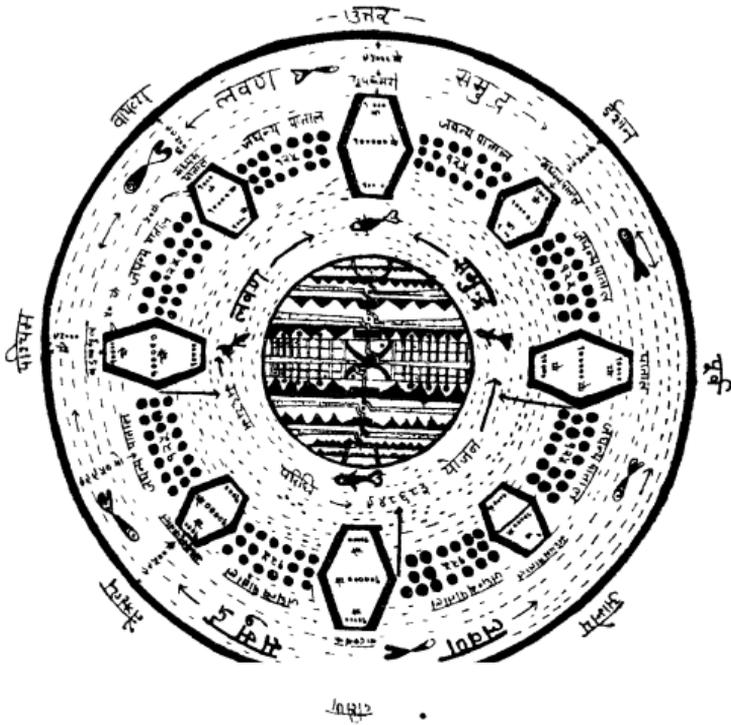
पुह पुह दु - तडाहितो, पविसिय छेट्ठंति अबरे वि ॥२४४७॥

६६६५० ।

अर्थ :—पृथक्-पृथक् दोनों किनारोंसे निन्यानवे हजार नौ सौ पचाम (६६६५०) योजन प्रमाण (जलमे) प्रवेश करनेपर जघन्य पाताल स्थित हैं ॥२४४७॥

नोट :—तीनों प्रकारके पातालोंकी स्पष्ट स्थिति लवणसमुद्रके निम्नाङ्कित चित्रण द्वारा ज्ञातव्य है—

[चित्र अगले पृष्ठ पर देखिये]



नोट :—इन पातालोकी स्थिति समुद्रमे नीचेकी ओर इस आकार की है। उनके स्वरूप और उनकी अवस्थितिसे अवगत करानेके लिए चित्रमे उन्हें इसप्रकार दिखाया गया है।

ज्येष्ठ और मध्यम पातालोंका अन्तराल प्राप्त करनेकी विधि—

जेट्टाणं मुह-रुदं, जलनिहि-मज्झल्ल-परिहि-मज्झम्मि ।

सोहिय - चउ - पविहत्तं, हवेदि एक्केक्क - विच्चालं ॥२४४८॥

अर्थ :—लवणसमुद्रकी मध्यम परिधिमेसे ज्येष्ठ पातालोंका मुख-व्यास (१००० × ४ = ४००० यो०) और मध्यम पातालोका मुख-व्यास (१००० × ४ = ४००० यो०) घटाकर शेषमें चारका भाग देनेपर जो-जो लब्ध प्राप्त हो वही एक-एक पातालके अन्तरालका प्रमाण है ॥२४४८॥

लवण समुद्रकी मध्यम परिधिका प्रमाण —

णव-लक्ष - जोयणाइ, अडवाल-सहस्स-छत्सयाणं पि ।

तेसोवी अघियाइ, सायर-मच्छिभल्ल-परिहि-परिमाणं ॥२४४६॥ .

६४८६८३ ।

अर्थ :—लवणसमुद्रकी मध्यम परिधि नौ लाख अड़तालीस हजार छहसौ तेरासी (६४८६८३) योजन प्रमाण है ॥२४४६॥

विशेषार्थ :—लवणसमुद्रका मध्यम सूची व्यास ३ लाख योजन प्रमाण है । गाथा ६ के निम्नमानुसार परिधिका प्रमाण—

परिधि = $\sqrt{३ \text{ लाख} \times ३ \text{ लाख} \times १०} = ६४८६८३$ यो० परिधि । $\frac{२३१७०}{३}$ यो० अवशेष बचे जो छोड़ दिए गये ।

ज्येष्ठ पातालिका अन्तराल—

सत्तावीस - सहस्सा, सत्तरि - जुत्तं सयं तु वे - लक्ष्णा ।

जोयण - ति - चउग्भागा, जेड्डाणं होबि विच्चालं ॥२४५०॥

२२७१७० । $\frac{३}{१}$ ।

अर्थ :—ज्येष्ठ पातालिका के बीच-बीचका अन्तराल दो लाख सत्ताईस हजार एकसौ सत्तर और एक योजनके चार भागोंमेंसे तीन भाग (२२७१७० $\frac{३}{१}$ योजन) प्रमाण है ॥२४५०॥

विशेषार्थ :—लवणसमुद्रकी मध्यम परिधि [६४८६८३ — (१०००० × ४)] $\div ४ = २२७१७० \frac{३}{१}$ योजन एक ज्येष्ठ पातालसे दूसरे ज्येष्ठ पातालके मुखके अन्तरका प्रमाण है ।

मध्यम पातालिका अन्तराल—

छत्तीस - सहस्साणि, सत्तरि - जुत्तं सयं तु वे लक्ष्णा ।

जोयण - ति - चउग्भागा, मच्छिभमयाणं च विच्चालं ॥२४५१॥

२३६१७० । $\frac{३}{१}$ ।

अर्थ :—मध्यम पातालिका अन्तराल दो लाख छत्तीस हजार एकसौ सत्तर और एक योजनके चार भागोंमेंसे तीनभाग (२३६१७० $\frac{३}{१}$ यो०) प्रमाण है ॥२४५१॥

विशेषार्थः :—[६४८६८३—(१०००×४)]-४ = २३६१७०.३ योजन एक मध्यम पातालसे दूसरे मध्यम पातालके मुखके अन्तरका प्रमाण है ।

ज्येष्ठ पातालोंसे मध्यम पातालोंके मुखोंका अन्तर—

जेट्टुं तर - संखादो, एक - सहस्रसम्मि समवणीवम्मि ।

अद्ध - फदे जेट्टाणं, मज्झिम्मयाणं च विच्चालं ॥२४५२॥

जोयण - लक्खं तेरस - सहस्सया पंचसीदि - संजुता ।

तं विच्चाल - पमाणं, दिवड्ढ - कोसेण अबिरित्तं ॥२४५३॥

११३०८५ । को ३ ।

अर्थ :—ज्येष्ठ पातालोंके अन्तराल-प्रमाणमेसे एक हजार (१०००) कम करके आधा करनेपर ज्येष्ठ और मध्यम पातालोंका अन्तराल-प्रमाण निकलता है, जो एक लाख तेरह हजार पचासी योजन और डेढ़ कोस अधिक है ॥२४५२-२४५३॥

विशेषार्थ :—पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशागत ज्येष्ठ पातालोंके मुखसे मुखका अन्तर २२७१७०.३ योजन है । इसमेसे विदिशागत मध्यम पातालका मुख व्यास १००० योजन घटाकर आधा करनेपर दिशागत ज्येष्ठ पाताल और विदिशागत मध्यम पातालोंके मुखसे मुखका अन्तर प्राप्त होता है । यथा—

(२२७१७०.३ यो० — १००० यो०) - २ = ११३०८५ योजन और १.३ कोस ।

जघन्य पातालसे जघन्य पातालके मुखका अन्तर—

जेट्टाण मज्झिमाणं, विच्चम्मि जहण्णयाण मुह-वासं ।

फेडियं^१ सेसं विगुणिय - तेसट्टीए कय - विभागे ॥२४५४॥

जं लद्धं अवराणं, पायालाणं तमंतरं होदि ।

तं माणं सत्त - सया, अट्टाणउदी य सवितेसा ॥२४५५॥

७६८ । ३३१ । ७३१ ।

अर्थ :—ज्येष्ठ और मध्यम पातालौके अन्तराल-प्रमाणमेंसे जघन्य पातालौके मुख-विस्तार को कम करके शेषमें द्विगुणित तिरैसठ अर्थात् एकसौ छब्बीसका भाग देनेपर जो लब्ध भावे उतना जघन्य पातालौका अन्तराल होता है। उसका प्रमाण सातसौ अट्टानबं योजनमेंसे अधिक है ॥२४५४-२४५५॥

विशेषार्थ :—उपर्युक्त गाथामें ज्येष्ठ और मध्यम पातालका अन्तराल ११३०८५ योजन और ३ कोस कहा गया है। ज्येष्ठ और मध्यम पातालौके प्रत्येक अन्तरालमें १२५-१२५ जघन्य पाताल हैं। इनका मुख व्यास १०० योजन प्रमाण है अतः १२५ × १०० = १२५०० योजन मुख विस्तारको ११३०८५ यो०, ३ कोसमेंसे घटाकर (११३०८५ १/२ यो० — १२५०० = १००५८५ १/२ यो०) लब्धको १२६ (ज्येष्ठ पाताल १ + म० पाताल १ + ज० पाताल १२५ = १२७ पातालौके अन्तराल १२६ ही होते हैं) से भाजित करनेपर जघन्य पातालौके अन्तरालका प्रमाण ७९८१३ १/२ + ३ १/२ यो० अर्थात् ७९८ योजन और २३ ७/१३ अनुष प्राप्त होता है।

प्रत्येक पातालके विभाग एवं उनमें स्थित वायु तथा जलादिका प्रमाण—

पत्तेषकं पायासा, ति - वियप्पा ते ह्वंति कमदीणं ।

हेद्दाहितो बावं, जलबावं सलिसमासेज्जं ॥२४५६॥

अर्थ :—प्रत्येक पाताल क्रमशः जल, जल और वायु तथा नीचे वायुका आश्रय लेकर तीन प्रकारसे विद्यमान है ॥२४५६॥

तेत्तीस-सहस्साणि, ति - सया तेत्तीस जोजन-ति-भागो ।

पत्तेषकं जेद्धानं, पमाणमेवं तियंसस्स ॥२४५७॥

३३३३३ । ३ ।

अर्थ :—ज्येष्ठ पातालौमेंसे प्रत्येक पातालके तीसरे भागका प्रमाण तैत्तीस हजार तीनसौ तैत्तीस योजन और एक योजनका तीसरा भाग (३३३३३ १/३ योजन) है ॥२४५७॥

विशेषार्थ :—लवणसमुद्रकी चारों दिशाओंमें एक लाख योजन ऊँचाई वाले चार ज्येष्ठ पाताल हैं। ऊँचाईकी अपेक्षा इनके तीन भाग करनेपर (३०००००) ३३३३३ १/३ योजनमें वायु, ३३३३३ १/३ योजनमें वायु एवं जल और ३३३३३ १/३ योजनमें मात्र जल विद्यमान है।

मध्यम और जघन्य पातालोंमें जलादिकका विभाग—

तिष्णि सहस्त्रा ति-सया, तेत्तीस-जुबाणि जोयण-ति-भागो ।
पत्तेकं नावब्बं, 'मञ्जिभूमय - तियंस - परिमाणं ॥२४५८॥

अर्थ :—मध्यम पातालोमेंसे प्रत्येकके तीसरे भागका प्रमाण ($1^{\circ}30'00'' = 33333$ यो०)
तीन हजार तीनसौ तेतीस योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे एक भाग (33333 योजन)
जानना चाहिए ॥२४५८॥

तेत्तीसवहियाणं, तिष्णि सयाणं च जोयण-ति-भागो ।
पत्तेकं बटुब्बं, तियंस - माणं जहण्णाणं ॥२४५९॥

३३३३ ।

अर्थ :—जघन्य पातालोमेंसे प्रत्येकके तीसरे भागका प्रमाण तीनसौ तेतीस योजन और एक
योजनके तृतीयभाग ($1^{\circ}30'00'' = 33333$ यो०) जानना चाहिए ॥२४५९॥

लवणसमुद्रके जलमें हानि-वृद्धि होनेका कारण—

हेट्टिल्लम्मि ति-भागे, वसुमइ - विवरण केवलो बादो ।
मञ्जिभल्ले जलबादो, उवरिल्ले सलिल - पम्भारो ॥२४६०॥

पवणेण पुट्ठियं तं, चलाचलं मञ्जिभमं सलिल - वावं ।
उवरिं चेट्ठि सलिलं, पवणाभावेण केवलं तेषुं ॥२४६१॥

अर्थ :—पृथिवीके विवर (गड्ढे) स्वरूप इन पातालोंके ऊपरके त्रिभागमें केवल जल,
मध्यम भागमें जल तथा वायु और नीचेके भागमें मात्र वायु बिद्यमान है । उन पातालोंके तीन भागोंमेंसे
मध्यका जल-वायुवाला त्रिभाग पहले भाग (नीचे) के पवनसे (प्रेरित हुआ) चलाचल होता है ।
ऊपरके भागमें पवनका प्रभाव होनेसे केवल जल रहता है ॥२४६०-२४६१॥

विशेषार्थ :—शुक्ल तथा कृष्ण पक्षमें लवणसमुद्रके जलकी वृद्धि-हानिमें मध्यम भागमें
स्थित जल और वायुका चंचलपना ही कारण है ।

यादालार्थं 'मरुदा, पक्खे सीदम्मि बह्वंति य ।

होयीति किष्ण - पक्खे, सहावदो सव्व - कालेषु ॥२४६२॥

अर्थ :-पातालोकें पवन सर्वकाल स्वभावसे ही शुक्लपक्षमें बढ़ते हैं और कृष्णपक्षमें घटते हैं ॥२४६२॥

ज्येष्ठ पातालोंमें पवनकी वृद्धिका प्रमाण—

बह्वी बावीस - सया, बावीसा जोयथाणि अदिरिणा^१ ।

पवणे^२ सिद - पक्खे य - प्यडिवासं पुष्पिमं जाव ॥२४६३॥

२२२२ । ३ ।

अर्थ :-शुक्लपक्षमें पूर्णिमा तक प्रतिदिन दो हजार दो सौ बाईस योजनोंसे भी अधिक पवनकी वृद्धि हुमा करती है ॥२४६३॥

विश्लेषार्थ^३ :-ज्येष्ठ पातालके मध्यम भागमें पूर्णिमा पर्यन्त वायु-वृद्धिका प्रमाण ३३३३३३ योजन है । यथा—जबकि १५ दिनोंमें (वायु) वृद्धिचयका प्रमाण ३३३३३३ यो० है तब एक दिनमें वृद्धिचयका क्या प्रमाण होगा ? इसप्रकार त्रैशक्तिक करनेपर ($\frac{३३३३३३}{१५} =$) २२२२३ यो० मध्यम भागमें पवनकी वृद्धिका प्रमाण प्राप्त होता है । इसीप्रकार कृष्णपक्षमें अमावस्या पर्यन्त वायुका हानिचय और जलका वृद्धि चय समझना चाहिए ।

पूर्णिमा और अमावस्याको पातालोंकी स्थिति—

पुष्पिमाए हेहादो, णिय - णिय - दु-ति-भागमेत्त-यादासे ।

चेट्टुदि वाऊ उवरिम - तिय - भागे केवलं सत्तिसं ॥२४६४॥

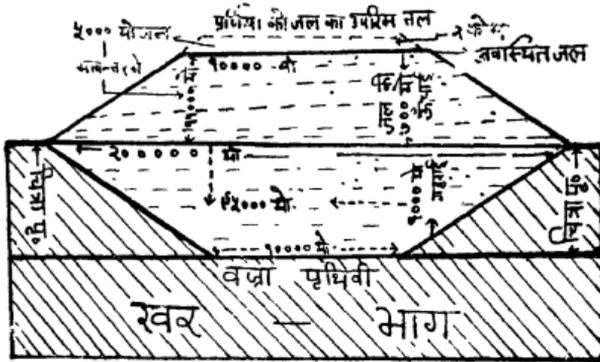
अर्थ :-पूर्णिमाको पातालोके अपने-अपने तीन भागोंमेंसे नीचेके दो भागोंमें वायु और ऊपरके तृतीयभागमें केवल जल विद्यमान रहता है ॥२४६४॥

अमवस्से उवरीदो, णिय-णिय-दु-ति-भागमेत्त-परिमाणे ।

कमसो सत्तिसं हेट्टिम - तिय - भागे केवलं वारदं ॥२४६५॥

१. द. व. क. ज. य. उ. परिदा । २. द. व. क. ज. य. उ. अदिरिणे । ३. द. व. क. ज. य. उ.

अर्थ :- प्रभावस्थाको अपने-अपने तीन भागोमेसे क्रमशः ऊपरके दो भागोंमें जल रहता है और नीचेके तीसरे भागमें केवल वायु रहती है ॥२४६५॥



लवण समुद्र

समुद्रजलकी हानि-वृद्धिका प्रमाण—

पेलिज्जंतो उवही, पवर्णोह तहेव सीमंते ।

बड्ढदि हायदि गयणे, दंड - सहस्साणि चत्तरि ॥२४६६॥

दिवसं पडि अट्ट-सयं, ति-हिवा वंडाणि सुक्कि-किण्हाए^१ ।

खय - वड्ढी पुव्वुत्तयवट्ठिद - वेलाए उवरि जलहिजलं ॥२४६७॥

९०° ।

अर्थ :- सीमन्त बिलपर (स्थित उत्कृष्ट पातालोकी) वायु द्वारा समुद्रका जल आकाशमें फेका जाता है जो चार हजार (४०००) धनुष बढता है और इतना ही घटता है । इसीलिए पूर्वोक्त (७०० योजन ऊपर अवस्थित) जलमें शुक्लपक्षमे प्रतिदिन तीनसे भाजित आठसी (९०°) धनु अर्थात् २६६ धनुष, २ हाथ और १६ अंगुल वृद्धि और कृष्णपक्षमे उतनी ही हानि हुआ करत है ॥२४६६-२४६७॥

विशेषार्थः :—शुक्लपक्षमें पूर्णिमा पर्यन्त समुद्रका जल अपनी सीमासे (७०० यो० से) ४००० धनुष पर्यन्त बढ़ जाता है और कृष्णपक्षमें अमावस्या पर्यन्त इतना ही घट जाता है । जबकि १५ दिनमें जल ४००० धनुष बढ़ता या घटता है तब एक दिनमें कितना घटेगा या बढ़ेगा ? इसप्रकार त्रैराशिक करनेपर हानि-वृद्धि चयका प्रमाण $४\frac{१०}{१००}$ धनुष या $८\frac{१०}{१००}$ अर्थात् २६६ $\frac{२}{३}$ धनुष प्राप्त होता है ।

लोगादणी ग्रन्थका भी यही मत है—

पुह-पुह दु-तडाहिहो, पबिसिय पणणउदि-जोयण-सहस्सा ।

लवणजले बे कोसा, उदयो सेसेसु हाणि - चयं ॥२४६८॥

अर्थ :—पृथक्-पृथक् दोनों किनारोंसे पंचानबै हजार योजन प्रमाण प्रवेश करने पर लवणसमुद्रके जलमें दो कोस ऊँचाई एवं शेषमें हानि-वृद्धि है ॥२४६८॥

अमवस्साए उवही, सरिसो भूमिए होदि सिद - पक्खे ।

कमेण^३ वड्ढेदि णहे, कोसाणि दोणिए^३ पुण्णिमए ॥२४६९॥

अर्थ :—लवणसमुद्र अमावस्याके दिन भूमि सदृश (समतल) होता है । पुनः शुक्लपक्षमें आकाशकी ओर क्रमशः बढ़ता हुआ पूर्णिमाको दो कोस प्रमाण बढ़ जाता है ॥२४६९॥

हाएदि किण्ह - पक्खे, तेण कमेणं च जाव वड्ढिगदं ।

एवं लोगादणिए, गंधप्पवरम्मि णिहिट्टं ॥२४७०॥

अर्थ :—वह समुद्र (शुक्लपक्षमें) जितना वृद्धिगत हुआ था कृष्ण पक्षमें उसी क्रमसे उतना-उतना ही घटता जाता है । इसप्रकार श्रेष्ठ ग्रन्थ लोगादणीमें बतलाया गया है ॥२४७०॥

अन्य आचार्यके मतानुसार समुद्रके जलकी हानि-वृद्धि—

एककरस-सहस्साणि, जलणिहिणो जोयणाणि गयणम्मि ।

भूमोदो उच्छेहो, होदि अवट्टिद - सरूवेणं ॥२४७१॥

११००० ।

[पाठान्तरं]

१. द. ब. क. ज. य. उ. सरिसे । २. द. कमवड्ढेदि णहे, ब. ज. क. य. उ. कमवड्ढेदि णहेणं ।

३. द. ब. क. उ. पुण्णमिए ।

अर्थ :—मूमिसे आकाशमें समुद्रकी ऊँचाई भवस्थितरूपसे ग्यारह हजार (११०००)
योजन प्रमाण है ॥२४७१॥

[पाठान्तर

तस्तोषरि सिव - पक्षे, पंच-सहस्राणि ज्योयणा कमसो ।

ब्रह्मेवि जलरिणिहि - जलं, ब्रह्मले हाएवि तम्मेत्तं ॥२४७२॥

५००० ।

[पाठान्तरं

अर्थ :—शुक्लपक्षमें इसके ऊपर समुद्रका जल क्रमशः पाँच हजार योजन प्रमाण बढ़ता है
और कृष्णपक्षमें इतना ही हानिको प्राप्त होता है ॥२४७२॥

[पाठान्तर

पातालमुखोके पार्श्वभागोंमें जलकणोंके विस्तारका प्रमाण—

पायालंते गिय - गिय - मुह - विक्खंभे हवम्मि पंचेहि ।

गिय-गिय-परिणधोसु णहे, सलिल - कणा जंति. तम्मेचा ॥२४७३॥

५०००० । ५००० । ५०० ।

अर्थ :—पातालोके अन्तमें अपने-अपने मुख-विस्तारको पाँचसे गुणा करनेपर जो प्राप्त
हो, तत्प्रमाण आकाशमें अपने-अपने पार्श्वभागोंमें जलकण जाते हैं ॥२४७३॥

विशेषार्थ :—ज्येष्ठादि पातालोका मुख-विस्तार क्रमशः १०००० यो०, १००० यो० और
१०० योजन है । शुक्लपक्षमें जब जल-वृद्धिगत होता हुआ बढ़ता है तब ज्येष्ठ पातालोंके पार्श्वभागोंमें
५०००० योजन पर्यन्त, मध्यम पातालोंमें ५००० योजन और जघन्य पातालोंके पार्श्वभागोंमें ५००
योजन पर्यन्त जलकण उछलते हैं ।

‘लोगाइणी’ और लोकविभागके मतानुसार जलशिखरका विस्तार—

जल-सिहरे विक्खंभो, जलणिहिणो ज्योयणा दस-सहससा ।

एवं संगाइणिए, लोयविभाए बि णिहिट्टं ॥२४७४॥

१०००० ।

पाठान्तरम् ।

अर्थ :- जलशिखरपर समुद्रका विस्तार दस हजार (१००००) योजन है । इसप्रकार संवाङ्गीमें और लोकविभागमें कहा गया है ॥२४७४॥

पाठान्तर ।

लवणसमुद्रके दोनो तटोंपर और शिखरपर स्थित नगरियोंका वर्णन—

दु - तडाए सिहरम्मि य, वलयायारेण विष्व-णयरीओ ।

जसणिहिणो चेट्टंते, बावाल - सहस्स-एक्क-लक्खारिण ॥२४७५॥

०

१४२००० ।

अर्थ :- समुद्रके दोनो किनारोपर तथा शिखरपर वलयके आकारसे एक लाख बयालीस हजार (१४२०००) दिव्य नगरियां स्थित हैं ॥२४७५॥

अर्धन्तर - वेदीवो, सत्त - सयं जोयणाणि उबहिम्मि ।

पबिसिय 'आयासेसु', बावाल - सहस्स - णयरीओ ॥२४७६॥

७०० खे^२ । ४२००० ।

अर्थ :- अर्धन्तर वेदीसे सातसौ योजन ऊपर जाकर आकाशमें समुद्रपर बयालीस हजार ४२०००) नगरियां हैं ॥२४७६॥

बाहिर - वेदीहितो, सत्त - सया जोयणाणि उबरिम्मि ।

पबिसिय आयासेसु', णयरीओ बिहत्तरि सहस्सा ॥२४७७॥

७०० । ७२००० ।

अर्थ :- बाह्य-वेदीसे सातसौ योजन ऊपर जाकर आकाशमें समुद्रपर बहत्तर हजार ७२०००) नगरियां हैं ॥२४७७॥

लवणोबहि-बहु-मज्जे, सत्त-सया जोयणाणि दो कोसा ।

गंतूण होंति गयणे, ^३अडवीस - सहस्स - णयरीओ ॥२४७८॥

जो ७०० । को २ । २८००० ।

अर्थ :-लवणसमुद्रके बहु-मध्य-भागमें सातसौ योजन और दो कोस (७००^३ योजन) प्रमाण उमर जाकर आकाशमें अट्टाईस हजार (२८०००) नगरियाँ हैं ॥२४७८॥

नयरीस्य तडा' बहु-विह-वर-रयस्यमया ह्वन्ति समबद्धा ।

एदाचं पत्तेककं, विषसंनो ज्योष - दस - सहस्सा ॥२४७९॥

१०००० ।

अर्थ :-नगरियोंके तट बहुत प्रकारके उत्तम रत्नोंसे निर्मित समान-गोल हैं । इनमेंसे प्रत्येकका विस्तार दस हजार (१००००) योजन प्रमाण है ॥२४७९॥

पत्तेककं रणयरीचं, तड - वेदीओ ह्वन्ति दिव्वाओ ।

धुव्वंत - धय - बडाओ, वर - तोरण - पट्टवि-जुत्ताओ ॥२४८०॥

अर्थ :-प्रत्येक नगरी की फहराती हुई ध्वजा-पताकाओं और उत्तम तोरणादिकसे संयुक्त दिव्य तट-वेदियाँ हैं ॥२४८०॥

ताचं वर-पासादा^४, पुरीच वर-रयण-णियर-रमणिज्जा ।

चेद्वन्ति हु देवाणं, वेसंवर - युजग - णामाणं ॥२४८१॥

अर्थ :-उन नगरियोंमें उत्कृष्ट रत्नोंके समूहोंसे रमणीय बेलन्दर और युजग नामक (नागकुमार) देवोंके प्रामाद स्थित हैं ॥२४८१॥

जिञ्च-मन्दिर-रम्माओ, पोक्खरणी उववणेहि जुत्ताओ ।

को वणिज्जुं समत्यो, अणाइजिह्वाओ नयरीओ ॥२४८२॥

अर्थ :-जिनमन्दिरोंसे रमणीय और वापिकाओं तथा उपवनोंसे संयुक्त इन अनादि-निघन नगरियोंका वर्णन करनेमें कौन समर्थ हो सकता है ? ॥२४८२॥

बणिज्ज-सुराण नयरी-पणिओए जलहि-वु-तड-सिहरेसुं ।

वज्ज - पुडवीए उव्वारि, तेसिय-नयराणि के वि भासन्ति ॥२४८३॥

पाठान्तरम् ।

१. द. व. क. न. य. उ. तथा । २. द. व. क. न. य. उ. तद । ३. द. व. क. न. य. उ. दिव्याम् ।

४. द. व. क. न. य. उ. पासादो ।

अर्थ :—समुद्रके दोनों किनारोंपर और धिखरपर बतलाई गई देवोंकी नगरियोंके पार्श्व-भागमें वज्रमय पृथिवीके ऊपर भी इतनी ही नगरियाँ हैं, ऐसा कितने ही आचार्य वर्णन करते हैं ॥२४८३॥

पाठान्तर ।

पातालके पार्श्वभागमें स्थित आठ पर्वतोंका निरूपण—

बाबाल-सहस्साणि, जोयणया जलहि - दो - तडाहितो ।
पबिसिय खिदि - विबरणं', पासेसु' होंति अट्टगिरी ॥२४८४॥

४२००० ।

अर्थ :—समुद्रके दोनों किनारोसे बयालीस हजार (४२०००) योजन प्रमाण प्रवेश करके पातालके पार्श्वभागमे आठ पर्वत हैं ॥२४८४॥

सोलस-सहस्स-अहियं, जोयण लक्खं च तिरिय-विकखंभं ।
पत्तोक्काणं जगदी - गिरीणि 'मिलिव्वण दो - लक्खा ॥२४८५॥

११६००० । ८४००० । २००००० ।

अर्थ :—प्रत्येक पर्वतका तिरछा विस्तार एक लाख सोलह हजार (११६०००) योजन प्रमाण है । इसप्रकार जगतीसे पर्वतो तकका अन्तराल (४२००० + ४२००० = ८४०००) तथा पर्वतोंका विस्तार मिलाकर कुल (११६००० + ८४००० = २०००००) दो लाख योजन होता है ॥२४८५॥

ते कुंभद्ध - सरिच्छा, सेला जोयण - सहस्समुत्तुंगा ।
एदाणं 'णामाहं, ठाण - विभागं च भासेमि ॥२४८६॥

१००० ।

अर्थ :—अर्धघटके सदृश वे पर्वत एक हजार (१०००) योजन ऊँचे हैं । इनके नाम और स्थान-विभाग कहते हैं ॥२४८६॥

१. द. ज. य. खिदिबराण । २. द. क. ज. य. मिलिव्वेण दो लक्खा, ३. उ. मिलिदोलक्खा ।

३. द. ब. क. ज. य. उ. णामाए ।

पादालस्स दिसाए, पच्छिमए कोत्तुभो 'वसवि सेलो ।

पुब्बाए 'कोत्थभासो, दोष्णिण वि ते वज्जमय - मूला ॥२४८७॥

अर्थ :—पातालकी पश्चिमदिशामें कौस्तुभ और पूर्व दिशामें कौस्तुभास पर्वत स्थित हैं । वे दोनों पर्वत वज्जमय मूलभागमें संयुक्त हैं ॥२४८७॥

मज्झम्मि-रजद-रच्चिदा, अग्रगेसुं विविह-विठ्ठव-रयणमया ।

चरि - अट्टालय - चारू, तड - वेदो - तोरणेहि जुवा ॥२४८८॥

अर्थ :—ये पर्वत मध्यभागमें रजत (चाँदी) से और अग्रभागमें विविध प्रकारके दिव्य रत्नसे निर्मित हैं, तथा मृन्दर मार्गो अट्टालयो, तट-वेदियों एव तोरणोंमें युक्त हैं ॥२४८८॥

ताणं हेट्ठिम-मज्झम्म-उवरिम-वासाणि संपद्द पणट्ठा ।

तेसुं वर - पासादा, विबिसत्त - रुवा विरायंति ॥२४८९॥

अर्थ :—इन पर्वतोंके नीचे का, मध्यका और ऊपरका जो कुछ विस्तार है, उसका प्रमाण इससमय नष्ट हो गया है । इन पर्वतोंपर विचित्र रूपवाले उत्तम प्रासाद विराजमान हैं ॥२४८९॥

वेलंधर - बेंतरया, पव्वद - णामेहि संजुवा तेसुं ।

कीडंति मंदिरेसुं, विजयो व्व णिआउ - पट्टवि - जुवा ॥२४९०॥

अर्थ :—इन प्रासादोंमें विजयदेवके सदृश अपनी आयु-आदिसे युक्त और पर्वतोंके नामोंसे संयुक्त वेलन्धर व्यन्तरदेव क्रीडा करते हैं ॥२४९०॥

उदको णामेण गिरी, होदि कवंवस्स उत्तर - दिसाए ।

उदकाभासो दक्षिणए - दिसाए ते नीलमणि - वण्णा ॥२४९१॥

अर्थ :—कदम्ब-पातालको उत्तर-दिशामें उदक नामक पर्वत और दक्षिण-दिशामें उदकाभास नामक पर्वत स्थित हैं । ये दोनों पर्वत नीलमणि जैसे वर्णवाले हैं ॥२४९१॥

सिव-णामा सिवदेओ, कमेण उवरिम्मि ताण सेलारुं ।

कोत्थुभदेव - सरिच्छा, आउ - प्पट्टवीहि चेट्ठंति ॥२४९२॥

१. द. ब. क. ज. य. उ. मसवि । २. द. क. ब. य. कुंभुभासो, व. कुत्तभासो, उ. कुंभुभासो,
३. द. ब. क. ज. य. उ. पणट्ठा ।

अर्थ :—उन पर्वतोके ऊपर क्रमशः शिव और शिवदेव नामक देव निवास करते हैं। इनकी प्रायु-आदि कौस्तुभदेवके सदृश है ॥२४६२॥

बडबामुह - पुञ्जाए, दिसाए संख त्ति पचवदो होदि ।

पच्छिमए महसंखो, दिसाए ते संख - सम - वण्णा ॥२४६३॥

अर्थ :—बडबामुख पातालकी पूर्व-दिशामें शङ्ख और पश्चिम-दिशामे महाशङ्ख नामक पर्वत हैं। ये दोनों ही पर्वत शङ्ख सदृश वर्णवाले हैं ॥२४६३॥

उदगो उदगाभासो, कमसो उवरिम्मि ताण छेटुंति ।

देवा आउ - प्पहुदिसु, उदगाचल - देव - सारिच्छा ॥२४६४॥

अर्थ :—इन पर्वतोंपर क्रमशः उदक और उदकाभास नामक देव स्थित हैं। ये दोनों देव आयु-आदिमें उदक-पर्वतपर स्थित देव सदृश हैं ॥२४६४॥

दक-णामो होदि-गिरो, दक्खिण-भागम्मि जूवकेसरिणो ।

दकवासो उत्तरए, भाए वेरुलिय - मणिमया दोष्णि ॥२४६५॥

अर्थ :—यूपकेशरीके दक्षिण-भागमें दक नामक पर्वत और उत्तर भागमे दकवास नामक पर्वत स्थित हैं। ये दोनों ही पर्वत बडूयंमणियमय हैं ॥२४६५॥

उवरिम्मि ताण कमसो, लोहिद-णामो य लोहिदकवसो ।

उदय - गिरिस्स सरिच्छा, आउ - प्पहुदोसु होंति सुरा ॥२४६६॥

अर्थ :—उन पर्वतोंपर क्रमशः लोहित और लोहिताङ्क नामक देव निवास करते हैं। ये देव प्रायु-आदिमें उदक पर्वत पर रहनेवाले देव सदृश हैं ॥२४६६॥

एवाणं देवाणं, जयरीओ अवर - जंबुदीवम्मि ।

होंति^३ णिय-णिय-दिसाए, अवराजिद-णयर-सारिच्छा ॥२४६७॥

अर्थ :—इन देवोंकी नगरियाँ अपर जम्बूद्वीपमें अपनी-अपनी दिशामें अपराजित नगरके सदृश हैं ॥२४६७॥

लवणसमुद्रस्थ सूर्यद्वीपादिकोका निर्देश—

बादल - सहस्साहं, जोयण्या जंबुद्वीव - जगदीवो ।
गंतुण अट्ट दीवा, णामेणां 'सूरदीवो त्ति ॥२४६८॥

४२००० ।

अर्थ :- जम्बूद्वीपकी जगतीसे बयालीस हजार (४२०००) योजन जाकर 'सूर्यद्वीप' नामसे प्रसिद्ध आठ द्वीप हैं ॥२४६८॥

पुण्ड्र-पवण्णिव-कोत्थुह-पट्टदीणं ह्वंति दोसु पासेसुं ।
एवे दीवा मणिमय, जिण्णिव - पासाव - रमण्णजा ॥२४६९॥

अर्थ :- मणिमय जिनेन्द्र-प्रासादोसे रमणीय ये द्वीप पूर्वमे बतलाए हुए कौस्तुभादिक पर्वतोके दोनो पार्श्वभागोमे स्थित हैं ॥२४६९॥

सव्वे ते समवट्टा, बादल - सहस्स - जोयण - पमाणा ।
चरियट्टालय - चारु, तड - वेदी तोरणोहि जुवा ॥२५००॥

४२००० ।

अर्थ :- वे सब द्वीप गोल है । बयालीस हजार (४२०००) योजन प्रमाण विस्तार युक्त हैं तथा सुन्दर मार्गों, अट्टालयो, तट-वेदियो एवं तोरणोसे युक्त हैं ॥२५००॥

वेल्लंधर - देवानं, अहिवड्ड - देवा वसंति एवेसुं ।
बट्ट - परिवारा दस - धणु - तुंगा पल्लं पमाणाऊ ॥२५०१॥

अर्थ :- दस धनुष ऊंचे श्रोर एक पत्थ प्रमाण आयुवाले वेल्लंधर नामक अधिपति देव बहुत परिवारसे संयुक्त होकर इन द्वीपोमें रहते हैं ॥२५०१॥

लवणंबुद्धि - जगदीवो, पविसिय बादल-जोयण-सहस्सा ।
चड - गिरिवो पासेसुं, सूर - द्वीवो च्च चंबदीवा य ॥२५०२॥

अर्थ :—लवणसमुद्रकी जगतीसे बयालीस हजार (४२०००) योजन प्रमाण प्रवेश करके चारों पर्वतोंके पार्श्वभागोंमें सूर्य द्वीपोंकी भाँति चन्द्र-द्वीप हैं ॥२५०२॥

बारस - सहस्समेत्ता, जोयणया जंबुदीव - जगदीबो ।
गंतूणणिल - विसाए, होदि समुद्दम्मि रवि - दीओ ॥२५०३॥

अर्थ :—लवणसमुद्रमे जम्बूद्वीपको जगतीसे बारह हजार (१२०००) योजन प्रमाण जाकर वायव्य दिशामे 'रवि' नामक द्वीप है ॥२५०३॥

चित्तोवरिम - तलादो, उवरि बारस-सहस्स-जोयणया ।
उत्तुंगो समवट्टो, तेलिय - रुंवा य गोदमो णाम ॥२५०४॥

अर्थ :—चित्रापृथिवीके उपरिम तलसे ऊपर बारह हजार (१२०००) योजन प्रमाण ऊँचा, गोल और बारह हजार योजन विस्तारवाला गीतम नामक द्वीप है ॥२५०४॥

विजयो व्व वण्णण - जुदो, वेंतरदेवा वि गोदमो णाम ।
तस्सि दीवाहिर्वई, चेट्टुति पल्लं पमाणाऊ ॥२५०५॥

अर्थ :—उस द्वीपका अधिपति गीतम नामक व्यन्तरदेव एक पत्न्य प्रमाण आयुवाला है और विजयदेवके समान वर्णनसे युक्त है ॥२५०५॥

भरहुडभंतर - वण्णिव, गंगा - पणिधीए लवणतोयम्मि ।
संखेज्ज - जोयणार्णि, गंतूणं होदि मागघो दीओ ॥२५०६॥

अर्थ :—पूर्व कथित भरतक्षेत्रकी गगानदीके पार्श्वसे लवणसमुद्रमें सख्यात योजन जानेपर मागघद्वीप है ॥२५०६॥

उच्छेह-वास-पट्टुदिसु, उवएसो तस्स संपइ - पणट्टो ।
चित्त चउ - वण्ण - चारु, जिणिव-भवणेहि रमणिज्जो ॥२५०७॥

अर्थ :—(वह मागघद्वीप) चित्तको प्रिय रंगोसे सुन्दर एक जिनेन्द्र भवनोसे रमणीय है । इस समय उस द्वीपके उत्त्थेध और विस्तारादिके विषयमें उपदेश नष्ट हो गया है ॥२५०७॥

तस्सि दीवाहिर्वई, मागघ - णामेण वेंतरो देवो ।
वट्टु - परिवारा कीडवि, विविह - विणोदेण तम्मि पल्लाऊ ॥२५०८॥

अर्थ :—उस द्वीपका अधिपति मागध नामक व्यन्तर देव एक पत्न्यकी आयुवाला है और उस द्वीपमें बहुत परिवार युक्त अनेक प्रकारके विनोद पूर्वक क्रीड़ा करता है ॥२५०८॥

पणिधीए जंबुदीवं, खिदि - वणिगद वइजयंत वारेस ।

संखेज्ज - जोयणार्णि, गंतुणं लवणसलिलम्मि ॥२५०९॥

वरतणु - णामो वीओ, जिणिब-पासाब-भूसिबो रम्मो ।

रंवाविसु उववेसो, काल - वसा तस्स उच्छण्णो ॥२५१०॥

अर्थ :—जम्बूद्वीपके पार्श्वभागके क्षेत्रमें (पूर्व) वर्णित वैजयन्त द्वारसे लवणसमुद्रके जलमें संख्यात योजन जाकर जिनेन्द्र-भवनोंसे विभूषित अत्यन्त रमणीय वरतणु नामक द्वीप है । जिसके विस्तार-आदिका उपदेश काल-वश नष्ट हो गया है ॥२५०९-२५१०॥

तस्सि वीवाहिवई, वरतणु - णामेण बंतरो देवो ।

बहु - बिह - परिवार - जुवो, कीडबि लीलाए पल्लाऊ ॥२५११॥

अर्थ :—उस द्वीपका अधिपति वरतणु-नामक व्यन्तरदेव एक पत्न्यकी आयुवाला है और बहुत प्रकारके परिवारसे युक्त होकर लीला-पूर्वक क्रीड़ा करता है ॥२५११॥

भरहक्खेत्त - पवणिगद, सिधु-पणिधीए लवणजलहिम्मि ।

संखेज्ज - जोयणार्णि, गच्छिय वीओ पभासेत्ति ॥२५१२॥

अर्थ :—पूर्व वर्णित भरतक्षेत्रकी सिन्धुनदीके पार्श्वभागसे लवणसमुद्रके जलमें संख्यात योजन जाकर प्रभास नामक द्वीप है ॥२५१२॥

मागधवीव - समारणं, सखं चिय वण्णणं पभासत्त ।

वेहुवि परिवार - जुवो, पभास - णामो सुरो तस्सि ॥२५१३॥

अर्थ :—प्रभासद्वीपका सम्पूर्ण वर्णन मागधद्वीपके सदृश है । इस द्वीपमें परिवारसे युक्त होकर प्रभास नामक देव रहता है ॥२५१३॥

एरावद - बिजओविद - रचोवा - वाहिणीए पणिधीए ।

मागधवीव - सरिच्छो, होवि समुद्धम्मि मागधो वीओ ॥२५१४॥

अर्थ :—ऐरावत-क्षेत्रमें कहीं हुई रक्तोदा नदीके पार्श्वभागमें मागधद्वीपके सट्टण (लवण) समुद्रमें मागधद्वीप है ॥२५१४॥

अबराजिद-वारस्स - प्पणिधीए होदि लवणजलहिम्मि ।

वरतणु - णामो दीओ, वरतणु - वीवोवमो अण्णो ॥२५१५॥

अर्थ :—अपराजितद्वारके पार्श्वभागमें वरतनुद्वीपके सट्टण अन्य वरतनु नामक द्वीप लवण-समुद्रमें स्थित है ॥२५१५॥

एरावद-खिंद-णिग्गद-रत्ता-पणिधीए लवणजलहिम्मि ।

अण्णो पभास - दीओ, पभास - बीओ व्व चेट्टेदि ॥२५१६॥

अर्थ :—लवणसमुद्रमें ऐरावतक्षेत्रमेंसे निकली हुई रक्तानदीके पार्श्वभागमें प्रभासद्वीपके सट्टण अन्य प्रभासद्वीप स्थित है ॥२५१६॥

जे अरुभंतरभागे, लवणसमुद्रस्स पव्वदा दीवा ।

ते सब्बे चेट्टेते, णियमेणं बाहिरे भागे ॥२५१७॥

अर्थ :—लवणसमुद्रके अभ्यन्तरभागमें जो पर्वत और द्वीप हैं, वे सब नियमसे उसके बाह्य-भागमें भी स्थित हैं ॥२५१७॥

४८ कुमानुष-द्वीपोका निरूपण—

दीवा लवणसमुद्दे, अडवाल कुमानुसाण चउवीसं ।

अरुभंतरम्मि भागे, तेलियमेचाए बाहिरए ॥२५१८॥

४८ । २४ । २४

अर्थ :—लवणसमुद्रमें अडवालीस (४८) कुमानुष-द्वीप हैं । इनमेंसे बीबीस (२४) द्वीप तो अभ्यन्तर भागमें और इतने (२४) ही बाह्य-भागमें हैं ॥२५१८॥

चत्तारि चउ-विसासुं, चउ - विविसासुं हवंति चत्तारि ।

अंतर - विसासु अट्ट य, अट्ट य गिरि-पणिधि-ठाणेसुं ॥२५१९॥

४ । ४ । ८ । ८ ।

अर्थ :- चौबीस द्वीपोंमेंसे चारों दिशाओंमें चार, चारों विदिशाओंमें चार, अन्तर-दिशाओंमें आठ और पर्वतोंके पार्श्वभागोंमें आठ (४+४+८+८=२४) द्वीप हैं ॥२५१६॥

पंच - सय - जोयखाणि, गंतूणं जंबुदीव - जगदीदो ।

चत्तारि होंति दीवा, बिसासु विबिसासु तम्भेतं ॥२५२०॥

५०० । ५०० ।

अर्थ :- जम्बूद्वीपकी जगतीसे पांचसौ (५००) योजन जाकर चार द्वीप चारो दिशाओंमें और इतने (५००) ही योजन जाकर चार द्वीप चारों विदिशाओंमें भी हैं ॥२५२०॥

पञ्चाहिय - पंच - सया, गंतूणं होंति अंतरा दीवा ।

छस्सय - जोयणमेत्तां, गच्छिय गिरि-पणिधि-गद-दीवा ॥२५२१॥

५५० । ६०० ।

अर्थ :- अन्तर दिशाओंमें स्थित द्वीप जम्बूद्वीपकी जगतीसे पांचसौ पचास (५५०) योजन और पर्वतोंके पार्श्वभागोंमें स्थित द्वीप छहसौ योजन प्रमाण जाकर हैं ॥२५२१॥

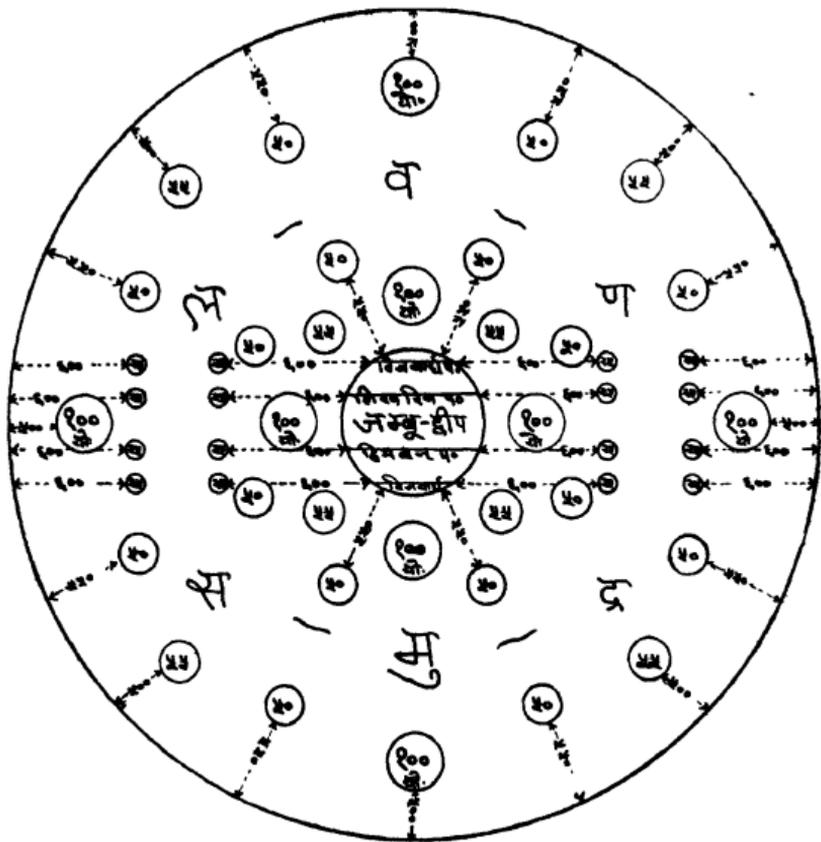
एक-सयं पणवणा, पणा पण्वीस जोयणा कमसो ।

वित्थार - जुदा ताभं, एककेवकं होदि तड - वेदी ॥२५२२॥

१०० । ५५ । ५० । २५ ।

अर्थ :- ये द्वीप क्रमशः एकसौ, पचपन, पचास और पन्चीस योजन-प्रमाण विस्तारसे सहित हैं । उनमेंसे प्रत्येक द्वीप एक-एक तट-वेदी युक्त हैं ॥२५२२॥

विशेषार्थ :- (गा० २५१८ से २५२२ तक का) लवण समुद्रके अग्र्यन्तर तटसे बाहरकी ओर और बाह्यतटसे भीतरकी ओर दिशा सम्बन्धी १००-१०० योजन विस्तार वाले चार द्वीप ५०० योजन दूर (जलकी ओर) जाकर हैं । विदिशा सम्बन्धी ५५-५५ योजन विस्तार वाले चार द्वीप ५०० योजन दूर हैं । अन्तर दिशा सम्बन्धी ५०-५० योजन विस्तारवाले आठ द्वीप ५५० योजन दूर हैं और पर्वतोंके निकटवर्ती २५-२५ योजन विस्तारवाले आठ द्वीप ६०० योजन दूर जाकर स्थित हैं । लवणसमुद्रगत ४८ कुमानुष द्वीप अर्थात् कुम्रोग-भूमियोंका चित्रण निम्न प्रकार है—



ते सव्ये वर - बीवा, वण - संडेहि वहेहि रमणिज्जा ।

फल-कुसुम-भार-भरिबा', रसेहि महुरेहि सलिलेहि ॥२५२३॥

अर्थ :—वे सब उत्तम द्वीप मधुर रस वाले फल-फूलोंके भारसे युक्त वन-वण्डों धीर बलसे परिपूर्ण तालाबोंसे रमणीय हैं ॥२५२३॥

कुभोगभूमिमें उत्पन्न मनुष्योंकी भ्राकृतिका निरूपण—

एषकोरुक् - लंगुलिका^१, वेसणकाभासका य जाबोहँ ।
पुब्बादिसुं^२ दिसासुं, चउ - दीवानं कुमानुसा होंति ॥२५२४॥

अर्थ :—पूर्वादिक दिशाओंमें स्थित चार द्वीपोंके कुमानुष क्रमशः एक जंघावाले, पूँछवाले, सींगवाले और अभाषक अर्थात् शूंगे होते हुए इन्हीं नामोंसे युक्त हैं ॥२५२४॥

सक्कुलिकण्णा कण्णप्पावरणा लंबकण्ण - ससकण्णा ।
अग्गि - दिसादिसु कमसो, चउ - दीव-कुमानुसा एवे ॥२५२५॥

अर्थ :—आग्नेय-आदिक विदिशाओमें स्थित चार द्वीपोंके ये कुमानुष क्रमशः शङ्कुलीकर्ण, कर्णप्रावरण, लम्बकर्ण और शशकर्ण होते हैं ॥२५२५॥

सिहत्स - साण-महिस^३-स्वरहा-सद्दूल-घूक-कपि-ववणा ।
सक्कुलि - कण्णकोरुग - पहुदीणं अंतरेसु ते कमसो ॥२५२६॥

अर्थ :—शङ्कुलीकर्ण और एकोरुक आदिकोंके बीचमें अर्थात् अन्तर-दिशाओंमें स्थित आठ द्वीपोंके ये कुमानुष क्रमशः सिंह, अश्व, श्वान, महिष, वराह, शार्दूल, घूक और बन्दरके मुख सहस्र मुखवाले होते हैं ॥२५२६॥

मच्छ-मुहा काल-मुहा, हिमगिरि-पणिधीए पुब्ब-पच्छिमदो ।
मेस - मुह - गो - मुहक्खा, दक्खिण-वेयड्ड-परिणधीए ॥२५२७॥

अर्थ :—हिमवान् पर्वतके प्रणिधिभागमें पूर्व-पश्चिम दिशाओंमें क्रमशः मत्स्यमुख एवं कालमुख तथा दक्षिण-विजयाधके प्रणिधिभागमें मेषमुख एवं गोमुख कुमानुष रहते हैं ॥२५२७॥

पुब्बावरेण सिंहिरि - प्पणिधीए मेघ-विञ्जु-मुह-णामा ।
आदंसण - हत्थि - मुहा, उचर - वेयड्ड - पणिधीए ॥२५२८॥

१. ब. क. ज. य. उ. रगुलिका । २. ब. क. उ. साणपहयरिभोवरहा । द. ब. व. साणपहयरिव-

अर्थ :- शिखरीपर्वतके पूर्व-पश्चिम प्रशिषिभागमें क्रमशः मेघमुख एवं विद्युन्मुख तथा उत्तर-विजयाधके प्रशिषिभागमें भादर्श (दर्पण) मुख एवं हस्तिमुख कुमानुष होते हैं ॥२५२८॥

एककोष्णा गुहासुं, वसन्ति भुञ्जति मट्टियं मिट्ठं ।

तेसा तर - तल - बासा, पुष्केहि फलेहि जीवन्ति ॥२५२९॥

अर्थ :- इन सबमेंसे एकोष्क कुमानुष गुफाओंमें रहते हैं और मीठी मिट्टी खाते हैं । शेष सब कुमानुष वृक्षोंके नीचे रहकर फल-फूलोंसे जीवन व्यतीत करते हैं ॥२५२९॥

बावइसंड - विसासुं, तेसियमेसा बि अंतरा बीवा ।

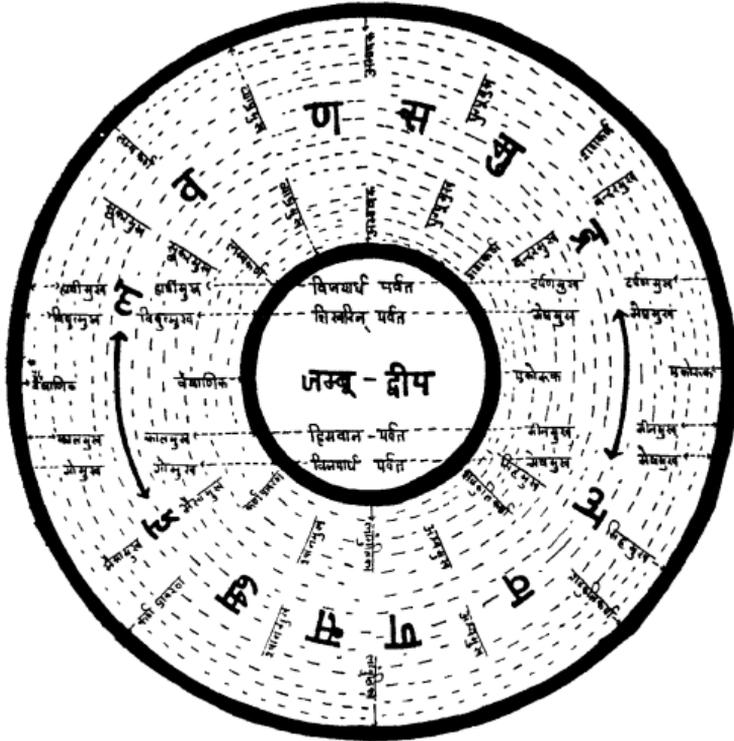
तेसुं तेसियमेसा, कुमानुसा होंति तण्णामा ॥२५३०॥

अर्थ :- घातकीखण्डद्वीपकी दिशाओंमें भी इतने (४८) ही अन्तरद्वीप और उनमें रहने वाले पूर्वोक्त नामोंसे युक्त उतने हो कुमानुष हैं ॥२५३०॥

विशेषार्थ :- सबएसमुद्रकी पूर्व दिशागत द्वीपोंमें एकोष्क-एक जंघावाले, दक्षिणमें लांगुलिका-पूँछवाले, पश्चिममें वंषारिणक-सींगवाले और उत्तर दिशामें अभाषक-गूंगे कुमनुष्य रहते हैं । आग्नेयमें शम्कुलिकर्ण, नैऋत्यमें कर्णप्रावरण-जिनके कर्ण वस्त्रोंके सदृश शरीरका आच्छादन करते हैं, वायव्यमें लम्बकर्ण और ईशानमें शसकर्ण कुमनुष्य रहते हैं । दिशा एवं विदिशाओंके आठ अन्तरालोंमें क्रमशः सिंहमुख, अदवमुख, श्वानमुख, महिष (भेसा) मुख, बराह (सूकर) मुख, शार्ङ्गल (ब्याघ्र) मुख, घूक (घुग्घू) मुख और बन्दरमुख कुमनुष्य रहते हैं । हिमवान् कुलाचलके समीप पूर्वदिशामें मोनमुख और पश्चिममें कालमुख, दक्षिण-विजयाधके समीप पूर्वमें मेघमुख और पश्चिममें गोमुख, शिखरोकुलाचलके पूर्वमें मेघमुख और पश्चिममें विद्युन्मुख तथा उत्तर-विजयाधके पूर्वमें दर्पणमुख और पश्चिममें हाथीमुख कुमनुष्य रहते हैं ।

[चित्र अगले पृष्ठ पर देखिये]

इनका चित्रण निम्न प्रकारसे है—



मतान्तरसे उन द्वीपोंकी स्थिति एव कुमानुषोंके नाम भिन्नरूपसे दशति हैं—

लौयविभागाइरिया, दीवाण कुमाणसेहि कुत्तारं ।

अण्ण - सरुवेण ठिदि, भासते तं परुवेनो ॥२५३१॥

अर्थ :—लोकविभागानुसारं कुमानुषोंसे युक्त उन द्वीपोंकी स्थिति भिन्नरूपसे बतलाते हैं ।

(अब उसके अनुसार) उसका निरूपण करते हैं ॥२५३१॥

पण्णाधिय - पंच - सया, गंतूणं ज्ञोयणाणि विदिसासुं ।

दीवा दिसासु अंतर - विसासु पण्णास - परिहीणा ॥२५३२॥

५५० । ५०० । ५०० ।

अर्थ :- ये द्वीप जम्बूद्वीपकी जगतीसे पाँचसौ पचास (५५०) योजन जाकर विदिशाओमें और इससे पचास योजन कम अर्थात् केवल (५००) योजन प्रमाण जाकर दिशाओमें एवं (५०० यो० ही) अन्तर-दिशाओमें स्थित हैं ॥२५३२॥

ज्ञोयण-सय-विषखंभा, अंतर - दीवा तथा दिसा-दीवा ।

पण्णा सं वा विदिसा-दीवा पण्णवीस सेल-पणिधि-गया ॥२५३३॥

१०० । १०० । ५० । २५ ।

अर्थ :- अन्तर-दिशा तथा दिशागत द्वीपोंका विस्तार एकसौ (१००) योजन, विदिशाओमें स्थित द्वीपोंका विस्तार पचास (५०) योजन और पर्वतोंके प्रणिधिभागोंमें स्थित द्वीपोंका विस्तार पच्चीस (२५) योजन प्रमाण है ॥२५३३॥

पुवं व गिरि-पणिधि-गदा छस्सय-ज्ञोयणाणि चेट्ठंति—

अर्थ :- पर्वत-प्रणिधिगत द्वीप पूर्वके सदृश ही जम्बूद्वीपकी जगतीसे छहसौ (६००) योजन जाकर स्थित हैं ।

एक्कोरुक-वेसणिका, लंगुलिका तह अभासगा तुरिमा ।

पुब्बादिसु वि दिसासुं, चड-दीवाणं कुमाणुसा कमसो ॥२५३४॥

अर्थ :- पूर्वादिक दिशाओमें स्थित चार द्वीपोंके कमानुष क्रमशः एक-जवावाले, सीगवाले, छिवाले और गूंगे होते हैं ॥२५३४॥

अण्णलादिसु विदिसासुं, ससकण्णा ताण उभय-पासेसुं ।

अट्ठ य अंतर - दीवा, पुब्बग्गि - दिसावि - गणणिज्जा ॥२५३५॥

अर्थ :- आग्नेय आदिक विदिशाओके चार द्वीपोंमें षण-कर्ण कुमानुष होते हैं । उनके दोनों पर्वभागोंमें आठ अन्तरद्वीप हैं, जो पूर्व-आग्नेय-दिशादिके क्रमसे जानना चाहिए ॥२५३५॥

पुव्व-दिसट्ठिय-एक्कोरुकाण, अग्गि - दिसट्ठियं सस - कण्णाराणं, विञ्जाला
विस्सु कमेण अटंत्तर-दीव-ट्ठिवकुमाणुस-णामाणि गणिदव्वा—

अर्थ :—पूर्व दिशामे स्थित एकोरुक और आग्नेय दिशामे स्थित शशकर्ण कुमानुषोके
अन्तराल आदिक अन्तरालोमें क्रमश आठ अन्तर-द्वीपोंमे स्थित कुमानुषोके नामोको गिनना
चाहिए—

केसरि-मुहा मणुस्सा, चक्कुलि-कण्णा अ चक्कुली - कण्णा ।

साण-मुहा कपि-वदणा, चक्कुलि-कण्णा अ चक्कुली-कण्णा ॥२५३६॥

ह्य - कण्णाइं कमसो, कुमाणुसा तेसु होंति दीवेसुं ।

धूक-मुहा काल-मुहा, हिमवंत-गिरिस्स पुव्व-पच्छिमदो ॥२५३७॥

अर्थ :—इन अन्तरद्वीपोंमे क्रमश केशरीमुख, शङ्कुलीकर्ण, शङ्कुलिकर्ण, श्वानमुख,
वानरमुख, शङ्कुलिकर्ण, शङ्कुलिकर्ण और अश्वकर्ण कुमानुष होते हैं । हिमवान् पर्वतके पूर्व-पश्चिम-
भागोंमे क्रमश वे कुमानुष धूक (उल्लू) मुख और कालमुख होते हैं ॥२५३६-२५३७॥

गो-मुह-मेष-मुहक्खा, दक्खिण-वेयड्ढ-पणिधि-दीवेसुं ।

मेघ-मुहा विज्जु-मुहा, सिहरि-गिरिदस्स पुव्व-पच्छिमदो ॥२५३८॥

अर्थ :—(वे कुमानुष) दक्षिण-विजयार्धके प्रणिधिभागस्थ द्वीपोंमे गोमुख और मेषमुख
तथा शिखरी-पर्वतके पूर्व-पश्चिम द्वीपोंमे मेघमुख और विज्जुमुख होते हैं ॥२५३८॥

दपण-गय-सरिस-मुहा, उत्तर-वेयड्ढ-पणिधिभाग-गदा ।

अभन्तरम्मि भागे बाहिरए होंति तम्मोत्ता ॥२५३९॥

अर्थ :—उत्तर-विजयार्धके प्रणिधिभागोंको प्राप्त हुए वे कुमानुष क्रमशः दपण और हाथी
सदृश मुखवाले हैं । जितने (२४) कुमानुष अभ्यन्तर भागमें हैं, उतने (२४) ही बाह्यभागमे
हैं ॥२५३९॥

कुमानुष द्वीपोंमें कौन उत्पन्न होते हैं ? उसका निरूपण—

मिच्छस्त-तिभिर^१-छन्ना, मंत्र-कसाया पियंबवा कुडिला ।
 धम्मफलं मग्गंता, मिच्छा - देवेसु भत्तिपरा ॥२५४०॥
 सुद्धोदण-सजिलोदण-कंजिय-असणादि-कदूठ-सुकिसिट्ठा ।
 पंचग्नि - तवं विसयं, काय - किलेसं च कुब्बंता ॥२५४१॥
 सम्मस-रयण-हीणा, कुमानुसा लवणजलहि - बीबेसुं ।
 उप्पज्जंति अघण्णा^२, अण्णाण - जलम्मि मज्जंता ॥२५४२॥

अर्थ :—मिथ्यास्वरूपी अन्धकारसे भ्राच्छन्न, मन्द-कषायी, प्रिय बोलनेवाले, कुटिल (परिणामी), धर्म-फलको खोजनेवाले, मिथ्यादेवोंकी भक्तिमें तत्पर; शुद्ध श्रोदन, जल और श्रोदन एवं काँजी खानेके कष्टसे संकलेशको प्राप्त, विषम पञ्चाग्नि तथा कायक्लेश करनेवाले और सम्यक्स्वरूपी रत्नसे रहित अज्ञानरूपी जलमें डूबते हुए अग्रन्थ (पुण्यहीन या अकृतार्थ या अज्ञानी) जीव लवणसमुद्रके द्वीपोंमें कुमानुष उत्पन्न होते हैं ॥२५४०-२५४२॥

अदि-माण-गन्धिवा जे, साहूण कुजंति किचिं^३ अन्नमाणं ।
 संजम^४ - तव - सुत्तारां, जे णिग्गंथाण दूसणा वेत्ति ॥२५४३॥
 जे मायाचार - रवा, संजम-तव-जोग-वज्जिवा पावा ।
 इडिठ - रस - साव - गारव - गरुवा जे मोहमावण्णा ॥२५४४॥
 भूल - सुहमादिचारं, जे णालोचंति गुरु-जण-समीवे ।
 सक्क्याय - वंदणाओ, जे गुरु - सहिवा एण कुब्बंति ॥२५४५॥
 जे छंडिय मुणि - संघं, वसंति एकाकिणो दुराचारा ।
 जे कोहेण य कलहं, सव्वेहितो पकुब्बंति ॥२५४६॥

१. द. व. क. ज. य. उ. तिमिरता । २. द. उ. अघण्णमा । ३. द. व. क. ज. य. उ. अन्नमाणा ।
 ४. द. व. क. ज. य. उ. सम्मस । ५. द. व. क. ज. य., उ. सव्वेहितो ।

आहार - सण्ण - सत्ता, लोह-कसाएण जणिव-मोहा जे ।

धरिमाणं जिण - लिंगं, पावं कुब्बन्ति जे घोरं ॥२५४७॥

जे कुब्बन्ति ण भत्ति, अरहंताणं तहेव साहूणं ।

जे वच्छल्ल - विहीणा, चाउव्वणम्मि संघम्मि ॥२५४८॥

जे गेष्हंति सुवण्ण-प्पट्टदि जिण-लिंग-धारिणो हिट्ठा' ।

कण्णा - विवाह - पट्टवि, संजव - रुबेण जे पकुब्बन्ति ॥२५४९॥

जे भुंजंति विहीणा, मोणेणं घोर - पाव - संलग्गा ।

अणअण्णदरुवयादो, सम्मत्तं जे विणासंति ॥२५५०॥

ते काल - वसं पत्ता, फलेण पाबाण बिसम - पाकाणं ।

उप्पज्जंति कुरूवा, कुमाणुसा जलहि - दीवसुं ॥२५५१॥

अर्थ :—जो (जीव) तीव्र अभिमानसे गर्वित होकर, सम्यक्त्व और तपसे युक्त साधुओंका किञ्चित् भी अपमान करते हैं । जो दिग्म्बर साधुओंकी निन्दा करते हैं, जो पापी, समय-तप एवं प्रतिमायोगसे रहित होकर मायाचारमें रत रहते हैं, जो ऋद्धि, रस और सात इन तीन गारवोंसे महान् होते हुए मोहको प्राप्त हैं, जो स्थूल और सूक्ष्म दोषोंकी आलोचना गुरुजनोंके समीप नहीं करते हैं, जो गुरुके साथ स्वाध्याय एवं वन्दनाकर्म नहीं करते हैं जो दुराचारी मुनि सब छोड़कर एकाकी रहते हैं, जो क्रोधके वशीभूत हुए सबसे कलह करते हैं, जो आहार-सज्जामे आसक्त और लोभ-कषायसे मोहको प्राप्त होते हैं जो जिन-लिंग धारण करते हुए (भी) घोर पाप करते हैं, जो अरहन्तों (आचार्य-उपाध्याय) तथा साधुओंकी भक्ति नहीं करते हैं; जो चातुर्वर्ण्य संघके विषयमें वात्सल्य-भावसे विहीन होते हैं; जो जिनलिंगके धारी होकर सुवर्णादिकको हर्षसे ग्रहण करते हैं, जो सयमोंके वेषसे कन्या-विवाहादिक करते हैं, जो मोनके बिना भोजन करते हैं, जो घोर पापमें संलग्न रहते हैं, जो अनन्तानुबन्धिचतुष्टयमेंसे किसी एकके उदित होनेसे अपना सम्यक्त्व नष्ट करते हैं, वे मृत्युको प्राप्त होकर विषम परिपाकवाले पाप-कर्मोंके फलसे (लवण और कालोदक) समुद्रोंके इन द्वीपोंमें कृत्स्न-रूपसे युक्त कुमानुष उत्पन्न होते हैं ॥२५४३-२५५१॥

इसी विषयका प्रतिपादन त्रिलोकसार गाथा ६२२-६२४ में निम्नप्रकारसे किया गया है—

बिरल-रिगते मायावी, जोइस-मंतोवजीवि बरल-कंसा ।
 धइ-गडरब-सण्य-जुवा, करंति जे पर - बिबाहंपि ॥१॥
 बंसल - बिराहवा जे, दोसं खालोबयंति दूसखगा ।
 पंचगि - तथा मिच्छा, मोरुं परिहरिय भुंजंति ॥२॥
 दुग्भाव - झुबुचि - सुबग - पुष्कई - आइ-संकरादीह ।
 कय - बाया बि कुबसे, जीवा कुखरेसु जायंते ॥३॥

अर्थ :—जो जीव जिनलिंग धारणकर मायाचारी करते हैं, ज्योतिष एवं मन्त्रादि विद्याओं द्वारा आजीविका करते हैं, धनके इच्छुक हैं, तीन गारव एवं चार संज्ञाओंसे युक्त हैं, गृहस्थोंके विवाह आदि कराते हैं, सम्यग्दर्शनके विराधक हैं, अपने दोषोंकी आलोचना नहीं करते, दूसरोंको दोष लगाते हैं, जो मिथ्यादृष्टि पञ्चाग्नि तप तपते हैं, मीन छोड़कर आहार करते हैं तथा जो दुर्भावना, अपवित्रता, सूतक आदिसे एवं पुष्पवती स्त्रीके स्पर्शसे युक्त तथा (*विपरीत कुलोंका मिलना है लक्षण जिसका ऐसे) जातिसङ्कर आदि दोषों सहित होते हुए भी दान देते हैं और जो कुपात्रोंको दान देते हैं, वे सब जीव मरकर कुमनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं ।

नोट :—जम्बूद्वीप पण्यती सर्ग १० गाथा ५६-७६ में भी यही विषय दृष्टव्य है ।

कुमानुषोंका वर्णन—

गढभावो ते मणुवा, जुगलं जुगला सुहेज रिणस्सरिया ।
 तिरिया समुच्छिबेहि, दिणेहि धारंति तादृष्णा ॥२५५२॥

अर्थ :—वे मनुष्य और तिर्यंच युगल-युगलरूपमें गर्भसे सुखपूर्वक निकलकर अर्थात् जन्म लेकर समुचित दिनोंमें यौवन धारण करते हैं ॥२५५२॥

बे^१-धनु-सहस्र-सुंगा, भंव-कसाया पियंगु - सामलया ।
 सब्बे ते पल्लाऊ, कुभोग - भ्रुमीए खेट्ठंति ॥२५५३॥

अर्थ :—वे सब कुमानुष दो हजार (२०००) धनुष ऊँचे होते हैं, मन्दकषायी, प्रियंगु सदृश श्यामल और एक पल्पप्रमाण आयुसे युक्त होकर कुभोगभूमिमें स्थित रहते हैं ॥२५५३॥

तबभूमि - जोग - भोग, भोचूणं आडसस्तु अवसाणे ।

काल - बसं संपत्ता, जायंते भवण - तिदयम्मि ॥२५५४॥

अर्थ :—उस भूमिके योग्य भोगोंको भोगकर वे आयुके अन्तमें मरणको प्राप्त हो भवन-त्रिकदेवोंमें उत्पन्न होते हैं ॥२५५४॥

सम्महंसरा - रयन्, गहियं जेहि नरोहि तिरिएहि ।

दीवेसु चउ - बिहेसुं, सोहम्म - दुगम्मि जायंते ॥२५५५॥

अर्थ :—इन चार (प्रकारके) द्वीपोंमें जिन मनुष्यों एवं तिर्यचोने सम्यग्दर्शनरूप रत्न ग्रहण कर लिया है वे सोधर्मयुगलमें उत्पन्न होते हैं ॥२५५५॥

लवणसमुद्रस्य मत्स्यादिकोको अवगाहना—

णव - जोयण - दीहत्ता, तबद्ध-वासा तबद्ध - बहलत्ता ।

तेसु नई - मुह - मच्छा, पत्तेकं होंति पउरयरा' ॥२५५६॥

६ । ३ । ३ ।

अर्थ :—लवणसमुद्रमें नदी-मुखके समीप रहनेवाले मत्स्योंमें प्रत्येककी लम्बाई नौ (९) योजन, विस्तार साठे चार (४३) योजन और मोटाई सवा दो (२१) योजन प्रमाण है ॥२५५६॥

लवणोवहि-बहु-मच्छे, मच्छाणं दीह - वास-बहलाणि ।

सरि - मुह - मच्छाहिती, हवंति दुगुण - प्यमाणाणि ॥२५५७॥

अर्थ :—लवणसमुद्रके बहु-मध्य-भागमें मत्स्योंकी लम्बाई, विस्तार और बाहुल्य नदी-मुख-मत्स्योंकी अपेक्षा दुगुने प्रमाणमें मयुक्त है । अर्थात् लम्बाई १८ योजन, विस्तार ६ योजन और मोटाई ४३ योजन प्रमाण है ॥२५५७॥

सेसेसुं ठाणेषुं बहु - विह-उग्गाहं-णणिदा मच्छा ।

मयर^३ - सिसुमार - कच्छव-मंडूक - प्यहुदिराणो अण्णो^४ ॥२५५८॥

१. द. व. क. ज. य. उ. पउरयरा । २. व उग्ग । ३. द व. क. ज. य. उ. मयरम । ४. व. क. ज. य. उ. अण्णो ।

अर्थ :—शेष स्थानोंमें बहुत प्रकारकी भ्रवगाहनासे अन्वित भस्त्र्य, मकर, शिशुमार, कछवा घोर मेंढक आदि अन्य जल-जन्तु होते हैं ॥२५५८॥

लवणसमुद्रकी जगती एवं उसकी बाह्य-परिधि के प्रमाणका निरूपण—

लवणजलधिस्त जगदी, सारिच्छा जंबुद्वीव-जगदीए ।

अभन्तर सिलवट्ट, बाहिर - भागम्भि होदि वणं ॥२५५९॥

धू १२ । म ८ । मु ४ । उ ८ ।

अर्थ :—लवणसमुद्रकी जगती जम्बूद्वीपकी जगतीके सदृश है । अर्थात् जम्बूद्वीपकी जगतीके सदृश इस जगतीका भूमि विस्तार १२ योजन, मध्य विस्तार ८ योजन, शिखर (मुख) विस्तार ४ योजन और ऊँचाई आठ योजन प्रमाण है । इस जगतीके अन्तर्भागमें शिलापट्ट और बाह्यभागमें वन हैं ॥२५५९॥

पण्णारस - लक्खाइं, इगिसीदि-सहस्स-जोयणाणि तथा ।

उण्णवाल-जुवेक्क-सयं, बाहिर-परिधी समुद् - जगदीए ॥२५६०॥

१५८११३६ ।

अर्थ :—इस समुद्र-जगतीकी बाह्य परिधिका प्रमाण पन्द्रहलाख इक्यासी हजार एक सौ उनतालीस (१५८११३६) योजन है ॥२५६०॥

विशेषार्थ :—लवणसमुद्रका बाह्य सूची व्यास ५००००० योजन प्रमाण है । गाथा ६ के नियमानुसार इसकी परिधिका प्रमाण परिधि = $\sqrt{५ला० \times ५ला० \times १०} = १५८११३६$ योजन प्राप्त होते हैं और $\frac{५०००००}{१५८११३६}$ योजन भ्रवशेष बचते हैं जो आधेसे अधिक हैं अतः उसका एक अंक ग्रहण कर ३८ के स्थान पर ३६ कहे गए हैं ।

वलयाकार क्षेत्रका सूक्ष्म क्षेत्रफल निकालनेकी विधि—

दुग्गणि-च्छिय सूचीए, इच्छिय-वलयाण' दुग्गुण-वासार्णि ।

सोधिद्य भवसेस - कदि, वासद्ध - कवीहि गुणिदूणं ॥२५६१॥

गुणिलूच बसेहि तदो, इच्छिय-बलयाण होदि करणि-फलं ।

अं ताण बग्ग - मूलं, सुहुमफलं तं पि णावब्बं ॥२५६२॥

अर्थ :—दुगुनी सूचीमेंसे इच्छित गोलक्षेत्रोंके दुगुने विस्तारको घटाकर जो शेष रहे उसके वर्गको अर्ध-विस्तारके वर्गसे गुणा करके उसे पुनः दससे गुणा करनेपर जो राशि प्राप्त हो वह इच्छित गोलक्षेत्रका वर्गफल प्राप्त होता है और उस वर्ग-राशिका वर्गमूल निकालनेपर जो लब्ध प्राप्त हो तत्प्रमाण इच्छित बलयाकार क्षेत्रका सूक्ष्म-क्षेत्रफल जानना चाहिए ॥२५६१-२५६२॥

लवणसमुद्रके सूक्ष्मक्षेत्रफलका प्रमाण—

गयणोक्क-छ-णव-पंच-छ-छ-तिय^१-सत्त-णवय - अट्टेक्का ।

जोयणया अंक - कमे, खेत्तफलं लवणजलहिस्स ॥२५६३॥

$$१८६७३६६५६६१०^२ ।$$

अर्थ :—शून्य, एक, छह, नौ, पाँच, छह, छह, तीन, सात, नौ, आठ और एक इस अंक-क्रमसे जो (१८६७३६६५६६१०) संख्या निमित्त हो उतने योजन प्रमाण लवणसमुद्रका सूक्ष्म-क्षेत्रफल है ॥२५६३॥

बिशेषार्थ :—लवणसमुद्रकी बाह्य सूची ५ लाख योजन और व्यास २ लाख योजन है, अतः उपर्युक्त नियमानुसार उसका सूक्ष्म-क्षेत्रफल इसप्रकार होगा—

$\sqrt{[(५००००० \times २) - (२००००० \times २)]^२ \times \frac{(३०००००)}{१०}} \times १० = १८६७३६६५६६१०$
योजन सूक्ष्मक्षेत्रफल प्राप्त हुआ तथा $\frac{१८६७३६६५६६१०}{१०}$ योजन अवशेष रहे जो छोड़ दिए गए हैं ।

जम्बूद्वीप एवं लवणसमुद्रके सम्मिलित क्षेत्रफलका प्रमाण—

अंबर-छस्सत्त-त्तिय-पण-ति-बु-जउ-छस्सत्त-णवय-एक्काइं ।

खेत्तफलं मिलिवाणं, जंबूदीवस्स लवणजलहिस्स ॥२५६४॥

$$१६७६४२३५३७६० ।$$

अर्थ :—शून्य, छह, सात, तीन, पाँच, तीन, दो, चार, छह, सात, नौ और एक इस अंक-क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने (१६७६४२३५३७६०) योजन प्रमाण जम्बूद्वीप एव लवण-समुद्रका सम्मिलित क्षेत्रफल है ॥२५६४॥

विशेषार्थ :—इसी अधिकारमें गाथा ५६ से ६६ पर्यन्त जम्बूद्वीपका जो क्षेत्रफल कहाँ गया है उसमेंसे मात्र ७६०५६६४१५० योजन ग्रहण कर उसमें लवणसमुद्रका क्षेत्रफल मिला देनेपर दोनोंके सम्मिलित क्षेत्रफलका प्रमाण (७६०५६६४१५० + १८६७३६६५६६१०) = १६७६४२३५३७६० योजन प्राप्त होता है ।

जम्बूद्वीप प्रमाण खण्डोंके निकालनेका विधान—

बाहिर - सूई - बगो, अन्तर् - सूइ-बग-परिहीणो ।

लवणस्स 'कदीहि हिदो, जंबूदीव - प्यमाणया खंडा ॥२५६५॥

अर्थ :—बाह्य सूचीके वर्गमेंसे अभ्यन्तर सूचीके वर्गको कम करनेपर जो शेष रहे, उसमें एक लाखके वर्गका भाग देनेपर लब्ध संख्याप्रमाण जम्बूद्वीपके समान खण्ड होते हैं ॥२५६५॥

लवणसमुद्रके जम्बूद्वीप प्रमाण खण्डोका निरूपण—

चउबीस जलहि - खंडा, जंबूदीव - प्यमाणवो होंति ।

एवं लवणसमुद्रो, वास - समासेण णिद्विट्ठो ॥२५६६॥

एवं लवणसमुद्रं गवं ॥३॥

अर्थ :—जम्बूद्वीपके प्रमाण लवणसमुद्रके चौबीस खण्ड होते हैं । इसप्रकार सक्षेपमें लवणसमुद्रका विस्तार यहाँ बतलाया गया है ॥२५६६॥

विशेषार्थ :—लवणसमुद्रकी बाह्यसूची ५ लाख योजन और अभ्यन्तर सूची १ लाख योजन है । गाथा २५६५ के नियमानुसार उसके जम्बूद्वीपप्रमाण खण्ड इस प्रकार होंगे—
(५०००००^२ - १०००००^२) - १०००००^२ = २४ खण्ड । अर्थात् लवणसमुद्रके जम्बूद्वीप सदृश २४ टुकड़े हो सकते हैं ।

इसप्रकार लवणसमुद्रका वर्णन समाप्त हुआ ॥३॥

❀ धातकीखण्ड ❀

धादइसंडो बीबो, परिवेढदि' लवणजलणिहि सयलं ।
चउलकल - जोयणाइं, बिल्थिण्णो चककबालेणं ॥२५६७॥

४००००० ।

अर्थ :—धातकीखण्डद्वीप सम्पूर्ण लवणसमुद्रको वेष्टित करता है । मण्डलाकार स्थित यह द्वीप चार लाख (४०००००) योजन प्रमाण विस्तार युक्त है ॥२५६७॥

सोलह अन्तराधिकारोके नाम—

जगदी - विष्णासाइं, भरहखिदी तम्मि कालभेदं च ।
हिमगिरि - हेमवदा महहिमबं हरिवरिस - गिसहद्दी ॥२५६८॥
विजओ विदेह्णामो, नीलगिरी रम्मबरिस-रुम्मिगिरी ।
हेरणवदो विजओ, सिहरी एरावदो ति बरिसो य ॥२५६९॥
एवं सोलस - भेदा, धादइसंडस्स अंतरहियारा ।
एण्हि' ताण सरुबं, वोच्छामो आणुपुब्बीए ॥२५७०॥

अर्थ :—जगती, विन्यास, भरतक्षेत्र, उसमे कालभेद, हिमवान् पर्वत, हैमवतक्षेत्र, महा-हिमवान् पर्वत, हरिवर्षक्षेत्र, निषधपर्वत, विदेहक्षेत्र, नीलपर्वत, रम्यकक्षेत्र, रुक्मिपर्वत, हैरण्यवतक्षेत्र, शिखरीपर्वत और ऐरावतक्षेत्र, इसप्रकार धातकीखण्डद्वीपके वर्णनमें ये सोलह भेदरूप अन्तराधिकार हैं । अब अनुक्रमसे इनके स्वरूपका कथन करते हैं ॥२५६८-२५७०॥

धातकीखण्ड द्वीपकी जगती—

तद्दीबं परिवेढदि, समंतदो ^३बिब्ब - रयणमय - जगदी ।
जंबुदीब - पवण्णिव - जगदीए सरिस - वण्णजया ॥२५७१॥

। जगदी समस्ता ।

अर्थ :—उस घातकीखण्डद्वीपको चारों ओरसे दिव्य रत्नमय जगती वेष्टित करती है । इस जगतीका वर्णन अम्बूद्वीपमें वर्णित जगतीके ही समान है ॥२५७१॥

इष्वाकार पर्वतोंका निरूपण—

दक्षिण - उत्तरभागे, इसुगारा दक्षिणुत्तरायामा ।

एककेवको होदि गिरी, घावइसंडं पबिभजंतो ॥२५७२॥

अर्थ :—घातकीखण्डद्वीपके दक्षिण और उत्तरभागमें इस द्वीपको विभाजित करता हुआ दक्षिण-उत्तर लम्बा एक-एक इष्वाकार पर्वत है ॥२५७२॥

जिसह - समाणुच्छेहा^१, संलग्गा लवण-काल-जलहीणं ।

अठभंतरम्मि बाहि, अंकमुहा ते खुरप्प - संठाणा ॥२५७३॥

अर्थ :—लवण और कालोद समुद्रोंसे संलग्न वे दोनों पर्वत निषघ्र पर्वतके समान ऊँचे तथा अभ्यन्तरभागमें अंकमुख एवं बाह्यभागमें खुरपा (क्षुरप्र) के आकारवाले हैं ॥२५७३॥

जोयण - सहस्समेकं, इंदा सव्वत्थ ताण पत्तेकं ।

जोयण - सयमबगाढा, कणयमया ते विराजंति ॥२५७४॥

अर्थ :—उन पर्वतोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार सर्वत्र एक हजार योजनप्रमाण है । एकसौ योजन प्रमाण भ्रवगाह युक्त वे स्वर्णमय पर्वत अत्यन्त शोभावाले हैं ॥२५७४॥

एककेवका तड - बेवी, तेसुं खेट्टेदि बोसु पासेसुं ।

पंच-सय-इंड-वासा, धुव्वंत-धया हु - कोस^२ उज्जेहा ॥२५७५॥

अर्थ :—उन पर्वतोंके दोनों पादभागोंमें पाँचसौ धनुष प्रमाण विस्तार सहित, दो कोस ऊँची और फहराती हुई ध्वजाओंसे संयुक्त एक-एक तटवेदी है ॥२५७५॥

१. द. व. क. इ. पबिभजंतं । अ. द. पबिभजंति । २. द. अ. उ. माणुच्छेदो, क. माणुच्छेदो ।

३. अ. व. अंतमुहा, व. उ. अंतमुहा । ४. व. हुक्कोस ।

ताणं वो - पासेसुं, वणसंडा वेदि - तोरणेहि जुवा ।

पोखरणी - वाबोहि, जिजिद - पासाद - रमणिज्जा ॥२५७६॥

अर्थ :—उन वेदियोंके दोनों पाषवंभागोंमें वेदी, तोरण, पुष्करिणी एवं वापिकाओंसे युक्त और जिलेन्द्र-प्रासादोंसे रमणीय वनखण्ड हैं ॥२५७६॥

वणसंडेसुं दिव्वा, पासादा बिबिह - रयण - णियरमया ।

सुर-णर-मिहुण-सणाहा, तड - वेदी - तोरणेहि जुवा ॥२५७७॥

अर्थ :—इन वनखण्डोंमें देव एवं मनुष्योंके युगलों सहित, तटवेदी एवं तोरणोंसे युक्त और विविध प्रकारके रत्न-समूहोंसे निमित दिव्य प्रासाद हैं ॥२५७७॥

उवारी इसुगाराणं, समंतदो ह्वदि दिव्व-तड-वेदी ।

वण - वणवेदी पुव्वं, पयार - बित्थार - परिपुण्णा ॥२५७८॥

अर्थ :—इष्वाकार पर्वतोंके ऊपर चारों ओर पूर्वोक्त प्रकार विस्तारसे परिपूर्ण दिव्य तट-वेदी, वन और वन-वेदी स्थित हैं ॥२५७८॥

चत्तारो चचारो, पत्तेशकं होंति ताण वर - कूडा ।

जिण - भवरणमादि - कूडे, सेसेसुं वेंतर - पुराणि ॥२५७९॥

अर्थ :—उनमेंसे प्रत्येक पर्वतपर चार-चार उत्तम कूट हैं । प्रथम कूटपर जिनभवन हैं और शेष कूटोंपर व्यन्तरोंके पुर हैं ॥२५७९॥

घातकीखण्डस्थ जिनभवन एवं व्यन्तरप्रासादोंका सादृश्य—

तद्दीवे जिण - भवणं, वेंतर - वेवाण दिव्व - पासादा ।

सिसह-पवणिणद-जिण-भवण - वेंतरावास - सारिच्छा ॥२५८०॥

अर्थ :—उस द्वीपमें जिनभवन और व्यन्तरदेवोंके दिव्य प्रासाद निषधपर्वतके वर्णनमें निर्दिष्ट जिन-भवनों और व्यन्तरावासोंके सदृश हैं ॥२५८०॥

घातकीखण्डमें मेरु-पर्वतोंका विन्यास—

दोहूं इसुगाराणं, विज्जाले होंति ते बुबे विजया ।

अथकण्ड - रियभायारा, एक्केक्का तेषु मेरुगिरी ॥२५८१॥

अर्थ :—दोनों इष्वाकार पर्वतोंके मध्यमें वे दो क्षेत्र हैं । अर्धचक्रके आकार सट्टक उन दोनों क्षेत्रोंमें एक-एक मेरु पर्वत है ॥२५८१॥

पर्वत-तालाब आदिका प्रमाण—

सेल-सरोवर-सरिया, विजया कुंडा य जेतिया होंति ।

जंबूदीबे तेच्चिय, बुगुण - कवा चावईसंडे ॥२५८२॥

अर्थ :—जम्बूद्वीपमें जितने पर्वत, तालाब, नदियाँ, क्षेत्र और कुण्ड हैं उनसे दूने घातकी-खण्डमें हैं ॥२५८२॥

इसुगार - शिरिदाणं, विज्जालेसुं हवंति ते सध्वे ।

भाषा - विजित्त - चण्णा, ससालिणो चावईसंडे ॥२५८३॥

अर्थ :—इष्वाकार पर्वतोंके अन्तरालमें नानाप्रकारके विचित्र वर्णवाले एवं क्षोभासे युक्त वे सब पर्वतादि घातकीखण्डमें हैं ॥२५८३॥

दोनों द्वीपोंमें विजयादिकोंका सादृश—

विजया विजयाण तहा, विजयड्ढाणं हवंति विजयड्ढा ।

मेरुगिरीणं मेरु, कुल - गिरिणो कुल - गिरीणं च ॥२५८४॥

णामिगिरीणं^१ णाभी, सरिया सरियाण दोसु दीबेसुं ।

पण्णिविणवा अवघाडुच्छेह - सरिच्छा^२ विणा मेरुं ॥२५८५॥

अर्थ :—दोनों द्वीपोंमें प्रणिषिगत क्षेत्र क्षेत्रोंके सट्टक, विजयाचं विजयाघोंके सट्टक, मेरु-पर्वत मेरुपर्वतोंके सट्टक, कुलपर्वत कुलपर्वतोंके सट्टक, नामिगिरि नामिगिरियोंके सट्टक और नदियाँ नदियोंके सट्टक हैं । इनमेंसे मेरु-पर्वतके अतिरिक्त शेष सबका अवगाह एवं ऊँचाई सट्टक है ॥२५८४-२५८५॥

विजयार्ध पर्वतादिकोंका विस्तार—

जंबूदीव - पद्मिणिव - रुंदाहिं तो य दुगुण - रुंदा ते ।
पत्तोष्कं वेयड्डं, पट्टवि - जगणं विष्णा मेरुं ॥२५८६॥

अर्थ :—विजयार्ध आदिक पर्वतोंमेंसे मेरुपर्वतके अतिरिक्त शेष प्रत्येक जम्बूद्वीपमें बतलाये हुए विस्तारकी अपेक्षा दुगुने विस्तारवाले हैं ॥२५८६॥

मतान्तरसे दोनों द्वीपोंके पर्वतादिकोंके अथवाहादिकी सटसता—

मोत्तूणं मेरुगिरि, सध्व - जगा कुंड - पट्टवि दीव-द्वुने ।
अथवाढ - वास - पट्टवी, केई इच्छंति सारिच्छा ॥२५८७॥

पाठान्तरम् ।

अर्थ :—मेरुपर्वतके अतिरिक्त शेष सब पर्वत और कुण्ड आदि तथा उनके अथवाह एवं विस्तारादि दोनों द्वीपोंमें समान हैं, ऐसा कितने ही आचार्योंका अभिप्राय है ॥२५८७॥

पाठान्तर

बारह कुलपर्वत और चार विजयार्धोंकी स्थिति एवं आकार—

मूलम्मि उवरिभागे, बारस-कुल-पद्मवया सरिस - रुंदा ।
उभयंतोर्हि लग्गा, लवणोवहि - कालजलहीणं ॥२५८८॥

अर्थ :—मूल एवं उपरिमभागमें समान विस्तारवाले बारह कुलपर्वत अपने दोनों अन्तिम भागोंसे लवणोदधि और कालोदधिसे संलग्न है ॥२५८८॥

दो दो भरहेरावव-वसुमह-बहु-मउभ-दीह'-विजयड्डा ।
दो पासेसु' लग्गा, लवणोवहि - कालजलहीणं ॥२५८९॥

अर्थ :—भरत एवं ऐरावत क्षेत्रोंके बहुमध्यभागमें स्थित दो-दो दीर्घ विजयार्धपर्वत दोनों पार्श्वभागोंमें लवणोदधि और कालोदधिसे संलग्न हैं ॥२५८९॥

ते बारस कुलसेला, चत्तारो ते य दीह-विजयइडा ।

अब्भंतरम्मि बाहिं, अंकमुहा सुरप्प - संठाणा ॥२५६०॥

अर्थ :—वे बारह कुलपर्वत और चारों ही दीर्घ विजयाक्षं अभ्यन्तर एवं बाह्यभागमें क्रमशः अंकमुख और सुरपा (सुरप्र) जैसे आकारवाले हैं ॥२५६०॥

विजयादिकोंके नाम—

विजयादीक्षं ञामा, जंबूवीक्षम्मि वण्णिवा विविहा ।

वज्जिय^१ जंबू - सम्मलि - णामाइं एत्थ वत्तव्वा ॥२५६१॥

अर्थ :—जम्बू और शाल्मलीवृक्षके नामोंको छोड़कर शेष जो क्षेत्रादिकोंके विविध प्रकारके जम जम्बूद्वीपमें बतलाये गये हैं, उन्हें ही यहाँ भी कहना चाहिए ॥२५६१॥

दोनों भरत और दोनों ऐरावत क्षेत्रोंकी स्थिति—

दो - पासेसुं दक्षिण-इसुगार-गिरिस्स दो भरहसेत्ता ।

उत्तर - इसुगारस्स य, हवति एरावदा^२ दोण्णि ॥२५६२॥

अर्थ :—दक्षिण इष्वाकार पर्वतके दोनों पार्श्वभागोंमें दो भरतक्षेत्र और उत्तर इष्वाकार-पर्वतके दोनों पार्श्वभागोंमें दो ऐरावतक्षेत्र हैं ॥२५६२॥

विजयोका आकार—

दोण्णं इसुगाराणं, बारस - कुल - पव्वयाण विच्चाले ।

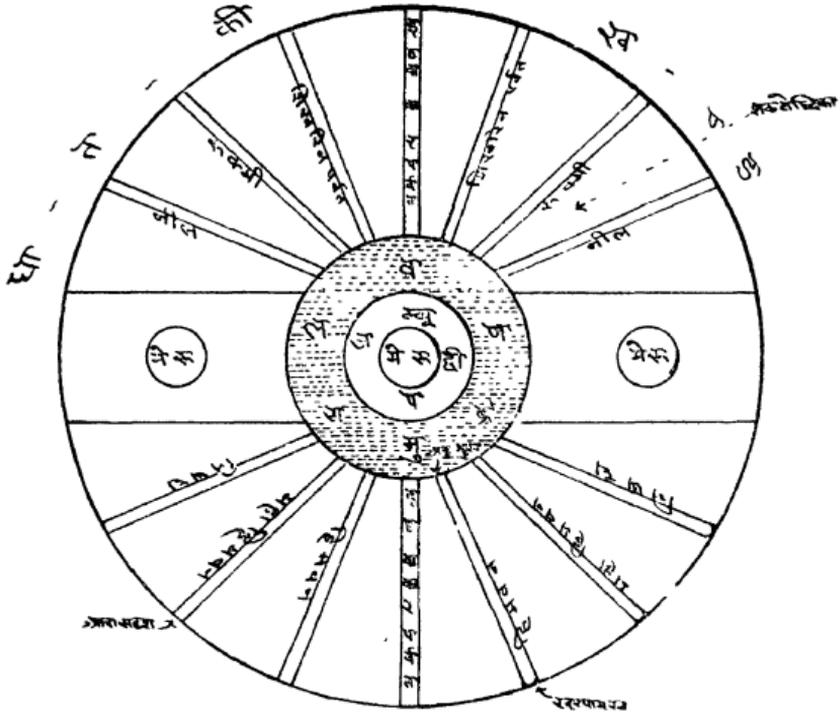
अर - विवरेहि सरिच्छा, विजया सव्वे वि षावईसंठे ॥२५६३॥

अर्थ :—घातकीखण्डद्वीपमें दोनों इष्वाकार और बारह कुलपर्वतोंके अन्तरालमें स्थित सब क्षेत्र अर-विवर अर्थात् पहिंके अरोंके मध्यमें रहनेवाले छेदोंके सदृश हैं ॥२५६३॥

अंकायारा विजया, भागे अब्भंतरम्मि ते सव्वे ।

सत्ति - मुहं पिब बाहिं, सयइडि - समा य पत्तमुजा ॥२५६४॥

अर्थ :—वे सब क्षेत्र अभ्यन्तरभागमें अकाकार और बाह्यमें शक्तिमुख हैं । इनकी पार्श्व-भुजाएँ गाड़ीकी उडि (गाड़ीके पहिये) के समान हैं ॥२५६४॥



अन्तर्भाग, मङ्गल - भागम् बाहिरे भागे ।

विजयारणं विश्वं, धादइसडे णिरुवेमो ॥२५६५॥

अर्थ :- धातकीखण्डद्वीप स्थित क्षेत्रके अन्तर मध्यम एवं बाह्यभागमें विद्यमान (पर्वतोंके) विश्वम्भका निरूपण करता है ॥२५६५॥

कुल-पर्वतोंका विस्तार—

दु - सहस्र - जोयणाणि, पञ्चुत्तर-सय-जुदाणि पञ्चंसा ।

उणवीस - हिवा रुंदा, हिमबंत - गिरिस्स णादव्वं ॥२५६६॥

अर्थ :—दो हजार एकसौ पाँच योजन और उन्नीससे भाजित पाँच भाग (२१०५ $\frac{१}{४}$ योजन) प्रमाण हिमवान् पर्वतका विस्तार समझना चाहिए ॥२५६६॥

महाहिमबंतं रुंदं, चउ^१ - हव - हिमबंतं-रुंदं-परिमाणं ।

निसहस्स होदि बासो, महाहिमबंतस्स चउगुणो बासो ॥२५६७॥

८४२१ । १,२ । ३३६८४ । १,२ ।

अर्थ :—महाहिमवान् पर्वतका विस्तार-प्रमाण हिमवान् पर्वतके विस्तारसे चौगुना अर्थात् ८४२१ $\frac{१}{४}$ योजन है और निषघपर्वतका विस्तार महाहिमवान्पर्वतके विस्तारसे चौगुना अर्थात् ३३६८४ $\frac{१}{४}$ योजन है ॥२५६७॥

एवाणं सेलाणं, विक्खंभो मेलिऊण चउ - गुणिदो ।

सव्वाण कुलगिरीणं, रुंदं - समासो पुढो होदि ॥२५६८॥

अर्थ :—इन तीनों पर्वतोंके विस्तारको मिलाकर चौगुना करनेपर $[(२१०५\frac{१}{४} + ८४२१\frac{१}{४} + ३३६८४\frac{१}{४}) \times ४ = १७६८४२\frac{३}{४}$ योजन] सब कुलपर्वतोंके विस्तारका सकलन होता है ॥२५६८॥

इष्वाकार पर्वतोंका विस्तार एवं पर्वतरुद्ध क्षेत्रका प्रमाण—

दोणं इमुगाराणं, विक्खंभो होदि दो सहस्सार्णि ।

तास्स मिलिदे घादइसंडे गिरि - रुद्ध - खिदिमाणं ॥२५६९॥

२००० ।

अर्थ :—दोनों इष्वाकार पर्वतोंका विस्तार दो हजार (२०००) योजन प्रमाण है । कुलपर्वतोंके पूर्वकथित विस्तारप्रमाणमें इसको मिला देनेपर घातकीलण्डद्वीपमें सम्पूर्ण पर्वतरुद्ध क्षेत्रका प्रमाण प्राप्त होता है ॥२५६९॥

घातकीखण्डमें पर्वतरुद्ध क्षेत्रका क्षेत्रफल—

दुग - चउ - अट्टट्टाई, सत्तेक्कं जोयणाणि अंक - कमे ।

उणवोस - हिवा दु - कला, माणं निरिरुद्ध - वसुहाए ॥२६००॥

१७८८४२ । १,२ ।

अर्थ :—दो, चार, आठ, अठ, सात और एक, इस अंक क्रमसे जो सख्या निमित्त हो उतने योजन और उन्नोससे भाजित दो भाग अधिक ($१७६८४२३२ + २००० = १७८८४२३२$ योजन) घातकीखण्डमे पर्वतरुद्ध क्षेत्रका प्रमाण है ॥२६००॥

आदिम, मध्यम और बाह्य सूची निकालनेका विधान—

लवणादीणं हदं, दुग-तिग-चउ-संगुणं ति - लक्खूणं ।

कमसो आदिम - मज्झिम - बाहिर - सूई हवे ताणं ॥२६०१॥

अर्थ :—लवणसमुद्रादिकके विस्तारको दो, तीन और चारसे गुणाकर प्राप्त गुणनफलमेसे तीन लाख कम करनेपर क्रमशः उनकी आदि, मध्य और अन्तिम सूचीका प्रमाण प्राप्त होता है ॥२६०१॥

विशेषार्थ :—लवणसमुद्रादिकमेंसे जिस द्वीप या समुद्रका सूचीव्यास ज्ञात करना हो उसके विस्तार (बलय व्यास या रुन्द्रव्यास) को दो से गुणितकर लवणराशिमेसे तीन लाख घटा देनेपर अभ्यन्तर सूचीव्यासका प्रमाण प्राप्त होता है । विस्तार प्रमाणको तीनसे गुणितकर, तीन लाख घटा देनेपर मध्यम सूची व्यासका प्रमाण प्राप्त होता है और विस्तारको चारसे गुणितकर तीन लाख घटा देनेपर बाह्य सूचीव्यासका प्रमाण प्राप्त होता है । यथा—

चार लाख विस्तारवाले घातकीखण्डके तीनों सूची व्यासोंका प्रमाण—

(४ लाख \times २ = ८ लाख)—३ लाख = ५ लाख घातकीखण्डका अभ्य० सूची व्यास ।

(४ लाख \times ३ = १२ लाख)—३ लाख = ९ लाख घातकी खण्डका मध्यम सूची व्यास ।

(४ लाख \times ४ = १६ लाख)—३ लाख = १३ लाख घातकी खण्डका बाह्य सूची व्यास ।

विवक्षित सूचीकी परिधि प्राप्त करनेका विधान—

आदिम-मज्झिम-बाहिर-सूई-बग्गा बसेहि संगुणिवा ।

तस्स य भूला इच्छिय - सूईए होबि सा परिही ॥२६०२॥

अर्थ :—आदि, मध्य और बाह्य-सूचीके वर्गको दससे गुणा करके उसका वर्गमूल निकालनेपर इच्छित सूचीकी परिधिका प्रमाण आता है ॥२६०२॥

घातकीखण्डकी अभ्यन्तर परिधिका प्रमाण—

पण्णारस - लक्खाइं, इगिसीबि-सहस्स-जोयणेकक-सयं ।

उणवाल - जुवा घावइंसंडे अम्भंतरे परिही ॥२६०३॥

१५८११३६ ।

अर्थ :—घातकीखण्डद्वीपकी अभ्यन्तर परिधिका प्रमाण पन्द्रह लाख इक्यासी हजार एक सौ उनतालीस (१५८११३६) योजन है ॥२६०३॥

विशेषार्थ :—अभ्यन्तर परिधिका वास्तविक प्रमाण = $\sqrt{(५ लाख)^२ \times १०} = १५८११३६$ योजन, ३ कोस, ६४० धनुष, १ रिक्कू, १ वितस्त और कुछ कम ५ अंगुल प्राप्त होता है । किन्तु गायामें यह प्रमाण मात्र १५८११३६ योजन कहा है ।

मध्यम परिधिका प्रमाण—

अट्टाबीसं लक्खा, छावाल - सहस्स - जोयणा - पण्णा ।

किखूणा आबब्बा, मज्झिम - परिही य आबईसंडे ॥२६०४॥

२८४६०५० ।

अर्थ :—घातकी खण्ड द्वीपकी मध्यम परिधिका प्रमाण अट्टाईस लाख छपत्तालीस हजार पचास (२८४६०५०) योजनसे कुछ कम जानना चाहिए ॥२६०४॥

विशेषार्थः—मध्य परिधिका वास्तविक प्रमाण = $\sqrt{(६ \text{ लाख})^2 \times १०} = २८४६०४६$
योजन, ३ कोस, ११५३ धनुष एवं साधिक २० अंगुल है। इसलिए गाथामें किञ्चित् कम कहा गया है।

बाह्य परिधिका प्रमाण—

एक-छ-णव-णभ-एवका, एक-चउवका कमेण अंकाणि ।

जोयणया किञ्चना, तद्दीघे बाहिरो परिही ॥२६०५॥

४११०६६१ ।

अर्थ :—घातकी खण्डद्वीपकी बाह्य-परिधिका प्रमाण एक, छह, नौ, शून्य, एक, एक और चार इस अंक क्रमसे जो सख्या बनती है उतने (४११०६६१) योजनसे कुछ कम है ॥२६०५॥

विशेषार्थ :—बाह्य परिधिका वास्तविक प्रमाण = $\sqrt{(१३०००००)^2 \times १०} = ४११०६६०$ योजन, ३ कोस, १६६५ धनुष और साधिक ३ हाथ है। इसीलिए गाथामें कुछ कम कहा गया है।

भरतादि सब क्षेत्रोंका सम्मिलित विस्तार—

प्रादिम-मञ्जुम-बाहिर-परिहि-यमाणेषु सेल-वद्ध-सिद्धि ।

सोहिय सेसं वास - समासो सव्वाण विजयार्ण ॥२६०६॥

१४०२२६६ । १२ । २६६७२०७ । १२ । ३६३२११८३२ ।

अर्थ :—आदि, मध्य और बाह्य परिधिके प्रमाणसे पर्वतरुद्ध (भूमि) क्षेत्र कम कर देनेपर शेष प्रमाण सब क्षेत्रोंके सम्मिलित विस्तारका है ॥२६०६॥

विशेषार्थ :—गाथा २६०० में घातकी खण्डद्वीपके पर्वतरुद्ध क्षेत्रका प्रमाण १७८८४२३६ योजन कहा गया है। इसे घातकी खण्डकी अभ्यन्तर, मध्य और बाह्य परिधियोंसे घटा देनेपर दोनों भेद सम्बन्धी भरत आदि चौदह क्षेत्रोंसे भ्रवरुद्ध क्षेत्र प्राप्त होता है। यथा—

अभ्य० परिधि—१५८११३६ यो० — १७८८४२३६ = १४०२२६६३० यो० ।

मध्य परिधि—२८४६०५० यो० — १७८८४२३६ = २६६७६२१४ यो० ।

बाह्य परिधि—४११०६६१ यो० — १७८८४२३६ = ३६३२११८३२ यो० ।

घातकीखण्डस्य भरतक्षेत्रका आदि, मध्य श्रीर बाह्य विस्तार—

एक-चउ-सोल-संज्ञा, चउ-गुणिदा अट्टबोस-जुस-सया ।

मेलिय तिबिह - समासं, हरिदे तिद्वाण-भरह-विक्खंभा ॥२६०७॥

२१२ ।

अर्थ :—एक, चार श्रीर सोलह, इनकी चौगुनी संख्याके जोड़में एक सौ अट्टाईस मिला देने-पर जो संख्या उत्पन्न हो उसका पर्वत-रुद्ध क्षेत्रसे रहित उपयुक्त तीन प्रकारके परिधि प्रमाणमें भाग देनेपर क्रमशः तीनों स्थानोंमें भरतक्षेत्रका विस्तार प्रमाण निकलता है ॥२६०७॥

विशेषार्थ :—भरतक्षेत्रसे श्रीर ऐरावतक्षेत्रसे विदेह पर्यन्त क्षेत्रका विस्तार चौगुना है अतः भरतकी शलाका १, हैमवतकी ४ और हरिक्षेत्रकी १६ शलाकाएँ हैं । जिनका योग (१+४+१६=) २१ है । (इसीप्रकार विदेहकी ६४, रम्यककी १६, हैरण्यवतकी ४ और ऐरावतक्षेत्रकी १ शलाका है ।)

घातकीखण्डमे दो मेरु हैं अतः प्रत्येक मेरुके दोनो भागोका ग्रहण करनेके लिए इन्हें (२१ को) ४ से गुणित करनेको कहा गया है । यथा— $21 \times 4 = 84$ हुए । इनमे दो मेरु सम्बन्धी दो विदेह क्षेत्रोकी ($64 \times 2 =$) १२८ शलाकाएँ जोड़ देनेसे ($84 + 128 =$) २१२ शलाकाएँ पर्वत रहित परिधिका भागहार है ।

भरतक्षेत्रका अभ्यन्तर विस्तार—

$1402286\frac{2}{3} \div 212 = 6614\frac{2}{3}$ योजन ।

मध्यविस्तार— $2667207\frac{1}{2} \div 212 = 12581\frac{1}{2}$ यो० ।

बाह्य विस्तार— $3532117\frac{1}{2} \div 212 = 16660\frac{1}{2}$ योजन ।

भरतादिकोंके विस्तारमे हानि-वृद्धिका प्रमाण—

भरहादी - विजयाणं, बाहिर^१-रु^२दम्मि आदिमं रु^३हं ।

सोहिय चउ-लक्ख^१-हिदे, खय - बड्ढी इच्छिद - पवेसे ॥२६०८॥

अर्थ :—भरतादिक क्षेत्रोंके बाह्य-विस्तारमेसे आदिके विस्तारको कम कर शेषमें चार लाखका भाग देनेपर इच्छित स्थानमें हानि-वृद्धिका प्रमाण आता है ॥२६०८॥

विशेषार्थ :—घातकीखण्डद्वीपका विस्तार ४००००० योजन है। इसमें स्थित भरतक्षेत्रके बाह्य-विस्तारमेंसे अभ्यन्तर विस्तार घटाकर श्रवशेषमें विस्तारका भाग देनेपर हानि-वृद्धिका प्रमाण प्राप्त होता है। यथा—

$$(१८५४७३३३ - ६६१४३३३) \div ४००००० = ६४६३६३३३ यो० ।$$

भरतक्षेत्रका अभ्यन्तर विस्तार—

छावर्द्धि च सयार्णि, चोद्दस - जुस्ताणि जोयणाणि कला ।

उणतीस उत्तर - सयं, भरहस्सभंतरे वासो ॥२६०६॥

६६१४ । ३३३ ।

अर्थ :—भरतक्षेत्रका अभ्यन्तर विस्तार छयासठसौ चौदह योजन श्रौर एक योजनके दोसी बारह भागोंमेंसे एकसी उनतीस (६६१४३३३) भाग प्रमाण है ॥२६०९॥

हैमवतादिक क्षेत्रोंका विस्तार—

हैमवदं पट्टदीणं, पत्थेकं चउगुणो हवे वासो ।

जाव य विवेह्वस्सो, तप्परदो चउगुणा हाणी ॥२६१०॥

२६४५८ । २३३ । १०५८३३ । ३३३ । ४२३३३४ । ३३३ । १०५८३३ । ३३३ ।

२६४५८ । २३३ । ६६१४ । ३३३ ।

अर्थ :—विदेहक्षेत्र तक क्रमशः हैमवतादिक क्षेत्रोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार उत्तरोत्तर इससे चौगुना है। इससे आगे क्रमशः चौगुनी हानि होती गई है ॥२६१०॥

भरतादि क्षेत्रका मध्यम विस्तार—

बारस-सहस्स-पणसय-इगिसीदी जोयणा य छरीसा ।

भागा भरह - खिस्स य, मळिअम-वित्थार-परिमाणं ॥२६११॥

१२५८१ । ३३३ । ५०३२४ । ३३३ । २०१२६८ । ३३३ । ८०५१६४ । ३३३ ।

२०१२६८ । ३३३ । ५०३२४ । ३३३ । १२५८१ । ३३३ ।

अर्थ :—भरतक्षेत्रके मध्यम विस्तारका प्रमाण बारह हजार पाँचसौ इक्यासी योजन बीस छत्तीस भाग अधिक है ॥२६११॥

भरतादि क्षेत्रका बाह्य विस्तार—

अट्टारसा सहस्त्रा, पंच - सया ज्ञोयणा य सगदाला ।

भागा पञ्चवण्ण सयं, वासो भरहस्स बाहिरए ॥२६१२॥

१८५४७ । ३३३ । ७४१९० । ३३३ । २६६७६३ । ३३६ । ११८७०५४ । ३३६ ।

२६६७६३ । ३३६ । ७४१९० । ३३३ । १८५४७ । ३३३ ।

अर्थ :—भरतक्षेत्रका बाह्य-विस्तार अठारह हजार पाँचसौ सैंतालीस योजन और एकसौ पचपन भागप्रमाण है ॥२६१२॥

[तालिका ४५ अगले पृष्ठ पर देखिए]

तालिका : ४५									
घातकीखण्डकी परिधि एवं उसमें स्थित कुलाबलों और क्षेत्रोंका विस्तार—									
क्र०	घातकी खण्डस्य कुलाबलोंका विस्तार		घातकी खण्डकी परिधि		क्र०	नाम	अभ्यन्तर वि०	मध्य विस्तार	बाह्य वि०
	नाम	योजन	च. मि.	इ. मि.					
१	हिमवान्	२१०५.१६	५५५	५५५	१	भरत	६६१४.११३	१२५८१.३१६	१८५४७३.५१३
२	महाहिम०	८४२१.१६	५५५	५५५	२	हिमवत	२६४५८.३१३	५०३२४.५५५	७४१६०.३१३
३	निषध	३३६८४.१६	५५५	५५५	३	हरि	१०५८३३४.५५५	२०१२१८.३१३	२६७७६३.५५६
४	नील	३३६८४.१६	५५५	५५५	४	विदेह	४२३३३४.५५५	८०५१६४.५५५	११८७०५.५५५
५	रविम	८४२१.१६	५५५	५५५	५	रम्यक	१०१८३३.५५५	२०१२१८.३१३	२६७७६३.५५६
६	शिखरिन्	२१०५.१६	५५५	५५५	६	शिरण्यवत	२६४५८.३१३	५०३२४.५५५	७४१६०.३१३
					७	ऐरावत	६६१४.११३	१२५८१.३१६	१८५४७३.५१३

पषद्रह और पुण्डरीकद्रहसे निर्गत नदियोंका पर्वतके ऊपर गमनका प्रमाण—

षाबइसंडे बीवे, खुल्लय-हिमबंत-सिहरि-मउभ-गया ।

पउमबह-पुंडरीए, पुठववर - विसाए एषक एषक णई ॥२६१३॥

अर्थ :—घातकीलण्ड द्वीपमें क्षुद्रहिमवान् और शिखरीपर्वतके मध्यगत पषद्रह और पुण्डरीकद्रहकी पूर्व एवं पश्चिम दिशासे एक-एक नदी निकली है ॥२६१३॥

उणबीस-सहस्साणि तिण्णि सया णवय-सहिय-जोयणया ।

गंतूण गिरिडुवरि, वविल्लण - उत्तर - विसे वलइ ॥२६१४॥

१६३०६ ।

अर्थ :—प्रत्येक नदी उन्नीस हजार तीनसौ नी (१६३०६) योजन पर्वतके ऊपर जाकर यथायोग्य दक्षिण एव उत्तर दिशाकी ओर मुड़ जाती है ॥२६१४॥

मंदर पर्वतोंका निरूपण—

मंदर - णामो सेलो, हवेदि तास्स विदेह - वरिसम्मि ।

किंचि विसेसो चेट्टुवि, तस्स सरुवं परुवेमो ॥२६१५॥

अर्थ :—उस द्वीपके विदेहक्षेत्रमें किञ्चित् विशेषता लिए हुए जो मन्दर नामक पर्वत स्थित है उसका स्वरूप कहता है ॥२६१५॥

तद्दीवे पुष्वावर - विदेह - वस्साण होवि बहुमउभे ।

पुब्ब - पवणिव - रूवो, एषकेवको मंदरो सेलो ॥२६१६॥

अर्थ :—उस द्वीपमें पूर्व और अपर विदेहक्षेत्रोंके बहुमध्यभागमें पूर्वोक्त स्वरूपसे संयुक्त एक-एक मन्दर पर्वत स्थित है ॥२६१६॥

मेरुपर्वतोंका अवगाह एव ऊंचाई—

जोयण - सहस्स - गाढा, खुलसीवि-सहस्स-जोयणुज्जेहा ।

ते सेला पत्तेषकं, वर - रयण - वियप्प - परिणामा ॥२६१७॥

१०००) ८४००० ।

अर्थ :- नानाप्रकारके उत्तम रत्नोंके परिणामस्वरूप बहु प्रत्येक पर्वत एक हजार (१०००) योजन प्रमाण अवगाढ (नीच) सहित चौरासी हजार (८४०००) योजन ऊँचा है ॥२६१७॥

मेरुका विस्तार—

मेरु-तलस्स य रुंढं, वस य सहस्साणि जोयणा होंति ।

बउ - णउदि - सयाइं पि य, धरणीपट्टम्मिए रुंढा ॥२६१८॥

१०००० । ६४००० ।

अर्थ :- मेरुका विस्तार तलभागमे दस हजार (१००००) योजन और पृथिवीपृष्ठपर ती हजार चार सौ (६४००) योजन प्रमाण है ॥२६१८॥

जोयण-सहस्समेवकं, विक्खंभो होदि तस्स सिहरम्मि ।

भूमिभ्र मुहं सोहिय, उदय - हिदे भ्र-मुहाडु हाणि-चयं ॥२६१९॥

अर्थ :- उस मेरुका विस्तार शिखरपर एक हजार योजन प्रमाण है । भूमिमेंसे मुख घटा कर शेषमें ऊँचाईका भाग देनेपर भूमिकी अपेक्षा हानि और मुखकी अपेक्षा वृद्धिका प्रमाण प्राप्त होता है ॥२६१९॥

विशेषार्थ :- नीचमे — (भूमि १०००० — ६४०० मुख) ÷ १००० यो० अवगाह = $\frac{१}{१०}$ योजन हानि-चय ।

भूमिसे ऊपर— (भूमि — ६४०० — १००० मुख) ÷ ८४००० ऊँ० = $\frac{१}{१०}$ योजन हानि-चय ।

तक्खय-वड्ढि-पमाणां, छद्दस-भागं सहस्स - गाढम्मि ।

भूमिदो उच्चरि पि य, एवकं वस - रुचमवहरिदं ॥२६२०॥

१० । १० ।

अर्थ :- वह क्षय-वृद्धिका प्रमाण एक हजार योजन प्रमाण अवगाहमें योजनके दस भागोंमेंसे छह भाग अर्थात् छह बटे दस ($\frac{६}{१०}$) भाग और पृथिवीके ऊपर दस रूपोंसे भाजित एक भाग ($\frac{१}{१०}$ यो०) प्रमाण है ॥२६२०॥

मेरु - तलस्स य हंभं, पंच-सया णव-सहस्स जोयणया ।

सठवत्थं खय - बड्ढी, वसमंतं केइ इच्छति ॥२६२१॥

६५०० । १^० ।

पाठान्तरम् ।

अर्थ :—कितने ही आचार्य मेरुके तल-विस्तारको नी हजार पाँचसौ (६५००) योजन प्रमाण मानकर सर्वत्र क्षय-वृद्धिका प्रमाण दसवाँ भाग ($\frac{१}{१०}$) मानते हैं ॥२६२१॥

(६५०० — १०००) ÷ ८५००० = $\frac{१}{१०}$ योजन ।

पाठान्तर ।

अस्थिच्छति विक्खंभं, खल्लय - मेरुण 'समवदिण्णाणं ।

वस - भजिदे जं लद्धं, एक्क-सहस्सेण संमिलिदं ॥२६२२॥

अर्थ :—जितने योजन नीचे जाकर क्षुद्रमेरुओंके विस्तारको जानना हो, उतने योजनोंमें दसका भाग देनेपर जो लब्ध भावे उसमे एक हजार जोड़ देनेपर अभीष्ट स्थानमें मेरुओंके विस्तारका प्रमाण जाना जाता है ॥२६२२॥

विशेषार्थ :—शिखरसे २१००० योजन नीचे मेरुका विस्तार (२१००० — १०) + १००० = ३१०० योजन प्राप्त होता है ।

चूलिकाएँ—

जंबूद्वीप-पवण्णिव - मंदरगिरि - चूलियाएँ सरिसाम्भो ।

दोण्णं^३ पि चूलियाम्भो, मंदर - सेलाण एदस्सि^४ ॥२६२३॥

अर्थ :—इस द्वीपमे दोनो मन्दर-पर्वतोंकी चूलिकाएँ जम्बूद्वीपके वर्णनमें कही हुई मन्दर-पर्वतकी चूलिका सदृश हैं ॥२६२३॥

चार वनोंका विवेचन—

पंडुग - सोमरासाणि, वणारिण एवंणय - भद्रसालाणि ।

जंबूद्वीप - पवण्णिव - मेरु - समाणाणि मेरुणं ॥२६२४॥

१. द. व. ज. य. उ. समवदिण्णाणं । २. द. व. क. ज. य. उ. चूलिय । ३. व. क. उ. दोण्णि ।

४. द. व. क. ज. य. उ एदं पि ।

भंडरगिरिव - उत्तर - दक्षिण - भागेषु भद्रसालानां ।

जं विक्लंभ - प्रमाणं, उवएसो तस्स उच्छिञ्जो ॥२६२६॥

अर्थ :—मन्दरपर्वतोके उत्तर-दक्षिण भागोंमें भद्रसालवनोंका जितना विस्तार है, उसके प्रमाणका उपदेस नष्ट हो गया है ॥२६२६॥

बारस-सय - पणुवीसं, अट्टासीदी - विहत्त - उणसीदी ।

जोयणया विक्लंभो एक्केवके भद्रसाल - वणे ॥२६३०॥

१२२५ । ११ ।

अर्थ :—प्रत्येक भद्रसालवनका विस्तार बारहसी पच्चीस योजन और अठासीसे विभक्त उन्नीसी भाग (१२२५.११ योजन) प्रमाण है ॥२६३०॥

गजदन्तोंका वर्णन—

सच-दु-दु-छक्क - पंचसिय - अंकाराणं कमेण जोयणया ।

अब्भंतरभागद्विय - गयबंताणं चउण्हाणं ॥२६३१॥

३५६२२७ ।

अर्थ :—अध्यन्तरभागमें स्थित चारों गजदन्तोंकी लम्बाई सात, दो, दो, छह, पाँच और तीन इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने (३५६२२७) योजन प्रमाण है ॥२६३१॥

णव-पण-दो णव-छप्पण, जोयणया उभय-मेरु-बाहिरए ।

चउ - गयदंत - णगाणं, दीहत्तं होदि पस्सेकं ॥२६३२॥

५६६२५६ ।

अर्थ :—उभय मेरुओंके बाह्यभागमें चारों गजदन्त पर्वतोंसे प्रत्येक (गजदन्त) की लम्बाई नौ, पाँच, दो, नौ, छह और पाँच, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने (५६६२५६) योजन प्रमाण है ॥२६३२॥

कुरुक्षेत्रोंका धनुःपृष्ठ—

णव-जोयण-लक्खणिं, पणुवीस-सहस्स-चउ-सयाणि पि ।

छ्वासीदी धणुपुट्टं, दो - कुरवे धावईसंठे ॥२६३३॥

६२५४८६ ।

अर्थ :- धातकीखण्डद्वीपमें दोनों (उत्तर एवं देव) कुरुओंका धनुःपृष्ठ नौ लाख पच्चीस हजार चारसी छयासी (९२५४८६) योजन प्रमाण है ॥२६३३॥

कुरुक्षेत्रोंकी जीवा—

दो जोयण-लक्खारिण, तेवीस - सहस्सयाणि एक्क-सयं ।

अट्टावण्णा जीवा, कुरवे तह धादईसंटे ॥२६३४॥

२२३१५८ ।

अर्थ :- धातकीखण्डद्वीपमें दोनों (उत्तर एव देव) कुरुओंकी जीवा दो लाख तेईस हजार एकसी अट्टावन (२२३१५८) योजन प्रमाण है ॥२६३४॥

वृत्तविस्तार निकालनेका विधान--

इसु-वगं चउ-गुणिव, जीवा-वगम्मि पविखवेज्ज तदो ।

चउ-गुणिव-इसु - विहत्त^१, जं लद्धं वट्ट - वासो सो ॥२६३५॥

अर्थ - बाएके वर्गको चौगुना करके उसमें जीवाका वर्ग मिला दे । पश्चात् उसमें चौगुने बाएका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना वृत्त (गोल) क्षेत्रका विस्तार होता है ॥२६३५॥

यथा -- [{ ३६६६८० }^२ × ४ + (२२३१५८)^२ } ÷ (३६६६८० × ४)] = ०००६३२३५१६६६ अर्थात् कुछ कम ४००६३३ योजन ।

कुरुक्षेत्रोंका वृत्त विस्तार—

चउ-जोयण-लक्खारिण, छस्सय - जुत्ताणि होति तेत्तीसं ।

दो - उत्तर - कुरवाणं, पत्तेक्कं वट्ट - विक्खंभो ॥२६३६॥

४००६३३ ।

अर्थ :- दो उत्तर (एव दो देव) कुरुओंमेंसे प्रत्येकका वृत्त-विस्तार चार लाख छहसी तेत्तीस (४००६३३) योजन प्रमाण है ॥२६३६॥

ऋजुबाण निकालनेका विधान—

जीवा - विषसंभाषं, बग्न - वितेसस्त होदि अं मूलं ।

विषसंभ - जुवं अद्विय^१, रिजु - बाणो घादईसंडे ॥२६३७॥ ।

अर्थ :—जीवाके बर्गको वृत्त-विस्तारके बर्गमेंसे घटाकर जो शेष रहे उसका बर्गमूल निकालें, पश्चात् उसमें वृत्त-विस्तारका प्रमाण मिलाकर आधा करनेपर घातकीखण्डद्वीपमे ऋजु-बाणका प्रमाण प्राप्त होता है ॥२६३७॥

$$\text{यथा :—} \frac{\sqrt{४००६३३२} - २२३१५८ + ४००६३३}{२} = ३६६६८० \text{ यो० ।}$$

कुरुक्षेत्रोका ऋजुबाण—

तिय - लबखा छासट्टी, सहस्सया छस्सयाणि सीदी य ।

जोयणया रिजु - बाणो, णादब्बो तम्मि दीवम्मि ॥२६३८॥

३६६६८० ।

अर्थ :—उस द्वीपमे तीन लाख छासासठ हजार छह्मौ अस्सी (३६६६८०) योजन प्रमाण कुरुक्षेत्रोका ऋजुबाण जानना चाहिए ॥२६३८॥

नोट :—यहाँ प्रसगानुसार गाथा २६३५ गाथा २६३८ के स्थानपर और गाथा २६३८ गाथा २६३५ के स्थानपर लिखी गई है ।

कुरुक्षेत्रोके वक्रबाणका प्रमाण—

सत्त-णव-अट्ट-सग-णव-तियाणि अंसाणि होंति बाणउदी ।

वकेसुणो^२ पमाणं, घादइसंडम्मि दीवम्मि ॥२६३९॥

३६७८६७ । २१२ ।

अर्थ :—घातकीखण्डद्वीपमे कुरुक्षेत्रके वक्रबाणका प्रमाण सात, नौ, आठ, सात, नौ और तीन इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हों, उनमे योजन और बानवे भाग अधिक (३६७८६७^२/_{१६} योजन) है ॥२६३९॥

१. द. ज. य. अघिय । २. द. वक्केणोपमाणं, ब. उ. वक्केणोपमाणं, क. ज. य. एक्केणो-पमाणं ।

घातकी-वृक्ष एवं उनके परिवार वृक्षोका निरूपण—

उत्तर - देव - कुरूसुं, खेत्तेसुं तस्थ धावई - वक्खा ।

चिट्ठंते गुणणामो, तेण पुढं धावईसंडो ॥२६४०॥

अर्थ :—घातकीखण्डद्वीपके उत्तरकुरु और देवकुरु क्षेत्रोंमें घातकी (प्राँवलेके) वृक्ष स्थित हैं, इसी कारण इस द्वीपका 'घातकीखण्ड' यह सार्थक नाम है ॥२६४०॥

धावइ - तरुण ताणं, परिवार - दुमा हवति एवस्सि ।

दोवम्मि पंच-लक्खा, सट्ठि - सहस्साणि चउ-सयासीवी ॥२६४१॥

५६०४८० ।

अर्थ :—इस द्वीपमे उन घातकी-वृक्षोके पाँच लाख साठ हजार चारसी अस्सी (५६०४८०) परिवारवृक्ष हैं ॥२६४१॥

पियवंसणो पहासो, अहिबइदेवा वसंति तेम दुमे ।

सम्मच - रयण - जुत्ता, वर - भूसण - भूसिदायारा ॥२६४२॥

अर्थ :—उन वृक्षोंपर सम्भवस्वरूपी रत्नसे समुक्त और उत्तम भूषणोंसे भूषित रूपको धारण करनेवाले प्रियदर्शन और प्रभास नामक दो अग्निपति देव निवास करते हैं ॥२६४२॥

आदर - अणादराणं, परिवारादो हवति एवाणं ।

दुगुणा परिवार - सुरा, पुब्बोदिद - वण्णणीहि जुदा ॥२६४३॥

अर्थ :—इन दोनों देवोंके परिवार-देव, आदर और अनादर देवोंके परिवार देवोंकी अपेक्षा दुगुने हैं, जो पूर्वोक्त वर्णनसे समुक्त हैं ॥२६४३॥

मेरु आदिकोके विस्तारका निरूपण—

गिरि-भट्टसाल-विजया, वक्खार-विभंगसरि-सुरारण्णा^१ ।

पुब्बावर - विरथारा, बल्लवा धावईसंडे ॥२६४४॥

अर्थ :—(अब) घातकीखण्डमें गिरि (मेरुपर्वत), भद्रशालवन, विजय (क्षेत्र), वक्खार-पर्वत, विभंगानदी और देवारण्य इनका पूर्वापर विस्तार कहना चाहिए ॥२६४४॥

एवेसु^१ पत्तेक्कं, मंदरसेलाण धरणि - पट्टम्मि ।
चउ-णउदि - सय - पमाणा, जोयणया होदि विक्खंभो ॥२६४५॥

६४०० ।

अर्थ :—इनमेसे प्रत्येक मेरुका विस्तार पृथिवीके पृष्ठ-भागपर चौरानवं सौ (६४००)
योजन प्रमाण है ॥२६४५॥

एक्कं जोयण - लक्खं, सत्त-सहस्सा य अट्ट-सय-जुत्ता ।
एवहत्तरिया भणिदा, विक्खंभो भद्दसालत्स ॥२६४६॥

१०७८७६ ।

अर्थ :—भद्रशालका विस्तार एक लाख सात हजार आठसौ उन्यासी (१०७८७६)
योजन प्रमाण कहा गया है ॥२६४६॥

छण्णवदि-जोयण-सया, ति^१-उत्तरा-अड-हिवा य ति-कलाओ ।
सव्वाणं^२ विजयाणं, पत्तेक्कं होदि विक्खंभो ॥२६४७॥

६६०३ । १ ।

अर्थ :—सब विजयो (क्षेत्रो) मे से प्रत्येक क्षेत्रका विस्तार छयानबंसो तीन योजन और
आठसे भाजित तीन भाग (६६०३) प्रमाण है ॥२६४७॥

जोयण-सहस्समेक्कं, वक्खार - गिरीण होदि वित्थारो ।
अड्ढाइज्ज - सयाणि, विभंग - सरियाण^३ विक्खंभो ॥२६४८॥

१००० । २५० ।

अर्थ :—वक्खारपर्वतोका विस्तार एक हजार योजन प्रमाण है और विभंगनदियोंका विस्तार
अढ़ाईसौ (२५०) योजन प्रमाण है ॥२६४८॥

अट्टावण्ण - सयाणि, चउदाल - जुदाणि जोयणा रुंइं ।
कहिइं वेवारण्णे, भूदारण्णे वि पत्तेक्कं ॥२६४९॥

५८४४ ।

१. द. ज. य. तिउत्तरायाहिवा । २. द. व. ज. य. उ. समवाओ । ३. द. सरिया, व. क. ज. य.
व. सरियाइ ।

अर्थ :—देवारण्य और भूतारण्यमेंसे प्रत्येकका विस्तार अट्टावनसौ चवालीस (५८४४)
योजन प्रमाण कहा गया है ॥२६४६॥

विजयादिकोका विस्तार निकालनेका विधान—

विजया - वक्खारारणं, विभंगराई-देवरण-भद्रशालवनं ।

रिणय-रिणय-फलेण गुणिदा, कादब्बा मेह-फल-जुत्ता ॥२६५०॥

तच्चेय दीव'- वासे, सोहिय एदम्मि होदि जं सेसं ।

णिय-णिय-संखा-हरिवं, णिय - णिय - वासाणि जायंतं ॥२६५१॥

अर्थ :—विजय, वक्षार, विभगनदी, देवारण्य और भद्रशालवनको [इष्टसे हीन] अपने-
अपने फलसे गुणा करके मेहके फलसे युक्त करनेपर जो सख्या उत्पन्न हो उसे इम द्वीपके विस्तारमेंसे
कम करके शेषमें अपनी-अपनी सख्याका भाग देनेपर अपना-अपना विस्तार प्रमाण प्रकट होता
है ॥२६५०-२६५१॥

विजय विस्तार—

सोहसु वित्यारादो, छ्चउ-तिय-छ्चक-उ-दु-अंक-कमे ।

सेसं सोलस - भजिदं, विजयं पडि होइ वित्यारं ॥२६५२॥

२४६३४६ ।

अर्थ :—छह, चार, तीन, छह, चार और दो इस अंक क्रमसे उत्पन्न हुई संख्याको घातकी
खण्डके विस्तारमेंसे कम करके शेषमे सोलहका भाग देनेपर प्रत्येक विजय (क्षेत्र) का विस्तार ज्ञात
होता है ॥२६५२॥

यथा :—वक्षार यो ८००० + विभंग १५०० + देवारण्य ११६८८ + भद्रशाल २१५७५८
+ मेह ६४०० यो ० = २४६३४६ यो ० । (४००००० — २४६३४६) ÷ १६ = २६०३३ यो ० ।

वक्षार विस्तार—

वित्यारादो सोहसु, अंबर-जभ-गयण-दोणि-जवय-तियं ।

अवसेसं अट्ट - हिदे, वक्खार - णगाण वित्यारो ॥२६५३॥

३६२००० ।

अर्थ :-शून्य, शून्य, शून्य, दो, नौ और तीन, इस अंक क्रमसे उत्पन्न हुई (३९२००० संख्याको घातकी खण्डके विस्तारमेंसे कम करके शेषमें आठका भाग देनेपर वक्षार-पर्वतोंका विस्तार ज्ञात होता है।। २६५३।।

यथा :-{४००००० योजन-(१५३६५४+१५००+११६८८+२१५७५८+९४००)}+८= १००० योजन
विभग विस्तार-

चउ - लक्खादो सोहसु, अंबर - गंभ - पंच-अड्ड-णवय-तियं।

सेसं छक्क - विहत्तं, विभंग - सरियाण वित्थारं।। २६५४।।

३९८५००।

अर्थ :-शून्य, शून्य, पाँच, आठ, नौ और तीन, इस अंक क्रम से उत्पन्न हुई (३९८५००) संख्या को घातकी खण्डके विस्तारमें से कम करके शेष में छहका भाग देने पर विभगनदियोक (६६४१६- $\frac{३}{३}$ योजन) विस्तार प्राप्त होता है।। २६५४।।

यथा :-{४००००० योजन-(८०००+१५३६५४+२१५७५८+११६८८+९४००)}÷६=६६४१६- $\frac{३}{३}$ योजन प्रत्येक विभगका विस्तार है।

देवारण्यका विस्तार-

सोहसु चउ-लक्खादो, दु-एक्क-तिय-अड्ड-अड्ड-तियमाण।

सेसं दु - हिदे होदि दु, देवारण्णाण वित्थारं।। २६५५।।

३८८३१२।

अर्थ :-दो, एक, तीन, आठ, आठ और तीन, इस अंक क्रमसे उत्पन्न हुई (३८८३१२) संख्याको घातकीखण्डके विस्तार चार लाख मे से घटाकर शेष मे दो का भाग देने पर देवारण्य वनों का विस्तार प्राप्त होता है।। २६५५।।

यथा :-{४००००० योजन-(१५३६५४+१५००+२१५७५८+९४००+८०००)}÷२=१९४१५६ योजन प्रत्येक देवारण्यका विस्तार।

भद्रशालवनका विस्तार-

अवणय चउ-लक्खादो, दो-चउ-दु-चदु-अड्ड-एक्क-अंककमे।

जोयणया अवसेसं, दो भजिदे भइसाल - वर्णं।। २६५६।।

१८४२४२

अर्थ :—दो, चार, दो, चार, आठ और एक, इस अंक क्रमसे उत्पन्न हुई (१८४२४२) संख्याको घातकीखण्डके (चार लाख) विस्तारमेसे घटाकर शेषमे दो का भाग देनेपर भद्रशालवनोका विस्तार (६२१२१ यो०) प्राप्त होता है ॥२६५६॥

यथा :—{ ४००००० — (१५३६५४ — ११६८८ + १५०० + ६४०० + ८०००) } — २ = ६२१२१ योजन प्रत्येक भद्रशालवनका विस्तार ।

मेरु विस्तार—

चउ-लकखादो सोहसु, 'अंबर-राभ-छक्क-गयण-णवय-तियं ।

अंककमे अबसेसं, मेरुगिरिदस्स परिमाणं ॥२६५७॥

३६०६००^२ ।

अर्थ :—शून्य, शून्य, छह, शून्य, नौ और तीन इस अंक क्रमसे उत्पन्न हुई (३६०६००) संख्याको चार लाखमेसे कम करनेपर जो शेष रहे उतने (१४००) योजन प्रमाण मेरुका विस्तार है ॥२६५७॥

यथा :—४००००० — (१५३६५४ + ८००० + १५०० + ११६८८ + २१५७५८) = ६४०० योजन मेरु विस्तार ।

कच्छा और गन्धमालिनी देशका सूची व्यास—

दुग्गुम्मि भद्रसाले, मंदरसेलस्स खिबसु विकखंभं ।

मज्झिम-सुई - सहिवं, सा सुई कच्छ - गंधमालिणिए ॥२६५८॥

अर्थ :—दुग्गुने भद्रशालवनके विस्तारमें मन्दरपर्वतका विस्तार मिलाकर उसमें मध्यम सूची व्यास मिला देनेपर कच्छा और गन्धमालिनी देशकी सूचीका प्रमाण आता है ॥२६५८॥

एक्कारस-लक्खणि, पणबीस - सहस्स इगि-सयाणि पि ।

अडबण जोयणाणि, कच्छाए^३ सा हबे सुई ॥२६५९॥

११२५१५८ ।

अर्थ :—कच्छादेशकी सूची ग्यारह लाख पच्चीस हजार एकसौ छट्ठावन (११२५१५८) योजन प्रमाण है ॥२६५९॥

१. द. ब. क. ज. उ. अंबरणभगवणसोप्पिणवयतिय । २. द. ब. क. ज. य. उ. ३९२००० ।

३. द. ब. क. ज. य. उ. कच्छाए^३ ।

मथा :—भद्रशालका वि० (१०७८७६ × २) + ६४०० मेरु वि० + ६००००० यो०
मध्यम सूची=११२५१५८ यो० कच्छादेशकी सूची ।

कच्छा देशकी परिधि—

विकसंभस्स य वग्गो, दस-गुणिवो करणि वट्टए परिही ।

दु-छ-णभ-अड-पण-पण-तिय अंक - कमे तीए परिमाणं ॥२६६०॥

३५५८०६२ ।

अर्थ :—विस्तारके वर्गको दससे गुणित कर उसका वर्गमूल निकालने पर परिधिका प्रमाण होता है । यहाँ कच्छादेश सम्बन्धी सूचीकी परिधिका प्रमाण अक-क्रमसे दो, छह, शून्य, आठ, पाँच, पाँच और तीन (३५५८०६२) योजन है ॥२६६०॥

मथा :— $\sqrt{११२५१५८^२ \times १०}$ =कुछ अधिक ३५५८०६२ यो० परिधि ।

पर्वतरुद्ध क्षेत्रका प्रमाण—

अट्टणरि सहस्सा, बावाल - जुवा य जोयणट्ट - सया ।

एवकं लक्खं चोहस - गिरि - रुद्धक्खेत्त - परिमाणं ॥२६६१॥

१७८८४२ ।

अर्थ :—घातकीखण्ड स्थित दोनों मेरु सम्बन्धी (कुलाचल एवं इष्वाकर इन) चौदह पर्वतोंसे रोके हुए क्षेत्रका प्रमाण एक लाख अठत्तर हजार आठसी बयालीस (१७८८४२) योजन (से कुछ अधिक) है ॥२६६१॥

विदेह क्षेत्रका आयाम—

सेल - विमुद्धा परिही, चउसट्ठीए गुणिज्ज' अबसेसं ।

वो - सय - बारस - भजिवे, जं लद्धं तं विदेह-वोहत्तं ॥२६६२॥

दस-जोयण-लक्खार्णि, विस-सहस्सं सयं पि इगिवालं ।

अडसीवि - जुव - सयंसा, विवेह - वोहत्त - परिमाणं ॥२६६३॥

१०२०१४१ । ३६६ ।

अर्थ :—(कच्छादेशकी) परिधिप्रमाणमेसे पवंतहृद्ध क्षेत्र कम कर देनेपर जो शेष रहे उसको चौंसठसे गुणा करके प्राप्त गुणनफलमे दोसी बारहका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतनी विदेहक्षेत्रकी लम्बाई है । विदेहकी इस लम्बाईका प्रमाण दस लाख बीसहजार एकसी इकतालीस योजन और एक योजनके दोसी बारह भागमेसे एकसी अठ्ठासी भाग (१०२०१४१३६६ योजन) प्रमाण है ॥२६६२-२६६३॥

यथा :—(३५५०६२ — १७८४२) × ६४ ÷ २१२ = १०२०१४१३६६ योजन ।

कच्छादेशकी आदिम लम्बाई—

सीदा-णईए 'वासं, सहस्समेवकं च तम्मि ३अवरिणज्जं ।

अवसेसद्ध - पमाणं, दीहत्तं कच्छ - विजयस्स ॥२६६४॥

१००० ।

अर्थ :—विदेहकी उम लम्बाईमेसे एक हजार (१०००) योजन प्रमाण सीतानदीका विस्तार कम कर देनेपर जो शेष रहे उसके अर्धभाग प्रमाण कच्छादेशकी (आदिम) लम्बाई है ॥२६६४॥

यथा —(१०२०१४१३६६ — १०००) ÷ २ = ५०९५७०३१३ योजन ।

पण-जोयण-लक्खारिण, पण-णउद्धि-सयाणि ३सत्तरि-जुदाणि ।

दु - सय - कलाओ हंदा, वंका - सरुवेण कच्छस्स ॥२६६५॥

५०९५७० । ३१३ ।

अर्थ :—पाँच लाख नौ हजार पाँचसौ सत्तर योजन और दोसी भाग अधिक (५०९५७०३१३ योजन) कच्छादेशके त्रियंग्विस्तार (आदिम लम्बाई) का प्रमाण है ॥२६६५॥

अपने-अपने स्थानमे अर्धविदेहका विस्तार—

विजयादि-वास-वग्गो, वक्खार - विभग - वेवरण्णणं ।

दस-गुणियो जं मूलं, पुह पुह वत्तीस - गुणियो तं ॥२६६६॥

बारस-जुद-दु-सएहिं, भजिद्वणं कच्छ - हंदा - मेलिविदं ।

तत्थ ३णिय-णिय - ट्ठाणे, विवेह - अद्धस्स विक्खओ ॥२६६७॥

१. द. व. क. ज. य. उ. वास मेवक च तम्मि । २. द. व. क. ज. य. उ. अवणजे । ३. द. व. क. ज. य. उ. सत्तरिस्सावो । ४. द. मूल वपुसा, व. क. ज. य. उ. मूल वा । ५. द. तट्ट, व. क. ज. य. उ. तट्टा ।

अर्थ :—कञ्छादि विजय, वक्षार, विभंगनदी और देवारण्य, इनके विस्तारके वर्गको दससे मुशित कर वर्गमूल निकालना, अपने-अपने उस वर्गमूलको पृथक्-पृथक् बत्तीससे गुणा करके प्राप्त लब्धमें दोसौ बारहका भाग देनेपर जो प्राप्त हो उसे कञ्छादेशके विस्तारमें मिला देनेपर उत्पन्न राशि प्रमाण अपने-अपने स्थानमें अर्धविदेहका विस्तार होता है ॥२६६६-२६६७॥

क्षेत्रोंकी वृद्धिका प्रमाण—

चत्वारि सहस्त्राणि, पण-सय-चउसीदि ज्ञोयणाणं पि ।
परिवड्ढी^१ विजयाणं, णावग्वा घादईसंडे ॥२६६८॥
४५८४ ।

अर्थ :—घातकीखण्डमे क्षेत्रोंकी वृद्धि चार हजार पाँचसौ चौरासी (४५८४) योजन प्रमाण जाननी चाहिए ॥२६६८॥

यथा :— [{ $\sqrt{(६६०३६)}^२ \times १०$ } $\times ३२$] $\div २१२ = ४५८४$ यो० क्षेत्रोमे वृद्धिका प्रमाण ।

वक्षारपर्वतोका वृद्धिका प्रमाण—

चत्वारि ज्ञोयणाणं, सयाणि सत्तत्तरीय जुत्ताणि ।
सट्ठि कलाओ तस्सि, वक्षार - गिरीण परिवड्ढी ॥२६६९॥
४७७ । २९२ ।

अर्थ :— इस द्वीपमें वक्षार-पर्वतोकी वृद्धिका प्रमाण चारसौ सत्तर योजन और साठ कला अधिक (४७७, २९२) है ॥२६६९॥

यथा — [{ $\sqrt{(१०००)}^२ \times १०$ } $\times ३२$] $\div २१२ = ४७७, २९२$ यो० व० वृद्धि प्रमाण ।

विभग नदियोंमे वृद्धिका प्रमाण—

एककोण - बीस-सह्रदं, एक-सयं ज्ञोयणाणि भागा य ।
वावण्णा ठाणसुं, विभङ्ग - सरियाण परिवड्ढी ॥२६७०॥
११६ । २९२ ।

अर्थ :—विभगनदियोके स्थानोंमें वृद्धिका प्रमाण एकसौ उन्नीस योजन और बानव भाग (११६३^१/_२ योजन) प्रमाण है ॥२६७०॥

यथा :—[{ $\sqrt{(२५०)^२ \times १०}$ } ३२] \div २१२ = ११६३^१/_२ योजन वृद्धिका प्रमाण—

देवारण्यके स्थानोंमें वृद्धिका प्रमाण—

सत्तावीस - सयाणं, उणउदी जौयणाणि भागा य ।

बाणउदी णायव्वा, देवारणस्त परिबद्धी ॥२६७१॥

२७८६ । ३^१/_२ ।

अर्थ :—देवारण्यकी वृद्धिका प्रमाण दो हजार सातसौ नवासी योजन और बानव भाग (२७८६^१/_२ यो०) है ॥२६७१॥

[{ $\sqrt{(५८४४)^२ \times १०}$ } \times ३२] \div २१२ = २७८६^१/_२ योजन ।

विजयादिकोकी आदि, मध्यम और अन्तिम लम्बाई जाननेका उपाय—

विजयादोणं आदिम, दीहे बद्धी खिवेज्ज सो होवि ।

मज्झिम-दीहो मज्झिम, दीहे तं खिवसु अंत-दीहो सो ॥२६७२॥

अर्थ :—क्षेत्रादिकोकी आदिम लम्बाईमें वृद्धिका प्रमाण मिला देनेपर मध्यम लम्बाई होती है और मध्यम लम्बाईमें वृद्धि-प्रमाण मिला देनेपर उनकी अन्तिम लम्बाई प्राप्त होती है ॥२६७२॥

खेत्तादीणं अन्तिम - दीह - पमाणं च होवि अं जत्थं ।

तं जि पमाणं अग्गिम - वक्खारावीसु आदिल्लं ॥२६७३॥

अर्थ :—क्षेत्रादिकोकी अन्तिम लम्बाईका प्रमाण जहाँ जो हो, वही उससे आगेके वक्षारादिककी आदिम लम्बाईका प्रमाण होता है ॥२६७३॥

कच्छा और गन्धमालिनीकी आदिम और मध्यम लम्बाई—

णम-सग-पण-णव-णम-पण अंक-कमे दु-सय भाग-दीहत्तां ।

कच्छाए गंधमालिणि, आदोए परिहि रूवेण ॥२६७४॥

५०६५७० । ३^१/_२ ।

अर्थ :—शून्य, सात, पाँच, नी, पाँच, सात और शून्य, इस अंक क्रमसे उत्पन्न हुई संख्या और दोसौ भाग अधिक अर्थात् ५०६५७०३९९९ योजन कच्छा एवं गन्धमालिनी देशको परिचिह्नरूपसे आदिम लम्बाई है ॥२६७५॥

चउ-पंच-एक-चउ-इगि पंचय अंसा तहेय पत्तोवकं ।

पुठ्वावर - भेरुणं, पुठ्वावर - विजय - मज्झ - दोहत्तं ॥२६७५॥

५१४१५४ । ३९९ ।

अर्थ :—पूर्वदिशागत (विजय) मेरुसे सम्बन्धित पूर्व दिशागत कच्छा और पश्चिम दिशागत (अचल) मेरुसे सम्बन्धित पश्चिम दिशागत गन्धमालिनी देशोमेसे प्रत्येक देशकी मध्यम लम्बाई ५१४१५४३९९९ योजन-प्रमाण है ॥२६७५॥

$५०६५७०३९९९ + ४५८४ = ५१४१५४३९९९$ योजन है ।

कच्छादि देशोकी अन्तिम और दो वक्षारोको आदिम लम्बाई—

अड-तिय-सग-अड-इगि-पण दु-सय-कला कच्छ-गंधमालिणि ए ।

अंतद्दो वक्खारय, गिरीण आदिल्ल दोहत्तं ॥२६७६॥

५१८७३८ । ३९९ ।

अर्थ :—आठ, तीन, सात, आठ, एक और पाँच, इस अंक क्रमसे उत्पन्न हुई संख्या प्रमाण योजन और दोसौ भाग अधिक कच्छा एवं गन्धमालिनीकी अन्तिम तथा (चित्रकूट और सुरमाल इन) दो वक्षार पर्वतोंकी आदिम लम्बाई (५१८७३८३९९९ यो०) है ॥२६७६॥

$५१४१५४३९९९ + ४५८४ = ५१८७३८३९९९$ योजन ।

दोनो वक्षारोकी मध्यम लम्बाई—

छक्केवक दोण्णि णव इगि-पण भाग-अडदाल-चित्त-कूडम्मि ।

तह देव - पठ्ठवयम्मि य, पत्तोवकं मज्झ - दोहत्तं ॥२६७७॥

५१६२१६ । ३९२ ।

अर्थ :—चित्रकूट और देव (सुर) माल पर्वतोमेसे प्रत्येक पर्वतकी मध्यम लम्बाई छह, एक, दो, नौ, एक और पाँच, इस अंक क्रमसे उत्पन्न संख्या प्रमाण और अड़तालीस भाग अधिक (५१६२१६३९२ योजन है ॥२६७७॥

$५१८७३८३९९९ + ४७७३९२ = ५१६२१६३९२$ योजन ।

दोनों वक्षारोंकी अन्तिम और सुकच्छादि दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

तिय-णव-छण्णव-इगि-पण अंसा चउवण्ण-दु-हव दीहसं ।

दो - वक्षार - गिरोणं, अंतिममादी सुकच्छ - गंदिलए ॥२६७८॥

$$५१६६६३ । ३१६ ।$$

अर्थ :- (उपर्युक्त) दोनों वक्षार पर्वतोंकी अन्तिम और सुकच्छा एव गंधिला देशकी आदिम लम्बाई तीन, नौ, छह, नौ, एक और पाँच, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे एकसौ आठ भाग अधिक (५१६६६३१६ योजन) है ॥२६७८॥

$$५१६२१६-४६३ + ४७७२१२ = ५१६६६३१६ योजन ।$$

दोनों क्षेत्रोंकी मध्यम लम्बाई—

सत्त-सग-दोण्णि-चउ-दुग-पण भागा अट्ठ-अहिय-सयमेत्ता ।

मज्झिल्लय - दीहसं, विजयाए सुकच्छ - गंदिलए ॥२६७९॥

$$५२४२७७ । ३१६ ।$$

अर्थ .— सुकच्छा और गन्धिला नामक दोनों क्षेत्रोंकी मध्यम लम्बाई सात, सात, दो, चार, दो और पाँच, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे एकसौ आठ भाग अधिक (५२४२७७३१६ योजन प्रमाण) है ॥२६७९॥

$$५१६६६३१६ + ४५८४ = ५२४२७७३१६ योजन ।$$

दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम और दो विभग नदियोंकी आदिम लम्बाई—

एवक-छ-अट्ठ-दु-पण अंसा तं चये सुकच्छ - गंदिलए ।

दहवदी उम्मिमालिणि, अंतं आबिल्ल - दीहसं ॥२६८०॥

$$५२८८६१ । ३१६ ।$$

अर्थ :- उन सुकच्छा और गन्धिला देशोंकी अन्तिम तथा दहवती और उम्मिमालिनी विभंग नदियोंकी आदिम लम्बाई एक, छह, आठ, आठ, दो और पाँच इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे एकसौ आठ भाग अधिक (५२८८६१३१६ योजन प्रमाण) है ॥२६८०॥

$$५२४२७७३१६ + ४५८४ = ५२८८६१३१६ योजन ।$$

दोनों नदियोंकी मध्यम लम्बाई—

अंबर-अट्ट-णवट्ट-बु-पांच य अंक - ककमेण अंसा य ।

विगुणिय सीदी दोण्णं, णदीण मज्झिल्ल - दीहत्तां ॥२६८१॥ -

५२८६८० । ३१३ ।

अर्थ :— ब्रह्मती और ऊर्मिमालिनी विभग नदियोंकी मध्यम लम्बाई शून्य, आठ, नौ, आठ, दो और पांच इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उसमें एकसौ साठ भाग अधिक (५२८६८०३१३ यो०) है ॥२६८१॥

५२८६९३३३ + ११९३३३ = ५२८६८०३१३ योजन ।

दोनों नदियोंकी अन्तिम और दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

खं-णभ-इगि-णव-बुग-परा णीणं णईणं हवेइ पत्तेक्कं ।

महकच्छ - सुवग्गाए, अंतं आविल्ल - दीहत्तां ॥२६८२॥

५२६१०० ।

अर्थ :—दोनों विभगा नदियोंकी अन्तिम तथा महाकच्छा और सुवल्गु (सुगन्धा) नामक दोनों देशोंमेंसे प्रत्येक देशकी आदिम लम्बाई शून्य, शून्य, एक, नौ, दो और पांच इस क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने (५२६१००) योजन प्रमाण है ॥२६८२॥

५२८६८०३१३ + ११९३३३ = ५२६१०० योजन ।

दोनों देशोंकी मध्यम लम्बाई—

चउ-अट्ट-छक्क-तिय-तिय-परा अंक-कमेण ज्ञोयणाणि पुढं ।

महकच्छ - सुवग्गाए, दीहत्तां मज्झिम - पएत्ते ॥२६८३॥

५३३६८४ ।

अर्थ :—महाकच्छा और सुवल्गु (सुगन्धा) देशोंकी मध्यम लम्बाई चार, आठ, छह, तीन, तीन और पांच इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने (५३३६८४) योजन प्रमाण है ॥२६८३॥

५२६१०० + ४५८४ = ५३३६८४ योजन ।

दोनों देशोकी अन्तिम और दोनों पर्वतांकी आदिम लम्बाई—

अट्ट-छ-डु-अट्ट-तिय-पण दोहूँ विजयाण पढम - कूडस्स ।

तह सूर - पव्वबाए, अंतं आविल्ल - दोहूँ ॥२६८४॥

५३८२६८ ।

अर्थ :—उपर्युक्त दोनो देशोकी अन्तिम और प्रथम (पच) कूट एवं सूर्यपर्वतकी आदिम लम्बाई आठ, छह, दो, आठ, तीन और पाँच इस अंक क्रमसे जो सख्या निर्मित हो उतने (५३८२६८) योजन प्रमाण है ॥२६८४॥

$५३३६८४ + ४५८४ = ५३८२६८$ योजन ।

दोनो वक्षार-पर्वतोकी मध्यम लम्बाई—

पण-चउ-सगट्ट-तिय - पण - भागा सट्टी हवेदि पत्तेक्कं ।

वर - पउम - कूड तह सूर - पव्वए मज्झ - दोहूँ ॥२६८५॥

५३८७४५ । ३३३ ।

अर्थ :—उत्तम पश्चकट और सूर्यपर्वतकी मध्यम लम्बाई पाँच, चार, मान, आठ, तीन और पाँच इस अंक क्रमसे जो सख्या निर्मित हो उससे माठ भाग अधिक (५३८७४५, ३३३ यो०) है ॥२६८५॥

$५३८२६८ + ४७७३३३ = ५३८७४५, ३३३$ योजन ।

दोनो पर्वतोकी अन्तिम और दोनों देशो की आदिम लम्बाई—

दो-दो-दो-णव-तिय - पण अंसा वीसुत्तरं सयं दोहूँ ।

अंतद्धासु गिरीसुं, आदी वगूए कच्छकावदिए ॥२६८६॥

५३६२२२ । ३३३ ।

अर्थ :—उपर्युक्त दोनो पर्वतोकी अन्तिम और वल्लु (गन्धा) एवं कच्छकावती देशोकी आदिम लम्बाई दो, दो, दो, नौ तीन और पाँच इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उससे एकसौ बीस भाग अधिक (५३६२२२, ३३३ योजन प्रमाण) है ॥२६८६॥

$५३८७४५ + ४७७३३३ = ५३६२२२, ३३३$ योजन ।

दोनो देशोकी मध्यम लम्बाई—

छण्णभ-अड-तिय-चउ-पण अंक-कमे जोयणासि पुब्बुत्ता ।

अंसा मज्झम दोहूँ, वगूए कच्छकावदिए ॥२६८७॥

५४३८०६ । ३३३ ।

अर्थ :—बल्लु (गन्धा) और कच्छकावती देशकी मध्यम लम्बाई छह, शून्य, आठ, तीन, चार और पाँच इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पूर्वोक्त एकसौ बीस भाग अधिक (५४३८०६३३३ योजन प्रमाण) है ॥२६८७॥

$$५३६२२२३३३ + ४५८४ = ५४३८०६३३३ योजन ।$$

दोनों देशोंकी अन्तिम और दोनों नदियोंकी आदिम लम्बाई—

जम-एव-तिय-अड-चउ-पण पुञ्जुत्तंसाणि होसु विज्जएसुं ।

गह्वविए फेणमालिणि, अंतिम - आदिल्ल - दोहत्तां ॥२६८८॥

$$५४८३६० । ३३३ ।$$

अर्थ :—बल्लु (गन्धा) और कच्छकावती देशकी अन्तिम तथा गह्वती एवं फेनमालिनी नामक विभगदियोंकी आदिम लम्बाई शून्य, नौ, तीन, आठ, चार और पाँच, इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पूर्वोक्त एकसौ बीस भाग अधिक (५४८३६०३३३ योजन प्रमाण) है ॥२६८८॥

$$५४३८०६३३३ + ४५८४ = ५४८३६०३३३ योजन ।$$

दोनों नदियोंकी मध्यम लम्बाई—

जव-जम-पण-अड-चउ - पण भागा बाहत्तरीसिदं दोहं ।

मज्झल्ल - गह्ववीए, तह खेव य फेणमालिणिए ॥२६८९॥

$$५४८५०६ । ३३३ ।$$

अर्थ :— गह्वती और फेनमालिनी नदियोंकी मध्यम लम्बाई नौ, शून्य, पाँच, आठ, चार और पाँच इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और एकसौ बहत्तर भाग अधिक (५४८५०६३३३ योजन प्रमाण) है ॥२६८९॥

$$५४८३६०३३३ + ११६३३३ = ५४८५०६३३३ योजन ।$$

दोनों नदियोंकी अन्तिम तथा दोनों देशोंकी आदिम लम्बाई—

जव-दो-अड-अड-चउ-पण अंसा बारस विभंग-सरियाणं ।

अंतिल्लय - दोहत्तां, आदी आवत्त - बप्पकावविए ॥२६९०॥

$$५४८६२६ । ३३३ ।$$

अर्थ :- उपर्युक्त दोनों विभंगनदियोंकी अन्तिम और आवर्ता तथा वप्रकावती देशोंकी आदिम लम्बाई नौ, दो, छह, आठ, चार और पाँच, इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और बारह भाग अधिक ($५४८६२६०\frac{१}{३}$ योजन प्रमाण) है ॥२६६०॥

$$५४८६०६\frac{१}{३} + ११६३\frac{१}{३} = ५४८६२६३\frac{१}{३} \text{ योजन ।}$$

दोनों देशोंकी मध्यम लम्बाई -

तिय-इगि-दु-ति-पण-पणयं, अंक-कमे जोयणाणि अंसा य ।

बारसमेरां मञ्जिभ्रम - दोहं आवस्त - वप्पकावबिए ॥२६६१॥

$$५५३२१३\frac{१}{३} । ३\frac{१}{३} ।$$

अर्थ :- आवर्ता और वप्रकावती देशोंकी मध्यम लम्बाई तीन, एक, दो, तीन, पाँच, और पाँच इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और बारह भाग अधिक ($५५३२१३\frac{१}{३}$ योजन प्रमाण) है ॥२६६१॥

$$५४८६२६\frac{१}{३} + ४५८४ = ५५३२१३\frac{१}{३} \text{ योजन ।}$$

दोनों देशोंकी अन्तिम और दो वक्षार-पर्वतोंकी आदिम लम्बाई—

सग-णव-सग-सग-पण-पण, अंसा ता' एव बोसु विजयाणं ।

अतिल्लय - दोहंरां, आविल्लं गल्लिण - गगण - वरे ॥२६६२॥

$$५५७७६७ । २\frac{१}{३} ।$$

अर्थ :- सात, नौ, सात, सात, पाँच और पाँच इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और बारह भाग अधिक अर्थात् $५५७७६७\frac{१}{३}$ योजन उपर्युक्त दोनों देशोंकी अन्तिम लम्बाई तथा इतनी ($५५७७६७\frac{१}{३}$ योजन) ही नलिन एवं नागपर्वतकी आदिम लम्बाई है ॥२६६२॥

$$५५३२१३\frac{१}{३} + ४५८४ = ५५७७६७\frac{१}{३} \text{ योजन ।}$$

दोनों वक्षार-पर्वतोंकी मध्यम लम्बाई—

अउ-सस-बोणि-अट्टय-पण-पण-अंक - ककमेरा अंसाइं ।

बावसरि दोहंरां, मञ्जिभ्रल्लं^३ गल्लिण-कूड-गगणवरे ॥२६६३॥

$$५५८२७४ । ३\frac{१}{३} ।$$

अर्थ :—नलिन और नाग पर्वतकी मध्यम लम्बाई चार. सात दो, आठ, पाँच और पाँच, इस अक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और वहत्तर भाग अधिक (५५८२७४.१३ योजन प्रमाण) है ॥२६६३॥

$$५२७७९७३३ + ४७७.१३ = ५२८२७४.१३ योजन ।$$

दोनो वक्षारोकी अन्तिम और दो देशोकी आदिम लम्बाई—

इगि-पण-सग-अड-पण-पण भागा बत्तीस-अहिय-सय दोहं ।

दोसु गिरीसु अंतिल्लादिल्लं दोसु विजयाणं ॥२६६४॥

$$५५८७५१.३३३ ।$$

अर्थ :— उपर्युक्त दोनो वक्षार पर्वतोकी अन्तिम तथा लागलावता और महावप्रा देशोकी आदिम लम्बाई एक, पाँच, सात, आठ, पाँच और पाँच इग अक क्रमसे निमित्त संख्या प्रमाण तथा एकसौ बत्तीस भाग अधिक (५५८७५१.३ योजन प्रमाण) है ॥२६६४॥

$$५५८२७४.१३ + ४७७.१३ = ५५८७५१.३ योजन ।$$

दोनो देशोकी मध्यम लम्बाई—

पण-ति-ति - तिय - छप्पणयं अंसा ता एव लंगलावत्ते ।

तह महवप्पे^१ विजए, पत्तेक्कं^२ मज्झ - दोहं ॥२६६५॥

$$५६३३३५.३३३ ।$$

अर्थ :— पाँच, तीन, तीन, छह और पाँच इस अक क्रमसे जो संख्या निमित्त हो उतने योजन और पूर्वोक्त एकसौ बत्तीस भाग अधिक (५६३३३५.३३३ योजन प्रमाण) लागलावता एव महावप्रा देशोमेसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई है ॥२६६५॥

$$५५८७५१.३३३ + ४५८४ = ५६३३३५.३३३ योजन ।$$

दोनो देशोकी अन्तिम और दो विभगनदियोकी आदिम लम्बाई—

णव-इगि-णव-सग-छप्पण भागा ता एव दोसु विजयाणं ।

अंतिल्लय - दोहं, आदिल्लं दो - विभंग - ^३सरियाणं ॥२६६६॥

$$५६७६१६.३३३ ।$$

१ द. ज. य तहवप्पे । २. द ब क. ज. य उ. सपत्तेक्कं मज्झमदोहं । ३. द. ज. सरीण ।

अर्थ :—दोनों देशोंकी अन्तिम और गम्भीरमालिनी एवं पंकवती नामक दो विभंग नदियोंकी आदिम लम्बाई नौ, एक, नौ, सात, छह और पाँच इस अक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पूर्वोक्त एकसौ बत्तीस भाग अधिक (५६७६१६३३३ योजन प्रमाण) है ॥२६६६६॥

$$५६३३३५३३३ + ४५८४ = ५६७६१६३३३ योजन ।$$

दोनो विभंग नदियोंकी मध्यम लम्बाई—

अड-तिय-जभ-अड-छप्पण अंसा चउसीदि-अहिय-सयमेसं ।

गंभीरमालिणीए, मज्झिल्लं पंकवविगाए ॥२६६७॥

$$५६८०३८ । ३९५ ।$$

अर्थ :—गम्भीरमालिनी और पंकवती नदियोंकी मध्यम लम्बाई आठ, तीन, शून्य, आठ, छह और पाँच इस अक क्रमसे उत्पन्न हुई संख्यासे एकसौ चौरासी भाग अधिक (५६८०३८३९५ योजन प्रमाण) है ॥२६६७॥

$$५६७६१६३३३ + ११६३९५ = ५६८०३८३९५ योजन ।$$

दोनो नदियोंकी अन्तिम और दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

अड-पण-इगि-अड-छप्पण अंसा चउवीसमेसं - दोहत्तं ।

दोणं णदोण अंतं, आदिल्लं दोसु विजयाणं ॥२६६८॥

$$५६८१५८ । ३९५ ।$$

अर्थ :—उपर्युक्त दोना नदियोंकी अन्तिम तथा पुत्तला एव मुवप्रा देशोमेसे प्रत्येककी आदिम लम्बाई आठ, पाँच, एक आठ, छह और पाँच इस अक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौबीस भाग अधिक (५६८१५८३९५ योजन प्रमाण) है ॥२६६८॥

$$५६८०३८३९५ + ११६३९५ = ५६८१५८३९५ योजन ।$$

दोनो देशोंकी मध्यम लम्बाई—

दु-चउ-सग-दोण-सग-पण अंक-कमे अंसमेव पुव्वत्तं ।

मज्झिल्लय - दीहत्तं, पोक्खल - विजए सुवप्पाए ॥२६६९॥

$$५७२७४२ । ३९५ ।$$

अर्थ :- पुष्कला तथा सुवप्रा क्षेत्रोंकी मध्यम लम्बाई दो, चार, सात, दो, सात और पाँच इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पूर्वोक्त चौबीस भाग अधिक (५७३७४२३५५ योजन प्रमाण) है ॥२६६६॥

$$५६८१५८३५५ + ४५८४ = ५७२७४२३५५ योजन ।$$

दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम और दो बक्षार पर्वतोंकी आदिम लम्बाई—

छ-हो-तिय-सग-सग-पण, अंसा ता एव अंत - दोहृषं ।

कमसो दो - विजयाणं, आदिन्लं एकसेल-खंणणे ॥२७००॥

$$५७७३२६ । २३५ ।$$

अर्थ :- क्रमशः दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम तथा एकशैल चन्द्रनग नामक बक्षार पर्वतकी आदिम लम्बाई छह, दो तीन, सात, सात और पाँच इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने और चौबीस भाग ही अधिक (५७७३२६३५५ योजन प्रमाण) है ॥२७००॥

$$५७२७४२३५५ + ४५८४ = ५७७३२६३५५ योजन ।$$

दोनों बक्षार पर्वतोंकी मध्यम लम्बाई—

तिय-गभ-अड-सग-सग-पण, आगा चउसीदिनेस पत्तेकं ।

मडिभल्लय - दोहृषं, होवि पुठं एकसेल - खंणणे ॥२७०१॥

$$५७७८०३ । ३५५ ।$$

अर्थ :- एक शैल और चन्द्रनग नामक बक्षार-पर्वतमेसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई तीन, शून्य, आठ, सात, सात और पाँच इस अंक क्रमसे निमित्त जो संख्या है उतने योजन और चौरासी भाग अधिक (५७७८०३३५५ योजन प्रमाण) है ॥२७०१॥

$$५७७३२६३५५ + ४७७३५८ = ५७७८०३३५५ योजन ।$$

दोनों पर्वतोंकी अन्तिम तथा दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

गभ-अड-नु-अड-सग-पण, अंसा नारस-कवी हु अखसाणे ।

दोहृ' दोसु गिरीणं, आदी वप्पाए पोक्खलावविए ॥२७०२॥

$$५७८२८० । ३५५ ।$$

अर्थ :-दोनो वक्षार-पर्वतोंकी अन्तिम और वप्रा एवं पुष्कलावती क्षेत्रकी आदिम लम्बाई शून्य, आठ, दो, आठ, सात और पाँच इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बारहके वर्ग अर्थात् एकसौ चवालीस भाग अधिक (५७८२८०३३५ योजन प्रमाण) है ॥२७०२॥

$$५७८०३३३५ + ४७७३३३ = ५७८२८०३३५ योजन ।$$

दोनो देशोकी मध्यम लम्बाई—

चउ-छक्कट्ट-दु - अड, पंच य अंसा तहेव पत्तेकं ।

मज्जिल्लं दोह्लं, वप्पाए पोक्खलावदिए ॥२७०३॥

$$५८२८६४ । ३३५ ।$$

अर्थ :-वप्रा और पुष्कलावती क्षेत्रमेसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई चार, छह, आठ, दो, आठ और पाँच इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन एव एकसौ चवालीस भाग अधिक (५८२८६४३३५ योजन प्रमाण) है ॥२७०३॥

$$५८२२८०३३५ + ४५८४ = ५८२८६४३३५ योजन ।$$

दोनो देशोकी अन्तिम और भूतारण्य-देवारण्यकी आदिम लम्बाई—

अड-चउ-चउ-सग-अड-पण, अंसा ते खेव पोक्खलावदिए ।

वप्पाए अंत - दोहं, आदिल्लं भूद - देवरण्णाणं ॥२७०४॥

$$५८७४४८ । ३३५ ।$$

अर्थ :-पुष्कलावती और वप्रा क्षेत्रकी अन्तिम तथा भूतारण्य एव देवारण्यकी आदिम लम्बाई आठ, चार, चार, सात, आठ और पाँच इस अंक क्रमसे निमित्त सख्यासे एकसौ चवालीस भाग अधिक (५८७४४८३३५ योजन प्रमाण) है ॥२७०४॥

$$५८२८६४३३५ + ४५८४ = ५८७४४८३३५ योजन ।$$

दोनो वनोकी मध्यम लम्बाई—

अट्ट-तिय-दोण्णि-अंबर-राव-पण-अंक-वकमेण चउवीसा ।

भागा मज्जिम - दोहं, पत्तेकं देव - भूदरण्णाण ॥२७०५॥

$$५६०२३८ । ३३५ ।$$

अर्थ :—देवारण्य और भूतारण्यमेंसे प्रत्येक वनकी मध्यम लम्बाई आठ, तीन, दो, शून्य, नौ और पाँच इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौबीस भाग अधिक (५६०२३८३१६ योजन प्रमाण) है ॥२७०५॥

$$५८७४४८३१६ + २७८६३१६ = ५६०२३८३१६ योजन ।$$

दोनो वनोकी अन्तिम लम्बाई—

सप्त-दु-अंबर-तिय-णव-पंच य अंसाय - सोल-सहिय-सयं ।

पत्तेकं अंतिल्लं, दोहत्तं देव - भूवरण्णाणं ॥२७०६॥

$$५६३०२७ । ३३३ ।$$

अर्थ :—देवारण्य और भूतारण्यकी अन्तिम लम्बाई सात, दो, शून्य, तीन, नौ और पाँच, इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ सोलह भाग अधिक (५६३०२७३३३ योजन प्रमाण) है ॥२७०६॥

$$५६०२३८३१६ + २७८६३१६ = ५६३०२७३३३ योजन ।$$

मगलावती आदि देशोके प्रमाणकी सूचना—

कच्छादिष्पमुहाणं, तिचिह - वियप्पं णिरुविदं सव्वं ।

विजयाए मंगलावदि - पमुहाए कमेण वत्तव्वं ॥२७०७॥

अर्थ :—(इसप्रकार) सब कच्छादिक देशोकी लम्बाई तीन प्रकारसे कही गई है । अब क्रमशः मगलावती आदि देशोकी लम्बाई कही जाती है ॥२७०७॥

इच्छित क्षेत्रोकी लम्बाईका प्रमाण—

कच्छादिसु विजयाणं, आदिम-मज्झिल्ल-चरिम-दोहत्तं ।

विजयद्ध - रुदमवणिय, अद्ध - कदे तस्स दोहत्तं ॥२७०८॥

अर्थ :—कच्छादिक क्षेत्रोकी आदिम, मध्यम और अन्तिम लम्बाईमेंसे विजयाधके विस्तारको घटाकर शेषको आधा करने पर (इच्छित क्षेत्रों) उनकी लम्बाईका प्रमाण प्राप्त होता है ॥२७०८॥

पद्यासे मंगलावती देश तककी सूचीका प्रमाण प्राप्त करनेकी विधि—

सोहसु मञ्जिभूम - सूई, मेरुगिरि दुगुण-भद्रसाल-वर्ण ।

सा' सूई पम्मावी - परिचंतं मंगलावति ॥२७०६॥

अर्थ :—घातकी खण्डकी मध्यसूचीमेसे मेरुपर्वत और दुगुने भद्रसाल-वनके विस्तारको घटा देनेपर जो शेष बचे वह पद्यासे मंगलावती देश तककी सूची होती है ॥२७०६॥

$$६०००० - \{ ६४०० + (१०७८७६ \times २) \} = ६७४८४२ \text{ योजन सूची ।}$$

सूची एवं परिधिका प्रमाण—

दो-चउ-अड-चउ-सग - छज्जोयणपाणि कमेण तं वगं ।

वस-गुण-मूलं परिही, अड-तिय-राभ-चउ-ति-एक्क-दुगं ॥२७१०॥

सूई ६७४८४२ । परि २१३४०३८ ।

अर्थ :—दो, चार, घाठ, चार, सात और छह, इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने (६७४८४२) योजन सूची है । इस सूची-प्रमाणका वर्ग करके उसको दससे गुणा करनेपर जो प्राप्त हो उसका वर्गमूल निकालने पर घातकीखण्डकी उपयुक्त मध्यम सूचीकी परिधिका प्रमाण होता है, जो क्रमशः घाठ, तीन, शून्य, चार, तीन एक और दो अंक रूप (२१३४०३८ यो०) है ॥२७१०॥

$$\sqrt{६७४८४२^२ \times १०} = (\text{कुछ कम}) २१३४०३८ \text{ योजन परिधि ।}$$

विदेह क्षेत्रकी लम्बाई—

सेल - विसुद्धो परिही, चउसट्टोहिं गुणेज्ज अरवसेसं ।

बारस - दो - सय - भजिदे, जं लद्धं तं विदेह-वीहत्तं ॥२७११॥

अर्थ :—इस परिधिप्रमाणमेंसे पर्वतरुद्ध क्षेत्र कम करनेपर जो शेष रहे उमे चौसठसे गुणित कर दोसौ बारहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनी विदेहक्षेत्रकी लम्बाई है ॥२७११॥

सग-चउ-दो-णभ-णव-पण, भागा दो-गुणिव-णउवि वीहत्तं ।

पुब्बवर - विदेहाणं, सामीवे भद्रसाल - वर्णं ॥२७१२॥

५६०२४७ । ३९३ ।

अर्थ :- भद्रशालवनके समीप पूर्वापर विदेहकी उपयुक्त लम्बाई सात, चार, दो, शून्य, नौ और पाँच इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ अस्सी भाग अधिक (५६०२४७३६३ योजन प्रमाण) है ॥२७१२॥

$$(२१३४०३८ - १७८८४२५) \times ६४ - २१२ = ५६०२४७३६३ \text{ यो० ।}$$

पद्मा और मंगलावती देशकी उत्कृष्ट लम्बाई—

तम्मि सहस्रं सोहिय, अद्र - कदेरं विहीण - दोहरां ।

उक्कसं पम्माए, तह चैव य मंगलावदिए ॥२७१३॥

अर्थ :- विदेह क्षेत्रकी (उस) लम्बाईमेसे एक हजार योजन (सीतोदाका विस्तार) कम करके शेषको आधा करनेपर पद्मा तथा मंगलावती देशकी उत्कृष्ट लम्बाईका प्रमाण ज्ञात होता है ॥२७१३॥

तिय-दो-छच्चउ-णव-दुग अंक-कमे जोयराणि भागणि ।

चउ-हीण-दु-सय - दोहं, आविल्लं पउम - मंगलावदिए ॥२७१४॥

$$२९४६२३ । ३१३ ।$$

अर्थ :- पद्मा और मंगलावती देशकी (उपयुक्त उत्कृष्ट अर्थात्) आदिम लम्बाई तीन, दो, छह, चार, नौ और दो इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चार कम दोसी अर्थात् एकसौ छद्यानव भाग अधिक (२६४६२३१३ योजन प्रमाण) है ॥२७१४॥

$$(५६०२४७३६३ - १०००) - २ = २६४६२३१३ \text{ योजन ।}$$

दोनो देशकी मध्यम लम्बाई—

णव-तिय-णभ-खं-णव-दुग-अंक-कमे भाग दु-सय चउ-रहिबं ।

मडिभल्लय - दोहत्तं, पम्माए मंगलावदिए ॥२७१५॥

$$२६००३६ । ३१३ ।$$

अर्थ :- पद्मा और मंगलावती देशकी मध्यम लम्बाई नौ, तीन, शून्य, शून्य, नौ और दो इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छद्यानव भाग अधिक (२६००३६३ योजन प्रमाण) है ॥२७१५॥

$$२६४६२३१३ - ४५८४ = २६००३६३ \text{ योजन ।}$$

दोनो देशोकी अन्तिम और दो वक्षार पर्वतोकी आदिम लम्बाई —

पण-पण-चउ-पण-अड-दुग, अंसा ता एव दोसु विजयासु ।

अंतिल्लय - दोहच, वक्षार - दुगम्मि आदिल्लं ॥२७१६॥

$$२८५४५५ । ३६३ ।$$

अर्थ :—उपर्युक्त दोनो देशोकी अन्तिम और श्रद्धावान् एव आत्माञ्जन नामक दो वक्षार पर्वतोकी आदिम लम्बाई पांच, पांच, चार, पांच, आठ और दो इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उससे एकसौ छथानवें भाग अधिक (२८५४५५३३३ यो०) है ॥२७१६॥

$$२६००३६३३३ -- ४५८४ = २८५४५५३३३ योजन ।$$

दोनो वक्षारोकी मध्यम लम्बाई —

अड-सग-णव-चउ-अड-दुग भागा छत्तीस-अहिय-सयमेवकं ।

सड्ढावणमायंजण - गिरिम्मि मज्झल्ल - दोहच ॥२७१७॥

$$२८४९७८ । ३३३ ।$$

अर्थ :—श्रद्धावान् और आत्माञ्जन पर्वतोकी मध्यम लम्बाई आठ, सात, नौ, चार, आठ और दो, इस अंक-क्रमसे जो सख्या निमित्त हो उससे एकसौ छत्तीस भाग अधिक (२८४९७८३३३ योजन प्रमाण) है ॥२७१७॥

$$२८५४५५३३३ — ४७७३३३ = २८४९७८३३३ योजन ।$$

दोनो वक्षारोकी अन्तिम और दो देशोकी आदिम लम्बाई—

इगि-णभ-पण-चउ-अड-दुग, भागा छाहसरो य अंतिल्लं ।

दोहं दोसु गिरीसु, आदीओ दोण्णि - विजयाणं ॥२७१८॥

$$२८४५०१ । २९३ ।$$

अर्थ :—उपर्युक्त दोनो वक्षार पर्वतोकी अन्तिम और सुपचा तथा रमणीया नामक क्षेत्रोमेंसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई एक, शून्य, पांच, चार, आठ और दो, इस अंक क्रमसे जो सख्या निमित्त हो उससे छषत्तर भाग अधिक अर्थात् २८४५०१२९३ योजन प्रमाण है ॥२७१८॥

$$२८४९७८३३३ — ४७७३३३ = २८४५०१२९३ योजन ।$$

दोनों देशोंकी मध्यम लम्बाई-

सग-इगि-णव-णव-सग-दुग, भागा ता एव मज्ज-दीहत्तं ।

पत्तेक्क सुपम्माए, रमणिज्जा - णाम - विजयाए ॥ २७१९ ॥

$$२७९९१७ \frac{७६}{३१२} ।$$

अर्थ -सुपद्मा और रमणीया नामक क्षेत्रोंमेंसे प्रत्येक की मध्यम लम्बाई सात, एक, नौ, नौ, सात और दो, इस अंक क्रम से जो सख्या उत्पन्न हो उससे छयत्तर भाग अधिक अर्थात् २७९९१७ $\frac{७६}{३१२}$ योजन प्रमाण है ॥ २७१९ ॥

$$२८४५०१ \frac{७६}{३१२} - ४५८४ = २७९९१७ \frac{७६}{३१२}$$

दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम तथा दो विभग नदियोंकी आदिम लम्बाई-

तिय-तिण्णिविण्ण-पण-सग-दोण्ण य असा तहेव दीहत्त ।

दो विजयाणं अं तं, आदिल्ल दो - विभंग - सरियाण ॥ २७२० ॥

$$२७५३३३ \frac{७६}{३१२} ।$$

अर्थ -उपर्युक्त दोनो क्षेत्रों की अन्तिम तथा क्षीरोदा एवं उन्मत्तजला नामक दो विभंग-नदियो मे से प्रत्येक की आदिम लम्बाई तीन, तीन, तीन पाँच, सात और दो, इस अक- क्रम से जो सख्या उत्पन्न हो उससे पूर्वोक्त छयत्तर भाग अधिक अर्थात् २७५३३३ $\frac{७६}{३१२}$ योजन प्रमाण है ॥ २७२० ॥

$$२७९९१७ \frac{७६}{३१२} - ४५८४ = २७५३३३ \frac{७६}{३१२} ।$$

दोनों विभग नदियो की मध्यम लम्बाई

चउ-इगि-दुग-पण-सग दुग, भागा चउवीसमेत्त दीहत्त ।

मज्जिल्ल खीरोदे१, उम्मत्तं - णदिम्मि पत्तेक्कं ॥ २७२१ ॥

$$२७५२१४ \frac{३४}{३१२}$$

अर्थ :-क्षीरोदा और उन्मत्तजलामेसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई चार, एक, दो, पाँच, सात और दो, इस अकक्रमसे निर्मित सख्यासे चौबीस भाग अधिक अर्थात् २७५२१४ $\frac{३४}{३१२}$ योजन प्रमाण है ॥ २७२१ ॥

$$२७५३३३ \frac{७६}{३१२} - ११९ \frac{५३}{३१२} = २७५२१४ \frac{३४}{३१२} ।$$

दोनों नदियोंकी अन्तिम और दो देशोंकी आदिम लम्बाई-

चउ-णव-अंबर पण सग-दो भागा चउरसीदि-अहिय-सयं ।

दोण्णं णदीण अंतिम-दीहंर आदिल्लं दोसु विजयासु^१ ॥ २७२२ ॥

$$२७५०९४ \frac{१८४}{३१२} ।$$

अर्थ :—उपयुक्त दोनो नदियोकी अन्तिम लम्बाई तथा महापषा और सुरम्या नामक दो देशोमेसे प्रत्येककी आदिम लम्बाई चार, नौ, शून्य, पाँच, सात और दो, इस अक-क्रमसे उत्पन्न संख्यासे एकसो चौरासी भाग अधिक अर्थात् २७५०६४३६५ योजन प्रमाण है ॥२७२२॥

२७५२१४३६२ — ११६३३२ = २७५०६४३६५ योजन ।

दोनो देशोकी मध्यम लम्बाई -

णभ-इगि-पण-णभ-सग-दुग-अंक-कमे भागमेव पुष्किल्लं ।

मञ्जिभल्लय - वित्थारं, गहुपम्म - सुरम्म - विजयाणं ॥२७२३॥

२७०५१० । ३६५ ।

अर्थ :—महापषा और सुरम्या नामक देशोकी मध्यम लम्बाई शून्य, एक, पाँच, शून्य, सात और दो, इस अक क्रमसे जो संख्या निमित्त हो उससे एकसो चौरासी भाग अधिक अर्थात् २७०५१०३६५ योजन प्रमाण है ॥२७२३॥

२७५०६४३६५ — ४५८४ = २७०५१०३६५ योजन ।

दोनो देशोकी अन्तिम और दो वक्षार पर्वतो की आदिम लम्बाई—

छ-द्वो-णव-पण-छद्वुग, भागा ता एव अंत - दीहत्तं ।

वो - विजयाणं अजण - वियडाववियाए आविल्लं ॥२७२४॥

२६५६२६ । ३६५ ।

अर्थ :—उपयुक्त दोनो देशोकी अन्तिम तथा अञ्जन और विजटावान् पर्वतकी आदिम लम्बाई छह, दो, नौ, पाँच, छह और दो इस अक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे एकसो चौरासी भाग अधिक अर्थात् २६५६२६३६५ योजन प्रमाण है ॥२७२४॥

२७०५१०३६५ — ४५८४ = २६५६२६३६५ योजन ।

दोनो वक्षारोकी मध्यम लम्बाई—

राव-चउ-चउ-पण-छ-द्वो, अंक-कमे जोयराणि भागा य ।

वासट्ठि दु - हव दीहं, मञ्जिभल्लं विसु बवसारे ॥२७२५॥

२६५४४९ । ३३५ ।

अर्थ :—अञ्जन और विजटावान् इन दोनों वक्षार-पर्वतोंकी मध्यम लम्बाई नौ, चार, चार, पाँच, छह और दो, इस अक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे एकसौ चौबीस भाग अधिक अर्थात् २६५४४६३३३३ योजन प्रमाण है ॥२७२५॥

२६५६२६३३३ — ४७७३३३ = २६५४४६३३३ योजन ।

दोनो वक्षारोंकी अन्तिम और दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

दो-सग-णव-खज-छ-दो भागा खजसङ्घि अंत - बीहत्त ।

दो - वक्षार - गिरीण, आदीयं दोसु विजएसुं ॥२७२६॥

२६४६७२ । ३३३ ।

अर्थ :—दोनो वक्षार-पर्वतोंकी अन्तिम तथा रम्या एवं पद्मकावती देशकी आदिम लम्बाई दो, सात, नौ, चार, छह और दो, इस अक-क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे चौसठ भाग अधिक अर्थात् २६४६७२३३३ योजन प्रमाण है ॥२७२६॥

२६५४४६३३३ — ४७७३३३ = २६४६७२३३३ योजन ।

दोनो देशोंकी मध्यम लम्बाई—

अट्ट-तिय-राभ-छ-दो भागा खजसङ्घि मञ्ज - बीहत्त ।

रम्माए पम्मकावदि - विजयाए होदि पत्तेकं ॥२७२७॥

२६०३८८ । ३३३ ।

अर्थ :—रम्या और पद्मकावती देशमेंसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई आठ, आठ, तीन, शून्य, छह और दो, इस अक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे चौसठ भाग अधिक अर्थात् २६०३८८३३३ योजन प्रमाण है ॥२७२७॥

२६४६७२३३३ — ४५८४ = २६०३८८३३३ योजन ।

दोनो क्षेत्रोंकी अन्तिम तथा दो विभंग नदियोंकी आदिम लम्बाई—

खज-जभ-अड-पण-पण-बुग भागा ता एख दोणिए विजयाणं ।

अंतिल्लय - बीहत्त, आदिल्लं दो - विभंग - सरियाणं ॥२७२८॥

२५५८०४ । ३३३ ।

अर्थ :—उपर्युक्त दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम तथा मत्तजला और सीतोदा नामक दोनों नदियों की आदिम लम्बाई चार, शून्य, आठ, पाँच, पाँच और दो, इस अक-क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे चौसठ भाग अधिक अर्थात् २५५८०४३३३ योजन प्रमाण है ॥२७२८॥

२६०३८८३३३ — ४५८४ = २५५८०४३३३ योजन ।

दोनो विभग नदियोंकी मध्यम लम्बाई—

पण-अड-छप्पण-पण दुग, अंक-क्रमे बारसाणि अंसा य ।

मत्तजले सीदोवे, पत्तेककं मज्झ - दोहत्तं ॥२७२६॥

२५५६८५ । ३३२ ।

अर्थ :—मत्तजला और सीतोदामेसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई पाँच, आठ, छह, पाँच, पाँच और दो. इस अंक-क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे बारह भाग अधिक अर्थात् २५५६८५३३२ योजन प्रमाण है ॥२७२६॥

२५५८०४३५२ — ११६२५३ = २५५६८५३३२ योजन ।

दोनो नदियोंकी अन्तिम और दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

पण-छप्पण-पण-पंचय-दो च्चिय बाहचरोहि अहिय-सयं ।

भागा दु - राइदु - विजए, अतिल्लादिल्ल - दोहत्तं ॥२७३०॥

२५५५६५ । ३१३ ।

अर्थ :—उपर्युक्त दोनो नदियोंकी अन्तिम और शङ्खा तथा बत्सकावती नामक दो विजयो (क्षेत्रों) की आदिम लम्बाई पाँच, छह, पाँच, पाँच, पाँच और दो, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे एकसी बहत्तर भाग अधिक अर्थात् २५५५६५३१३ योजन प्रमाण है ॥२७३०॥

२५५६८५३३२ — ११६३३२ = २५५५६५३१३ योजन ।

दोनो देशोंकी मध्यम लम्बाई—

इनि-अड-णव-णभ-पण-दुग भागा ता एव मज्झ-दोहत्तं ।

संसाए 'वच्छकावधि - विजए परोक्क परिमाणं ॥२७३१॥

२५०६८१ । ३१३ ।

अर्थ :—शङ्खा एव बत्सकावती क्षेत्रमेंसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई एक, आठ, नौ, शून्य, पाँच और दो, इस अंक-क्रमसे जो संख्या निमित्त हो उससे एकसी बहत्तर भागसे अधिक अर्थात् २५०६८१३१३ योजन है ॥२७३१॥

२५५५६५३१३ — ४५८४ = २५०६८१३१३ योजन ।

दोनो देशोकी अन्तिम और दो वक्षार पर्वतोकी आदिम लम्बाई—

सग-णव-तिय-छ्चउ-दुग, भागा ते चेव दोण्ण-विजयाणं ।

दो - वक्षार - गिरीणं, अन्तिम - आविल्ल - दोहसं ॥२७३२॥

२४६३६७ । १९३ ।

अर्थ :—उपर्युक्त दोनो देशोकी अन्तिम तथा आशीविष और वैश्रवणकूट नामक दो वक्षार-पर्वतोकी आदिम लम्बाईका प्रमाण सात, नौ, तीन, छह, चार और दो, इस अंक-क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उससे एकसौ बहतर भाग अधिक अर्थात् २४६३६७ $\frac{१}{३}$ योजन है ॥२७३२॥

२५०६८१ $\frac{१}{३}$ — ४५८४ = २४६३६७ $\frac{१}{३}$ योजन ।

दोनो वक्षार पर्वतोकी मध्यम लम्बाई—

णभ-दो-णव-पण-चउ-दुग, अंसा तह बारसहिय-सयमेवकं ।

मज्झम्मि होवि दोहं, आसीविस - वेसमण - कूडे ॥२७३३॥

२४५९२० । ३१३ ।

अर्थ :—आशीविष तथा वैश्रवणकूटकी मध्यम लम्बाई शून्य, दो, नौ, पांच, चार और दो, इस अंक-क्रमसे जो सख्या उत्पन्न होती है उससे एकसौ बारह भाग अधिक अर्थात् २४५९२० $\frac{१}{३}$ योजन प्रमाण है ॥२७३३॥

२४६३६७ $\frac{१}{३}$ — ४७७ $\frac{१}{३}$ = २४५६२० $\frac{१}{३}$ योजन ।

दोनो पर्वतोकी अन्तिम और दो देशोकी आदिम लम्बाई—

तिय-चउ-चउ-पण-चउ-दुग, अंसा बावण्ण दोण्ण-वक्सारे ।

दो - विजए अंतिल्लं, कमसो आविल्ल - दोहसं ॥२७३४॥

२४५४४३ । २१३ ।

अर्थ :—दो वक्षार-पर्वतोकी अन्तिम और महावत्सा तथा नलिना नामक दो देशोकी आदिम लम्बाई तीन, चार, चार, पांच, चार और दो, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे बावन-भाग अधिक अर्थात् २४५४४३ $\frac{१}{३}$ योजन प्रमाण है ॥२७३४॥

२४५६२० $\frac{१}{३}$ — ४७७ $\frac{१}{३}$ = २४५४४३ $\frac{१}{३}$ योजन ।

दोनो देशोकी मध्यम लम्बाई—

णव-पण-अड-णभ-चउ-दुग-अंक-कमे अंसमेव बावण्णं ।

मज्झिमए दीहत्तं, 'महवच्छा - णल्लिण - विजयम्मि ॥२७३५॥

२४०८५६ । ३३२ ।

अर्थ :—महावत्सा और नलिना देशोमेसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई नौ, पाँच, आठ, शून्य, चार और दो, इस अक-क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उससे बावन भाग अधिक अर्थात् २४०८५६३३३ योजना प्रमाण है ॥२७३५॥

२४५४४३३३३ — ४५८४ = २४०८५६३३३ योजना ।

दोनो देशोकी अन्तिम और दो विभाग नदियोकी आदिम लम्बाई —

पण-सग-दो-छत्तिथ-दुग, भागा बावण्णं दोण्णि-विजयाणं ।

वे - वेअंगं - एदीणं, अंतिम - आदिल्ल - दीहत्तं ॥२७३६॥

२३६२७५ । ३३२ ।

अर्थ :—दोनो देशोकी अन्तिम और तप्तजला एव औषधवाहिनी नामक दो विभाग नदियोमेसे प्रत्येककी आदिम लम्बाई पाँच, माल, दो, छह, तीन और दो, इस अक-क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उससे बावन भाग अधिक (२३६२७५३३३ योजना) है ॥२७३६॥

२४०८५६३३३ - ४५८४ = २३६२७५३३३ योजना ।

दोनो विभाग नदियोको मध्यम लम्बाई —

छप्पण-इगि-छत्तिथ-दुग-अंक-कमे जोयणाणि मज्झिमए ।

दीहत्त तप्तजले 'ओसहवाहीए पत्तोवकं ॥२७३७॥

२३६१५६ ।

अर्थ :— तप्तजला और औषधवाहिनीमेसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई छह, पाँच, एक, छह, तीन और दो, इस अक-क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उससे (२३६१५६) योजना प्रमाण है ॥२७३७॥

२३६२७५३३३ — ११६३३३ = २३६१५६ योजना ।

१. व. उ. महवष्पाण, द. क. ज. महवष्पाणल्लिण । २. व. क. उ. विभाग । ३. द. व. क. अ. उ.

दोनों नदियोंकी अन्तिम और दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

छत्तिय-णभ-छत्तिय-बुग, भागा सट्टीहि अहिय-सय बीहं ।

दो - बेभंग - णबीणं, अंतं आदी ह्ण दोसु विजएसु ॥२७३८॥

२३६०३६ । ३१३ ।

अर्थ :—उपयुक्त दोनों विभग नदियोंकी अन्तिम तथा कुमुदा एवं सुवत्सा नामक दो देशों मेसे प्रत्येककी आदिम लम्बाई, छह, तीन, शून्य, छह, तीन और दो, इस अंक-क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे एकसौ साठ भाग अधिक अर्थात् २३६०३६३३३ योजन प्रमाण है ॥२७३८॥

२३६१५६ — ११६५३३ = २३६०३६३३३ योजन ।

दोनों देशोंकी मध्यम लम्बाई—

दो-पण-खउ-इगि-तिय-बुग, भागा सट्टीहि अहिय-सयमेत्तं ।

मच्छिभम - पएस - बीहं, कुमुदाए सुवच्छ - विजयम्मि ॥२७३९॥

२३१४५२ । ३१३ ।

अर्थ :—कुमुदा तथा सुवत्सा देशमेसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई दो, पाँच, चार, एक, तीन और दो, इस अंक-क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे एकसौ साठ भाग अधिक अर्थात् २३१४५२३३३ योजन प्रमाण है ॥२७३९॥

२३६०३६३३३ — ४५८४ = २३१४५२३३३ योजन ।

दोनों देशोंकी अन्तिम तथा दो वक्षार-पर्वतोंकी आदिम लम्बाई—

अट्ट-छ-अट्टय-छ-दो-दो च्चिय सट्टीहि अहिय-सय-भागं ।

विजयाणं वक्खारे, अंतिल्लाबिल्ल - बीहत्तं ॥२७४०॥^१

२२६८६८ । ३१३ ।

अर्थ :—दोनों देशोंकी अन्तिम और सुखावह और त्रिकूट नामक दो वक्षार-पर्वतोंकी आदिम लम्बाई षाठ, छह, षाठ, छह, दो और दो, इस अंक-क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे एकसौ साठ भाग अधिक अर्थात् २२६८६८३३३ योजन प्रमाण है ॥२७४०॥

२३१४५२३३३ — ४५८४ = २२६८६८३३३ योजन ।

दोनों वक्षार-पर्वतोंकी मध्यम लम्बाई—

इगि-णव-तिय-छहो-दो, अंक-कमे जोयजाणि सय-भावं ।

मञ्जिल्लय बीहत्तं, सुहावहे तह लिकूडे य ॥२७४१॥

२२६३६१ । ३९३ ।

अर्थ :—सुखावह और त्रिकूट पर्वतकी मध्यम लम्बाई एक, नौ, तीन, छह, दो और दो इस अंक-क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे एकसौ भाग अधिक अर्थात् २२६३६१ $\frac{३९३}{१०००}$ योजन प्रमाण है ॥२७४१॥

२२६६६६ $\frac{३९३}{१०००}$ — ४७७ $\frac{३९३}{१०००}$ = २२६३६१ $\frac{३९३}{१०००}$ योजन ।

दोनों वक्षारोंकी अन्तिम और दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

चउ-इगि-णव-पण-दो-दो अंसा चालीसमेत्त पत्तेक्कं ।

दो - वक्षार - दु - विजए, अंतिल्लाविल्ल - बीहत्तं ॥२७४२॥

२२५६१४ । ३९३ ।

अर्थ :—दो वक्षार-पर्वतोंकी अन्तिम लम्बाई और सरिता एवं वत्सा देशोंमेंसे प्रत्येककी अन्तिम लम्बाई चार, एक, नौ, पाँच दो और दो इस अंक-क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे चालीस भाग अधिक अर्थात् २२५६१४ $\frac{३९३}{१०००}$ योजन प्रमाण है ॥२७४२॥

२२६३६१ $\frac{३९३}{१०००}$ — ४७७ $\frac{३९३}{१०००}$ = २२५६१४ $\frac{३९३}{१०००}$ योजन ।

दोनों देशोंकी मध्यम लम्बाई—

णम-तिय-तिय-इगि-दो-दो अंक-कमे दु-हव-बीस भागा य ।

सरिदाए^१ वक्ख - विजए, पत्तेक्कं मञ्ज - बीहत्तं ॥२७४३॥

२२१३३० । ३९३ ।

अर्थ :—सरिता और वत्सा देशमेंसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई शून्य, तीन, तीन, एक, दो और दो, इस अंक-क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे चालीस भाग अधिक अर्थात् २२१३३० $\frac{३९३}{१०००}$ योजन प्रमाण है ॥२७४३॥

२२५६१४ $\frac{३९३}{१०००}$ — ४५६४ = २२१३३० $\frac{३९३}{१०००}$ योजन ।

दोनों देशोंकी अन्तिम और दोनों वनोंकी आदिम लम्बाई—

छ्त्रकञ्ज - सग - छ्त्रकेकिक - दु अंसा चालीसमेस दोहत्तं ।

दो - विजए आदिमए, देवारण्णम्मि भूवरण्णाए ॥२७४४॥

२१६७४६ । ३१३ ।

अर्थ :- उपर्युक्त दोनों देशोंकी [अन्तिम] और देवारण्य तथा भूतारण्यकी आदिम लम्बाई छह, चार, सात, छह एक और दो, इस अंक-क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे चालीस भाग अधिक अर्थात् २१६७४६.३१३ योजन प्रमाण है ॥२७४४॥

२२१३३०.३१३ — ४५८४ = २१६७४६.३१३ योजन ।

दोनों वनोंकी मध्यम लम्बाई—

छ्त्रपण-खव-तिय-इगि-दुग, भागा सट्टीहि अहिय-सयमेत्तं ।

भूवादेवारण्णे, हुवेवि मञ्जिभल्ल - दोहत्तं ॥२७४५॥

२१३६५६ । ३१३ ।

अर्थ :- भूतारण्य और देवारण्य वनमेसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई छह, पाँच, नौ, तीन, एक और दो, इस अंक-क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे एकसौ साठ भाग अधिक अर्थात् २१३६५६.३१३ योजन प्रमाण है ॥२७४५॥

दोनों वनोंकी अन्तिम लम्बाई—

सग-छ्त्रकेकिकिगि^१-इगि-दुग, भागा अट्टसट्टि देवरण्णम्मि ।

तह चैव भूवरण्णे, पत्तेककं अंत - दोहत्तं ॥२७४६॥

२१११६७ । ३१३ ।

अर्थ :- देवारण्य और भूतारण्यमेसे प्रत्येककी अन्तिम लम्बाई सात, छह, एक एक, एक और दो, इस अंक-क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे अट्टसठ भाग अधिक अर्थात् २१११६७.३१३ योजन प्रमाण है ॥२७४६॥

२१३९५६.३१३ — २७८६३.३३ = २१११६७.३१३ योजन ।

इच्छित क्षेत्रोंकी लम्बाई का प्रमाण—

कच्छादी - विजयाणं, आदिम-मञ्जिभल्ल-चरम-दोहम्मि ।

विजयड्ढ - रुंदमवणिय, अट्ट - कदे तस्स दोहत्तं ॥२७४७॥

अर्थ :- कच्छादिक देशोंकी आदिम, मध्यम और अन्तिम लम्बाईमेसे विजयाधके विस्तार को घटाकर शेषको आधा करनेपर उसकी लम्बाई का प्रमाण प्राप्त होता है ॥२७४७॥

क्षुद्रहिमवान् पर्वतका क्षेत्रफल—

हिमवंतस्स य र्द्वे, घादइ संडस्स र्द्वमाजम्मि ।
संगुणिदे जं लद्धं, तं तस्स ह्वेबि खेतफलं ॥२७४८॥
चउसीवी - कोडीम्रो, लक्खाणि जोयणाणि इग्गिवीसं ।
बावण्ण - सय तिसट्ठी, ति - कलाओ तस्स परिमाणं ॥२७४९॥

हिमवन्तस्य क्षेत्रफलम्—८४२१०५२६३ । १,३ ।

अर्थ :—घातकीखण्डके विस्तारको हिमवान् पर्वतके विस्तारसे गुणा करनेपर जो सख्या प्राप्त हो उतना हिमवान् पर्वतका क्षेत्रफल होता है । जिसका प्रमाण चौरासी करोड़ इक्कीस लाख बावनसौ तिरैसठ योजन और तीन कला है ॥२७४८-२७४९॥

हिमवान् पर्वतका क्षेत्रफल—४००००० — २१०५६३ = ८४२१०५२६३६३ यो० ।

महाहिमवान् आदि पर्वतका क्षेत्रफल—

एवं चिय चउ - गुणिदं, महहिमवंतस्स होदि खेतफलं ।
णिसहस्स तच्चउग्गुण, चउ - गुण - हाणी परं तत्तो ॥२७५०॥

महाहिमवत ३३६८४२१०५२ । १,३ । णिसह १३४७३६८४२१० । १,३ ।

णील १३४७३६८४२१० । १,३ । रम्मि ३३६८४२१०५२ । १,३ ।

सिखरी ८४२१०५२६३ । १,३ ।

एदाणि मेलिट्ठणं दुग्गुण कादव्व तच्चेद—७०७३६८४२१०५ । १,३ ।

अर्थ :—हिमवान्के क्षेत्रफलको चारसे गुणा करनेपर महाहिमवान्का क्षेत्रफल और महाहिमवान्के क्षेत्रफलको भी चारसे गुणा करनेपर निघष पर्वतका क्षेत्रफल होता है । इसके आगे फिर चौगुनी हानि है ॥२७५०॥

क्षेत्रफल - महाहिमवान् ३३६८४२१०५२१,३ योजन । निघष १३४७३६८४२१०१,३ योजन । नील १३४७३६८४२१०१,३ यो० । रम्मि ३३६८४२१०५२१,३ योजन और शिखरी ८४२१०५२६३६३ योजन । घातकी खण्डमे दो मेरु पर्वत सम्बन्धी बारह कुलाचल पर्वत हैं अतः इन छह पर्वतके क्षेत्रफलको मिलाकर दुग्गुणा करनेपर (३५३६८४२१०५२१,३ × २) = ७०७३६८४२१०५१,३ योजन प्राप्त होते हैं ।

दोनों इष्वाकार पर्वतोंका क्षेत्रफल—

बोष्णं उसुगाराणं, असीदि - कोडीओ होंति खेतफलं ।

एवं पुष्प - विभिस्सं, चोद्दस - सेलाण पिडफलं ॥२७५१॥

८०००००००० ।

अर्थ :—दोनों इष्वाकार पर्वतोंका क्षेत्रफल अस्सी करोड (८००००००००) योजन है । इसको उपयुक्त कुलाचलोंके क्षेत्रफलमें मिला देनेपर चौदह-पर्वतोंका क्षेत्रफल होता है ॥२७५१॥

चौदह-पर्वतोंका सम्मिलित क्षेत्रफल—

पंच-गयणेक्क-दुग-चउ-अद्द-छ-तिय-पंच-एक्क - सत्ताणं ।

अंक-कमे पंचंसा, चोद्दस - गिरि - गणिद - फलमाणं ॥२७५२॥

७१५३६८४२१०५ १/४ ।

अर्थ :—चौदह पर्वतोंके क्षेत्रफलका प्रमाण पाँच, शून्य, एक, दो, चार, आठ, छह, तीन, पाँच, एक और सात, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पाँच भाग मात्र अर्थात् ७१५३६८४२१०५ १/४ योजन है ॥२७५२॥

७०७३६८४२१०५ १/४ + ८०००००००० = ७१५३६८४२१०५ १/४ यो० ।

घातकी खण्डका क्षेत्रफल—

एक्क-छ-छ^१-सत्त-परा-णव^२-णवेक्क-चउ-अद्द-तिय-एक्केक्का ।

अंक - कमे जोयणया, धावइ - संडस्स पिडफलं ॥२७५३॥

११३८४१६६५७६६१ ।

अर्थ :—सम्पूर्ण घातकीखण्डका क्षेत्रफल एक, छह, छह, सात, पाँच, नौ, नौ, एक, चार, आठ, तीन, एक और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने (११३८४१६६५७६६१) योजन प्रमाण है ॥२७५३॥

घातकीखण्ड स्थित भरतक्षेत्रका क्षेत्रफल—

चोद्दस^१ - गिरीण रुंदं, खेतफलं सोह सव्व - खेतफले ।

बारस - जुद - दु - सर्णाहं, भजिवे तं भरह - खेतफलं ॥२७५४॥

१. द. क. ज. उ. छछहससएपण । २. द. क. ज. उ. गववेक्क । ३. व. क. ज. उ. चोद्दस-

अर्थ :—(घातकी खण्डके) सम्पूर्ण क्षेत्रफलमेसे चौदह-पंचतोंमे रूढ क्षेत्रफलको घटाओ । जो शेष रहे उसमें दोसौ बारहका भाग देनेपर जो लब्ध प्राये उतना भरतक्षेत्रका क्षेत्रफल होता है ॥२७५४॥

छक्क-दुग-पंच-सरां, 'छक्कउ-दुग-तिष्ण-सुष्ण-पंचाणं ।

अंक-कमे जोयनया, चउवाल कलाओ भरह - खेसफलं ॥२७५५॥

भरह ५०३२४६७५२६ । २५५ ।

अर्थ :—भरतक्षेत्रका क्षेत्रफल छह, दो, पांच, सात, छह, चार, दो, तीन, शून्य और पांच, इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उससे चवालीस कला अधिक (५०३२४६७५२६२५५) योजन प्रमाण) है ॥२७५५॥

(११३८४१६६५७६१ — ७१५३६८४२१०५५) ÷ २१२ = ५०३२४६७५२६२५५
योजन भरत क्षेत्रका क्षेत्रफल ।

हैमवत और हरिवर्षक्षेत्रका क्षेत्रफल—

एवं चिय चउ - गुणिदे, खेसफलं होदि हेमवद - खेरो ।

तं चेषं चउ - गुणिदं, हरिवरिस - खिदीए खेसफलं ॥२७५६॥

अर्थ :—भरतक्षेत्रके क्षेत्रफलको चौगुना करनेपर हैमवत क्षेत्रका क्षेत्रफल और इसको भी चौगुना करनेपर हरिवर्षक्षेत्रका क्षेत्रफल प्राप्त होता है ॥२७५६॥

शेष क्षेत्रोंका क्षेत्रफल—

हरिवरिसखेसफलं, चउषक - गुणिदं विदेह - खेसफलं ।

सेस - बरिसेसु कमसो, चउगुण - हाणीअ गणिदफलं ॥२७५७॥

हे २०१२६८७०१०४ । ३१३ । हरि ८०५१६४८०४१६ । ३१३ ।

वि ३२२०७७६२१६७७ । ३१३ । रं ८०५१६४८०४१६ । ३१३ ।

हह २०१२६८७०१०४ । ३१३ । अइरावद ५०३२४६७५२६ । ३५५ ।

अर्थ :—हरिवर्षके क्षेत्रफलको चारसे गुणा करनेपर विदेहका क्षेत्रफल प्राप्त होता है । इसके प्राये फिर क्रमशः शेष क्षेत्रोंके क्षेत्रफलमें चौगुनी हानि होती गई है ॥२७५७॥

क्षेत्रफल :—वर्गयोजनोंमें हैमवतक्षेत्रका २०१२६८७०१०४ । ३१३ । हरिवर्षका ८०५१६४८०४१६३६२ । विदेहक्षेत्रका ३२२०७७६२१६७७२१३ । रम्यकक्षेत्रका ८०५१६४८०४१६३६२ । हैरण्यवतक्षेत्रका २०१२६८७०१०४३१३ और ऐरावत क्षेत्रका ५०३२४६७५२६२५५ वर्ग योजन क्षेत्रफल है ।

घातकीखण्डके जम्बूद्वीप प्रमाण खण्ड—

जंबूद्वीप - खिदीए, फलप्पमाणेण धावईसडे ।

खेत्तफलं किज्जंतं, बारस - कदि - सम - सलागाओ ॥२७५८॥

१४४ ।

अर्थ :—जम्बूद्वीपके फलप्रमाणसे घातकीखण्डका क्षेत्रफल करनेपर वह बारहके वर्गरूप अर्थात् एकसौ चवालीस-शलाका प्रमाण होता है ॥२७५८॥

विशेषार्थ :—घातकीखण्डके बाह्यसूची व्यास (१३ लाख) के वर्गसे उसीके अभ्यन्तर सूची व्यास (५ लाख) के वर्गको घटाकर जम्बूद्वीपके व्यासके वर्गका भाग देनेपर एकसौ चवालीस शलाका प्राप्त होती हैं । अर्थात् घातकी खण्डके जम्बूद्वीप बराबर एकसौ चवालीस खण्ड होते हैं ।

यथा—(१३०००००^२ — ५०००००^२) ÷ १०००००^२ = १४४ ।

विजयादिकोका शेष वर्णन—

अवसेस - वण्णणाओ, सव्वाणं विजय - सेल-सरियाणं ।

कुंड - दहादीणं पि व, जंबूद्वीवस्स सारिच्छो ॥२७५९॥

एवं विण्णासो समत्तो ।

अर्थ :—सम्पूर्ण क्षेत्र, पर्वत, नदी, कुण्ड और द्रहादिकोंका शेष वर्णन जम्बूद्वीपके सदृश ही समभूता चाहिए ॥२७५९॥

इसप्रकार विन्यास समाप्त हुआ ।

भरतादि अधिकारोंका निरूपण—

भरह-बसुंधर-पहुवि, जाव य एरावदो त्ति अहियारा ।

जंबूद्वीवे उत्तां, तं सव्वं एत्थ वराण्णं ॥२७६०॥

अर्थ :—भरतक्षेत्रसे ऐरावतक्षेत्र पर्यन्त जितने अधिकार जम्बूद्वीपके वर्णनमें कहे गये हैं, वे सब यहाँ भी कहने चाहिए ॥२७६०॥

एवं संखेवेणं, धादइसंडो पवण्णिदो दिव्वो ।
वित्थार - वण्णणासुं, का सची म्हारि - सुमईणं ॥२७६१॥

एवं धादइसंडस्स वण्णणा समत्ता ॥४॥

अर्थ :—इसप्रकार संक्षेपमे यहाँ दिव्य घातकीखण्डका वर्णन किया गया है । हमारी जैसी बुद्धिवाले मनुष्योकी भला विस्तारसे वर्णन करनेकी शक्ति ही क्या है ? ॥२७६१॥

इसप्रकार घातकीखण्डद्वीपका वर्णन समाप्त हुआ ॥४॥

कालोद समुद्रका विस्तार—

परिवेदेदि^१ समुद्धो, कालोदो णाम धादईसंडं ।
अड - लक्ख - जोयणाणि, वित्थिण्णो चक्कवालेणं ॥२७६२॥

अर्थ :—इस घातकीखण्डको आठ लाख योजनप्रमाण विस्तारवाला कालोद नामक समुद्र मण्डलाकार वेष्टित किये हुए है ॥२७६२॥

समुद्रकी गहराई आदि—

टंकुक्किण्णायारो^२, सब्बत्थ सहस्स - जोयणवगाढो ।
चित्तोवरि - तल - सरिसो, पायाल - विवज्जिदो एसो ॥२७६३॥

१००० ।

अर्थ :—टाकीसे उकेरे हुएके सदृश आकारवाला यह समुद्र सर्वत्र एक हजार योजन गहरा, चित्रापृथिवीके उपरिम तलभागके सदृश अर्थात् समतल और पातालोसे रहित है ॥२७६३॥

समुद्रगत द्वीपोंकी अवस्थिति और सख्या—

अट्टाला दीवा, बिसासु विदिसासु अंतरेसुं च ।
चउबीसअंतरेए, बाहिरए तेत्तिया तस्स ॥२७६४॥

अर्थ :—इस समुद्रके भीतर दिशाओ, विदिशाओ और अन्तर दिशाओमें अट्टालीस द्वीप हैं । इनमेसे चौबीस द्वीप समुद्रके अग्र्यन्तरभागमें और चौबीस ही बाह्यभागमें हैं ॥२७६४॥

अन्तरन्मि दीवा, अस्तारि 'विसासु तह य विविसासु' ।
अंतरविसासु अट्टु य, अट्टु य गिरि - परिधि - भागेसु ॥२७६५॥

५।४।८।८।

अर्थ :- उसके अन्तरभागमें दिशाश्रोमें चार, विदिशाश्रोमें चार, अन्तरदिशाश्रोमें आठ और पर्वतके पार्श्वभागमें भी आठ ही द्वीप हैं ॥२७६५॥

तटोंसे द्वीपोंकी दूरी एवं उनका विस्तार—

जोयज-पंच-सयाणि, पञ्जअहियाणि दो - तडाहितो ।
पविसिय विसासु दीवा, पत्तोक्कं वु - सय - विक्कंओ ॥२७६६॥

५५०।२००।

अर्थ :- इनमेंसे दिशाश्रोके द्वीप दोनों तटोंसे पाँचसौ पचास (५५०) योजन प्रमाण समुद्रमें प्रवेश करके स्थित हैं । इनमेंसे प्रत्येक द्वीपका विस्तार दोसौ (२००) योजन प्रमाण है ॥२७६६॥

जोयजय - छस्सयाणि, कालोदजलन्मि - दो-तडाहितो ।
पविसिय विदिसा - दीवा, पत्तोक्कं एकक - सय - वंइ ॥२७६७॥

६००।१००।

अर्थ :- दोनों तटोंसे छहसौ (६००) योजन प्रमाण कालोदधि समुद्रमें प्रवेश करनेपर विदिशाश्रोमें द्वीप स्थित हैं । इनमेंसे प्रत्येक द्वीपका विस्तार एकसौ (१००) योजन प्रमाण है ॥२७६७॥

जोयज - पंच - सयाइ, पञ्जअहियाणि वे - तडाहितो ।
पविसिय अंतर - दीवा, पञ्जा - वंइ^२ य पत्तोक्कं ॥२७६८॥

५५०।५०।

अर्थ :- दोनों तटोंसे पाँचसौ पचास (५५०) योजन प्रवेश करके अन्तरद्वीप स्थित हैं । इनमेंसे प्रत्येकका विस्तार पचास (५०) योजन प्रमाण है ॥२७६८॥

छन्विय सयारिण पण्णा-जुत्ताणि जोयणाणि वृ-तडावो ।
पविसिय गिरि - पणिधीसुं, वीवा पण्णास-विक्खंभा' ॥२७६६॥

६५० । ५० ।

अर्थ :—दोनो तटोंसे छहसौ पचास (६५०) योजन प्रवेश करके पर्वतोंके प्रसिद्धि-
भागोंमें अन्तरद्वीप स्थित हैं । उनमेंसे प्रत्येकका विस्तार पचास (५०) योजन प्रमाण है ॥२७६६॥

पत्तेक्कं ते वीवा, तड - वेदी - तोरणेहि रमणिज्जा ।
पोक्खरणी - वावीहि^१, कप्प - दुमेहि पि संपुण्णा ॥२७७०॥

अर्थ :—प्रत्येक द्वीप तट-वेदी तथा तोरणोंसे रमणीक श्रीर पुष्करिणी, वापिकाओं एवं
कल्पवृक्षोंसे परिपूर्ण है ॥२७७०॥

इन द्वीपोंमें स्थित कुमानुषोका निरूपण—

मच्छमुह^२ अस्सकण्णा, पक्खिमुहा तेसु हस्थिकण्णा य ।
पुब्बादीसु दिसेसुं, वि चिट्ठ^३ति^४ कुमाण्णासा कमसो ॥२७७१॥

अर्थ :—उनमेंसे पूर्वदिक् दिशाओंमें स्थित द्वीपोंमें क्रमशः वस्त्यमुख, अश्वकर्ण, पक्षिमुख
श्रीर हस्तकर्ण कुमानुष स्थित है ॥२७७१॥

अणिलदिआसुं^५ सूवर-कण्णा वीवेसु ताण विविसासुं^६ ।
अट्ठंतर - बोवेसुं, पुब्बणिग - विसादि - गणणिज्जा ॥२७७२॥
चेट्ठ^७ति^८ उड्डकण्णा, मज्जारमुहा पुरो वि तज्जीवा ।
कणण्णाववरणा गजवयणा^९ य मज्जार - वयणा य ॥२७७३॥
मज्जार - मुहा य तथा, गो - कण्णा एवमट्ठ पत्तेक्कं ।
पुब्ब-पवणिग-बट्ठविह-पाव-फलेहि^{१०} कुमाण्णासाणि जायंति ॥२७७४॥

१. व. व. क. ज. उ. विक्खंभा । २. द. व. क. ज. उ. वावीधी । ३. व. उ. मण्णमुहा ।
४. व. क. ज. उ. वेट्ठति । ५. द. व. क. ज. उ. अणिलदिसासुं । ६. व. व. क. ज. उ. दुविसासु ।
७. व. क. ज. उ. उड्डकण्णा । ८. द. व. वरणा छागणा, व. क. उ. छागणा । ९. व. व. ज. उ. कुमाण्ण-
जीवाणि, क. कुमाण्णजीवाणि ।

अर्थ :—उनकी वायव्यादिक विदिशाओमे स्थित द्वीपोंमे रहनेवाले कुमानुष शूकरकर्ण होते हैं। इसके अतिरिक्त पूर्वाग्निदिशादिकमे क्रमशः गणनीय आठ अन्तरद्वीपोंमे कुमानुष इसप्रकार स्थित हैं। उष्ट्रकर्ण, मार्जारमुख, पुन मार्जारमुख, कर्णप्रावरण, गजमुख, मार्जारमुख, पुनः मार्जारमुख और गोकर्ण, इन आठोंमेसे प्रत्येक पूर्वमे वतलाये हुए बहुत प्रकारके पापोंके फलसे कुमानुष जीव उत्पन्न होते हैं ॥२७७२-२७७४॥

पुष्वावर-पणिघोए, सिमुमार-मुहा तथा य मयरमुहा ।

चेट्टंति रुप्य - गिरिणो, कुमाणुसा काल - जलहिम्मि ॥२७७५॥

अर्थ :—कालसमुद्रके भीतर विजयार्धके पूर्वापर पार्श्वभागोंमे जो कुमानुष रहते हैं वे क्रमशः शिशुमारमुख और मकरमुख होते हैं ॥२७७५॥

वयमुह^१-वग्धमुहक्खा, हिमवंत-णगस्स पुष्वा-पच्छिम्मदो ।

पणिघोए चेट्टंते, कुमाणुसा पाव - पाकेहि ॥२७७६॥

अर्थ :—हिमवान्-पर्वतके पूर्व-पश्चिम पार्श्वभागोंमे रहनेवाले कुमानुष पापकर्मोंके उदयसे क्रमशः वृकमुख और व्याघ्रमुख होते हैं ॥२७७६॥

सिहरिस्स^२तरच्छमुहा, सिगाल-वयणा कुमाणुसा होंति ।

पुष्वावर - पणिघोए, जम्मंतर - दुरिय - कम्मेहि ॥२७७७॥

अर्थ :—शिखरी-पर्वतके पूर्व-पश्चिम पार्श्वभागोंमे रहनेवाले कुमानुष पूर्व जन्ममे किये हुए पापकर्मोंसे तरक्षमुख (अक्षमुख) और शृगालमुख होते हैं ॥२७७७॥

दीपिक - भिगारमुहा, कुमाणुसा होंति रुप्य - सेलस्स ।

पुष्वावर - पणिघोए, कालोदय - जलहि - दीवस्मि ॥२७७८॥

अर्थ :—विजयार्धपर्वतके पूर्वापर प्रणिधिभागमे कालोदक-समुद्रस्थ द्वीपोंमें क्रमशः द्वीपिक-मुख और भुङ्गारमुख कुमानुष होते हैं ॥२७७८॥

कालोदकके बाह्यभागमें स्थित कुमानुष द्वीपोंका निरूपण—

तस्सि बाहिर - भागे, तेत्तियमेत्ता कुमाणुसा दीवा ।

पोक्खरणी - वावीहि, कप्प - दुमेहि पि संपुण्णा ॥२७७९॥

अर्थ :—पुष्करिणियों, वापियों और कल्पवृक्षांसे परिपूर्ण उतने ही कुमानुषद्वीप उस कालोद-समुद्रके बाह्य-भागमें भी स्थित हैं ॥२७७६॥

एवाओ वज्जणाओ, लवरणसमुद्दं च एत्थ वसत्त्वा ।

कालोदय - लवणाणं, छण्णउदि - कुभोग - भूमिओ ॥२७८०॥

अर्थ :—यह सब वर्णन लवणसमुद्रके सदृश यहाँ भी कहना चाहिए । इसप्रकार कालोदक और लवणसमुद्र सम्बन्धी कुभोग-भूमियाँ छद्धानव हैं ॥२७८०॥

कालोदक-समुद्रका क्षेत्रफल—

दुग-अट्ट-गयण-णवयं, छच्चउ-छ-दु-छक-दुगिगि-तिय-पंच ।

अंक - कमे ओयणया, कालोदे होदि गणिव - फलं ॥२७८१॥

५३१२६२६४६६०८२ ।

अर्थ :—कालोदक-समुद्रका क्षेत्रफल द्वा, आठ, शून्य, नौ, छह, चार, छह, दो, छह, दो, एक, तीन और पाँच, इस अंक क्रमसे जो सख्या निर्मित हो उतने (५३१२६२६४६६०८२) योजन प्रमाण है ॥२७८१॥

यथा— $\sqrt{२६०००००^२ \times ६० \times २९००००} = \sqrt{१३०००००^२ \times १० \times १३००००} = ५३१२६२६४६६०८२$ योजन ।

कालोदक समुद्रके जम्बुद्वीप प्रमाण खण्ड—

जंबूद्वीव - महीए, फलप्पमाणेण काल - उवहिम्मि' ।

खेतफलं किञ्जंतं, छस्सय - बाहत्तरी' होदि ॥२७८२॥

६७२ ।

अर्थ :—जम्बुद्वीप सम्बन्धी क्षेत्रफलके प्रमाणसे कालोदक समुद्रका सम्पूर्ण क्षेत्रफल करने-पर वह उससे छहसौ बहत्तर गुणा होता है ॥२७८२॥

(२६०००००^२ - १३०००००^२) ÷ १०००००^२ = ६७२ खण्ड । कालोदकसमुद्रके जम्बुद्वीप बराबरके ये ६७२ खण्ड होते हैं ।

कालोदककी बाह्य परिधि—

द्विगिञ्जडवि लक्खाणि, सबरि-सहस्साणि छत्सयाणि पि ।

पंचुत्तरो य परिही, बाहिरया तस्त किञ्चुणा ॥२७८३॥

६१७०६०५ ।

अर्थ :—उस (कालोद समुद्र) की बाह्य-परिधि इक्यानबै लाख सत्तर हजार छहसौ पाँच योजनसे किञ्चित् कम है ॥२७८३॥

यथा— $\sqrt{२६०००००^२ \times १०} = ६१७०६०५$ योजनोंसे कुछ अधिक है ।

नोट :—गाथा में बाह्य परिधिका प्रमाण ६१७०६०५ योजन से कुछ कम कहा गया है जबकि गणित की विधि से कुछ अधिक आ रहा है ।

कालोदसमुद्रस्य मत्स्योकी दीर्घतादि—

अट्टरस - जोयणाणि, दीहा दीहद्ध - वास - संपुष्णा ।

वासद्ध - बहुल - सहिवा, णई - मुहे जलचरा होंति ॥२७८४॥

१८।६।३।

अर्थ :—इस समुद्रके भीतर नदीप्रवेश स्थानमें रहनेवाले जलचर जीवों की लम्बाई अठारह (१८) योजन (१४४ मील), चौड़ाई नौ (९) योजन (७२ मील) और ऊँचाई साढ़े चार (४३) योजन (३६ मील) प्रमाण है ॥२७८४॥

कालोवहि - बहुमज्जे, मच्छाणं दीह - वास-बहलाणि ।

छत्तीसट्टारस - णव - जोयणामेत्ताणि कमसो व ॥२७८५॥

३६।१८।६।

अर्थ :—कालोदसमुद्रके बहुमध्यमे स्थित मत्स्योकी लम्बाई ३६ योजन (२८८ मील) चौड़ाई १८ योजन (१४४ मील) और ऊँचाई ६ योजन प्रमाण है ॥२७८५॥

शेष जलचरोकी अवगाहना—

अवसेस - ठाण - मज्जे, बहुविह-ओगाहणेण संजुत्ता ।

मयर - सिमुमार - कच्छव - मंडुकप्पहुबिया होंति ॥२७८६॥

अर्थ :—शेष स्थानोंमें मगर, शिशुमार, कछुआ प्रौर मेंढक आदि जलचर जीव बहुत प्रकारकी अवगाहनासे संयुक्त होते हैं ॥२७८६॥

एवं कालसमुद्रो, संखेवेणं पबण्णिवो एत्थ ।
तस्स^१ हरि - संख - जीहो वित्थारं^२ 'वण्णिदु' तरइ ॥२७८७॥

। एवं कालोदक-समुद्रस्स वण्णणा समत्ता ॥५॥

अर्थ :—इसप्रकार यहाँ संश्लेषमें कालसमुद्रका वर्णन किया गया है । उसके विस्तारका वर्णन करनेमें संख्यात-जिह्वा-वाला हरि ही समर्थ है ॥२७८७॥

इमप्रकार कालोदसमुद्रका वर्णन समाप्त हुआ ।

पुष्करवर द्वीपका व्यास—

पोक्खरवरो त्ति दीवो, परिवेददि^३ कालजलणिहि सयलं ।
योयण - लक्खा सोलस, रुं^४ब - जुवो चक्कवालेणं ॥२७८८॥

१६००००० ।

अर्थ :—इस सम्पूर्ण कालसमुद्रको सोलह लाख (१६००००००) योजन प्रमाण विस्तारसे संयुक्त पुष्करवरद्वीप मण्डलाकार वेष्टित किये हुए है ॥२७८८॥

पुष्करवरद्वीपके वर्णनमें सोलह अन्तराधिकारोका निर्देश—

मणुसोत्तर - धरणिधरं, विण्णासं भरह-वसुमई तम्मि ।
काल - विभागं हिमगिरि, हेमववो तह महाहिमवं ॥२७८९॥

हरि-वरिसो जिसहदो, बिबेह-णीलगिरि-रम्म-वरिसाई ।
रम्मि^५-गिरी हेरण्णव-सिहरी एराववो त्ति वरिसो^६ य ॥२७९०॥

एवं सोलस - संखा, पोक्खर - दीवम्मि अंतरहियारा ।
एण्हं ताण सक्कं, 'बोच्छामो भाणुपुष्ठीए ॥२७९१॥

१. द. व. क. ज. उ. तल्ल । २. द. व. क. ज. उ. वण्णिवो । ३. द. क. ज. परिवेददि ।
४. द. व. रम्म । ५. द. ज. उ. वरिसा । ६. द. व. क. उ. बोच्छामि ।

अर्थ :—इस पुष्करद्वीपके कवनमें १ मानुषोत्तरपर्वत, २ विन्यास, ३ भरतक्षेत्र, उसमें ४ कालविभाग, ५ हिमवान्-पर्वत, ६ हेमवतक्षेत्र, ७ महाहिमवान्पर्वत, ८ हरिवर्ष, ९ निषघ्नपर्वत, १० विदेह, ११ नीलगिरि, १२ रम्यकवर्ष, १३ वकिमपर्वत १४ हृरभ्यवतक्षेत्र, १५ शिखरीपर्वत और १६ ऐरावतक्षेत्र इसप्रकार ये सोलह अन्तराधिकार हैं। अब अनुक्रमसे यहाँ उनका स्वरूप कहूँगा ॥२७८६-२७९१॥

मानुषोत्तर पर्वत तथा उसका उत्सेधादि—

कालोदय - जगदीबो^१, समंतबो अट्ट-सकल-जोयणया ।

गंतुणं तप्परिबो, परिवेढवि^२ मानुसुत्तरो सेतो ॥२७९२॥

८००००० ।

अर्थ :—कालोदकसमुद्रकी जगतीसे चारों ओर आठ लाख (८०००००) योजन प्रमाण जाकर मानुषोत्तर नामक पर्वत उस द्वीपको सब ओर वेष्टित किये हुए है । २७९२॥

तमिगिरिणो उच्छेहो, सत्तरस - सयाणि एकवीसं^३ च ।

तीसअभ्रिहियं जोयण - चउस्सया गाढमिगि - कोसं ॥२७९३॥

१७२१^४ । ४३० को १ ।

अर्थ :—इस पर्वतकी ऊँचाई सत्तरहसौ इक्कीस (१७२१) योजन और अवगाह (नींव) चारसौ तीस (४३०) योजन तथा एक कोस प्रमाण है ॥२७९३॥

जोयण - सहस्समेकं, बाबीसं सग - सयाणि तेबीसं ।

चउ-सय-चउवीसाई, कम-यंदा मूल-^५मकक-सिहरेसुं ॥२७९४॥

१०२२ । ७२३ । ४२४ ।

अर्थ :—इस पर्वतका विस्तार मूल, मध्य और शिखरपर क्रमशः एक हजार बाईस (१०२२) योजन सातसौ तेईस (७२३) और चारसौ बीबीस (४२४) योजन प्रमाण है ॥२७९४॥

१. द. व. क. उ. वनरीदो । २. द. क. उ. परिवेढवि । ३. द. मानुसुत्तरा, व. क. उ. मानुसुत्तर । ४. द. एकवीसं । ५. द. १७३१ । ६. व. द. क. उ. मूलमधिक, व. मज्झिमूल ।

अढभंतरम्मि भागे, टंकुक्किकण्णो बह्निम्मि कम - हीणो ।

सुर-स्सेयर-मण-हरणो, अणाइणिहणो सुवण्ण - णिहो ॥२७६५॥

अर्थ :- देवो तथा विद्याधरोके मनको हरनेवाला, अनादिनिघन और सुवर्णके सदृश यह मानुषोत्तर पर्वत अभ्यन्तरभागमें टंकोत्कीर्ण और बाह्यभागमें क्रमशः हीन है ॥२७६५॥

गुफाओंका वर्णन—

चोद्दस गुहाओ तस्सि, समंतदो होंति दिव्व-रयणमई^१ ।

विजयाणं बहुमउब्भे, पणिहीसु फुरंत - किरणाओ ॥२७६६॥

अर्थ :- उस (मानुषोत्तर) पर्वतमें चारों ओर क्षेत्रोंके बहुमध्यभागमें उनके पार्श्वभागोंमें प्रकाशमान किरणोंसे सयुक्त दिव्यरत्नमय चौदह गुफाएँ हैं ॥२७६६॥

ताणं गुहाण रुंदे, उवए बहुलम्मि अम्ह उवएत्तो ।

काल - वसेण पणट्ठो, सरिकूले जाव - विडओ उव ॥२७६७॥

अर्थ :- उन गुफाओंके विस्तार, ऊँचाई और बाह्यका उपदेश कालवश हमारे लिए नदी-तटपर उत्पन्न हुए वृक्षके सदृश नष्ट हो गया है ॥२७६७॥

तट-वेदी तथा वनखण्ड—

अढभंतर - बाहिरए, समंतदो होवि दिव्व - तड - वेदी ।

जोयण - दलमुच्छेहो, पण - सय - चावाणि वित्थारो ॥२७६८॥

३ । द ५०० ।

अर्थ :- इस पर्वतके अभ्यन्तर तथा बाह्यभागमें चारो ओर दिव्य तट-वेदी है; जिसका उत्सेध आधा (३) योजन और विस्तार पाँचसौ (५००) धनुष प्रमाण है ॥२७६८॥

जोयण-दल-वास-जुबो, अढभंतर - बाहिरम्मि वणसंडो ।

पुब्बल्ल - वेविएहि, समाण - वेवीहि परियरिओ ॥२७६९॥

३ ।

अर्थ :—उसके अभ्यन्तर तथा बाह्यभागमें पूर्वोक्त वेदियोंके सदृश वेदियोंसे व्याप्त और अर्घ्ययोजन प्रमाण विस्तारवाला वनखण्ड है ॥२७१६॥

उबरो वि 'माणुसोत्तर, समंतदो दोष्णि होंति तड-वेदो ।

अभंतरम्मि भागे, वणसंडो वेदि - तोरणेहि जुदो ॥२८००॥

अर्थ :—मानुषोत्तरपर्वतके ऊपर भी चारो ओर दो तटवेदियाँ हैं । इनके अभ्यन्तर भागमें वेदी तथा तोरणोसे संयुक्त वनखण्ड स्थित हैं ॥२८००॥

मानुषोत्तरका बाह्य सूची व्याम तथा परिधि—

बिउणम्मि सेल-वासे, जोयण-लक्खाणि खिवसु पणवालं ।

तप्परिमाणं सूई, बाहिर - भागे गिरिवस्स ॥२८०१॥

४५०२०४४ ।

अर्थ :—इस पर्वतके दुगुने विस्तारमें पेंतालीस लाख योजन मिला देनेपर उसकी बाह्य-सूचीका प्रमाण प्राप्त होता है ॥२८०१॥

$१०२२ \times २ + ४५००००० = ४५०२०४४$ यो० बाह्य व्यास ।

एक्को जोयण - कोडो, लक्खा बावाल तीस-छ-सहस्सा ।

तेरस-जुद-सत्त-सया, परिहीए बाहिरम्मि अद्विरेओ ॥२८०२॥

१४२३६७१३ ।

अर्थ :—इस पर्वतकी बाह्य-परिधि एक करोड बयालीस लाख छत्तीस हजार सातसौ तेरह (१४२३६७१३) योजनमें अधिक है ॥२८०२॥

अद्विरेयस्स^३ पमाणं, सहस्समेवकं च तीस अग्गहियं^४ ।

ति - सयं धणु इगि - हत्थो, बहंगुलाइं जवा पंच ॥२८०३॥

द १३३० । ङ १ । अ १० । ज ५ ।

अर्थ :—यह बाह्य-परिधि १४२३६७१३ योजन प्रमाणसे जितनी अधिक है, उस अधिकताका प्रमाण एक हजार तीनसौ तीस (१३३०) धनुष, एक हाथ, दस अंगुल और पाँच जो है ॥२८०३॥

१. द. व. क. ज उ. माणुसुत्तर । २. द व क ज. उ. अद्विरेयो । ३. द व. क. उ. अग्गि-रेयस्स । ४. द ज अग्गहियं ।

विशेषार्थः—मानुषोत्तर पर्वतका बाह्यसूची व्यास ४५०२०४४ योजन है। इसकी परिधि $\sqrt{४५०२०४४^2 \times १०} = १४२३६७१३$ योजन, १३३० घनुष, १ हाथ, १० अंगुल, ५ जी, ० जू, २ लीक, ७ कर्मभूमिके बाल ४ जघन्य भो० के बाल, ५ मध्यम भो० के बाल और ३६३६३६३६ उत्तम भो० के बाल प्रमाण है।

मानुषोत्तर पर्वतके अभ्यन्तर सूची व्यास और परिधिका प्रमाण—

परादाल-लवल्ल-संखा, सूई अकभंतरम्मि भागम्मि।

राव-चउ-वु-ख-तिय-वो-चउ-इगि-अंक-कमेणेण परिहि-जोयणया ॥२८०४॥

४५००००० । १४२३०२४६ ।

अर्थ :—अभ्यन्तरभागमे इस पर्वतकी सूची पंतालीस लाख (४५०००००) योजन है और परिधि नौ चार, दो, शून्य, तीन, दो, चार और एक, इस अक-क्रममे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन प्रमाण है ॥२८०४॥

$\sqrt{४५०००००^2 \times १०} = १४२३०२४६$ योजन परिधि है और १३३६७६६६ वर्ग योजन अवशेष रहे जो छोड़ दिए गये हैं।

समवृत्त क्षेत्रका क्षेत्रफल निकालनेका विधान—

सूचीए कदिए कदि, दस-गुण-मूलं च लट्ट चउ-भजिबं।

सम - वट्ट - वसुमईए, हवेदि तं सुत्तम - खेतफलं ॥२८०५॥

अर्थ :—सूचीके वर्गके वर्गको दससे गुणा करके उसके वर्गमूलमें चारका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना समान गोल क्षेत्रका सूक्ष्म क्षेत्रफल होता है ॥२८०५॥

मानुषोत्तर पर्वतके क्षेत्रफल सहित मनुष्य लोकका सूक्ष्म क्षेत्रफल—

अभ-एक-पंच-वुग-सग-वुग-सग-सग-पंच-ति-वु-ख-खणकेवका।

अंक - कमे खेतफलं, मणुस - अगे सेल - फल - कुत्तां ॥२८०६॥

१६०२३५७७२७२५१० ।

अर्थ :—मानुषोत्तर पर्वतके क्षेत्रफल सहित मनुष्यलोकका क्षेत्रफल शून्य, एक, पांच, दो, सात, दो, सात, सात, पांच, तीन, दो, शून्य, छह और एक, इस अंक-क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने (१६०२३५७७२७२५१०) योजन प्रमाण है ॥२८०६॥

मानुषोत्तर पर्वतस्थ बाईस कूटोका निरूपण—

उवरिम्मि माणुसुत्तर-गिरिणो^१ बावीस दिव्व-कूडाणि ।

पुव्वादि-चउ-दिसासु^२, पत्तेक्कं तिण्णि तिण्णि वेट्टंति ॥२८०६॥

अर्थ —इस मानुषोत्तर पर्वत पर बाईस दिव्य कूट है। इनमें पूर्वादिक् चारों दिशाओंमेंसे प्रत्येकमें तीन-तीन कूट हैं ॥२८०६॥

वेरुलिय^३-असुमगम्भा, सउगधी तिण्णि पुव्व - दिव्वाए ।

रजगो लोहिय - अंजण - णामा दक्खिण - विभागम्मि ॥२८१०॥

अर्थ :—इनमेंसे वेडूर्य, असुमगम्भ और सौगन्धी, ये तीन कूट पूर्व-दिशामें तथा रुचक, लोहित और अजन नामक तीन कूट दक्षिण-दिशा-भागमें स्थित हैं ॥२८१०॥

अंजण^४- मूलं कणयं, रजदं णामेहि पच्छिम - दिसाए ।

फडिहंक्^५ - पवालाइं, कूडाइं उत्तर - दिसाए ॥२८११॥

अर्थ :—अञ्जनमूल, कनक और रजत नामक तीन कूट पश्चिम-दिशामें तथा स्फटिक, अङ्क और प्रवाल नामक तीन कूट उत्तरदिशामें स्थित हैं ॥२८११॥

तवणिज्ज-रयण-णामा, "कूडाइं" दोण्णि वि हुदासण-दिसाए ।

ईसाए - दिसाभागे, पहंजणो वज्ज - णामो स्ति ॥२८१२॥

अर्थ :—तपनीय और रत्न नामक दो कूट अग्नि-दिशामें तथा प्रभञ्जन और वज्र नामक दो कूट ईशान-दिशाभागमें स्थित हैं ॥२८१२॥

एक्को निच्चय वेल्लो, कूडो वेट्टेदि मारुद-दिसाए ।

णइरिदि - दिसा - विभागे, णामेणं सव्व - रयणो स्ति ॥२८१३॥

अर्थ :—वायव्य-दिशामें केवल एक वेल्लम्बकूट और नैऋत्य दिशा भागमें सर्वरत्न नामक कूट स्थित है ॥२८१३॥

१. द. ज. गिरिणा । २. द. व. वेरुलिय । ३. व. उ. अजणमूल कहो रजवणामेहि, व अजण-मूल कण्णय रजवणामेहि, क. अजणमूले कण्णय रजवणामेय, द. ज. अजणमूल कण्णय । ४. द. व. क. व. उ. पडिहंक् । ५. द. व. क. ज. उ. कूडाए ।

पुष्पादि-चउ-दिसासुं, वणिन्द - कूडाण भ्रग - भूमिसुं ।

एकैक सिद्ध - कूडा, होंति वि मणुसुत्तरे सेले ॥२८१४॥

अर्थ :- मानुषोत्तर पर्वतपर पूर्वादिक चारो दिशाओमे बतलाये हुए कूटोंकी अग्र-भूमियोमे एक-एक सिद्ध-कूट भी है ॥२८१४॥

कूटोंकी ऊँचाई तथा विस्तारादिक—

गिरि-उदय-चउकभागो, उदयो कूडाण होदि पत्तेकं ।

तेत्तियमेत्तो' रंढो, मूले सिहरे तदद्धं च ॥२८१५॥

४३० । को १ । ४३० को १ । २१५ । ३ ।

अर्थ :- इन कूटोमेसे प्रत्येक कूटकी ऊँचाई, पर्वतकी ऊँचाईके चतुर्थ भाग { (१७२१ यो० ÷ ४) = ४३० यो० १ कोस } प्रमाण तथा मूलमे इतना (४३० ३/४ यो०) ही उनका विस्तार है । शिखर पर इससे आधा (४३० ३/४ यो० ÷ २ = २१५ यो० ३/४ कोस) विस्तार है ॥२८१५॥

मूल-सिहराण रंढं, मेलिय वलिवम्मि होवि अं लद्धं ।

पत्तेकं कूडाणं, मञ्जिभम - विक्खंभ - परिमाणं ॥२८१६॥

३२२ । को २ । ३ ।

अर्थ :- मूल और शिखर-विस्तारको मिलाकर आधा करनेपर जो प्राप्त हो उतना (४३० ३/४ + २१५ ३/४ यो० - २ = ३२२ ३/४ यो० अर्थात् ३२२ योजन, २ ३/४ कोस) प्रत्येक कूटके मध्यम विस्तारका प्रमाण है ॥२८१६॥

कूटोंपर वनखण्ड, जिनमन्दिर तथा प्रासादोंकी अवस्थिति—

मूलम्मि य सिहरम्मि य, कूडाणं होंति दिव्व-वणसंडा ।

मणिमय - मंढिर - रम्मा, वेदी - पट्टवीहि सोहिल्ला ॥२८१७॥

अर्थ :- कूटोके मूल तथा शिखरपर मणिमय मन्दिरोंसे रमणीय और वेदिकाओसे सुशोभित दिव्य वनखण्ड हैं ॥२८१७॥

वेट्टंति मणुसुत्तर - सेलस्स य चउसु सिद्ध - कूडेसुं ।

चत्तारि जिण - णिकेवा, गिसह-जिणभवण-सारिक्खा ॥२८१८॥

अर्थ :- मानुषोत्तर-पर्वतके चारो सिद्ध-कूटोंपर निवधपर्वत स्थित जिनभवनोंके सदृश चार जिनमन्दिर स्थित हैं ॥२८१८॥

सेसेसुं कूडेसुं, बेंतर - देवाण दिव्व - पासादा ।

वर - रयण - कंचणामया, पुन्वोदिद - वण्णणेहि जुदा ॥२८१९॥

अर्थ :- शेष कूटोपर पूर्वोक्त वर्णनाम्नोसे संयुक्त व्यन्तरदेवोके उत्तम रत्नमय एवं स्वर्णमय दिव्य प्रासाद हैं ॥२८१९॥

कूटोके अधिपति देव—

पुव्व - दिसाए जसस्सदि-जसकंत-जसोघरा ति-कूडेसुं ।

कमसो अहिवइ - देवा, बहुपरिवारेहि चेट्ठंति ॥२८२०॥

अर्थ :- मानुषोत्तर-शैलके पूर्व-दिशा-सम्बन्धी तीन कूटोंपर क्रमशः यशस्वान्, यशस्कान्त और यशोघर नामक तीन अधिपति देव बहुत परिवारके साथ निवास करते हैं ॥२८२०॥

दबिखण - दिसाए णंढो, रणंदुत्तर-असण्णिस-णामा य ।

कूड - तिदयम्मि बेंतर - देवा णिवसंति लीलाहि ॥२८२१॥

अर्थ :- इसीप्रकार दक्षिण-दिशाके तीन कूटोंपर नन्द (नन्दन), नन्दोत्तर और अशनि-घोष नामक तीन व्यन्तरदेव लीला-पूर्वक निवास करते हैं ॥२८२१॥

सिद्धत्थो वेसवणो, माणुसदेवो ति पच्छिम - दिसाए ।

णिवसंति ति - कूडेसुं, तगिरिणो बेंतराहिवई ॥२८२२॥

अर्थ :- उस पर्वतके पश्चिम-दिशा-सम्बन्धी तीन कूटोपर सिद्धार्थ बंश्रवण और मानुसदेव, ये तीन व्यन्तराधिपति निवास करते हैं ॥२८२२॥

उत्तर - दिसाए देवो, सुदंसणो मेघ - सुप्पबुद्धक्खा ।

कूड - तिदयम्मि कमसो, होंति ह्म मणुसुत्तर - गिरिस्स ॥२८२३॥

अर्थ :- मानुषोत्तरपर्वतके उत्तरदिशा-सम्बन्धी तीन कूटोंपर क्रमशः सुदर्शन, मेघ (अमोघ) और सुप्रबुद्ध नामक तीन देव स्थित हैं ॥२८२३॥

अग्गि - दिसाए साबीवेओ तबण्णिज्ज - णाम - कूडम्मि ।

चेट्ठंति रयण - कूडे, भवणिवो वेणु - णामेणं ॥२८२४॥

अर्थ :—अग्निदिशाके तपनीय नामक कूटपर स्वातिदेव और रत्नकूटपर वेणु नामक भवनेन्द्र स्थित है ॥२८२४॥

ईशान - विसाए सुरो, 'हनुमानो वञ्जनाभि-कूडम्मि ।

वसदि 'पभञ्जन - कूडे, भवनिबो वेणुघारि ति ॥२८२५॥

अर्थ :—ईशान-दिशाके वञ्जनाभि-कूटपर हनुमान नामक देव और प्रभञ्जनकूटपर वेणुघारी (प्रभञ्जन) भवनेन्द्र रहता है ॥२८२५॥

बेलंब - नाम - कूडे, बेलंबो नाम मासव - विसाए ।

सञ्चरयजम्मि ञ्हरिदि - विसाए सो वेणुघारि ति ॥२८२६॥

अर्थ :—वायव्यदिशाके वेलम्ब नामक कूटपर वेलम्ब नामक और नैऋत्य-दिशाके सबरत्न-कूटपर वेणुघारी (वेणुनीत) भवनेन्द्र रहता है ॥२८२६॥

राहरिदि-यवरा-विसाओ, वञ्जिय अहुसु विसासु पत्तेकं ।

तिय तिय कूडा सेसं, पुब्बं वा केइ इच्छंति ॥२८२७॥

मानुसुत्तरगिरि-वञ्जणं समसं ।

अर्थ :—आठ दिशाओंमेंसे नैऋत्य और वायव्य दिशाओंके अतिरिक्त शेष दिशाओंमेंसे प्रत्येकमें तीन-तीन कूट हैं । शेष वर्णन पूर्वके ही सट्ट है, ऐसा कितने ही आचार्य स्वीकार करते हैं ॥२८२७॥

इसप्रकार मानुषोत्तर पर्वतका वर्णन समाप्त हुआ ।

पुष्करार्धमें इष्वाकार पर्वतोंकी स्थिति—

अबिद्ध - मानुसुत्तर - सेलं कालोदयं च इसुगारा ।

उत्तर - दक्षिण - भाणे, तद्दीवे दोष्णि चिद्धंति ॥२८२८॥

अर्थ :—उस पुष्करार्धदीपके उत्तर और दक्षिणभागमें मानुषोत्तर तथा कालोदक समुद्रको स्पर्श करते हुए दो इष्वाकार पर्वत स्थित हैं ॥२८२८॥

घावइसंड-पवण्णद-इसुगार-गिरिद - सरिस - वण्णयया ।

आयामेणं दुगुणं, बीवम्मि य पोक्खरद्धम्मि ॥२८२६॥

अर्थ :- पुष्करार्धद्वीपमें स्थित वे दोनों पर्वत घातकीखण्डमें वणित इष्वाकार पर्वतोंके सदृश वर्णनवाले हैं, किन्तु आयाममें दुगुने हैं ॥२८२६॥

दोनों इष्वाकारोंके अन्तरालमें स्थित विजयादिकोंका आकार तथा संख्या—

दोहूं इसुगाराणं, विच्चाले होंति बोण्णि विजयवरा ।

चक्कद - समायारा, एक्केवका तासु मेरुगिरी ॥२८३०॥

अर्थ :- इन दोनों इष्वाकार पर्वतोंके बीचमें चक्ररन्ध्रके सदृश आकारवाले दो उत्तम (विदेह) क्षेत्र हैं और उनमें एक-एक मेरु पर्वत है ॥२८३०॥

घादइसंडे बीवे, जेतिय - कुंढाणि जेतिया विजया ।

जेत्तिय - सरवर' जेतिय - सेलवरा जेतिय - णईओ ॥२८३१॥

पोक्खरबीवद्धेसुं, तेत्तियमेत्ताणि ताणि वेट्टंति ।

दोहूं इसुगाराणं, गिरीण विच्चाल - भाएसुं ॥२८३२॥

अर्थ :- घातकीखण्डद्वीपमें जितने कुण्ड, जितने क्षेत्र जितने सरोवर, जितने श्रेष्ठ पर्वत और जितनी नदियां हैं, उतने ही सब पुष्करार्धद्वीपमें भी दोनों इष्वाकार-पर्वतोंके अन्तराल-भागोंमें स्थित हैं ॥२८३१-२८३२॥

तीन द्वीपोंमें विजयादिकोंकी समानता—

विजया विजयाण तहा, वेयड्ढाणं हवंति वेयड्ढा ।

मेरुगिरीणं मेरु, कुल - सेसा कुलगिरीणं च ॥२८३३॥

सरियाणं सरियाओ, नाभिगिरिदान नाभि - सेसाणि ।

परिणधिगदा^१ तिय - बीवे, उस्सेह^२ - समं विखा^३ मेरुं ॥२८३४॥

अर्थ :- तीनों द्वीपोंमें परिणधिगत विजयोंके सदृश विजय, विजयाओंके सदृश विजयार्थ, मेरुपर्वतोंके सदृश मेरु पर्वत, कुलगिरियोंके सदृश कुलगिरि, नदियोंके सदृश नदियां तथा नाभिगिरियोंके सदृश नाभि-पर्वत हैं । इनमेंसे मेरु-पर्वतके अतिरिक्त शेष सबकी ऊँचाई सदृश है ॥२८३३-२८३४॥

१. द. व. क. च. उ. सरोवरण । २. द. व. क. च. उ. परिणधिगदा-विजयेवी । ३. द. व. क. क.

कुम-पर्वतादिकोंका विस्तार—

एवाचं वंवांसि, जंबूद्वीपम्भि भण्डिष - वंवायो ।

एत्य चउगुणिवार्ह, जेयाइं जेरण 'पढम - विषा ॥२८३५॥

अर्थ :—सर्व प्रथम कहे हुए विजयों (क्षेत्रों) को छोड़ इनका विस्तार यहाँ जम्बूद्वीपमें बतलाये हुए विस्तारसे चौगुना जानना चाहिए ॥२८३५॥

मुनका मेरुगिरिबं, कुलगिरि - पद्मद्वीपि द्वीप-तिवयम्भि ।

विस्थावच्छेह - समो, केई एषं पृथ्वेति ॥२८३६॥

पाठान्तरं ।

अर्थ :—मेरुपर्वतके प्रतिरिक्त शेष कुलाचल आदिकोंका विस्तार तथा ऊँचाई तीनों द्वीपोंमें समान है, ऐसा कितने ही आचार्य निरूपण करते हैं ॥२८३६॥

पाठान्तरम् ।

पुष्करार्ध-स्थित विजयार्धं तथा कुलाचलोंका निरूपण—

छविदूष माणुसुत्तर - सेलं कालोदगं च चेट्टंति ।

चस्तारो विजयद्वडा, दीवद्वे बारस कुलद्वी ॥२८३७॥

अर्थ :—पुष्करार्धद्वीपमें चार विजयार्धं तथा बारह कुल-पर्वत मानुषोत्तर पर्वत श्रीर कालोदक समुद्रको छूकर स्थित हैं ॥२८३७॥

दीवम्भि पोषसरद्वे, कुल-सेलावी तह्य वीह-विजयद्वडा ।

अकमंतरम्भि बार्हि, अंकमुहा ते 'सुख्य - संताषा ॥२८३८॥

अर्थ :—पुष्करार्धद्वीपमें स्थित वे कुलपर्वतादिक तथा दीर्घ-विजयार्धं अग्यन्तर तथा बाह्य-भागमें क्रमशः अंकमुस और क्षुरप्रके सदृश आकारवाले हैं ॥२८३८॥

विजयादिकोंके नाम—

वज्जिय जंबू-सामलि-जामाइं विजय-सर-गिरि-प्यहुदि ।

जंबूद्वीव - समार्णं, णामाणि एत्य वत्तव्वा^३ ॥२८३९॥

अर्थ :—यहाँ जम्बू और शाल्मली वृक्षके नाम छोड़कर शेष क्षेत्र, तालाब और पर्वतादिकके नाम जम्बूद्वीपके समान ही कहने चाहिए ॥२८३६॥

दोनों भरत तथा ऐरावत क्षेत्रोंकी स्थिति—

दो-पासेसु य दक्षिण-इसुगार-गिरिस्स दो भरह - ज्ञेसा ।

उत्तर - इसुगारस्स य, ह्वंति ऐरावदा दोग्णि ॥२८४०॥

अर्थ :—दक्षिण इष्वाकार पर्वतके दोनों पार्श्वभागोंमें दो भरतक्षेत्र और उत्तर इष्वाकार पर्वतके (दोनों पार्श्वभागोंमें) दो ऐरावत क्षेत्र हैं ॥२८४०॥

सब विजयोंकी स्थिति तथा आकार—

दोहं इसुगाराणं, बारस - कुल - पव्वयाण विव्वाले ।

वेट्टंति सयल - विजया, अर-विबर-सरिच्छ-संठाणा ॥२८४१॥

अर्थ :—दोनों इष्वाकार और बारह कुल-पर्वतोंके अन्तरालमें चक्र (पहिए) के धरोंके छेदोंके सदृश आकारवाले सब विजय स्थित हैं ॥२८४१॥

अंकायारा विजया, ह्वंति अठ्भंतरम्मि भागम्मि ।

सत्तिमुहं पिव बाहि, सयहुद्धि-समा वि पस्स - भुजा ॥२८४२॥

अर्थ :—सब क्षेत्र अभ्यन्तरभागमें अंकाकार और बाह्यभागमें शक्तिमुख हैं । इनकी पार्श्व-भुजायें गाड़ीकी उदिके सदृश हैं ॥२८४२॥

कुलाचल तथा इष्वाकार-पर्वतोंका विष्कम्भ—

चत्तारि सहस्साणि, दु-सया दस-जीयणाणि दस-भागा ।

विक्खंभो हिमवन्ते, णिसहंत चउग्गुणो कमसो ॥२८४३॥

४२१० । ३९ । १६८४२ । ३९ । ६७३६८ । ३९ ।

अर्थ :—हिमवान्-पर्वतका विस्तार चार हजार दोसौ दस योजन और एक योजनके उन्नीस भागोंमेंसे दस-भाग अधिक (४२१० $\frac{३९}{१००}$ यो० प्रमाण) है । इसके आगे निषध-पर्वत पर्यन्त क्रमशः उत्तरोत्तर चौगुना (अर्थात् १६८४२ $\frac{३९}{१००}$ योजन और ६७३६८ $\frac{३९}{१००}$ योजन) विस्तार है ॥२८४३॥

एद्वारं ति - रागाणं, विक्खंभं मेलिद्वुरा चउ - गुरिणं ।

सव्वाणं णादव्वं, हं व - समाणं कुल - गिरिणं ॥२८४४॥

अर्थ :—इन तीनों पर्वतोंके विस्तारको मिलाकर चौगुना करनेपर जो प्राप्त हो उतने
 [(४२१०३ $\frac{१}{४}$ + १६८४२ $\frac{३}{४}$ + ६७३६८ $\frac{१}{४}$) × ४ = ३५३६८४ $\frac{१}{४}$] योजन-प्रमाण सब कुल-पर्वतों
 का समस्त विस्तार जानना चाहिए ॥२८४४॥

दोहूँ इसुगारारणं, विक्खंभं बे - सहस्स - जोयणया ।

तं पुव्वम्मि विमिस्सं, वीवद्धे सेल - रुद्ध - खिदी ॥२८४५॥

२०००

अर्थ :—दोनों इष्वाकार पर्वतोंका निस्तार दो हजार योजन प्रमाण है । इसको पूर्वोक्त
 कुल-पर्वतोंके समस्त विस्तारमें मिला देनेपर पुष्करार्धद्वीपमें पर्वतरुद्ध-क्षेत्रका प्रमाण (२००० +
 ३५३६८४ $\frac{१}{४}$ = ३५५६८४ $\frac{१}{४}$ योजन) प्राप्त होता है ॥२८४५॥

जोयण-लक्ख-त्तिदयं, पणवण्ण - सहस्स छस्सयाणि पि ।

चउसीदि चउडभागा, गिरि-रुद्ध-खिदीए परिमाणं ॥२८४६॥

३५५६८४ । $\frac{१}{४}$ ।

अर्थ :—पर्वतरुद्ध-क्षेत्रका प्रमाण तीन लाख पचपन हजार छहसौ चौरासी योजन और
 चार-भाग अधिक (३५५६८४ $\frac{१}{४}$ योजन) है ॥२८४६॥

भरतादि क्षेत्रोंके आदिम, मध्यम और अन्तिम विष्कम्भ लानेका विधान—

आदिम-परिह-प्पहुदी - चरिमंतं इच्छिदाण परिहीसुं ।

गिरि-रुद्ध-खिदि सोहिय, बारस-जुव-बे-सएहि भजिद्वणं ॥२८४७॥

सग-सग-सलाय-गुण्णिदं, होदि पुढं भरह-पहुदि-विजयाणं ।

इच्छिद - पवेस - रुंदा, तहिं तहिं तिण्णिण णियमेण ॥२८४८॥

अर्थ —पुष्करार्धद्वीपकी आदिम परिधिसे लेकर अन्तिमान्त इच्छित परिधियोमेंसे
 पर्वतरुद्ध क्षेत्र कम करके शेषमें दोसी बारहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसको अपनी-अपनी
 शलाकासे गुरा करनेपर नियमसे भरतादिक क्षेत्रोंका वहाँ-वहाँ इच्छित स्थान (आदि, मध्य और
 अन्त) में तीनों प्रकारका विस्तारप्रमाण प्राप्त होता है ॥२८४७-२८४८॥

६१७०६०५ — ३५५६८४ ÷ २१२ × १ = ४१५७६३ $\frac{३}{४}$ म० क्षे० का आदि वि० ।

अर्थात्—

भरहादिसु विजयाणं, बाहिर - रुंदिम्मि आदिमं रुंदिं ।

सोहिय अड - लक्ख - हिदे, लय-बद्धी इच्छिद - पवेसे ॥२८४९॥

अर्थ :—भरतादिक क्षेत्रोंके बाह्य-विस्तारमेंसे प्रादिम विस्तार घटाकर जो शेष रहे उसमें आठ लाखका भाग देनेपर इच्छित स्थानमें क्षय-वृद्धिका प्रमाण प्राप्त होता है ॥२८५६॥

(६५४४६३३३ — ४१५७६३३३) ÷ ८००००० = १३३४४४४४४ यो० हानि-वृद्धिका प्रमाण ।

भरतादि सातों क्षेत्रोंका अभ्यन्तर विस्तार—

एषकत्ताल - सहस्त्रा, पंच-सया जोयणाणि उणसीबी ।

तेहत्तरि - उत्तर - सद - कलाओ अठमंतरे भरह-रुवं ॥२८५०॥

४१५७६ । ३३३ ।

अर्थ :—भरतक्षेत्रका अभ्यन्तर विस्तार इकतालीस हजार पाँचसौ उन्ग्यासी योजन और एकसौ तिहत्तर भाग अधिक (४१५७६३३३ योजन प्रमाण) है ॥२८५०॥

भरहस्स मूल - रुवं, चउ - गुणिवे होवि 'हेमववसूए ।

अठमंतरम्मि रुवं, तं हरिवरिसस्स चउ - गुणिवं ॥२८५१॥

१६६३१६ । ३३३ । ६६५२७७ । ३३३ ।

अर्थ :—भरतक्षेत्रके मूल-विस्तारको चारसे गुणा करनेपर हैमवतक्षेत्रका अभ्यन्तर विस्तार और इसको भी चारसे गुणा करनेपर हरिवर्षका अभ्यन्तर विस्तार प्राप्त होता है ॥२८५१॥

१६६३१६३३३ यो० हैमवतका और ६६५२७७३३३ यो० हरिक्षेत्रका विस्तार है ।

हरि - वरिसो चउ-गुणिवो, रुंवे अठमंतरे विदेहस्स ।

सेस - वरिसाण रुवं, पत्तकं चउगुणा हाणी ॥२८५२॥

२६६११०८ । ३३३ । ६६५२७७ । ३३३ । १६६३१६ । ३३३ । ४१५७६ । ३३३ ।

अर्थ :—हरिवर्ष-क्षेत्रके विस्तारको चारसे गुणा करनेपर विदेहका अभ्यन्तर विस्तार (२६६११०८३३३ यो०) प्राप्त होता है । फिर इसके आगे शेष क्षेत्रोंके विस्तारमें क्रमशः चौगुनी हानि होती गई है ॥२८५२॥

६६५२७७३३३ यो० रम्यक का, १६६३१६३३३ यो० हैरव्यवतका तथा ४१५७६३३३ यो० ऐरावत क्षेत्रका विस्तार है ।

एवं सग - सग - बिजयाचं आबिम - रुंढ - पहुदीओ ।

बाहिर^१ - चरिम - पदेसे, रुंढंतिमं ति वसव्वं ॥२८५३॥

अर्थ :—इस प्रकार अपने-अपने क्षेत्रका आदिम विस्तारादि है । अब बाह्य चरम-प्रदेशपर इनका अन्तिम विस्तार कहा जाता है ॥२८५३॥

भरतक्षेत्रका बाह्य विस्तार—

पणसट्टि^२ - सहस्साणि, चउस्सया जोयणाणि छावालं ।

तेरस कलाओ भणिदं, भरहक्खिदि - बाहिरे रुंढं ॥२८५४॥

६५४४६ । ३१^३/_६ ।

अर्थ :—भरतक्षेत्रके बाह्य-भागका विस्तार पेशठ हजार चारसी छयालीस योजन और तेरह कला अधिक (६५४४६^३/_६ यो० प्रमाण) कहा गया है ॥२८५४॥

(१४२३०२४९ — ३५५६८४^३/_६) ÷ २१२ × १ = ६५४४६^३/_६ यो० ।

अन्य क्षेत्रोंका बाह्य विस्तार—

एत्थ वि पुव्वं^३ व णेदव्वं ।

अर्थ :—पहिलेके सट्ठण यहाँपर भी हैमवतादिक-क्षेत्रोंका विस्तार चौगुनी वृद्धि एव हानि-रूप जानना चाहिए ।

विशेषार्थ :—हैमवत क्षेत्रका बाह्य विस्तार २६१७८४^३/_६ योजन, हरिक्षेत्रका १०४७१३६^३/_६ यो०, विदेहका ४१८८५४७^३/_६ यो०, रम्यकका १०४७१३६^३/_६ यो०, हैरण्यवतका २६१७८४^३/_६ यो० और ऐरावतक्षेत्रका ६५४४६^३/_६ योजन प्रमाण है ।

पद्मद्रह तथा पुण्डरीक द्रहसे निकली हुई नदियोंके पर्वतपर बहनेका प्रमाण—

पुस्खरवरद्ध - दीवे, खुल्लय-हिमबंत-सिहरि-मञ्जिभल्ले ।

पउमवह^४ - पुंउरीए, पुव्ववर-दिसम्मि णिमव-णवीओ ॥२८५५॥

अट्टेक्क-छ-अट्ट-तियं, अंककमे जोयणाणि गिरि-उव्वरि ।

गत्तुणं पत्तोक्कं, दक्खिण - उत्तर - दिसम्मि जंति कमे ॥२८५६॥

३८६१८ ।

१ द व क ज उ बाहिरदुचरिमपदेसे रुंढंतिवत्ति । २ द व पण्णट्ट । ३ द व क व उ पुव्वं णेदव्वं । ४ द व क ज उ पउमवह ।

अर्थ :—पुष्करार्धद्वीपमें क्षुद्रहिमवान् और शिखरी पर्वतपर स्थित पद्मद्रह तथा पुष्करीक-
द्रहके पूर्व और पश्चिम दिशासे निकली हुई नदियाँ घाठ, एक, छह, घाठ और तीन इस अंक क्रमसे जो
संख्या उत्पन्न हो उतने प्रमाण अर्थात् अड़तीस हजार छहसौ घाठारह (३८६१८) योजन पर्वतपर जाकर
क्रमशः प्रत्येक दक्षिण तथा उत्तर दिशाकी ओर जाती हैं ॥२८५५-२८५६॥

पुष्करार्धद्वीपमें स्थित मेरुओंका निरूपण—

घादइसंड - पवण्णव - दोणं मेरुण सव्व - वण्णणयं ।

एत्थेव य वसव्वं, गयवंतं भद्दसाल - कुह - रहिदं ॥२८५७॥

अर्थ :—घातकीलण्डमे वरिणत दोनों मेरुओंका समस्त विवरण गजदन्त, भद्रशाल और
कुहलोमोको छोड़कर यहाँ भी कहना चाहिए ॥२८५७॥

चारो गजदन्तोंकी बाह्याभ्यन्तर लम्बाई—

छयकेवक-एवक-छव्वदुग - छयकेवकं जोयणाणि मेरुणं ।

अठभंतर - भागट्टिय गयवंताणं चउण्हाणं ॥२८५८॥

१६२६११६ ।

अर्थ :—छह, एक, एक, छह, दो, छह और एक इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने
(१६२६११६) योजन प्रमाण मेरुओंके अभ्यन्तरभागमें स्थित चारों गजदन्तोंकी लम्बाई है ॥२८५८॥

णव-इगि-दो-दो-चउ-णभ-दो अंक-कमेण जोयणा दीहं ।

दो - मेरुणं बाहिर - गयवंताणं चउण्हाणं ॥२८५९॥

२०४२२१६ ।

अर्थ :—नी, एक, दो, दो, चार, शून्य और दो इस अंक-क्रमसे जो संख्या प्राप्त हो उतने
(२०४२२१६) योजन प्रमाण दोनों मेरुओंके बाह्यभागमें स्थित चारों गजदन्तोंकी लम्बाई
है ॥२८५९॥

कुहलोमके धनुष, ऋजुबाण और जीवाका प्रमाण—

छचीसं लक्खारिण, अडसट्ठि-सहस्स-ति-सय-पणतीसा ।

जोयणायाणि पोक्खर - दीवद्धे होवि कुह - चावं ॥२८६०॥

३६६८३३३ ।

अर्थ :—पुष्कराखंडीपमें कुरुक्षेत्रका धनुष छत्तीस लाख अड़सठ हजार तीनसी पैंतीस (३६६८३३५) योजन प्रमाण है ॥२८६०॥

चोहस-जोयण-लक्खा, छासीदि-सहस्स-णव-सयाइ इगितीसा ।

उत्तर - वेव - कुरूए, पत्तोक्कं होइ रिखु - बाणो ॥२८६१॥

१४८६६३१ ।

अर्थ :—उत्तर और देवकुरुमेंसे प्रत्येकका ऋजुवाए चौदह लाख छयासी हजार नौ सी इकतीस (१४८६६३१) योजन प्रमाण है ॥२८६१॥

चउ-जोयण-लक्खाणि, छत्तीस-सहस्स णव - सयाइं पि ।

सोलस - जुवाणि 'कुरवे, जीवाए होदि परिमाणं ॥२८६२॥

४३६६१६ ।

अर्थ :—कुरुक्षेत्रकी जीवाका प्रमाण चार लाख छत्तीस हजार नौसी सोलह (४३६६१६) योजन प्रमाण है ॥२८६२॥

वृत्त-विष्कम्भ निकालनेका विधान—

इसु-वर्गं चउ-गुणिदं, जीवा-वर्गम्मि खिवसु तम्मिह तवो ।

चउ - गुण - बाण - विहत्तो, लद्धं षट्ठस्स विक्खंभो ॥२८६३॥

अर्थ :—बाणके वर्गको चौगुनाकर उसे जीवाके वर्गमें मिला दे । फिर उसमें चौगुने बाणका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना गोलक्षेत्रका विस्तार होता है ॥२८६३॥

(१४८६६३१^२ × ४ + ४३६६१६^२) ÷ (१४८६६३१ × ४) = १५१६०२६ योजन और कुछ अधिक ३३३ कला ।

कुरुक्षेत्रका वृत्तविष्कम्भ तथा वक्रबाणका प्रमाण—

पण्णारस - लक्खाणि, उणवीस-सहस्सयाणि छ्खवीसा ।

इगिवीस - जुव - सयंसा, पोक्खर - कुव-मंडले^३ खेतं ॥२८६४॥

१५१६०२६ । ३३३ ।

अर्थ :—पुष्करवरद्वीप सम्बन्धी कुरुओका मण्डलाकार (गोल) क्षेत्रका प्रमाण पन्द्रह-लाख उन्नीस हजार छब्बीस योजन और एकसौ इक्कीस भाग अधिक अर्थात् १५१९०२६३३३ यो० है ॥२८६५॥

सत्तारस - लक्ष्मार्णि, चोद्दस - जुव-ससहृपरि-सयार्णि ।

अद्दु-कलाओ पोक्खर - कुह - वंसए होवि वंक - इस् ॥२८६५॥

१७०७७१४।२१२।^१

अर्थ :—पुष्करवरद्वीप सम्बन्धी कुरुक्षेत्रका वक्रबाए सत्तरह लाख ससहत्तरसौ चौदह योजन और आठ कला (१७०७७१४२६३ यो०) प्रमाण है ॥२८६५॥

भद्रशाल-वनका विस्तार—

बे लक्खा पण्णारस - सहुस्स - सत्त - सय-अद्दु-वण्णाओ ।

पुण्णावरेण दीहं दीवद्धे भद्दसाल - वणं ॥२८६६॥

२१५७५८।

अर्थ :—पुष्कराधंद्वीपमे भद्रशालवनकी पूर्वापर लम्बाई दोलाख पन्द्रह हजार सातसौ अट्ठावन (२१५७५८) योजन प्रमाण है ॥२८६६॥

भद्दसाल-हंदा-२४५१।१११।

अर्थ :—भद्रशालवनका उत्तर-दक्षिण विस्तार (२१५७५८ यो० लम्बाई ÷ ८८) = २४५१११ योजन प्रमाण है ।

उत्तर-वक्खिण-भाग-ट्टिवाण जो होवि भद्दसाल - वणं ।

विकल्लंभो काल - वसा, उच्छिण्णो तस्स उवएसो ॥२८६७॥

अर्थ :—उत्तर-दक्षिण भागमे स्थित भद्रशालवनका जो कुछ विस्तार है, उसका उपदेश कालवस नष्ट हो गया है ॥२८६७॥

विशेषार्थ :—ऊपर जो २४५१११ यो० विस्तार कहा है वह उत्तर-दक्षिणका ही है । किन्तु गाथामे उसके उपदेशको नष्ट होना कहा गया है ।

गिरि-भद्दसाल-विजया, वक्खार - विभंग - सुरारण्णा ।

पुण्णावर - वित्थारा, पोक्खर - बीवे विवेहाणं ॥२८६८॥

अर्थ :—पुष्करवर्द्धीपमें विदेहोंके गिरि, भद्रशाल, विजय, वक्षार, विभंग-नदिवाँ और देवारण्य पूर्व-पश्चिम तक विस्तृत हैं ॥२८६८॥

मेवाँदिकोंके पूर्वापर विस्तारका प्रमाण—

एवाणं पत्तोक्कं, मंदर - सेलाण घरणि - पट्टम्मि ।

जोयण - चउणवदि - सया, विक्खंभो - पोक्खरद्धम्मि ॥२८६९॥

६४०० ।

अर्थ :—पुष्कराध्वंद्वीपमें इन मन्दर-पर्वतोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार पृथिवी-गृहपर नौ हजार चारसौ (६४००) योजन प्रमाण है ॥२८६९॥

दो लक्खा पण्णरसा, सहस्स-सत्तय-सवहु-वण्णाओ ।

जोयणया पुब्बावर - इंदो एककेक्क - भट्टसालाणं ॥२८७०॥

२१५७५८ ।

अर्थ :—प्रत्येक भद्रशालका पूर्वापर विस्तार दो लाख पन्द्रह हजार सातसौ अष्टावन (२१५७५८) योजन प्रमाण है ॥२८७०॥

उणवीस-सहस्साणि, सरा-सया जोयणाणि चउणउवी ।

चउ - भागो पत्तोक्कं, इंदो चउसट्ठि - विजयाणं ॥२८७१॥

१६७६४ । २ ।

अर्थ :—बीसठ विजयोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार उन्नीस हजार सातसौ चौरानवे और चतुर्थ-भागसे अधिक अर्थात् १६७६४ २/३ योजन है ॥२८७१॥

दु - सहस्स - जोयणाणि, वासा वक्खारयाण पत्तोक्कं ।

पंच - सय - जोयणाणि, विभंग - सरियाण विक्खंभो ॥२८७२॥

२००० । ५०० ।

अर्थ :—प्रत्येक वक्षारका विस्तार दो हजार (२०००) योजन और प्रत्येक विभंगनदीका विस्तार पाँचसौ (५००) योजन प्रमाण है ॥२८७२॥

एक्करस - सहस्साणि, जोयणया छस्सयाणि अउसीवी ।

पत्तोक्कं वित्थारो, देवारण्णाण बोण्हं पि ॥२८७३॥

११६८८ ।

अर्थ :—दोनों देवारण्योंमेंसे प्रत्येकका विस्तार ग्यारह हजार छहसी अठासी (११६८८)
योजन प्रमाण है ॥२८७३॥

मेर्वादिकोंके विस्तार निकालनेका विधान—

मंदरगिर - पट्टुदीर्ण, गिय-गिय-संखाए ताडिदे^१ वं दे ।

जं लद्धं तं गिय - गिय, वासाणं होइ विवफलं ॥२८७४॥

इट्ठण सेस - पिंढे, अट्टसु लक्खेसु सोहिदे सेसं^२ ।

गिय - संखाए भजिदे, गिय-गिय-वासा हवंति परोक्कं ॥२८७५॥

अर्थ :—इष्टरहित मन्दर पर्वतादिकोंके अपने-अपने विस्तारको अपनी-अपनी संख्यासे
गुणित करनेपर जो प्राप्त हो वह अपने-अपने द्वारा वद्ध विस्तार होता है । इन विस्तारोंका जो पिण्ड-
फल हो उस पिण्डफलको आठ लाखमेंसे घटाकर शेषको अपनी संख्यासे भाजित करनेपर प्रत्येकका
अपना-अपना विस्तार होता है ॥२८७४-२८७५॥

कच्छा और गन्धमालिनीकी सूची एवं उसकी परिधिका प्रमाण—

दुगुणम्मि भइसाले, मंदर - सेलस्स खिबसु विक्खंभं ।

मज्झिम-सूई-जुत्तं, सा सूची कच्छ - गंधमालिणिए ॥२८७६॥

एक्कत्तालं लक्खा, चालीस - सहस्स एव - सया सोलं ।

वो - मेरुणं बाहिर, दु - भइसालाण अंतो ति ॥२८७७॥

४१४०६१६ ।

अर्थ :—भद्रशालके दुगुने विस्तारमें मन्दर पर्वतका विस्तार मिलाकर जो प्राप्त हो उसे
मध्यम सूचीमें मिला देनेपर (वह) कच्छा और गन्धमालिनीकी सूची प्राप्त होती है । जिसका प्रमाण
दोनों मेरु-पर्वतोंके बाहर दोनों भद्रशालवनोंके अन्त तक इकतालीस लाख चालीस हजार नौसी सोलह
(४१४०६१६) योजन है ॥२८७६-२८७७॥

विशेषार्थ :—भद्रशालवनका विस्तार २१५७५८ यो०, मन्दरपर्वतका ६४०० योजन और
मध्यम सूचीका प्रमाण ३७ लाख यो० है । अतः (२१५७५८ × २) + ६४०० + ३७००००० =
४१४०६१६ यो० कच्छा और गन्धमालिनीकी सूचीका प्रमाण है ।

१. द. व. क. ज. उ. हाथिदं । २. द. व. क. ज. उ. तथिदं अट्टसु-लक्खेसु सोहिदे सण्णदेहेदं ।

३. द. क. ज. उ. गंधमालीए ।

तस्सूचीए परिही, एकं कोडो य तीस-लक्षार्णि ।

चउ-चउदि-सहस्रार्णि, सत्त - सया जोयणाणि छब्बीसं ॥२८७८॥

१३०६४७२६ ।

अर्थ :—इस सूचीकी परिधि एक करोड़ तीस लाख चौरानबे हजार सातसौ छब्बीस योजन प्रमाण है ॥२८७८॥

विशेषार्थ :—परिधि = $\sqrt{४१४०६१६२ \times १०} = १३०६४७२६$ योजन । $\frac{३३६११६३३}{१०००००००}$ योजन भवशेष बचे जो छोड़ दिए गये हैं ।

विदेहकी लम्बाई निकालनेका विधान ओर उस लम्बाईका प्रमाण—

पव्वव-विसुद्ध-परिही - सेसं चउसट्ठि - रुव - संमुणिवं ।

बारस - जुव - दु - सएहि, भजिवम्हि विदेह - बीहत्तं ॥२८७९॥

अर्थ :—इस परिधिमेंसे पर्वत-रुद्ध क्षेत्र घटाकर शेषको चौंसठसे गुणा कर दोसौ बारहका भाग देनेपर विदेहकी लम्बाईका प्रमाण आता है ॥२८७९॥

अट्ट-चउ-सत्त-पण-चउ-अट्ट-ति-अंक-क्कमेण जोयणया ।

बारस - अहिय - सयंसा, तट्ठाण विदेह - बीहत्तं ॥२८८०॥

३८४५७४८ । ३१३ ।

अर्थ :—आठ, चार, सात, पाँच चार, आठ और तीव इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ बारह भाग अधिक (कच्छा और गन्धमालिनीके पास) विदेहकी लम्बाई है ॥२८८०॥

विशेषार्थ :—गाथा २८४६ में पर्वतरुद्ध क्षेत्रका प्रमाण $३५५६८४\frac{५}{४}$ योजन कहा गया है

अतः— [($१३०६४७२६ - ३५५६८४\frac{५}{४}$) $\times ६४$] $\div २१२ = ३८४५७४८\frac{३३}{४}$ योजन विदेह की लम्बाई है ।

कच्छा और गन्धमालिनीकी आदिम लम्बाईका निरूपण—

सीबा - सीबोबारणं, वासं दु - सहस्स तम्मि अवणिज्जं ।

अवसेसद्धं बीहं, कणिट्ठयं कच्छ - गंधमालिणिए ॥२८८१॥

अर्थ :— इस (विदेहकी लम्बाई) मेंसे सीता-सीतोदा नदियोंका दो हजार योजन प्रमाण विस्तार घटा देनेपर जो शेष रहे उसके अर्धभाग-प्रमाण कच्छा और गन्धमालिनी देशकी कनिष्ठ (प्रादिम) लम्बाई है ॥२८८१॥

चउ^१-सत्तोदुक्क-दुगं, णव-एक्कं - वकमेण जोयणया ।

छावण्ण - कला बीहं, कणिठ्ठयं कच्छ - गंधमालिणिए ॥२८८२॥

१६२१८७४ । ३१२ ।

अर्थ :— चार, सात, आठ, एक, दो, नौ और एक इस अर्क-क्रमसे जो सख्या निमित्त हो उतने योजन और छप्पन कला अधिक कच्छा और गन्धमालिनीकी प्रादिम लम्बाई है ॥२८८२॥

विशेषार्थ :— (३८४५७४८३३३ — २०००) ÷ २ = १६२१८७४३१६ योजन प्रमाण प्रादिम लम्बाई है ।

विजयादिकोकी विस्तार-वृद्धिके प्रमाणका निरूपण—

विजयादीयां वासं, तव्वगं दस - गुणिज्ज तम्मूलं ।

गिण्हह^२ ततो पुह पुह, बत्तीस - गुणं च कादूणं ॥२८८३॥

बारस-जुव-दु-सएहि, भजिदूणं कच्छ^३ - रुंद - मेलविदं ।

णिय - रिया - ठाणे वासो, अद्ध - सख्वं विदेहस्स ॥२८८४॥

अर्थ :— विजयादिकोका जो विस्तार हो, उसके वर्गको दससे गुणा करके उसका वर्गमूल ग्रहण करे। पश्चात् उसे पृथक्-पृथक् बत्तीससे गुणा करके प्राप्त गुणफलमे दोसौ बारहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे कच्छा-देशके विस्तारमे मिलानेसे उत्पन्न राशि प्रमाण अपने-अपने स्थानपर अर्ध विदेहका विस्तार होता है ॥२८८४॥

क्षेत्रोंकी वृद्धिका प्रमाण—

णव - जोयणस्सहस्सा, चत्तारि सयाणि अट्टतालं पि ।

छप्पण - कलाओ तह विजयाणं होदि परिवड्ढी ॥२८८५॥

६४४८ । ३१२

अर्थ :— विजयो (क्षेत्रो) की वृद्धिका प्रमाण नौ हजार चारसौ अठतालीस योजन और छप्पन-कला अधिक है ॥२८८५॥

विशेषार्थ :- गाथा २८७१ में प्रत्येक क्षेत्रका विस्तार १६७६४ $\frac{१}{२}$ यो० कहा गया है ।
गाथा २८८३ - २८८४ के नियमानुसार— $\sqrt{[(१६७६४\frac{१}{२})^२ \times १० \times ३२]} \div २१२ = ६४४८\frac{३}{४}$ योजन क्षेत्रोंकी वृद्धिका प्रमाण है ।

वक्षार पर्वतो की वृद्धिका प्रमाण—

चउबण्णमहियाणि^१, सयाणि शब जोयणाणि तह भागा ।

बीसुत्तर - सयमेत्ता, बक्षार - गिरीण परिवड्डी ॥२८८६॥

६४४ । ३३३ ।

अर्थ :- नौसी जीवन योजन और एकसी बीस भाग प्रमाण वक्षार-पर्वतोंकी वृद्धिका प्रमाण है ॥२८८६॥

विशेषार्थ :- गाथा २८७२ में प्रत्येक वक्षारका विस्तार २००० योजन कहा गया है, अतः
 $\sqrt{[(२०००)^२ \times १० \times ३२]} \div २१२ = ६४४३\frac{३}{४}$ यो० वक्षार-वृद्धिका प्रमाण है ।

विभंग नदियोंकी वृद्धिका प्रमाण—

जोयण - सयाणि बोण्ण, अट्टत्तीसाहियाणि तह भागा ।

छत्तीस - उत्तर - सयं, विभंग - सरियाण परिवड्डी ॥२८८७॥

२३८ । ३३३ ।

अर्थ :- दोसी अड़तीस योजन और एकसी छत्तीस भाग अधिक विभंग-नदियोंकी वृद्धिका प्रमाण है ॥२८८७॥

विशेषार्थ :- गाथा २८७२ में प्रत्येक विभंग नदीका विस्तार ५०० योजन कहा गया है, अतः
 $\sqrt{[(५००)^२ \times १० \times ३२]} \div २१२ = २३८\frac{३}{४}$ यो० ।

देवारण्यके स्थानोंमें वृद्धिका प्रमाण—

पंच - सहस्ता जोयण, पंच - सया अट्टहत्तरी - जुषा ।

चउसीवि - जुब - सर्वसा, देवारण्णाण परिवड्डी ॥२८८८॥

५५७८ । ३६५ ।

अर्थ :— पाँच हजार पाँचसौ अठत्तर योजन और एकसौ चौरासी भाग प्रमाण देवारण्योंकी वृद्धिका प्रमाण है ॥२८८८॥

विशेषार्थ :— भाषा २८७३ में प्रत्येक देवारण्यका विस्तार ११६८८ योजन कहा गया है,

अतः— $\sqrt{[(11688)^2 \times 10 \times 32]} \div 212 = 55702.5$ योजन देवारण्यकी वृद्धिका प्रमाण है ।

विजयादिकों की आदि, मध्य और अन्तिम लम्बाई निकालनेका विधान—

विजयादीनां आदिम - दोहे बद्धि खिवेज्ज तं होवि ।

मज्झिम-दोहं मज्झिम - दोहे^१ तं खिवसु अंत - दोहत्तं ॥२८८९॥

अर्थ :— विजयादिकोंकी आदिम लम्बाईमें उपर्युक्त वृद्धि-प्रमाण मिला देनेपर उनकी मध्यम लम्बाईका प्रमाण और मध्यम लम्बाईमें वह वृद्धि-प्रमाण मिला देनेसे उनकी अन्तिम लम्बाई का प्रमाण प्राप्त होता है ॥२८८९॥

कच्छा और गन्धमालिनी देशोंकी मध्यम लम्बाई—

दो-दो-तिय-द्विग-तिय-अव-एकं अंक - कमेण अंसा य ।

बारहतर-एक-सयं, मज्झिम्मल्लं कच्छ - गंधमालिणिए ॥२८९०॥

१६३१३२२ । ३१३ ।

अर्थ :— दो, दो, तीन, एक, तीन, नौ और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ बारह भाग अधिक कच्छा और गन्धमालिनी देशोंकी मध्यम लम्बाई है ॥२८९०॥

भाषा २८८२ में आदिम लम्बाई १६२१८७४ $\frac{१}{२}$ योजन प्रमाण कही गई है अतः—

$1621874\frac{1}{2} + 16852\frac{1}{2} = 1638727$ योजन मध्यम लम्बाई ।

दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम और चित्रकूट एवं देवमाल वक्षारोंकी आदिम लम्बाईका प्रमाण—

अभ-सप्त-सप्त-अभ-चउ-अवेक-अंक-अकमेण अंसा य ।

अड^२ - सट्टि - सयं विजय-दु-अक्षार-गगाणभंतमाबिल्लं ॥२८९१॥

१६४०७७० । ३१६ ।

अर्थ :—शून्य, सात, सात, शून्य, चार, नौ और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और एकसौ अड़सठ भाग अधिक उपयुक्त दोनों क्षेत्रों तथा (चित्रकूट और देवमाल नामक) दो वक्षार-पर्वतोंकी क्रमशः अन्तिम और आदिम लम्बाई है ॥२८६१॥

$$१९३१३२२३३३ + ६४४८२१३ = १६४०७७०३१६ योजन ।$$

दोनो वक्षारोकी मध्यम लम्बाई—

पण-दो-सग-इगि-चउरो, णवेक्क जोयण छहत्तरी अंसा ।

मङ्गिल्ल चित्तकूडे, होदि तहा देवपण्ण दीहं ॥२८६२॥

$$१६४१७२५ । ३१३ ।$$

अर्थ :—पाँच, दो, सात, एक, चार, नौ और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और छहत्तर भाग प्रमाण अधिक चित्रकूट एवं देवमाल पर्वतोंकी मध्यम लम्बाई (१६४१७२५२१३ योजन) है ॥२८६२॥

$$१६४०७७०३१६ + ६४४३३३३ = १६४१७२५२१३ यो० ।$$

दोनो वक्षारोकी अन्तिम और दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

णव-सग-छ-दो-चउ-णव-इगि कल छण्णउदि-अहिय-सयमेक्कं ।

दो - ववखार - गिरीणं, अंतिम आदी सुकच्छ - गंधिलए ॥२८६३॥

$$१६४२६७६ । ३१३ ।$$

अर्थ :—नौ, सात, छह, दो, चार, नौ और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और एकसौ छहानव भाग अधिक दोनों वक्षार-पर्वतोंकी अन्तिम तथा सुकच्छा और गन्धिला देशोंकी आदिम लम्बाई (१६४२६७६३१३ योजन) है ॥२८६३॥

$$१६४१७२५२१३ + ६४४३३३३ = १६४२६७६३१३ यो० है ।$$

दोनों देशोंकी मध्यम लम्बाई—

अट्ट - दुगेक्कं दो - पण - णवेक्क अंसा य तालमेत्ताणि ।

मङ्गिल्लय - दीहत्तां, बिजयाए सुकच्छ - गंधिलए ॥२८६४॥

$$१६४२१२८ । २१३ ।$$

अर्थ :- आठ, दो, एक, दो, पाँच, नौ और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या निमित्त हो उतने योजन और चालीस भाग प्रमाण अधिक सुकच्छा और गन्धिला देशकी मध्यम लम्बाई (१९५२१२८३९२ यो०) है ॥२८१५॥

$$१९४२६७६३३३ + ९४४८३३३ = १९५२१२८३९२ यो० है ।$$

दोनों देशोंकी अन्तिम और दो विभंगा नदियोंकी आदिम लम्बाई—

छ्त्रसग-पण-इगि-छ्णव-एककं अंसा य ह्योति छ्णउदी ।

दो - विजयाणं अंतं, आदिल्लं दोणिण - सरियाणं ॥२८१५॥

$$१९६१५७६ । ३३३ ।$$

अर्थ :- छह, सात, पाँच, एक, छह, नौ और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और छयानव भाग अधिक (१९६१५७६३३३ यो०) दोनों देशोंकी अन्तिम तथा द्रहवती और ऊर्मिमालिनी नामक दो नदियोंकी आदिम लम्बाई है ॥२८१५॥

$$१९५२१२८३९२ + ९४४८३३३ = १९६१५७६३३३ योजन ।$$

दोनों विभगा नदियोंकी मध्यम लम्बाई—

पण-इगि-अट्टिणि-छ्णव-एककं अंसा य दोसमेत्ताणि ।

वहवदी - उम्मिमालिणि - मञ्जिभमयं होवि दीहत्तं ॥२८१६॥

$$१९६१८१५ । ३३३ ।$$

अर्थ :- पाँच, एक, आठ, एक, छह, नौ और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बीस भाग प्रमाण अधिक (१९६१८१५३३३ यो०) द्रहवती और ऊर्मिमालिनी नदियोंकी मध्यम लम्बाई है ॥२८१६॥

$$१९६१५७६३३३ + २३८३३३ = १९६१८१५३३३ योजन ।$$

दोनों नदियोंकी अन्तिम और दो क्षेत्रोंकी आदिम लम्बाई—

तिय-पण-खं-दुग-छ्णव-एककं छ्णण-सहिय-सय-अंसा ।

दोहिणं णईणं अंतं, महकच्छ - सुवग्गुए आदी ॥२८१७॥

$$१९६२०५३ । ३३३ ।$$

अर्थ :—तीन, पाँच, शून्य, दो, छह, नौ और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने बोजन और एकलौ छप्यन भाग अधिक दोनों नदियोंकी अन्तिम तथा महाकच्छा और सुबल्यु (सुगन्धा) नामक दो क्षेत्रोंकी आदिम लम्बाई (१९६२०५३३११ यो०) है ॥२८६७॥

$$१९६१८१५३३११ + २३८३३३ = १९६२०५३३११ \text{ योजन ।}$$

दोनों क्षेत्रोंकी मध्यम लम्बाई—

दु-स-पंच-एक-सप्त-अष्ट-एक अंक - बकनेस जोयणया ।

महाकच्छा - सुबल्युए, दोहसं मञ्जिम - पदसे ॥२८६८॥

$$१९७१५०२ ।$$

अर्थ :—दो, शून्य, पाँच, एक, सात, नौ और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने (१९७१५०२) योजन प्रमाण महाकच्छा और सुबल्यु (सुगन्धा) क्षेत्रोंके मध्यम प्रदेशमें लम्बाई है ॥२८६८॥

$$१९६२०५३३११ + ९४४८३३ = १९७१५०२ \text{ यो० ।}$$

दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम और दो बलार-पर्वतोंकी आदिम लम्बाई—

सप्त-अष्ट-अष्ट-अष्ट-अष्ट-अष्ट-एक अंसा य ह्योति छप्यणं ।

दोहं विजयासंतं, दोहं पि गिरीणमादित्तं ॥२८६९॥

$$१९८०९५० । ३३३ ।$$

अर्थ :—शून्य, पाँच, नौ, शून्य, आठ, नौ और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और छप्यन भाग अधिक दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम तथा पञ्चकूट और सूर्य नामक दो पर्वतोंकी आदिम लम्बाई (१९८०९५०३३३ यो०) है ॥२८६९॥

$$१९७१५०२ + ९४४८३३ = १९८०९५०३३३ \text{ यो० है ।}$$

दोनों बलार-पर्वतोंकी मध्यम लम्बाई—

अष्ट-अष्ट-अष्ट-द्वि-अष्ट-अष्ट-एक अंसा सयं छहसरियं ।

वर - पठम - कूड तह सूर - पञ्चए मञ्ज - दोहसं ॥२९००॥

$$१९८१९०४ । ३३३ ।$$

अर्थ :—चार, शून्य, नौ एक, आठ, नौ और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छपत्तर भाग अधिक उत्तम पणकूट तथा सूर्य पर्वतकी मध्यम लम्बाईका प्रमाण ($१६८१६०४३१\frac{१}{२}$ यो०) है ॥२६००॥

$$१६८०६५०२\frac{१}{२} + ६५४३३३ = १६८१६०४३१\frac{१}{२} \text{ यो० ।}$$

दोनो पर्वतोंकी अन्तिम और दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

णव-पण-अड-बुग-अड-णव-एककं अंसा य होंति चुलसीदो ।

अंतं दोसु गिरीणं, आदो वग्गुए कच्छकावदिए ॥२६०१॥

$$१६८२८५६ । ३१\frac{१}{२} ।$$

अर्थ :—नौ, पाँच, आठ, दो, आठ, नौ और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौरासी भाग अधिक दोनो पर्वतोंकी अन्तिम तथा वल्गु (गन्धा) और कच्छकावती देशकी आदिम लम्बाई ($१६८२८५६३१\frac{१}{२}$ यो०) है ॥२६०१॥

$$१६८१६०४३१\frac{१}{२} + ६५४३३३ = १६८२८५६३१\frac{१}{२} \text{ यो० ।}$$

दोनो देशोंकी मध्यम लम्बाई—

सग-णभ-तिथ-बुग-णव-णव-एककं अंसा य चाल ग्रहिय-सयं ।

मज्झिल्लय दीहणं, वग्गुए कच्छकावदिए ॥२६०२॥

$$१६६२३०७ । ३१\frac{१}{२} ।$$

अर्थ :—सात, शून्य, तीन, दो, नौ, नौ और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चालीस भाग अधिक वल्गु (गन्धा) एवं कच्छकावतीकी मध्यम लम्बाईका प्रमाण ($१६६२३०७३१\frac{१}{२}$ यो०) है ॥२६०२॥

$$१६६२८५६३१\frac{१}{२} + ६५४३३३ = १६६२३०७३१\frac{१}{२} \text{ यो० ।}$$

दोनो देशोंकी अन्तिम और दो विभगा नदियोंकी आदिम लम्बाई—

पण-पण-सग-इगि-खं-एणभ-दो च्चिय अंसा छणउवि-अहिय-सयं ।

दोण्हं विजयाणंतं, आदिल्लं दोसु सरियाणं ॥२६०३॥

$$२००१७५५ । ३१\frac{१}{२} ।$$

अर्थ :—पाँच, पाँच, सात, एक, शून्य, शून्य और दो इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छपानबे भाग अधिक दोनों देशोंकी अन्तिम तथा ग्रहवती और फेनमालिनी नामक दो विभग-नदियोंकी आदिमलम्बाईका प्रमाण ($२००१७५५३१\frac{१}{२}$ योजन है ॥२६०३॥

$$१६६२३०७३१\frac{१}{२} + ६५४३३३ = २००१७५५३१\frac{१}{२} \text{ योजन है ।}$$

दोनो नदियोकी मध्यम लम्बाई—

चउ-राव-णव-इगि-खं-णभ-दो च्चिय भ्रंसा य बीस-अहिय-सयं ।

मञ्जिभल्ल - गहवदीए, दोहत्तं फेणमालिणिए ॥२६०४॥

२००१६६४ । ३३३ ।

अर्थ :- चार, नौ, नौ, एक, शून्य, शून्य और दो, इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ बीस भाग अधिक ग्रहवती और फेणमालिनी नदीकी मध्यम लम्बाईका प्रमाण (२००१६६४३३३ योजन) है ॥२६०४॥

$२००१७५५३३३ + २३८३३३ = २००१६६४३३३$ योजन है ।

दोनो नदियोकी अन्तिम तथा दो क्षेत्रोकी आदिम लम्बाई—

तिय-तिय-दो-दो-खण्णभ-दो च्चिय भ्रंसा तहेव चउदालं ।

अंतं दो - सरियाणं, आदी आवत्त - वप्पकावदिए ॥२६०५॥

२००२२३३ । २५५ ।

अर्थ :- तीन, तीन, दो, दो शून्य, शून्य और दो इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चवालीस भाग अधिक दोनो नदियोकी अन्तिम तथा आवर्ता एवं वप्रकावती क्षेत्रकी आदिम लम्बाई (२००२२३३३५५ यो०) है ॥२६०५॥

$२००१६६४३३३ + २३८३३३ = २००२२३३३५५$ यो० ।

दोनो क्षेत्रोकी मध्यम लम्बाई—

एक्कट्ट-छ-एक्केक्कं, खं - दुग भ्रंसा तहेव एक्क - सयं ।

मञ्जिभल्लय - दोहत्तं, आवत्ता - वप्पकावदिए ॥२६०६॥

२०११६८१ । ३३३ ।

अर्थ :- एक, आठ, छह, एक, एक, शून्य और दो इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ भाग अधिक आवर्ता तथा वप्रकावती क्षेत्रोकी मध्यम लम्बाई (२०११६८१३३३ यो०) है ॥२६०६॥

$२००२२३३३५५ + ६४४८३३३ = २०११६८१३३३$ यो० ।

दोनो क्षेत्रोकी अन्तिम तथा दो वक्षार पर्वतोकी आदिम लम्बाई—

णव-दुगिगि-बोहिह-खं दुग, अंसा छप्पण-अहिय-एक्कसयं ।

दो - विजयाणं अंतं, आविल्लं नलिण - णाग - णगे ॥२६०७॥

२०२११२६ । ३५१ ।

अर्थ :— नौ, दो, एक, एक, दो, शून्य और दो, इस अक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छप्पन भाग अधिक दोनो क्षेत्रोकी अन्तिम तथा नलिन एव नाग पर्वतकी आदिम लम्बाई (२०२११२६३५१ योजन) है ॥२६०७॥

$$२०११६८१३९२ + ६४४८२५३ = २०२११२६३५१ \text{ यो० ।}$$

दोनो वक्षार पर्वतोकी मध्यम लम्बाई—

चउ-अड-खं-दुग-दु-ख-दो, 'अंक-कमे जोयणाणि अंसा य ।

चउसट्ठी मज्झिल्ले, राग - णगे नलिण - कूडम्मि ॥२६०८॥

२०२२०८४ । ३५३ ।

अर्थ :— चार, आठ, शून्य, दो, दो, शून्य और दो, इस अक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौसठ भाग अधिक नाग-नगकी और नलिन वृटकी मध्यम लम्बाईका प्रमाण (२०२२०८४३५३ यो०) है ॥२६०८॥

$$२०२११२६३५३ + ६४४३३३३ = २०२२०८४३५३ \text{ यो० ।}$$

दोनो पर्वतोकी अन्तिम और दो क्षेत्रोकी आदिम लम्बाई—

अड-तिय-णभ-तिय-दुग-णभ-दो च्चिय अंसा सयं च खुलसीदो ।

दोसु गिरीणं अंतं, आविल्लं दोसु विजयाणं ॥२६०९॥

२०२३०३८ । ३६३ ।

अर्थ :— आठ, तीन, शून्य, तीन, दो शून्य और दो, इस अक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चौरासी भाग अधिक दोनो पर्वतोकी अन्तिम तथा लांगलावर्ता एवं महावप्रा देशकी आदिम लम्बाई (२०२३०३८३६३ यो०) है ॥२६०९॥

$$२०२२०८४,३५३ + ६४४३३३३ = २०२३०३८३६३ \text{ यो० ।}$$

दोनों क्षेत्रोंकी मध्यम लम्बाई—

सग-अउ-चउ-बुग-तिय-णभ-दो चिचय-अंसा तहेव चुलसीदी ।

मञ्जिभल्लय - वीहस, महवप्पे लंगलावत्ते ॥२६१०॥

२०३२४८७ । ३६२ ।

अर्थ :—सात, आठ, चार, दो, तीन, शून्य और दो, इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और अट्टाईसभाग अधिक महावप्रा एव लंगलावर्तकी मध्यम लम्बाईका प्रमाण (२०३२४८७३६२ यो०) है ॥२६१०॥

$२०३२०३८३६३ + ६४४८३६२ = २०३२४८७३६२$ यो० ।

दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम और दो विभंगा नदियोंकी आदिम लम्बाई—

पण-तिय-णव-इगि-चउ-णभ-दोणिय अंसा तहेव चुलसीदी ।

दो - विजयाणं अंतं, आदिल्लं दोसु सरियाणं ॥२६११॥

२०४१९३५ । ६५२ ।

अर्थ :—पाँच, तीन, नौ, एक, चार, शून्य और दो, इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौरासी भाग अधिक दोनों विजयोंकी अन्तिम तथा गम्भीरमालिनी एव पंकवती नामक दो नदियोंकी आदिम लम्बाई (२०४१९३५६५२ योजन) है ॥२६११॥

$२०३२४८७३६३ + ९४४८३६२ = २०४१९३५६५२$ यो० ।

दोनों नदियोंकी मध्यम लम्बाई—

चउ-सस-एक्क-बुग-चउ-णभ-दो अंसा कमेण अट्टं च ।

गम्भीरमालिणीए, मञ्जिभल्लं पंकवविगाए ॥२६१२॥

२०४२१७४ । २६२ ।

अर्थ :—चार, सात, एक, दो, चार, शून्य और दो, इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और आठ भाग अधिक गम्भीरमालिनी एवं पंकवती नदियोंकी मध्यम लम्बाई (२०४२१७४२६२ योजन) है ॥२६१२॥

$२०४१९३५६६५ + २३८३६६ = २०४२१७४२६२$ यो० ।

दोनों नदियोंकी अन्तिम और दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

दुग-एकक-चउ-दु-चउ-गभ-दो चिचय अंसा सयं च चउडबालं ।

दोष्णि गवीरुं अंतं, आबिल्लं दोसु विजयाणं ॥२६१३॥

२०४२४१२ । ३३३ ।

अर्थ :—दो, एक, चार, दो, चार, शून्य और दो इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एक सौ चवालीस भाग अधिक दोनों नदियोंकी अन्तिम और पुष्कला तथा सुवप्रा नामक दो क्षेत्रोंकी आदिम लम्बाई (२०४२४१२३३३ यो०) है ॥२६१३॥

२०४२१७४६२ + २३८३३३ = २०४२४१२३३३ यो० ।

दोनों क्षेत्रोंकी मध्यम लम्बाई—

गभ-छ्वकड-इगि-पण-गभ-दो चिचय अंसाणि दोष्णि-सयमेत्तं ।

मजिभल्लय - वीहत्तं, पोक्कल - बिजए सुवप्पाए ॥२६१४॥

२०५१८६० । ३९२ ।

अर्थ :—शून्य, छह, आठ, एक, पाँच, शून्य और दो, इस अंक क्रमसे जो संख्या निमित्त हो उतने योजन और दो सौ भाग प्रमाण अधिक पुष्कला एवं सुवप्रा विजयकी मध्यम लम्बाई (२०५१८६०३९२ यो०) है ॥२६१४॥

२०४२४१२३३३ + ६४४८३९२ = २०५१८६०३९२ यो० ।

दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम और दो वक्षार पर्वतोंकी आदिम लम्बाई—

गव-गभ-तिय-इगि-छण्णभ-दो चिचय अंसा य होंति चउडबालं ।

दो - विजयाणं अंतं, आबिल्लं एकसेल - चंद - णे ॥२६१५॥

२०६१३०६ । ४४२ ।

अर्थ :—नौ, शून्य, तीन, एक, छह, शून्य और दो, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चवालीस भाग अधिक दोनों विजयोंकी अन्तिम तथा एकशैल और चन्द्रनगकी आदिम लम्बाई (२०६१३०६४४२ योजन) है ॥२६१५॥

२०५१८६०३९२ + ६४४८३९२ = २०६१३०६४४२ यो० ।

दोनों वक्षार-पर्वतोंकी मध्यम लम्बाई—

तिय-छ-दो-दो-छण्णभ-दो चिचय अंसा सयं च चउडसुत्ती ।

मजिभल्लय - वीहत्तं, होवि पुढं एकसेल - चंदणे ॥२६१६॥

२०६२२६३ । ३९३ ।

अर्थ :- तीन, छह, दो, दो, छह, शून्य और दो, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चौंसठ भाग अधिक एकशैल एवं चन्द्रनगकी मध्यम लम्बाई (२०६२२६३३१६ यो०) है ॥२६१६॥

$$२०६१३०६२३३ + ६५४३३३ = २०६२२६३३१६ यो० ।$$

दोनों पर्वतोंकी अन्तिम और दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

अट्टिगि-दुग-तिग-छण्णभ-वो च्चिय अंसा' बुहत्तरी अंतं ।

दीहं दोसु गिरीणं, आदी वप्पाए पोक्खलावदिए ॥२६१७॥

$$२०६३२१८ । ३३३ ।$$

अर्थ :- आठ एक, दो, तीन, छह, शून्य और दो, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बहुत्तर भाग अधिक दोनों पर्वतोंकी अन्तिम तथा वप्रा एव पुष्कलावती देशकी आदिम लम्बाई (२०६३२१८३३३ यो०) है ॥२६१७॥

$$२०६२२६३३३३३ + ६५४३३३ = २०६३२१८३३३ यो० ।$$

दोनों देशोंकी मध्यम लम्बाई—

छण्णवक-छण्णक-दुग-सग-एभ-दुग अंसा सयं च अडवीसं ।

मडिभल्लय - दीहत्तां, वप्पाए पोक्खलावदिए ॥२६१८॥

$$२०७२६६६ । ३३३ ।$$

अर्थ :- छह, छह, छह, दो, सात, शून्य और दो इस अंक क्रमसे जो संख्या निमित्त हो उतने योजन और एकसौ अट्ठाईस भाग अधिक वप्रा एवं पुष्कलावती देशकी मध्यम लम्बाईका प्रमाण (२०७२६६६३३३ यो०) है ॥२६१८॥

$$२०६३२१८३३३ + ६५४३३३ = २०७२६६६३३३ यो० ।$$

दोनों देशोंकी अन्तिम और देवारण्य एव भूतारण्यकी आदिम लम्बाई—

चउ-एक्क-एक्क-दुग-अड-णभ-दो अंसा सयं च च्चुलसीदी ।

वप्पाए अंत - दीहं, आदिल्लं देव - भूवरण्णाणं ॥२६१९॥

$$२०८२११४ । ३३३ ।$$

अर्थ :- चार, एक, एक, दो, आठ, शून्य और दो, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चौरासी भाग अधिक वप्रा (और पुष्कलावती) देशकी अन्तिम तथा देवारण्य एव भूतारण्यकी आदिम लम्बाई (२०८२११४३३३ योजन) है ॥२६१९॥

$$२०७२६६६३३३ + ६५४३३३ = २०८२११४३३३ यो० ।$$

देवारण्य-भूतारण्यकी मध्यम लम्बाई—

तिय-णव-छत्सग-अड-णभ-दो च्चिय अंसा सयं च छप्पणं ।

मज्झिमल्लय - दीहत्तां, पत्तोक्कं देव - भूदरणाणं ॥२६२०॥

२०८७६६३३११३ । ३११३ ।

अर्थ :—तीन, नौ, छह, मात, आठ, शून्य और दो, इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छप्पन भाग अधिक देवारण्य एव भूतारण्यमेसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई (२०८७६६३३११३ यो०) है ॥२६२०॥

२०८२११४३६३ + ५५७८३६३ - २०८७६६३३११३ यो० ।

देवारण्य-भूतारण्यकी अन्तिम लम्बाई—

दो-सग-दुग-तिग-णव-णभ-दो च्चिय अंसा सयं च अडवीसं ।

पत्तोक्कं अंतिल्लं, दीहत्तां देव - भूदरणाणं ॥२६२१॥

२०६३२७२ । ३११३ ।

अर्थ :—दो, सात, दो, तीन, नौ, शून्य और दो इम अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ अट्ठाईस भाग अधिक देवारण्य एव भूतारण्यमेसे प्रत्येक अन्तिम लम्बाईका प्रमाण (२०६३२७२३१३ योजन) है ॥२६२१॥

२०८७६६३३११३ + ५५७८३६३ = २०६३२७२३१३ यो० ।

अन्य अत्रादिकोंकी लम्बाईका प्रमाण जात करनेकी विधि—

कच्छादि - प्पमुहाणं तिबिह - वियप्पं णिरुचिद सव्वं ।

विजयाए मंगलावदि - पमुहाए तं च वत्तव्वं ॥२६२२॥

अर्थ :—कच्छादिकोंकी तीन प्रकारकी लम्बाईका सम्पूर्ण कथन किया जा चका है । अथ मंगलावती-प्रमुख क्षेत्रादिकोंकी लम्बाईका प्रमाण बतलाया जाता है ॥२६२२॥

कच्छाविसु विजयाणं, आदिम-मज्झिमल्ल-चरिम-दीहत्तां ।

विजयड्ढ - रुंमवणिय, अद्ध-कदे इच्छिदस्स दीहत्तां ॥२६२३॥

अर्थ :—कच्छादिक क्षेत्रोंकी आदिम, मध्यम और अन्तिम लम्बाईमेंसे विजयार्धके विस्तार को घटाकर शेषको आधा करनेपर इच्छित क्षेत्रोंकी लम्बाईका प्रमाण प्राप्त होता है ॥२६२३॥

पश्चात् देशसे मंगलावती देश पर्यन्तकी सूचीका प्रमाण प्राप्त करनेकी विधि—

सोहसु मञ्जिभूम - सूडए, मेरुगिरि' दुगुण-भद्रशाल-वणं ।

सा सूई पम्मावी, परियतं मंगलावदिए ॥२६२४॥

अर्थ :—पुष्करार्धकी मध्यम सूचीमेंसे मेरु-पर्वत और दुगुने भद्रशालवनके विस्तारको घटा देनेपर जो शेष रहे उतना मंगलावतीसे पश्चादि देश पर्यन्त सूचीका प्रमाण है ॥२६२४॥

विशेषार्थ :—उपयुक्त गायानुसार सूची व्यास इसप्रकार है—पुष्करार्ध द्वीपका मध्यम सूची व्यास ३७ लाख योजन, मेरु विस्तार ६४०० योजन तथा भद्रशालका दुगुना विस्तार $(२१५७५८ \times २) = ४३१५१६$ योजन है अतः $३७००००० - (६४०० + ४३१५१६) = ३२५६०८४$ योजन है ।

किन्तु सूची व्यासके इस प्रमाण को, इसकी परिधिके प्रमाणको, विदेह क्षेत्रकी लम्बाई प्राप्त करनेकी विधि एवं विदेह क्षेत्रकी लम्बाईके प्रमाणको प्रदर्शित करनेवाली ४ गाथाएँ छूटी हुई ज्ञात होती हैं । जिनका गणित निम्न प्रकार है—

पश्चात्से मंगलावती पर्यन्तकी सूचीका प्रमाण— ३२५६०८४ यो० है ।

इसकी परिधिका प्रमाण— $\sqrt{३२५६०८४^२ \times १०} = १०३०६१२६$ योजन है ।

विदेह क्षेत्रकी लम्बाई = $\frac{(परिधि - पर्वतरुद्ध क्षेत्र) \times ६४}{२१२}$

$$= \frac{(१०३०६१२६ - ३५५६८४\frac{१}{२}) \times ६४}{२१२}$$

$$= \frac{(६६५०४४४\frac{१}{२}) \times ६४}{२१२} = ३००३६०७३\frac{१}{२} यो० ।$$

पश्चात् एवं मंगलावती क्षेत्रकी आदिम लम्बाई—

तिदय-परा-णव' -ख-णभ-पण-एकं अंसा चउत्तरं दु-सयं ।

अंक - कमे दीहचं, आदित्तल - प्पउम - मंगलावदिए ॥२६२५॥

१५००६५३ । ३९५ ।

अर्थ :—तीन, पाँच, नौ, शून्य, शून्य, पाँच और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और दोसी चार भाग अधिक पद्या तथा मंगलावतीक्षेत्रकी आदिम लम्बाईका (१५००६५३३९३ योजन) प्रमाण है ॥२६२५॥

विशेषार्थ :—पद्या और मंगलावती देशोकी लम्बाई

$$= \frac{\text{विदेहकी लम्बाई} - \text{सीतोदाका विस्तार}}{२}$$

$$= \frac{३००३६०७३३३ - २००० \text{ यो०}}{२} = \frac{३००१६०७३३३}{२}$$

$$= १५००६५३३९३ \text{ योजन है ।}$$

दोनो क्षेत्रोकी मध्यम लम्बाई—

पण-गभ-पण-इगि-णव-चउ-एककं अंसा सयं च अइवालं ।

मञ्जिल्लय - दीहत्, पम्माए मंगलावविए ॥२६२६॥

$$१४६१५०५ । ३३६ ।$$

अर्थ :—पाँच, शून्य, पाँच, एक, नौ, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ अड़तालीस भाग अधिक पद्या एव मंगलावती क्षेत्रकी मध्यम लम्बाई (१४६१५०५३३६ यो०) है ॥२६२६॥

$$१५००६५३३९३ - ६४४८३३३ = १४६१५०५३३६ \text{ योजन ।}$$

दोनो क्षेत्रोकी अन्तिम और दो वक्षार-पर्वतोकी आदिम लम्बाई—

सग-पण-गभ-वुग-अड-चउ-एककं अंसा कमेण बाणउवो ।

दो - विजयाणं अत्तं, 'वक्खार - णगाण आदिल्लं ॥२६२७॥

$$१४८२०५७ । ३३३ ।$$

अर्थ :—सात, पाँच, शून्य, दो, आठ, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बानबे भाग अधिक दोनो क्षेत्रोकी अन्तिम एव अट्टावान् और आत्माञ्जनवक्षार-पर्वतोकी आदिम लम्बाई (१४८२०५७३३३ यो०) है ॥२६२७॥

$$१४६१५०५३३६ - ६४४८३३३ = १४८२०५७३३३ \text{ यो० ।}$$

दोनों वक्षार-पर्वतोंकी मध्यम लम्बाई—

दुग्-जभ-एकिकि-अड-चउ-एककं अंसा सयं च चुलसीदी ।

सड्ढावदिमायंजण^१ - गिरिम्मि मज्झल्ल - दीहत्तं ॥२६२८॥

$$१४८११०२ । ३६३ ।$$

अर्थ :—दो शून्य, एक, एक आठ, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसी चौरासी भाग अधिक थडावान् और आत्माजन पर्वतकी मध्यम लम्बाई (१४८११०२३६३ यो०) है ॥२६२८॥

$$१४८२०५७३६३ — ६५४३३३ = १४८११०२३६३ यो० ।$$

दोनों पर्वतोंकी अन्तिम तथा दो क्षेत्रोंकी आदिम लम्बाई—

अट्ट-चउ-एकक-जभ-अड-चउ-एककंसा कमेण चउसट्ठी ।

दोसु गिरीणं अंतं, आदीओ दोणिए - विजयाणं ॥२६२९॥

$$१४८०१४८ । ३६३ ।$$

अर्थ :—आठ, चार, एक, शून्य, आठ, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौसठ भाग अधिक दोनों पर्वतोंकी अन्तिम और सुपचा एव रमणीया नामक दो देशोंकी आदिम लम्बाईका प्रमाण (१४८०१४८३६३ योजन) है ॥२६२९॥

$$१४८११०२३६३ — ६५४३३३ = १४८०१४८३६३ योजन ।$$

दोनों क्षेत्रोंकी मध्यम लम्बाई—

खं-जभ-सग-एजभ-सग-चउ-इगि-अंसा अट्ट^३ मज्झ-दीहत्तं ।

पत्तेक सुपम्माए, ^३रमणिज्जा - णाम - विजयाए ॥२६३०॥

$$१४७०७०० । ३६३ ।$$

अर्थ :—शून्य, शून्य, सात, शून्य, सात, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और आठ भाग प्रमाण अधिक सुपचा तथा रमणीया नामक दो देशोंमेसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई (१४७०७००३६३ यो०) है ॥२६३०॥

$$१४८०१४८३६३ — ६५४३३३ = १४७०७००३६३ यो० ।$$

दोनो क्षेत्रोकी अन्तिम और दो विभंग नदियोकी आदिम लम्बाई—

इगि-पण-दो-इगि-छ-चउ-एक्का अंसा सयं च चउसट्टी ।

दो-विजयाणं अंतं, आविल्लं दो - विभंग - सरियाणं ॥२६३१॥

$$१४६१२५१ । ३१५ ।$$

अर्थ :— एक, पांच, दो, एक, छह, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो सख्या निमित्त हो उतने योजन और एकसी चौसठभाग अधिक दोनो क्षेत्रोकी अन्तिम तथा क्षीरोदा एव उन्मत्तजला नामक दो विभंग-नदियोकी आदिम लम्बाई (१४६१२५१३१५ यो०) है ॥२६३१॥

$$१४७०७०० \times \frac{१}{३६} = ४४४८२५० = १४६१२५१३१५ यो० ।$$

दोनो विभंग नदियोकी मध्यम लम्बाई -

तिय-इगि-णभ-इगि-छ-चउ-एक्का अंसा तहेव अडबीसं ।

मज्झिल्लं खीरोदे', उन्मत्त - णइम्मि पत्तेक्कां ॥२६३२॥

$$१४६१०१३ । ३२३ ।$$

अर्थ :— तीन, एक, शून्य, एक, छह, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और अट्ठाईस भाग अधिक क्षीरोदा एव उन्मत्तजला नदियोमेमे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई (१४६१०१३२३ यो०) है ॥२६३२॥

$$१४६१२५१३१५ - २३८३३३ = १४६१०१३२३ यो० ।$$

दोनो नदियोकी अन्तिम और दो देशोकी आदिम लम्बाई—

चउ-सग-सग-णभ-छक्कां, चउ-एक्कांसा सयं च चउरहियं ।

दोणंणं राईणमंतिम - दोहं प्रादिल्ल - दोसु विजयाणं ॥२६३३॥

$$१४६०७७४ । ३९३ ।$$

अर्थ :— चार, सात, सात, शून्य, छह, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसी चार भाग अधिक दोनो नदियोकी अन्तिम तथा महापथा एव सुरम्या नामक दो देशोकी आदिम लम्बाई (१४६०७७४३९३ यो०) है ॥२६३३॥

$$१४६१०१३२३३ + २३८३३३ = १४६०७७४३९३ यो० ।$$

दोनों देशोंकी मध्यम लम्बाई—

छ-हो-तिय-इगि-पण-चउ-एक्कं अंसा तहेव प्रडवालं ।

मञ्जिभूत्तलय - वित्थारं, 'महपम्म - सुरम्म - विजयाए ॥२६३४॥

१४५१३२६ । ३६६ ।

अर्थ :— छह, दो, तीन, एक, पाँच, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और अडतालीस भाग अधिक महापद्या और सुरम्या नामक देशका मध्यम विस्तार (लम्बाई १४५१३२६३६ यो०) है ॥२६३४॥

$१४६०७७४३१३ + ६४४८३६६ = १४५१३२६३६६$ यो० ।

दोनों देशोंकी अन्तिम और दो वक्षार-पर्वंतोंकी आदिम लम्बाई—

सग-सग-अड-इगि-चउ-चउ-एक्कं अंसा य बु-सय-चउरहियं ।

बो - विजयाणं अंतं, आवित्तं बोसु चक्खारे ॥२६३५॥

१४४१८७७ । ३१३ ।

अर्थ :— सात, सात, आठ, एक, चार, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और दोसी चार भाग अधिक दोनों देशोंकी अन्तिम तथा अञ्जन एव विजटावान् इन दो वक्षार-पर्वंतोंकी आदिम लम्बाई (१४४१८७७३१३ योजन) है ॥२६३५॥

$१४५१३२६३६६ - ६४४८३६६ = १४४१८७७३१३$ यो० ।

दोनों वक्षार-पर्वंतोंकी मध्यम लम्बाई—

तिय-बो-णब-णभ-चउ-चउ-एक्कं अंसा य होंति चुलसीदी ।

अंजण - विजडावविए, होबि हु मञ्जिभूत्त - बीहत्तं ॥२६३६॥

१४४०६२३ । ६६२ ।

अर्थ :—तीन, दो, नौ, शून्य, चार, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौरासी भाग अधिक अञ्जन और विजटावान्-पर्वंतकी मध्यम लम्बाई (१४४०६२३६६ यो०) है ॥२६३६॥

$१४४१८७७३१३ - ६४४३६६६ = १४४०६२३६६६$ यो० ।

दोनो वक्षार-पर्वतोकी अन्तिम और दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

अट्ट-छ-णव-णव-तिय-चउ-एककं अंसा छहत्तरैकक-सयं ।

दो - वक्षार - गिरीणं, अंतं आदी हु षोष्णि-विजयाणं ॥२६३७॥

१४३६६६८ । ३३३ ।

अर्थ :—आठ, छह, नौ, तीन, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छहत्तर भाग अधिक दो वक्षार-पर्वतोकी अन्तिम तथा रम्या एवं पक्षकावती नामक दो देशोंकी आदिम लम्बाईका प्रमाण (१४३६६६८८३३३ यो०) है ॥२६३७॥

१४४०६२३६५३ — ६५४३३३ = १४३६६६८३३३ यो० ।

दोनो देशोकी मध्यम लम्बाई—

णभ-दो-पण-णभ-तिय-चउ-एककं अंसा सयं च बीसहियं ।

मञ्जुल्लय - दीहरां, रम्माए पम्मकावादिए ॥२६३८॥

१४३०५२० । ३३३ ।

अर्थ :—शून्य, दो, पांच, शून्य, तीन, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ बीस भाग अधिक रम्या एवं पक्षकावती देशकी मध्यम लम्बाई (१४३०५२०३३३ यो०) है ॥२६३८॥

१४३६६६८३३३ — ६४४३३३३ = १४३०५२०३३३ यो० ।

दोनो देशोंकी अन्तिम और दो विभंग-नदियोंकी आदिम लम्बाई—

दो-सग-णभ-एकक-दुगं, चउ - एककंसा तहेव चउसट्ठी ।

दो-विजयाणं अंतं, आदिल्लं दो - विभंग - सरियाणं ॥२६३९॥

१४२१०७२ । ३३३ ।

अर्थ :—दो, सात, शून्य, एक, दो, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौंसठ भाग अधिक दोनो देशोंकी अन्तिम तथा मत्तजला एवं सीतोदा नामक दो विभंग नदियोंकी आदिम लम्बाई (१४२१०७२३३३ यो०) है ॥२६३९॥

१४३०५२०३३३ — ६४४३३३३ = १४२१०७२३३३ यो० ।

दोनों नदियोंकी मध्यम लम्बाई—

तिय-तिय-अड-णभ-दो-चउ-एक्कं अंसा सयं च चालहियं ।

मत्तजले सीदोदे, पत्तेक्कं मज्झ - दीहत्तं ॥२६४०॥

१४२०८३३३ । ३५३ ।

अर्थ :—तीन, तीन, आठ, शून्य, दो, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो सख्या निर्मित हो उतने योजन और एकसी चालीस भाग अधिक मत्तजला और सीतोदामेसे प्रत्येककी मध्यम लम्बाई (१४२०८३३३३ यो०) है ॥२६४०॥

१४२०७२३५३ — २३८३३३ = १४२०८३३३३३ यो० ।

दोनों नदियोंकी अन्तिम और दो देशकी आदिम लम्बाई—

पण-णव-परण-णम-दो-चउ-एक्कं अंसा य होंति चत्तारि ।

दो - सरियाणं अंतं, आदिल्लं दोसु विजयाणं ॥२६४१॥

१४२०५६५ । ३५३ ।

अर्थ :—पाँच, नौ, पाँच, शून्य, दो, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चार भाग अधिक दोनों नदियोंकी अन्तिम तथा शखा एव वप्रकावती नामक दो देशकी आदिम लम्बाईका प्रमाण (१४२०५६५३५३ यो०) है ॥२६४१॥

१४२०८३३३३३ — २३८३३३ = १४२०५६५३५३ यो० ।

दोनों देशकी मध्यम लम्बाई—

छ-चउ-इगि-एक्केक्कं, चउरेक्कंसा सयं च सट्ठि-जुवं ।

मज्झल्लय - दीहत्तं, संखाए वप्पकावदिए ॥२६४२॥

१४१११४६ । ३५३ ।

अर्थ :—छह, चार, एक, एक, एक, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो सख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसी साठ भाग अधिक शङ्खा एव वप्रकावती देशकी मध्यम लम्बाई (१४१११४६३५३ यो०) है ॥२६४२॥

१४२०५६५३५३ — ६४४८३३ = १४१११४६३५३ यो० ।

दोनों देशोंकी अन्तिम और दो वक्षार-पर्वतोंकी आदिम लम्बाई—

अड-णव-छक्केक्कं णभं, चउ-एक्कंसा सयं च चउरहियं ।

दो - विजयाणं अंतं, आदिल्लं दोसु वक्खारे ॥२६४३॥

१४०१६६८ । ३५३ ।

अर्थ :—आठ, नौ, छह, एक, शून्य, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चार भाग अधिक दोनों देशोंकी अन्तिम एवं आसौविस तथा वैश्रवणकूट नामक दो वक्षार-पर्वतोंकी आदिम लम्बाई (१४०१६६८३१५ यो०) है ॥२६४३॥

$$१४१११४६३१५ - ६४४८२१२ = १४०१६६८३१५ यो० ।$$

दोनों वक्षार-पर्वतोंकी मध्यम लम्बाई—

तिय-चउ-सग-एभ-गयणं, चउरेवकंसं सयं च छणणउवी ।

मज्झिमए दीहत्तं, आसौविस - वेसमण - कूडे ॥२६४४॥

$$१४००७४३ । ३१३ ।$$

अर्थ :—तीन, चार, सात, शून्य, शून्य, चार और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन तथा एक सौ छयानबे भाग अधिक आसौविस और वैश्रवणकूटकी मध्यम लम्बाई (१४००७४३३३ यो०) है ॥२६४४॥

$$१४०१६६८३१५ - ६५४३३३ = १४००७४३३३ यो० ।$$

दोनों पर्वतोंकी अन्तिम और दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

णव-अड-सग-णव-एव-तिय-एककं अंसा छहत्तरी होंति ।

दो - वक्षारे अंतं, आबिल्लं बोसु विजयाणं ॥२६४५॥

$$१३६६७८६ । ३१३ ।$$

अर्थ :—नौ, आठ, सात, नौ, नौ, तीन और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और छिहत्तर भाग अधिक दोनों वक्षार-पर्वतोंकी अन्तिम तथा महावप्रा एवं नलिन देशकी आदिम लम्बाई (१३६६७८६२१ यो०) है ॥२६४५॥

$$१४००७४३३३ - ६५४३३३ = १३६६७८६२१ यो० ।$$

दोनों देशोंकी मध्यम लम्बाई—

इगि-चउ-तिय-णभ-णव-तिय-एककं अंसा कमेण वीसं च ।

मज्झिमए दीहत्तं, महबप्पा - एल्लिण - विजयम्मि ॥२६४६॥

$$१३६०३४१ । २३३ ।$$

अर्थ :—एक, चार, तीन, शून्य, नौ, तीन और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बीस भाग अधिक महावप्रा एवं नलिन क्षेत्रकी मध्यम लम्बाई (१३६०३४१३१३ यो०) है ॥२६४६॥

१३६६७०९३१३ — ६४४८३१३ — १३६०३४१३१३ यो० ।

दोनों देशोंकी अन्तिम और दो विभगा-नदियोंकी आदिम लम्बाई—

दो-जब-अड-जभ-अड-ति-एककं अंसा छहत्तरहिय - सयं ।

दो - विजयाणं अंतं, आविल्लं दो - विभंग - सरियाणं ॥२६४७॥

१३८०८६२ । ३१३ ।

अर्थ :—दो, नौ, आठ, शून्य, आठ, तीन और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छहत्तर भाग अधिक दोनो क्षेत्रोंकी अन्तिम तथा तप्तजला एवं श्रौषध वाहिनी नामक दो विभंगा नदियोंकी आदिम लम्बाई (१३८०८६२३१३ यो०) है ॥२६४७॥

१३६०३४१३१३ — ६४४८३१३ = १३८०८६२३१३ यो० ।

दोनों विभंगा-नदियोंकी मध्यम लम्बाई—

चउ-परा-छण्णभ-अड-तिय^१-एककं अंसा व चाल-मज्झिमए ।

दोहत्तं तप्तजले, श्रोसहवाहीए पत्तकं ॥२६४८॥

१३८०६५४ । ३१३ ।

अर्थ :—चार, पांच, छह, शून्य, आठ, तीन और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चालीस भाग अधिक तप्तजला एवं श्रौषधवाहिनी मे से प्रत्येककी मध्यम लम्बाईका प्रमाण (१३८०६५४३१३ यो०) है ॥२६४८॥

१३८०८६२३१३ — २३८३१३ = १३८०६५४३१३ योजन ।

दोनों नदियोंकी अन्तिम और दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

पण-इगि-चउ-जभ-अड-तिय-एकका अंसा य सोत्तसहिय-सयं ।

दो - वेभंग - जईणं, अंतं आविल्ल दोसु विजयाणं ॥२६४९॥

१३८०४१५ । ३१३ ।

अर्थ :- पाँच, एक, चार, शून्य, आठ, तीन और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और एकसी सोलह भाग अधिक दोनों विभग-नदियोंकी अन्तिम और कुमुदा एवं सुवप्रा नामक दो देशोंकी आदिम लम्बाई (१३८०४१५३११ यो०) है ॥२६५१॥

$$१३८०६५४३११ - २३८३११ = १३८०४१५३११ यो० ।$$

दोनो देशोंकी मध्यम लम्बाई—

सग-छण्णव^१-गभ-सग-तिय-एककं अंसा य सट्टि परिमाण ।

मज्झिम - पवेस - बीहं, कुमुदाए सुक्कप^२ - विजयम्मि ॥२६५०॥

$$१३७०६६७ । ३१२ ।$$

अर्थ :- सात, छह, नौ, शून्य, सात, तीन और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और साठ भाग प्रमाण कुमुदा एव सुवप्रा क्षेत्रके मध्य-प्रदेशकी लम्बाई (१३७०६६७३१२ यो०) है ॥२६५०॥

$$१३८०४१५३११ - ६४४८३१२ = १३७०६६७३१२ यो० ।$$

दोनो क्षेत्रोंकी अन्तिम और दो वक्षार-पर्वतोंकी आदिम लम्बाई—

णव-एकक-पंच-एककं, छरिय - एकका तहेव चउ-अंसा ।

दो - विजय - दु - वक्खारे, अंतिन्नाविल्ल - बीहरं ॥२६५१॥

$$१३६१५१६ । २१२ ।$$

अर्थ :- नौ, एक, पाँच, एक, छह, तीन और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और चार भाग अधिक दोनों क्षेत्रों तथा सुखावह एव त्रिकूट नामक दो वक्षार-पर्वतोंकी क्रमशः अन्तिम और आदिम लम्बाईका प्रमाण (१३६१५१६२१२ यो०) है ॥२६५१॥

$$१३७०६६७३१२ - ६४४८३१२ = १३६१५१६२१२ यो० ।$$

दोनो वक्षार-पर्वतोंकी मध्यम लम्बाई—

चउ-एकक-पंच-गभ-छरिय-एककंसा तहेव छण्णववी ।

मज्झिल्लय - बीहरं, सुहावहे तह तिकूडे य ॥२६५२॥

$$१३६०५६४ । ३११ ।$$

अर्थ :—चार, छह, पाँच, शून्य, छह, तीन और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और छपानबै-भाग अधिक सुखावह एव त्रिकूटनग नामक वक्षार-पर्वतकी मध्यम लम्बाई (१३६०५६४३११ यो०) है ॥२६५२॥

$$(१३६१५१६३३ - ६५४३३३ = १३६०५६४३११ यो० ।$$

दोनों पर्वतोंकी अन्तिम और दो देशोंकी आदिम लम्बाई—

राव-णभ-छण्णव-पण-तिय-एक्का अंसाडसीवि-सहिय-सयं ।

वो - बक्खार - दु - विजए, अंतिल्लादिल्ल - बीहत्त ॥२६५३॥

$$१३५६६०६ । ३३६ ।$$

अर्थ :—नौ, शून्य, छह, नौ, पाँच, तीन और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ अठासी भाग अधिक दोनो वक्षारो तथा सरिता एवं वप्रा नामक दो देशोंकी क्रमशः अन्तिम और आदिम लम्बाईका प्रमाण (१३५६६०६३३६ यो०) है ॥२६५३॥

$$१३६०५६४३११ - ६५४३३३ = १३५६६०६३३६ यो० ।$$

दोनों देशोंकी मध्यम लम्बाई—

इगि-छक्क-एक्क-णभ-पण-तिय-एक्कंसा सयं च बत्तीसं ।

सरिवाए वप्प - विजए पत्तोक्कं मज्झ - बीहत्त ॥२६५४॥

$$१३५०१६१ । ३३३ ।$$

अर्थ :—एक, छह, एक, शून्य, पाँच, तीन, और एक इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ बत्तीस भाग अधिक सरिता एवं वप्रा देशोंमेसे प्रत्येक की मध्यम लम्बाई (१३५०१६१३३३ यो०) है ॥२६५४॥

$$१३५६६०६३३६ - ६५४३३३ = १३५०१६१३३३ यो० ।$$

दोनों देशोंकी अन्तिम और देवारण्य-भूतारण्यकी आदिम लम्बाई—

तिय-इगि-सग-णभ-बड-तिय-एक्कं अंसा छहत्तरी होंति ।

वो - विजए अंतिल्लं, आदिल्लं देव - भूवरण्णाणं ॥२६५५॥

$$१३४०७१३ । ३१३ ।$$

अर्थ :—तीन, एक, सात, शून्य, चार, तीन और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और छिहत्तर भाग अधिक दोनों ओरोंकी अन्तिम तथा देवारण्य एवं भूतारण्यकी आदिम लम्बाई (१३४०७१३२^१/_२ यो०) है ॥२६५५॥

$$१३५०१६१३३३ - ६४४८२^१/_२ = १३४०७१३२^१/_२ यो० ।$$

देवारण्य-भूतारण्यकी मध्यम लम्बाई—

चउ-तिय-इगि-पण-ति-तियं, एककं अंसा सयं च चउ-अहियं ।

भूदा - देवारण्ये, हवेवि मञ्जिभल्ल - दीहत्तं ॥२६५६॥

$$१३३५१३४ । ३^१/_२ ।$$

अर्थ :—चार, तीन, एक, पाँच, तीन, तीन और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसी चार भाग अधिक देवारण्य एवं भूतारण्यकी मध्यम लम्बाई (१३३५१३४^१/_२ यो०) है ॥२६५६॥

$$१३४०७१३२^१/_२ - ५५७८३^१/_२ = १३३५१३४^१/_२ यो० ।$$

दोनों बनोकी अन्तिम लम्बाई—

पण-पंच-पंच-णव-दुग-तिय-एककंसा सयं च बत्तीसं ।

भूदा - देवारण्ये, पत्तोवकं अंत - दीहत्तं ॥२६५७॥

$$१३२६५५५ । ३^१/_२ ।$$

अर्थ :—पाँच, पाँच, पाँच, नौ दो, तीन और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसी बत्तीस भाग अधिक भूतारण्य एवं देवारण्यकी अन्तिम लम्बाई (१३२६५५५^१/_२ यो०) है ॥२६५७॥

$$१३३५१३४^१/_२ - ५५७८३^१/_२ = १३२६५५५^१/_२ यो० ।$$

इच्छित क्षेत्रोंकी लम्बाईका प्रमाण—

कच्छादिसु विजयाणं, आदिम-मञ्जिभल्ल-चरिम-दीहत्से ।

विजयड्ड - षडमवणिय, अद्ध - कदे तस्स दीहत्तं ॥२६५८॥

अर्थ :—कच्छादिक देशोंकी आदिम, मध्यम और अन्तिम लम्बाईसे विजयाणके विस्तार-को षटाकर शेषको आधा करनेपर उसकी लम्बाई होती है ॥२६५८॥

हिमवान् पर्वतका क्षेत्रफल—

दो-पंचांबर-द्विग-द्वुग-चउ-अड-छ-छरिणि-तिबय अंसा य ।

बारस उणवीस - हिवा, हिमवत - गिरिस्स खेत्ताफलं ॥२६५६॥

३३६८४२१०५२ । ३३ ।

अर्थ :—दो, पांच, शून्य, एक, दो, चार, आठ, छह, तीन और तीन, इस अंक क्रमसे जो संख्या निमित्त हो उतने योजन और उन्नीससे भाजित बारह भाग प्रमाण हिमवान् पर्वतका क्षेत्रफल (३३६८४२१०५२ $\frac{३३}{१००००००}$ यो०) है ॥२६५६॥

विशेषार्थ :—पुष्करवरद्वीपमे स्थित हिमवान् पर्वतकी लम्बाई, द्वीप सदृश अर्थात् ८ लाख योजन है और विस्तार ४२१० $\frac{३३}{१००००००}$ यो० (गा० २८४३ मे) कहा गया है । अतः—८०००००० × ४२१० $\frac{३३}{१००००००}$ = ३३६८४२१०५२ $\frac{३३}{१००००००}$ यो० क्षेत्रफल है ।

चौदह पर्वतोसे रुद्ध क्षेत्रफलका निरूपण—

एवं चउसीवि - हवे, बारस - कुल - पणवयाण पिडफलं ।

होवि ह्वु इसुगार-जुवे, चोहस - गिरि - रुद्ध - खेत्ताफलं ॥२६६०॥

अर्थ :—हिमवान् पर्वतके क्षेत्रफलको चौरासी (८४) से गुणा करनेपर बारह कुल-पर्वतोका एकत्रित क्षेत्रफल होता है । इसमे इष्वाकार पर्वतोका क्षेत्रफल भी मिला देनेपर चौदह पर्वतोसे रुद्ध क्षेत्रफलका प्रमाण होता है ॥२६६०॥

विशेषार्थ :—जम्बूद्वीप सम्बन्धी पर्वतोंकी शलाकाएँ क्रमशः दो, आठ, बत्तीस, बत्तीस, आठ और दो है । जिनका योग (२ + ८ + ३२ + ३२ + ८ + २) = ८४ होता है, इसीलिए गाथामें ८४ से गुणा करनेको कहा गया है । यथा—३३६८४२१०५२ $\frac{३३}{१००००००}$ × ८४ = २८२६४७३६८४२१ $\frac{३३}{१००००००}$ योजन ।

द्विग-द्वुग-चउ-अड-छ-रिण-सग-चउ-पण-चउग-अट्ट-दो कमसो ।

जोयणया एक्कंसो, चोहस - गिरि - रुद्ध - परिमाणं ॥२६६१॥

२८४५४७३६८४२१ । ३३ ।

अर्थ :- एक, दो, चार, आठ, छह, तीन, सात, चार, पाँच, चार, आठ, बीर दो, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एक भाग अधिक (२८४५७३६८४२१३ यो०) चौदह पर्वतोंसे रुद्ध क्षेत्रका क्षेत्रफल है ॥२९६१॥

विशेषार्थ :- २८२९४७३६८४२१३ यो० + १६०००००००० योजन इष्वाकार पर्वतों का क्षेत्रफल = २८४५७३६८४२१३ यो० पर्वतरुद्ध क्षेत्रफल है ।

पुष्करार्धद्वीपका समस्त क्षेत्रफल—

अट्ट-णव-णभ-चउत्थका, सत्सट्टेका य चउ ति-गयणाइं ।

छ्रितिय - णवाय अंकं, कमेण पोक्खरवरद्ध - क्षेत्रफलं ॥२६६२॥

६३६०३४१८७४०९८ ।

अर्थ :- आठ, नौ, शून्य, चार, सात, आठ, एक, चार, तीन, शून्य, छह, तीन और नौ, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने (६३६०३४१८७४०९८) योजन प्रमाण अर्ध-पुष्करवर द्वीपका क्षेत्रफल है ॥२६६२॥

विशेषार्थ :- गाथा २५६१-२५६२ के नियमानुसार—पुष्करार्ध द्वीपकी सूची ४५ लाख यो० और व्यास ८ लाख यो० है । उसका सूक्ष्म क्षेत्रफल इसप्रकार होगा—

$$\sqrt{[(4500000 \times 2) - (800000 \times 2)]^2 \times (800000)^2 \times 10} = 6360341874098 \text{ योजन । यहाँ जो शेष बचे है वे छोड़ दिए गये हैं ।}$$

पर्वत रहित पुष्करार्धका क्षेत्रफल—

सग-सग-छुप्पण-णभ-पण-चउ-णव-सग-पंच-सत्त-णभ-णवयं ।

अंक - कमे जोयणया, होदि फलं तस्स गिरि - रहिबं ॥२६६३॥

६०७५७६४५०५६७७ ।

अर्थ :- सात, सात, छह, पाँच, शून्य, पाँच, चार, नौ, सात, पाँच, सात, शून्य और नौ, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने (६०७५७६४५०५६७७) योजन प्रमाण पुष्करार्धद्वीपके पर्वत-रहित क्षेत्रका क्षेत्रफल है ॥२६६३॥

६३६०३४१८७४०९८ — २८४५७३६८४२१ (यहाँके $\frac{1}{4}$ छोड़ दिए गये हैं) = ६०७५७६४५०५६७७ योजन ।

भरतक्षेत्रका क्षेत्रफल—

एवस्मिं^१ खेतफले, बारस - जुरोहि दो - सएहिं च ।
पविहरो जं लद्धं, तं भरहस्विदीए खेतफलं ॥२६६४॥

अर्थ :—इस (पवंत रहित) क्षेत्रफलमें दोसी बारहका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना भरतक्षेत्रका क्षेत्रफल होता है ॥२६६४॥

एकक-चउकक-चउककेक-पंच-तिय-गयण-एकक-अहु^२-जुगा ।
चत्तारि य जोयणया, पणसीवि - सय - कलाभो तम्माजं ॥२६६५॥

४२८१०३५१४४१ । ३६५ ।

अर्थ :—एक, चार, चार, एक, पांच, तीन, शून्य, एक, आठ, दो और चार, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने (४२८१०३५१४४१३६५) योजन और एकसी पचासी भाग अधिक उस क्षेत्रफलका प्रमाण है ॥२६६५॥

विशेषार्थ^३ :— $६०७५७६४५०५६७७ \div २१२ = ४२८१०३५१४४१३६५$ वर्ग योजन भरत-क्षेत्रका क्षेत्रफल है ।

जम्बूद्वीपस्थ भरतादि क्षेत्रोंकी शलाकाएँ क्रमशः एक, चार, सोलह, चौसठ, सोलह, चार और एक हैं । इन सबका योग (१ + ४ + १६ + ६४ + १६ + ४ + १) = १०६ प्राप्त हुआ । पुष्कर-बरद्वीपके दो मेरु सम्बन्धी दोनों भागोंका ग्रहण करनेके लिए इन्हे दूना करनेपर (१०६ × २) = २१२ होते हैं, इसीलिए गाथामें २१२ का भाग देनेको कहा गया है ।

शेष क्षेत्रोंका क्षेत्रफल—

अरह - स्विदीए गणिवं, पत्तेकं चउगुणं विदेहंतं ।
तत्तो कमेण चउगुण - हारणी^३ एराववं जाव ॥२६६६॥

अर्थ :—भरतक्षेत्रका जो क्षेत्रफल है उससे विदेह-पर्यन्त प्रत्येक क्षेत्रका क्षेत्रफल उत्तरोत्तर चौगुना है । फिर इसके आगे ऐरावतक्षेत्र पर्यन्त क्रमशः चौगुनी हानि होती गई है ॥२६६६॥

विशेषार्थ :- पुष्करवरद्वीप स्थित प्रत्येक क्षेत्रोंका क्षेत्रफल—

१. भरतक्षेत्र—४२८१०३५१४४१३६३ वर्ग योजन क्षेत्रफल ।
२. हैमवतक्षेत्र—१७१२४१४०५७६७३९३ " " " ।
३. हरिक्षेत्र—६८४६६५६२३०६६३९३ " " " ।
४. विदेहक्षेत्र—२७३६८६२४६२७७६३९३ " " " ।
५. रम्यकक्षेत्र—६८४६६५६२३०६६३९३ " " " ।
६. हैरण्यवत—१७१२४१४०५७६७३९३ " " " ।
७. ऐरावतक्षेत्र—४२८१०३५१४४१३६३ " " " ।

पुष्करार्धके जम्बूद्वीप प्रमाण खण्ड—

जम्बूद्वीप - खिबीए, फलम्पमाणेण पोक्खरवरद्धे ।

खेत्तफलं किञ्जतं, एककरस - सयाणि चूलसीदी ॥२९६७॥

११८४ ।

अर्थ :- जम्बूद्वीप सम्बन्धी क्षेत्रफलके प्रमाणसे पुष्करार्धद्वीपका क्षेत्रफल करनेपर ग्यारहसौ चौरासी (११८४) खण्ड प्रमाण होते हैं ॥२९६७॥

विशेषार्थ :- पुष्करवरद्वीपके बाह्य सूची व्यास (४५ लाख) के वर्गमेंसे उसीके अभ्यन्तर सूची व्यास (२९ लाख) के वर्गको घटाकर जम्बूद्वीपके व्यासके वर्गका भाग देनेपर ११८४ शलाकाएँ प्राप्त होती हैं । अर्थात् पुष्करवर द्वीपके जम्बूद्वीप बराबर ११८४ खण्ड होते हैं । यथा—
(४५०००००^२ - २९०००००^२) ÷ १०००००^२ = ११८४ खण्ड ।

मनुष्योको स्थितिका निरूपण—

चेट्टंति माणुसुत्तर - परियंतं तस्स लंघण - विहीणा ।

मणुवा माणुसखेत्ते, वे - अड्ढाइज्ज - उवहि - दीवेषुं ॥२९६८॥

एवं विण्णासो समत्तो ।

अर्थ :- दो समुद्रों और अढाईद्वीपोंके भीतर मनुष्योत्तर पर्वत पर्यन्त मनुष्यक्षेत्रमें ही मनुष्य रहते हैं । इसके आगे वे (उस) मानुषोत्तर पर्वतका उल्लंघन नहीं करते ॥२९६८॥

इसप्रकार विन्यास समाप्त हुआ ।

भरतादिक शेष अन्तराधिकार—

भरह-बहु'भर-यहुदि, जाव य एरावदो ति अहियारा ।
जं'बुदीबे उत्तं, सव्वं तं एत्थ वत्तव्वं' ॥२६६६॥
एवं पोक्खरवरवीव-सव्व-अंतर-अहियारा समत्ता ॥६॥

अर्थ :—अम्बूद्वीपमें भरतक्षेत्रसे लेकर ऐरावतक्षेत्र पर्यन्त जितने अधिकार कहे गये हैं, वे सब यहीं पर भी कहे जाने चाहिए ॥२६६६॥

इसप्रकार पुष्करवर द्वीपके सब अन्तराधिकार समाप्त हुए ॥६॥

मनुष्योंके भेद—

एर-रासी सामर्थ्यं, पञ्जसा मनुसिणी अपञ्जसा ।
इय चउविह - भेद - बुदो, उप्पञ्जवि माणसे खत्ते ॥२६७०॥
॥ एवं भेदो समत्तो ॥७॥

अर्थ :—सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य, मनुष्यिणी और अपर्याप्त-मनुष्य, इन चार भेदोंसे युक्त मनुष्य राशि मानुषलोकमें उत्पन्न होती है ॥२६७०॥

इसप्रकार भेदका कथन समाप्त हुआ ॥७॥

मनुष्योंकी सख्याका प्रमाण—

रुवेणूणा सेठी, सूईअंगुल - पहिल्ल - तविर्णह ।
मूलेहि पविहत्तो, ह्वेवि सामण्य - एर - रासी ॥२६७१॥

१ । ३ । १ ।

अर्थ :—जगच्छ्रेणीमें सूष्यंगुलके प्रथम और तृतीय वर्गमूलका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसमेंसे एक कम कर देनेपर सामान्य मनुष्य-राशिका प्रमाण ज्ञात होता है ॥२६७१॥

चउ-अट्ट-पंच-सत्तट्ट-जबय-पंचट्ट - तिबय - अट्ट - जवा ।
ति-चउवकट्ट-जहाइं, छ-छवक-पंचट्ट-जुग-छ-ज-चउवका ॥२६७२॥

गम-सप्त-गयज-अह-जव-एकं पञ्जस्त-रासि-परिमाणं ।

बो-पण-सग-दुग-छण्णव-सग-पण-इगि-पंच - जव - एकं ॥२६७३॥

१६८०७०४०६२८५६६०८४३६८३८५९८७५८४ ।

तिय-पण-दुग-अह-जवयं, छ-प्यण-अहुहु-एक-दुगमेवकं ।

इगि-दुग-चउ-जव-पंचय, मणुसिणि - रासिस्त परिमाणं ॥२६७४॥

५६४२११२१८८५६६८२५३१६५१५७६६२७५२ ।

अर्थ :—चार, आठ, पाँच, सात, आठ, नौ, पाँच, आठ तीन आठ, नौ, तीन, चार, आठ, शून्य, छह, छह, पाँच, आठ, दो, छह, शून्य, चार, शून्य, सात, शून्य, आठ नौ और एक, इतने (१६८०७०४०६२८५६६०८४३६८३८५९८७५८४) अंक प्रमाण पर्याप्त मनुष्य राशि तथा दो, पाँच, सात, दो, छह, नौ, सात, पाँच, एक, पाँच, नौ, एक, तीन, पाँच, दो, आठ, नौ, छह, पाँच, आठ, आठ, एक, दो, एक, एक, दो, चार, नौ और पाँच, इतने (५६४२११२१८८५६६८२५३१६५१५७६६२७५२) अंक प्रमाण मनुष्यराशि प्रमाण है ॥२६७२-२६७४॥

सामण-रासि-मज्जे, पञ्जस्तं 'मणुसिणी पि सोहेज्ज ।

अवसेसं परिमाणं, होवि अपञ्जस्त - रासिस्त ॥२६७५॥

१।३।

एवं संख्या समत्ता ॥८॥

अर्थ :—सामान्यराशिसे पर्याप्त मनुष्यका और मनुष्यनीका प्रमाण घटा देनेपर जो शेष रहे, उसना अपर्याप्त मनुष्य राशिका प्रमाण होता है ॥२६७५॥

विशेषार्थ* :—अपर्याप्त राशि=सामान्य राशि — (पर्याप्त राशि + मनुष्यनी)

अपर्याप्त राशि = (१) — (१६८०७०४०६२८५६६०८४३६८३८५९८७५८४ + ५६४२११२१८८५६६८२५३१६५१५७६६२७५२)

नोट :—गाथा २६७५ की संदृष्टि स्पष्ट नहीं हो सकी है ।

इसप्रकार संख्याका कथन समाप्त हुआ ॥८॥

मनुष्योंमें अल्पबहुत्वका निरूपण—

अंतरबीच - मज्जस्ता, थोडा ते कुसु बससु संखेज्जा ।

तत्तो संखेज्ज - गुणा, हवन्ति हरि - रम्मणेषु बरिसेसु ॥२६७६॥

अर्थ :—अन्तर्द्वीपज मनुष्य थोड़े हैं। इनसे सख्यातगुणे मनुष्य दस कुरु-क्षेत्रोमे और इनसे भी सख्यातगुणे हरिवर्ष एवं रम्यक क्षेत्रोमे हैं ॥२६७६॥

वरिसे संखेज्जगुणा, 'हेरणवदम्मि हेमवद - वरिसे ।

भरहेरावद - वरिसे, संखेज्जगुणा विदेहे य ॥२६७७॥

अर्थ :—हरिवर्ष एव रम्यकक्षेत्रस्थ मनुष्योसे सख्यातगुणे मनुष्य हैरणवत और हेमवत-क्षेत्रमें हैं तथा इनसे, सख्यातगुणे भरत एव ऐरावत क्षेत्रमे और इनसे भी संख्यातगुणे विदेह क्षेत्रमे हैं ॥२६७७॥

होति असंखेज्जगुणा, लद्धिमणुस्साणि ते च सम्मुच्छा ।

तत्तो विसेस - अहियं, माणुस - सामण - रासी य ॥२६७८॥

अर्थ :—विदेह क्षेत्रस्थ मनुष्योसे लब्ध्यपर्याप्त मनुष्य असख्यात गुणे है। वे (लब्ध्यपर्याप्त) सम्मुच्छन्न होते हैं। लब्ध्यपर्याप्त मनुष्योसे विशेष अधिक सामान्य मनुष्यराशि है ॥२६७८॥

पज्जत्ता णिवत्तियपज्जत्ता लद्धिया अपज्जत्ता ।

सत्तरि^३ - जुत्त - सदज्जा - खंडेसु^४ णेदरेसु लद्धिणरा ॥२६७९॥

अप्पबहुगं समत्तं ॥९॥

अर्थ :—पर्याप्त, निवृत्त्यपर्याप्त और लब्ध्यपर्याप्तके भेदसे मनुष्य तीन प्रकारके होते हैं। एकसौ सत्तर आयंखण्डोमे ये तानो प्रकारके मनुष्य होते हैं। अन्य (म्लेच्छादि) खण्डोमें लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य नहीं होते ॥२६७९॥

अल्पबहुत्वका कथन समाप्त हुआ ॥९॥

मनुष्योमे गुणस्थानादिकोका निरूपण—

पण-पण-अज्जाखंडे, भरहेरावदम्मि मिच्छ - गुणठाणं ।

अवरे वरम्मि चोद्दस - परिबंत कग्गाइ बीसंति ॥२६८०॥

अर्थ :—भरत एव ऐरावत क्षेत्रके भीतर पाँच-पाँच आयंखण्डोंमें जघन्यरूपसे मिथ्यास्व-गुणस्थान और उत्कृष्ट रूपसे कदाचित् चौदह गुणस्थान तक पाये जाते हैं ॥२६८०॥

पंच-विदेहे सट्ठि - समण्णिव - सब - अज्जखंडए अवरे ।

छगुणठाणे तरागे, चोद्दस - परिबंत बीसंति ॥२६८१॥

अर्थ :—पाँच विदेह क्षेत्रके भीतर एकसौ साठ आयंखण्डोंमें जघन्य-रूपसे छह गुणस्थान और उत्कृष्ट रूपसे चौदह गुणस्थान तक पाये जाते हैं ॥२६८१॥

विशेषार्थ :— विदेहमें छह गुणस्थान—पहला, चौथा, पाँचवाँ, छठा, सातवाँ और तेरहवाँ निरन्तर पाए जाते हैं। शेष गुणस्थान सान्तर हैं। अतः जघन्यत ये छह गुणस्थान ही हमेशा पाए जावेंगे।

सम्बेतुं भोगभुवे, दो गुणठाणाणि सव्व - कालम्मि ।

दीसंति चउ - वियप्पं, सव्व - मिलिच्छम्मि मिच्छत्तं ॥२६८२॥

अर्थ :— सब भोगभूमिजोमे सदा दो गुणस्थान (मिथ्यात्व और असयतसम्पगट्टि) तथा (उत्कृष्टरूपसे) चार गुणस्थान रहने हैं। सब म्नेच्छखण्डोमे एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही रहता है ॥२६८२॥

विज्जाहर - सेढीए, ति गुणट्टाणाणि सव्व - कालम्मि ।

पण - गुणठाणा दीसइ, छडिद - विज्जाण चोदस ठाणं ॥२६८३॥

अर्थ :— विद्याधर श्रेणियोमे सर्वदा तीन गुणस्थान (मिथ्यात्व असयन और देशसयन) तथा (उत्कृष्ट रूपसे) पाँच गुणस्थान होते हैं। विद्याएँ छोड़ देनेपर वहाँ चौदह गुणस्थान भी होते हैं ॥२६८३॥

पज्जत्तापज्जला, जीवसमासा हवन्ति ते दोणिण ।

पज्जत्ति^१ - अणज्जत्ती, छब्भेया सव्व - मणुवाणं ॥२६८४॥

अर्थ :— सब मनुष्योंके पर्याप्त एव अपर्याप्त दोनो जीवसमासा, छहो पर्याप्तियाँ और छहों अपर्याप्तियाँ भी होती हैं ॥२६८४॥

दस-पाण-सत्त-पाणा, चउ-सण्णा मणुस-गदि हु पंचिदी ।

गदि-इदिय तस-काया, तेरस-जोगा विकुव्व-दुग-रहिया ॥२६८५॥

अर्थ :— सब मनुष्योंके पर्याप्त अवस्थामे दस प्राण और अपर्याप्त अवस्थामे सात प्राण होते हैं। सजाएँ चारो ही होती हैं। चौदह मार्गणाओंमेसे क्रमशः गतिकी अपेक्षा मनुष्यगत, इन्द्रियकी अपेक्षा पञ्चेन्द्रिय, तस-काय और पन्द्रह योगोंमेसे वैक्रियिक एव वैक्रियिक मिश्रको छोड़कर शेष तेरह योग होते हैं ॥२६८५॥

ते वेदत्तय - जुत्ता, अणवगद - वेदा वि केइ वीसंति ।

सयल - कसाएहि जुवा, अकसाया होंति केइ एरा ॥२६८६॥

अर्थ :— वे मनुष्य तीनो वेदोंसे युक्त होते हैं। परन्तु कोई मनुष्य (अनिवृत्तिकरणके अर्थे-भागसे लेकर) वेदसे रहित भी होते हैं। कषायकी अपेक्षा वे सम्पूर्ण कषायोसे युक्त होते हैं। परन्तु कोई (ग्यारहवें गुणस्थानसे) कषाय रहित भी होते हैं ॥२६८६॥

सयलेहिं शाणोहिं, संजम - बंसणेहिं लेस्सलेस्सेहि ।
 भव्वाभब्बत्तेहिं, य छव्विह - सम्मत्त - संबुत्ता ॥२६८७॥

अर्थ : वे मनुष्य, सम्पूर्ण ज्ञानो, सयमो, दर्शनों, लेश्याओ, अलेश्यत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व
 और छह प्रकारके सम्यक्त्व सहित होते हैं ॥२६८७॥

सण्णी हवन्ति सव्वे, ते आहारा तथा अणाहारा ।
 णाणोवजोग - बंसण - उवजोग - जुवा वि ते सव्वे ॥२६८८॥

गुणट्ठाणावा समत्ता ।

अर्थ :—सब मनुष्य संज्ञामार्गणाकी अपेक्षा संज्ञी और आहारमार्गणाकी अपेक्षा आहारक
 एवं अनाहारक भी होते हैं । वे सब ज्ञानोपयोग और दर्शनोपयोग सहित होते हैं ॥२६८८॥

गुणस्थानादिकोका वर्णन समाप्त हुआ ।

मनुष्योकी गत्यन्तर-प्राप्ति—

संस्सेज्जाउवमाणा, मणुवा णर-तिरिय - देव - णिरएमुं ।
 सव्वेमुं जायंते, सिद्ध - गवोओ वि पावन्ति ॥२६८९॥

अर्थ :—सव्व्यात वर्ष आयु प्रमाणवाले मनुष्य, देव, मनुष्य, तिर्यञ्च और नारकियोमेसे
 सबमे उत्पन्न होते हैं तथा सिद्ध-गति भी प्राप्त करते हैं ॥२६८९॥

ते संस्त्राबीबाऊ, जायंते केइ जाव ईसाणं ।
 ण हु होति सलाय - णरा, जम्मम्मि अरांतरे केई ॥२६९०॥

संकमणं गर्बं ॥१०॥

अर्थ :—असंख्यातायुष्कवाले कितने ही मनुष्य ईशान स्वर्ग तक उत्पन्न होते हैं । किन्तु
 अनन्तर जन्ममें इनमेंसे कोई भी क्षलाका-पुरुष नहीं होते हैं ॥२६९०॥

संकमणका कथन समाप्त हुआ ॥१०॥

मनुष्यायुका बन्ध—

कोहावि - चउक्काणं, धूली - राईए तह य कट्टेण ।
 गोमुत्त^१ - तणुमलेहि, ^२छल्लेस्ता मज्झिम्मसेहि ॥२६६१॥
 जे जुत्ता णर-तिरिया, सग-सग-जोगोहि लेस्स-संजुत्ता ।
 पारयदेवा केई णियजोग चरावय च बघति ॥२६६२॥

आउसं बंधणं गदं ॥११॥

अर्थ :—जो मनुष्य एव तिर्यञ्च क्रोधादिक चार कषायोके क्रमशः धूलिरेखा, काष्ठ, गोमूत्र तथा शरीरमलरूप भेदों सहित छह लेश्याओंके मध्यम अंशोंसे युक्त हैं वे, तथा अपने-अपने योग्य छह लेश्याओंसे संयुक्त कितने ही नारकी और देव भी अपने-अपने योग्य मनुष्य आयुको बाँधते हैं ॥२६६१-२६६२॥

श्रायुबन्धका कथन समाप्त हुआ ॥११॥

मनुष्योमे योनियोका निरूपण—

उत्पत्ती मणुवाणं, गढमज - सम्मुच्छिमं खु दो - भेदा^१ ।
 गढभुवभव - जीवाणं, ^२मिस्सं सच्चित्त - जोणीओ ॥२६६३॥

अर्थ :—मनुष्योका जन्म गर्भ एव सम्मूच्छैनके भेदसे दो प्रकारका है। इनमेंसे गर्भजन्मसे उत्पन्न जीवोंके सचित्तादि तीन योनियोमेसे मिश्र (सचित्ताचित्त) योनि होती है ॥२६६३॥

सोदं उण्हं मिस्सं, जीवेसुं होंति गढभ - पभवेसुं ।
 ताणं हवति ^३संबड - जोणीए मिस्स - जोणी^४ य ॥२६६४॥

अर्थ :—गर्भसे उत्पन्न जीवोंके शीत, उष्ण और मिश्र (ये) तीनों ही योनियाँ होती हैं तथा इन्हीं गर्भज जीवोंके सवृतादिक तीन योनियोमेसे मिश्र (सवृताविवृत) योनि होती है ॥२६६४॥

१. द. व. क. ज. उ. गोमुत्ता । २. द. व. क. ज. उ. छल्लेस्ता । ३. द. व. क. ज. उ. णिय-जोगाणरावय । ४. द. व. उ. भेदो । ५. द. व. क. ज. उ. मिस्स सचित्तो । ६. द. सक्कड, व. क. ज. उ. संबड । ७. द. व. क. ज. उ. जोणीए ।

सीदुष्ह-मिस्स-ओषी, सच्चिस्ताचित्त-मिस्स-विडवा^१ य ।

सम्मुच्छिम - मनुवाणं, 'ससच्चिय होंति जोणीओ ॥२६६५॥

अर्थ :- सम्मुच्छिन मनुष्योके उपयुक्त सचित्तादिक नौ गुण-योनियोंमेंसे शीत, उष्ण, मिश्र (शीतोष्ण), सचित्त, अचित्त, मिश्र (सचित्ताचित्त) और विवृत ये सात योनियाँ होती हैं ॥२६६५॥

जोणी संखावत्ता, कुम्मुण्णद - बंसपत्त - ञामाओ ।

तेसुं संखावत्ता, गढमेण विवच्छिजवा^३ होदि ॥२६६६॥

अर्थ :- शंखावर्त, कूर्मोन्नत और वंशपत्र नामक तीन प्रकार-योनियाँ होती हैं । इनमेंसे शंखावर्त योनि गर्भसे रहित होती है ॥२६६६॥

कुम्मुण्णद - जोणीए, तित्थयरा चक्कवट्टिणो बुविहा ।

बलदेवा जायंते, सेस - जरा बंसपत्ताए ॥२६६७॥

अर्थ :- कूर्मोन्नत-योनिसे तीर्थकर, दो प्रकारके चक्रवर्ती (सकलचक्री और अर्धचक्री) और बलदेव तथा वंशपत्र-योनिसे शेष साधारण मनुष्य उत्पन्न होते हैं ॥२६६७॥

एवं सामण्णोसुं, होंति मनुस्साण अट्ट जोणीओ ।

एवाणं^५ विसेसाणि, चोहस - लक्खणि भजिवाणि ॥२६६८॥

जोणि पमाणं गवं ॥१२॥

अर्थ :- इसीप्रकार मनुष्योंकी (सामान्य योनियोंमेंसे) आठ योनियाँ, और (इनके विशेष भेदोंमेंसे) चौदह लाख योनियाँ होती हैं ॥२६६८॥

योनिप्रमाणका निरूपण समाप्त हुआ ॥१२॥

मनुष्योंके सुख-दुःखका निरूपण—

छुट्ठीस-जुवेक्क-सयं, पमाण - भोगविस्सहीण सुहमेक्कं ।

कम्म - खिदीसु जराणं, हुवेदि सोक्खं^६ च दुक्खं च ॥२६६९॥

सुख-दुक्खं^६ गवं ॥१३-१४॥

१. द. व. क. अ. उ. विडवा । २. द. व. क. अ. उ. सच्चिसय । ३. व. उ. विवच्छिजो ।

४. द. व. क. अ. उ. एहेण । ५. द. अ. सुक्खं च । ६. द. व. क. अ. उ. दुक्खं ।

अर्थ :—मनुष्योंको एकसौ छब्बीस भोगभूमियो (३० भोगभूमियोमें धीर ६६ कुभोग-भूमियो) मे केवल सुख और कर्मभूमियोमें सुख एवं दुःख दोनों ही होते हैं ॥२६६६॥

सुख-दुःखका वर्णन समाप्त हुआ ॥१३-१४॥

सम्यक्त्व प्राप्तिके कारण—

केइ पडिबोहणेणं, केइ सहावेण तामु भूमिसुं ।
 वट्ठूणं सुह - दुखलं, केइ मणुस्सा बहु - ^१पयारं ॥३०००॥
 जादि - भरणेण केई, केइ जिणिवस्स महिम - वंसणेवो ।
 जिणिविब - वंसणेणं, उवसम - पहुवीणि केइ ^२णेहंति ॥३००१॥

सम्मत्तं गवं ॥१५॥

अर्थ :—उन भूमियोमे कितने ही मनुष्य प्रतिबोधनसे, कितने ही स्वभावसे, कितने ही बहुतप्रकारके सुख-दुःखको देखकर उत्पन्न हुए जातिस्मरणसे, कितने ही जिनेन्द्रभगवान की कल्याणकारिण्य महिमाके दर्शनसे और कितने ही जिनविम्बके दर्शनसे औपशमादिक सम्यग्दर्शनको ग्रहण करते हैं ॥३०००-३००१॥

सम्यक्त्वका कथन समाप्त हुआ ॥१५॥

मुक्ति-गमनका अन्तर—

एक-समयं जहणं, दु-ति^३-समय-प्पहुवि जाव छम्मास ।
 वर-विरहं मणुष-जगे^४, उबारं सिञ्जंति अइ - समए ॥३००२॥

अर्थ :—मनुष्यलोकमे मुक्ति-गमनका जघम्य अन्तरकाल एक समय धीर उत्कृष्ट अन्तर दो-तीन समयादिसे लेकर छह मास पर्यन्त है। इसके पश्चात् प्राठ समयोंमें जीव सिद्धिको प्राप्त करते ही हैं ॥३००२॥

मुक्त जीवोका प्रमाण—

पसेक्कं अइ - समए, बत्तीसइवाल - सट्ठि - दुयसव्वाँर ।
 खुलसीवी छणुणउवी, बुच्चरिमम्मि अट्ट - अहिय - सयं ॥३००३॥

सिद्धंति एकक - समए, उक्कस्से अवरयम्मि एक्केवकं ।

मज्झिम - पडिवड्ढीए, चउहसरि सव्व - समएसुं ॥३००४॥

अर्थ :- इन आठ समयोंमेंसे प्रत्येकमें क्रमशः उत्कृष्टरूपसे बत्तीस, अड़तालीस, साठ, बहत्तर, बीरासी, छधानबं और अन्तिम दो समयोमें एकसौआठ - एकसौआठ - जीव तथा जघन्य-रूपसे एक-एक सिद्ध होते हैं । मध्यम प्रतिपत्तिसे सब समयोमें ($५९२ \div ८ = ७४$) चौहत्तर-चौहत्तर जीव सिद्ध होते हैं ॥३००३-३००४॥

तीद - समयाज सव्वं, पण-सय-बाणउवि-रूव-संगुणिदं ।

अड'-समयाहिय - छम्मासय - भजिदं णिव्वदा सव्वे ॥३००५॥

अ । ५६२ । मा ६ । स ८ ।

एवं णिउवि-गमण-परिमाणं समत्तं ॥१६॥

अर्थ :- अतीतकालके सर्व समयोको (५६२) पाँचसौ बानवे रूपोंसे गुणित करके उसमें आठ समय अधिक छह मासोंका भाग देनेपर लब्ध राशि प्रमाण सब निवृत्त अर्थात् मुक्त जीवोका प्रमाण प्राप्त होता है ॥३००५॥

(अतीतकालके समय \times ५६२) \div ६ मास ८ समय = मुक्त जीव ।

इसप्रकार सिद्धगतिको प्राप्त होने वालोंके प्रमाणका कथन समाप्त हुआ ॥१६॥

अधिकारान्त मङ्गल—

संसारण्वव'-मह्रसं, तिहुवण-भव्वाण पेम्म-पुह-चलणं ।

संबरिसिय सयलड्डं, सुपासणाहं णमंसामि ॥३००६॥

एवंमाइरिय-परंपरागत-तिलोयपण्णत्तीए मणुब - जग'-सरूव-णिरूवण पण्णत्ती णाम चउत्थो महाहियारो समसो ॥४॥

अर्थ :- तीनों लोकोंके भव्यजनोंके स्नेह युक्त चरणोंवाले, समस्त पदार्थोंके दर्शक और संसार-समुद्रके मथन-कर्ता सुपास्यनाथ स्वामीको मैं नमन करता हूँ ॥३००६॥

इसप्रकार आचार्य-परम्परागत त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें अनुष्यलोक स्वरूप निरूपण

करने वाला चतुर्थ-महाधिकार समाप्त हुआ ॥

१. द. व. क. व. उ अक्षरमवाचिय छम्मासयम्मि भजिदं णिव्वदा । २. द. व. क. समसो ।

३. द. व. क. व. उ संसारण्ववमह्रसं । ४. द. व. क. व. उ. पेम्मपुहुवणण । ५. द. व. क. उ. परंपरायवय ।

६. द. व. क. व. उ. अवपणावण्णत्ती वल्लसंपण्णत्ती ।

गाथानुक्रमिका

गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०
		भट्टत्तरि संजुता	२४१४	भट्टाबोससहस्ता	२२६६
		भट्टत्तरि सहस्ता	२६६१	" "	२४१०
		भट्टताला सहस्ता	६५	भट्टाबोसं लम्बा	१४६९
		भट्टताला दीवा	२७६४	" "	२६०४
		भट्टाबोस सहस्ता	१७२३	भट्टाबोसुत्तरसय	४०१
		भट्टबुगेकक बोपण	२०९४	भट्टासद्विसहस्ता	२४१३
		भट्टाभहियसहस्ता	१०९८	भट्टासोदि सयाण	१२२८
		भट्टमए भट्टविहा	८७०	भट्टिमिदुगतिसहस्ता	२६१७
		भट्टमए इगितिसया	१४४४	भट्टदुत्तरसयमेत्त	१७०६
		भट्टमए साकगदे	४७२	भट्टदुत्तरसयसहिया	८२३
		भट्टरसजोयसाण	२७८४	भट्टदुत्तरसयसंखा	१७१०
		भट्टरस महाभासा	६१०	" "	१८६४
		भट्टरससहस्ताण	१४१७	भट्टककछभट्टतियं	२८५६
		भट्टसयाबाबु गो	४४७	भट्टे व गया मोक्क	१४२२
		भट्टसया पुक्कवरा	११५२	भट्टे व य दोहरां	१६५९
		भट्टसहस्ताभहिय	११८३	भट्टचउचउसग भट्टपण	२७०४
		भट्टसहस्ता चउसय	२१६६	भट्टजोयण उत्तुं गो	२१७७
		भट्टसहस्ता एवसय	२०१७	भट्ट चउसोदिगुण	३०५
		भट्टाण एकसमो	२३२२	भट्टणउदि ग्रहियाणवसय	७८४
		भट्टाण भूमोणं	७३६	भट्टणउदिसया भोही	११२०
		भट्टारस कोडाभो	१४०२	भट्टणवछक्केकणम	२९४३
		भट्टारस वासाहिय	६५५	भट्टतियणभ भट्टछपण	२६९७
		भट्टारसा सहस्ता	२६१२	भट्टतियणमतिच दुनराभ	२९०९
		भट्टावणएसयाण	२६४९	भट्टतिय सगभट्टइगियण	२६७६
		भट्टावणएसहस्ता	१८००	भट्टदालसयं भोही	११४६
		भट्टाबोस बुबीसं	१३०४	भट्टदालसहस्ताणं	१७०३
		भट्टाबोससयाण	११५८	भट्टपणइगि भट्टछपण	२६९८
		" "	१७३९	भट्टमाससमहियाण	९६६
		" "	२१८	भट्टलक्कपुक्क समहिय	५६८
		" "	२२५८	भट्टबीसपुक्कभंगहिय	१२६६
		" "		भट्टबीसपुक्कभंग	९०४
भइमुत्तयाण भवणा	३३१				
भइमेच्छा ते पुरिसा	५६६				
भइविट्ठि भणाविट्ठि	१५३८				
भइवुट्ठिभणावुट्ठि	१६४५				
भइदुं बरकल सरिसा	२२७८				
भउपत्तिकी भवतर	१०२९				
भक्खर भणक्खरमए	६६५				
भक्खर भणक्खरमए	१००४				
भक्खर भालेक्खेसुं	३८९				
भक्खा मणवक्कयाया	४२०				
भक्खीणमहाणसिया	८६६				
भग्गिदिसाए सादी	२८२४				
भच्छदि एव-दसमासे	६३२				
भच्छरस रिच्छरूवा	१४०				
भजियजिण पुक्कवता	६१५				
भज्जाखइम्मि ठिवा	२३०९				
भज्जुला भरणीकइत्तास	१२१				
भट्टचउएक्कणमभट्ट	२६२६				
भट्टचउसत्तपणचउ	२८८०				
भट्टचिचजोयणया	१६६५				
भट्टछपट्टयच्छदी	२७४०				
भट्टछणवणवतियचउ	२६३७				
भट्टछुदुभट्टतियपण	३६८४				
भट्टदुसहस्ताण	१६१२				
भट्टदुणे सुण	१०				
भट्टइतियणमछदी	२७२७				
भट्टणवणमचउक्का	२६६२				
भट्टतियबोणि भवर	२७०५				
भट्टतरि ग्रहियाए	५८४				

गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०
अइसमएवचउअउसुग	२७१७	अभतरम्मि दीवा	२७६५	अविराहिदूए जीवे	१०५०
अइसमएवकसहस	१२८३	अभतरम्मि भागे	२५६५	अविराहिइ तस्तीगे	१०५३
अइसोविबोसएहि	७५७	" "	२७१५	अविराहिइयपुकाए	१०५५
अइसीदो समसोदो	१७१	अभतरवेदोदो	२४७६	असुचो अपेवणराय	६३०
अएगार केवलमुणी	२३१२	अभिहागे य असोगा	७१५	असउअसुकपडिअव	७०७
अएलादिसु विदिसासु	२५३५	अभिकोगपुरेहितो	१५७	अससमीबो तारग	१४२५
अएणजुत्ता कुलहीण राजा	१५३६	अमम चउसोदिमुण	३०६	" तारय	५२६
अएणशागदा सञ्जे	१४४८	अमरणरणमिअवणसा	२३११	असजुअकिण्णतेरसि	५३८
अएणमामहिमाअभिमा	१०३३	अमवस्ताए उवही	२४६९	असजुअ सुकअट्टमि	१२०४
अएणविअसु सूवर	२७७२	अमवस्से उवरोदो	२४६५	असपुरो सिहपुरो	२३२६
अणुतणुकरणं अएणमा	१०३५	अमिअदमो तहेवो	४९८	अह उअड तिरिय पसर	१०५१
अणुदाहाए पुस्से	६५८	अरकु धूमतिएामा	६१३	अह उअड तिरिय पसदे	१०५५
" "	६५६	अरजिएणरिअदित्तये	११६५	अह को वि असुरदेवो	१५२५
अणुअमअवत्त एव	६०६	अरमत्तिलअतरासे	१४२७	अह शिएणियरायरेसुं	१३८१
अणुअभला एअस्ति	२३६४	अरसअवविअमअजिएा	६१६	अह तीसकोअिलअञ्जे	५६२
अणुआए अणकीणं	१३७७	अवणय चउलअसादो	२६५६	अह दअजिएणभाएणं	१३६२
अणु अह उवदेस	५०८	अवरविदेहसमुअअव	२०९७	" "	१३६७
अणुणे विविहाअ भया	१०५७	अवरविदेहससते	२२२९	अह पउअअअकवट्ठी	१२६६
असो चारण मुणिएो	१५३७	अवराए तिमिसमुहा	१७६	अह पअमवेदोअो	८७३
अरिय लवणजुरासो	२४२८	अवराअजिअदवारास	२५१५	अह अरहएवमुहाण	१३१४
अरिय सदा अघार	४४३	अवराअहिमुहे अचिअय	११४०	अहमिदा जे देवा	७१७
अरिभोदारा इमाण	४८६	अवसअपिएि उअसअपिएि	१६३६	अहवा इण्णगुणिएा	२०६७
अरिमाएणअटिअवा जे	२५४३	" "	१६३७	अहवा गिरि अरिसाणं	१७७४
अरिरेवअस पमाण	१२७०	अवसअपिएिोए एअ	७२६	अहवा दुअसअप्यमुहं	१०६८
" "	१२७२	अवसअपिएिोए दुअसअ	१६३४	अहवा दुअसअप्यहुदो	१०६२
अरिरेअस पमाण	२८०३	अवसेअ काल समए	६१३	" "	१०६४
अउं लु विदेहादो	१०५	अवसेअठाएअअअं	२७८६	" दुअसादोएि	१०९६
अउारपअन सायर	३१९	अवसेअवणएाअो	१७२६	अहवा दो दो कोसा	१६६२
अउियविदेहअंअ	२०४६	" "	१७६७	अहवा बहुवाहीहि	१०८६
अउंएण पमाणेहि	२१९८	" "	२११८	अहवा वीरे सिअं	१५०९
अउराजिआअिहाएा	५३०	" "	२७५६	अह अिणएविति अतो	१५४५
अपि अ वओ जीवणए	६४२	अवसेसेसु चउसु	२०६९	अह अंतिकु अ अरअिए	१२४५
अप्विसिअण सगा	१३१७	अविराहिदूए जीवे अणुकाए	१०५२	अह साअिअण कअकी	१५२३
अअतरपरिसाए	१६९९	अविराहिदूए जीवे	१०५७	अह सिरिअअवअमो	८६१
अअतरअाहिए	२७६८	" "	१०५८	अहिअदे तिअिअगदे	४८२
अअतरम्मि ठाणं	७७०	" "	१०५६	अकायारा अिअवा	२५६४

गाथा	गाथा सं०
अंकवारा विजया	२८४२
अंगदछुरिया जग्गा	३६८
अंजलामूल कणय	२८११
अंतरदीवमणुस्ता	२६७६
अतिमखर्बताई	९८१
अशोमुहुत्तमबर	२८८१
अशो शिखरद कृते	६२२
अबर अट्टणवट्ट	२६८१
अबरछस्तसितिय	२५६४
अबरपणएककचऊ	२४०६
अबरपचेकचऊ	५६
आ	
आउट्टुकोडिभाहि	१८६४
आउट्टुकोडिसखा	१८७०
आऊ कुमारमबलि	१३०५
आऊ तेजो बुद्धी	१५८६
आऊ बषणभाव	४
आकसिकमदिधोर	४३१
आगच्छिय हरिकु डे	१७९४
आगतूण शिखते	२४७
आगतूण तवो सा	२०९२
आणए कककणियो	१५४३
आणए कककीण	१३५६
" "	१३६८
आलंकोममरगुण्यसीधो	९४२
आदक अण्णादराणं	२६४३
आदि अण्णसाणमज्जे	६६०
" "	९६१
आदि जिएण्यविमाधो	२३३
आदिमकूडे वेट्टुवि	१५४
आदिमकूडोवरिडे	२०६६
आदिम खिल्लेसु पुह-पुह	७६४
आदिमजिएउवभाऊ	१६०३
आदिमपरिहिएण्वही	२८४७
आदिमपौहुण्णेहो	७७७

गाथा	गाथा सं०
आदिमज्जिमवाहिर	२६०२
" "	२६०६
आदिमरयण्णचउवक	१३९२
आदिमसंठाणजुवा	२३६१
आदिमसंहण्णजुवा	१३८२
आमरिसखेल जल्ला	१०७८
आमासयस्स हेट्टा	६३१
आयामो पण्णासं	१६५७
आयारग धरादो	१५२२
आयासणअण्णवण	११७५
आवहि ऊण गगा	१३२१
आवहिण्ण तेसुं	८८२
आ सत्तमयेककसय	१२२५
आसाउबहुलदसमो	६७१
आहारदाण्णिएरदा	३७२
आहारसण्णसत्ता	२५४७
आहाराभयदाण	३७५
इ	
इमि अउण्णएअण्णएणुग	२७३१
इमिकोडिपण्णमकखा	५७०
इमिकोसोदयद दो	२११
" "	२५९
इमिगि विजयमज्जकसय	२३२१
इमिगउतियणभणवतिय	२६४६
इमिगउदि सक्खाणि	२६५४
इमिगभणवउअउण्णजुग	२७८३
इमिगवतियल्लहो	२७४१
इमिगुगवउ अउण्णसिय	२६६१
इमिगणदीइमिगण्णवउ	२९३१
इमिगणसयअउण्णपण	२६९४
इमिगपलपमाणाऊ	१७८६
इमिगुण्णलककसमहिय	५६९
इमिलकसं चालीसं	१९३०
इमिवीसपुअवलकखा	६०१

गाथा	गाथा सं०
इमिवीसलककवण्णर	१२७३
इमिवीसवस्सलकखा	६६२
इमिवीससहस्साइ	६०६
" "	११२१
" "	१४२०
इमिवीससहस्साणि	३२३
इमिसयजुद सहस्सं	११६८
इमिसयतिणिसहस्सा	१२४४
इमिसयरहिदसहस्स	११७२
इमिहसुरिजुत्ताइ	१७२४
इच्छाए गुणिदाधो	२०७४
इट्ठण सेस पिडे	२८७५
इय अण्णोणासत्ता	३६०
इय उतरम्मि भरहे	१३७१
इय दक्खिणम्मि भरहे	१३४७
इय वहुदि एउणवणे	२०२४
इसुमारगिरिदाण	२५८३
इसुवादगुणिदजीवा	२४०१
इसुवग चउगुणिद	२६३५
" "	२८६३
इह केई आइरिवा	७२७
इह लोमे वि महल्लं	६४३
ई	
ईसाणदिसाए सुरो	२८२५
ईसाणदिसाभागे	१७५३
" "	१७८८
ईसाणसोममाहद	१६६७
उ	
उककस्सघारणाए	९८७
उककस्स अण्णसेउजे	३१५
उककस्स अण्णोवसमे	१०७०
" "	१०७३
" "	१०७६
उककस्ससंजमज्जे	३१४

गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०
उत्तिकट्ठा पायाला	२४४०	उत्तरदक्खिणएदीहा	२११५	उत्तरो वि माणुसोत्तर	२८००
उत्तमतवा वित्ततवा	१०५८	उत्तरदक्खिणएभरहे	२७०	उत्तवणपट्टदि सञ्च	८५२
उत्तमडियकवाडकुमल	१३५२	उत्तरदक्खिणएभावे	२०३९	उत्तवणएवाविज्जेहि	८१६
उत्तमट्ठिय तेल्लोपक	१०७७	" "	२८६७	उत्तवणवेदीजुत्ता	१६८५
उत्तमो धीरो बीरो	६३८	उत्तरदक्खिणएभागे	१८८२	उत्तवणसडेहि जुदा	२१०८
उत्तमणो सो चम्मो	१२८९	उत्तरदिसाए वेधो	२८२३	उत्तवहि उवमाणउजुत्तो	१५५३
उत्तमहे भद्रवासा	२१०६	उत्तरदिसा विभागे	१६८६	उत्तवहि उवमाण एउदी	१२५३
उत्तमहे धाउविरिया	१५६५	" "	१७९०	उत्तवहि उवमाणणवके	५७६
उत्तमहे बोयणेणं	२१७९	उत्तरदेवकुरूमुं	२६४०	उत्तवहि उवमाणएतिए	५७६
उत्तमहेपट्टविक्कीणे	३६९	उत्तरपुण्वं बुचरिम	२३३०	उत्तवहीमु तीस दस एणव	१२५२
" "	४०७	उत्तरिय वाहिणीधो	४९५	उत्तवजिरो एण्णारो	१२८७
" "	१७३३	उत्तमो गधउडीए	६००	उत्तवहियारों तिससा	१२२६
उत्तमहेप्यट्टदीसुं	१७३३	उत्तएण एककोत्तं	१६२०	उत्तवमजियं च संभव	५१९
उत्तमहेमाऊ बल	१५३५	उत्तमो एण्णए गिरो	२४६१	उत्तवम्मि यभव दं	८३०
उत्तमहेवासपट्टिसु	४९	उत्तमो उदगाभासो	२४९४	उत्तवहादि दसमु धाऊ	५८६
उत्तमहेवासपट्टिदि	२१३५	उत्तमो उदय भूमुहवास	१६५५	उत्तवहादिसोलसाए	१२४१
उत्तमहेवासपट्टदी	१८५५	" "	१६८८	उत्तवहादी चउडीस	७२९
उत्तमहेवासपट्टिविसु	२५०७	उत्तवण सडा सञ्चे	१७८०	उत्तवहादीसुं वासा	६८२
उत्तमहेजाकपट्टिसु	१६०४	उत्तविट्ठ सयलभाव	९८३	उत्तवहो चोदसदिबसे	१२२०
उत्तमहेदी वडाएण	२२८२	उत्तपण्ण कारएत्तर	१०६२	उत्तवहो य बासुपुज्जो	१२२१
उत्तमहेदी ने कोसा	१८३७	उत्तपत्ति मविराड	२३४५	उत्तसप्पिणीए धज्जाखंडे	१६३०
उत्तमहाएवणसमिदा	१३०	उत्तपत्ती मणुवाए	२६९३	उत्तसेधगाउदेण	२१६३
उत्तमहाएहि जुत्ता	१६८	उत्तप्ल गुम्मा एणिराए	१९७०	उत्तसेह धाउत्तितथयर	१४८३
उत्तमजोगदञ्चभायण	७४८	उत्तपादा प्रहधोरा	४४०		
" "	१३९८	उत्तभयतडवेविसहिदा	२६३		
उत्तड कमहाणीए	१८१४	उत्तवेसेण सुराए	१३५०		
उत्तडे भवेदि व व	२४३१	उत्तवमातीद ताए	७१६		
उत्तएतीस सहस्साहिय	५७९	उत्तवरिमजलस जोगण	२४३५		
उत्तएबण्णएदिसविरहिद	१५६५	उत्तवरिमिमा कंचणमधो	७८८		
उत्तएबण्णसहस्साएि	१२३६	उत्तवरिमि मीलगिरिणो	१८३१		
उत्तएवीसमो सयभू	१६०२	" "	२३५९		
उत्तएवीससया वत्सा	१४१८	उत्तवरिमि ताएकमसो	२४६६		
उत्तएवीस सहस्साएि	२६१४	उत्तवरिमि माणुसुत्तर	२८०९		
" "	२८७१	उत्तवरि दसुगाराणं	२५७८		
उत्तएसीदि सहस्साएि	७४	उत्तवरि यमसस वेट्टदि	२१७६		
" "	१२३३				
उत्तराम भोग महीए	६३				

ए

एककउत्तकउत्तककेक	२६६५
एककउत्तसोलसडा	२६०७
एकक छट्टट्टु पुण	२६८०
एकक छसत्तपणव	२७५३
एकक छएवएणभएवका	२६०५
एककट्ट छएककेक	२९०६
एककत्तरि सहस्सा	२०५१
एककत्तलसहस्सा	२८५०
एककत्तलं सवडा	२८७७
एककत्तीसट्टाखे	३१२
एककत्तीसहस्सा	२०१६

भाषा	भाषा सं०	भाषा	भाषा सं०	भाषा	भाषा सं०
एकपक्षि वीरमाऊ	७८	एककाव्यपुस्तक	१२३५	एदस्तंतस पुढं	६६
” ”	२७६	एककाद्योविद्विहृत्वी	६१	एदस्ति खेतकले	२९६४
एककरसत्तरसाहं	११२३	एककेककमलसंडे	७६६	एदस्ति जयरवरे	८७
एककरस सहस्साणि	२१६७	एककेकगोउराणं	७४५	एद चडसीदिहृदे	२६६०
” ”	२५७१	एककेकजुवद्वरणं	१३८५	एद चियचउगुणिदं	२७५०
” ”	२८७३	एककेकजोयणुतर	१३५१	एद चिय चउगुणिदे	२७५६
एककरस सहस्सूणिय	५७८	एककेकदिसाभावे	२२८८	एद जिणाय जणुणुवार्कं	५८५
एककरस होति रुहा	१६४२	एककेककलवपुम्बा	१४१९	एदाए जीवाए	१८६
एककरसो य सुधम्मो	१४९८	एककेककस दहस्स य	२११९	एदाधो रायरीयो	१२०
एककवरिसेण उसहो	६७८	एककेकक चियलकस	११६३	एदाधो बणुणाराधो	२१३०
एकक सएणमहिंय	११४५	एककेकक जिणभवण	७६६	” ”	२७८०
एककसमय जहूण	३००२	एककेककाए उववण	८१३	एदाण कासमाग	१५७८
एककसय पणवणा	२५२२	एककेककाए सट्टय	७६६	एदाण तिसेताग	२४१२
एककसहस्सट्टसया	१६७	” ”	७६६	एदाण तिरागासुं	२८४४
एककसहस्स धडसय	८२९	एककेकका गधउडो	८६६	एदाण दाराग	८४
एककसहस्स गोउर	२२६६	एककेककाग दो हो	७३३	एदाण देवाग	२८९७
एककसहस्स चउमय	११३६	एककेकका तडवेदी	२५७५	एदाण पत्तेक	२८६६
एककसहस्स तिसय	८३८	एककेककेस यूहे	८५५	एदाण परिहोयो	२१०४
एककसहस्स पणसय	१७०९	एकको कोसो दडा	६०	” ”	२१३१
एककसहस्सा सगसय	११९८	एककोचिच वेलवो	२८१३	एदाग रचिदूग	२०६८
एकक कोस गाडो	१९७४	एकको जोयणकोडो	२८०२	एदाग रुदारिण	२८३५
एकक चिय होदि सय	२०७३	एककोणतीसपणिमाण	६००	एदाग सेवाग	२५६८
एकक चय सहस्सा	११३९	एकको गगदरविमसो	१६१४	एदाणि भामाग	९११
एकक चय सहस्सा	११८२	” ”	२०८७	एदे धवगविदेउं	२०६०
” ”	११८८	एककोणवीमसहिंद	२६७०	एदे गणधग्देवा	६७६
” ”	११८८	एकको तह रहरेण	४५	एदे गयदनगिरी	२०३८
एकक जोयणलवय	११८८	एकको य मर गडा	८८६	एदे गोउरदाग	७४४
” ”	२०८८	एककोकलपुनिका	२५२४	एदे चउदस मणुघो	५११
” ”	२०८६	एककोकवेसणिगा	२५३६	एदे जिणिदे भरहम्मि खेत्ते	५५८
एकक वामसहस्सं	१३११	एककोरुगा गुणुमु	२५२६	एदे णव पडिसनु	१८३५
एककाणउदिसयाद	११३०	एककोनियमेतविमस	४०५	एदे तेसट्टिणरा	१६१६
एककारसकुडाग	२३८५	” ”	४१३	एदे वारमचवकी	१०६३
एककारस पुढादी	१८५६	एतूण पेसगाइ	१००८	एदे समचउरम्सा	७९६
एककारसलवखाणि	२८५९	एतो जाव अणुण	५९३	एदे सव्वे गडा	१७५६
एककारसिपुववह	६८१	एतो सलायपुणिसा	५१७	एदे सव्वे देवा	२३२९
एककारसे पदेये	१८२१	एदस्ससस्स पुद	५८	एदेमि दाराग	७७

भाषा	भाषा सं०
एदेसु पढमकूडे	२३५६
एदेसु मधिरसुं	२०७
" "	२५४
एदेसु पत्तक	२६४४
एदेसु भवरोसुं	२१३३
एदे हेमञ्जुतवर्णञ्ज	६७
एरावदखिदिणिमब	२५१६
एरावदखिभोविद	२५१४
एसातमालसवली	१६६९
एव विगिबीस कवकी	१५५५
एव भएतलुतो	६२६
एव धवसेसाए	८८
एव एसो कालो	३१३
एवं कच्छा विजयो	२३१६
एवं कमेण भरहे	१५७२
एवं कालसमुदो	२७८७
एवं जोयणसकळं	१८१५
एवं बुस्समकाले	१५४१
एवं पढमवहावो	२१३
एवं पहावा भरहस्स सेत्ते	६५१
एवं महापुराण	१७१३
एवं मिच्छादिट्ठी	३७४
एवं वस्ससहस्से	१५२८
एवं बोलोणिसु	१५८७
एवं समसयविजयाण	२८५३
एवं संक्षेपेणं	१९६०
" "	२०१२
" "	२०२५
" "	२७६१
एवं सामणिसुं	२९९८
एवं सोलसभेदा	१४
" "	२५७०
एवं सोमससखा	२७९१
एवं सोमस सखे	५
एवं हि क्वं पडिवं जिणस्स	१६५
एस बलभद्रकूडो	२००५

भाषा	भाषा सं०
एस मणु भीदाणं	४७०
एसो जिणिदप्पडिमा ज्जयाणं	१६६
एसो पुब्बाहिमुदो	१८८१
ओ	
ओलममगतभूसण	८३
ओसहणपरी तह	२३२१
ओहिमणपउत्रयाणं	९७८
क	
कक्किसुदो धविदजय	१५२६
कक्किक पडि एककेक्के	१५२७
कच्छमिम महामेष्वा	२२७४
कच्छविजयमिम विविहा	२२७२
कच्छस य बहुमज्जे	२२०३
कच्छादिप्पमुहाण	२७०७
कच्छादिप्पमुहाण	२९२२
कच्छादिसु विजयाण	२७०८
" "	२९२३
" "	२९५८
कच्छादीविजयाण	२७४७
कच्छा सुकच्छा महाकच्छा	२२३२
कडयकडिसुतगेडर	३६७
कणधो कणयप्पह	१५९१
कणयगिरिणी उवरि	११२३
कणयमधो पायादो	२२९५
कणयम्ब णिवसलेवा	३९
कलियकण्हे बोहसि	१२१९
कलिय बहुलससते	१५५२
कलियसुक्के तदिण	६९४
कलियसुक्के पचमि	६८८
" "	१२०५
कलियसुक्के बारसि	७०३
कत्थ वि वर बावोधो	८३९
कत्थ वि हुम्मा रम्मा	८१९
" "	८५०

भाषा	भाषा सं०
कहमपवहणवीधो	४९२
कप्पतउववकञ्जता	९४
कप्पतकमूमिणपणिसु	८४७
कप्पतरुण विणासे	५०५
कप्पतरुण विरामो	१६३९
कप्पतरु सिद्धया	८४६
कप्पतुमदिणवत्तं	३६२
कप्पदुमा पणट्ठा	५०४
कप्पमहि परिवेडिय	१९५८
कप्पुर वनखपउरा	१८३९
कमलकुसुमेसु तेसुं	१७१५
कमलवणमहिदाए	२२९६
कमलं षउसीदिगुणं	३०३
कमला सकिण्टिमा ते	१७१२
कमलोदर वणणिहा	१६७८
कमसो भरहादीण	१४२१
कमसो वड्ढति हु	१६३५
कमसो वप्पादीण	२३२८
कमहाणीए उवरि	१८०६
कम्मं षोणीम दुवे	६२
कम्माण उवसमेण य	१०३१
करवणतलप्यहुदिसु	१०१९
करवमणिखल्ल णि	१०९१
करिकेसरिपहुदीण	१०२५
करिहरिसुकमोराण	३७७
करुणाए णाहिरामो	५०६
कलुसीकदमिम भच्छदि	६२८
कस्हारकमलकदल	१६७०
कस्हारकमलकुवलय	१३५
" "	३२८
कचणकूडं णिवसह	२०६८
कचणणिहस्स तस्स य	४९१
कचणपायारत्तय	१५६
कचणवेदी सहिदा	१५४
कचणसमाणवणो	४७८
कचणसोवायाधो	२३४०

गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०
कंठयसकरपट्टवि	११७	कुंजरपुरयमहारह	१७०५		
कदो भरिद्वरसरा	१६९०	कुंजरपट्टवितपुहि	१७०७	ख	
कपिलपुरे विमलो	५४५	कुंडलगिरिम्मि चरिमो	१४९१	क्षणमेते विसयसुहे	६२१
काङ्गण चलह तुम्हे	५९४	कुंडलसंगदहारा	३६५	सतिय पाविसलखा	१६०६
काङ्गण दार रख	१३४६	कुंडलवणसडसरिया	२४२२	खयवड्डीणपमाणं	२०५६
काङ्गणमतराम	१५४९	कुंडलस वनिखणेण	२३५	खयवड्डीणपमाणं	२४३४
कामप्युणो पुरिसो	६३७	कुंडल दीवो सेलो	२६४	खणभइगिणवडुगपण	२६२२
कामातुरस्स गच्छदि	६३७	कुंडेसु देवीधो	२००१	खणभसणभसगणउ	२६३०
कामुम्मतो पुरिमो	६३६	कुंघु चउत्तके कमसो	१२४२	खयुच्छेहो कोसा	१६२६
कालन्तयसभूद	१०२१	कुं देवुसलसवला	८२	खाइयरवेत्ताणि तदो	८०३
कालप्पमुहा णाणा	१३९७	कुंडम्मि य वेसमणे	१७३	खीरोदा सीदोदा	२२४२
कालमहकानपदु	७४७	कुंडागारमहारिह	१६९३	खुल्लहिमवतकूडो	१६८३
" "	१३९६	कुंडाण सवरिभागे	१६९८	खुल्लहिमवतसिहुरे	१६५३
कालम्मि सुसमणामे	४०६	कुंडाग उच्छेहो	१५२	खुल्लहिमवतसेले	१६४८
कालम्मि सुसममुसंभ	३६८	कुंडाग मूलोवरि	१६६७	खेत्तादीण अत्तिम	२६७३
कालसहावबलेग	१६०५	कुंडाणि गधमादण	००२२	खेमकरचदाभा	११८
कालस्स दो विवप्पा	०२२	कुंडो मिट्ठो णिसहो	१७०१	खेमकरणाम मणू	४४६
कालस्स विकारादो	८०७	केड पडिबोहेणग	३०००	खेमाणामा णवरी	२२६४
" "	४६३	केवलणाणवणफडकदे	५५६	खयरमुरारोयेहि	१६०२
कालस्साणु भिण्णा	२८६	केमरिबहम्म उणर	२३६०	ग	
कालेमु जिणवरारु	१८८४	केमरिमुहा मणुम्सा	२५३६	गच्छेदि जिणयणे	१०४३
कालोदयजमदीवो	०७९२	केमरिवमह सरोरह	८८६	गधभादो ते मणुवा	२५५२
कालोवहिबहुमजं	२७०५	कोडलकसयलभरिदा	१८०१	गयरावररथसस्तनु	११७४
कालिंससभियोगारु	२३८८	कोडलमहुणालावा	३६१	गयणेककणवपचल	२५६३
कालीण वणिजमड	१६४	कोट्टारु वेत्तादो	६३६	गयदत्ताण गाडा	२०५५
कालिणवणग बहुण्णा	६२९	कोडितिय गोसखा	१००१	गरुडय सिरिप्पह	११५
कुणकुडकोडलकोरा	३०६	कोडितिसहस्सा णवसय	१२८०	गहिकण णियमदीए	६८८
कुञ्जावामणुतणुणो	१५३१	कोडडहम्मसयाड	७२८	गहिरुण जिणलिय	३७७
कुमुदकुमुदगणउदा	५१०	कोमारमडलिले	१०३८	गगाणईए णिग्गय	२०१
कुमुद चउसीदिहद	३००	" "	१०४२	गगाणई व सिणु	२६६
कुम्भुण्णादजोणीए	२९९७	कोमाररजउच्छदुमथ	७११	गगातरणिणीए	२३७
कुलगिरिसरिया मधर	२१९४	कोमारो तिणिसया	१४६१	गगामहाणदीए	२४८
कुलजाईविज्जाधो	१४१	कोमारो दोणिसया	१४७३	गगारोहीहरिया	२३६६
कुलघारणाडु सध्वे	५१६	कोसडो षवगाडो	१६१६	गगासिधुणईहि	२६६
कुसलावाणादीमु	५१२	कोहादिचउत्तकारु	२६६१	गगासिधुणदीण	१५६८
कुंजरकरधोरधुवो	२३०६				

गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०
गंवासिधूणामा	२३२३			चउणवणवइगिखणभ	२६०४
गडमहिनवराहा	६१२			चउणवणवणवउखणका	२२४६
गतु पुब्बाहिमुह	१३१८			चउतियइगिपणतितियं	२६५६
गतूण वोवभूमि	२५६			चउतीससहस्साणि	२२६४
गतूण दक्खिणमुहो	१३४३			चउतीसतिसय सजुह	६३७
गतूण लीलाए	१३१६			चउतोरणवेदिजुदा	२१८८
गतूण सा मउभ	२३६६			चउतोरणवेदीजुदो	२२३
गउव्वणयरणासे	६१८			चउतोरणवेदीहि	२१२२
गामणयरादिसव्व	३४५			चउतोरणोहि जुत्ता	२७५
गामारा छण्णउदी	२०६०			चउतोरणोहि जुत्तो	२२७
गामति जिणिदाग	७६७			चउदालपमाराइ	५६८
गिरिउदवचउउंभागो	२८१५			चउदालसमा बोरेस	१२५०
गिरिउवरिमवामादे	२७८			चउपणउखणभप्रउतिय	२६४८
गिरितउवेदीदार	१३७३			चउपणउखणकचउइगि	२६७५
गिरितउवेदीदारे	१३४८			चउपुव्वगजुदाइ	१२६३
गिरिउदुमउभउदेम	१७३८			" "	१२६४
गिरिभट्टमासविजय	२६४४			चउपुव्वगजुदाओ	१२६७
" "	८६८			" "	१२६८
गोदरवेमु मोला	३७६			चउपुव्वगउभहिया	१२६५
गुउभकओ इदिगदे	६४५			" "	१२६६
गुणओवा पउउनी	४१५			चउरक ताडिदाइ	११२६
गुणधरमुणेसु रत्ता	३७१			चउरउभहिया सीदी	१३०६
गुणिदूण दमेहि तदो	२५६०			चउरगुलतरामे	६०४
नेवउज कण्णपूरा	३६६			चउरगुणमेतमहि	१०४६
गोउरतितोरटरममा	१००			चउरामीदिसहम्मा	१२८४
गोउरदुवारमउउ	७५१			चउलवमादो मोहमु	२६५४
गोउरदुवारवाउल	८०१			" "	२६५७
गोकेमरिकरिमयरा	३६३			चउउखणममहियअउ	६६०
गोधूमकनमतिलजव	२२७१			चउवणगउखणउपचमु	१२५६
गोमुहमेसमुहखा	२५३८			चउवणग तीरणवउ	१२५६
गोमेदवमयखधा	१६५३			चउउवणउभहियाणि	२८८६
गोवदणमहाजवखा	६४३			चउवणगलवणउखणर	१२७४
गोमीमभलयचउण	८६६			चउवणगमहस्साणि	२२५५
" "	८६७			चउवाओमउभउपे	१६८७
	८६७			चउविदिमासु गेहा	२३४६
	८६७			चउवीस जलहिखडा	२५६६
		घ			
		घउतेललभमगादि	१०२३		
		घणयउरकम्ममहासिस	१८१०		
		घणसुसिरिणुदुलुख	१०१३		
		घटाए कव्पवासी	७१६		
		घाणिदियमुदणगणा	१०००		
		घाणुनकस्सखिदीदो	१००१		
		घादिवखणए जादा	६१५		
		घोरउठकम्मणियरे	१२२२		
		च			
		चइदूण चउगदीओ	६४६		
		चउअउठउखणकतियतियपण	२६८३		
		चउअउठउपचमत्तउठ	२६७२		
		चउअउठलुगदुखदो	२६०८		
		चउइगिणवणवणदोदो	२७४२		
		चउइगिदुगवणमगदुग	२७२१		
		चउ एककण्णकदुग अउणभ	२६१६		
		चउकौमह दमउभ	१६६१		
		चउगोउरदांगेमु	७५३		
		चउगोउरमजुत्ता	८०		
		चउगोउरगामिनाल	१६६६		
		चउउखणकउठकु अउ पच य	२७०३		
		चउउखणकवचणमअ	२६५२		
		चउजुलजोयगमय	२०६३		
		चउओउगउउखण	१८४५		
		चउओउगउउखणहा	१६३६		
		चउजोयगणवखाणि	२६३६		
		" "	२८६०		
		चउगउदिसवा ओइ	१११४		
		चउगउदिसहस्साणि	१७७५		
		" "	२२५२		
		चउगअअउपणवणदुग	२७२८		
		चउगअअउगिअउणव	२६००		
		चउणवअअउपणमग	२७२०		

गाथा	गाथा सं०
चउबीससहस्राणि	१४०६
" "	१४१५
" "	१६०८
" "	१६१४
चउबीसं चैय कोसा	७५६
चउबीसं चावाणि	३४
चउबीसचिचय बंढा	१४५७
चउसगसयणभछक	२६३३
चउसट्टिचामरैहि	९३६
चउसट्टी पुट्टीए	४०९
चउसण्णा णरतिरिया	४२१
चउसत्तएककुडुगचउ	२६१२
चउसत्तेट्टुकुडुग	२८२
चउसत्तट्टीप्पिण्णट्टु य	२६९३
चउसदनुदुदुसहस्सा	१२४८
चउसयसहस्साणि	१२४५
चउसयससहस्सा	१२४६
चउसालावेदीओ	७३१
चउसीदि एउदि	६७०
चउसीदिलवखगुणिदा	३१०
चउसीदिसया ओही	११३४
चउसीदिसहस्साइ	११०६
चउसीदिसहस्साणि	११०३
चउसोदिहदलदाए	३०६
चउसीदी कोडीओ	२७४६
चउकहरमाणमथणो	२३१८
चउकिस्स विजयमगो	१६४०
चउकीण चामराणि	१३६५
चउकीण माणमथणो	२७२
चउकी दो मुण्णाइ	१३०२
चउकुप्पत्तिपहिता	१३१५
चउत्तारि चउदिसामु	२५१९
चउत्तारि जोयण्ण	२६६६
चउत्तारि सवाणितहा	१९१
" "	१६३
चउत्तारि सवा पण्णा	११६५

गाथा	गाथा सं०
चउत्तारि सहस्सा सव	१११०
" सहस्साइ	११३१
" "	२०६५
चउत्तारि सहस्साणि	१९६३
" "	२६६८
" "	२८४३
चउत्तारो चउत्तारो	८४२
" "	२५७९
चउत्तारो पायासा	२४३९
चउमुहबहुमुहधरज	११६
चउरियट्टालयचाण्ह	१७६
चउरियट्टालयपउरा	२१५४
चउरियत्तेट्टुलयरम्भा	७४२
चउरियट्टालयविउडा	२१२७
चउडालसवरपाणा	१५३९
चउडालसवरपाणा	१६४४
चउदपहवुप्फदंता	५९५
चउदपही चउपुरे	५४०
चउदप्पह मल्लिजिणा	६१७
चउदाहे सग्गदे	४८६
चउदो य महाचदो	१६१०
चउपाए वासुपुउओ	५४४
चउमरषटाकिकिणि	२०२
" "	१९५६
चउमरषट्टुदियुदाण	८१४
चउमीयरवरवेदी	१६५०
चउमीयरसमवण्णो	४६७
चउण्णवरसेणाओ	११९०
चउलीस जोयण्णइ	१८१८
चउलीस सहस्साणि	१७०२
चउवाणि छत्सहस्सा	८८०
" "	८८६
चउचिते बहुलचउदधी	७०८
चउचितोवरिमत्तलाओ	२४३०
" "	२५०४
चउचितियमभितियं वा	६८२

गाथा	गाथा सं०
चउमसीदि सहस्साणि	१७६४
चउमसीदिहदं मवणं	२९६
चउमसीदी बाहउत्तारि	१४३३
चउम्लहिमबंतक वे	२१४
चउम्लिबदक्खण्णचाए	१६३६
चउम्लि तेसु पुरेसु	२१९०
चउम्लि देवारण्णं	२३४३
चउम्लि उउडकण्णा	२७७३
चउम्लि तिण्णि तिण्ण व	२३३३
चउम्लि बारसवथा	८६५
चउम्लिंति मामुसुत्तर	२८१८
" "	२९६८
चउम्लिंति कञ्जण्णामी	२२६०
चउम्लिंति दिव्वेदी	२१२६
चउम्लिंति पुरदो	१६३४
चउम्लिंति दाडिदि	८०६
चउम्लिंति किण्हण्णिज्जम	१२०६
चउम्लिंति बहुलचउरिजे	१२१३
चउम्लिंति य ममवासे	६९६
चउम्लिंति मुक्कसुट्टी	११६८
चउम्लिंति मुक्कतविण	७०२
" "	७०६
चउम्लिंति मुक्कदसओ	१२००
चउम्लिंति मुक्कचमि	११९७
चउम्लिंति सिदण्णवओ	६५१
चउम्लिंति किण्हरेरिस्सि	६५६
चउम्लिंति मुक्कसुट्टी	६७२
चउम्लिंति कोट्टा	१२९८
चउम्लिंति हियसमसय	९६५
चउम्लिंति मीरण उ वं	२७५४
चउम्लिंति मुक्कओ तत्तिव	२७९६
चउम्लिंति जोयण्णकसा	२८६१
चउम्लिंति वक्खरसमहिय	६५४
चउम्लिंति सयसहस्सा	६०२
चउम्लिंति सहस्सजोयण्ण	१९५
चउम्लिंति सहस्सवव	१५१०

भाषा	भाषा सं०	भाषा	भाषा सं०	भाषा	भाषा सं०
बौद्धकमनवासो	१८९२	छद्मोत्पिबद्द्विपयुक्चउ	२९३४	अथदीधम्भंतरए	७०
ख		छद्मोत्पिसवसगपए	२७००	" "	७१
अनकमुपपंचसत्तं	२७५५	अपराइविछत्तिवदुग	२७३७	अथदीउवरिवभागे	१६
अनकमुपकेसा सन्ने	२४२४	अपराइचउहिसामुं	६२३	अथदीउवरिवभं दे	२०
अनकेनकएकअइतुव	२८५८	अपराइयुवतिवद्द्विपयुव	२७४५	अथदीए भम्भंतर	८६
अनकेनइदोपिणवडविपयु	२६७७	अपराइसहस्राणि	२२५३	अथदीबाहिरभागे	६८
अनकं अपराए सुवत्तिव	२४०५	अपराइसहस्रोह्नि	१७७२	अथदीविण्णासाइ	१२
अनसंबुडविभंडव	५२३	" "	१७६५	" "	२५६८
अनचउद्दगिएनकेनकं	२६४२	अपराइंतरदीवा	१४०८	अथमअभादो सर्वरि	७
अनचउसवअनकेनकदु	२७४४	अपराइ रासरिदी	१०८८	अणसंतरेसुं पुह पुह	७१०
अपिणव सवाणि पण्णा	२७६९	अपमुहुषो पावासो	६४४	अतिवच्छसि विक्खम	१८८०
अपनेव सहस्राणि	११४४	अपलनका छावट्टी	१८७३	" "	१८८०
अपनकअकदुमसव	२६१८	" "	१८६५	" "	२६२८
अपयोयनेककोसा	२००	अपनकसा छासट्टी	१८६५	अथमगिरिवाहितो	८१५०
" "	२१७	" "	१८६६	अथमगिरीए सर्वरि	८१०७
अठम्मि त्रिणवराण्य	८६९	अपनकसा बासाए	१४७६	अथममेघगिरीदो	८११४
अट्टीए वणसंभो	२२०१	अविदुण माणुसुत्तर	२८२८	अथम मेघगिरी व्व	८१०४
अणउदिकोडिगामा	१४०५	" "	२८३७	अथम मेघसुराए	८११२
अणउदिसवा भोही	१११७	अथोसजुवेककसय	२६६९	अथमगोवरि बहुमअ	८१०५
अणउदिसहस्राणि	२२५०	अथोससहस्राणि	२२६७	अथमणामनोयपालो	१८६८
अणम अडतिय चउपए	२६८७	अथोससहस्राहिय	१२५५	अथमलकवाडा दिग्वा	१८०
अणव अणम एनक	२४०४	अथसहस्राडं भोही	११४०	अथमलाअमनपसूदा	३३८
अणवदिनोपणसवा	२६४७	अथसमपणइगिअणएव	२८९५	अथमभाभित्तियसुरइइ	१८०८
अततयाविजुता	१६०१	अथसयददुअहेहो	४८३	अथमकित्ति मुणिसुअव	१६०१
अततयाविसहिदा	२०५	अथावाससहस्राणि	१२३७	अथमसेणचककट्टी	१२६१
" "	२४२	अथावत्तिसहस्राइ	१४६५	अथमरुलप्यमुहाए	१०६६
अताअतादि सहिभो	१६२८	" "	१४६६	अथमजघाफलपुप्फ	१०४४
अतादिविचवजुता	८५४	अथावत्त च सयाणि	२६०६	अथमअरचत्तलोहा	१९७२
अतासिदअचकका	१३६१	अथावत्तरिजुदअस्य	६७६	अथमसिहरे विक्खमो	२८७४
अत्तिपणमअत्तिवदुग	२७३८	अथवत्तरेण मरदि पुरिसो	३८१	अथमसिइच्छसि वास	१८२३
अत्तीसपुअनकका	५९६	अथदणभेदएदहए	६२४	अथमअह जोग्गट्टाए	१३६४
अत्तीम सहस्राणि	२४४१	अ		अथमअ कुणदि विसयलुट्टो	६२०
अत्तीस भक्खाणि	२८६०	अथकाने वीरजिणो	१५१७	अथमअणामा ते कूडा	१७४६
अत्तव्वसवपयत्ते	६१४	अथकाने मरदि पुरिसो	६२२	" "	१७८३
अत्तएवपएअइदुग	२७२४	अथकाने मरदि पुरिसो	६४६	अथमअ पट्टुअजिणवसो	२१८६
		अथकाने मरदि पुरिसो		अथमअदीवअिदीए	२७५८

भाषा	भाषा सं०	भाषा	भाषा सं०	भाषा	भाषा सं०
बंजूदीबखिरीए	२६६७	बीबाए जं बमं	२०५०	जे संसारसरीरभोगबिसए	७१२२
बंजूदीबपबणिणद	२५८६	बीबकदीपुरिमंता	१८५	जेसि तरुण मूजे	१२४
" "	२६२३	बीबाए पुगलाए	२८३	जोएणो सक्तावता	२९६६
बंजूदीबमहीए	२७८२	बीबाबिक्खंभाए	२६३७	जोएण मट्ठसहस्ता	१७४५
बंजूदीबस तदो	२०६८	बीहासहस्तजुगजुद	१८६९	जोएण मट्ठच्छेहो	१८४४
" " "	२१४६	जीहोठवतएासा	१०८२	जोएण महिय उवय	७८६
जबूदीवे मेहं	४३५	जुगलाणि अएतएणुं	३६१	जोएण उएतीससया	१८०१
" "	४४४	जुगब समंतदो सो	१८१३	जोएण एवएउदिसया	१७६५
जबूरुमखस्स थसं	२२२१	जे अम्मतरभागे	२४१७	जोएण तीससहस्ता	२०४६
ज भासइ दुगलसुहं	१०२४	जे कुम्भति ण भत्ति	२५४८	जोएणदलवासजुदो	२७९९
ज लड अवरएण	२७५५	जे गेण्हति सुवज्जण	२५४६	जोएणदलबिक्खंभो	१६५२
ज हवदि अट्टिसत्त	१०४१	जे छडिय मुणिसथं	२५४६	जोएणपचसया	२७६८
जादान भोगभूवे	३८३	जे जुत्ता एरतिरिया	८०५	जोएणपचसयाणि	२७६६
जादिभरणेण केहं	३८५	जे जेट्ठदार पुरदो	१६४६	जोएणवज्जम्सयाणि	३७६७
" "	३०१	जे जेट्ठम्मि चावपुट्ठे	१९२	जोएणलवसहस्ता	१८६
जादे केवलणाणे	७१३	जे जेट्ठसिदबारसोए	५४८	जोएणलवसत्तिदय	२८४६
जादो सिद्धो बीरो	१८८८	जे जेट्ठस किण्होत्ति	१२१०	जोएणलवस तेरस	२४५३
जादो हु अवरज्जाए	५३३	" "	१२११	जोएणवीससहस्त	१७७८
जिणयासादस्स पुरो	१६१०	जे जेट्ठस्स बहुल चत्थो	६६६	जोएणसट्ठिसहस्ता	२०४८
जिणपुरदुवापुरदो	१६६४	जे जेट्ठस्स बहुलबारसि	६६४	जोएणसट्ठोए द	२२१
जिणपुरपासादाए	७६१	जे जेट्ठस्स बारसोए	५४६	जोएणसत्तसहस्से	२०६१
जिणअवरएण्णहुदीए	२०७८	जे जेट्ठतरसखादो	२४४२	जोएणसदमज्जाब	६०८
जिणमदिरकूडाए	२०२३	जे जेट्ठाए बीबाए	१६०	जोएणसयमुत्तु वा	२१२६
जिणमदिरजुत्ताइ	४१	जे जेट्ठाभो साहाभो	२१८१	जोएणसयमुत्तिवदो	२७३
जिणमदिरजुत्ताइ	४१	जे जेट्ठाए मज्झिमाए	२४४६	जोएणसयबिक्खभा	२४३३
जिणएवदणापयट्टा	६३८	" "	२४५४	जोएणसयाणि दोण्णिं	२८८७
जिन्निभदियसोइ दिव	१०७४	जे जेट्ठाए मुहं द अणएण्हि	२४४८	जोएणसहस्तगाढा	२६१७
जिन्निभदियसुदएाएा	६९६	जे जेट्ठाए विच्चाबे	२४४४	जोएणसहस्तगाढो	१८०४
जिन्नुक्कस्सखिदीबो	६६७	जे जेट्ठा ती संलग्गा	२४४३	जोएणसहस्तमेक्क	१६६
जोउपत्तिलयाए	२१८८	जे जेट्ठा दोसयदडा	२३	" "	१८३३
जोए अउषणुमाणि	११०२	जे त्तियकुंडा जेत्तिय	२४१८	" "	२१००
जोए जोबो दिट्ठो	१०६०	जे त्तियमेत्ता तस्सि	१७८७	" "	२५७४
जोए एा होति मुणियाणो	१०६६	जे त्तियविउज्जाहरसेठि	२४१६	" "	२६१९
जोए पस्सजलाणिल	१०८४	जे त्तूण मेच्छराए	१३५६	" "	२६५८
जोए लालासेमच्छो	१०८०	जे मु जति विहीरा	२४५०	" "	२७५८
जोबसमासा दोणिए य	४१६	जे मायाचाररदा	२४५४	" "	२७५४

नामा	नामा सं०	नामा	नामा सं०	नामा	नामा सं०
	ॐ	नमपणपुसुपचवर	११८८	एवणएभतियइगिखणए	२९१५
भण भण भणतं छप्पय	९३४	नमसमवणनमपण	२६७४	एवणमपणधडचउपण	२६८९
	ट	नमसत्तगणप्रढणव	२९७३	एवतियएभणंएववी	२७१५
टकुकिण्णायारी	२७६३	नमसत्तसत्तगमचड	२८९१	एवडुगिगिदोणिणखंडुग	२९०७
	ण	नयराणि वचहतरि	२२१३	नववोखधट्टचउपण	२६९०
नहमितिका य रिढो	१०११	नयरीए चककवट्टी	२३०५	नवपणप्रढणमचउडुग	२७३५
नहरविदिसाविभागे	१७८९	नयरीए तडा बहुबिह	२४७६	नवपणप्रढणमचउडुग	२९०१
" "	१८५६	नयरीओसुसीमकुडलाधो	२३२४	नवपण वी नव छप्पण	२६३२
" "	१९८१	एयरेसु रमणिउजा	२७	एवपुसुचरसपाइ	११५०
नहरिविपणविसाधो	२८२७	एरकलकुडमउमे	२३६५	नवमीए पुवणधे	६५५
नहरिविभागे कूडो	१७५४	एरएगारीएवहेहि	२३०४	एवमे सुरलोयगदे	४७६
नहरिविसाध ताए	१७०४	एरतिरियाए विचितं	१०१७	नव य सहस्सा भोही	११२९
नउदणवेवीदारे	१३७६	एरतिरियाए धाऊ	३१८	नव य सहस्सा छस्तय	१२३९
नउदणउसीदि हव	२६९	एरतिरियाए वट्टुं	१०१६	नव य सहस्सा नवसय	२०१५
एउदिसहस्तकुवाणि	१४४४	एररासी सामणए	२६७०	एव य सहस्सा दुमया	१७४४
नउदोपुउदसवजिदे	१०३	एणिए चउसीदिगुए	३०२	एवरि य ताए कूड	२३६८
नखलतो अयपालो	१५००	एणिएया य एणिएगुम्मा	१६६०	एवरि वित्तो एवको	२१५६
नगोहसत्तपणए	६२५	एवमभइसगएवणकतिय	२९४५	" "	२१६०
नट्टयसाणा पुड	७६५	एवइगिणवसगछप्पण	२६६६	" "	२३२०
एट्टयसाला धंभा	७२१	एवइगिदोहीचउराभ	२८५६	एवरि वित्तो एसो	२६५
एणिवि भसणो जीवो	३३६	एवएककपचएकक	२६५१	" "	१७५२
नमप्रडपुडट्टसगणए	२७०२	एव कूडा वेट्ठते	२०८५	" "	२०८४
नमइमिपणनमसगडुप	२७२३	एव चउचउपणएछहो	२७२५	एवरि वित्तो कूड	२३८३
नमएकक पचडुगसग	२८०६	एव छचउ नम मयए	२४०३	एवरि वित्तो गियणिय	८०२
नमवजचटणिहाए	४३०	एव जोयएवीहस्ता	२५५६	एवरि वित्तो तम्मि	२३९३
नमखणउदणवसुवकतियं	११७३	एव जोयएवसहस्सा	२८८५	एवरि वित्तो पडुग	२६२५
नमखणउदणवसुवकतियं	२६१४	एवजोयएरालखारि	२६३३	नवलकख जोयणइ	२४४९
नमवमतिखएकेकेक	११७६	एवएउदिप्रहियमइसय	९६६	नववीसहस्साणि	११११
नमववतियप्रडचउपण	२६८८	एवएउदिप्रहियचउसय	९६७	नवसगछहोचउनव	२८९३
नमवतियतियइगिदोही	२७४३	एवएउदिसहस्साड	१४०७	नवसयणउदिणवेसु	१२५४
नववीणवपणचउडुग	२७३३	एवएउदिसहस्साणि	१८१७	एवसवच्छरसमहिय	९५८
नववीपणणमतिवचउ	२९३८	" "	२२५१	नव हवथा पासजिणे	५९४
नमपणणवणमप्रढणव	२८९९	" "	२२६५	ए हि उव मल्लजिणे	६१०
नमपणणवणमप्रढणव	१२७९	" "	२४४५	एदणणामामदर	१६६५
		एवएवमछणएवपण तिय	२९५३	एवणपुडुवीएसु	१८२६

गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०
एवंवननाउहेहे	२०२६	शिवश्यामलिहणठाणं	१३६४	गेमो मस्मी बोरो	६७७
एवादी प्र तिमैहन	१६७१	शिवश्यामकिदइमुणा	१३६१	शोइदियसुरशाराणा	६८४
एदी य शिविनितो	१४९४	शिवशिवजिणउवएहि	९२८	त	
एदुतरएदाधो	७९२	शिवशिवजिणैसराण	७४०	तककपेरां इ दा	७१५
णामो कु थू क्षमो	६७४	शिवशिवपउमखिदीए	७६६	तककारणं एहिह	४३३
णाणाअणबदणिचिदो	२२९३	शिवशिवपउमखिदीणं	८०५	तककालपउमभाणे	१५८५
णाणारयणविणिम्मिद	२२७०	" "	८२२	तककालादिम्मिणरा	४०८
णाणाबिहगदिमाइद	१०५६	शिवशिववत्तिलिखिदीणं	८३४	तककाले कप्पदुमा	४६२
एारणाबिह जिणगेहा	१३१	शिवमेरा अशिवमेण बा	६९२	तककाले तित्थयया	१५६९
एाभिगिरीया शाभी	२५८५	शिवएणु एणिय सोक्खं	६१६	तककाले ते मणुघा	४१०
एामेरा कतमाना	४७४	शिवकमसावणजुदा	४८४	तककाले तेयगा	४३९
एामेरा कामपुष्प	११७	शिवकमलावणएतणु	२३७३	तककाले भोगएरा	४६६
एामेरा चित्तकूडो	२२३६	शिवकमवड्डजतवा	१०६७	तककाले बहुमज्जे	१७२७
एामेरा जमगकूडो	२१०१	शिवव्वाणगदे बोदे	१४१५	तविखादिबहुमज्जेणं	१७६०
एामेरा महुसास	१८२८	शिवव्वाणे बोरेखिणो	१५१६	तनसेरो बहुमज्जे	१७६८
एामेरा मेच्छलडा	२३१५	" "	१५११	तगिरिउवरिमभागे	१७३२
एामेरा सिरिणिकेद	१२६	शिवसहकुसुरमुलसा	२११६	तगिरिणो उच्छेहो	२७६३
एामेरा हसगम्भ	१२२	शिवसहबराहरउवरिम	२०९०	तगिरिबिक्खराभाए	१३३५
एामेरा सिद्धकूडो	१५०	शिवसहबरावेदिवासे	२१६५	तगिरिदारां पविसिय	१३७४
एारयतिरियगदीदो	१५६३	शिवसहबरावेदिवारण	२१६९	तगिरिदोपासेसु	१७७९
एावाए उवरि नावा	२४२६	शिवसहसमाणुच्छेहा	२५७३	तगिरिमण्णपेस	२१४५
एासति एवकसमए	१६३२	शिवसहसुत्तरपासे	२१७१	तगिरिबरावेदीए	१३७८
एाहसपुलितबम्बर	२३१६	शिवसहसुत्तर भागे	१७९७	तक्खरिमम्मि एाराणं	१६२६
शिवकमिदुए वक्खदि	२१४३	शिवस्सिरिदुए एमा	२४६	तक्खेयदीववासे	२६५१
शिवगच्छसे वक्को	१३५७	शिवस्सेदत्त शिवम्मज्ज	६०५	तज्जीवाए वाच	१८७
शिवगच्छिय सा गच्छदि	२०९३	शिवस्सेयसमट्ट गया	१४४६	तणुवेज्ज महाएणिया	१३८७
शिवक्ख चिय एदाणं	४३४	शिवस्सेसवाहिएसाएण	३३०	तणामा किरामिद	११४
शिवेसस सक्ख	२	शिवस्सेसाण पहुत्त	१०३६	ततो लोहकडाहे	१०६४
शिवभरमत्तियसत्ता	६३२	शोलकुक्कवएरावदा	२१५१	ततो भमिदपयोदा	१५८१
शिवम्मलपण्णसरिसा	३२५	शोलनिरो शिवहो विव	२३५४	ततो भामतूए	१३२८
शिवम्मलपलिहविणिम्मिय	८६२	शोलशिवसहहिपासे	२०४३	ततो उववएणमज्जे	१३२६
शिवप्रादियपीडाणं	८६४	" "	२०५२	ततो ककको आदो	१५२१
शिवपलपवाहवदिदं	२६१	शोलदिशिवसहपठवद	२०३८	ततो कमसो बहुवा	१६३१
शिवजलभर उवरिगव	२४२	शोलाचलदविक्खएदो	२१४८	ततो कुमारकामो	५९१
शिवमोणुच्छेहजुवो	१९१८	" "	२२८८		
शिवमोणुगसुद पडिदा	५१४	" "	२३१७		

भाषा	भाषा सं०
तत्तो षड्दशउववण	८११
तत्तो षड्दशवेदी	८४९
तत्तो षड्दशसाला	८५७
तत्तो छट्टी भूमी	८३६
तत्तो जग्गा सम्भे	१५५६
तत्तो तम्भणवेदि	१३३२
”	१३३६
” थोवे वासे	१५२७
तत्तो दहण्ड पुरदो	१९४१
तत्तो दुस्समसुसमो	१८९७
तत्तो छय भूमिण	८२६
तत्तो पच्छिमभागे	२१३९
तत्तो पडमे पीडा	८७४
तत्तो पुरदो वेदी	१९४७
तत्तो पविसदि तुरिमं	१६१७
तत्तो पविसदि रम्मो	१५७६
तत्तो पंच जिणेषु	१२२७
तत्तो पुब्बाहिमुहा	१३३०
तत्तो विदिया भूमी	२१९६
तत्तो विदिया साला	८१०
तत्तो बेकोसुणो	७२५
तत्तो भवणखिदीघो	८५०
तत्तो य वरिससन्न	५८७
तत्तो वरिससहस्सा	५८८
तत्तो विषिसाक्का	१९४५
तत्तो विसोकय थोव-	१२४
तत्तो सीदोदाए	२१३८
तत्तो मेणाहिवेदि	१३४१
तत्तथिच्चय कु भुजिणो	५४९
तत्तथ य तोरणदारे	१७२०
तत्तथ य दिसाविभागे	१९८२
तत्तथ य पत्तयसोहे	१३५५
तत्तथ समभूमिभागे	१४९
तत्तथुवत्तियदणराण	१५७५
तत्तियक्कदुपचभेसु	१६८३
तत्तियं व तुरिमभूमि	२१९६

भाषा	भाषा सं०
तदियाधो वेदीधो	८२५
तदिया साला अण्णुण	८३५
तदक्खिणदारेण	२३७५
”	२३९०
”	२३८५
तदक्खिणसाहाए	२३७२
तदक्कमलणिकेदे	२३७४
तदक्कदक्खिणतोरण	२३८६
”	२३८६
तदक्कदक्खिणदारे	१७५८
तदक्कपउमस्सोवदि	१७५१
”	१७८५
”	२३९७
तदक्कपच्छिमतोरण	१३३३
तदक्कदारेण पविसिय	६९३
तदक्कवसे अणुराहे	११०१
तदक्कवसे खण्णत	१५५४
तदक्कवसे मज्झण्णे	२५७१
तदक्कव परिवेददि	२५८०
तदक्कव जिणभवण	२६१६
तदक्कव पुब्बावर	१८८७
तत्तपडमपवेसम्मि य	१३३१
तत्तपण्णिविदेदिवारे	२२६
तत्तप्यब्बदस्स उवदि	२१६
तत्तप्यासावे णिवसदि	१९५५
तत्तप्यसि हवोहिमण्णे	२५५४
तत्तप्यमज्जोग्गभोग	३४२
तत्तप्यभोगभूमिजादा	७७७
तत्तप्यज्जे रम्मण	५७१
तत्तप्यमणुडवएसादो	५०१
तत्तप्यमणुडिववपेसे	५५५
तत्तप्यण्णे णाकमदे	५५१
तत्तप्यण्णे तिदिवगदे	५६०
”	५६४
”	५६४
तत्तप्यण्णे सग्गमदे	१८६३
तत्तप्यण्णे वहुमण्णे	१४८६
तत्तप्यण्णे कदकम्मणाले	१६६४
तत्तप्यण्णे सिग्गिदेदी	

भाषा	भाषा सं०
तम्मि पवे प्राहारे	६८६
तम्मिबणे पुब्बादिसु	१६६७
तम्मिबणे बरतोरण	२०३०
तम्मि सहस्स सोहिय	२७१३
तम्मिह समभूमिभागे	२०६
तम्मि विभूतसामा	३४९
तम्मिग्गिग्गिह्णारा	१५६७
तम्मिग्गिग्गिग्गिग्गामा	२८१२
तम्मिग्गिग्गिग्गिग्गिग्गि	१०५६
तम्मिग्गिग्गिग्गिग्गिग्गि	१८७५
”	१८७६
”	२३८२
तम्मिग्गिग्गिग्गिग्गिग्गि	१३७२
तम्मिग्गिग्गिग्गिग्गिग्गि	६
तम्मिग्गिग्गिग्गिग्गिग्गि	१६७६
तम्मिग्गिग्गिग्गिग्गिग्गि	२५७
तम्मिग्गिग्गिग्गिग्गिग्गि	१५३
तम्मिग्गिग्गिग्गिग्गिग्गि	१५५७
”	१६२१
”	१९१६
”	२१७८
”	२३७८
”	२२६
”	१६७७
”	१६८९
”	१२८८
”	१५८९
”	१६२५
”	२३८८
”	२८०
”	३३२
”	५०३
”	१८७६
”	१५१४
”	६२

गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०
तस्मिं चिगिदपविमा	१६२	ताणम्भतरभागे	७७३	ताहे बहुविह मोताहि	१५९४
तस्मिं जिनए जिनसह	२६१	" "	७७५	ताहे रसजनवाहा	१५८२
तस्मिं बीबाहिवई	२५०८	ताण भवणाण पुरवो	१६४४	ताहे सनकाणाए	७१८
" "	२५११	ताण सरियाण महिरं	१३५२	तिगिज्जावो दक्खिण	१७६३
तस्मिं बीवे परिही	५१	भाए उदयप्पहुवी	१७८२	तिमुणिय पंचसुवाहं	११३३
तस्मिं देवाराणे	२३४४	ताए उवदेशेण य	२१६२	तिणि सयाणि पणा	११६६
तस्मिं पासाववरे	१९८६	ताए कणयमयाए	८८८	तिण्णसहस्सा तिसया	२०७७
" "	१६६१	ताए गुहाण वंदे	२७९७	" "	२४५८
तस्मिं पि सुसमदुस्सम	१६३८	ताए च मेरुपासे	२०५३	" "	२०१०
तस्मिं बाहिरभागे	२७७६	ताए दक्खिणतोरण	२२८६	तिणि सुपासे चवप्पह	११०५
तस्मिं सजादाए	४०३	ताण दिणयरमडल	८६५	तिष्णादिविहिल्लमणं	१०८५
" "	४११	ताण दो पासेसुं	२५७६	तित्थपवट्टणकालपमाण	१२८६
तस्सुच्छेद्दो दडा	४५२	ताण पि धंतरेसुं	१६११	तित्थवरचनकवलहुरि	५१८
" "	४५६	ताण पि मज्जभागे	७७१	तित्थयरणामकम्मं	१६०५
" "	४६१	ताण मज्जे जियणिय	७७४	तित्थयराण काले	१६०८
" "	४६८	ताणं मूले उव्वरि	७८६	तित्थयरा तग्गुरओ	१४८५
तस्सुत्तोरदारेण	२३८०	ताणं मूले उव्वरि	१६५७	तिदंसिद चावत्तरिं	१४८
तस्सुवदेसवडेरण	१३३८	ताण रूपयतवणिय	२०४१	तिदयवणणवखणम	२६२५
तस्सुवीए परिही	२८७८	ताण वरयासादा	१६७५	तिमिसमुहम्मि य कूडे	१७२
तस्सोव्वरि सिदपवसे	२४७२	" "	२४८१	तिमिसमुहो रेवद	२३६५
तह धट्ट दिणइदा	२४२५	ताण हम्ममदीण	८२१	तियइग्गिणमइग्गिल्लचउ	२६३२
तह पुण्णमद्दीसा	२०८६	ताण हेट्ठिममडिक्कम	२८८६	नियइग्गिदुतिपणपणय	२६९१
तह य तिविदुडुविट्ठा	५२५	ताणोव्वरि तदियाइ	८९३	नियग्गिममणमचउतिय	२९५५
तह य सुमच्चिणिवेरद्ध	१२७	ताण्णं तडितरल	६४६	तियएवकनवरणवडुग	२४०६
त उज्जाए सीयल	९०	तासुं धउवाखडे	१३८४	तियचउचउपण चउदुग	२७३४
त तस्स धम्मपिड	१५४८	ताहे अउजाखड	१५७६	तियचउसणमगयणं	२६४४
त मणुवे तिविदवगे	४५१	ताहे एसा खोणो	२८२२	तियछदीदोछण्णम	२९१६
त मूले सगतीस	१८२१	ताहे एसा वसुहा	१६१९	नियणम अडडमसयपण	२७०१
त वंदायामेहि	१९२६	ताहे गभीरमज्जो	१५७०	तियणमइण्णव इयिपण	२६७८
ताइ चिय केवलिणो	११६६	ताहे मक्खमभीरो	१५६६	तियणवडम्मम अडणम	२९२०
ताइ चिय पत्तेवक	११८१	ताहे चत्तारि जणा	१५५१	तियवडिण्णतिण्णपणसय	२७२०
ता एण्हिं विस्सास	४५०	ताहे तग्गिरिमज्जिक्कम	१३३८	तियतिय प्रडणमदोचउ	२६४०
ताडणतासणवघण	६२४	ताहे तिग्गिरिवामी	१३३७	तियतियदोद्दोग्गणम	२९०५
ताण अण्णवमवाणा	४१७	ताहे ताण उदया	१६१८	तियदोछ्चउणवडुग	२७१४
ताण जुगलाणदेहा	३८८	ताहे तुस्समकालो	१५८८	तियदोणवणम चउचउ	२९३६
ताण दुवाफच्छेद्दो	३२	ताहे पविसिद जियमा	१६२८	तियपणसंडुग छण्णम	२८९७

वाचा	वाचा सं०	वाचा	वाचा सं०	वाचा	वाचा सं०
शिवलक्षणपुत्रसद्वचनवर्ग	२६७४	ते कालवर्ग पत्ता	२५५१	तेसीदी इतिहस्तारि	१५५८
शिवलक्षणा कण्ठद्वी	२६३८	ते कुंभदसरिच्छा	२४८६	तेसु बरौदेसु तदा	१५०४
शिवलक्षणानि वासा	१५७८	तेज्येव मोचपासा	१९६६	तेसु विदमनुवाणं	३
शिववासा धडनासा	१२५०	तेजना मज्जविण	३५७	तेसुं पदमम्मि वणे	२२११
शिवलक्षणदुस्तहस्ता	१२४७	तेज तमं विरपरिद	४४२	तेसुं पद्मानरुक्मे	२२२३
शिवलक्षणरोपमेसुं	१२५७	ते तस्स धम्मववयणं	१३२५	तेहत्तरीसहस्ता	१७६३
शिविवा मोचखिदीए	३९२	ते तुस्य हरिवचद्वद्व	१३८८	तोयधरा विचिता	२००२
शिविहाधो वातीधो	२४	तेत्तिवमेत्तं कलि	१५०६	तोरणउच्छेहादी	२६८
शिवसाई पुष्पधरा	११७१	तेतीसम्महियाइ	२४५९	तोरणउदधो ग्रहिधो	७५५
शिव सहस्ता तिष्णिलया	११५६	तेतीससहस्ताइ	१७९८	तोरणकंकणजुता	१०१
शिव सहस्ता सत्तसया	१११३	" "	२१४०	तोरणदाराउबरिम	२३४१
शिवलक्षणविम्बवज्रना	१०६६	तेतीससहस्ताणि	१४६७	तोरणवेदोजुता	२२०८
शीए कुच्छा गुम्मा	३२७	" "	१४६८		
शीए तोरणदार	१३२९	" "	२४५७	ध	
शीए तोरणदारै	१८३५	तेवालं छतीसा	९७२	धंभाए मज्जसूमी	१८८७
शीए दोपासेसुं	२०८१	ते पाणतूर भूसण	८३८	धभाए भूमभागा	७८७
" "	२०८६	ते पासादा सञ्जे	८४	धभाए उच्छेहो	२५१
शीए पनाजनीय	२२६७	ते बारस कुलसेना	२५९०	भूमसुहमाधिभारं	२५४५
शीए परदो दर्शविह	१९५२	तेरसलक्षणा वासा	१४७३	घोदूण मुदिसएहि	८८३
शीए पुरधो वरिया	१६४८	तेरससहस्ताजुता	१६६४	द्व	
शीए बहुमज्जदेसे	१८४६	तेरससहस्तयाणि	१७६६	दकनामो ह्रीदि गिरी	२५६५
शीए मज्जिमवाये	१८३८	तेवण्णसहस्ताणि	१७४२	दक्खिणउत्तरभागे	२५७२
शीए भूमपएये	१८	तेवीसपुम्बलक्षणा	१४६३	दक्खिणदिससेद्धीए	११३
शीए कंदावावा	८९८	" "	१४६४	दक्खिणदिसाए णंदो	२८२१
शीदसमामाणंकां	३००५	तेवीससहस्ताइ	६०८	दक्खिणदिसाए भरहो	९३
तोससहस्ताग्रहिया	११७८	तेवीससहस्ताणि	५७	दक्खिणएदिसा विभागे	१६८०
" "	११७९	ते वेत्तयजुता	२९८६	" "	२३४७
तोससहस्ता तिष्णि य	११८०	तेसट्टिपुम्बलक्षणा	५९७	दक्खिणपीठे सक्को	१८५३
तीसोवहीण विरये	५७३	ते मञ्जे उचयरणा	१९०३	दक्खिणमरहस्ताइ	२६७
तुडिबं णउसीदिदं	३०४	ते सञ्जे कप्पदुमा	३५८	दक्खिणममुहपावरा	१३९६
तुरयइमदत्तिवरयणा	१३९०	ते सञ्जे वरजुबना	३६०	दक्खिणममुहेण तरा	१३४४
तुरमस सत्त तेरस	१४४०	ते सञ्जे वरवीवा	२५२३	दत्तविसीहिंविसेसी	६८०
तुरिचं व पञ्चममही	२२००	ते संभादीडाऊ	२९९०	दप्पणजवसरिसमुदा	२५३६
तुरिते षोडसिमाणं	८६८	ते सत्ताणियदेवा	१६६६	दप्पणतलसारिच्छा	९१८
तुरिमो य खंदिभूदि	१६१२	तेवीविसहस्सेसु	१२६०	दसमादिय छसयाइ	११५७
तुरंवा वरबीणा	३४८	तेसीदि मज्जाणि	१४१७		

गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०
दसवर्षकेवलाणी	११७०	बिम्बतरयणदीवा	४७	दुसहस्तजोयणाणि	२१२५
दसबोहसुभिस्त	९८०	दिवस पडि षट्सयं	२४६७	" "	२५९६
दसजोयणउच्छेहो	२२४	दिम्बतिलयं च भूमि-	१२५	" "	२८७२
दसबोयणसक्काणि	२६६३	दिम्बपुरं रयणणिहि	१४०६	दुसहस्ता बाणउबी	२१५२
दसबोयणाणि उविरि	१११	दिसिबिदिसघतरेसुं	१०१४	दुस्समसुसमं दुस्सम	३२१
दसबोयणाणि महिरो	१६८१	दीणाणाहा कूरा	१५४०	दुस्समसुसमे काले	१६४१
दसबोयणाणि ततो	१४३	दीपिकाभिगारमुहा	२७७८	दुस्समसुसमो तविभो	१५७७
दसबोयणावगाहो	१९६	दीवबगदीभ पासे	२५०	देवकुमारसरिच्छा	१३९
दसपाणसत्तापाणा	२६८५	दीवन्मि पोवखरद्धे	२८३८	देवकुल्लेत्तजादा	२०९६
दसपुब्बलससमहिंय	५६५	दीवगबुमा साहा	३५४	देवकुल्लवणणाहि	२२१६
" "	५६६	दीवायणयाणवका	१६०७	देवच्छेदस्स पुरो	२९५६
दसपुब्बलसक्खसुद	५६३	दीवा लवणसमुदे	२५१८	देवारण्य षण्ण	१३५१
" "	५६४	दीहसामेक्ककोसो	१५५	देवा विज्जाहरया	१५६९
" "	५६७	दीहसाम दमाण	८५६	देवो तस्स पसिद्धा	४५७
दसमते चउसोदि	१२२३	दीहोरो विरथारे	२०७२	देवीदेवसमूहा	११९५
दस य सहस्सा णउदी	१८०५	दुक्ख दुज्जसबहुल	६३९	देवीदेवसरिच्छा	३८६
दस य सहस्सा तिसया	२०११	दुल्लगवणवचउतियणव	२४०७	देवी चारिणियाणीया	४६९
दसवाससहस्साणि	२९५	दुल्लपचएवकसगणव	२८६८	देस विरदादि उवारि	४१८
दसविद भूबासो	२००७	दुगमद्वेगयणवय	२७८१	दोकोट्टेसु चक्री	१३०१
दस सुण्ण पच केमव	१४२६	दुगएक्कचउदुक्खउणव	२९१३	दोकोसउच्छेहो	१७५
दहहह पकवदीभो	२२४१	दुगचउमद्वेगुह	२६००	दोकोसा षवगाहा	१७
दहपचयपुष्वावर	२४२३	दुगणभएविकगिअडवउ	२६२८	दोकोसा उच्छेहो	१६२३
दहमभ्भे घरएवदय	१६८९	दुगुणम्मि भहसाले	२०४५	दोचउमडवउसगख	२७१०
दडा तिण्ण सहस्सा	७८१	" "	२६५८	दोत्रोयणलवक्काणि	२६३४
दादूण कुलिगीण	३७८	" "	२८७६	दोग्गवअडलावअट्टुति	२६४७
दादूण केहदाणं	३७६	दुगुणाए सूचोए	२८०७	दोणांमुहाहिहाण	१४१२
दादूण पिडम	१५२४	दुगुणाएचिय सूजोए	२५६१	दोणए इमुगाराण	२५८१
दारम्मि वइजयते	१३२७	दुगाणडबीहियुत्तो	२२६१	" "	२५६३
दारवदीए णेभी	६५०	दुचउसगदोण्ण सगपण	२६९९	" "	२५६९
दारसरिच्छुस्सेहा	१८८४	दुणडाग मिहुरम्मि य	२४७५	" "	२८३०
दारस्स उवरिडेसे	७६	दुत्तडावो जलमउजे	२४३७	" "	२८४१
दागोत्ररिमवएसे	४६	दुविहा किरियारिद्धो	१०८२	" "	२८४५
दारोव रिमचराण	७६	दुसममनी धोमहिभो	१५३०	दोण्ण उमुगाराण	२७५१
दिवन्नोववासमादि	१०६१	दुसयचउमद्वित्रीषण	७८०	दोण्ण पि अतरास	२१०२
" "	१०६१	दुसयजुदमगसहस्सा	११३७	दोण्ण वि मिलिदे कप्पं	३२०
दिव्यंतरयणदीवा	२८	दुसया अट्टुत्तोस	१८०	दोण्ण मदा पगवणणा	१५१६

गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०
दोष्णि सया धदहृत्तरि	१२८५	धादइसडे दीवे	२६१३	पदमाए बिदियाए	७८०
दोष्णि सया पण्यासा	२०३६	" "	२८३१	पदमाणीषपमाए	१७०६
दोष्णि सया बीमजुदा	१५०१	धादइसडो दीघो	२५६७	पदमे कुमारकालो	५६०
दोष्णि सहस्सा चउसय	११२१	धादुमयगा वि तह्हा	२६८७	पदमोवरिम्मि बिदिया	८८५
दोष्णि सहस्सा तिसया	११२५	धिदिदेबीय समाणो	२३९०	पदमो विसाहणामो	१५९७
दोष्णि सहस्सा दुसया	२२४३	धुव्वंतययवहाया	१६७७	पदमो सुवह्णामो	१५०२
दोतीरबोहिहं व	१३४९	धुव्वंतययवहाया	१८३६	पदमो ह्ण उसहसेणो	६७३
दो दो भरहेरावव	२५८९	धुमुक्कपइएणह्णदीहि	६२१	पडिसुदणामो कुलकर	४३२
दोदोतियइगितियएणव	२८९०	धूमो धूमो वज्ज	१५७१	पडिसुद मरणानु तदा	४३७
दोदोदोणवतियपए	२६८६	धूमोसासागोउर	७५०	पएणइछप्पण पणदुव	२७२९
दोदोमु' पासेसु'	८२३	" "	७५२	पणइमि अट्टिमिछणव	२८६६
दोपक्केहि मासो	२९२	धूमोसासाए पुढ	७५४	पणइगिचउणभमउडतिय	२६४६
दोपएणचउइगितिय दुग	२७३९	धुव्वघडा एणणिहिणो	८९०	पणघणकोसाया	११३३
दोपचवरइमिदुग	२९५९	प		पणचउतियलक्खाइ	२१६४
दोपासेसु य दक्खिणए	२८४०	पउमदह्णानु दिसाए	२०८	पणचउसगट्टितियपण	२६८५
दोपासेसु' दक्खिणए	२५९२	पउमदह्णो पच्छिम	२५५	पणछप्पणपणपचय	२७३०
दोह्णदुमुणएखकका	१४५५	पउमदह्णो पणुसय	२६२	पणजोयणलक्खाणि	२६६५
दोह्णदु सत्तमए	१२८०	पउवपह्णे पुव्वमुद्दा	१७१४	पणणभपणइगिणवचउ	२९२६
दो सक्खा पण्णरसा	२८७०	पउमदह्ण पउमोवरि	१७००	पणएणवपणगभदोचउ	२९४१
दोसगएणवक्कदुग	२६३६	पउमदह्णउ चउगुण	१७८४	पणतितितियछपणय	२६६५
दोसगएणवचउछदो	२७२६	पउमदह्णउ दुगुणो	१७५०	पणतियणवइगिचउणभ	२६११
दोसगदुगतिगणवणभ	२९२१	पउमदह्णानु उत्तर	१७३६	पणदाललक्खसक्खा	२८०४
दो मुण्णा एक्कजिणो	१३००	पउमदह्णानु उत्तर	१७१८	पणदोसगइगिचउणो	२८६२
दोमु' पि विदेहेसु	२२३०	पउमपह्णपउमगजा	१५९२	पणपणमउत्राल्लडे	२६८०
ध		पउमम्मि चदणामो	१७०१	पणपणचउपणघट्टदुग	२७१६
घणदो त्रिवदाणिए	२३०७	पउम चउसीदिहद	३०१	पणपणममइगिखणभ	२६०३
घम्ममि मतिकु धू	११०७	पगदोए सुदणाराए	१८२६	पणपरिमाराकोसा	८७७
घम्ममारकु धू कुक्कवसजादा	५५७	पगदोए घवखलिधो	६१२	पणपक्कचणवदुग	२९५७
घयवहाए अतर	८३२	पच्छिमदिसाए गच्छदि	२४००	पणभूमि भूमिदाधो	८४८
घरणिघरा उन्तु गा	३३२	पच्छिमपुहेए गच्छिय	२३८१	पणमह्ण चउवीसजिण	५२१
घरणी वि पचवण्णा	३३३	पच्छिमपुहेए तलो	२३९८	पणमेच्छलयरसडिसु	१६२९
घवसादवत्तजुला	१८४६	पउज्जना गिक्खतिय	२९७९	पणलवसेसु गदेसु	५८२
घादइतरुणताए	२६४१	पउज्जता पउज्जता	२६८४	पणवणएभमहियाणि	११५६
घादइमडदिमासु	२५३०	पडमहरो सत्तमए	१४४०	पणवण्ण रुक्खवत्सा	१२८१
घादइसडपवणिणद	२८२६	पडमाए भूमोए मुप्पह	२१६५	पणवण्णासा कोसा	७६३
" "	२८५७			पणवीसजोयणाइ	२१२१

गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०
पणवीसजोयणाइ	२२१३	पण्णारसवासलक्खा	६६३	पत्तेककं बुतडावो	२४३२
पल्लुबीसद्धियचंदा	१६७१	पण्णारससया वंदा	१६९६	" "	२४३६
पचवीसम्भहियसय	८९६	पण्णारससहस्ताणि	२१	पत्तेककं वायाला	२४५६
" "	१९९६	पण्णारसेसु जिणिवा	१२९६	पत्तेककं पुम्बावर	२३३२
" "	२०७५	पण्णारसमणेषु चरिमो	१४६२	पत्तेककं सम्बाणं	१९००
पणवीसम्भहियाणि	१६१६	पण्णसयसहस्ताणि	१७५१	पम्मा सुपम्मा महापम्मा	२३३४
पणवीससहस्सेहि	२०४७	पण्णाराधियपंचसया	२५३२	परघरदुबाररएसुं	१५४६
पणवीस दोग्गिणसया	३१	पण्णारसलक्खाइ	२५६०	परचक्कभीधिरहिदो	२२७७
पण्णवीसाहियच्छस्य	८६०	" "	२६०३	परमाणुस्स णियण्डिद	२७८
" "	८८१	पण्णारसलक्खाणि	२८६४	परमाणु य अणुंता	५६
" "	८८७	पण्णाररठेहि अहियं	७३५	परिवेटेवि समुदो	२७६२
पणवीसाधियच्छस्य	७८२	पण्णासकोडिलक्खा	५६१	पलिदोवमट्टमसे	४२८
पणसगदोद्धति यदुग	२७३६	पण्णासकोसउदमो	१८६१	पलिदोवमवसमसो	५०६
पणसट्टिसहस्ताणि	२८५४	पण्णासकोसउदया	१९४२	पलिदोवमट्टमसहिय	१२७१
पणसमजोयणरु द	१६६२	पण्णासकोसवासा	१९३९	पलिदोवमस्स पावे	१२५८
" "	२०१४	पण्णासजोयणाइ	२४५	पल्लडं बोलीणे	५७७
पणसयपमाणगाम	१४११	पण्णासजोयणाणि	१८१	पल्लस्स पावमडं	१२९०
पण्णहत्तरिष्वावाणि	२९	" जोयणाइ"	२७४	पबणदिसाए होवि ह्ठ	१८५८
परिणीधीए जनुदीव	२४०९	" "	२००४	पवणअयविज्जयगिरी	१३८९
पणुवीसअधियवणुसय	८३३	पण्णासम्भहियाणि	११६०	पवणीसाणविसासुं	१६७८
पणुवीसजोयणाइ	२२०	पण्णासवणद्विजुवो	१०२७	पवणेण पुञ्चिय त	२४६१
पणुवीसजोयणाणि	२१६	पण्णाससहस्ताणि	११७७	पवराधो वाहिणीधो	३३४
पणुवीसजोयणुदमो	११०	" "	११८६	पविसति मणुवतिरिया	१६३३
पणुवीससया भोही	११५५	पण्णाससहस्ताहिय	६०३	पव्वजिदो मल्लिजिणो	६७५
पणुवीससहस्ताइ	१३०९	" "	१२७६	पव्वदविसुट्टपरिहो	२८७६
" "	१४३६	" "	१२७७	पव्वदसरिच्छणामा	२१०६
पणुवीससहस्ताणि	१३१२	पण्णासाहियच्छस्य	४७३	पमरइ दाणुघोमो	६८१
" "	२१६८	" "	५८३	पम्मभुजा तस्स हवे	१७२५
पणुवीसहस्ताहिय	५००	पण्णाहिय पचसया	२५२१	पच हमे पुरिमवरा	१४६५
पणुवीमाधियच्छस्य	४७७	पसा(७)वेहि	६४८	पचयगणककुगचउ	२७५२
पणुवीसाहियतिसया	१३१०	पत्तेकक अट्टसमए	३००३	पच जिणिदे वदनि	१४२६
" "	१३१३	पत्तेकक कोट्टारा	८७५	पंचट्टपणसहस्ता	११४९
पणुवीसुत्तरपणसय	५०२	पत्तेकक चउसखा	७३२	पचतिटिएककुगणभ	२००२
पण्णहत्तरिजुदतिसया	९०१	पत्तेकक जिणमंदिर	१६९४	पचपुसगाउधमो-	६२६
पण्णट्टिसहस्ताणि	१२३४	पत्तेकक णयरीण	२४८०	पचमधो वि तिणुडो	२२३७
पण्णासम्भहिय च सय	१३८०	पत्तेकक ते दीवा	२७७०	पचमिपदोसममए	१२१४
पण्णारसलक्खवच्छर	१२७५				

भाषा	भाषा सं०
पंचविधेहे सद्धि	२९८१
पंचसएहि जुता	२०१३
पंचसवधाचणु गो	२३०८
पंचसयजोवभाणि	२०४२
" "	२१७३
" "	२२४४
" "	२५२०
" "	२६२७
पंचसयघणुवामाणो	५६२
पंचसयवमहिमाद्	१११६
पंचसयाए बग्यो	६६५
पंचसया तेवीस	२१५
पंचसया पण्णासरि	४९०
पंचसया पण्णाहिय	१३०३
" "	१४५६
पंचसया पुब्वधरा	१११३
पंचसया बावण्णा	७३४
पंचसया ऋज्जरा	७८५
पंचसहस्सजुदाए	१२८२
पंचसहस्सा चउसय	११४३
पंचसहस्सा जोयरा	२८८८
पंचसहस्साए पुढ	११४७
पंचसहस्सा तिसया	१६५०
पचाएमिलिदाए	१४९६
पंचासीदिसहस्सा	१२३२
पंडुवजिएगेहाए	२११३
पंडुवभवसाहि तो	१६६३
पंडुववण जिणमदिर	२३०३
पंडुववणस्स मउजे	१८६७
" "	१८७१
पंडुववणस्स हेट्टे	१६६१
पंडुवसोमएसाए	२६२४
पंडुवरापुगाहितो	१९६८
" "	२०२६
पंडुवसुवन्नतरए	१८४२
पंडुववण इदरम्म	१८३४

भाषा	भाषा सं०
पडुत्तिसाध समाणा	१८५९
पडुत्तिसासाएिच्छा	१८५७
पडुत्तकंबलएामा	१८५४
पाइलजनु पिप्पल	९२६
पाएणमनूरियमा	३४६
" "	८३७
पाएण महुरमुसाव	३४७
पावट्टाणे सुण्ण	५३
पावालस्स दिसाए	२४८७
पावासाए मरुदा	२४६२
पादूए जोयराय	५२
पायारपरि उताइ	२५
पायारवलहिगोउर	१६७६
पायालते रिएयराय	२४७३
पालकरउज मट्टि	१५१५
पासजिणे चउमासा	६८५
पासजिणे पएदटा	८८५
पासजिणे पण्णोमा	८६४
पासजिणे पण्णोस	८९२
पासम्मि वभरुदा	८३१
पासम्मि पचकोमा	७३०
पासम्मि मेरुगिरिणो	२०४४
पासम्मसवणवग्भणि	८६
पासटसमवचत्तो	२२७६
पासावदुदारेमु	३०
पासे पचच्छइहाद	७७८
पियदसणो पभासो	२६४२
पीयूसणिउभरणिह् जिण	९४९
पीडत्तयस्स कममो	७७६
पीडम्स चउदिसाभु	१६२२
" "	१६२७
" "	१६३५
पीडम्सुवरिमभागे	१६२८
पीडाण उवदि माणरथभा	७८३
पीडाए परिहीओ	८७७
पीडोवदि बट्टमउभं	१६२३

भाषा	भाषा सं०
पीडो सच्चइपुत्तो	१४५२
पुव्वसरमेवासम्मि	१५७६
पुव्वसरवरद्वीवे	२८५५
पुट्टो चउवीस	१५९८
पुट्टीए होति घट्टी	३४०
पुण्णम्मिय एवमसासे	३८०
पुण्णएणामकुज्जय	८०८
पुण्णायणायचपय	१६०
पुण्णिमए हेट्टादो	२४६४
पुण्णिकदपकजपीडा	२३४
पुण्णोत्तरामिहाए	५३१
पुण्णो महाघयाए	१६३८
पुरिसा वरमउडघरा	३६३
पुरिसिसोवेवजुदा	४२२
पुव्वकदपाकपुत्रयो	६२७
पुव्वदिमाए चूलिय	१८६०
पुव्वदिमाए असम्मदि	२८००
पुव्वदिमाण विजय	४३
पुव्वधर मिक्खओही	११०६
पुव्वधरा तोमाविय	११२८
पुव्वधरा पण्णाहिय	१११६
पुव्ववर्वाणदकोपुट्ट	२४६६
पुव्ववभवे अगिदाणा	१६११
पुव्ववमुदाराउदघो	१६५८
पुव्वविदेहस्सते	२०२७
पुव्वविदेह व कमो	२३२५
पुव्ववस्सि चित्तणगा	२१४६
पुव्ववगतयजुदाउ	१२६२
पुव्ववमदमहियाणि	१२६१
पुव्वव चउसीदिहद	२६७
" "	२९८
पुव्वव पिक्ख वणसदा	२११०
पुव्वव वट्टणराऊ	३०३
पुव्वव व मुद्रामज्जे	१३७५
पुव्ववाए मधमादण	२२१८
पुव्ववाए मेवकनवव	६५२

गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०
पुष्पाविचलविद्यासुं	२८१४	फ		बहुपरिवारेहिं जुदा	१६७४
पुष्पावरदो बीहा	१०२	कमगुणकसल्लुचउदिसि	६६२	बहुपरिवारेहिं जुदो	१७३५
पुष्पावरपणिषीए	२७७५	कमगुणकसिणे सत्तमि	६९२	बहुभूमीभूतणया	८२०
पुष्पावरभागेशुं	१८८०	कमगुणकिण्हचउस्थी	१२०१	बहुभूमीभूतणया	८६१
" "	२१२८	कमगुणकिण्ह्यारसि	६८६	बहुसद्वुमीपदोसे	१२१७
" "	२१५३	" " छट्टी	७०५	बहुविजयपसत्थीहिं	१३६३
पुष्पावरभागेशुं	२२२५	कमगुणकिण्ह्ये बारसि	७०४	बहुविहउवबावेहिं	१०६३
पुष्पावरणे जोयण	२२४६	" "	१२१५	बहुविहविदाणएहिं	१८८८
पुष्पावरणे सिहरो	२५२८	कमगुणबहुलच्छट्टी	१२०२	बहुविहवियप्यजुता	२२७६
पुष्पावरेशु जोयण	१८४३	कमगुणबहुले पचमि	१२०७	बहुसाणभञ्जिबाहिं	१६६८
पुष्पाहिमुहा तत्तो	१३६०	कलभारण मिबसाली	६१६	बाणजुदव'दकगो	१८४
पुस्सस्स किण्हचोदिसि	६९५	कलमूलदलप्यहुदि	१५८४	बाढालसहस्साहं	२४६८
पुस्सस्स पुण्णिमाए	६८९	कलिसहप्यवाकमरगय	२३०१	बाढालसहस्साणि	२४८४
" "	७००	कलिहाणदा ताण	२०८३	बारससम्महियसय	२०६२
पुस्सस्स सुककचोदिसि	६८७	कासरसगस्रबणेहिं	२८१	बारसजुददुसएहिं	२६६७
पुस्से तिवदसमीए	६९८	कासिदिय सुदणाणा	६६८	बारसजुददुसएहिं	२८८४
पुस्से सुककेयारसि	७०१	कासुककस्स सिदीदो	६९६	बारसमम्मि य तिरिया	८७२
पुह तुत्तयदारेशु	१९१३	कुत्तलतकुमुदकुवल्लय	८०४	बारसबच्छरसमहिय	६५३
पुह चउवोससहस्सा	२२०५	कुत्तिलदकमलबणेहिं	१३४	बारससयपणवोस	२६३०
पुह पुह पुतबाहिवो	२४४१	ख		बारससयाणि पण्णा	१२७८
" "	२४६८	बइसण अरियरगमरा	३८४	बारससहस्सपणसय	२६११
पुह पुह पीडतयस्स	१८४८	" "	४०४	बारससहस्समेत्ता	२३००
पुह पुह पोक्खरणोण	२२१५	" "	४१२	बारससहस्समेत्ता	२५०३
पुह पुह मूलम्मि मुहे	२४४२	बत्तीसबारसेक	१४३४	बारसहुदडगिलक्ख	५७२
पुह पुह बोससहस्सा	२२०५	बत्तीमसहस्साणि	१९०७	बालत्तराम्मि गुरुमं	६३३
पु डियि दहाहितो	२३७९	" "	२२०३	बालरवोसमतेया	३४४
पेच्छते बालाण	५००	बम्ह'पकुज्जणामा	११८६	बावोसमया प्रोही	११६१
पेलिज्जते उवही	२४६६	बलदेववासुदेवा	२३१३	बावोख पण्णारस	११६४
पोक्खरणीण मज्जे	१६७३	बलभट्टणामकूडो	२००३	बासट्ठि जोयणाह	२४९
पोक्खरणी पवुदीण	३२६	" "	२०२२	बासट्टी वासारिण	१४६०
पोक्खरणी रमणिज्ज	२०३३	बलरिच्छी तिविहप्या	१०७२	बाहिर बेदीहितो	२४७७
पोक्खरणी बावोहिं	२२७३	बहिरा अथा काणा	१५६०	बाहिरसूहिवगो	२५६५
" "	२३०२	बहुतरमणीयाह	२३५३	बाहिरहेद्दु कहिदो	२८५
पोक्खरणीवडेशु	२८३२	बहुतोरणदारजुदा	१७३१	बिउणम्मि सेल बासे	२८०१
पोक्खरणी त्ति दीवो	२७८८	बहुदिग्गवामसहिदा	१३७	बिदियम्मि कलिहभित्ती	८६७
		बहुदेवदेविसहिदा	१६९	बिदियस्य बोसजुमं	२०६१

गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०
बिबिधं च तदिवधुमी	२१९७	भरहस्त भूषक वं	२८५१	भीमाबलिजियसत्	५२७
बिबिधाधो वेदीधो	८०७	भरहावितु कूडेसु	१६७	भीमाबलिजियसत्	१५५१
बिबिधादो ध्रुवाद्	१५१६	भरहाविसु विजयाण	२८५६	भुवणतयस्य ताहे	७१४
बीसहस्त जुवाद्	११०४	भरहादो एणसहता	२४०८	भुवनेसु सुप्पसिद्धा	१००९
बीसहस्तम्भाहिया	५८१	भरहादो विजयाणं	२६०८	भूमिय मुह बिबोधिप	२०५८
बीसहदवास सन्ध	५७५	भरहावणिकं वादो	१७४०	भूमीए वेट्टं तो	१०३७
बुद्धीबिकिरवकिरिया	९७७	भरहावणीय भाणे	१७६१	भूमिष मुह सोहिय	२५३३
बुद्धी बियक्खणारणं	६८६	भरहे कूडे भरहो	१७०	भूमिदो पचसया	१८११
वे धट्टरस सहस्ता	११३२	भरहे छलनलपुब्बा	१४१३	भेरी पडहा रम्मा	१४००
वे कोसा उच्चिद्धा	६१	भरहो सगरो मधघो	५२२	भोगसिद्धो ए होतिहु	४१४
वे कोसाणि तु गा	१६५१	भरहो सगरो मधघो	१२६२	भोगजणरतिरियाण	३७६
वे कोसा बिरिषण्णो	२५८	भवणखिदिप्पणिभीसु	८५३	भोगमुबारा मवरे	४१६
वे कोसे हि धपाविय	१७३७	भवणारण विदिसासु	२२१२	भोगमहोए सव्वे	३६९
वे कोसे हिमपाविय	१७७१	भवणोवरि कूडम्मिय य	२३२	भोगापुण्णए मिच्छे	४२४
वे माऊद बिरिषण्णा	१७४	भवमागवसणहेतुं	९३५	भोत्तूए णिमिसमेत्तं	६२३
वेणिएजुगा दस बरिसा	२९४	भव्वाभव्वा छस्सम्मत्ता	४२५		
वेणुसहस्तसुं गा	२५५३	भभामुदगमहल	१६६३	म	
वेक्कताडिदाह	११४१	भागभजिदम्मिह लद्ध	१०७	मउडधरेसु चरिमो	१४६३
वे सन्धा पण्णारस	२८६६	भाभयअगा कच्चण	३५५	मउडकु डलहारा	३६४
वेल्धरदैवारा	२६	भावारवेत्तरजोदस	३८२	मककडयततुपती	१०५४
वेसदछपण्णाद्	१६२७	" "	७६८	मग्गसिर चोत्तीए	५५०
		भावनसुरकण्णाघो	८२४	मग्गसिर पुण्णिमाए	६५३
भ		भासद् वसण्णाहृदघो	१५५०	मग्गसिर बहुलदसमो	६७४
भसीए प्रासत्तमया जिणिव	६५०	भासति तरसनुद्धो	१०२८	मग्गसिर सुद्धएककारसिए	६६६
भत्थट्टाराण कालो	१५२०	भिया भिगणिद्धव्वा	१९८६	मग्गसिर सुद्धदसमो	६६८
भयजुत्ताण णराण	४९९	भिगारकलसदप्पण	१५६	मग्गिणिएजिक्ख सुलोया	११६१
भरहक्खेत्त पक्खिण्ण	२५१२	" "	१६३	मच्छमुह मत्सकण्णा	२७७१
भरहक्खेत्तम्मि इमे	३१७	" "	७४६	मच्छमुहा कालमुहा	२५२७
भरहक्खेत्ते जाद	१८५१	भिगारकलसदप्पण	१७१६	मज्जारमुहा य तहा	२७७४
भरहक्खिदीए मणिय	२९६६	" "	१८९३	मज्जम्मि रजद रचिदा	२४८८
भरहक्खिदीबहुमज्जे	१०६	" "	१९०४	मज्जिम्म उटयपमारा	२१७४
भरहक्खंत्तर बण्णिद	२५०६	भिगार रयणदप्पण	१९०९	मज्जिम्म उच्चरिक्खभागे	७५८
भरहक्खिम्म होदि एवका	१०४	भिण्णिदराणोक्केसा	३४१	मज्जिम्मपासावाण	३३
भरहक्खसुं धरपहुदि	२६६६	भिण्णिदराणीसमसिण्णम	१८६६	मज्जिम्म कालोधो	९५७
भरहक्खसुं धरपहुदि	२७६०	भिसीधो विविहाधो	१८८६	मज्जिम्म कठारभरराण	१३३
भरहस्त इसुपमाणे	१७६६	भीममहभीमवहा	१४८१	मणितोरणारमणिएज	२३०
भरहस्त चावपुट्ट	१९५				

भाषा	भाषा सं०	भाषा	भाषा सं०	भाषा	भाषा सं०
मणिमयत्रिणुपट्टिमाधो	८१५	माघस्त किण्वहारसि	६६०	मूलसिहरार कंठं	२८१६
मणिमय सोबाणाधो	२२१४	माघस्त पुष्णिमाए	६९७	मूलोवरिभाएकुं	१७३०
मणिसोबाणमणोहर	८०९	माघस्त बारसोए	५३६	मूलोवरि सो कूढो	२००८
मणुसोत्तरघरणिघरं	२७८९	" "	५४२	मूले बारस मज्जे	१६
मणिसुदधणणाराणं	४२३	माघस्त य धमवासे	६९६	मूले मज्जे उवरि	२२५
मह्वधणवजुत्ता	३४३	माघस्त सिद चट्ठी	६६३	मूले मज्जे उवरि	२२८
मणिकुण कुणह धम्मि	१५९५	माघस्त सुक्कणवधो	६५२	मेघपट्टेण सुमई	५३७
मर इदि मणिदे जीधो	१०८६	माघस्त सुक्कणवधे	५३४	मेच्छमहिं पहिर्वेहिं	१३५८
मरुदेवे तिदिवगदे	४२६	माघस्तिसदएक्कारसि	६७३	मेरुगिरिपुण्डवकिणए	२१६१
मल्लिजिणे छट्टिवसा	६८४	माघादो होति उड्डु	२६३	मेरुतलस्त य रुद	२६१८
मल्लीणामो सोमा	१७५	माणवख चारणक्का	२०१६	मेरुतलस्त य रुद	२६२२
महपउमदहाउ नदो	१७६६	माणसिमहमाणसिया	९४८	मेरुत्पदाहिणए	१८५२
महपउमो सुरदेवो	१६००	माणुत्तासयमिच्छा	७९०	मेरुवहुमज्जभावं	२०९५
महपुं डरीणामा	२३८७	माणुत्ताजगबहुमज्जे	११	मेरुवह्नीधरपासे	२०२८
महहिमवत रुद	२५६७	मादापिदाकलत्त	६४७	मेरुवमाणदेहा	१०३६
महहिमबंते दोमुं	१७४६	मासत्तिदया हियचउ	९५९	मेहणमडए धोलग	३६
मतीरा धमराए	१३६५	माहस्पेण जिणारुं	६१६	मोत्तुण मेरुगिरि	२५८७
मतीरां उवरोहे	१३२०	मिच्छन्नभावणाए	५१३	मोर सुक्कोकिलाण	२०३४
मंदकसाथेए जुदा	४२७	मिच्छत्तमोहेविसमम्मित्तो	१५३२		
मदरअणलदिसादो	२०४०	मिच्छत्तत्तिमिरछण्णा	२५४०		
मदरईसाएदिसा	२२२०	मिच्छाहट्टि धमव्वा	६४१	रजदगगे दोणिण गुहा	१७८
मदरउत्तरभागे	२२१७	मिदुहिदमधुरालाधो	९०७	रत्ता रामेण णदो	२३९६
मंदरगिरिदो गच्छिय	२०८०	मिहिलाए मल्लिजिणो	५५१	रत्तारत्तोदाधो	२२९१
" "	२०८८	मिहिलापुरिए जादो	२५३	रत्तागत्तोदाधो	२३३१
मदरगिरिवहुदोण	२८७४	मुक्का मेरुगिरिद	२८३६	रत्तारत्तोदाधि	२२६०
मदरगिरिद उत्तर	२६२९	मुणिकरणिक्कलाणि	१०६३	रत्तिदिणए भेदो	३३७
मदरगिरिदणद्विदि	२१७२	मुणियासिस्सिडियाणि	१०९५	रत्तोए ममिबिब	४७६
मदरगिरिद दक्खिण	२१६३	मुत्तपुरीसो वि पुठ	१०८३	रम्मकभोगखिदीए	२३६३
मंदरणामो सेलो	२६१५	मुमलाइं लगलाइ	१४४७	रम्मकभोगखिदीए	२३६७
मदरपच्छिम भागे	२१३६	मुहुभूविसेसमद्विय	१८६१	रम्मकभोगखिदीए	२३७६
मंदरपत्तिप्पमुहे	१०६५	मुहुभूमाण विसेसे	१८१९	रम्मकविजघ्नो रम्मो	२३६२
मदिरसेलाहिवई	२००९	मुहुमडवस्म पुरदो	१९१७	रम्माम्भारा मगा	२३६
मागधदीवसमाणं	२५१३	मुहुमडधो व रम्मो	१९१५	रम्ममुजजाणेहिं जुदा	१४२
मागहृदेवस्म तदो	१३२२	मूलकलमच्छादो	१५५८	रयणलच्चिदासि ताणि	६०३
मागधवत्तणुवेहिं य	२२८०	मूलम्मि उवरिभागे	२५८८	रयणपुरे धम्मजिणो	५४७
माघस्त किण्वचोद्वसि	११६६	मूलम्मि य सिहरम्मि य	२८१७	रयणमय धमजोजिद	२०३

र

गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०
वरिसति क्षीरमेधा	१५८०	बाहृणवत्पविभूषण	१८७५	विजयो व वण्णज जुधो	२५०५
वरिसति दोगमेधा	२२७५	बाहृणवत्पामरणा	१८६६	विज्जाहरणवरधरा	१२९
वरिसाणि तिणि नक्खा	१५७७	वाहिणिह्राण वैधो	६५५	विज्जाहरसेधोए	२९८३
वरिसादीण सलाया	१०६	विजलमदीधो बारस	१११५	विज्जाहराण तस्सि	२२८५
वरिसादु दुणुण वड्ढी	१०८	विजलमदीण बारस	१११२	विज्जुप्पहणामिग्गिणो	२०७६
वरिसे महाविधेहे	१८०३	विजलमदो य सहस्सा	११२५	विज्जुप्पहस्स उव्वरि	२०७०
वरिसे सल्लेज्जभूरा	२६७७	विज्जमधकदीधो	७२	विज्जुप्पहस्सि	२१६५
वरुणो सि लोयपालो	१८७२	विज्जमभस्स य वग्गो	२६६०	विज्जुप्पहस्स गिरिणो	२०९५
वन्नयोवमपीडेसुं	८७९	विज्जमभादो सोहिय	२२५५	वित्थारादो सोहसु	२६५३
वत्तीतकमुच्छलदु-	३५६	विज्जमभादो सोहिय	२०२०	विज्जुमसमाणवेहा	५६६
वसहोए गम्भगिहे	१८८९	विगुणा पचसहस्सा	११२७	विज्जुग्गिदप चवण्णा	३२६
वसुमित्त धम्मिग्गित्तो	१५१६	विगुणियतिमास समहिय	६५७	विमलजिणे चासीस	१२२५
वातादिदोसचत्तो	१०२२	विगुणियवीससहस्सा	११८७	विम्लय करक्काहि	१८८५
वातादिप्यग्घीधो	१०१५	विज्जमो विदेहणामो	१३	विमलस्स तीसलक्खा	६०६
वायदि विक्किरियाए	९२०	" "	२५६९	वियसियकमसायारो	२०९
वारणवंतसरिच्छा	२०३७	विज्जमो हेरणवदो	२३७७	विरदीउ वासुपुज्जे	११८२
वाराणसीए पुहुवो	५३९	विज्जमगयदत्तरिया	२२५७	विहिहरसोसहिभरिदा	१५८३
वादीए बहुमज्जे	१९५०	विज्जमहृदकुमारो पुण्ण	१५१	विहिह वणसडमडण	८१२
वादीस सहस्साणि	२०२७	विज्जमज्जुगिरि पुहाए	२४०	विहिहवर रयणसाहा	१६३१
" "	२०३५	विज्जमज्जायामेण	११२	विसयकसायासत्ता	६३३
वासकदी यसमुग्गिदा	९	विज्जमपुरम्मि विचित्ता	८१	विस्वामिसेहि पुण्णो	६५०
वासट्ठी जोयणाह	२२३	विज्जयत् वेजयत्	५२	वीरजिणे सिद्धिगदे	१५०८
वासट्ठए षट्ठमात्थे	१५५६	विज्जयत् पुव्वदार	७५३	वीरगजाभवाणो	१५४२
वाससदमेक्कमाऊ	५८९	विज्जयाचला सुधम्मो	५२५	वीसकदी पुव्वधरा	१६६७
वाससहस्से सेसे	१५६०	विज्जयादि दुवाराए	७५	वीस दस चैव लक्खा	१५५९
वासाधो वीसलक्खा	१५७०	विज्जयादि वासवग्गो	२६१६	वीसदिवच्छरसमहिय	६५६
वासाणि दो सहस्सा	९६८	विज्जयादीण धादिम	२६७२	वीससहस्स तिसदा	१५०५
वासाणं लक्खा षट्ठ	१५७५	" "	२८८९	वीससहस्सा वस्सा	१५१६
वासाणि णव सुपासे	६८३	विज्जयादीण धामा	२५६१	वीसाहियकोविसय	८६३
वासो केरस लक्खा	१५७५	विज्जयादीण वास	२८८३	वीसाहियसयकोसा	८६१
वासो सोलसलक्खा	१५७१	विज्जया य वइजयता	७९२	वीसुत्तरवासमदे	१५१२
" "	१५७२	" "	२३२७	वीसुत्तरसत्तया	१८८
वासो पणवणकोसा	२०००	विज्जयावक्खाराण	२६५०	वीहीदोपासेसुं	७३६
वासो विमग कस्सोलीणीण	२२५५	विज्जया विज्जयाए तहा	२५८५	वेगुम्बि छस्सहस्सा	११५३
बाहृणवत्प्यहुदी	१८७८	" "	२८३३	वेगुम्बि सगसहस्सा	११५१
		विज्जमो धक्कमो धम्मो	१५२३	वेठेदि तस्सजगदी	१५

भाषा	भाषा सं०	भाषा	भाषा सं०	भाषा	भाषा सं०
वेदेदि विसवहेतुं	६३४	सगसगसलायगुणिणं	२८४८	सत्ताणीयाण चरा	१७०८
वेदीए उच्छेहो	२०३१	सगसट्ठी समतीसं	१४३२	सत्तारसमक्खाणि	२८६५
वेदीधो तैत्थियाधो	२४२०	समसंखस हस्साणि	११३५	सत्तावण्णसहस्सा	१७४३
वेदीण बंद दढा	७३२	सगसीदो सत्तत्तरि	१४३१	सत्तावीसम्महिणं	१७७७
वेदीधोपासेसुं	२०२	सच्चिया चवंति सामिय	१५४५	सत्तावीस सवाण	२६७१
वेदी पढम विदिय	७२३	सच्चइसुदो य एदे	५२८	सत्तावीस सहस्सा	२४५०
वेयवुत्तरदिसा	१३७०	सच्छजल पूरिवेहि	१६१	सत्तावीस लक्खा	१४६१
वेयवुत्तमारसुरो	१७१	सट्ठिसहस्सा णवसय	१२२६	" "	१४६२
वेधलियममुगक्खा	२८१०	सट्ठिसहस्सा तिसय	११८४	सत्तावीसा लक्खा	१४६०
वेहलियमय पढमं	७७६	सट्ठि तीस दस दस	१३७९	सत्ती कीरंढगवा	१४४६
वेत्तंघरदेवाण	२५०१	सट्ठी तीसं दस तिय	१३०७	सत्तुस्सासो धोवो	२९०
वेत्तंघरवंतरया	२४९०	सट्ठावदिविज्जिहावदि	२२३६	सत्तेसु य घणिएसुं	२२०६
वेसवणामनूडे	२८२६	सण्णी जीवा ह्वैति तु	४२६	सत्तिच धएणवाचत्त	३५३
वेसवण णामनूडो	१६८२	सण्णी हुवेदि सन्ने	२६८८	सदमुच्छेद हिमव	१६४६
वेत्तरदेवा बड्ढो	२४१७	सत्तच्छरणमत्तेनका	२८०८	समऊणक्कमुहुत्त	२९१
वेत्तरदेवा सन्ने	२३५८	सत्तट्ठणवदसाधिय	८५	समयावलिउस्सासा	२८७
वोलीणाए सायर	५७१	सत्तट्ठण्वहुदीहि	१७३४	समचित्तारो उवर्णि	१८१२
स		सत्तएणवभट्टमगणव	२६३६	सम्मत्तरयणहीणा	२५४२
सउरीपुरम्मि चादो	५५४	सत्तत्तरिसक्खाणि	१३०८	सम्मदिणामो कुलकर	४४१
सकणिववासुदाण	१५१३	सत्तसीससहस्सा	१७२२	सम्मदि सम्मपवेत्ते	४४६
सकम्स लोवपासा	२०२१	सत्तदुबवर तियणव	२७०६	सम्महंसएणयणं	२५५५
सककादीं पि विपक्ख	१०३२	सत्तदुबुद्धकपंचत्ति	२६३१	सम्महंसएणुड्डा	२१९१
सककुलिकण्णा कण्ण-	२४२५	सत्तभवभ्रष्टमदेहि	१५०७	" "	२२२४
सयभ्रष्टचउत्तुपसिधणव	२९१०	सत्तमए णाकगडे	६७	सम्ममित्तणो भक्कुर	२१८३
सगइमिणवरुससदुग	२७१६	सत्तमया तण्परिही	१८२७	सम्मत्तिदुमत्स बारस	२१९२
सगचउदोणमगवपण	२७१२	सत्त य सण्णासण्णा	६४	सम्मत्तिदक्ख सत्तिच्छं	२२२२
सगच्छकैकेपिगिदुग	२७४६	सत्तरससयसहस्सा	२४१५	सम्मत्तिक्खणायलं	२१७५
सगच्छणवणवसयसिय	२९५०	सत्तरि भ्रष्टमहियसयं	२४२७	सयउज्जलसीदोवा	२०७१
सयणवत्तियदुगणवणव	२६०२	सत्तरिसहस्सइमिसय	१२३०	सयएणि प्रासणाणि	१८६२
सवणवत्तियच्छक्खउदुग	२७३२	सत्तरिसहस्सभोयण	७३	सयणासणपमुहुणि	२२८६
सवणवत्तियसयपणवण	२६९२	सत्त सग षोणिए चउ हुम	२६७६	सयससुरासुरमहिया	२३१०
सवणवत्तियसयपणवण	२९२७	सत्तसववावदुं गो	६६५	सयसं पि सुद्धं बाणइ	१०७५
सववाहं कीमारो	१४७६	सत्तसयाणि वेव य	११५४	सयसोहि एगैहि	१०१०
सवसवसइमिचउचउ	२९३५	सत्तसया पण्णासा	२१३३	सयवत्तियस्मिन्नासा	१६८४
	२०६३	सत्तसहस्साणि चणु	६९		१८०७

गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०
सरियाद्यो वैसियाद्यो	२४१६	संतियुवानसुपुञ्जा	६१४	सिदसत्तमि वुब्बण्णे	१२०३
हरियाद्यो हरियाद्यो	२८३४	संखेज्जजोयसाणि	९४०	सिदसत्तमीपदोसे	१२१८
सलिसाहुवरी उवधो	२१०	सखेज्जसक्काराणं	१८५	सिद्धत्थो णीलक्खो	२३५५
सलिसे वि य भूमीए	१०३८	संखेज्जसहुस्साइ	१३८६	सिद्धत्थ कच्छखंडा	२२८६
सम्बकलहणिचारण	४६३	संखेज्जा उवमात्था	२६८६	सिद्धत्थपुरं सत्तु जय	१२३
सम्बगुणेहि अघोर	१०७१	सखेज्जुक्कु बन्धवलो	१८८३	सिद्धत्थरायपियकारिणीहि	५५६
सम्बत्थसिद्धिठाणा	५२६	सनेण साणाविह	१५३४	सिद्धत्थो वेसवणो	२८२२
सम्बवहाराणं मणिमय	७९७	सब्बड सजणबन्धव	१५६२	सिद्धमहाहिमवता	१७४७
सम्बत्थ तस्स परिही	१७२८	समिण्ण सोदितं दूरस्साद	६७९	सिद्धहिमवतकूडा	१६५४
सम्बाधो मणहराद्यो	१३८३	ससग्गा सयलघया	८२६	सिद्धाए पडिमाद्यो	८४४
सम्बाधो वण्णणाद्यो	२२८४	सक्खरतिद ऊणिम	६६१	सिद्धा णिगोदकीवा	३१६
सम्बाण पयत्थाए	२८४	ससारण्णवमहए	३००६	सिद्धि गदम्मि उसहे	१२५१
सम्बाण पारणदिए	६७६	सा गिरि उवरि गच्छद्द	१७७०	सिद्धो बन्धाःसुद्धा	२३३७
सम्बाए मउडबडा	१४०३	सामण्ण वेत्तकवली	३५	सिद्धो सोमएसक्खो	२०५६
सम्बाए बाहिरए	७४१	सामण्णभूमिमाए	७२०	सिद्धमुहकठप्पहुदिसु	१०१८
सम्बाहिमुहट्टियत्त	६०९	सामण्णएासिमज्जे	२६७५	सिद्धिअग्गक्खेसर	२०३१
सम्बे अणाइणिहणा	१६३२	सामाणियतपुत्तक्खा	२११०	सिद्धिणिचय वेवणिय	१७५७
" "	१९५४	सामाणियदेवाए	२२०२	"	१७९२
सम्बे भोउरदारा	१६६७	सामाणियपहुवीए	२१११	सिद्धिदेवीए ह्रीति हु	१६६५
सम्बे खम्माणेहि	१३४५	सायाण च पयादे	३४२	सिद्धिदेवीतणुरक्खा	१६९८
सम्बे ते समण्टा	२५००	सालत्तयपरिअरिया	८१७	सिद्धिदेवी सुवदेवी	१६६१
सम्बे दसमे पुब्बे	१४५४	सालत्तयसवेडिय	८४५	सिद्धिअहसाजवेदी	२०५४
सम्बे पुब्बाहिमुहा	१८५०	सालत्तयबाहिरए	७९१	सिद्धिमहा सिद्धिता	१९८८
सम्बे बक्सारगिरी	२३३६	सालत्तयतरामाये	७५६	सिद्धिसचयकूडो तहु	१६८४
सम्बे सिद्धत्थत्तक	८४३	सालासां बिकसधो	८५६	सिद्धिसचधो ति कूडो	१७५५
सम्बेसु कूडेसुं	२२८७	सालिज्जबल्लसुवरि	१३६	सिद्धिसुवदेवीए तथा	१९०५
सम्बेसु उववणोसुं	१७७	सालिज्जबल्लसुवरि	५०७	सिद्धिसिणो सिद्धिसूरी	१६०६
सम्बेसु वि काववता	१४९६	सालो कप्पमहोद्यो	७२२	सिद्धिहरिणीकंठ	१६१३
सम्बेसु धंभेसुं	१९१७	सालणिमपुणिमाए	१२०६	सिद्धसाया सिद्धेधो	२४९२
सम्बेसु धोमयुवे	२६८२	सालहुीए धंभवेधो	५५५	सिद्धिस्स तरक्खमुहा	२७७७
ससिक्कंतसुरकंतं	२०४	सहासु पत्ताणि	२१८२	सिद्धिस्सुत्तरामाये	२३९२
ससिक्कंतसंकासं	९३०	सहाय्य ततो पविसिय	१३६९	सिद्धीउत्पलकूडा	१६८७
ससिहाराहंसववसु	१८०९	सिक्कं कुण्णति साणं	४५६	सिद्धी हेरब्बणवधो	२३८४
ससुहसति सवमसायर	१०९८	सिक्कंति एककसमए	३००४	सिद्धमुहकण्णविहा	२१८
ससिहा बरवावीहि	८१८	सिक्कंति अवरण्णे	६५५	सिद्धुएणवेदिवारं	१३३६
ससिपिपीणिमयककुए	३१५	सिक्कवारसि पुब्बाहे	६५४	सिद्धपुरे वेवसो	५४३
		" "	६५७	सिद्धस्सवाण महिच	२५१६

गाथा	गाथा सं०
सिंहासनगमि तस्मिन्	१९८५
सिंहासनस्य अजसु वि	१९८४
सिंहासनस्य दोषु	१८४७
सिंहासनस्य परिचय	१९८३
सिंहासनास्य पुरतो	१९७७
सिंहासनाय विनाश	९३१
सिंहासनाय उच्यते	१८९५
सिंहासनायि मञ्जे	९०२
सिंहासनादि सहिया	१९६०
सीधं उच्यते तच्छ	६४१
सीध उच्यते मिस	२९९४
सीधोत्तरतडे	२२३१
सीधोत्तरतो	२२९२
" "	२३४२
सीधोत्तरतो	२२२६
सीधोत्तरतो वास	२१५८
सीधोत्तरतो ततो	२१५९
सीधोत्तरतो साधो	५८५
सीधोत्तरतो गी	२१५०
" "	२२६९
सीधोत्तरतो गी जल	२२६९
सीधोत्तरतो	२२५९
सीधोत्तरतो	२२५०
सीधोत्तरतो	२२५६
सीधोत्तरतो	२२३८
" "	२२८१
सीधोत्तरतो सद्यो	१४३०
सीधोत्तरतो मिसजो	२९९५
सीधोत्तरतो गी	२१३७
सीधोत्तरतो दोषु	२२२८
सीधोत्तरतो	२३५२
सीधोत्तरतो सरिच्छा	२१८२
सीधोत्तरतो सज्जेण नलेरा	१५३१
सीधोत्तरतो विमपरा	४५४
सीधोत्तरतो	५०

गाथा	गाथा सं०
सींहासनगमिहासण	१९२०
सींहासनगमिहार्म	१९७५
सुककोकि मङ्गरु	१९६६
सुककुटुम्बोपदो	१२०८
सुष्णप्रदमङ्गणहस	८२८
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	८
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	५४
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	२५४१
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	२२१०
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	१३५३
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	७२८
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	४५८
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	१०२०
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	८५१
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	१३१६
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	१५५३
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	११०८
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	१४२८
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	५६०
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	३२२
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	३२४
" "	२१७०
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	१६२४
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	४००
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	२००५
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	१३९३
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	१०८१
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	६०५
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	५२०
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	१३५४
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	२४३
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	२१४४
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	२६६२
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	२७११
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	२५८२
सुष्णप्रदमङ्गणपदुग	१०४०

गाथा	गाथा सं०
सींहासनगमिहासण	१५९३
सींहासनगमिहासण	२७१
सींहासनगमिहासण	२२८७
सींहासनगमिहासण	१५०३
सींहासनगमिहासण	१६७२
" "	२०६७
" "	२३५७
" "	२३८०
" "	२३८६
" "	२८१९
सींहासनगमिहासण	२५५८
सींहासनगमिहासण	४३६
" "	४४५
सींहासनगमिहासण	४८०
सींहासनगमिहासण	४५३
सींहासनगमिहासण	६५४
सींहासनगमिहासण	२०७९
सींहासनगमिहासण	१९३३
" "	१००२
सींहासनगमिहासण	९९४
" "	१००३
सींहासनगमिहासण	४८८
सींहासनगमिहासण	१५५७
सींहासनगमिहासण	१३२३
सींहासनगमिहासण	२०६४
सींहासनगमिहासण	१९९२
सींहासनगमिहासण	२०५७
सींहासनगमिहासण	२००६
सींहासनगमिहासण	१९६५
सींहासनगमिहासण	१९३२
सींहासनगमिहासण	२६२६
सींहासनगमिहासण	१८३०
सींहासनगमिहासण	१८६०
सींहासनगमिहासण	१५५५
सींहासनगमिहासण	६७
सींहासनगमिहासण	३५१

गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०	गाथा	गाथा सं०
सोलससहस्रप्रथमस्य	१७७३	हरिकरिबसहस्रगाहिव	१६४६	ह्रूह चउतीदिगुणं	३०८
सोलससहस्रप्रथमस्य	२४८५	हरिकंतासारिच्छा	१७९६	हेह्रिम मज्जिम उबरिम	५३२
सोलससहस्रपाणि	१८०२	हरिणावितणकरा	३६७	हेद्रिल्लम्मि तिभावे	२४६०
" "	१८२६	हरिदालमई परिही	१८२५	हेमवद पद्मदीणं	२६१०
" "	२२५७	हरिबरिसक्केरफनं	२७५७	हेमवदघरह्रिमबंध	१६७३
सोहम्मसुरिदस्स य	१४६	हरिबरिसो चउगुणिदो	२८५२	हेमवदवाह्रिणीणं	२४११
सोहम्मदिबउवरिम	१२४३	हरिबरिसो णिसहदी	३७९०	हेमवदस्स य वंदा	१७२१
सोहम्मदादो धच्छुद	८७१	हाएदि कण्हपक्खे	२४७०	हेरण्णबदग्गतर	२३९१
सोहम्मिन्वासणवो	१९७६	हाहा चउतीदिगुणं	३०७	हेरण्णबदो मणिकचण	२३६६
सोहसु चउसवळादो	२६५५	हियमहाण्णवाधो	७९५	होबि सभापुरपुरवो	१९२१
सोहसु मज्जिमसुइए	२९२४	हिमवतपव्वदस्स य	१७४८	होति धसल्लेज्जनुणा	२९७८
सोहसु मज्जिमसूर्ह	२७०९	हिमवतमहाहिमव	६६	होति तिविट्ठ-डुविट्ठा	१४२४
सोहसु बित्थारादो	२६५२	हिमवतयस्स मज्जे	१६८०	होति दहाणं मज्जे	२११७
सोहसु धसोयतक	९२७	हिमबंधतमणिमय	२१६	होति पद्दण्यपद्मदी	१७११
सोहसु तस्स लघो	२१८०	हिमबंधसरिसदीहा	१६५१	होति पढाभासीया	१४०४
ह		हिमवतस्स य वं दे	२७४८	होति सहुस्सा बारस	१११८
हरषपहेलिदणामं	३११	हिमवताचलमज्जे	१९८	होति ह्रु धसल्लसमया	२८६
हयकण्णाइ कमसो	२५३७	हुडावसप्पिणस्स य	१२६१	होति ह्रु वरपासावा	२७६
हयसेणवम्मिन्नाहि	५५५				

